

१९४६ ई०
२००२ स०

सम्पादक—
[illegible]

वार्षिक मूल्य
विदेश ७शि

ओ३म्

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २१ { जनवरी १९४६ ई०] पौष २००२ दयानन्दाब्द १२२ { अङ्क ११

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम्। सहस्रमन्यो तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥ सामवेद मन्त्र २८६

शब्दार्थ—(य) जो (सत्राहा) सदा पापों का नाश करने वाला (विचर्षणि) और सर्वज्ञ है (तम् इन्द्रम्) उस परमेश्वर को (वयम्) हम सब (हूमहे) पुकारते हैं—स्मरण करते हैं। हे (सहस्रमन्यो) अनन्त ज्ञान वाले (तुविनृम्ण) अत्यधिक बल वाले (सत्पते) उत्तम रक्षक प्रभो आप (नः समत्सु) हमारे कामक्रोध लोभ मोहादि आन्तरिक तथा बाह्य दुष्ट शत्रुओं के साथ युद्धों में (वृधेभव) वृद्धि वा विजय के लिये हों।

विनय—हे जगदीश्वर। आप सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान् संसार के स्वामी हैं। हम सब सच्चे हृदय से आप का स्मरण करते हुए यह प्रार्थना करते हैं कि आप काम क्रोधादि शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने की शक्ति हमें प्रदान करें। आप की कृपा से हमारी सब प्रकार से वृद्धि हो।

स्वर्ग

यही स्वर्ग है बस यही स्वर्ग है।
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥
भजें नाथ को मिल के नर नारिया
कि जिसने दया कर बनाया जहा।
रहें व्यक्ति परिवार के प्रेम से
करें धर्म के कर्म सब नेम से
यही स्वर्ग है बस यही स्वर्ग है
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है।
बड़ों का जहा छोटे आदर करें
बड़े प्रेम-कर उनके सर पर धरें।
बचन में व मन में भरी हो मिठास
सभी के हृदय देव का होवे वास
यही स्वर्ग है बस यही स्वर्ग है
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥
कलह का जहां हो न नामो निशान
जहा ज्ञान चर्चा रहे रम्यगान।
सभी स्वस्थ हों देव के भक्त हों
सदा देश सेवा में अनुरक्त हों।
यही स्वग है बस यही स्वर्ग है
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥

जहा प्रीति हो दम्पती में अचल
सरल चाल सारी न हो जिसमें छल।
पिता पुत्र में शुद्ध अनुराग हो
स्वकर्तव्य पालन का सौभाग्य हो।
वहीं स्वर्ग है बस वहीं स्वर्ग है
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥
सभी के हृदय में हो शुभ भावना
करें कर्म शुभ शान्त मन को बना।
जहा यज्ञ होते रहें नेम से
सदा वेद का पाठ हो प्रेम से।
वहीं स्वर्ग है बस वहीं स्वर्ग है
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥
नहीं द्वेष का जिस जगह नाम हो
सचाई से होता सभी काम हो।
जहा प्रीति हो पूर्ण विश्वास हो
नदी का किनरा जहा पास हो।
यही स्वर्ग है बस यही स्वर्ग है।
बहे शान्ति गङ्गा वहीं स्वर्ग है॥

'ध्रुव"

अध्यात्मसुधा

अद्भुत आध्यात्मिक यज्ञ

[गत अक्तूबर मास में ७ से १६ ता० तक जब हमने अपने निवास-स्थान पर श्री श्रद्धानन्द बलिदानभवन के ऊपर सामवेद द्वारा यज्ञ किया था तो हमारी प्रबल इच्छा थी कि आर्य वान प्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक उच्च कोटि के विरक्त महात्मा जो राग द्वेष रहित सात्विक जीवन व्यतीत करते हुए अपना नाम भी समाचार पत्रादि मे प्रकाशित कराना उचित नहीं समझते, इस यज्ञ में सम्मिलित होकर श्रद्धालु जनता को उपदेशामृत से आनन्दित करें किन्तु दुर्भाग्यवश अस्वस्थता के के कारण वे न आ सके। पर उस शुभ अवसर पर आध्यात्मिक यज्ञ विषयक अपने पवित्र भावों को उन्होंने निम्न लिखित पंक्तियों मे प्रकट करने की कृपा की थी जिन्हें उनकी अनुमति के बिना भी मैं पाठकों के सन्मुख रखना उचित समझता हूँ। आशा है कि मेरी तरह वे भी उनका मनन कर उनसे विशेष लाभ उठा सकेंगे। ये उद्गार अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः। अग्निमिन्धे विवस्वभिः" इत्यादिवेद मन्त्रों के अनुकूल हैं— सम्पादक सा० दे०]

कुण्ड निर्मल शुद्ध हृदय,
का बनावें चाह से
काम क्रोधादि की समिधायें
चुने उत्साह से ॥
कुछ हों हानि लाभ की
और कुछ मानापमान की ॥
कुछ अविद्या अस्मिता की,
और कुछ अज्ञान की ॥
कुछ हों हर्ष और शोक की
और कुछ हों राग व द्वेष की।
ऐसे अद्भुत होम में,
हर एक लकड़ी हो नई ॥
सुन्दरासन पर बिछायें,
एषणा के त्याग को।
यम नियम की सामने,
मुंह बोलती तस्वीर हो॥
गीत गाने के लिये,
मुक्ति का आवाहन करें।
सेवा में इस माता की,
सर्वस्व को अर्पण करें ॥
हाथ में प्रसन्नता देवी,
के हो बाजा ललित।
वेद वाणी का हो उच्चारण,
विलक्षण स्वरसहित ॥
धर्म के दस लक्षणों को,
हम बनाएं द्वार पाल।
राक्षस विध्वंस कर्त्ता,
दें न आकर विघ्न डाल ॥
आग के शोलो। भड़ककर,
वासना को फूंक दो।
मन की चचलता बहुत ही,
जल्द जल कर राख हो॥
इस अनोखी आग में,
बिजली की यह तासीर है।
भस्म कर देती है हर इक,
आगमापायी विषै

यह जो स्वाहा शब्द है,
कर दे यह स्वाहा पाप का।
हर तरफ उड़ जाए बन कर,
धूम तीनों ताप का ॥
तत्त्व दर्शी हैं पुरोहित,
दें हमें आशीर्वाद ।
जिस से निस्सन्देह अब,
अपना स्वरूप आ जाए याद ॥
पूज्य ब्रह्मा जी से यह ही,
हार्दिक अरदास है ।
वास्तविक जो शान्ति है,
चाहता यह दास है ॥
सारे संकल्पों विकल्पों,
की हो अन्तिम आहुती ।
जीते जी तत्काल हो,
बस प्राप्ति कैवल्य की ।
आप्त ऋषियों की दया से,
यज्ञ अपना हो सफल ।
गर्भ की पीड़ा सताए,
फिर न मुझ को एक पल ॥
हर्ष की घड़ियां हैं आई,
दिन हैं ये उल्लास के ।
पूर्ति उद्देश की हो,
याचना यह ईश से ॥
कष्ट से आवागमन के,
छूटने की हो खुशी ।
मोक्ष का आनन्द सच्चा,
लूटने की हो खुशी ॥
इस को लेकर क्या करें हम,
जो कि सुख है नाश वान्।
शाश्वत है नित्य है आल्हाद,
है एक ब्रह्म ज्ञान ॥

खेलती फिरती है कैसी,
सब के चेहरों पर हँसी ।
कर रही है नृत्य हर दम,
आज हँस हँस कर हँसी ॥
जो कि था विषयों में धोखा,
वह समझ में आ गया ।
इस लिये अवसर है शुभ,
आमोद का प्रमोद का ॥
भ्रान्ति से चौतीसे ❀ बन्धन,
का बना तद्रूप हूँ ।
तीक्ष्ण बुद्धि का चाकू
लेके इन को काट दूं ॥
एक हजारा फूल था
कांटों में जो गुम हो गया ।
ढूंढती फिरती हैं आंखें,
कुछ नहीं मिलता पता ॥
बादलों में छुप गया सूरज
मिटी सारी चमक ।
कितना मैला हो गया
बाकी नहीं कुछ भी दमक ॥
आवरण विक्षेप मल ने
कर दिया बिलकुल खराब।
कीमती हीरे की इस
कीचड़ ने खोदी आबोताब ॥
जो कि शाहनशाह था
कैसा भिखारी हो गया ।
एक अचम्भा है बड़ा
यह क्यों परीवर्तन हुआ ।
इन्द्रियो के छल कपट से
मैं ठगा जाता रहा ।
भ्रान्ति में पड़ता गया,
अपने को लुटवाता गया ॥

रूप रस आदि के फन्दों
में फंसा मारा गया ।
कैसे निन्दित कर्म में
जीवन मेरा सारा गया ॥
काम बुद्धि ने बिगाड़ा,
कुछ का कुछ बतला दिया ।
जड़ को चेतन और चेतन
को मैं जड़ समझा किया ॥
आ गया हू तग मैं
अन्त:करण के सङ्ग से ।
सोचता रहता हू क्यों कर
इस से छुटकारा मिले ।

देह का अध्यास जाए
आतमा को जानें हम ।
कब तलक भूले रहेंगे
आप को पहचाने हम ॥
कामना यह हो कि कोई
कामना रहने न पाए ।
भावना यह हो कि कुछ भी
भावना रहने न पाए ।
विस्मरण हो जाए 'मैं' का
और 'मेरे' का विचार ।
लोप सब कुछ हो रहे
बस एक सत्ता निर्विकार ॥

५ भूत, १० इन्द्रिया, ५ प्राण, ३ शरीर, ३ अवस्था, ५ कोष, ३ गुण ।=३४

आर्य वीर दल की परमावश्यकता

(लेखक—श्री प० बुद्ध देव जी विद्यालङ्कार)

प्यारे आर्य वीरो

एक प्रश्न सदा यह किया जाता है कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक सङ्घ हिन्दुस्तानी सेवा दल आदि संस्थाओं के रहते आर्य वीरदल की क्या आवश्यकता है।

आज मैं आप को इस का उत्तर सुना देना चाहता हूँ।

हिन्दुस्तानी सेवा दल सारे राष्ट्र की सस्था है हमारा उस से कोई विरोध नहीं, जब राष्ट्र को प्रयोजन हो आर्य वीर दलका प्रत्येक सदस्य राष्ट्र की सेवा के लिये तय्यार है। यही बात राष्ट्रीय सेवा सङ्घ के सम्बन्ध में है वह हिन्दू मात्र की सस्था है जब सम्पूर्ण हिन्दू जाति का प्रश्न उपस्थित हो तो आर्य वीर दल वहा भी सेवा के लिये तय्यार है।

परन्तु आर्य समाज एक जीवित तथा आक्रमण कारी (Aggressive) सस्था है। उसे अन्धकार के खण्डन में प्रति दिन किसी न किसी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस लिये उसे एक स्थिर सेना (Standing army) की सदा आवश्यकता रही है और रहेगी। यह कार्य्य आर्य्य वीर दल का है।

उदाहरण के लिये सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में झगड़ा छिड़ा। वह अभी समाप्त नहीं हो गया केवल कुछ काल के लिये स्थगित हो गया है। और किसी क्षण भी छिड़ सकता है। इस आंदोलन में न तो हिन्दुस्तानी सेवादल सामूहिक रूप से भाग लेने को तय्यार है। न राष्ट्रीय स्वय सेवक दल। सच पूछिये तो यह काम हिन्दुस्तानी सेवा दलका है। क्यों कि चाहे हिन्दू मुसलमानों की धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्ताक्षेप करें या मुसलमान हिन्दुओं की, दोनों की रक्षा हिन्दुस्तानी सेवा दलका धर्म्म है। परन्तु चाहे दुर्बलता के कारण और चाहे झूठी मुसलिम परस्ती के कारण कांग्रेसी हिन्दुस्तानी सेवादल सत्यार्थ प्रकाश की रक्षार्थ कुछ करने को तय्यार नहीं।

तो क्या इस अवस्था में आर्य्य समाज चुप रहे? एक जीवितजागृत संस्था के रूप में आर्य्य समाज कभी चुप नहीं रह सकता है। अच्छा नागरिक वह है जो अपने घर पर स्वय पहिरा देता है और पुलिस के पहुंचने से पहिले डाकुओं की मुश्कें कस के तय्यार रहता है। इसी प्रकार आर्य वीर दल अपने प्यारे सत्यार्थ प्रकाश की स्वयम रक्षा करेगा और यदि हिन्दुस्तानी सेवादल हमारी सहायता को पहुच जायेगा तो दोनों एक दूसरे को धन्यवाद देंगे परन्तु हम हिन्दुस्तानी सेवादल की प्रतीक्षा नहीं कर सकते और न सत्यार्थ प्रकाश को श्री भूलाभाई देसाई की दया पर फेंक सकते हैं। हम स्वाव लम्बी हैं। परमात्मा हमारा रक्षक और परम सहायक है। छोटे सहायक चाहे श्री सावरकर हो जावें, चाहे श्री जवाहरलाल, हम उनके कृतज्ञ हो सकते हैं, उनके आश्रित नहीं हो सकते। यह आर्य्य वीरदल की पृथक सत्ता का कारण है।

वेदोपदेश

तीन वैदिक देवियां और हमारा कर्तव्य

(लेखक—डा० सूर्य देव जी सिद्धान्त शास्त्री एम० ए० एल टी डी० लिट्)

प्रत्येक आर्य को और आर्यकुमार को अपने व्यक्तिगत जीवन में तथा सामाजिक जीवन में जिन तीन महती बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये, उनका वर्णन ऋग्वेद के उपर्युक्त मन्त्र में तीन देवियों के रूप में बड़े सुन्दर ढग से किया गया है—

इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुव ।
वर्हिं सीदन्त्वस्रिध ।

अर्थात् (१) मातृ भाषा (२) मातृ सस्कृति, तथा (३) मातृ भूमि, ये तीन कल्याण कारिणी देवियाँ हैं जो निरन्तर हमारे जीवन यज्ञ में उपस्थित रहें। कितना सुन्दर उपदेश है । जो व्यक्ति अथवा राष्ट्र इन तीन देवियों में से एक की भी अवहेलना करता है अथवा दूसरों के द्वारा उनका निरादर होने देता है, ससार मे उसका अस्तित्व कभी नहीं रह सकता। और आज हमारी आर्य (हिन्दू) जाति का अस्तित्व भी इसीलिये खतरे में पड़ गया है क्योंकि चारों ओर से इन देवियों पर आक्षेप और आक्रमण किया जा रहा है और फिर भी हम भोले भाले सुख की नींद सो रहे हैं।

(१) मातृ भाषा।

सर्व प्रथम वेद में वर्णित पहली देवी, अपनी मातृ भाषा को ही लीजिये। हम आर्य हैं। हिन्दी हमारी मातृ भाषा है। नागरी हमारी लिपि है। हमारे आचार्य ऋषि दयानन्द ने तो उसका नाम ही आर्य (श्रेष्ठ) भाषा रखा और स्वयं गुजराती होते हुए भी इसी हिन्दी भाषा में उन्होंने अपने सब ग्रन्थ लिखे और प्रत्येक आर्य (हिन्दू) को उसका जानना और प्रयोग करना आवश्यक बताया। आर्य समाज ने भी अपने प्रारम्भकाल से हिन्दी का सर्वाधिक प्रचार किया है और उसको सर्व प्रथम राष्ट्र भाषा घोषित किया, लेकिन दुःख है कि आज हमारे देश के कई चोटी के नेता ही हिन्दी के साथ उर्दू को भी राष्ट्र भाषा के पद पर बिठा रहे हैं। नागरी लिपि के साथ फारसी लिपि का प्रचार किया जा रहा है। जब कि जन गणना की रिपोर्ट के अनुसार भारत में उर्दू पढ़े लिखों की सख्या ३ ९ प्रतिशत है और उर्दू बोलनेवालों की सख्या एक सहस्र में ६ भी नहीं है। सन् १९३१ की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष में कुल ५७ भाषायें प्रमुख रूप से बोली जाती हैं परन्तु उनमें उर्दू के लिये कोई स्थान नहीं है। दूसरी ओर, भारत में उदयपुर हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान महोदय श्री के० एम० मुन्शी के वक्तव्य अनुसार २५ करोड़ ३७ लाख १२ हजार लोग सस्कृत कुल की भाषाओं को व्यवहार में लाते हैं। जन गणना के अनुसार शुद्ध हिन्दी भाषियों की सख्या सन् १९३१ में १७ करोड़ ६३ लाख १७ हजार से अधिक थी जब कि अन्य समस्त भाषाओं के बोलनेवालों की संख्या १७ करोड़ ४८ लाख ही थी। और मौलाना सुलेमान नदवी तक के शब्दों में हिन्दी सब से मीठी और प्यारी भाषा है। इतना सब कुछ होते हुए भी क्या हिन्दी को उसका उचित स्थान मिल रहा है? क्या सरकार, आल इंडिया रेडियो और हमारे कुछ नेताओं द्वारा जबरदस्ती हमारे ऊपर एक

नवीन मन गढन्त भाषा "हिन्दुस्तानी" नहीं लादी आ रही है ? क्या यह हमारी मातृ भाषा का—एक वैदिक देवी का—घोर अपमान नहीं किया जा रहा है ? इसलिये मैं सब आर्यों और आर्य कुमारों से कहूंगा कि वे आज यह व्रत लें कि भविष्य में (अ) वे अपना पत्र व्यवहार हिन्दी में ही किया करेंगे (ब) अपना हिसाब किताब हिन्दी में ही रखेंगे (स) हिन्दी जाननेवालों के साथ बात चीत हिन्दी में ही करेंगे (द) अपना अन्य समस्त कार्य हिन्दी में ही किया करेंगे। तब हमारी मातृभाषा की रक्षा और प्रचार हो सकना सम्भव है। ये हैं पहली देवी की पूजा के चार उपचार।

(२) मातृ संस्कृति।

संसार में सब से प्राचीन भारतीय सभ्यता है। इसमें अब किसी को सन्देह नहीं रहा है। हाँ, एक समय था जब अंग्रेजी शिक्षा के झिल-मिलाते हुए प्रकाश में हम भारतीय सभ्यता को भूल बैठे थे। और अपने ही पूर्वजों की हँसी भारतवासी स्वयं ही उड़ाते थे। भारतीय ऋषि गौतम, कपिल, कणाद की कथा को न सुनकर यूरोप के दर्शनकार अरस्तू, पेथागोरस, काण्ट और हीगल की फिलासफी पर मस्त थे। कालिदास, भवभूति, तुलसी और सूर की कविता को छोड़ कर शेक्सपियर, मिल्टन, वर्डसवर्थ और कीट्स् के गान गाते थे। वास्तव में हम अपने ही को भुला बैठे थे। हमारी इस भूल को यदि सबसे पहले हमें किसी ने सुझाया तो वह आचार्य दयानन्द थे। महाराज मनु के शब्दों में उन्होंने हम से कहा:—

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवाः ॥

'इस देश के द्विज अग्र जन्मा, विप्रवर विद्वान् थे।
विज्ञान, दर्शन शास्त्र में, वे अद्वितीय महान् थे ॥
संसार के गुरु थे, उन्हीं के पास सब आते रहे।
चारित्र्य शिक्षा विश्व के मानव यहीं पाते रहे ॥"

अपने इस गौरव को अब हम कुछ कुछ समझने लगे हैं और ऋषि दयानन्द के सुझाव के पश्चात् पाश्चात्य विद्वान् प्रोफेसर मैक्समूलर ने भी अपनी अन्तिम पुस्तक 'India what can it teachus ? में स्पष्टतया स्वीकार किया कि भारतवर्ष मानवीय सभ्यता का आदि केन्द्र है। लेकिन दुःख तो इस बात का है कि पाश्चात्य विद्वान् तक जिस बात को मानने लगे हैं, हमारे कुछ भारतीय विद्यार्थी पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध में पड़े हुए उसको अभी तक किसी प्रकार मानने को तैयार नहीं हैं। क्या हमारे आर्य सज्जनों और आर्य कुमारों का कर्त्तव्य नहीं कि उनकी इस defeatist mentality (पराजय भावना) को सुधारें और उन्हें बतावें कि—

"हम कौन थे, क्या हो गये हैं,
और क्या होंगे अभी ?
आओ विचारें आज मिलकर,
ये समस्यायें सभी"

वास्तव में जो जाति अपने प्राचीन गौरव और इतिहास को भूल जाती है वह संसार में कभी जीवित नहीं रह सकती। उस जाति के नर, नर नहीं रहते, एक उर्दू कवि के शब्दों में "खर" हो जाते हैं—

क़ौम की तारीख़ से जो बेख़बर हो जायगा।
आदमीयत खोके रफ़ता रफ़ता ख़र हो जायगा ॥"

एक ओर तो पाश्चात्य शिक्षा हमको हमारे प्राचीन गौरव और सभ्यता से वंचित रख रही

है, दूसरी ओर जिस ग्रन्थ ने हमारे हृदयों में सत्य अर्थ का प्रकाश किया, उस "सत्यार्थ प्रकाश" को जब्त कराने की चेष्टा की जा रही है। इस प्रकार जब हमारे ज्ञान का स्रोत ही न रहेगा, तो हम अपने गौरव गान से ओत प्रोत भी न हो सकेंगे। न रहेगा बाँस, न बजेगी बासुरी। यह है वह चाल जो विधर्मियों ने चली है। क्या हम उनकी इस चाल को सफल होने देंगे? नहीं, कदापि नहीं। हम तो कहते हैं—

"कौन है "सत्यार्थ" को जब्त जग में कर सकेगा?
कौन है जो "सूर्य" को आकाश में से हर सकेगा?
कौन है जो सिन्धु को निज बाहुओं से तर सकेगा?
कौन है जो वायु मंडल को घड़े में भर सकेगा?
आग से है कौन खेला? आगई बलिदान बेला॥"

इससे भी एक कदम आगे, विधर्मी लोग तो हिन्दू जाति का अस्तित्व मिटाने पर ही तुले हुए हैं। भारत में ईसाई और मुसलमान किस तेज़ी से बढ़ रहे हैं और हिन्दुओं की संख्या दिन प्रतिदिन किस प्रकार कम होती जा रही है इसका पता भारत की जनगणना से चल सकता है। सन् १८८१ की जन गणना के अनुसार जहां समस्त भारत में हिन्दुओं की संख्या लगभग ७५ फी सदी थी, वहाँ वह सन् १६४१ की मर्दुमशुमारी में घटकर ६७ फीसदी ही रह गयी। दूसरी ओर गत चार दफे की मर्दुमशुमारी में ही मुसलमानों की संख्या ६ करोड़ ५६ लाख से बढ़कर ६ करोड़ ३० लाख तक पहुँच गई। हिन्दुओं में से लगभग ३००, आदमी तो प्रति दिन ईसाई हो जाते हैं। अकेले पंजाब प्रांत में ही जहाँ सन् १८८१ में कुल ३८७ ईसाई थे वहाँ सन् १६३१ में उनकी संख्या ३ लाख ४७ हजार ४५२ पर पहुँच गई। कहिये हैं न आँखें खोलने वाले ये अंक? अब भी सोते रहेंगे क्या हमारे आर्य वीर? यदि नहीं, तो उन्हें समझ लेना चाहिये कि अपनी दूसरी वैदिक देवी—मातृ-संस्कृति—की रक्षा के लिये उनका क्या कर्त्तव्य है?

(क) अपने प्राचीन गौरव और धर्म को समझने के लिये उन्हें अपने धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहिये और भारतवर्षीय आर्य-कुमार परिषद् द्वारा संचालित धार्मिक परीक्षाओं में अधिक बैठना चाहिए।

(ख) सत्यार्थप्रकाश को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाना चाहिए। मैं सबसे अच्छा आर्यकुमार उसे समझता हूँ जिसके युवक-हृदय में अपने धर्म प्रचार (missionary spirit) की आग सदा धधकती रहती है जो कभी चैन से नहीं बैठता।

(ग) हिन्दू जाति को ह्रास से बचाने के लिए वे सदा प्रयत्नशील रहें और इसके लिए सबसे उत्तम उपाय हैं शुद्धि, संगठन तथा दलितोद्धार।

(घ) वे सदा Simple living and High thinking सादा जीवन, उच्च विचार का आदर्श अपने सामने रखते हुए पाश्चात्य शिक्षा के प्रवाह में न बहें। फेशन परस्ती से दूर रहें और आर्य (हिन्दू) आदर्श उनके प्रत्येक कार्य और विभाग में झलकता हो। ये हैं दूसरी देवी की पूजा के चार उपचार।

(३) मातृ-भूमि।

अथर्ववेद काण्ड बारह के पृथ्वी सूक्त के मंत्र १२ में स्पष्ट लिखा है, "माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्या" हमारी जन्म भूमि हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। माता का स्थान

सबसे ऊंचा होता है, यहाँ तक कि "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" अर्थात् माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होती है उस अपनी मातृभूमि की सेवा करने का प्रन जो आर्यकुमार नहीं लेता वह भारत माता का सच्चा सपूत नहीं, सच्चा आर्यकुमार नहीं और क्या ? वह नर नहीं नर पशु है —

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का
अभिमान है।
वह नर नहीं नर पशु निरा है और मृतक समान
है' ॥

आज हमारी भारत माता दासता की बेड़ियों मे जकड़ी हुई त्राहि २ कर रही है। उसके ऐसे सकट काल में उसके ही कुछ कृतघ्नी सपूत उसकी छाती पर छुरी चलाकर उसके टुकड़े कर "पाकिस्तान" बनाना चाहते हैं ठीक है —

"भारत से जिनको प्यार नहीं, जो गीत अरब के
गाते हैं।
माँ का मानें आभार नहीं, वे पाकिस्तान बनाते
हैं" ॥

लेकिन जिस पाकिस्तान को लन्दन की गोल मेज परिषद् मे अगस्त सन् १९३३ में चौधरी जफरुल्लाखाँ तक ने 'A chimerical and impracticable scheme" (एक काल्पनिक तथा अव्यवहार्य योजना) कहा था, आज वही पाकिस्तान हमारे कुछ देश भाइयों के सिर पर भूत बनकर सवार है। वे भारत माता के टुकड़े करने पर तुले हुए हैं। न तो उन्हें यह ज्ञान है कि आजकल के युग मे कोई छोटा राष्ट्र जीवित नहीं रह सकता, न वे यह समझते हैं कि संसार के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में टुकड़ों-टुकड़ों में बँटे हुए भारत की क्या स्थिति रहेगी और न उन्हें यह मालूम है कि डाक्टर इकबाल के शब्दों में 'The Pakistan plan would be disastrous to the British Government, disastrous to the Hindus and disastrous to the Muslims' (Enlist India for Freedom by Edward Thompson 1940 Page 58)

अर्थात् 'पाकिस्तान की योजना न केवल ब्रिटिश सरकार और हिन्दुओं के लिए हानिकर और दु:खप्रद होगी किन्तु मुसलमानों के लिए भी दुर्भाग्य पूर्ण होगा" कुछ भी हो मुस्लिम लीग की इस अनोखी माँग ने भारत की स्वतन्त्रता के प्रश्न को बहुत दूर फेंक दिया है। अभी तक हमारे सामने भारत की स्वतन्त्रता की प्राप्ति का ही ध्येय था। अब उससे भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न भारत की एकता का हमारे सामने है। इसलिए भारत माता की सेवा के लिए अब हमारे सामने ये दो मुख्य शब्द (Watch Words) हैं भारत की स्वतन्त्रता और एकता (Liberty and Unity)।

इसके लिए हमें क्या करना है ? हमारे आर्य वीरों का अपनी मातृभूमि के प्रति क्या कर्त्तव्य है ? अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त के प्रथम मंत्र मे ही उन गुणों का वर्णन है जो पृथ्वी को धारण करते हैं—सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपोयज्ञ पृथ्वीं धारयन्ति ॥ (अथर्व १२।१।१) सत्य, ईश्वरीय नियम, दीक्षा, तप, ज्ञान तथा यज्ञ और कर्म ये हैं वे गुण जो हमारे नवयुवकों को धारण करने चाहियें ताकि वे अपनी मातृभूमि की रक्षा और सेवा करने में समर्थ हो सकें।

साराश में, वहाँ मैं अपने समस्त आर्यों और विशेषत आर्यकुमारों से कहूँगा कि मातृभूमि की सच्ची सेवा वे तभी कर सकेंगे जब वे सच्चे हृदय से अपने व्यावहारिक जीवन में निम्नलिखित चार बातों का प्रतिदिन अभ्यास करें—

(अ) वे देश सेवा का व्रत लें जिस में सब से बड़ी बात है उन्हें अपने आप को उसके लिये योग्य बनाने की, और उस योग्यता को उत्पन्न करेगी तप और त्याग की भावना। उस तप और त्याग की भावना का सादा रूप हमारे आर्यकुमारों के लिये होगा "simple living' (सादा जीवन)। इस प्रकार के तपोमय जीवन से सुख, दुःख, आधि व्याधि विघ्न बाधाओं की चिन्ता न करते हुये वे अपने कर्त्तव्य पथ पर निरन्तर आगे बढ़ सकेंगे।

(ब) कोई भी राष्ट्र संसार में तब तक शक्तिशाली नहीं हो सकता और स्वतत्र नहीं रह सकता जब तक उसके नवयुवकों में क्षात्र शक्ति का विकास न हो। और इसके लिये आवश्यक है आर्यवीर दलों की स्थापना जिन मे कि हमारे आर्यकुमार ही सब से अच्छा काम कर सकते हैं। क्या मै पूछ सकता हूँ कि हमारे कितने आर्यकुमार हैं जो प्रति दिन किसी न किसी प्रकार का व्यायाम करते हों और आर्यवीर दलों में सम्मिलित हुये हों? जिस आर्य समाज के साथ आर्यवीर दल नहीं होता उसे मैं बिना भुजाओं का धड़ कहा करता हूँ। इसलिये आर्यसमाज और आर्यकुमार सभायें अपने अन्तगत र्यवीर दलों को अवश्य रक्खें और आर्यकुमार उन में अपना पूरा सहयोग दें। तब क्षात्र शक्ति का समुचित विकास हो सकेगा।

(स) देश सेवा के लिये और भारत की उन्नति के लिये साथ ही यह भी आवश्यक है कि हम देश में कलाकौशल की वृद्धि करने में सहायक हों। हमारी शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी और गुलामी नहीं होना चाहिये, किन्तु राष्ट्र की धन—सम्पत्ति को बढ़ाने वाले उद्योग धन्धों में हमारे आर्यकुमार लगें और स्वय स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार का व्रत लेते हुये दूसरों को वैसी ही प्रेरणा करें।

(द) और भारत की सेवा का सब से अच्छा सार रूप है भारत के सच्चे नागरिक बनना, जिस शब्द ही में सब गुणों का समावेश हो जाता है।

ये हैं तीसरी देवी—मातृभूमि की पूजा के चार उपचार।

आइये, अन्त में हम सब मिलकर प्रभु से प्रार्थना करें कि हमारे आर्यकुमार अपनी मातृभूमि की रक्षा करने में समर्थ हो सकें, और यह तब होगा जब वे प्रतिज्ञा करेंगे कि —

"सूर्य" उदय पश्चिम मे होवे,
चन्द्र चाहे अगार बने।
अनल बने जगतीतल शीतल,
गरल सुधारस धार बने॥
अचल हिमाचल चले भले ही,
सीमा सिन्धु अपार तजे।
किन्तु धर्म की मर्यादा को,
कभी न आर्यकुमार तजे॥

—'सूर्य"

हुतात्मा "श्रद्धानन्दजी"

लेखक—श्री खुशालभाई चन्द्रकान्त जी विद्यालङ्कार गुरुकुल सूपा नवसारी)

कल्याण मार्ग के पथिक स्वामी श्रद्धानन्द जी—महात्मा गांधी जी और बेन्जामिन फ्रेंकलिन इन तीन महापुरुषों के जीवन चरित्र से हरेक व्यक्ति मार्ग दर्शन प्राप्त कर सकता है—एक साधारण व्यक्ति किस प्रकार से सन्यासी श्रद्धानन्द जी के रूप में परिणत हो सकता है—इसका चित्र "कल्याण मार्ग के पथिक" में खींचा गया है।

श्रीयुत मुंशीराम जी पर महर्षि दयानन्द जी के व्यक्तित्व ने वह जादू किया जिससे पंजाब की गली गली में इन्होंने अलख जगाई धन से झोली भर जाने पर गंगा के किनारे महात्मा बनकर मुंशीरामजी ने उलटी गंगा बहाई. वकील तपावन का महात्मा बन गया—मट्टी का ढेला संग मर्मर की पवित्र प्रतिमा बन गई।

सब से पूर्व अपने बालकों को लेकर बीहड़ जंगल में मुंशीरामजी गए—फिर क्या था? जनता ने अपने हृदय के टुकड़ों को छाती से अलग कर महात्मा के चरणों में डाल दिया—महात्मा की अपील पर महिलाएं आभूषण फेंक देती थी—धनिक लोग धन वृष्टि करते थे और सेवक लोग तन-मन सर्वस्व समर्पण करते थे—ब्रिटिश साम्राज्य के भूतपूर्व मन्त्री प्रधान श्री रेम्से मेक्डोनल्ड को आश्रम वासी ब्रह्मचारियों की शान्त ध्यान मुद्रा में भगवान् बुद्ध की मूर्ति दिखाई दी थी—

महात्मा ने वानप्रस्थाश्रम को समाप्त करके सर्वजनहिताय सन्यास की दीक्षा ली—तब लीग और तबलीग के अभाव में शुद्धि और संघटन के झण्डे को खड़ा कर दिया—अहिंसा के व्रती महात्मा गांधी ने सन्यासी पर टीका की परन्तु कल्याण मार्ग का पथिक मौन रहा—हसता रहा—वह दिन भी आया कि दिल्ली में महात्मा गांधी जी ने सन्यासी का द्वार खटखटाया—और क्षमा याचना की।

मलकानों की शुद्धि की—धर्मपिपासु लाखों भाइयों को गायत्री मन्त्र देकर हिन्दु धर्म की पवित्र गंगा मे नहलाया—शुद्ध हुए भाइयों के साथ भोजन लेकर—उनके हृदय को मिलाया—बस क्या था स्वामी जी धर्मान्ध मुसलमानों के आखों के कांटे बनगए—पर हृदय इतना विशाल था कि उसमें शत्रु मित्र सब समा जाते थे—डा० अन्सारी—हकीम अजमल खान के हाथ में अपनी नाड़ी को रखकर सन्यासी निर्भय घूमते थे आखिर दिल्ली की विशाल राजधानी में उस दिन एक ऐसा जनाजा निकला था—जैसा कि बड़े बड़े बादशाहों का भी न था।

अट्टालिकाओं से हिन्दु मुसलमान व सिक्खों ने पुष्प वृष्टि की—यमुना के किनारे संन्यासी की अस्थियां राख बन गई संन्यासी हिन्दु जाति के दधीचि थे—गुरु दयानन्द ने अपनी हड्डी की राख जमीन में डलवाई—गुरु की राख में शिष्य की राख मिला दी और शुद्धि का कल्पतरु खिल उठा।

आज स्वामी जी अपने भौतिक देह में विद्यमान नहीं हैं परन्तु उनका यश' शरीर अमर है। इस्लाम के ऊपर भयंकर कलङ्क है कि एक मुसलमान ने रोगी संन्यासी पर गोली चलाई

और आर्य समाज को गौरव है कि उसके नेताओं ने किसी पर हाथ नहीं उठाया—किसी की जान नहीं ली-प्रत्युत जान की बाजी लगा दी—

स्वतन्त्रता के राह पर कूच कदम करते हुए वर्तमान भारत को याद रखना होगा कि यदि महर्षि दयानन्द ने विष का प्याला न पीया होता—अमर शहीद श्रद्धानन्द ने गोली न खाई होती—धर्मवीर प० लेखराम ने छुरा न खाया होता तो आज महात्मा गांधी की जय" और "जयहिन्द के नारे हिन्दुस्तान में सुनाई न देते।

दिल्ली में भाई मतिराम बलिदान हुए—गुरुतेग बहादुर शहीद हुए—सातसौ वीरों साथ बन्दा वैरागी खून की होली खेल गए—और अभी कुछ वर्ष हुए सन्यासी श्रद्धानन्द भी गोली खाकर शहीद हुए-प्रभु करे कि यह शहादत अमर बनी रहे।

शान्ति भंग का ज़िम्मेदार कौन है ?

सत्यार्थप्रकाश या कुरान शरीफ

(लेखक—श्र० प० रामचन्द्र जी आर्य मुसाफिर डी० ए० वी० इन्टर कालेज अजमेर)

सत्यार्थ प्रकाश को प्रकाशित होते हुए लगभग ७० वर्ष हो चुके हैं, इस बीच में सत्यार्थप्रकाश का अनुवाद भी लगभग १ दर्जन भाषाओं में हो चुका है और लाखों ही प्रतियां छप कर जनता के हाथों में पहुँच चुकी है किन्तु आज तक एक भी उदाहरण सुनने या देखने का नहीं मिला जहां सत्यार्थप्रकाश के कारण शान्ति भंग हुई हो या कम से कम पिता, पुत्र भाई, भाइयों में या अन्य सम्बन्धियों में कहीं भी मतान्धता का नमूना पेश आया हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने तो वेद विरुद्ध माता पिता आदि अन्य व्यक्तियों के साथ भी अत्यन्त शिष्टता व सभ्यता का व्यवहार करने का उपदेश दिया है। इसके विरुद्ध जब हम कुरानी सल्तनत के जमाने का हाल पढ़ते हैं तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सारा इतिहास खून से रंगा पड़ा है, सम्राट् औरङ्गजेब कुरानी शिक्षा का पूरा हामी था उसकी हकूमत में क्या दशा थी? पाठक इतिहास के पृष्ठों को जरा हमारे साथ लौट कर देखें।

उसने मतभेद के कारण अपने वंशजों पर जो अत्याचार किये उनके कुछ उदाहरण—

१—सूफी विचार रखने वाले बड़े भाई दारा को औरङ्गजेब ने पकड़ कर जान से मरवा डाला उसके शव को शहर में घुमाया। (देखिए यदुनाथ सरकार लिखित औरङ्गजेब, भाग २ पृष्ठ १८६ से २० तक)

२—भाई के लड़के को भी इसी तरह निर्दयता से मरवाया। (देखिये औरङ्गजेब भाग २ पृष्ठ २३६)

३—अपने छोटे भाई मुराद को औरङ्गजेब ने हाथी के पैर से कुचलवा दिया।

(औरङ्गजेब भाग २ पृष्ठ ६३ से १०० तक)

४—तीसरे भाई शुजा को औरङ्गजेब ने अराकान के जंगलों में भगा दिया जहां उसे शेर खा गया। (देखो औरङ्गजेब भाग २ पृष्ठ २८७ से २८८ तक)

५—अपने पिता शाहजहाँ को गद्दी से उतार कर औरङ्गजेब स्वयं बादशाह बना और बूढ़े बाप को आगरे के किले में कैद किया। ७वर्ष तक जेल की कड़ी यातनायें भोगकर वह पानी के लिये तरस २ कर परलोक सिधारा। (देखो औरङ्गजेब भाग ३ पृष्ठ ७ से १२३, व १३१ १४१)

६—औरङ्गजेब ने शिया (मुसलमानों का एक भेद) राज्य बीजापुर को तहस नहस करने में कोई कमी नहीं की थी (देखो वही पुस्तक भाग ४ पृष्ठ ३२१ से ३२६ तक)

७—गोल कुण्डा भी जो एक शिया सम्प्रदाय का राज्य था उसे भी बुरी तरह बर्बाद कराया। (देखो औरङ्गजेब भाग ४ पृष्ठ ३५५ से ३३६ तक)

८—औरङ्गजेब ने शाह मुहम्मद की जो मुसलमान फकीर था बड़ी दुर्दशा की और साधु सरमद को-जो बड़ा प्रसिद्ध और उच्चतम साधु था उसे फांसी दिलाई थी।

(देखो औरङ्गजेब भाग ३ पृष्ठ ९४ से १०० तक)

गैर मुसलमानों के प्रति—

पाठकगण ! अब तनिक उन व्यक्तियों के प्रति भी औरङ्गजेब के व्यवहार देखिये जो हिन्दू थे—

१—मुसलमान इतिहास लेखक खाफी खा लिखता है कि सतनामी साधु बड़े सदाचारी थे। दुराचार अथवा अनुचित रीति से धन लेना वे पाप समझते थे। इन पर बडे बडे अत्याचार किये गये और मरवाया गया। (औरङ्गजेब यदुनाथ सरकार कृत जिल्द १ पृष्ठ २१८)।

२—हिन्दुओं पर जजिया (हिन्दू होने का कर) लगाया गया। गैर मुसलमानों से दूना कर लेने का हुक्म दिया गया हिन्दू लोग सर्वजनिक दफ्तरों से हटा दिय गय। गैर मुस्लिम नागरिक नहीं हो सकते थे। किसी व्यक्ति का मुसलमान न होना सामाजिक और राजनीतिक अयोग्यता थी। (देखो औरङ्गजेब भाग ३ पृष्ठ २५१ से २३८,२७८)

३—गुरू तेग बहादुर को फासी दी गई। गुरु गोविन्द सिंह जी के २ बच्चे बेकसूर दीवार मे चिनवाये गय। (उपरोक्त पुस्तक भाग ३ पृष्ठ १२ से ३२० तक)

पाठकों को चरार भय से बचाकर इतना दिग्दर्शन कराने के उपरान्त अब हम अपने असली विषय पर आते हैं कि औरङ्गजेब ऐसा निर्दयी क्यों हुआ? यह स्वभावत प्रश्न प्रत्येक के हृदय में उठता होगा उसका हृदय इतने कठोरपन को प्राप्त हुआ कि जिसमें पिता भाई उस्ताद अड़ौसी पड़ौसी आदि तक के लिये शिष्टता सभ्यता का भाव न रहा वरन् नृशंस अत्याचारी बन गया? इसका कारण स्पष्ट है। औरङ्गजेब पक्का मुसलमान था। कुरान शरीफ का पूरा हाफिज और आमिल (उस पर चलने वाला) था। उसने कुरान शरीफ की प्रत्येक आज्ञा का पालन अपने जीवन में चरितार्थ करना फर्ज समझा था। अस्तु, कुरान शरीफ का एक सिद्धान्त (मसला) जहाद है जो धार्मिक युद्ध कहलाता है। जिस पर हर मुसलमान को अमल करने की आज्ञा है। जिसका नमूना पाठकों ने औरङ्गजेब के जीवन में देखा। अब जराकुरान शरीफ की आज्ञाओं का भी परिचय प्राप्त कीजिये,

हजरत मुहम्मद साहब के वास्ते हुक्म है '

१—अफानत तकरहुन्ना सहत्तामकूनो मौमीन। सूरत यूनस आयत ९९।

हे मुहम्मद? क्या तू जबर करेगा लोगों यहा तक कि वह मुसलमान हो जावें।

अर्थात् मुहम्मद साहब को हुक्म है कि उस तक जुल्म करो कि जब तक गैरमुसलमान मुसलमान न हो जावे,जुल्म जारी रहे। फिर आगे बताया है कि—

२—बक़ातलुलकुफ्फ़ार वाजबुन् अन्नाल हुम तदू वेहि। अर्थात् ऐ मुहम्मद! जंग करना काफ़िरों से वाजिब है चाहे वे इसका प्रारम्भ न करें तात्पर्य यह है कि कोई लडे या न लडे मगर जरूर लड़ो। और देखियेगा

३—ला तत्तखेजुल मौमें नून ल्काफे रीन औलेया मिन दुनिल मौमे नीना इत्यादि

(सूरत आलउमरान २५ वीं आयत)

भावार्थ—मुसलमानों को चाहिये कि काफिरों को दोस्त न बनावें सिवाय मुसलमानों के।

४—या ऐयोहल्लजीना आमनु ला नत्तखेजु काफरीना औलेया आमिन दुनिल मौमेनीन।

ऐ लोगो ! जो ईमान लाये हो, मत इख्तियार रो काफ़िरों को दोस्त,सिवाय मुसलमानों के।

५—वकातेलुहुम् हत्ता लातकूना फितनतुन् व कूनल्लजींना कुल्लहू लिल्लाहे।

(सूरत अन्फाल आ० ३८)

ऐ मुसलमानो ? और लड़ा उनसे (काफिरों) यहा तक कि न रहे फितना यानी गलव फ्फार का और होवे दीन तमाम वास्ते ल्लाह के।

पाठक—इस आयत पर जलालैन जो एक रान शरीफ़ का प्रसिद्ध टिप्पणीकार है लिखता "और काफ़िरोंको क़त्ल करो यहा तक कि शिरक रे कुफ्फार का नाम व निशान बाकी न रहे रे तमाम दीन अल्लाह वहदहूलाशरीक (एक वर) का हो जावे कि इसके सिवा किसी की स्तिश (पूजा) न हो।

इसी प्रकार की शिक्षाओं के फल स्वरूप सेद्ध देशभक्त डा० जीवाराम जी फ़ीरोजाबाद के तवे में स्त्रियों बच्चों सहित और कतिपय बीमारों हित अपने घर में जला दिये गये थे। दूसरे मर शहीद स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी नपुर में बलवे के समय समाप्त किये ये थे।

हजरत मुहम्मद साहब के वास्ते खुदा की ओर हुक्म हुआ है कि

६—या ऐ योहन्नबियो हर्रे जिल मेंमेनीना नल किताले इन्कुम् मिन्कुम् इशरुला सावेरूना ले वू मा ऐय्यतैन फ़आख़रजविहि। सूरत फाल।

ऐ पैगम्बर ! मुसलमानों को काफ़िरों से लड़ने आमादा करो अगर तुममें है आदमी सबर करने वाले और मुकाबले पर जमने वाले होंगे तो इनमें से दोसौ पर गालिब आयेंगे।

इस्लामी खुदा के दोस्त कौन हैं ?

७—इन्नल्लाहा यहवेल्लजीना युकातेलूना फिस वि लिल्लाहे सफ्फन्।

(सूरत सफ़ आयत ४)

भावार्थ—निश्चय अल्लाह उनको दोस्त रखता है जो लड़ते हैं उसकी राह में सफ़ बाध कर।

इस्लामी खुदा का काफ़िरों पर रोष

८—सालेकि फ़िकुलूबेलजीना कफ़रूल रौब फजरबू तौकला अनाके वजरबू मिन्हुम कुल्लनवान्।

अन्फाल आ० ६

मै डालूँगा काफ़िरों के दिलों मे रौब पस उनकी गरदनों पर और काटो उनके पोर २ अर्थात् उंगलिया।

पाठक विचार करें मृत्यु दण्ड के अभियुक्त को भी ऐसा कठोर दण्ड नहीं दिया जाता जैसाकि कुरान का खुदा फ़क़त मुसलमान न होने वाले व्यक्तियों को दिला रहा है।

मेल में दगा करने की आज्ञा

९—फ़इज़लेकि तुमुल्लजीना कफरू फ़जरबकावे हुता।

—सू० मुहम्मद आ० ४

भावार्थ—बस अब तुम मुलाक़ात करो उन लोगों से कि काफ़िर हुए पस मारो गरदने उनकी यहा तक कि चूर २ करदो उनको।

पाठक ! शायद इसी आयत की शिक्षा से प्रभावित होकर अफ़ज़ल खा ने शिवाजी महाराज से दगा की थी।

अब हम अपने निष्पक्ष मुसलमान भाइयों से पूछना चाहते हैं कि वह बतायें कि अशान्ति का जिम्मेदार कौन है सत्यार्थप्रकाश या कुरान जिसकी सैकड़ों आज्ञायें कठोरता से भरी हुई हैं । आज भी लखनऊ में शिया सुन्नियों के बलवे इस बात के स्पष्ट उदाहरण हैं । इस्लामी वजारत होते ही हिन्दुओं के साथ पहले ही गर्दन दबोचने का आरम्भ कर दिया इसलिये हम स्पष्ट शब्दों में कहना चाहते हैं कि कुरान शरीफ़ ने हिन्दुस्तान में नहीं बरन् अपने जन्मस्थान अरब आदि समस्त देशों में जहा जहा इस्लाम फैला है सर्वत्र अशान्ति कुरान शरीफ़ से ही फैली है और फैलती रहेगी।

वर्ण-विद्वेष की वेदी पर 'कुली' का बलिदान

लेखिका—श्रीमती निर्मला ब्रह्मदत्त दयाल एफ० ए० डरबन (अफ्रीका)

[इस करुणा जनक कहानी को जो एक सच्ची घटना को लेकर लिखी गई है पढ़ते हुए कौन सहृदय भारतीय है जिसकी आंखों से हमारी तरह आंसुओं की धारा न बह निकलेगी। आज भी ऐसी घटनायें सभ्यजगत् में घटित हो रही हैं यह वर्तमान सभ्यता पर घोर कलङ्क है। मनुष्य मात्र को बन्धु समझने का उपदेश देने वाली वैदिक संस्कृति का प्रचार और देश की स्वतन्त्रता ही इस घोर कलङ्क को दूर करने का एक मात्र उपाय है जिसके लिये प्रत्येक देश हितैषी को अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। —सम्पादक]

"कब आवेगा मेरा लाल? आज तो उसने बड़ी देर कर दी," गंगा अपने ध्यान में डूबी हुई एकाएक बोल उठी।

सांझ की मनोरम वेला थी।

अंशुमाली प्रतीची में अस्त हो चुके थे। आकाश में झिलमिल तारे उगने लगे थे। पवन मंथरगति से बह रहा था। प्रकृति की छटा मन को उद्वेलित कर रही थी। उपवन के वृक्ष हरे थे। नवपल्लव विहंस रहे थे, कलियां विकसित होकर नेत्ररंजन कर रही थीं। दिन भर के कामकाज से निपटकर मनुष्य विश्राम और शयन की तैयारी कर रहे थे, पर गंगा के चित्त में चैन कहां? वह दक्षिण अफ्रीका के प्रसिद्ध नगर डरबन से सात मील के फासले पर जेकब्स की पहाड़ियों की तराई मे अपनी झोपड़ी के टिमटिमाते प्रकाश में बैठी हुई अपने जीवन के एकमात्र सहारा गुलाबचन्द की राह देख रही थी। आज गंगा को रह-रह कर वे दिन याद आ रहे थे, जब वह अपने प्राणेश्वर की छत्रछाया में सुख और चैन की बंसी बजाती और अपने जीवन का प्रतिपल मोद-विनोद में बिताती थी। उसके पति श्यामलाल एक शिक्षित, सच्चरित्र और सहृदय व्यक्ति थे। वे गङ्गा जैसी सती साध्वी को पत्नी के रूप में पाकर निहाल हो गये थे। इस आदर्श दम्पति की प्रशंसा करते लोग अघाते नहीं थे। जेकब्स की ऊँची पहाड़ी पर श्यामलाल का आलीशान बंगला था जिसकी सजावट देख कर लोग मुग्ध हो जाते थे। बंगले के आसपास फुलवारी शोभा दे रही थी। घर धनधान्य से परिपूर्ण था, नौकर चाकर इशारे पर नाचते थे और मेहमानों की भीड़ लगी रहती थी।

पर विधि की विडम्बना-भाग्य का फेर? एक दिन अचानक श्यामलाल बीमार पड़े और हृदय की गति अवरुद्ध हो जाने के कारण इस लोक से चल बसे। गङ्गा के गोड़ के नीचे से मानो धरती खसक गई। उसके सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा। अबोध बालक गुलाबचन्द अनाथ हो चिल्ला उठा और रोते-रोते अधमरा-सा हो गया। श्यामलाल क्या गये, अपने साथ ही सुख-समृद्धि भी लेते गये। वे अपने कारबार में कुछ कर्जदार हो गये थे, अतएव मौका देखकर महाजन उनकी जायदाद पर वैसे ही टूट पडे जैसे मरे-ढोर पर गिद्धों का समूह। बंगला बिक गया, सम्पत्ति स्वाहा हो गई। गङ्गा को पहाड़ी की तराई में भाड़े की एक झोंपड़ी में रहने को मजबूर होना पड़ा। जहां भले दिन में रिश्तेदारों और मेहमानों से गङ्गा के नाकों दम आ जाता था वहां अब उनके दर्शन भी दुर्लभ हो रहे थे।

आज गङ्गा की विचित्र अवस्था हो रही थी, उसका हृ य एक अज्ञात आशङ्का से कंपित हो रहा था। समय अपनी स्वाभाविक-गति से चला जा रहा था पर गुलाब का कोई पता नहीं। गङ्गा के लिए एक-एक क्षण एक-एक युग हो रहा था। ज्यों ज्यों समय बीत रहा था त्यों-त्यों उसकी व्याकुलता बढ़ती जाती थी ब्लफ की पहाड़ी पर श्वेताङ्ग सेना की छावनी थी, वहा स दस बजने की घंटी बजी। गङ्गा ने देखा कि चूल्हे के समीप ही उसके प्यारे गुलाब का भाजन रखा हुआ है, जो अभी तक गरम है। ठंडा नहीं होने पाया है। फिर दरवाज की तरफ उसकी टकटकी बँध गई। ग्यारह की घण्टो सुनाई पड़ी, पर गुलाब की पदध्वनि नहीं, गङ्गा की आखें देखते देखते पथरा गई । आशा निराशा में प'रणत होने लगी और निराशा आ ङ्का में। गुलाब जा ता है कि जीर्णशीर्ण झोपडे में मा अकेली है तिस पर फौजी गोरों के नाना प्रकार के उपद्रव होते रहते हैं इसलिये वह इरवन शहर में दिन रात नौकरी करके शाम को छ बजे पहली गाड़ी से घर भागता है । उसको मा की चिन्ता ल ी रहती है। मा के सिवाय और उसका है भी कौन ? जब वह चार सालका अबोध बालक था तभी उसके पिता, जिनकी उसे धुँधली सी याद है उसे माता की गोद में छोड़ गये थे । म ता ने ही तरह तरह की तकलीफें झेलकर उसे लाड़ प्यार से पाला था। और पिता का बिछोह अखरने नहीं दिया था । अब वयस्क होने पर गुलाबचन्द ऐसी ममतामयी माता की कैसे उपेक्षा कर सकता था ?

आज गङ्गा के हृदय में अतीत की स्मृतिया उथल-पुथल मचा रही थीं। उसे वह बात याद आई जो उसके प्रीतम ने उससे अन्तिम विदा लेते समय कही थी—"गङ्गा मैं तो अब चला। मेरी आशा छोड़ दो। मुझे पूरा विश्वास है कि गुलाब को योग्य बनाने में तुम कोई बात उठा नहीं रक्खोगी।" गङ्गा उसके वक्षस्थल पर झुकी हुई आखों से जल धारा बहा र ी थी। श्यामलाल की बात सुनकर वह मानों स्वप्न से जाग उठी। आसन्न विपत्ति की सभावना से उसका हृदय करुणा से भर आया। उसने सजल नयन से बड़े ही वेदना पूर्ण स्वर में पूछा था, "मुझे किसके सहारे छ डे जा रहे हो ?"

"गङ्गा तुम्हें एकमात्र भगवान् के सहारे, उन पर भरोसा रखो, वही हैं अनाथों के नाथ और दुखियों के त्राता, वही तुम्हारा बेड़ा पार लगावेंगे। गुलाब हमारा अनमोल निधि है, इसकी सूम की सम्पत्ति की भाति रक्षा करना," कहते हुए श्यामलाल की हिचकी बध गई और उनके प्राण पखेरू उड़ गये।

भाग्य के विधान के सामने गङ्गा ने सिर झुका दिया। उसका खिला हुआ यौवन मुरझा गया, सोहाग में आग लग गई, वरदान भा से दुर अभिशाप की रेखा बन गई। उसके सुख के दिन बीत गये, आकाक्षाएँ अतृप्त रह गईं, आशायें धूल में मिल गईं। पर गङ्गा ने अपने मर्माघात को ऐसा छिपा रखा कि गुलाब को उसका आभास न मिलने पाया। कभी कभी गङ्गा के हृदय में व्यथाका वेग ऐसा उमड़ आता कि गुलाब के सामने बेबस आसू निकल पड़ते। तब गुलाब अपनी बाल सुलभ तोतली बोली में पूछता, 'मा, टुम लोटी क्यों हो ? 'पता जी कहा तले गये ?' इस पर गङ्गा को आखों में करुणा और दी · र मर्ती

हो उठती। हार्दिक भाव को छिपाने का निष्फल प्रयत्न करते हुए बच्चे को समझाती, 'तुम्हारे पिता उस लोक को चले गये, जहा से लौट कर कोई नहीं आता, मुन्ना।" और इस भोले बच्चे का मुँह चूम लेती, उसे हृदय से लगाकर प्यार करने लगती, गुलाब भी दुलार से मां के आंचल में छिप जाता।

दिन टिकते नहीं—किसी तरह कट ही जाते हैं। कितनी निशाएँ आई और गङ्गा एव गुलाब को निद्रा की गोद में खिलाकर उषा की लाली में लुप्त हो गई। कितने पतझड़ और वसन्त आये और अपने रङ्ग दिखाकर चले गये। गङ्गा भी भाग्य की ठोकरें खाती अप्रतिभ हो उठती, किन्तु वह अपने कर्तव्य से कभी विचलित न हुई। अपने पति का अन्तिम आदेश उसे कर्तव्य-पथ में आगे बढ़ाता रहा।

पर कब तक योंही चलता रहता? उसके पास जो कुछ जमा-पूँजी थी, वह समाप्त हो चली। अब फाका करने की नौबत आगई। गुलाब अठारह साल का युवक हो चुका था। उसने अङ्गरेजी की आरम्भिक शिक्षा प्राप्त कर ली थी। हिन्दी का भी अच्छा अभ्यास कर लिया था माता की हालत उससे छिपी नहीं रही। उसने पढ़ना छोड़ कर डरबन में सेन्ट्रल फरनिचर फेक्टरी में नौकरी कर ली, जेकब्ज से डरबन जाने और वहा से आने के लिये रेलगाड़ी का मासिक टिकट कटा लिया। सबेरे छः बजे की गाड़ी से काम पर जाता और शाम को छः बजे की गाड़ी से घर लौट आता, इस क्रम में कभी कोई अन्तर नहीं आता था। वेतन इतना कम मिलता कि किसी तरह मां बेटे का निर्वाह हो जाता।

गंगा का रूप-लावण्य कामुक गोरों की दृष्टि से ओझल न रह सका। वे गंगा को फंसाने और उसका सतीत्व नष्ट करने का प्रयत्न किया करते, पर गंगा के सामने उनकी दाल नहीं गलने पाती थी। इस पर वे क्रोधोन्मत्त होकर कोई न कोई उपद्रव मचाया करते। एक समीपवर्ती श्वेताङ्ग गंगा के तिरस्कार की ठोकर खाकर गरज पड़ा, "टुम कुली औरट। इटना गंडा। बडन पर एक सारी, वह भी फटी और पेबन्दों से भरी। इस पर भी टुम मेरी बाट नेई सुनटा। शेखी दिखाटा है।" बेचारी गङ्गा मन मसोस कर रह गई। क्या निर्धनता के कारण उसके सतीत्व का कोई मूल्य ही नहीं। सभ्यता की शेखी बघारने वाले ये श्वेताङ्गों वास्तव में शैतान नहीं तो और क्या हैं? इन श्वेताङ्ग ने हबशी स्त्रियों से व्यभिचार कर दक्षिण अफ्रिका में एक नई वर्णसंकरी कौम की सृष्टि कर डाली है जिन की संख्या १० लाख तक पहुँच चुकी है। यह कौम 'कलर्ड' कहलाती है और संसार को श्वेताङ्गों के सदाचार और सभ्यता का नमूना दिखलाती है।

श्वेताङ्गों की शैतानी से गुलाब परिचित था, इस लिए वह शहर में कभी देर न करता। शाम को छः बजे की गाड़ी से अवश्य घर आ जाता। पर आज अर्द्ध रात्रि तक गुलाब नहीं आया। गङ्गा वैसे ही तड़प रही थी जैसे जल बिन मछली। उस का शरीर शिथिल हो रहा था। कलेजा काँप रहा था। अचानक किसी ने दरवाजा खटखटाया, गङ्गा खुशी से उछल पड़ी। पर किवाड़ खोलने पर गुलाब की जगह एक अज्ञात व्यक्ति को खड़ा पाया। आगन्तुक ने पूछा, क्या यही गुलाब का घर है और तुम्हीं गुलाब की मां हो?" अनुकूल

उत्तर पाकर उसने कहा, "गुलाब को गहरी चोट आई है, वह स्वंगेला अस्पताल में पड़ा है।" गङ्गा पर तो मानों वज्र फट पड़ा, वह अवाक् रह गई। कुछ पूछने भी नहीं पाई कि आगन्तुक वहाँ से चला गया।

अब वह क्या करे ? अर्द्धरात्रि बीत चुकी है। तिमिराछन्न रजनी भादों की कुहू यामिनी को मात कर रही है। ग्यारह बजे की अन्तिम रेल गाड़ी और बस भी जा चुकी है। अब तो स्वगेला जाने का और कोई साधन नहीं रहा। पैदल जाती है तो मार्ग में पियक्कड़ हबशी और कामान्ध-श्वेताङ्गों का खतरा है। यदि किसी तरह वहाँ पहुँच भी जावे तो रात्रि के समय उसे अस्पताल में प्रवेश भी कौन करने देगा ? इस लिये सवेरे ही घर से निकलना उसे उचित जँचा। वह विवश हो कर खाट पर गिर पड़ी। नींद कहा ? रोते-रोते आँखें सूज गई।

सवेरे चार बजे उठ बैठी। देह में दम नहीं रहा, दर्द भी हो रहा था। पाँव उठाये न उठते थे। आंखें ऐसी सूज गई थीं कि रास्ता नहीं सूझता था। किसी तरह वह जेकब्स स्टेशन पर पहुंच गई। पूछने पर पता चला कि अभी तो ५ बजे हैं। गाड़ी में घण्टा भर देर है। उसके सिर में चक्कर आ रहा था, इस लिये घड़ी भर खड़ी-खड़ी बिताना उसके लिये कठिन हो गया। बाहर दो चार बेञ्च पड़े थे, पर उन पर बड़े अक्षरों में लिखा था — For Europeans Only अर्थात् "सिर्फ श्वेताङ्गों के लिये" दुःख, ग्लानि और निर्बलता के कारण उसे ऐसा भासित हुआ कि वह चक्कर खाकर गिर पड़ेगी। इस लिये धुँधले प्रकाश में समीप ही एक बेञ्च दिखाई पड़ा, उसी पर गङ्गा अपने हृदय का भार लिये बैठ गई।

अभी स्थिर भी न होने पाई थी कि रेलवे का एक गोरा कर्मचारी चहल कदमी करते उसके पास पहुच कर पूछ बैठा, What is your nationa'ity ? Aren't you a coolie oman ?" अर्थात् "तुम्हारी कौमियत क्या है ? क्या तुम एक कुली औरत नहीं हो ?" बेचारी गङ्गा घबड़ा उठी। अभी वह कुछ बोलने भी न पाई थी कि गोरे ने कड़क कर कहा, "क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता कि यह बेञ्च श्वेताङ्गों के लिए है — तुम कुली-कबाड़ी के लिए नहीं है। तुम्हारी ऐसी हिम्मत ? इस बार तुम्हें छोड़े देता हूँ। फिर कभी ऐसी ढिठाई न करना, अन्यथा पुलिस थाने की हवा खानी पड़ेगी।" गङ्गा भी आखिर इन्सान और भारत की सन्तान थी। गोरे की कटु उक्ति उसे शूल की तरह चुभ गई। हाय ? आज दक्षिण अफ्रीका में हमारी यह दशा ? हमारे बैठने से बेञ्च तक अशुद्ध हो जाती है ? राम और कृष्ण के वंशजों की यह बे इज्जती ? यदि भारत स्वतंत्र होता तो क्या हम कुली-कबाड़ी बनकर यहां आते और इस तरह अपमान की ठोकरें खाते। हिन्दुस्तान की विदेशी सरकार ने हमें नेटाल के गौरे प्लान्टरों की गुलामी करने के लिए यहाँ भेजा अन्यथा हम यहा आते ही क्यों ?

इस राष्ट्रीय अपमान से गङ्गा ऐसी मर्माहत हो उठी कि कुछ क्षण के लिए अपने प्यारे गुलाब को भूल सी गई। जब सिगनल गिरा इञ्जिन की सीटी सुनाई दी तब उसका ध्यान टूटा। गाड़ी आ पहुची। गोरों के डब्बे आगे निकल गये। उनमें तो कोई भारतीय प्रवेश ही नहीं कर सकता, उनके लिए तो अलग रिजर्व डब्बे हैं, जिन में हबशियों के साथ उन को यात्रा करनी पड़ती है। दक्षिण

अफ्रीका में हबशी और भारतीय एक ही श्रेणी के मनुष्य समझे जाते हैं। गङ्गा भीड़ में धक्के खाती हुई एक रिजर्व डब्बे मे घुस गई। वह डब्बा हबशियों से भरा था। दो-चार हिन्दुस्तानी मजदूर भी बैठे थे एक हबशी के पास जगह खाली देख गङ्गा वहा जा बैठी। हबशियों के देह से ऐसी दुर्गन्ध निकल रही थी कि गङ्गा की नाक फटने लगी। उनमे कुछ शराब के नशे मे चूर अट सट बक रहे थे। उस वातावरण मे गगा का दम घुटने लगा और वह मूर्छित होकर गिरना ही चाहती थी कि खगेला स्टेशन आ गया। वह झटपट उतर कर अस्पताल की ओर अग्रसर हुई।

गगा को अस्पताल के अहाते मे प्रविष्ट होते देर न लगी। उसका दिल धड़कने लगा—आखों में गगा की धार फूट पड़ी। कैसा होगा, मेरा लाल? कैसे और कितनी चोट आई है। पूछने पर अस्पताल के अर्दली ने कहा कि अभी मुलाकात के समय मे बहुत देर है। गगा का धैर्य टूट गया, ऐसी विपदा उसपर कभी नहीं पड़ी थी। एक एक क्षण युगवत् मालूम होने लगा। समय काटे नहीं कटता था। हृदय गुलाब की ओर और आखें घण्टी की ओर लगी थी। बड़ी प्रतीक्षा के बाद घण्टी बजी, गङ्गा अन्दर गई नर्स से उसने पूछा कि 'गुलाब नामक युवक आहत होकर कल किसी समय यहा दाखिल हुआ है उसे मै देखना चाहती हू। मैं उसकी मा हूँ।" दयावती नर्स के अन्तःकरण मे करुणा का सचार हो आया। गङ्गा की दयनीय दशा पर उसे बड़ा तरस आया। गङ्गा को ढाढस बधाते हुए उसने उगली से कमरे की ओर सकेत किया।

गङ्गा झपट कर कमरे मे पहुँची। मा ने बेटे को देखा और बेटे ने मा को। मा ने अपने दोनों हाथ फैला दिये बेटा माँ से चिपट गया। कुछ देर दोनों मौन रहे। आखिर गुलाब ने ही अपने को समाला। उसने अपनी गाथा मा को सुनाना शुरू किया, मां मैं रगद्वेष का शिकार हो गया। मैं एक गोरे के यहा फैक्टरी मे कुछ फर्नि चर पहुँचाने गया था। लौरी से माल उतार कर मैंने गृहस्वामिनी के आदेशानुसार यथा स्थान पर रख दिया — केवल एक कुर्सी बाहर रह गई थी उसे भी अन्दर पहुँचा कर मैं रसीद ले लेना चाहता था। इसी बीच उस घर का एक उद्दण्ड गोरा युवक बिगड़ कर बोला, 'ओ कुली? जल्दी कुर्सी ला दे हमे बाहर जाने मे देर हो रही है, यह अपमान मुझ से सहा न गया और मैंने उस से कहा कि जबान सम्भाल कर बोलो। बस, उस ने मेरे मुह पर एक घूसा जमा ही तो दिया। मैंने भी जवाब मे उसके मुह पर एक तमाचा जड़ दिया। अब क्या था? उस घर के सभी मर्द औरत पागल हो गए। किसी ने लाठी उठाई और किसी ने लोहे की छड़ और मुझ पर निर्दयता पूर्वक लगे प्रहार करने। मेरा सिर फट गया, हड्डिया टूट गई। मै बेहोश हो गया। जब होश आया तो अपने को यहा अस्पताल मे पाया।

गङ्गा की छाती फट गई। व्यथा से उसकी वाणी मूक हो गई। उसके मन मे तूफान चल रहा था। वह सोच रही थी कि क्या हिन्दुस्तानी मनुष्य नहीं है फिर मनुष्य के प्रति मनुष्य का यह पैशाचिक व्यवहार। हमारी चमड़ी सफेद नहीं है, इस लिए हम अपमान के पात्र हैं। भगवान् ने हमे किस पाप के कारण भारतीय बनाया? यदि बनाया ही तो कुली बनाकर नेटाल मे क्यों भिजवाया? भगवन्? मेरे लाल को किसी तरह बचा दो अन्यथा मेरा तो सर्वनाश निश्चित है। यही

मेरी वर्षों की सचित अनमोल निधि है. इसकी रक्षा कर मुझे प्राणदान दो, मेरे नाथ। इस अभागिनी अबला का इसके सिवा और कोई सहारा नहीं है।

उसी समय डाक्टर और नर्स ने कमरे मे प्रवेश किया। गङ्गा को डाक्टर ने एकान्त में बुला कर कहा. "इस की हालत बहुत नाजुक है। अभी एक्स-रे करवाने ले जाना है, उस से सच्ची स्थिति का पता लग जायगा। तुम कुछ देर ठहरो. वहा से लौटने पर फिर मिल लेना।' गङ्गा की वाणी में बल रहा नहीं, वह डाक्टर के पैरों पर गिर पड़ी मानों मूक भाषा में कह रही हो कि इसको बचा लोगे तो मै जन्म भर तुम्हारी ऋणी रहूँगी। नर्स ने समझा बुझा कर उस से डाक्टर के पैर छुड़ाए ।

गङ्गा अचेतन अवस्था में अस्पताल के अहाते में बैठी रही। प्रतीक्षा की घड़ी बड़ी दुखदाई होती है। आखिर गुलाब एक्स-रे करा कर स्ट्रेचर पर लौटा— गङ्गा दौड़ पड़ी। नस से मालूम हुआ कि गुलाब के अन्दर की कुछ हड्डियाँ टूट गई और पेट की नसे भी अस्तव्यस्त हो गई हैं। इस लिये उस का आपरेशन आवश्यक है। कल सवेरे दस बजे डाक्टर ने ऑपरेशन करने का निश्चय किया है।

गङ्गा के काटो तो लोहू नहीं। ऑपरेशन का नाम सुनते ही एक अज्ञात भय से वह काप उठी। क्या होगा इसका नतीजा ? ईश्वर, मैं बहुत दुःख भोग चुकी, अब और विपत्ति में मुझे मत डालो। क्या तुम इतने निठुर हो गये ? मेरे प्राण के आधार-जीवन का एक मात्र सहारा गुलाब को मुझ से मत छीन लेना। तुम बडे दयालु हो, मुझ पर दया करो। मेरे लाल को बचा लो।

गङ्गा वहा से हटना नहीं चाहती थी, पर अस्पताल के नियमानुसार उसे पत्थर की छाती बना कर घर लौटना पड़ा वह रात्रि उसके लिए काल रात्रि बन गई। भगवान्-भगवान् रटते विहान हुआ। गुलाब ही उस का सर्वस्व था उस की रक्षा के लिए नाना प्रकार की मनौती करती रही गुलाब के लिये वह क्या नहीं कर सकती थी ? उसके पास था ही क्या ? बस, टूटी फूटी भाड़े की झोपड़ी और जीर्णशीर्ण काया। यदि उसके पास दुनिया की दौलत होती तो उसे भी वह गुलाब के लिये निछावर करने में नहीं हिचकती। यदि उस के रक्त की अन्तिम बूंद से गुलाब की रक्षा हो सकती तो उसके लिये भी वह प्रस्तुत थी

रात की खुमारी से गङ्गा की आँखें चढ़ी हुई थीं। उसने हाथ मुंह धोकर नित्य की भाँति चाय बनाई और ज्योंही चाय की प्याली उठाकर मुँह के पास ले गई त्योंहीं हाथ काँप जाने से प्याली गिर कर चूर-चूर हो गई इस अपशकुन से वह एक बारगी सिहर उठी। उस का हृदय जैसे एक दम सूना हो गया, जैसे मौन की व्यथा ने उसे स्तब्ध कर दिया हो।

जब कुछ चेतनता आई तो केटली में बची खुची चाय पीकर उसने सतोष किया। एक राहगीर से पूछने पर मालूम हुआ कि नौ बज गये। स्टेशन तक गोडे गोडे जाने पर साढ़े नौ की रेलगाड़ी तो छूट जायगी। दूसरी गाड़ी है साढ़े दस बजे। पर गङ्गा यो शीघ्र अस्पताल पहुँचना चाहती थी। इस लिये वह घर से दौड़ती हुई बस स्टेशन पर पहुँच गई।

करीब पन्द्रह मिनट पर 'बस' आई। हिन्दु-

स्तानी और हबशियों के लिये पीछे की बैठकें खाली थीं। गङ्गा ने ज्योंही कदम बढ़ाया, त्योंही कन्डेक्टर आ पहुँचा और बोला इस में कुलियों के लिये जगह नहीं है, दूसरी 'बस' के लिये इन्तजार करो।" गोरे का हुक्म टालना, जिसको टालना एक आफत मोल लेना था। गङ्गा पीछे छूट गई। आधी घड़ी के बाद दूसरी बस आई। वहां कोई श्वेताङ्ग यात्री नहीं था, इस लिये वह गङ्गा के बार बार इशारा करने पर भी वह खड़ी नहीं हुई चलती बनी। उस समय गङ्गा के हृदय में जो व्यथा हो रही थी वह बयान से बाहर है। एक तरफ उसका बचा जीवन-मरण के आधार में लटक रहा है और दूसरी ओर श्वेताङ्गों की यह हृदय हीनता भारतीयों के प्रति यह उपेक्षा ? क्या कोई गोरी महिला के साथ ऐसी दुर्व्यहार करने का साहस कर सकता है ?

गङ्गा के धीरज का बाँध टूट गया वह तड़प उठी। मैं कुली-कबाड़ी हूँ, इस लिये अपने गुलाब के पास समय पर नहीं पहुच सकती। हा ईश्वर मेरा गुलाब आज कैसा होगा। आपरेशन से पहले उससे भेंट होने की भी आशा न रही। उसकी बड़ी बड़ी काली आखों से सरिता बह रही थी और वह उन्मत्त की भाति सिर धुन रही थी। ठीक उसी समय तीसरी 'बस' आ गई। इस बार 'बस' ठहरी, क्योंकि कुछ गोरे उसकी प्रतीक्षा में खडे थे। 'बस' के पिछले भाग में गैर-गोरों के लिये जो बैठकें हैं उन पर पाच-सात हबशी डेरा जमाये हुए थे। इस लिये कन्डेक्टर ने गङ्गा को रोकना चाहा, पर वह रुकी नहीं, कूद कर चढ़ ही गई। धैर्य की भी कोई सीमा होती है। वह सब कुछ सहने पर तैयार हो गई।

कन्डेक्टर बिगड़ा। कुली नारी की यह हिम्मत ? वह अपनी शान व सत्ता दिखाये बिना कैसे संतोष कर सकता। उसने डपट कर कहा, "उतरो, नहीं तो पुलिस के हवाले कर दूंगा।" गङ्गा ने उतरने से इन्कार किया। बस चली, पर अगले स्टेशन पर रुक गई। वहा पुलिस की चौकी थी। कन्डेक्टर ने थाने में रिपोर्ट लिखवाई। पुलिस ने गङ्गा को बस से उतार कर बयान लिया। आखिर पानी रक्त से अधिक गाढ़ा होता है। एक अंग्रेज दूसरे अंग्रेज का ही पक्ष लेगा, चाहे उसका पक्ष न्याय सङ्गत हो अथवा अन्याय मूलक। इन्सपेक्टर ने परिस्थिति का परिचय पाकर इतनी दया तो अवश्य की कि गङ्गा को अस्पताल जाने की छूट दे दी, पर इस शर्त पर कि दूसरे दिन दस बजे थाने पर हाजिर हो जावे।

गङ्गा को और कोई चिन्ता नहीं थी, वह तो किसी तरह अस्पताल पहुचने के लिये छटपटा रही थी। जब वह अस्पताल पहुँची तो गुलाब ऑपरेशन घर में दाखिल हो चुका था। भेंट से वंचित होना पड़ा। अन्दर उसकी आत्मा रो रही थी। बाहर उस का शरीर काप रहा था गङ्गा अपनी धुधली आखों से ऑपरेशनगृह के दरवाजे की ओर देखती रही। जब उसने नर्स को वह से निकलते देखा तो जैसे हृदय के उस अतृप्त स्थल पर किसी ने जोर से चाकू भोंक दिया हो। वह कुछ देर के लिये इतनी मुमूर्षु हो गई कि उन से कुछ पूछना भी असम्भव हो गया।

गङ्गा को देखकर नर्स का चेहरा बदल गया, उस की आखों में आसू छलछला आये। उसकी मुखाकृति से ही गङ्गा ने समझ लिया कि उसका सर्वनाश हो चुका। आखिर गङ्गा ने कपित स्वर में पूछा, 'बताओ नर्स, मेरा गुलाब कहां है ?"

नर्स का कंठ अवरुद्ध हो गया उसने उँगली से आकाश की ओर इशारा किया। गङ्गा समझ गई और बेहोश होकर गिर पड़ी। नर्स उसे उठा कर एक कमरे में ले गई, बहुत यत्न करने पर गङ्गा होश में आई। गङ्गा ने फिर पूछा, उसने कुछ कहा भी, नर्स?"

"हाँ, कह रहा था कि मा को आज बहुत देर हो गई। अब मा से मिलने की कोई आशा नहीं रही। मा से कह देना कि उन का पुत्र वर्णविद्वेष की वेदी पर बलिदान हो गया। यदि हो सके तो भारत माता के पास भी सन्देश भेज देना कि उसकी पराधीनता ही उसकी प्रवासी सन्तान के सर्व दुःखों का मूल है।' कह कर नर्स मौन हो गई।

इस आघात को गङ्गा सह न सकी। वह हाय गुलाब' कह कर जो गिरी तो फिर न उठ सकी। डाक्टर आये, नर्स दौड़ी। नाड़ी देखी, स्पन्दन का पता नहीं। हृदय की परीक्षा ली, वहां भी गति बन्द है। डाक्टर और नर्स के चेहरे पर घबराहट थी, उनको जैसे काठ मार गया हो, वे अपनी २ जगहों पर मूर्तिवत् खड़े गङ्गा के मृत शरीर को देख रहे थे।

खैर प्रवासी भाइयों को जब यह खबर मिली तो वे सैकड़ों की संख्या में अस्पताल पहुंच कर गङ्गा और गुलाब को सब उठा लाये। उनकी अर्थी अमरेजी श्मशान पर पहुँचाई गई। वहाँ माँ-बेटा एक ही चिता पर सुलाये गये। वेद-मन्त्रों से अग्नि-संस्कार हुआ। चिता धाय-धाय जलने लगी और कुछ ही देर में उनका भौतिक-चिन्ह मिट गया।

न गङ्गा रही, न गुलाब रहा, पर उनकी कहानी रह गई जो प्रवासी भारतीयों को अपनी दासता और अपने देश की परवशता की याद दिलाती रहती है। यह भी आज तक किसी को नहीं भूला है कि गुलाब की हत्या करने वाला श्वेताङ्ग केवल ५० पाउण्ड जुर्माना देकर छूट गया। जज ने फैसला सुनाते समय कहा था कि "इस मामले में क्या करना चाहिये, कुछ समझ में नहीं आता।" इस पर एक भारतीय अखबार ने टीका करते हुए लिखा था, "न्यायाधीश के आसन पर बैठ कर उन्होंने जो कुछ कर डाला, वह भी शायद उनकी समझ में नहीं आया।

The Vedic Propaganda in S. America

FARE WELL ADDRESS TO PROFESSOR PANDIT BHASKARANAND, M A, Etc.

Oriental College Building,
D'Urban St & Vlissengen Road,
Georgetown, British Guiana,
South America
2nd September, 1945.

PROFESSOR PANDIT BHASKARANAND,
M A, B L, F R A S
Vedic Bishop Guiana and the West Indies

May it please Swamiji,

On behalf of the American Aryan League and the Aryan communities of British Guiana, Dutch Guiana and Trinidad we are here to bid you farewell on the eve of your departure from these shores to Mother India, your homeland

Today our feelings are a strange mixture of joy and Sorrow We are glad because we know you are going back to Mother India to see those beloved ones from which you have been separated for ten long years, but at the same time we are sorry at the very thought of parting with you

On the eve of your arrival on this side of the Atlantic Ocean, Samaj in British Guiana was neither organised nor recognised, but no sooner did you land here, you started working diligently for Samaj, and within six months in the presence of a mammoth gathering in Georgetown, you founded the American Aryan League, the central and controlling body of the entire Aryasamaj movement in these parts of the world, which through the dint of your labour of love has already become the nucleus of religious, social and educational activities of Arya Samaj and kindred organisations in British and Dutch Guiana, Trinidad and some other West Indian Islands

It's highly gratifying to note that through your august personality and ceaseless efforts today the American Aryan League stands at the head of a chain of Aryasamaj centres in B G, D G and Trinidad The number of official branches of the League in British Guiana alone stands at 35, and Surinam and Trinidad central Aryan organisations with their scores of sub branches are also its branches

The Samaj movement has also spread among ladies, and so far at 15 places Stree Samaj organisations have been established under the Mahila Pratinidhi Sabha, which is, of course, a direct branch of the League

It also gives a great pleasure to observe that the Aryan Preachers, selected and trained by yourself are also banded into a progressive body known as the the Aryan Pracharak Mandal under the supervision of the League Committee

But the Oriental College in Georgetown, a living monument of your sterling qualities, inexhastible patience, outstanding ability and capacity, untiring efforts and unbounded devation to the cause of humanity at large, is rightly held by many Aryans and practically all the non Aryans to be the greatest achievement in the history of Aryasamaj in these parts of the world It's according to all naticnalities an asset to this country

We can proudly say that the Flag of Samaj has been raised, and we need not over emphasise that Veda, Namaste,

Aryasamaj and Swami Dayanand Saraswati along with your noble name have now become household words in British Guiana, Dutch Guiana and Trinidad You have brought over five thou sand people within the fold of Aryasamaj, who together with other Samajists, totalling about ten thousand, are bound to you with love devotion and admiration The fatherly love, which you bestowed upon them, has won for you the honourable distinction of being the greatest and most beloved Vedic Missionary who ever visited these shores from India

Your ten years of continuous, invaluable service to us really makes us feel exalted in the greatness of our Mother India who is always ready and willing to stretch out a helping hand to her children in the four distant corners of the Globe

To day you are departing from all your children, who morally, spiritually, and religiously now become fatherless, but, Dear Father, we fervently hope that wherever you go, you will always remember your children, we are yours and you are ours

We bid you final Namaste and wish you a safe and pleasant return to Mother India, we can never thank you enough for all that you have done for us

May the Lord grant you long life, good health and prosperity so that we might see you here once again at the head of a team of teachers and missionaries from Mother India who are really needed to continue the good and wonderful work of which you have already sown the seed

We have the honour to be
Swamiji,

Your obedient Servants
AMERICAN ARYAN LEAGUE
Pandit J Brijbasi (President)
Pt. Parmanand Sharma (Secretary)
Jai Ram (Treasurer)

दक्षिण अमेरिका में आर्य समाज

अमेरिकन आर्यन लीग की ओर से प्रोफेसर पण्डित भास्करानन्द जी एम० ए० को अभिनन्दन-पत्र

ओरियण्टल कालेज बिल्डिंग, डर्बन और विलिङ्ग्टन रोड,
जौर्ज टाउन, ब्रिटिश गायना, दक्षिण अमेरिका।
२ दिसम्बर, १६४५।

श्रीमान् प्रोफेसर पण्डित भास्करानन्द जी एम० ए०, बी० एल० एफ० आर० ए० एस० वैदिक मिशनरी, गायना और वेस्ट इन्डीज़।

श्रीमान् स्वामी जी,

अमेरिकन आर्यन लीग तथा ब्रिटिश गायना, डच गायना और ट्रिनिडाड की आर्य जनता की ओर से हम लोग यहाँ आपको इन देशों से आप के मातृभूमि भारतवर्ष को जाने के अवसर पर विदाई देने के लिये उपस्थित हुये हैं।

आज हमारी मन भावनायें सुख और दुःख से विचित्र रूप से मिश्रित हैं। हमें प्रसन्नता है क्योंकि आप भारत माता अपने कुटुम्बियों से मिलने जाते हैं जिनसे आप दस वर्षों से बिछुड़े हुये हैं, किन्तु साथ ही साथ आपकी विदाई को सोचते ही हमें दुःख होता है।

जिस समय आप अटलांटिक महासागर के इस किनारे आये थे उस समय ब्रिटिश गायना में 'समाज' नियमित रूप से न तो स्थापित था और न ही वह ठीक तरह आमानित था, किन्तु ज्योंही आप का यहाँ आगमन हुआ आप अध्यवसाय के साथ 'समाज' के लिये कार्य करने लगे, और ६ महीने के अन्दर ही एक विशाल जनसमूह के सन्मुख आपने अमेरिकन आर्यन लीग की, जो कि इन देशों के लिए अखिल आर्यसमाज के निमित्त केन्द्रीय तथा सर्वाधिकारिणी सभा है, स्थापित की जो कि आप की अवैतनिक सेवाओं के फलस्वरूप इस समय ब्रिटिश और डच गायना, ट्रिनिडाड तथा अन्य वेस्ट इन्डीज़ के द्वीपों में आर्य समाज तथा उससे सम्बन्धित सभाओं के धार्मिक, सामाजिक तथा विद्या सम्बन्धी सब कार्यों का केन्द्र बन गया है।

यह अत्यन्त सन्तोषजनक बात है कि आपके भव्य व्यक्तित्व और अथक परिश्रम के कारण आज अमेरिकन आर्यन लीग ब्रिटिश गायना, डच गायना और ट्रिनिडाड मे शृङ्खलाबद्ध आर्यसमाजों के केन्द्रों की शिरोमणि सभा है। नियमित रूप से ब्रिटिश गायना में ही ३५ आर्यसमाजें इस की शाखायें हैं एवं सुरिनाम और ट्रिनिडाड की प्रधान सभायें भी अपनी अपनी उपशाखाओं के साथ इस की शाखायें हैं।

आर्य समाज की लहर स्त्रियों के अन्दर भी फैल गई है। अब तक १५ स्थानों में स्त्री समाजें महिला प्रतिनिधि सभा के आधीन स्थापित हैं जो कि लीग की सीधी शाखा है।

इस बात से भी प्रसन्नता होती है कि आर्यप्रचारक लोग भी, जिनका चुनाव और शिक्षण आपके द्वारा हुआ है, लीग कमेटी के आधीन एक अग्रगामिनी सभा आर्य-प्रचारक-मण्डल के रूप में सगठित हो गये हैं।

किन्तु आपके महान् गुणों, अथक धैर्य, दृश्यमान योग्यताओं और शक्तियों, अश्रान्त परिश्रम मनुष्यमात्र के प्रति असीमित प्रेम की जीवित जागृत मूर्ति जो ओरियण्टल कालेज जौर्ज टाउन में है ठीक ही उसे बहुत से आर्य और लगभग सब आर्येतर इन देशों में आर्य समाज के इतिहास में सब से अधिक सफलता का काम समझते हैं। सब जातियों के अनुसार यह इस देश में गौरव की वस्तु मानी जाती है।

हम लोग गर्व के साथ इस बात को कह सकते हैं कि आर्य-समाज का मान-ध्वज यहां फहरा चुका है। अधिक कहने की आवश्यकता नहीं कि 'वेद' 'नमस्ते' 'आर्य-समाज' 'स्वामी दयानन्द सरस्वती ये शब्द आपके उत्तम नाम के साथ ब्रिटिश गायना, डच गायना और ट्रिनिडाड में प्रत्येक गृह में गूंज रहे हैं। ५,००० से अधिक मनुष्यों को आपने आर्य समाज में प्रविष्ट कराया जो कि अन्य समाजियों के साथ जिन की संख्या लगभग १०,००० है आपसे प्रेम, भक्ति और प्रशंसा के भावों से बन्धे हैं। वह पैत्रिक प्रेम जो कि आपने दिखाया है उस के कारण आप हिन्दुस्तान से आये वैदिक मिशनरियों में सब से महान् और सब से प्रिय कहाते हैं।

आपकी लगातार १० वर्षों की हम लोगों की सेवा से हमें आनन्द और गौरव प्रतीत होता है कि भारत माता महत्त्वशालिनी है जो कि सदा पृथिवी के चारों कोनों पर अपने पुत्रों के प्रति अपनी सहायता रूप हाथों को बढ़ाने के लिये तय्यार है।

आज आप अपने सब पुत्रों से विदा हो रहे हैं। जोकि मानसिक, आध्यात्मिक और धार्मिक रूप से अब अनाथ होते हैं, परन्तु, ए पिता। हम प्रबल आशा लगाये हैं कि जहां भी आप जाइयेगा अपने पुत्रों को अवश्य याद रखियेगा। हम आप के हैं तथा आप हमारे हैं।

हम आप को अन्तिम नमस्ते कहते हैं और चाहते हैं कि आप सानन्द भारत-माता सुरक्षित पहुँचें। हम लोग जानते हैं कि जो कुछ आपने हमारे लिये किया है उसके लिये हम कभी भी आप को भरपूर धन्यवाद नहीं दे सकते हैं।

भगवान् आप को चिरायुष्य, स्वास्थ्य और अभ्युन्नति प्रदान करे जिससे कि फिर भी हम आपको भारत-माता से आये अध्यापकों और उपदेशकों के दल के शिरोमणि के रूप में देखें जिनकी यहां आपके द्वारा बीज रूप से स्थापित कार्य को आगे बढ़ाने के लिए वास्तव में आवश्यकता है।

—भवदीय

सादर और आज्ञाकारी सेवक अमेरिकन आर्यन लीग।

प्रधान—पं० जे० ब्रजवासी
मन्त्री—प० परमानन्द शर्मा
कोषाध्यक्ष—जयराम

[हम श्री पं० भास्करानन्द जी को उनकी शानदार सफलता के लिये आर्य जगत् की ओर से बधाई देते हैं और उनका स्वदेश लौटने पर हार्दिक स्वागत और अभिनन्दन करते हैं।

सम्पादक सा० दे०]

जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना

जन्म मूलक जाति भेद से इस देश में जितनी हानि पहुँची है उतनी किसी और कुप्रथा से नहीं। इस अन्याय पूर्ण प्रथा को दूर कर के वैदिक वर्ण व्यवस्था को स्थापित करना आर्य समाज का आरम्भ से उद्देश्य रहा है परन्तु खेद के साथ स्वीकार करना पड़ता है कि आर्य समाज को इसमें बहुत कम सफलता हुई है। इसलिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस अभिप्राय से एक उपसमिति नियुक्त की जिसका मैं संयोजक था कि वह सुसगठित रूप से इस हानि कारक प्रथा को दूर करने की एक योजना तैयार करे। हाल मे इसी उद्देश्य से एक योजना 'आर्य परिवार सघ" के नाम से महाशय ब्रजलाल उपमंत्री प्राकृतिक चिकित्सा संघ अजमेर के द्वारा प्रकाशित हुई जिसके प्रस्तावकों में म० खुशालचंदजी प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री० पं० भीमसेनजी विद्यालंकार भू० पू० मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब, श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री एम० ए० भू० पू० मत्री आर्य प्रतिनिधि सभा युक्त प्रान्त, श्री० बंशीलाल आर्य भू० पू० मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद दक्षिण, श्री प्रो० ताराचन्द जी मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध,श्री वासुदेव शर्मा मत्री आर्य प्रतिनिधि सभा बिहारी, डाक्टर सूर्यदेवजी एम०ए०एल० टी०,डी० लिट हैड मास्टर डी० ए० वी० हाईस्कूल अजमेर, श्री भद्रसेन आचार्य विरजानन्द वैदिक विद्यालय अजमेर, आदि प्रमुख आर्य नेता और विद्वानों के नाम थे। मैंने उन के साथ पत्र-व्यवहार करके यह विचार रखा कि इस उपसमिति और उक्त प्रस्तावित संघ के प्रस्तावकों की एक संयुक्त सभा इस अभिप्राय से की जावे कि दोनों योजनाओं में इस प्रकार सशोधन किये जावें कि एक ही सस्था से दोनों के उद्देश्यों की पूर्ति हो सके।

इसके अनुसार १४ अक्तूबर ४५ को देहली में एक सभा हुई। सर्व सम्मति से "जाति भेद निवारक आर्य परिवार सघ" के नाम से एक योजना तैयार हुई, जो "सार्वदेशिक" के अग्रिमांक अर्थात् नवम्बर १९४५ के अंक में ३१८-३११ पृष्ठों पर प्रकाशित हुई है।

उक्त योजना की छपी हुई प्रतिया सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग के सब सभासदों के पास भेजी गई। उक्त अन्तरग सभा ने अपने ९-१२-३४ के अधिवेशन में पूर्वोक्त योजना को स्वीकार कर लिया, और उस समिति को जो योजना तैयार करने के लिये बनाई गई थी और जिसमें प्रस्तावित आर्य परिवार सघ के लगभग सब प्रस्तावक, सदस्य रूप से सहयुक्त (Coopt) कर लिये गये थे इस नवीन सस्था के प्रबन्ध और संचालन के लिये नियुक्त किया। नियम १६ के अनुसार जब तक इस सघ में कम से कम ५० 'सहायक' और ५० 'सभासद' न बन जावें तब तक सघकी प्रारम्भिक अवस्था समझी जावेगी और तब तक के लिये सघ के अधिकारियों का चुनाव सार्वदेशिक अन्तरंग सभा के द्वारा ही होना चाहिये। इसके अनुसार अन्तरंग सभा ने श्री० डा० सूर्यदेवजी शर्मा एम ए०, डी लिट अजमेरको संघ का संचालक, और श्री० पं० भद्रसेन आचार्य अजमेर और प्रो० धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री एम० ए०

मेरठ को उप संचालक नियत किया । परन्तु अन्य कार्यों की अधिकता के कारण डा० सूर्यदेव जी ने संचालक का कार्य स्वीकार न करके उप संचालक होना स्वीकार किया इसलिये प० भद्रसेन जी आचार्य संचालक नियत हुए।

अध्यक्ष का कार्य भार मुझको सौंपा गया। मेरा स्वास्थ्य ऐसा नहीं कि मैं ऐसे उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य के योग्य समझा जा सकू । तो भी मैंने इस आशा से इस भार को सप्रति ग्रहण कर लिया कि श्री० सार्व० आर्य प्रतिनिधि सभा और प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं की सहायता तथा आर्य जनता के सहयोग से इस महान् कार्य में जिसको मै आर्य समाज के लिये परम आवश्यक और उपयोगी समझता हू असफलता नहीं होगी। ईश्वर इस आशा को पूरी करे।

अजमेर नगर में सघ की प्रबन्ध कारिणी सभा का पृथक् अधिवेशन २७ दिसम्बर १६४५ को हुआ। जिसमें श्री० प० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा—उपाध्यक्ष और म० ब्रजलाल जी म्युनिसिपल कमिश्नर अजमेर कोषा ध्यक्ष चुने गये। साधारण कार्यों के लिये ६ सदस्यों की एक कार्यकारिणी समिति बनाई गई। जिसमें सघ के ६ अधिकारियों के अतिरिक्त श्री० म० खुशहाल चन्द्रजी 'आनन्द' और श्री० पं० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री एम० ए० प्रिंसिपल डी ए० वी कालिज लखनऊ और प० भीमसेन वि० अ० लाहौर सदस्य रखे गये। वर्तमान वर्ष के शेष भाग और आगामी वर्ष के लिये १५ मास के आय व्यय का बजट बनाया गया। जिसमें १००) मासिक वेतन और ५०) मा० यात्रा व्यय पर एक उपदेशक और लेखक रखने की व्यवस्था की गई है। आशा है कि उपदेशक की नियुक्ति शीघ्र हो सकेगी। उक्त अधिवेशन में यह भी निश्चय हुआ कि सार्व० अन्तरंग सभा की आज्ञा हुई है कि सब प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाए सघ के उद्देश्यों से सहयोग करें और अपने उपदेशकों को आदेश देवें कि वे सघ के सदस्य और सहायक बढ़ाने का यत्न करे। इसके अनुसार सब प्रान्तीय सभाओं को सघ के छपे नियमों की और सदस्य तथा सहायक के निवेदन पत्रों के फार्म छपवा कर उचित सख्या में भेजे जावें। प्रबंध कारिणी सभा ने यह भी निश्चय किया है कि नियम २१ के अनुसार अ० भा० आर्य कुमार परिषद् और आर्य वीर दल के मन्त्री महोदयों से निवेदन किया जावे कि आर्य कुमारों और आर्य युवकों से इस बात के व्रत धारण करावें कि वे अपने विवाह जाति पाति का विचार छोड़ कर ही करेंगे। और उनसे इस आशय के लिखित व्रत-पत्र लेवे। ऐसे व्रतधारी आर्य कुमारों के लिये संघ के कार्यालय में एक अलग रजिस्टर रक्खा जावेगा परन्तु उनसे कोई चन्दा नहीं लिया जावेगा।

सघ के नियम शीघ्र छप कर प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं, आर्य समाचार पत्रों के पास भेजे जावेंगे। जैसा नियमों के देखने से विदित होगा वह मनुष्य जो सघ के उद्देश्यों से सहानुभूति रखता हुआ उसको एक रुपया वार्षिक चन्दा देवे सघ का सहायक समझा जावेगा। जो मनुष्य संघ के उद्देश्यों पर चलने की प्रतिज्ञा करे अपने वा अपनी सन्तान के विवाह जातिपाँति तोड़ कर करने का वचन देवे और संघ को ३) वार्षिक चन्दा देवे वह इस संघ का सदस्य समझा जावेगा। सहायक और सदस्यों के रजिस्टरों के सिवाय संघ के

कार्यालय में उनके विवाह योग्य पुत्र और पुत्रियों के नामों के रजिस्टर भी रखे जावेंगे। और इसी प्रकार विवाह योग्य विधुर और विधवाओं के भी। जो सज्जन अपने पुत्र वा पुत्री का अन्तर्जातीय विवाह करना चाहें उनकी सूचना आने पर संघ का कार्यालय उनके पास कम से कम ५ कन्याओं वा ५ वरों के नाम, पूरा पता, और योग्यता आदि लिखकर भेज देवेगा जिससे वे उनके संरक्षकों से पत्र व्यवहार करके गुण कर्मानुसार योग्य कन्या वा वर का चुनाव कर सकें। यदि कोई मनुष्य अपने किसी सम्बन्धी का विवाह संघ के द्वारा कराना चाहे तो उसका भी यथा शक्ति प्रयत्न किया जावेगा।

हर एक नई संस्था के लिये सब से बड़ा प्रश्न आर्थिक सहायता का होता है। इस संघ के सामने सब से पहिला काम यह है कि उस के संचालक अथवा एक योग्य और उद्योगी उपदेशक सारे देश में भ्रमण करके जनता को संघ के उद्देश्य बतलावें और उस के सभासद् और सहायक बना कर उसकी सूची तैयार करे और साथ ही उनके विवाह योग्य पुत्र पुत्रियों और विवाहेच्छु विधुर और विधवाओं की भी सूची तैयार करें। इस प्रारम्भिक कार्य के लिए पुष्कल धन की आवश्यकता है। आशा है कि धनी और दानी आर्य सज्जन उदारता पूर्वक दान देकर इस आवश्यकता को शीघ्र पूर्ण करेंगे। साधारण आर्य जनता से भी आशा है कि वे इस महत्त्व पूर्ण कार्य में उचित सहायता देते रहेंगे। जो सज्जन दान व चन्दा भेजना चाहें वे श्री ब्रजलाल जी कोषाध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ अजमेर के पते से कृपया भेजें जहां से उनको रसीद मिलेगी और 'सार्वदेशिक' पत्र में भी स्वीकृति की सूचना प्रकाशित होती रहेगी।

गङ्गा प्रसाद (अध्यक्ष)

ता० २८-१२-४५

मुसलिम रचित विरोधी ग्रन्थ

(लेखकः—प्रो० महेश प्रसादजी मौलवी आलिम फ़ाज़िल हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस)

एक बार मैंने थोड़ा सा उन पुस्तकों के विषय में लिखा था जो मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं के विरुद्ध उस सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशित होने के पूर्व लिखी गई हैं जिस में मुसलमानों के विषय का चौदहवा समुल्लास है अर्थात् सन् १८८४ ई० के संस्करण से पूर्व लिखी गई हैं। उक्त विषय में अब मेरी जान कारी और अधिक हो गई है। अतः उक्त विषय की पुस्तकों के सम्बन्ध में पाठकों को कुछ अधिक विस्तार के साथ बतलाना चाहता हू।

१ रद्द हिन्दू

यह पुस्तक साढ़े सात और पाच इच के आकार में लगभग नौ पृष्ठों की है। उर्दू गद्य में प्रश्न व उत्तर के रूप में अनेक बातें हैं। लेखक का नाम मुहम्मद इस्माईल कोम्नी है। सन् १२६१ हिजरी (सन १८४५ ई०) में पहिले पहिल यह पुस्तक बम्बई में प्रकाशित हुई थी। इस काल के पश्चात बम्बई तथा अन्य स्थानों से इस के जो संस्करण भिन्न-भिन्न समयों में निकले हैं उनका विवरण इस प्रकार है—

(१) सन् १२६६ हिजरी अर्थात सन १८४९ या ५० ई० का संस्करण। यह सम्भवत बम्बई में ही छपा था किन्तु इस के प्रेस का नाम नहीं मालूम हो सका।

(२) कानपुर का संस्करण जो १२६७ हिजरी अर्थात् सन् १८५० ई० में प्रकाशित हुआ है।

(३) मुस्लिम प्रेस दिल्ली का संस्करण—इस में प्रकाशित होने का समय अंकित नहीं किन्तु ऐसा नतीजा निकलता है कि यह संस्करण सन् १८६० ई० के आस पास में निकला होगा क्योंकि इस में 'कथा सलोई' नाम की कविता छपी है जो 'तुहफ़तुल हिन्द' नामक पुस्तक के उस संस्करण में है जो सन् १८६० मे प्रकाशित हुआ है।

(४) सन् १२७८ हिजरी (सन् ११६१ ई०) का संस्करण जो बम्बई के किसी प्रेस से निकला है।

(५) रजब सन् १३०० हिजरी (मई सन् १८८३ ई०) की छपी हुई प्रति जो 'फ़तहुल करीम' नामी प्रेस (बम्बई) में छपी थी।

(६) गवर्नमेन्ट प्रेस भूपाल का छपा हुआ संस्करण सन् १९३८ ई०।

(७) 'फ़खरुल मताबे' लखनऊ का संस्करण सन् १९१३ ई०।

(८) 'कैयूमी प्रेस' कानपुर का संस्करण। इस मे प्रकाशन का समय अंकित नहीं, परन्तु इस में सारी सामग्री उसी रूप में है जिस रूप में लखनऊ के संस्करण सन् १९१३ ई० में है।

(९) 'फ़िहरिस्त कुतुब खान आसफ़ियः' (हैदराबाद दक्षिण) के दूसरे भाग (प्रकाशित सन् १३३३ हिजरी) के पृष्ठ १३८४ में (सन् १२८० हिजरी (सन् १८६३ या ६४ ई०) के एक संस्करण का उल्लेख मिलता है। प्रेस का नाम अंकित नहीं।

२ तुहफ़तुल हिन्द

इस पुस्तक का जो संस्करण मुजतबाई प्रेस कानपुर से सन् १३३९ हिजरी (सन् १९२१ ई०) में प्रकाशित हुआ है उसके ग्यारह व साढ़े सात इच आकार के ११९ पृष्ठों में मूल सामग्री है और प्रत्येक पृष्ठ में लगभग २४ सतरें हैं। उक्त

पुस्तक के अनेक पृष्ठों के किनारे के स्थानों में टिप्पणियां भी कुछ कम नहीं हैं।

इस के लेखक मौलाना उबैदुल्ला साहब थे। पूरी पुस्तक उर्दू गद्य में है। पहले पहिल सन् १२६८ हिजरी (सन् १८५१ या ५२ ई०) में लुधियाना से प्रकाशित हुई थी। उक्त दोनों संस्करणों के सिवा जिन संस्करणों का पता और चलता है वे ये हैं—

मुस्तफाई प्रेस दिल्ली से एक सस्करण सन् १२७२ हिजरी अर्थात् सन १८५५ या ५६ ई० में निकला।

सन् १२७७ हिजरी (सन १८६० या ६१ ई०) में एक सस्करण हाशमी प्रेस मेरठ में निकला।

सन् १२७८ हिजरी (सन् १८६२ ई०) में सिकन्दरी प्रेस भूपाल से एक सस्करण निकला।

सन् १२८१ हिजरी (सन् १८७१ या ७२ ई०) में दिल्ली के मुस्तफाई प्रेस से (दूसरी बार) एक सस्करण निकला।

सन् १३१७ हिजरी (सन् १८६६ या १९०० ई०) में भी कहीं से एक सस्करण निकलने का पता चलता है। इस का पता फिहरिस्त कुतुब खाना आसफिया (हैदराबाद दक्षिण) भाग द्वितीय (प्रकाशित सन् १३३३ हिजरी) के पृष्ठ १३७० से चलता है।

सन १२६१ हिजरी (सन् १८७४ या ७५ ई०) मे दिल्ली के फ़ारुकी प्रेस से एक सस्करण निकला है।

सन् १३४२ हिजरी (सन १६२३ या २४ ई०) दिल्ली के रहमानी प्रेस मे एक सस्करण छपा है।

३ कथा सलोई

इस में १७२ चरण हैं और प्रत्येक दो चरणों के पश्चात् टेक के रूप में यह शब्द और अधिक हैं—

कहो यह कौन धर्म है।

लेखक का नाम शेख सलीम मालूम होता है। इस बात के सिवा और कोई बात लेखक के विषय में मालूम नहीं हुई। कविता की रचना कब हुई थी, इस सम्बन्ध में भी ठीक-ठीक कहना कठिन है। निम्न लिखित प्रकाशनों में इन का पूरा-पूरा अस्तित्व है—

(१) तुहफतुल हिन्द के इन सस्करणों में—

(क) मेरठ सन १२७७ हिजरी (सन् १८६० या ६१ ई०)।

(ख) फारूकी प्रेस दिल्ली सन १२६१ हिजरी (या १८७४ या ७५ ई०)।

(ग) मुजतबाई प्रेस कानपूर सन् १३३६ हिजरी (सन १६२१ ई०)।

(घ) रहमानी प्रेस दिल्ली सन १३४२ हिजरी (सन १६२३ या २४ ई०)।

(२) रदूद हिन्द जो मुस्लिम प्रेस दिल्ली से मुद्रित है।

'कथा सलोई' उक्त प्रकाशनों के सिवा किन प्रकाशनों में और है—इस बात को मैं नहीं जान सका और न यही जान सका हूँ कि पृथक् रूप में भी कहीं से किसी समय छपी है या नहीं।

४ खिलअतुल हनूद

एक मुसलमान सज्जन ने बुतशिकन (मूर्ति-तोड़क) के नाम से फारसी गद्य में लिखा है। बरेली के सिद्दीकी प्रेस में यह पुस्तक सन १२८१ हिजरी (सन् १८६४ ई०) में छपी है। काफी बड़ी पुस्तक है। मेरी दृष्टि में आ चुकी है।

५ एजाज मुहम्मदी लेखक मौलाना अहमदउद्दीन

६ हृदयतुलअसनाम लेखक मौलाना कुतबआलम

उक्त दोनों रचनायें सम्भवत सन् १८६४ ई० के आस पास सन् १८६८ ई० से कुछ पहले प्रकाशित हुई हैं इन का कोई सस्करण मेरी दृष्टि में नहीं आया। इस कारण इन के विषय में कुछ और नहीं लिख सकता।

७ ममनवी ओहान दीन हिन्दू

इस नाम से (पद्य में) बरेली के मौलवी अहमदउद्दीन जी की एक रचना है जो सम्भवत १८६६ ई० में प्रकाशित हुई है।

८ सौतुल् लाहिल् जब्बार अला मतूनिल् कुफ़्फ़ार

भावार्थ—महाबली अल्लाह का कोडा काफिरों की पीठ पर—लेखक मौलवी मुहम्मद अली नाम के कोई सज्जन हैं। यह पुस्तक साढे दस और सात इंच के आकार में सन् १२८६ हिजरी अर्थात् सन् १८६९ या ७० ई० में बरेली के सिद्दीकी प्रेस में छपी है सारी पुस्तक चार भागों में है। प्रथम भाग ३०४ पृष्ठों का फारसी गद्य में है। द्वितीय भाग २४३ पृष्ठों का उर्दू गद्य में है। तीसरे भाग का नाम 'कतहुल मबीन अला जमइश शयातीन' भी है और यह १५० पृष्ठों की उर्दू गद्य में है। चौथा भाग उर्दू गद्य में ८६ पृष्ठों का है और इस का नाम 'सैफ़ुल् लाहिल् क़हहार अलीं रऊसिल कुफ़्फ़ार' है।

९ तेग फ़क़ीर बर गर्दन शरीर

मौलवी मुहम्मद हुसैन 'फ़क़ीर' द्वारा रचित है। यह पुस्तक दस व छः इंच आकार में ३१२ पृष्ठों की उर्दू पद्य में है। इस का प्रथम संस्करण दिल्ली के फ़ारुकी प्रेस से सन् १२९० हिजरी (सन १८७३ ई०) में निकला है। दूसरा सस्करण सन १३१७ हिजरी (सन् १८९९ या १९०० ई०) में दिल्ली के अनवार अहमदी प्रेस से मुद्रित है। इसमें मौलवी साहब ने अपने आप को 'तेगजन' के नाम से प्रगट किया है।

१० हरबः सैफ़ी बर सर कैफ़ी

यह भी उक्त मौलवी साहब की ही रचना उर्दू पद्य में है। उक्त पुस्तकके साथ ही दोनों बार छपी है और कुल ३८ पृष्ठों में उसी आकार में है जिस में उक्त पुस्तक है। इस में मौलवी साहब ने अपने आप को 'सैफ़ी' के नाम से प्रगट किया है।

११ एक कविता

कवि का पूरा नाम क्या है ? इस बात का पता नहीं लगा। कविता के अन्त में 'सफ़दर' नाम अङ्कित है। यह रचना कब हुई है, इस बात को भी मैं अभी तक नहीं जान सका हूँ।

'रद्द हिन्दू' के इन संस्करणों में यह कविता सम्मिलित रूप से प्रकाशित है—

(१) सन् १३०० हिजरी (सन् १८८३ ई०) का सस्करण जो बम्बई के 'फतहुल् करीम' नामी प्रेस से मुद्रित है।

(२) 'फ़खरुल् मताबे' प्रेस लखनऊ सन् १९१३ ई०।

(२) कयूमी प्रेस कानपुर।

उक्त शब्दों से स्पष्ट है कि कविता सन् १८८३ ई० अथवा इस से पहले की अवश्य है। कविता में कुल ४९ कड़िया हैं। प्रत्येक षट (छः) पदी है और प्रत्येक कड़ी में यह शब्द टेक के रूप में दुहराये गये हैं।

याद होवे गर तुम्हें हम को बतलाओ बरहमन।
काहे को फिरते हो नाहक पूजते पत्थर तुमन ॥

टेक के दुहराये हुये शब्दों को यदि प्रत्येक कड़ी के साथ गिना जावे तो कुल कविता में २९४ पद (चरण) ठहरते हैं। यह कविता कहीं और किसी पुस्तक के साथ अथवा पृथक् रूप से छपी है — यह मैं नहीं जान सका। हां, यह भी ज्ञात रहे कि बम्बई वाले संस्करण मे जैसा पाठ है उस से अधिक भ्रष्ट पाठ लखनऊ व कानपुर के संस्करणों में कर दिया गया है।

१२ लज़्ज़तुल् हिन्द व १३ रिसाला हकगो

इन का प्रकाशन सितम्बर सन् १८८० ई० से पूर्व हुआ है। इन के विषय में मुझे अधिक बातें नहीं मालूम हो सकी हैं।

सम्भव है कि सन् १८८४ ई० के भीतर अर्थात् सत्यार्थप्रकाश के दूसरे संस्करण के प्रकाशित होने से पूर्व और भी पुस्तकें मुसलमानों की ओर से हिन्दुओं के विरुद्ध प्रकाशित हुई हों किन्तु जिन के विषय में मुझे पता चला है उन्हीं के विषय मे मैंने कुछ लिखा है और उक्त वर्णित पुस्तकों मे से अनेक ऐसी हैं जो मेरी दृष्टि में आ चुकी हैं। इनमे से कुछ ऐसी हैं जो अनेक स्थानों के पुस्तकालयों मे देखी जा सकती हैं। हां यह भी कहना आवश्यक है कि जो पुस्तकें मेरी दृष्टि में अभी नहीं आई हैं यदि उन के विषय में कोई सज्जन मुझे कुछ सूचना देंगे तो मैं उन का बड़ा आभारी हूँगा।

महेश प्रसाद
मौलवी आलिम फ़ाज़िल

स्त्रियों का कर्म काण्ड में अधिकार

(लेखक—पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा देहली)

'सार्वदेशिक' के नवम्बर और दिसम्बर १९४५ के अङ्कों मे मैने ब्राह्मणेतरों और स्त्रियों के वेदाध्ययन केअधिकार विषयक सम्पादकीय टिप्पणिया दी थीं। मुझे श्री प्रो० महेशप्रसाद जी तथा अन्य मित्रोंसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उन्हें शिक्षित जनता ने बहुत पसन्द किया। विद्वन्मण्डली मे भी उनकी अच्छी चर्चा हुई है। श्री प्रो० महेशप्रसाद जी ने २८-१२-४५ के पत्र में लिखा है "एक प्रश्न यह है कि स्त्रियोंको कर्मकाण्ड व पद्धतिके साथ वेद पढ़ने का अधिकार है या नहीं। वेद को साहित्य के रूप मे स्त्रिया तथा सभीको पढ़ने का अधिकार है इस बात को विश्वविद्यालय वाले मान गये किंतु कर्मकाण्ड सीखने या पढ़नेकी अधिकारिणी स्त्रिया भी हैं इस पर प्रकाश पड़ना चाहिये।"

अन्य भी अनेक महानुभाव इस विषय में शास्त्रीय दृष्टि से जानना चाहते हैं अतः इस लेख में मैं इसी विषय पर प्रकाश डालना उचित समझता हू।

वैदिक कर्मकाण्ड से तात्पर्य मुख्यतया सन्ध्या हवन, यज्ञों और संस्कारों से है। प्रश्न यह है कि स्त्रियों को इन के करने करवाने का अधिकार है वा नहीं। हमारा निश्चित उत्तर है कि स्त्रियों को इनको करने का पूर्ण अधिकार है इस विषय में निम्न प्रमाणों की ओर मैं विद्वानों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हू।

उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्त एमसि॥ ऋ० १।१।७

अर्थात् हे ज्ञानमय परमेश्वर। हम प्रतिदिन प्रातः और सायम् बुद्धि और कर्म की भेंट चढ़ाते हुए तेरे समीप आरहे हैं। इस प्रकार के वचन पुरुषों और स्त्रियों पर सामान्य रूप से लागू होते हैं। जैसे कि पूर्व मीमासा के 'तस्मात् स्त्र्यपि प्रतीयेत्' इत्यादि में बताया गया है। चोदयित्री सूनृताना चेतन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती। १।३।११।

इस मन्त्र को नवम्बर मास सन् १९४५ के अङ्क में उद्धृत किया जा चुका है। इसमें विदुषी स्त्री को सरस्वती नाम से वर्णित करते हुए कहा है कि वह मधुर और सत्य वचनों का प्रयोग करती है, उत्तम बुद्धि वाद वा परामर्श देती है और यज्ञों को धारण करती है। सरस्वती शब्द 'सृगतौ' धातु से बनता है जिसके ज्ञान, गमन और प्राप्ति ये तीन अर्थ होते हैं अतः सरस्वती का अर्थ ज्ञानवती या विदुषी स्त्री स्पष्ट है। शतपथ २।५।१।११ में "योषा वै सरस्वती" ऐसा स्पष्ट वचन है जिसमें सरस्वती का अर्थ उत्तम स्त्री किया गया है। ऐसी सरस्वती (विदुषी स्त्री) के विषय में ऋग्वेद म० १०सू० १७ म० ७में कहा है कि "सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने। सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यंधात्॥ दिव्य गुणों की इच्छा करने वाले मनुष्य विदुषी स्त्री को निमन्त्रित करते हैं। यज्ञ के अवसर पर विदुषी देवी को विद्वान् लोग बुलाते हैं पुण्यात्मा ऐसी विदुषी देवी को निमन्त्रण देते हैं और वह श्रेष्ठ ज्ञानादि का दान करती है। इस मन्त्र में विदुषी स्त्रियों के यज्ञादि कर्मकाण्ड में बुलाये जाने का विशेष रूप से स्पष्ट वर्णन है।

ऋग्वेद १०।८६।१० में भी स्त्रियों के हवन

यज्ञादि तथा युद्ध में भाग लेने का स्पष्ट वर्णन पाया जाता है यथा—

सं होत्र स्म पुरा नारी समनंवाव गन्छति ॥

अथर्व ११।१।१७ तथा २७में स्त्रियों के विषय में बताया गया है कि "शुद्धा पूता योषितो यज्ञिया इमा. ।"

अर्थात् ये स्त्रिया शुद्ध, पवित्र और यज्ञों में भाग लेने वाली अतएव पूजनीया हैं। इससे भी स्त्रियों का यज्ञादि कर्मकाण्ड मे अधिकार अत्यन्त स्पष्टतया सूचित होता है। "यज्ञमर्हन्तीति यज्ञियाः यज्ञ की अधिकारिणिया ऐसी स्पष्ट वैदिक आज्ञा होते हुए स्त्रियों को यज्ञादि कर्मकाण्ड के सीखने सिखाने वा करने कराने के अधिकार से वंचित रखना कितना अनुचित है।

त पत्नीभिरनु गच्छेम देवा
पुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यै।
नाक गृभ्णाना सुकृतस्य लोके
तृतीये पृष्ठे अधिरोचनं दिव।

यजु० १५।५० इस मन्त्र में भी स्त्रियों, पुत्रों भाइयों सब के साथ मिलकर यज्ञ करने का विधान है।

हे (देवा) दीप्यमाना ऋत्विज (पत्नीभिः) कलत्रैःसह (पुत्रैरुत) पुत्रैरपि सह (भ्रातृ भि र्वा) भ्रातृभिश्च सह—(तम्) अग्निम् (अनुगच्छेम) अनुसरेम सेवेमेत्यर्थ। ऐसी ही उसकी व्याख्या उव्वट महीधरादि भाष्यकारों ने की है।

ये देवानाम् ऋत्विजो ये च यज्ञिया येभ्यो हव्यं क्रियते भागधेयम्। इमं यज्ञ सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्तविषा मादयन्ताम्।

इस मन्त्र में भी विद्वानों को अपनी पत्नियों सहित यज्ञ में आने का विधान किया गया है। विद्वांसो हि देवा ॥ शतपथ ३।७।३।१० सत्य संहिता वै देवा ॥ ऐ० १।६ सत्यमया उ देवा कौ २।८ आदि वचनों के अनुसार 'देवा' इस पद से सत्यनिष्ठ विद्वानों का ग्रहण है। इन वेद मन्त्रों के आधार पर ब्राह्मण ग्रन्थादि में यहा तक कहा है कि अयज्ञो वा एष यो ऽपत्नीकः ॥ (ब्रा का ३ प्र ३ अ ३) तैत्तिरीयसंहिता सायण भाष्य १म खण्ड आनन्दाश्रम पूना पृ० १४१ अर्थात् जो पत्नी के होते हुए उस के विना यज्ञ किया जाता है वह ठीक यज्ञ ही नहीं कहाता।

सैकड़ों वेद मन्त्रों का विनियोग ब्राह्मण ग्रन्थों ऋग्विधान और सूत्र ग्रन्थों में स्त्रियों के विषय में किया गया है जिनमें से विस्तार भय से कुछ थोडे से यहा उद्धृत किये जाते हैं।

यजु० ३।६० में मन्त्र है "त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत ॥"

इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए शतपथ २।६।२।१२-१४ में निम्न वाक्य पाये जाते हैं तदु हापि कुमार्यः परीयुः। भगस्य भजामहा इति। तासामुतासां मन्त्रोऽस्ति त्र्यम्बक यजामहे सुगन्धि पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत इति। सा यत् इत इत्याह ज्ञातिभ्यस्तदाह मामुत इति पतिभ्यस्तदाह पतयो ह्येव स्त्रियै प्रतिष्ठा तस्मादाह मामुत इति ॥

अर्थात् कुमारिया भी 'भगस्य भजामहे' इत्यादि मन्त्र का उच्चारण करती हुई प्रार्थना करें और अग्नि की प्रदक्षिणा करें। उन का यह विशेष प्रार्थना मन्त्र है त्र्यम्बक यजामहे सुगन्धिं पति वेदनम् इत्यादि जिसका तात्पर्य यह है कि हम सर्वज्ञ, आनन्दमय, उत्तम पति प्राप्त कराने

वाले भगवान का स्मरण करती हैं वह हमें इस बन्धुओं के कुल से छुड़वाए किन्तु पति से कभी वियोग न करवाए। कात्यायन श्रौत सूत्र ५।१०।१७ में "कुमार्यश्च उत्तरेणेति" ऐसा कहा है जिसका अर्थ महीधर ने यही किया है कि 'यजमान सम्बन्धिन्य कुमार्योऽपि पूर्वोक्त पुरुष वत् उत्तरेण त्र्यम्बक मन्त्रेण अग्नि त्रि॰ परियन्ति त्र्यम्बक यजामहे कीदृशम् पतिवेदनम् पति वेदयतीति त भर्तुर्लम्भयितारम् इत्यादि (शुक्ल यजुर्वेद संहिता उव्वट महीधर भाष्य निर्णय सागर प्रेस बम्बई पृ० ५८) यजु० ३६.२० के 'अरिष्टाहं सहपत्याभूयासम्' इतने अंश को गत मास की वेदाधिकार विषयक सम्पादकीय टिप्पणी मे उद्धृत किया जा चुका है। पूरा मन्त्र इस प्रकार है पिता नो असि पिता नो बोधि नमस्ते अस्तु मा मा हिंसीः। त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेम पुत्रान् पशून् मयि धेहि प्रजामस्मासु धेह्यरिष्टाहं सहपत्या भूयासम् ।। य० ३७।२०

इस मन्त्र का भाष्य करते हुए उव्वट महीधर दोनों ने 'त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेम सहपत्या भूयासम्' तक के भाग को स्त्रियों द्वारा बुलवाने का कात्यायनश्रौतसूत्र २६।४।१३ के त्वष्टृमन्त इत्येना वाचयति। इस वचन के आधार पर विधान किया है। 'पत्नीं वाचयति महावीरम् ईक्षमाणाम् किं च (अरिष्टा) अनुप हिंसिता अहम् (सहपत्या) सह भर्त्रा भूयासम् उव्वट पत्नीम् अध्वर्युर्वाचयति (पत्या) भर्त्रा सह (अरिष्टा) अनुपहिंसिता (अह भूयासम्) भवेयम् भर्तृमतीचिर जीवेयम् इत्यर्थं। इस मन्त्र में पत्नी प्रार्थना करती है कि मैं अपने पतिदेव के साथ सदा सुख पूर्वक निवास करूं। शतपथ ब्राह्मण १४।१।४।१६ में भी 'अथ पत्न्यै शिरोऽपवृत्य महावीरमीक्षमाणा वाचयति त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेमेति वृषा वै प्रवर्ग्यो योषा पत्नी मिथुनमेवैतत् प्रजनन क्रियते" शतपथ। (वैदिक यन्त्रालय अजमेर पृष्ठ ६८६) इत्यादि वचनों द्वारा इस मन्त्र को पत्नी से बुलवाने का स्पष्ट विधान है। इस प्रकार कर्म काण्ड मे स्त्रियों का अधिकार अत्यन्त स्पष्टतया प्रमाणित होता है। शतपथ ब्राह्मण १।६।२।१—३५ में पत्नी संयाजन अर्थात् पत्नियों को यज्ञ करवाने का विशेष रूप से विधान ते वै पत्नीः सयाजयिष्यन्त प्रतिपरायन्ति १।६।२।२।१) अथ पत्नी सयाजयन्ति.. यज्ञस्यइमा प्रजा प्रजायन्ते तस्मात् पत्नी संयाजयन्ति। (१।६।२।५) अथ वेद पत्नी विस्रंसयति, योषा वै वेदि वृषा वेदो मिथुनाय वै वेद क्रियते(१।६।२।२१) वेद पत्नी विस्रंसयति। सा विस्रंसयति वेदोऽसि येन त्व देव वेद देवेभ्यो वेदोऽभवस्तेन मह्य वेदो भूया इति यदि यजुषा चिकीर्षेदेतेनैव तत् कुर्यात्।। (शतपथ १।६।२।२२-२३) अथ यत् समिष्टयजुर्जुहोतिप्राङ् मे यज्ञोऽनुसन्तिष्ठाता इत्यथ यद् हुत्वा समिष्टयजु पत्नी सयाजयेत् ।। (श० १।६।२।२५) इत्यादि वाक्यों द्वारा किया गया है जिन में स्त्रियों के वेद खोलकर 'वेदोऽसि येन त्व देव वेद' इत्यादि मन्त्रों को पढ़ने और यज्ञ करने का स्पष्ट प्रतिपादन है जिस में अणुमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता (देखो शतपथ ब्राह्मण वैदिक यन्त्रालय अजमेर संस्करण पृ० ७०)। तैत्तिरीय संहिता १।१।१० मे 'सुप्रजसस्त्वा वय सुपत्नीरुप सेदिम। अग्ने सपत्नदम्भनम् अदब्धासो अदाभ्यम्।" समायुषा सप्रजया समग्ने वर्चसा पुनः। संपत्नी पत्याह गच्छे समात्मा तनुवा मम।। इत्यादि मन्त्रों को स्त्रियों द्वारा बुलवाने का विधान

है। जिसपर 'जघनेन पत्नी गार्हपत्यमुपसीदति सुप्रजसस्त्वा वय सुपत्नी रुप सेदिम।' इस कल्प सूत्र के वचनों को उद्धृत करते हुए 'हे अग्ने वय त्वाम् उपसीदाम कीदृश्यो वय सुप्रजस—शोभन प्रजोपेता शोभन पतिर्यासा ता सुपत्न्य इत्यादि।'

'पत्नी समायुषा सप्रजयेत्यानीयमाने जपति हे अग्ने अहम् आयुषा सगच्छे प्रजया स गच्छे पातिव्रत्य लक्षणेन वर्चसा स गच्छे अनेन पत्या पुन पुन भूत्वा स गच्छे वियोगः कदाचिदपि मा भूदित्यर्थ मम शरीरेण जीवात्मा चिर सगच्छताम्॥

(कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीय स हिता सायण भाष्य प्रथम खण्ड आनन्दाश्रम पूना स स्करण पृ० १४२-१४८) ऐसा श्री सायणाचार्य ने लिखा है। इन मन्त्रों का अर्थ उनकी व्याख्यानुसार भी यही है कि हम उत्तम पतियों वाली स्त्रिया अग्निदेव की उपासना करती हैं हमें दीर्घजीवन, उत्तम सन्तान, पातिव्रत रूप तेज प्राप्त हो और पतियों से हमारा कभी वियोग न हो। क्या ये मन्त्र स्त्रियों के वेदाध्ययन और कर्मकाण्ड के अधिकार को स्पष्ट सूचित नहीं करते ?

इसी प्रकार श्रौत सूत्रों और गृह्यसूत्रों में स्त्रियों के वेद मन्त्र पढ़ कर यज्ञ, सस्कारादि कर्म काण्ड में भाग लेने का स्थान २ पर स्पष्ट विधान है जिन प्रमाणों में से विस्तार भय से केवल कुछ मुख्य प्रमाणों का ही यहा उल्लेख किया जाता है।

शाङ्खायन श्रौतसूत्र अ० १ सू० क० १२ १३ में यह विधान है कि 'घृतवन्त कुलायिन रायस्पोषं सहस्रिणं वेदो दधातु वाजिनम्।' इतिवेदे पत्नीं वाचयति॥ अर्थात् वेद में से पत्नी 'घृतवन्त कुलायिनम्' इस मन्त्र का उच्चारण करे या अध्वर्यु उसे करवाए। आश्वलायन श्रौतसूत्र १। ११। १ में लिखा है कि—

'वेद पत्न्यै प्रदाय वाचयेद् होताध्वर्युर्वा वेदोऽसि वित्तिरसि विदेय कर्मणीष्ट करणमसि।'

अर्थात् होता या अध्वर्यु पत्नी के हाथ में वेद दे कर 'वेदोऽसि वित्तिरसि' इत्यादि मन्त्रों का उच्चारण करवाए। (आश्वलायन श्रौत सूत्र आनन्दाश्रम प्रेस पृ० ३२-३३) 'अभिमृश्य वाचयेत् पूर्णमसि मे पूर्ण मे भूया सुपूर्णमसि सुपूर्णं मे भूया सदसि सन्मे भूया सर्वमसि सर्व मे भूया अक्षितरसिमामे क्षेष्ठा इति।'

अर्थात् पत्नी से 'पूर्णमसि पूर्ण मे भूया' इत्यादि मन्त्र का उच्चारण करवाए।

कात्यायन श्रौतसूत्र ६। ६। २-३ में 'पशोः प्राणान् शुन्धति पत्नी मुख नासिके चक्षुषी कर्णौ नाभि मेढ्र पायु पादान् सहृत्य वाच ते शुन्धामीति प्रति मन्त्रम्॥' इत्यादि वाक्य द्वारा स्त्रियों से वाच त शुन्धामि प्राण ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि ' चरित्रांस्ते शुन्धामि' इस मन्त्र को बुलवाने का विधान है इसी प्रकार यजु० अ० २३ के 'गणानात्वो गणपति हवामहे (२३-१९), यकोऽसकौ शकुन्तक (यजु० २३। २३), माता च ते पिता चते (यजु० २३। २४) इत्यादि कात्यायन श्रौत सूत्र और उव्वट महीधर भाष्य के अनुसार पत्नियों द्वारा उच्चारणीय हैं।

शौनकाचार्य कृत ऋग्विधान ३। ११६-११७ में लिखा है 'सूर्यायै भाव वृत्त तु, श्रावयेत्कन्यकां पिता॥११६॥ अनुरूप सुसदृशं,भर्तार तेन विन्दति। इमामिति जपेत्कन्या, नाभिमालभ्य नित्यश॥११७॥ एवमेव जपेद् भर्ता, ततो दीर्घायुषौ तु तौ॥११८॥ स्नापयेदभिरूपैश्च, भ्राता कन्या पितापि वा।

सम्राज्ञीति जपेन्मूर्ध्नि,कन्यामालभ्य नित्यश ॥११९
श्वश्रू श्वशुर देवरै, ननान्द्रा चापि पूज्यते।
इन्द्राण्या कृत सवाद स्नाने सूक्त प्रयोजयेत् ॥१२०

यहां यह कहा गया है कि पिता को चाहिये कि वह कन्या को ऋग्वेद के विवाह विषयक सूर्या सूक्त (१०।८५) का पाठ कर के अर्थ सहित सुनाए। ऐसा करने से कन्या अपने अनुकूल, सब प्रकार से सदृश पति को प्राप्त करती है। कन्या को चाहिये कि वह नाभि का स्पर्श कर के "इमा त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगा कृणु। दशास्या पुत्रानाधेहि पतिमेकादश कृधि ॥" इस ऋग्वेद १०।८५।४५ के मन्त्र का जाप किया करे ऐसे ही उसके पति को भी इसका जाप करना चाहिये ऐसा करने से उन दोनो की दीर्घ आयु होती है। कन्या का भाई या पिता उसे अच्छी प्रकार स्नान करवाए और उस समय ऋग्वेदके १०।८६ सूक्तस्थ मन्त्रों का पाठ करवाए। कन्या (वधू) के मस्तक का स्पर्श कर के वर "सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वा भव। ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु ॥" इस ऋ० १०।८५।४६ के मन्त्र का जप करे इस प्रकार वह सास ससुर देवर ननन्द आदि द्वारा पूजित होती है। अन्य भी अनेक स्थानों पर ऋग्विधान में स्त्रियों द्वारा वेद मन्त्रों का उच्चारण कर के विविध क्रियाए करने का विधान है। विस्तार भय से कुछ थोड़े से उदाहरण यहां दिये हैं।

इसी प्रकार पारस्कर गृह्यसूत्र, आश्वलायन गृह्यसूत्र,शाङ्खायन गृह्यसूत्र, मानव गृह्यसूत्र इत्यादि गृह्यसूत्रों में यज्ञों तथा विवाहादि संस्कारों में स्त्रियों के मन्त्र पढ़ कर वैदिक क्रियाएं करने का स्पष्ट विधान पाया जाता है जिससे कोई भी निष्पक्ष विद्वान् इन्कार नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ पारस्कर गृह्यसूत्र १।६ विवाह निरूपण में लाजा होम का विधान करते हुए लिखा है।

तान् (लाजान्) कुमारी जुहोति संहितेन तिष्ठती 'अर्यमणं देवं कन्या अग्निमयक्षत। स नो अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा'

इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका। आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा॥
इमांल्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धि करणं तव। मम तुभ्यच सवननं तदग्निरनुमन्यतामियँ स्वाहा॥
इति संहितेन सम्मिलितेन अञ्जलिना जुहोति विवाहाग्नौ प्रक्षिपति अर्यमणम् इत्यादिभिर्मन्त्रैः। इस श्रीवेणीराम शर्मा कृत विवृति और 'तिष्ठती तिष्ठता पत्या गृहीताञ्जलिरेव सा। अञ्जलिस्थान् त्रिधा कृत्वा, प्राङ् मुखी प्रति मन्त्रत ॥ इस कारिका तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के धर्म विज्ञान विद्यालय के अध्यक्ष श्री विद्याधर शर्मा कृत मन्त्र व्याख्या से जिस का तात्पर्य यह है कि कन्या इन मन्त्रों से प्रार्थना करती है कि अर्यमा देव मुझे पितृ कुल से छुड़ाए किन्तु पति कुल से मेरा वियोग कभी न हो। मेरे पति देव को दीर्घायु प्राप्त हो और मेरे सब सम्बन्धी फलें फूलें। (इयं नारी वधूर्मद्रूपा पत्यु समीपे ब्रूते मे पतिः आयुष्मानस्तु) हे पते तव समृद्धि करणम् समृद्धिहेतून् इमान् लाजान् अग्नौ आवपामि अतो हेतो अयम् अग्नि मम तुभ्य तव च सवननं सभजनम् अन्योन्यानुराग लक्षणम् अनुमन्यताम् अनुमोदयतु (विवृति सहित पारस्करगृह्य सूत्रम् मा०॥ खेडालाल द्वारा मास्टर प्रिन्टिंग वर्क्स बनारस में मुद्रित पृ० ३१) अर्थात् हे पति देव! मै आपको समृद्धिके हेतु इन लाजों (खीलों को) अग्नि में डालती हूँ। यह अग्नि देव आप के और मेरे बीच प्रेम को सदा बनाए

रक्खे इत्यादि। पारस्कर गृह्यसूत्र १.८ में अथैना सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरिति। वर एना वधू सूर्यम् उदीक्षयति सूर्यं निरीक्षणं कारयति सा च वर प्रेषिता सती 'तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।' इति मन्त्रेण स्वय पठितेन सूर्यं निरीक्षते ॥ वेणीराम शर्मा कृत विवृति।

अर्थात् वर वधू को सूर्य दर्शन करवाता है वधू तच्चक्षुर्देव हितम् इस मन्त्र का उच्चारण करती हुई सूर्य दर्शन करती है।

ऐसे ही गोभिल गृह्यसूत्र २।१।१६-२२ में लिखा है कि—

'प्रावृता यज्ञोपवीतिनी'मभ्युदानयन् जपेत सोमोऽददत गन्धर्वायेति पश्चादग्ने संवेष्टितं कटं पदा प्रवर्तयन्तीं वाचयेत् 'प्रमेपतियान पन्थाः कल्पतामिति'

यहां कन्या के लिये 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह विशेषण आया है जिसका अर्थ प० सत्यव्रत सामाश्रमी आदि भाष्यकारों ने यह किया है कि 'यज्ञोपवीत युता कन्याम्' अर्थात् यज्ञोपवीत युक्त उस कन्या को यज्ञमण्डप में लाकर उस से 'प्र मे पतियान' पन्था' कल्पताम् शिवा अरिष्टा पति लोकं गमेयम्' इस मन्त्र का उच्चारण करवाए।

इस से भी स्त्रियों का संस्कारादि वैदिक कर्म काण्ड में अधिकार स्पष्ट तथा प्रमाणित होता है।

(शेष अगले अङ्क में)

सम्पादकीय

जादू वह जो सर पर चढ़ कर बोले:—

वदिक एकेश्वर वाद और महर्षि दयानन्द पर एक मुस्लिम विद्वान्—

कई नासमझ और मतान्ध मुसलमान वैदिक धर्म, महर्षि दयानन्द और सत्यार्थप्रकाश को गालियां देते हुए नहीं थकते किन्तु समझदार मुसलमान विद्वान् भी किस प्रकार इन विषयों की यथार्थता को समझ कर स्वामी दयानन्द जी महाराज का उपकार मानते हैं इसको हम 'सार्वदेशिक' में समय-समय पर सर सय्यद अहमद खां आदि के लेखों से उद्धरण देकर दिखाते रहे हैं। सर मुहम्मद यामिन खा सी० आई, ई० बार ऐट् ला की God, Soul and Universe in Science and Islam नामक पुस्तक के जो हाल ही में शेख मुहम्मद अशरफ़ काश्मीरी बाज़ार लाहौर ने प्रकाशित कराई है निम्नलिखित वाक्य इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय हैं। वे 'जादू वह जो सर पर चढ़ कर बोले इस कहावत को चरितार्थ करते हैं। सर यामीन खा अपनी पुस्तक के प्रथम अध्याय में हिन्दुओं की ईश्वर कल्पना पर विचार करते हुए लिखते हैं —

Originally the conception of God among the Hindus was right when they believed Him to be Unit and Omnipresent but when they started dividing Him into different shapes according to different functions which they considered He performed, they strayed far fromtheir original conception (P 1)

"Swami Dayananda Saraswati, a man of great learning, started preaching the old religion of the Vedas which conceives Unity cf God He has been successful in converting many Hindus who were pagans or polytheists into monotheistic religion (P 3)

अर्थात् प्रारम्भ में हिन्दुओं के अन्दर ईश्वर विषयक विचार ठीक था जब वे ईश्वर को एक और सब व्यापक मानते थे किन्तु जब उन्होंने उसे अपनी कल्पना के आधार पर अनेक कार्यों के अनुसार अनेक आकारों में विभक्त करना शुरू किया तो वे अपने प्रारम्भिक व मौलिक विचार से दूर चले गये अथवा भटक गये।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जो बड़े ही विद्वान् थे वेदों के पुराने धर्मका जो एकेश्वरवाद को मानता है प्रचार करना शुरू किया। उन्हें बहुत से हिन्दुओं को जो काफ़िर अथवा अनेक देवता पूजक थे एकेश्वरवादी धर्म के अनुयायी बनाने में सफलता प्राप्त हुई है।

क्या यह महर्षि दयानन्द का थोड़ा उपकार है? यदि इस्लाम और ईसाई मतमें से भी

विशुद्ध और तर्क सगत एकेश्वरवाद के विरुद्ध अशो को दूर करने का महर्षि दयानन्द ने प्रयत्न किया तो क्यों न उनको धन्यवाद दिया जाए ?

मुस्लिम लेखकों का विषवमनः—

श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फ़ाजिल का 'मुसलमानों द्वारा लिखित विरोधी साहित्य' शीर्षक उत्तम लेख पाठक महानुभाव इस अङ्क मे अन्यत्र पढ़ेगे। मुस्लिम लेखको के ग्रन्थो मे आर्य हिन्दू धर्म के विरोध में किस प्रकार विषवमन किया गया है इसके दो उदाहरण यहा पाठको की सूचनार्थ देना अनुचित न होगा। 'रद्दे हिन्दू' नामक जिस पुस्तक का उस लेख में उल्लेख किया गया है उसमे इस प्रकार के वाक्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी और सीतादेवी जी के विषय मे पाये जाते हैं:—

पृष्ठ २८—राम और कृष्ण वगैरह कि जिनको तुम लोग अवतार समझते हो सब गुमराह और बदख्याल थे।

पृष्ठ ३१—राम निहायत बेगैरत (निर्लज्ज) और बेशरम था कि अपनी जोरू सीता की हरामकारी (व्यभिचार) और बदमुआमलगी मालूम करके घर स निकाल दिया।

पृष्ठ ३३—अजब यह है कि कृष्ण जैसे बद-जात जानी (व्यभिचारी) फसादी को अवतार समझते हो।

पृष्ठ ४६—और कृष्ण अवतार कहते, सो था राना नाबकार। उससा कोई दूसरा जानी न था बदकार बदकार॥ चोर था और था उचक्का, चुप तो रह कुछ दम न मार।' ऐसा ही विषवमन मुसलमान लेखको की अन्य पुस्तकों मे किया गया है जिन से उद्धरण तक देना हमे अत्यन्त अप्रिय और अरुचिकर प्रतीत होता है। ऐसे लोग यदि शुद्ध भाव से की गई सत्यार्थप्रकाश की आलोचना पर नाक भौं सिकोड़ें और उसे जब्त कराने का प्रयत्न करें तो कितने आश्चर्य की बात है ? सत्यार्थप्रकाश तो वस्तुत. ऐसे घृणित साहित्य का युक्तियुक्त यथार्थ उत्तर देने के लिये लिखा गया था। न केवल आर्य हिन्दुओं के मान्य महानुभावों और देवियो पर अश्लील भाषा मे अनुचित आक्षेप अनेक मुस्लिम लेखकों ने किये थे बल्कि हिंसा को भी ऐसे विषयो में पूर्ण प्रोत्साहन दिया था। उदाहरणार्थ अलीखान साहेब कृत 'नियोग का भोग' नामक पुस्तक में जो गुलजार इब्राहीम प्रेस मुरादाबाद मे छपी थी निम्न वाक्य हैं:—

'अब दाढ़िया रखवा लें, इज्जत जिन्हें रखनी हो।
वरना राहे हस्ती से, हम उनको मिटा देंगे॥
"उन वेदो की तालीम की, वकत नहीं कुछ दिल में
दुनिया से मिटा देंगे, मिट्टी मे मिला देंगे॥
हो दुश्मने दीन लाखों, परवाह न करें 'हामी'।
हम गर्दनें पकड़ेंगे, कदमो पै गिरा देंगे॥

ऐसे हिंसात्मक वाक्यो पर टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं। क्या सत्यार्थप्रकाश की युक्तियुक्त समालोचना की ऐसी धमकियों भरे विषवमन से कोई तुलना की जा सकती है निष्पक्ष-पात सज्जन स्वय विचार करें।

मि० जिन्ना को ६ लाख रु० वार्षिक की सरकारी सहायता।

सुप्रसिद्ध मासिक पत्र माडर्न रिव्यू के दिस० १९४५ के अङ्क में एक सम्पादकीय टिप्पणी में यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि प्रगतिशील मुसलमानों द्वारा सम्पादित कलकत्ता के "नवयुग"

नामक दैनिक पत्र मे उर्दू अखबार 'हकीकत' के आधार पर यह सूचना निकली है कि मि० जिन्ना को भारत सरकार हैदराबाद रियासत के द्वारा ६ लाख रु० वार्षिक की सहायता दे रही है। कहा जाता है कि मास्टर तारासिंह जी ने इस समाचार को फैलाते हुए कहा कि उनके पास इसके समर्थन में इन्कम टैक्स विभाग के दाखलो की साक्षि विद्यमान है। अपनी साधारण आमदनी पर २० लाख रु० की वृद्धि की व्याख्या करने के लिए जब मि० जिन्ना को कहा गया तो उन्होने कहा कि देशी रियासतो द्वारा उन्हें यह आय हुई है। देहली के उर्दू अखबार 'अन्सारी' ने इस समाचार को प्रकाशित करते हुए लिखा है कि न केवल हैदराबाद से बल्कि अन्य भी अनेक रियासतो से पाकिस्तान के समर्थन और भारतीय स्वतन्त्रता मे बाधा डालने के लिये आर्थिक सहायता मि० जिन्ना को मिलती है। १० नवम्बर के पश्चात् प्राय. सभी प्रसिद्ध उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी, बंगाली, गुजराती पत्रो म प्रकाशित इस समाचार का मि जिन्ना अथवा भारत सरकार ने अब तक कोई प्रतिवाद नहीं किया जिस से न केवल इस की यथार्थता प्रकट होती है बल्कि यह भी ज्ञात होता है कि मि० जिन्ना पाकिस्तान आदि का अड्डा लगाकर क्यो हर समय भारतीय स्वतन्त्रता के मार्ग में रोड़े अटकाते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियो अथवा उन की संस्थाओ से सन्धि की चर्चा करना सर्वथा निरर्थक है यह अब लिखने की आवश्यकता नहीं।

जाति भेद निवारक आन्दोलन और वर्ण व्यवस्था विरोधः—

केवल आर्य समाज ही नहीं, बल्कि भारतीय समाज और राष्ट्र की वास्तविक उन्नति और सगठन के लिये जाति भेद (जात पात) और अस्पृश्यता का समूल नाश अत्यन्त आवश्यक है इस बात को हम इन स्तम्भों और लेखों में अनेक वार बता चुके हैं। इस जाति भेद निवारक आन्दोलन को प्रबल बनाने में प्रत्येक समाज और राष्ट्र प्रेमी को अवश्य पूर्ण सहयोग देना चाहिये। जाति भेद निवारक आर्य-परिवार संघ ने जिस की स्थापना विषयक योजना पाठक 'सार्वदेशिक' के गत कुछ अङ्को मे पढ चुके हैं और जिस की नियमित स्थापना का वृतान्त पाठक इसी अङ्कों मे अन्यत्र पढ़ेगें सगठित रूप से जाति भेद के विरुद्ध और अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है जिस में हम सब युवक युवतियो और अन्य आर्य नर नारियों को क्रियात्मक सहयोग की प्रेरणा करते हैं क्योंकि समाज तथा शुद्धि, दलितोद्धारादि का भविष्य बहुत कुछ इस की सफलता पर निर्भर करता है। किन्तु हम इस बात को स्पष्ट कर देना अपना कर्तव्य समझते हैं कि जो सज्जन वा संस्थाएं इस जन्म सिद्ध वर्ण व्यवस्था वा जाति भेद के विरोध के साथ गुण कर्मानुसार शास्त्रीय वर्ण व्यवस्था के आदर्श का भी विरोध करना प्रारम्भ कर देते हैं वे आर्य (हिन्दू) जनता में न केवल एक भ्रान्ति पैदा करते है बल्कि इस विषयक उनकी सहानुभूति को भी खो बैठते हैं। गुणकर्म स्वभाव पर आश्रित शास्त्रीय वर्ण व्यवस्था वर्तमान जाति भेद से सर्वथा भिन्न वस्तु है। एक सामाजिक आदर्श के रूप में वह एक प्रशंसनीय चीज है जिस का विरोध प्रारम्भ करके 'जात पात तोड़क मण्डल' लाहौर के श्री सन्तराम जी और 'श्रद्धानन्द दल'के पं० ईश्वरदत्तजी मेधार्थी आदि ने

जाति भेद निवारक आन्दोलन को अनजाने हानि पहुचाई ऐसा हमारा विश्वास है। इन दोनो के भेद को स्पष्ट मानते हुए यदि इस समय हम जाति भेद के निवारणार्थ अन्तर्जातीय विवाहादि पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे तो विशेष लाभ हो सकेगा। इस विषयक लेख तथा शङ्कासमाधान 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित होते रहेंगे।

मान्य पं० मदनमोहन जी मालवीय से निवेदनः—

यद्यपि कई समाचार पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि श्री प्रो० महेशप्रसाद जी की सुपुत्री श्री कल्याणी देवी का प्रवेश हिन्दू विश्व विद्यालय के धर्म विज्ञान महाविद्यालय मे हो गया है तथापि यह समाचार यथार्थ नहीं ऐसा मान्य प्रो० महेश प्रशाद जी के २७-१२-४५ के पत्र से ज्ञात हुआ है और उसे जानकर हमें अत्यन्त दुःख हुआ है। इस सम्बन्ध में विचारार्थ एक उपसमिति हिन्दू विश्व विद्यालय ने बनादी है जिसके प्रधान माननीय श्री प० मदनमोहन जी मालवीय हैं। स्त्रियोंके वेदाध्ययनाधिकार विषयक प्रबल प्रमाण हम 'सार्वदेशिक' के नवम्बर और दिसम्बर १९४५ के अंको में दे चुके हैं इस अक में स्त्रियों के कर्म काण्ड में अधिकार विषयक अनेक प्रमाण दिये गये हैं जिनकी ओर श्री प० मालवीय जी और विश्वविद्यालय उपसमिति के अन्य सब सदस्यों का ध्यान आकर्षित करते हुए हम उनसे सानुरोध निवेदन करते हैं कि वे वेदादि सत्य शास्त्र विरुद्ध इस प्रतिबन्ध को दूर करके पुण्य भागी बनें अन्यथा विचार शील जनता के घोर असन्तोष के परिणाम स्वरूप जो प्रबल आन्दोलन उठेगा उस की उत्तर दायिता स्वयम् उन पर होगी। हमें विश्वास है कि वे श्री कल्याणी देवी को धर्म विज्ञान महाविद्यालय में प्रविष्ट करके इस अवाञ्छनीय स्थिति से अपने को बचाएगे और अपनी उदारता का परिचय देंगे।

सार्वदेशिकार्थ अनुकरणीय दानः—

लुधियाना के सुप्रसिद्ध उत्साही आर्य श्री ला० लब्भूराम जी की सार्वदेशिक पर सदा कृपा दृष्टि रही है। अभी गतमास साबुन बाजार आर्यसमाज लुधियाना ने जिसके वे कोषाध्यक्ष हैं ५१) की सहायता 'सार्वदेशिक' पत्र के अधिक प्रचार और वितरणार्थ भिजवाई है जिस के लिये हम उनको हार्दिक धन्यवाद देते हैं और अन्य धनीमानी सज्जनों से भी उनका अनुसरण करने की प्रेरणा करते हैं।

बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्यः—

परममान्य 'नेता जी' श्री सुभाषचन्द्र बोस (जिनकी ईश्वर भक्ति, आत्म विश्वास, उज्ज्वल देशभक्ति, स्वार्थ त्याग, अदम्य उत्साह, स्वतन्त्रता के उत्कट प्रेम और अद्भुत संगठन शक्ति के प्रति हम हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं, और जिन का पवित्र नाम भारतीय स्वतन्त्रता के इतिहास में सदा स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।) द्वारा संगठित आजाद हिन्द फौज के उच्च अधिकारी कप्तान शाहनवाज खान, कप्तान प्रेमकुमार सहगल और लै० गुरबख्श सिंह ढिल्लन पर जो मुकद्दमा गत ५ नवम्बर १९४५ से देहली में चल रहा था और जिस की ओर सारे जगत का ध्यान केन्द्रित था आखिर फैसला सुना दिया गया और भारत के प्रधान सेनापति सर आकिनलेक ने ३ जनवरी को कोर्ट मार्शल द्वारा प्रदत्त आजीवन कारावास

दण्ड को हटाकर उनको लाल किले से मुक्त कर दिया यह समाचार जानकर सब स्वतन्त्रता प्रेमियों को बड़ी प्रसन्नता होगी। इस बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य के लिये प्रधान सेनापति महोदय धन्यवाद के पात्र हैं। जब सरकार भी इस बात को स्वीकार कर चुकी है कि आजाद हिन्द फौज का उद्देश्य भारत को स्वतन्त्र कराना था और उसके सैनिक शुद्ध देश भक्ति की भावना से प्रेरित हो कर सब प्रकार के कष्ट सहन करने को तय्यार थे और इस में किसी पर अत्याचार न किया जाता था तो उचित और न्यायसङ्गत मार्ग यही है कि उस के अन्य सब अधिकारियों और सैनिको को भी तुरन्त बन्धन मुक्त कर दिया जाए। आशा है कि सरकार इसी न्यायोचित मार्ग का अवलम्बन करके जनता के असन्तोष को दूर करेगी अन्यथा इसका बड़ा भयङ्कर परिणाम सम्भव है।

ध० दे०

सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति का निश्चय

९ दिसम्बर १९४५ के मध्यान्ह मे दीवान हाल देहली में श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त के सभापतित्व में अखिल भारतीय सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति का एक विशेष अधिवेशन हुआ जिस में भिन्न २ प्रान्तो के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। समिति ने सिन्ध मे सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध के प्रश्न पर विचार किया। श्री ला० देशबन्धु जी गुप्त ने कराची से वापसी पर जो रिपोर्ट भेजी थी वह भी पेश हुई। पश्चात् समिति ने निम्न प्रस्ताव स्वीकार किया।

प्रधान मन्त्री कुछ दूसरे मन्त्री तथा अन्य सिन्ध सरकार के जिम्मेदार व्यक्तियो ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रतिबन्ध को हटाने का जो वचन दिया था उसे पूरा नहीं किया, यह खेद के साथ प्रकट करना पड़ता है और अब उसके आधार पर सत्याग्रह प्रारम्भ न करने का कोई कारण नहीं रह जाता। जहां तक वर्तमान सरकार की मनोवृत्ति का सम्बन्ध है अब सत्याग्रह आवश्यक हो गया है। सत्याग्रह के लिये जो अधीरता आर्य भाइयो में है उसका इस समिति को पूरा अनुभव है और समिति उसे सर्वथा स्वाभाविक मानती है। परन्तु सत्याग्रह के लिये जो परिस्थिति तथा वातावरण चाहिये वह चुनावों के कारण इस समय विद्यमान नहीं है। इस सम्बन्ध में यह समिति उन प्रभाव शाली व्यक्तियोकी सम्मतिको भी जो आर्यसमाजी नहीं है और जो विविध सस्थाओ तथा विचारों के हैं आदर की दृष्टि से देखती है। इन अवस्थाओ में कुछ काल के लिये ठहरने मे हमारे उद्देश्यो को क्षति नहीं पहुचेगी बल्कि शक्ति मिलेगी।

एक और बात जो ध्यान मे रखने की है वह यह है कि सिन्ध सरकार ने अपनी ११ अगस्त की विज्ञप्ति मे घोषित प्रतिबन्ध डी० आई० आर० (भारत रक्षा विधान) के मातहत अभी तक नहीं लगाया है जिसका अर्थ यह है कि सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश को बाहर से भेजने और वितरण करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं।

आर्य समाज तथा देश के हित को दृष्टि में रखते हुये यह समिति इस निश्चय पर पहुची है कि चुनावो के काल तक सत्याग्रह प्रारम्भ न किया जाये। यह समिति आर्य जगत को विश्वास दिलाती है कि इस अवधि के ठीक बाद अनिवार्य होने की अवस्था मे सत्याग्रह प्रारम्भ कर देगी।

शिवचन्द्र—
स० मन्त्री
अ० भा० सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

बैलेन्स शीट (शेष-पत्र)

१२-२-१९४५

स्थिर निधियाँ

दश देशान्तर प्रचार	५००००)	
वेद प्रचार	५००००)	
भारतीय स्टेट फण्ड	५००००)	
रक्षा	२५०००)	
सार्वदेशिक भवन	२५५००)	
चन्द्र भानु वेदमित्र स्मारक	५०००)	
गंगाप्रसाद गढवाल प्रचार	२०००)	
आर्य साहित्य प्रकाशन	१००००)	
शहीद सहायता	१००००)	
वैदिक आश्रम ऋषिकेश भवन	१४०००)	
	२४०५००)	२४०५००)
शिवलाल वेद प्रचार	६५०)	
ढोढाराम चूड़ामणि वेद प्रचार	५०१)	
डोमा महनो सुन्दरदेवी	१००)	
	१२५१)	१२५१)

विशेष निधियाँ

दलितोद्धार	३०००)	
सूद „	३१५।≡)	
	३३१५।≡)६	३३१५।≡)६
श्रद्धानन्द नगरी	६६६३)	
दयानन्द आश्रम	२२५०)	
सूद „	१८४।।-)१	
	२४३४।।-)१	
रिलीफ सूद	३१६।≡)	
	१२७३२।।)४	१२७३२।।)४

जहाँ धन लगा हुआ है

भूमि और भवन

सार्वदेशिक भवन	२५५००)	
बलिदान भवन	२६२००)	
गाजियाबाद भूमि	१०७८।-)	
आर्य समाज मन्दिर श्रद्धानन्द नगरी	३९१६)	
पाठशाला भवन श्रद्धानन्द नगरी	२७५७)	
भूमि शोलापुर आर्य समाज मन्दिर	८९२२।।≈)	
वैदिक आश्रम ऋषिकेश	१४०००)	
केशव आर्य हाई-स्कूल हैदराबाद	२५०००)	
	१०६३५८।।≡)	१०६३५८।।≡)

इन्वेस्टमेंट

फिक्स डिपोजिट

पंजाब नेशनल बैंक	८००००)	
प्रताप बैंक	२००००)	
	१०००००)	१०००००)
डिबेंचर मोहनी मिल्स कलकत्ता	३०००)	
आर्य साहित्य मंडल अजमेर का एक शेयर	१०)	
	३०१०)	३०१०)
ओरियन्टल बीमा कम्पनी	१४२५-)	
	१०४४३५-)	१०४४३५-)

दक्षिण भारत प्रचार निधियां

केशवार्य हाईस्कूल	२५०००)	
हैदराबाद मन्दिर निर्माण	४६८३)	
शोलापुर आर्य समाज मन्दिर	१५०००)	
	४४६८३)	४४६८३)

विदेश प्रचार निधियां

अमेरिका	४४२६)	
सूद ,,	२१३॥≡)६	
	४६४२॥≡)६	४६४२॥≡)६
बिरला जी	१३०००)	
सूद ,,	३६०)	
	१३३६०)	१३३६०)
बगदाद	१२७२)	
	१६३०४॥≡)६	१६३०४॥≡)६

धार्मिक पुस्तक निधियां

श्री नारायण स्वामी पुस्तक प्रकाशन		
बचत	७६६।≈)६	
स्टाक	१२४६)	
	२०१५≈)६	२०१५।≈)६
चन्द्रभानु वेदमित्र पुस्तक प्रचार		
बचत	६५६—३	
स्टाक	४६६६)	
	५६५२—)३	५६५२—)३
पुस्तक प्रचार जनरल	१६६२४)	
	२४५६१।≡)६	२४५६१।≡)६

सुरक्षित ऋण

पटौदी हाउस	३४७७५)	
विविध	४३४००)	
	७८१७५)	७८१७५)

फर्नीचर

गत बैलेन्स शीट के अनुसार	३३५६।≡)	
घिसाई (टाइप राइटर)	४५)	
	३३११।≡)	३३११।≡)
स्थिर पुस्तकालय	१६६४।—)	
	५३०६)	५३०६)

स्टाक कागज

	२१२॥)

पेशगियां

देहली बिजली कम्पनी	४८)	
आर्य प्रतिनिधि सभा		
संयुक्तप्रान्त	२३५२॥≡)३	
विविध	७३५२।≈)२	
	६७५३।—)५	६७५३।—)५

बिक्री की पुस्तकें

पुराना स्टाक	१४४०३।।—)	
स्टाक चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक निधि के प्रकाशन का	४६६६)	
स्टाक श्री नारायण स्वामी जी प्रकाशन	१२४६)	
आर्य साहित्य प्रचार निधि	६६०।—)	
	२१३३६≈)	२१३३६≈)

विविध निधियां

दयानन्द पाठशाला समैपुर	२२२=)	
टंकारा समाज मन्दिर निर्माण	३५३-)	
गृहविहीन जाति रक्षा	६९।)३	
सत्यार्थप्रकाश	३४१००-)३	
जनरल	२९१७।≡)	
स्थिर पुस्तकालय	१९०१।।।=)३	
पं० ओंकारदत्त स्मारक स्थिर पुस्तकालय	९२।।=)९	
		३९६५६।।)

धरोहर

उचन्त	४४७।।-)	
सभा कर्मचारियो की	३४८४)१०	
विविध	११८०।≡)९	
	५११२।-)७	५११२।-)७

स्टाफ प्रोवीडेन्ट

	४२३२)३
सर्वयोग	३९२३६३।।=)२

प्राप्तव्य

मकानो का प्राप्तव्य	किराया ८०५)	
मद प्राप्तव्य	३३६३।=)	
इम्प्रेस्ट	१३५३)	
	५५२१।=)	५५२१।=)

नकद तथा बैंकों में

सेन्ट्रल बैंक देहली	८२६३=)९	
,, ,, शोलापुर	९९२=)७	
पंजाब नेशनल बैंक सेविंग	४२३३।)९	
,, ,, (चालू)	४२४०७।≡)७	
	५५८९६।-)८	
पीपल बैंक	३७३३।≡)२	
	५९६२८।।)१०	५९६२८।।)१०

आय व्यय खाता

गत वर्ष का	१६५०≡)२	
इस वर्ष की बचत	१४।≡)३	
	१६३५।≡)११	१६३५।≡)११
	सर्वयोग	३९२३६३।।=)२

आडीटर की रिपोर्ट

हमने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के हिसाब की जाच की । हम प्रमाणित करते है कि उपर्युक्त बैलेन्स शीट (शेष पत्र) और आय व्यय का सयोजित विवरण हिसाब के रजिस्टरो और अन्य कागजो के अनुसार जो हमे दिखाये गये, ठीक है। हमारी आज की तिथि की रिपोर्ट पृथक् है।

चादनी चौक, देहली
९-४ ४५

वास्ते जगदीश प्रसाद एण्ड कम्पनी
ह० जगदीश प्रसाद
बी० ए० बी० कौम (बंबई)
जी० डी० ए० आर० ए०
रजिस्टर्ड एकाउन्टेण्ट, आडीटर

रघुनाथ प्रसाद पाठक	**सुधाकर एम्. ए.**	**नारायण दत्त**	**गंगाप्रसाद एम० ए०**
एकाउन्टेन्ट	मन्त्री	कोषाध्यक्ष	प्रधान

दानसूची सार्वदेशिक-आर्यप्रतिनिधि सभा देहली

मास अक्टोबर व नवम्बर सन् १९४५

सत्यार्थप्रकाश निधि

संयुक्त प्रांत

५) श्री रामकुमार जी आर्य घिरोर । मैनपुरी ।

१३४९४)॥ गत योग

१३४९९)॥ योग

सिन्ध प्रान्त

५) श्री बाबूराम जी फोरमेन कराची

१४३६५।) गत योग

१४३७०।) योग

बम्बई प्रान्त

८६६९॥।) गत योग

बिहार प्रान्त

६०४८।≈) गत योग

पंजाब व देहली प्रान्त

४) श्री शिवराम जी गुप्त कसौली (अम्बाला)

१०) श्री रामचन्द्र जी बनवासी दरवाजा जिला गुजरांवाला ।

५५०२॥≈) गत योग

५५१६॥≈) योग

बंगाल प्रान्त

३९११) गत योग

राजस्थान प्रान्त

३२४४॥≈) गत योग

मध्यप्रदेश प्रान्त

५००) श्री मन्त्री जी प्रा० स० सागर

१३५५।) गत योग

१८५५।) योग

हैदराबाद स्टेट

३०) श्री बाबूलाल मानकचन्द जी हिंगोली

५२३।) गत योग

५५३) योग

मद्रास प्रान्त

४७८॥) गतयोग

विदेश

५१२।) श्री मन्त्री जी प्रा० स० नैरोबी

१७६९) गत योग

२२८१।) योग

विविध

४१५७॥) गत योग

१०६६।) दो मास का कुल योग

६३३०१॥।≈)॥गत योग

६४३६८≈)॥सर्वयोग

स्थापना दिवस अवशेष ४५

१०) श्री मन्त्री जी आ० स० इटारसी

१०) श्री डा० जगदीश सरन जी आ० स० फतेहपुर बिश्नोई

नवम्बर ४५

५) श्री मन्त्री जी आ० स० मं०

२५)

१७००)२ गत योग

१७२५)२ योग

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "[illegible] प्रेस" [illegible] में मुद्रित।

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्य समाज	,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।)
(४) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	२)
(७) बलिदान	,,	॥)
(८) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(९) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर	,,	=)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (प इन्द्रजी)		।-)
(११) आर्यवीर दल लेखमाला (श्री ओंप्रकाश जी)		१)
(१२) यमपितृ परिचय (प० प्रियरत्न जी आर्ष)		२)
(१३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(१४) वैदिक सूर्य विज्ञान	,	=)
(१५) वेद में असित शब्द	,,	-)।
(१६) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	-)
(१७) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	१)
(१८) विमान शास्त्र	,,	।=)॥
(१९) मातृत्व की ओर श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक	अ० १।), स० १॥)	
(२०) [illegible] म [illegible]	,,	।।।)
(२१) [illegible] स्वामी जी		२।)
(२२) श्री नारायण [illegible] न ग्रन्थ		५)
(२३) योग रहस्य		१)
(२४) उपनिषद् ईश ।=) केन ॥) कठ ॥), प्रश्न ।=) माण्डूक्य ≡), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ।।।) बृहदारण्यक २)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		-)

(२६) वैदिक सन्ध्या रहस्य (श्री [illegible] स्वामी जी) ≈)॥

(२७) शहादा पद्धिका ।-)

(२८) आर्य समाज म दर चित्र ।)

(२९) हजहारे इकाकन श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी आर्य ।।।=)

(३०) भक्ति कुसुमाञ्जलि श्री [illegible] विद्यावा० ।।।)

(३१) दयानन्द [illegible]

प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी) ।।।)

(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी) १॥)

(३३) कुमुदिनीचन्द्र (श्री प० [illegible]) २)

(३४) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी =)

(३५) स्वामी दयानन्द जी [illegible] चरित्र

(प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति) १॥)

(३६) दयानन्द (कविता) प० [illegible] १=)

(३७) ध्यान योग प्रकाश स्वामी लक्ष्मणानन्द जी १॥-)

(३८) सत्यार्थ प्रकाश गान (प० सत्यभूषण जी योगी) ।=)

(३९) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)

(४०) भारतवर्ष में जाति भेद ।)

(४१) सत्यार्थप्रकाश की सार्वभौमता -)

(४२) भारतीय डाकघरों में हिन्दी का अपमान क्यों?

-॥

(४३) हम और हमारे समालोचक -)

(४४) सत्यार्थप्रकाश और [illegible] -



१६४६ ई०
२००७ सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश ७शि

ओ३म्

ऋषि-बोधांक

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २१ | फरवरी १९४६ ई० | माघ २००२ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क १२

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् अपामीवामपस्रिधमप सेधत दुर्मतिम्। आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥

सामवेद म० ३९७

अर्थ—(आदित्यासः) हे सूर्य के समान तेजस्वी आदित्य ब्रह्मचारियो। तथा नेताओ (न) हमारे (अमीवाम्) रोगों को (अप) दूर करो (स्रिधम्) हिंसा को (अप) दूर करो (दुर्मतिम् अपसेधत) दुष्ट बुद्धि को दूर भगा दो। तुम हमें (अंहस युयोतन) पाप से सर्वथा पृथक् कर दो।

प्रार्थना—हे सूर्यों के सूर्य सर्वज्ञ परमेश्वर। हम सब प्रकार के रोगों, हिंसात्मक भावनाओं, दुर्बुद्धि और पापों से मुक्त होना चाहते हैं। आपकी कृपा से आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द जी जैसे महानुभाव समय २ पर संसार में जन्म लेकर मनुष्यों को सच्चा मार्ग दिखाते और उन्हे पापों तथा दुष्ट भावनाओं से सर्वथा दूर रहने का उपदेश करते हैं। आप ऐसी कृपा करें कि ऐसे आदित्य समान तेजस्वी विद्वान् नेता हमारे सदा पथप्रदर्शक बने रहें जिससे हम सब पापों और रोगों से पृथक् रहें।

वेदोपदेश

(व्याख्याकार—आचार्य अभयदेव जी संन्यासी)

ओ३म् य एक इत् तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः । पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः ॥ ऋ०६।४५।१६

शब्दार्थ—(य) जो परमेश्वर (एक इत) एक ही है और जो (कृष्टीनाम्) मनुष्यों का (विचर्षणि) सर्वद्रष्टा—सर्वज्ञ और (वृषक्रतुः) सर्वशक्तिमान (पति) पालक (जज्ञे) हुआ है (तम् उ) उसकी ही (स्तुहि) तू स्तुति कर।

व्याख्या—हे मनुष्य ! तू किस किस की स्तुति करता फिरता है? ससार में तो एक ही स्तुति के योग्य है। ससार में हम मनुष्यों का एक ही पति, पालक और रक्षक है। हे मनुष्य ! तू न जाने किस २ को पालक समझता है । कहीं तू रुपये-पैसे वाले व्यक्ति को अपना रक्षक समझता है, कहीं तू किसी लब्ध प्रतिष्ठ रोब-दाब वाले व्यक्ति को अपना स्वामी बना कर रहता है । कहीं तू किसी दार्शनिक व कवि की प्रज्ञा व प्रतिभा के स्तुति गीत गाने लगता है, उनके ज्ञान व कवित्व पर तू मोहित रहता है। ससार में ऐसे भी बहुत हैं जो कि किन्हीं जीवित व जीव रहित आकृतियों के सौंदर्य को देख कर ही ऐसे मोहित हो जाते हैं कि उनका मन उस सौन्दर्य की प्रशसा करता नहीं थकता। परन्तु संसार में मनुष्य की स्तुति के पात्र बहुत नही हैं। एक ही है, केवल एक ही है और वह इन सब स्तुत्य वस्तुओं का एक स्रोत है। उसकी स्तुति न कर, इन शाखाओं की स्तुति करने से कल्याण नहीं होता—रक्षा नहीं मिलती। रूप रस आदि ऐन्द्रियिक विषयों की स्तुति तो मनुष्य का विनाश ही करती है पालन कदापि नहीं। इनकी स्तुति तो अति अज्ञानी पुरुष ही करते हैं। पर जो ससार में हमारे अन्य रक्षा करने वाले बल, ज्ञान और आनन्द हैं । बली, ज्ञानी और सुखी लोग हैं। वे भी सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् नहीं हैं, उनमें ज्ञान और बल पर्याप्त नही हैं। संसार के ये सब बल, ज्ञान और आनन्द तो उस एक सच्चिदानन्द महा सूर्य की किरणें मात्र हैं। इन किरणों की स्तुति करने से अपने को बडा धोखा खाना पडेगा। हे मनुष्य। ये ससार के क्षुद्र बल और ज्ञान मनुष का पालन न कर सकेंगे, ये बीच में ही छोड़ देंगे। इनमे पूरा ज्ञान और बल नहीं है। अत इनमें आसक्त होकर इनकी स्तुति मत कर। स्तुति उस 'मनुष्यों के एक पति' की कर जो सर्वज्ञ होता हुआ पालक है और सर्वशक्तिमान् होता हुआ पालक है। वह एक एक मनुष्य को विशेष-तया देख रहा है। प्रत्येक मनुष्य को और उसके सब ससार को वह इतनी अच्छी तरह देख रहा है कि उस मेरे प्रभु को मानो एकमात्र मेरी चिन्ता है। और उस पालक पति का एक एक संकल्प, एक एक कर्म ऐसा बलवान् है कि उसकी सफलता के लिये उसे दुबारा सकल्प व यत्न करने की जरूरत नहीं होती। हे मूर्ख मनुष्य। अपने उस 'पति' की ही स्तुति कर, उसकी सैंकड़ों किरणों की स्तुति छोड़ कर उस असली सूर्य की ही स्तुति कर, उसएक को ही स्तुति कर।

ऋषि दयानन्द का समन्वय

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त शास्त्री, एम० ए० एल० टी०, डी० लिट्
उपाध्यक्ष डी० ए० वी० कालेज, अजमेर)

अब इस प्रकाश युग में यह बात किसी से छिपी नहीं है कि ऋषि दयानन्द जहा एक ओर प्राचीनता के पुजारी और वेदोद्धारक थे, वहा वे दूसरी ओर नवयुग के नेता, वर्तमान के विधाता और भविष्य के भारी पथ-प्रदर्शक भी थे, इस लिए देश और विदेशों के महान् विद्वान्-विचारकों की ओर से ऋषि दयानन्द के लिये जो सम्मतिया दी गई हैं उनमें ऋषिवर को विभिन्न दृष्टिकोणों से उपस्थित किया गया है। कोई तो उन्हें केवल धार्मिक सुधारक ही कहता है, कोई हिन्दू जाति का उद्धारक, कोई अनाथ-विधवाओं का रक्षक और कोई स्वराज्य का प्रवर्त्तक, कोई उन्हें केवल वेदों का प्रचारक और कोई महान् क्रांतिकारी समझता है। पार्लियामेंट के सदस्य तथा प्रसिद्ध पत्रकार सर वेलेन्टायन शिरोल के शब्दों में तो वे भारत से विदेशी प्रभाव की जड़ उखाड़ कर फेंक देने वाले ही थे। शिरोल साहब लिखते हैं:—

"The whole drift of Daya Nand's teaching is far less to reform Hinduism than to rouse it into active resistance to the Alien influences which threatened, in his opinion, to denationalize it"

अर्थात् "दयानन्द के उपदेशों का सारा झुकाव हिन्दू धर्म को सुधारने के लिये इतना नहीं है जितना कि उसे विदेशी प्रभावों के विरोध में एक क्रियात्मक शक्ति का रूप देने की ओर है, क्योंकि उनकी सम्मति में यह विदेशी प्रभाव हिन्दू राष्ट्रीयता को आघात पहुँचा सकते हैं।

मेरी दृष्टि में ऋषि दयानन्द को किसी एक कार्य अथवा सुधार से ही सम्बद्ध करना उनके प्रति घोर अन्याय होगा। वे तो एक प्रबल समन्वयवादी थे। उनकी प्रतिभा सर्वोन्मुखी थी। भला कौन सा ऐसा मानव सुधार का क्षेत्र है जिस पर उनकी तीव्र दृष्टि न पड़ी हो? शिक्षा, अछूतोद्धार, अनाथ, विधवाओं की रक्षा, सामाजिक सुधार, राजनीति राष्ट्र भाषा, वेद प्रचार आदि प्रत्येक कार्य में उनकी प्रतिभा प्रकट हुई है भारत के धार्मिक क्षेत्र में तो उन्होंने कमाल का समन्वय किया है। उदाहरण के लिये जरा देखिये।

(१) बुद्ध भगवान्ने अपने सिद्धान्तों में केवल त्याग और कर्म पर ही बल दिया था। आत्मज्ञान और परमात्मा की सत्ता को नितान्त उपेक्षित ही कर दिया था। केवल कर्म ही को मोक्ष का साधन बताया था।

(२) उसके बाद शकर स्वामी ने केवल ज्ञान काण्ड पर बल दिया और नवीन वेदान्त का ही प्रचार किया। "एकम् ब्रह्म द्वितीय नास्ति" कह कर संसार को ही मिटा दिया। उनके लिए ब्रह्म ज्ञान ही सब कुछ था। जहा बुद्ध ने केवल कर्म से मोक्ष की प्राप्ति मानी वहा शकर ने केवल ज्ञान से।

(३) मध्यकाल में भारत में रामानुज, बल्लभाचार्य, कबीर आदि अनेक धार्मिक आचार्य हुये जिन्होंने केवल भक्तिवाद अथवा उपासना-काण्ड पर ही बल दिया। कर्म और ज्ञान सबको परे फेंक दिया। "भक्त के वश में हैं भगवान्" की गूँज सर्वत्र सुनाई देने लगी। उन्होंने केवल भक्तिमार्ग से ही मोक्ष की कुंजी प्राप्त करनी चाही।

(४) आधुनिक काल में ऐसे सुधारक हुये जिन्होंने ज्ञानकाण्ड, कर्मकाण्ड और उपासना काण्ड को धता बताकर केवल पाश्चात्य विज्ञान का और पाश्चात्य रीति रस्मों का ही आश्रय लिया राजा राममोहनराय ने सन् १८२८ में ब्रह्म समाज की स्थापना की। ठाकुर देवेन्द्रनाथ ने वेदों को छोड़ दिया। श्री केशवचन्द्र सेन ने सन् १८६० में यज्ञोपवीत को तिलाञ्जलि दी। सन् १८६७ में बम्बई में प्रार्थना समाज की स्थापना हुई। लाहौर में श्री सत्यानन्द जी अग्निहोत्री ने देव समाज की स्थापना की। इन सब ने विज्ञान काण्ड को अपना आधार बनाने का दावा किया।

इस प्रकार पाठकों ने देखा कि ऋग्वेद का ज्ञानकाण्ड, यजुर्वेद का कर्मकाण्ड, सामवेद का उपासना काण्ड और अथर्ववेद का विज्ञान काण्ड, पृथक् पृथक् विचार धाराओं का धार्मिक क्षेत्र में आधार बना, लेकिन धन्य है ऋषि दयानन्द को कि उन्होंने चारों विचार धाराओं को एकत्र मिला दिया और सच्चे वैदिक धर्म का स्वरूप हमारे सामने उपस्थित किया। सब विचार धाराओं का स्रोत ऋषि दयानन्द ने वेदों में ही बतलाया और इस समन्वय का श्रेय उन्हीं को है। इसी लिए भारत के महान् योगी श्री अरविन्द घोष ने लिखा था—

"Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues He has found the keys of the doors that time had closed, and has rent as under the seals of the imprisoned fountains

अर्थात् वेदों के सत्य अर्थ के इस युग में प्रथम ज्ञाता होने के रूप में दयानन्द का सदा सम्मान किया जायगा। उन्होंने अतीत काल से आवृत द्वारों को खोलने की कुंजी प्राप्त कर ली है और बन्दी भूत ज्ञान के स्रोतों की मोहर तोड़ दी है। इसी में ऋषि का ऋषित्व है और इसी में शिवरात्रि का शिव सकल्प मय शुभ सन्देश निहित है। इसी में ऋषि दयानन्द का वैदिक समन्वय है। इसी में ऋषि का महत्त्व है।—'सूर्य'

महर्षि दयानन्द और स्वराज्य

(ले०—श्री पण्डित मदनमोहन जी विद्यासागर वेदालङ्कार)

'आर्यसमाज' द्वारा' वैदिक धर्म का प्रचार' यह महर्षि दयानन्द का ध्येय था। इसके द्वारा वे 'संसार का उपकार' करना अर्थात आत्मिक शारीरिक व सामाजिक उन्नति कराना चाहते थे। ताकि 'सर्वहितकारी नियमों' के पालने में प्रत्येक व्यक्ति अपने को पराधीन समझे अर्थात 'सबकी उन्नति' मे ही 'अपनी उन्नति' समझे।

'सबकी उन्नति' अर्थात् 'सर्वोदय' का उच्च भाव उसी समय मनुष्य के मन में उदित होता है जब कि उसके सामने एक ऐसे 'सर्वहितकारी नियम रक्खे जावें जिनमें कि वह अपना अभ्युदय स्पष्ट रूप से देखें।

परन्तु जब तक इन नियमों के पालन का कोई उचित प्रबन्ध न हो तब तक ससार का उपकार करना कागज के जहाज पर विशाल समुद्र पार करना है।

मनुष्य यद्यपि (मेरी दृष्टि में) परहित का भी बहुत कुछ स्वत ही ध्यान रखता है तथापि समय २ पर उसमें स्वार्थबुद्धि इतनी प्रबल हो जाती है कि वह 'अपना पराया' भूल जाता है। परिणाम भयानक हो जाता है। इस लिये उसपर प्रतिबन्ध आवश्यक हो जाता है।

इसी प्रतिबन्ध का नाम 'राज्यशासन' है।

परन्तु यह प्रतिबन्ध उसके 'अच्छेपन' पर नहीं, अपितु 'बुरेपन' पर होना चाहिये। गाड़ी में 'ब्रेक' उसकी गति को सदा के लिये रोक देने के निमित्त न हो, उसके द्वारा हो जाने वाली दुर्घटना से बचानेके लिये हैं। मानव जातिकी स्वच्छन्दता से कहीं कोई विनाशात्मक दुर्घटना न हो जावे, इस भय से 'शासन रूप' ब्रेक लगा दिया जाता है।

जो भी समाज या व्यक्ति ऐसा चाहते हों उनके लिये 'शासन' हाथ में लेना जरूरी है। अन्यथा उनके विचार 'आकाश दुर्ग निर्माण' तक ही सीमित रहेंगे।

महर्षि इस सचाई को समझते थे। आइये जरा 'विश्व के इतिहास पर दृष्टि डालें। ग्रीक फिलासफरों ने 'राज्य का स्वरूप' भी बनाया है। क्यों? बौद्ध मत इतना फैल क्यों गया ईसाइयत कब फैली? इस्लाम का दबदबा कब बढ़ा? कम्यूनिस्ट का भय दुनिया में कब छाया? पाठक लोग प्रति दिन समाचार पत्रों को पढ़ते हैं, इतिहास के ज्ञान से उनका दिमाग कुछ न कुछ अवश्य भरा है।

इसके अन्दर एक बड़ा भारी 'सत्य' काम कर रहा है। वह यह कि उन्होंने 'शासन' अपने हाथ में लिया तभी यह सब कुछ हुआ।

आप पूछेंगे कि आर्य समाज के साथ इसका क्या सम्बन्ध? आइये जरा सत्यार्थप्रकाश खोलें। आइये जरा आर्याभिविनय को आख खोल कर पढ़ें।

ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश का छठा समुल्लास क्यों लिखा? ईश्वर की प्रर्थना हो रही है और चक्रवर्ती साम्राज्य का स्वप्न महर्षि समाधि में ले रहे हैं? क्यों?

जरा उनका जीवन चरित्र पढ़ते हैं। वे अपने अन्तिम समय में राजाओं के पास क्यों घूमे? क्या उन्हें धनाकांक्षा थी। वीतराग सन्यासी

को 'धर्मधन' के सिवा किसी प्रकार का धन अपेक्षित न था ? क्या (किसी राज्य के हड़पने का विचार था ? परमेश्वर राज्य के अधिकारी को इन तुच्छ राज्यों का स्वप्न भी नहीं। तो ऐसा कौनसा रहस्य था, जिसके कारण वे अपना समय उन्हें राजधर्म पढ़ाने में बिताते थे ?

अन्य सन्यासी भी राज्याश्रय पाते देखे गये हैं। राजाओं को (वैराग्य का) उपदेश देते देखे गये हैं। परन्तु यह एक अनोखा ही सन्यासी है, जिसने न वैराग्य का उपदेश किया, न जागीरें पाईं 'राजधर्म' का उपदेश और बदले में विषपान किया।

बुद्धि रखने वाले न समझें तो उस महर्षि का क्या दोष ?

सच बात यह है वे विश्व में चक्रवर्ती साम्राज्य चाहते थे। किनका ? आर्यों का। इससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता।

यदि हम इतना समझ सकते हैं तो यह समझना कठिन नहीं कि इसका भार किस पर है ?

महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग पर चलने चलाने वाली संस्था एक ही है 'आर्यसमाज'।

अब मैं बुद्धिमानों से पूछता हूं कि वैदिक-धर्म प्रचार के लिये (जिसके द्वारा संसार का उपकार होना है) चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना करने का भार किसके कन्धों पर है ? मैं तो यह स्पष्ट कहता हूँ कि उसकी जिम्मेवारी केवल आर्य-समाज पर है। कोई महानुभाव व्यक्तिगत तौर पर कुछ भी कह सकते हैं। पर आर्यसमाज को सामूहिक तौर पर राजनीति से परे रखने का "महापुण्य" वे न कमावें, हमारी यही विनीत प्रार्थना है -

चक्रवर्ती साम्राज्य इक्के दुक्के से स्थापित नहीं हुआ करते। संगठित शक्ति ही उसका उपाय है। उनका कथन ऐसा है कि ऐ वीरो ! जाओ ऋषि का चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करो। परन्तु सब (मिलकर) 'सामूहिक प्रयत्न' न करना, सामूहिक तौर पर इस प्रयत्न में भाग न लेना।

मुझे महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों में इसी स्वराज्य का शंखनाद बजता सुनाई पड़ रहा है।

मुस्लिम लेखकों का विषवमन

तुह्फतुल् हिन्द

(ले०—प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फ़ाज़िल हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस)

मैंने जब कुछ ऐसी पुस्तकों के विषय में थोड़ा सा लिखा जो मुसलमानों की ओर से हिन्दुओं के विरुद्ध लिखी गई हैं। इस पर अनेक लोगों की इच्छा हुई कि मै उनको कुछ बतलाऊँ कि उक्त प्रकार की पुस्तकों में क्या है। मैं तो चाहता था कि लोग स्वयं उक्त प्रकार की पुस्तकों को खोजें और उनको भली भाति पढ़े ताकि जान सकें कि क्या क्या लिखा गया है। उक्त आशय की पुस्तकें कई स्थानों के पुस्तकालयों में है, परन्तु कौन हाथी मारे और कौन बात उखाडे। लोग तो सत्तू— रेडी मेड फूड (तैयार भोजन)—चाहते हैं अत कुछ बतला रहा हु।

'रद्द हिन्दू' नामक पुस्तक से कुछ दिखलाया जा चुका है इस कारण इस अवसर पर 'तुहफ़-तुल हिन्द' नामक पुस्तक से कुछ दिखलाया जायगा। क्योंकि मेरे विचार से यही पुस्तक ऐसी है जिसकी रचना रद्द हिन्द के पश्चात् हुई है। इस के अनेक सस्करणों के निकलने का पता लगता है किन्तु जिस सस्करण के आधार पर कुछ दिखलाया जायगा वह कानपुर के मुजतबाई प्रेस का छपा हुआ सन् १९३९ हिजरी (सन् १९२१ ई०) का है। इसके बाब पहला, फसल पहली के पृष्ठ ९ में है—

"महाभारत में लिखा है कि अतरी मुनि की जोरू बहुत नेक थी। यह तीनों यानी ब्रह्मा, विशन महादेव उसकी अस्मत में रखन डालने को उसके दरवाजे पर भीख मांगने गये। वह बेचारी भीख देने को बाहर आई। यह साहब फरमाने लगे कि हम क्या भूखे हैं कि ऐसी भीख लेंगे। हा, अगर हमको अपने घर में लेजाकर और नंगे होकर खाना खिलावे तो हम ठहरे रहें। वह बेचारी अपने खसम से .इजाजत लेकर इन तीनों को अपने घर में ले गई। जब खाना खिलाने लगी उस औरत ने इनके बदन पर पानी छिड़का। यह तीनों छोटे लड़के बन गये—इन्तहा। इससे मालूम हुआ यह तीनों बदमाश और दगाबाज और शह-वत परस्त और आजिज़ ऐसे थे कि एक औरत के जादू से लड़के बन गये। भला ऐसा शख्स कहीं खुदा और नायब खुदा और दुनिया का मालिक हो सकता है।"

गायत्री मन्त्र के प्रसङ्ग में बाब दूसरा, फसल दूसरी के पृष्ठ ८० में लिखा हुआ है—

"अब देखिये जिस गायत्री की तारीफ़ में हिन्दुओं की इतनी धूम धाम है उसको ऐसा छिपा कर रखते हैं कि सिवाय ब्राह्मण और खत्री (क्षत्री) के और को सिखानी दुरुस्त नहीं जानते और उनको भी जाहरन नहीं पढ़ाते आहिस्ता से कान में बतलाते हैं सो उस गायत्री का मज़मून ऐसा पोच और अबस है कि जिससे सिवाय गुनाह के कुछ भी हासिल नहीं।"

पहला बाब, दूसरी फसल पृष्ठ १९ में लिखा हुआ है —

एक दफ़ा इन्द्र देवता और चन्द्रमा देवता गौतम रिख (ऋषि) की बीबी पर आशिक़ हुये। इन दोनों में से एक ने मुर्ग की सूरत बनकर आधी रात को आवाज़ बलन्द की। गौतम रिख ने जाना कि मुर्ग बोलता है, सुबह होगई। जल्दी से उठकर नहाने के लिये गंगा पर गया। गंगा ने

कहा कि अभी रात है, नहाने का वक्त नहीं हुआ। गौतम रिख घर में आया क्या देखता है कि चन्द्रमा देवता दरवाजः पर खड़ा हुआ निगहबानी कर रहा है और इन्द्र देवता उसकी जोरू के साथ ··कर रहा है। गौतम ने खफ़ा होकर मृग-छाला यानी हरिन की खाल चन्द्रमा के मारी और सराप यानी बद्दुआ की कि इसका दाग तमाम उमर तेरे बदन पर रहेगा। उसी वक्त स्याही का दाग़ चन्द्रमा के बदन पर पड़ गया। और यह स्याही कि चान्द में नज़र आती है उसीका निशान है। इन्द्र खौफ़ से भाग गया। गौतम रिख ने इन्द्र को सराप दिया कि तूने एक के वास्ते इतनी मिहनत उठाई, तेरे बदन पर हजार हो जायेंगी। चुनाचे उसी वक्त इन्द्र के बदन पर हजार ज़ाहिर हो गई। इन्द्र उसकी शरम से छिपकर तालाब के दरमियान कमल की जड़ मे जा छुपा। क़िस्स कोताह बाद मुद्दत दराज़ के बिशान की मिहरबानी से वह कि इन्द्र के बदन पर थीं आख की सूरत में बदल हो गई, तब इन्द्र वहा से बाहर निकला और स्वर्ग को गया। मक़ाम गौर का है कि चान्द हिन्दुओं का माबूद और इन्द्र बकौल उनके बिहिश्त का राजा इन दोनों के बदन पर बक़ौल इनके अब तक का निशान मौजूद है यानी चान्द मे स्याही और इन्द्र की हजार आख और बेहया ऐसे थे कि दोनों मिलकर एक औरत से करने गये। मआज़ अल्लाह जिस बिहिश्त का बादशाह ऐसा हो कि उसके बदन पर की शामत से हजार का निशान मौजूद हो उस बिहिश्त के रहने वालों के ऐश बेमज़ा हो जावेंगे।"

नमूने के रूप में केवल तीन उद्धरण दिये जा रहे हैं। पुस्तक की मूल सामग्री ग्यारह व साढ़े सात इञ्च आकार में कुल ११६ पृष्ठों में है जिन में से काफी पृष्ठों में हिन्दुओं के विरुद्ध बातें हैं और उनका यथोचित परिचय पुस्तक देखने से ही मिल सकता है। हा, यह भी स्पष्ट रहे कि इस संस्करण में कुछ टिप्पणिया, एक ऐसी पुस्तक से भी हैं जिसका प्रकाशन तुहफ़तुल् हिन्द के प्रथम सस्करण के काफ़ी समय बाद हुआ है। इस बात के सिवा यह भी जतला देना चाहता हू कि अश्लीलता के कारण जिन शब्दों का लिखना उचित नहीं था उनके निमित्त इस लेख में बिंदियां रख दी गई हैं।

महेश प्रसाद—
हिन्दू यूनिवर्सिटी,
बनारस।

(ऊपर के लेख मे श्री प्रो० महेशप्रसाद जी ने मुस्लिम लेखकोंके ग्रन्थों से जा उद्धरण दिये हैं उनमें कितना विष वमन किया गया है यह पाठक स्वय जान सकते हैं। न केवल अश्लील और कठोर भाषा का उनमे प्रयोग किया गया है बल्कि उस आलोचना के अनेक अंश सर्वथा असत्य हैं। उदाहरणार्थ—गायत्री मन्त्र के विषय में वहा बतलाया गया है कि गायत्री का मजमून ऐसा पोच और अबस है कि जिससे सिवाय गुनाह के कुछ भी हासिल नहीं।" यह लेख सर्वथा असत्य है। गायत्री में कोई भो अश्लील या बुरी बात नहीं बल्कि परमेश्वर से बुद्धि और कर्मों की पवित्रता के लिये प्रार्थना की गई है। उससे क्या गुनाह (अपराध) हासिल हो सकता है? यह समालोचना लेखक के अपने अज्ञान और पक्षपात को सूचित करती है, इसमें पवित्र गायत्री का कोई दोष नही। महाभारत के नाम से जिस कथा का उल्लेख किया गया है वह महाभारत में नहीं किन्तु भवि-

ष्यपुराण में कुछ परिवर्तितरूप मे पाई जाती है। यदि मुसलमान भाइयों को पुराणों की बातों की आलोचना का अधिकार है तो उनके मन्तव्यों की युक्ति युक्त आलोचना का महर्षि दयानन्द जैसे सत्यनिष्ठ मान्य महानुभाव को क्यों अधिकार न था यह विचारशील पाठक स्वय विचार करें। ऐसे असत्य आक्षेपों से भरे हुए विषमय साहित्य का यथार्थ उत्तर देकर और दूसरों पर असत्य आक्षेप करने वालों के मन्तव्यों की निस्सारता दिखा कर महर्षि ने क्या अनुचित कार्य किया था जिस पर हमारे मतान्ध मुसलमान भाई इतना चिढ़ते हैं ? —सम्पादक सा० दे०)

ओ३म कीर्तन

(कवयिता—प० मुरलीधर जी गायनाचार्य आर्य समाज बम्बई)

(तर्ज—रघुपतिराघव राजाराम)

जप लो ओ३म् प्रभु का नाम।
ओ३म् नाम है सुख का धाम॥

ओ३म् गुणों की है वह खान।
वेद ओ३म् का गावे गान ॥

ओ३म् ही जीवन ओ३म् ही प्राण।
ओ३म् नाम से है कल्याण॥

ओ३म् का गीता करे बखान।
ओ३म् मे धर्म कर्म विज्ञान।

ओ३म् अनुपम सुन्दर नाम।
सुन कर होवे हृदय महान्॥

"मूर्ति पूजा और संत समाज"

लेखक—पं० भद्रसेन जी आचार्य श्री विरजानन्द वैदिक विद्यालय अजमेर।

पाठक वृन्द ! शिव रात्रि के दिवस ही महर्षि दयानन्द को इस बात का ज्ञान हुआ था कि मिट्टी या पत्थर की प्रतिमा सच्चा शिव नहीं हो सकती अपितु प्राणी मात्र का कल्याण करने वाले सर्वान्तर्यामी भगवान् ही सच्चे शिव हैं (इसी लिये तब से वह रात्रि बोध रात्रि के नाम से पुकारी जाती है।

कई लोगों का यह कहना है कि शिवरात्रि की इस घटना ने ही स्वामी दयानन्द को मूर्ति पूजा का द्वेषी बना दिया था। उन्हें इस घटना से ही मूर्ति पूजा के प्रति चिढ़ पैदा हो गई थी यही कारण है कि उन्होंने अपने ग्रन्थों मे मूर्तिपूजा का कठोर शब्दोंमें खंडन किया है। यदि महर्षि जीवन में यह घटना न घटी होती तो जिस मूर्तिपूजा का वेद शास्त्र और पुराणों मे वर्णन है, जिस का कि एक स्वामी दयानन्द को छोड़कर आज तक किसी भी महा पुरुष तथा सत महात्मा ने खण्डन नहीं किया उसका कभी भी खण्डन नहीं करते। मेरे विचार में यह आक्षेप उन लोगों की तरफ़ से किया जाता है जिन्होंने न तो कभी भली प्रकार से वेद शास्त्रों का देखा है और नही सन्त महात्माओं के ग्रन्थों का स्वाध्याय किया है। यदि उन्होंने वेद शास्त्रों तथा सन्त महात्माओं के ग्रन्थों का स्वाध्याय किया होता तो वह महर्षि पर उपर्युक्त आक्षेप कभी न करते। भला जो वेदादि सच्छास्त्र भगवान् को 'अकायम्" आदि शब्दों से वर्णन करते हैं वे मूर्ति पूजा का समर्थन करेंगे यह कैसे सम्भव हा सकता है। मूर्ति की पूजा तो अलग रही मूर्ति शब्द भी चारों वेदों में नहीं है। और तो क्या जिन पुराणों के आधार पर हमारे मूर्ति उपासक भाई मूर्ति पूजा का समर्थन करते हैं उनमें भी प्राय मूर्ति पूजा तथा अवतारवाद का खण्डन ही मिलता है। यहा हम पाठकों के मनोरजनार्थ दो तीन पुराणों के प्रमाणों को उद्धृत करते हैं। अवतार वाद के सम्बन्ध मे देवी भागवत पुराण मे लिखा है—

माया विमोहिता सन्त प्रवदन्ति मनीषिण।
करोति स्वेच्छया विष्णुरवतारानेकश ॥
मदोऽपि दु:ख गहने गर्भवासे ऽति सकटे।
न करोति मति विद्वान् कथ कुर्यात् स चक्रभृत् ॥
कौशल्या देवकी गर्भे विष्ठामलसमाकुले।
वैकुण्ठ सदन त्यक्त्वा गर्भवासे सुख नु किम् ॥

अर्थात्—माया से मूढ बने हुए विद्वान् ही यह कहते हैं कि ईश्वर अपनी इच्छा से अनेक अवतारों को धारण करता है। भला अत्यन्त दु:ख दायी महान सकटों से पूर्ण जिस गर्भवास की मूर्ख भी इच्छा नहीं करता उस दु:खदायी गर्भ वास की वह ज्ञानी विष्णु कैसे इच्छा करेगा? भला ऐसे गर्भवास में सुख ही क्या है कि जिससे, वह विष्णु वैकुण्ठवास को छोड़कर विष्ठा और मल से भरे कौशल्या और देवकी गर्भ में आना पसद करेगा? अब जरा मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में देखिये—

आत्मस्थ य शिव त्यक्त्वा बहिरभ्यर्चयेन्नर।
हस्तस्थ फलमुत्सृज्य लिहेत् कूर्परमात्मन ॥
शिवपुराण

जो मनुष्य हृदय में विराजमान कल्

कल्याणकारी सच्चे शिव को छोड़कर बाहर पत्थर आदि के शिव की पूजा करता है वह मानो अपने हाथ मे रखे फल को छोड़ कर अपनी कोहनी ही को चाटता है। पाठक गण, देखें कि क्या शिवरात्रि के बोध का ही तो यह शिव पुराण सच्चा वर्णन नहीं कर रहा है ?

अब हम मूर्ति पूजकों के एक भारी आरोप की कुछ आलोचना करेंगे जो कि हमारे लेख का मुख्य विषय है। मूर्ति पूजकों का यह कहना है कि यदि मूर्ति पूजा ईश्वर प्राप्ति का साधन नहीं तो जितने भी ईश्वर भक्त सत महात्मा हुए है वे भी स्वामी दयानन्द की तरह मूर्ति पूजा का खण्डन करते। परन्तु उन्होंने कहीं भी मूर्ति पूजा का खण्डन नहीं किया जैसा कि स्वामी दयानन्द ने किया है। अत अब हम मध्यकालीन कतिपय प्रसिद्ध सन्तों के वचनों को उद्धृत करके यह सिद्ध करेंगे कि वे भी मूर्ति पूजा तथा अवतारवाद के उतने ही कट्टर विरोधी थे जितने कि स्वामी दयानन्द। सर्व प्रथम हम सत कबीर के वचनो को उद्धृत करते है

"सन्त कबीर दास"

अवतार वाद

जन्म मरण से रहित है, मेरा साहब सोय।
बलिहारी उस पियुसों जिन रचाया सब कोय॥
बीजक कबीरदास

कबीर बीजक में एक स्थान पर सत कबीर ने सब अवतारों का नाम ले ले कर उन के अवतार होने का स्पष्ट खण्डन किया है। स्थानाभाव से उनमें से केवल थोड़ा सा भाग पाठकों के सम्मुख रखते हैं।

दशरथ कुल अवतरि नहि आया,
नहिं लंका के राम सिताया॥
नहिं देवकी गर्भ हि आया,
नहीं यशोदा गोद खिलाया॥ इत्यादि

अब जरा मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में महात्मा कबीर के विचारों को देखिये।

नेमी देखे धर्मी देखे, प्रात करहि असनाना।
आतम मारि पाषाणहि पूजें, उनमे कछु न ज्ञाना॥
आसन मारि डिम्भ धरि बैठे, मन मे बहुत गुमाना
पीतर पाथर पूजन लागे, तीर्थ गर्व गुमाना॥

कबीर साहब के उपर्युक्त वचनों की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं पाठक स्वयं ही मनन कर लें। अब हम प्रसिद्ध सत गुरुनानक साहब के वचनों को उद्धृत करते हैं।

अवतार वाद

एको सिमरिये नानका, जो सब जग रह्या समाय।
दूजा काहे को सिमरिये जो जन्मे ते मर जाय॥

मूर्ति पूजा

जो पत्थर को माने देव, उसकी वृथा जावे सेव।

महाराष्ट्र प्रान्त मे तीन प्रसिद्ध संत हुए हैं। अब हम मूर्ति पूजा और अवतारवाद के सम्बन्ध में इन तीनों महात्माओं के मूल वचनों को उनकी ही महाराष्ट्र भाषा मे पाठकों के सम्मुख उपस्थित करेंगे।

"सन्त तुकाराम"

अवतार वाद

नाहि रूप नाहि नांव नाहि ठाँव धराया,
जेथे जावे तेथे आहे विट्ठल माय बहिन

अर्थात्—परमेश्वर ने न तो कोई रूप धारण किया और न ही राम कृष्ण आदि खास नाम रखाया और न किसी स्थान विशेष में जन्म लिया। वह मेरी सच्ची माता बहिन तो जहाँ जाएं वहीं रम रही हैं।

एक स्थान पर भगवान् के गुणों का वर्णन करते हुए सत तुकाराम कहते हैं।

ऐसा चेतन निराकार, त्यासी कल्पिती आकार।
परिपूर्ण अविनाश, त्यासी मानिती विनाश ॥
अव्यक्तासी व्यक्ति, मानुनी करी स्थूल भक्ति।
तेचि मूढ़ मति नर, व्यर्थ जन्म ले पामर॥

अर्थात्—मूढ़ लोग ऐसे चेतन निराकार प्रभु के भी आकार की कल्पना करते हैं। अर्थात् उस निराकार प्रभु को अवतार आदि मान कर उसे साकार बनाते हैं। और जो प्रभु सब में परिपूर्ण और अविनाशी है उसका भी नाश मानते हैं। उस अव्यक्त प्रभु को व्यक्ति मान कर उस के स्थूल आकार अर्थात् मूर्ति आदि की पूजा करते हैं। संसार में ऐसे लोग मूढ़ और पामर हैं। ऐसे पामरों ने व्यर्थ हीं संसार में जन्म लिया है। पाठक देखें सन्त तुकाराम ने कितने कठोर तथा जोरदार शब्दों में अवतार वाद का खण्डन किया है और अवतार वाद मानने वालों को मूढ़ और पामर तक कहा है। अब मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में आप के विचारों को देखिये।

ज्याने देहाखि निर्मिले, जीव त्याने विसरले।
ज्याच्या सत्तेने वर्तती, मूढ़ त्यांने न जाणती॥
जैसे गर्भान्ध जन्मती, आपूल्या मातेला नेणती।
तैसे नेणूनी चेतन, पूजि दगड़ अचेतन॥

संत तुकाराम बडे दुःख से कहते हैं जिस प्रभु ने कृपा करके जीव के लिये मनुष्य देह को बनाया जीव ने उस प्रभु को भी विसार दिया। जिस प्रभु की सत्ता से ही सब प्राणि मात्र अपना २ व्यवहार कर रहे हैं मूढ़ लोग उस प्रभु को नहीं जानते। जैसे जन्मान्ध बालक अपनी माता को भी नहीं देख सकता वैसे अज्ञानी लोग चेतन प्रभु को न जान कर अचेतन पत्थर आदि की पूजा करते हैं। संत तुकाराम आगे फिर मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में लिखते हैं।

ज्याला टाकिने फोडिती, त्याच्या पुढे हाथ जोडिती।
ज्याच्या शौच कूप घडविती त्याला देव ठरविती॥
पूजा उपचार अर्पिती अत्यादरे नमस्करिती।
परी तो ऐके बोले न पाहे, मूढ़ त्यासी मानिताहे॥

अर्थात्—ये मूर्ति पूजक मूर्ति बनाते समय जिस पत्थर को हथौडे से घड़ते तथा फोड़ते हैं फिर उसी मूर्ति के सामने हाथ जोड़ते हैं। जिस पत्थर को भगवान् कह कर उस की पूजा उपचार करते हैं उस के आगे बडे आदर से हाथ जोड़ते हैं। कितने आश्चर्य की बात है कि यह पत्थर न तो सुनता है न बोलता है और न देखता है किन्तु मूढ लोग उसे ही परमेश्वर मान रहे हैं।

महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि प्राचीन समय में पत्थर की पूजा नहीं थी। देखिये महर्षि के इस कथन का सन्त तुकाराम कैसे सुन्दर शब्दों में समर्थन करते हैं।

दगडाचे देव पूर्वी नन्हते जाणु
जनहें अज्ञान झाले जेन्हा।
जनहे अज्ञानी दगडा मानिले
गुरुसि त्यागिले मूढ़ पणे।

हे मनुष्यो। तुम यह निश्चय समझो कि प्राचीन समय में पत्थरों के देव नहीं हुआ करते थे, जब लोग अज्ञानी बन गये उन अज्ञानी लोगों ने पत्थरों को मानना शुरू कर दिया और अपनी मूढ़ता से सच्चे गुरु को त्याग दिया।

भगवान् दयानन्द ने लिखा है कि जीवित माता पिता आदि पाच चेतन मूर्तियों की पूजा ही सच्ची पूजा है, पाषाण आदि की नहीं।

देखिये महर्षि के इस सिद्धान्त को सत तुकाराम कैसे सुन्दर शब्दों में वर्णन करते हैं।

माता पिता आचार्य अतिथि गुरु सचेतन मूर्ति।
त्याला शरण तू जावसी, तरी च कल्याण पावसी॥

हे जीव! माता, पिता, आचार्य अतिथि और गुरु यही पाच चेतन मूर्तिया हैं। इनकी ही यदि तू शरण में जायेगा, तब ही कल्याण पावेगा, अन्यथा नहीं।

अब हम समर्थ गुरु रामदास जी के मूर्ति पूजा तथा अवतार सबन्धी विचारों को पाठकों के सम्मुख रखेंगे।

समर्थ गुरु रामदास

मूर्ति पूजा

समर्थ गुरु रामदास जी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ दासबोध में ईश्वर को सर्वान्तर्यामी समझ प्राणी मात्र की सेवा करने और परमेश्वर के पवित्र नाम के जप करने को ही ईश्वर की सच्ची भक्ति बताकर आगे लिखते हैं।

सहज सोडूनि सायास, हाचि कोणी एक दोष।
आत्मा सोडूनि अनात्म्यास ध्यानी धरती॥
परि तो धरिता हि धखेना ध्यानी येती व्यक्ति नाना
उगेचि कष्टविती मना कासा वीस करनी।
मूर्ति ध्यान धरिता सायासे, तेथे एक चि एक दिसे
भासों नये तेचि भासे, विलक्षण॥

अर्थात् मनुष्यों के अन्दर यही एक भारी दोष है कि वह परमेश्वर के उपयुक्त सरल ध्यान को छोड़ कर अनात्मा अर्थात् जड़ मूर्ति का ध्यान करने लग जाते हैं। किन्तु वास्तव में वे मूर्ति के द्वारा परमेश्वर का ध्यान कर ही नहीं पाते। क्योंकि मूर्ति का ध्यान करते समय इनको अनेक प्रकार की मूर्तिया दीखने लगती हैं। जोकि उपासक के मन को डांवाडोल कर व्यर्थ ही में उसे उलटा कष्ट देने का कारण बनती हैं। उपासक को कष्ट साध्य मूर्ति का ध्यान करते समय कुछ और का और ही दीखने लग जाता है। जिसका उस समय भान भी नहीं होना चाहिये वह भी होने लगता है जो कि उपासक के मन को चचल और दुखी बना देता है।" इस प्रकार अन्य भी बहुत से मूर्ति पूजा के दोष दर्शाते हुए समर्थ गुरु रामदास जी अवतार वाद के सम्बन्ध में लिखते हैं—

अवतार वाद

देवास देहधारी कल्पिती,
तेथे नाना विकल्प उठती।
भोगणे त्यागने विपत्ति,
देहयोगे॥ दासबोध दशक १४ समास ८

अर्थात् मूर्ति पूजकों के सन्मुख जहां अन्य बहुत सी कठिनाइया उपस्थित होती हैं, वहां उन्हें परमेश्वर को भी देहधारी कल्पना करना पड़ता है। उस समय उनके मन में अनेक विचार उठने लगते हैं। यदि परमेश्वर ने देह धारण की होगी तो उन्होंने किसी वस्तु का त्याग और एक स्त्री का भोग भी किया होगा। उसे अनेकों विपत्तियां भी भोगनी पड़ी होंगी इत्यादि। अब हम एक अत्यन्त स्पष्ट समर्थ गुरु रामदास का मूर्ति पूजा के खण्डन का प्रमाण देकर आगे महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सत ज्ञानेश्वर के वचनों को उद्धृत करेंगे।

धातु पाषाण मृत्तिका, चित्र लेख काष्ठ रेखा।
तेथे देव कैचा मूर्खा, भ्रान्ति पडली॥ दास बोध

हे मूर्ख! सोने चादी आदि की मूर्तियों में, पत्थर मिट्टी और लकड़ी आदि की मूर्तियों में तथा दीवारों पर निकाले चित्रों में परमेश्वर कहां है, हे मूर्ख! तू तो भ्रमसे इन जड़ पदार्थों की पूजा में लगा है।

"संत ज्ञानेश्वर"

सत ज्ञानेश्वर ने गीता के ऊपर "ज्ञानेश्वरी" नाम का महाराष्ट्र की "ओवी" नाम की कविता मे भाष्य किया है। जो कि बहुत ही प्रसिद्ध है अन्य कई भाषाओं मे भी उसका अनुवाद हुआ है। उसमें गीता के—"अवजानन्ति मा मूढा मानुषी तनुमाश्रिताम्' इस श्लोक का भाष्य करते समय मूर्ति पूजा आदि के सम्बन्ध मे बडे सुन्दर भावों को दर्शाया है उसमे से कुछ सक्षेप से हम पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते है—

जैसा कृत निश्चय वाया गेला,
जैसा कोणी काजी प्याला।
मज परिणाम पाहोंला गला अमृताचा
तैसे स्थूलाकारी नाशिवते,
भरवसा बान्धोनि चित्ते।
पाहती मज अविनाशातें,
तरी केचा दिसे।

जैसे कोई काजी पीकर अमृत का फल प्राप्त करना चाहे, जिस प्रकार उसका इस प्रकार का निश्चय और प्रयास विफल जाता है। उसी प्रकार जो नाशवान मूर्ति आदि स्थूल पदार्थों में यह ईश्वर है ऐसा विश्वास रखकर उस अविनाशी ईश्वरको देखना चाहते हैं, उनका प्रयास भी विफल ही जाता है। क्योंकि नाशवान् मूर्ति मे अविनाशी ईश्वर के दर्शन कहा ? इसी प्रकार आगे भी बहुत प्रबल युक्तियों से अवतारवाद का खण्डन करते हुए सत ज्ञानेश्वर लिखते हैं

गव आकार एक पुढा देखती,
तव हा देव येणें भावे भजती।
मग तोचि विगड लया टाकिती,
नाही म्हणोंनि।

यह मूर्ति पूजक जब भी कोई पत्थर आदि का आकार सामने देखते हैं तब ही यह परमेश्वर है ऐसा समझ कर पूजा करने लगते हैं। और जब वही आकार किसी प्रकार से बिगड जाता है तो यह ईश्वर नही है ऐसा कहकर उसे फेंक देते हैं।

पाठक देखें महाराष्ट्र के तीनों प्रसिद्ध सन्तों ने कितने स्पष्ट तथा जोर दार शब्दों में मूर्ति पूजा तथा अवतार वाद का खण्डन किया है। अत मूर्ति उपासकों का यह आक्षेप कि मूर्त्ति पूजा का खण्डन केवल स्वामी दयानन्द ने ही शिवरात्रि की घटना से चिढ़ कर किया अन्य किसी सत महात्मा ने नहीं, कितना निस्सार है, इसका पाठक स्वय ही निर्णय करलें।

आर्य समाज के एक सच्चे सेवक

स्व० श्री गोपाल नायक जी ! ! !

(लेखक—प० मञ्जु नाथ जी सिद्धान्त भूषण अध्यापक दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर)

श्रीमान् बस्ती दासप्प शेणै जी का पत्र मुझे १७, ११, ४५ की शाम को प्राप्त हु । पत्र देखते ही मैं ने एक अत्यन्त शोचनीय समाचार पढा। उस पत्र में लिखा हुआ था श्रीमान् गोपाल नायक जी का त्रिकटपुर में साप काटने के कारण स्वर्गवास होगया। समाचार पढते ही मुझे अत्यन्त दुःख हुआ।

श्री गोपाल नायक जी की आयु स्वर्गवास के समय ६० वर्ष की थी। उन्होंने अपना सारा जीवन त्याग और तपस्या में बिताया। क्या स्कूल फाईनल के बाद उन गवर्नमैंट प्रेस में चले गये। पेन्शन मिलने के समय पर सरिश्तेदार बन गये थे। अपनी ५५ वर्ष की उम्र में रिटायर हुए।

कीर्ति शेष नायक जी की प्रवृत्ति बचपन से ही आध्यात्मिकता की ओर थी। पौराणिक मत पर उनकी श्रद्धा नहीं थी। अपनी विद्यार्थि दशा में वह गिरजाघर जाते वहा प्रार्थना करते और बाइबल पढते। फिर भी ईसाईयत उनको अपनी ओर आकृष्ट न कर सकी। फिर वह थियासोफिकल सोसाइटी मे जाने लगे। वह भी इन्हें असार जान पड़ी। वहा से निकल कर ब्रह्म समाज का दरवाजा खटखटाया। वहा भी कुछ हासिल न होसका। उन्होंने एक बार मुझे सुनाया "मुझे सिर्फ बातें बनाने वाले नहीं भाते। मै तो इन सस्थाओं से कुछ हासिल करने जाता था लेकिन मुझे इनमें कुछ भी प्राप्त नही हुआ। बातें बनाने वाले ही वहा होते हैं। कुछ करनेवाले नहीं। मैं इन सब को छोड कर जब आर्य समाजी बना तभी मुझे आत्मिक शान्ति प्राप्त हुई। कल्याण का मार्ग नजर आया।'

आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान श्री प० धर्म देव जी सिद्धान्तालंकार विद्यावाचस्पति जब वेदों का डङ्का बजाने के लिए कर्णाटक पधारे, नायक जी ने आर्य समाज मे प्रवेश किया हुआ था। पण्डित जी के साथ वह भी कभी २ दौरा करते और व्याख्यान देकर प्रचार करते। पूरी लगन से पण्डित जी का साथ देते अपनी नौकरी के वक्त जहां भी तब्दील होकर गए वहां आर्य समाज की स्थापना उन्होंने अवश्य की। पुत्तूर, कासरगोड, कुन्दापुर, मूडबिद्री आदि मे आर्य समाज की स्थापना करने का श्रेय नायक जी को ही प्राप्त था वे सच्चे अर्थों में समाज के सेवक थे।

नायक जी के ससर्ग मे जो भी आता था, वह इनके जीवन से अवश्य प्रभावित होता था। प्रात चार बजे उठके स्नानादि करके सध्यादि आह्निक कृत्यों में वह कभी चूकते नहीं थे। प्रति दिन जब तक वह कम से कम आध घण्टे तक भी ध्यानावस्थित न हो जाय तब तक अन्य कार्य नही करते थे। सारे दिन वह सख्त काम (Hard Work) करते थे। क्या सर्दी क्या गर्मी और क्या वर्षा ? नायक जी का कार्यक्रम एक जैसा चल रहा है। दस दस और बारह बारह घण्टों तक वह लगातार काम करते थे। दिमाग को पाच

मिनट की फुर्सत भी नहीं रहती थी। विश्राम क्या है? इसको वह जानते ही नहीं थे। इतना काम करते देख खुद मैंने ही अनेक सज्जनों से ऐसी बात कही थी "६० साल के वृद्ध जितना कार्य मुझ जैसे नवयुवक भी नहीं कर सकते"

प्रति शनिवार वह मालिश करते, हमें भी मालिश करने की प्रेरणा करते। आश्रम के बच्चों से भी मालिश करवाते। इसी मालिश और दैनिक व्यायायाम से ही उनका शरीर निधन समय तक हृष्ट पुष्ट था,स्वस्थ था। आर्यसमाज के विद्यालय में धर्म शिक्षा का पाठ वह खुद पढ़ाते थे। बच्चे बडे ही ध्यान से इनके पाठ को सुनते और तद्रीति आचरण करते थे।

मगलौर के समाज को उन्नत करने मे उनका बड़ा हाथ था। इनके सारे परिवार को समाज तो प्राणस्वरूप था। समाज के सदस्यों में कितने ही वकील, डाक्टर और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों को नायक जी ही समाज में लाये। सारे व्यक्तियों पर इनकी छाप थी। कोई व्यक्ति इनकी बात को टालने की हिम्मत न कर सकता था।

कई वर्ष मन्त्री पद सभालने के बाद उनको उपप्रधान बनाया गया जिस पर वह आखिर तक रहे। पदलोलुपता उनमें तनिक भी नहीं थी। जब पिछले साल उनको हम सब ने मिल कर प्रधान पद स्वीकार करने की प्रार्थना की तो उन्होंने साफ इन्कार करते हुए कहा कि 'जो काम नहीं करते उनको पद दिला कर उनसे काम कराना चाहिए मैं तो आप लोगों की सेवा कर ही रहा हू। आखिर न चाहते हुए भी उनको हम सब ने मिल कर उप प्रधान बना ही छोड़ा।

शहर के गण्यमान्य लोगों में उनकी गिनती थी। हर एक संस्था वाले उनको बुलाते उनसे सलाह मशवरा करते। मंगलोर में आर्य समाजी का नाम सुनते ही यद्यपि कई लोग नाक भौं सिकोड़ते हैं फिर भी श्री नायकजी का आदर सम्मान हरेक करता था। सार्वजनिक कार्यमें उनको कभी लोगों ने निराश होने नहीं दिया।

बाकायदा यद्यपि उन्होंने वानप्रस्थ नहीं लिया था। फिर भी वह वानप्रस्थ थे यह कहने में संकोच नहीं हो सकता। सालों से घरबार त्याग कर वह समाज मन्दिर के एक आहते में ही रहते लगे थे। यहीं रहते हुए उन्होंने दो भव्य सस्थायें एक 'विद्यादायिनी हायर ऐलिमेंटरी स्कूल' और दूसरी 'श्रद्धानन्द अनाथाश्रम' बनाई। दोनों उनके पसीने से सींची हुई सस्थाए हैं। नायक जी के बाद उनका कायम रखना नायक जी की स्मृत्यर्थ-आवश्यक है। मुझे पूर्ण आशा है कि नायक जी के प्रेमी इन दोनों सस्थाओं को स्वावलम्बी अवश्य बना देंगे।

नायक जी के राज नैतिक विचार हिंदूसभाई थे। सालों तक वह जिला हिंदू सभा के प्रधान भी रहे थे। लेकिन आखिरी वक्त वह किसी राज-नैतिक सस्था में न जाकर अपना सारा समय आर्य समाज को ही अर्पित करते रहे।

दो पुत्रियों के जनने के बाद उनकी धर्म पत्नी का देहान्त नायक जी की २८ साल की आयु में हुआ था। दूसरा विवाह करने के लिए कई लोगों ने विचार उपस्थित किया। फिर भी उन्होंने ब्रह्म-चर्य धारण अत्युत्तम समझ विवाह करने से बिल्कुल इन्कार कर दिया।

मेरी और श्री प० मञ्जुनाथ शेणै जी प्रचारक की नायक जी से घनिष्ठ मित्रता थी वे हम लोगों से बहुत ही प्रीतिभाव रखते थे। ऐसे एक सतत कार्यकर्त्ता का आर्य समाज को दक्षिण में जहा

कि समाज का प्रचार अभी शैशवावस्था में है मिलना असंभव नहीं हो तो कष्ट साध्य जरूर है। उनके त्याग और तपस्या से प्रेरित होकर बहुत से उन जैसे ही कार्य कर्ता नवयुवक समाज को प्राप्त होंगे यह मेरी धारणा है। अगर मेरी यह धारणा कभी सफल हुई, तो इस अवस्था में नायक जी के निधन के प्रति दुःख होते हुए भी सुख प्रकट करना उत्तम है क्योंकि एक दीपक के बुझने से अनेक जो प्रकट हुए॥

परमात्मा मृतआत्मा को सद्गति तो अपने न्यायानुसार देगा ही। साथ यह भी प्रार्थना है कि उनके परिवार और अन्य दुःखी लोगों को दुःख सहने की शक्ति प्रदान करे।

[स्व० श्री गोपाल नायक जी से मेरा बहुत पुराना परिचय था। वे दक्षिण भारत के उन अत्यन्त उत्साही आर्यों में से थे जिनको दिन रात वैदिक धर्म के प्रचार की धुन लगी रहती थी। वे अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के विशेष प्रिय सज्जनों में से थे जिन्होंने दक्षिण भारत की यात्रा में उनको विशेष सहयोग प्रदान किया था। ऐसे उत्साही आर्य का सर्प के काटने से आकस्मिक देहावसान अत्यन्त खेदप्रद है। भगवान् से दिवंगत आत्मा की सद्गति और उनके समस्त सम्बन्धियों की शान्ति के लिए हम प्रार्थना करते और चाहते हैं, कि अन्य आर्य भी उन जैसे ही उत्साही और कर्मशील बनें। उनके द्वारा प्रवर्तित संस्थाओं को सुचारु रूपेण चलाने का उत्तरदायित्व दक्षिण भारत के सब आर्यों पर है।

—सम्पादक]

मार्टिन लूथर और महर्षि दयानन्द

(ले०—श्री सूर्यकुमार जी चौधरी श्री हिन्दू अनाथ आश्रम, मुजफ्फरनगर)

कभी कभी दो मनुष्यों के जीवन में इस प्रकार का साम्य होता है कि उनके जीवन की अनेक घटनायें और परिस्थितियां ठीक एक दूसरे से मिलती-जुलती मालूम पड़ती हैं। मार्टिन लूथर और महर्षि दयानन्द, ये दोनों हमारे समक्ष ऐसी जीवनियां उपस्थित हैं, जिनने अपने जीवन में बहुत अंश में सम्यक् प्रकारेण कठिनाइयों का सामना किया है। यहां पर इन दोनों महापुरुषों के जीवनों का अनुशीलन करने के पूर्व हमें चाहिये कि हम धार्मिक असहिष्णुता से—जो किसी भिन्न साम्प्रदायी में अनायास ही उत्पन्न हो जाती है—बचकर एक निष्पक्ष समालोचक की भांति इनके जीवन की समीक्षा करें। किसी भी प्रकार की असहिष्णुता एक समीक्षक के लिये अहित कर हो सकती है।

मार्टिन लूथर एक ऐसे समय में यूरोप में पैदा हुआ जब वहां का वातावरण एक दम अशान्त था, यूरोप अनाचार का केन्द्र हो रहा था। अशिक्षा वहां के घर घर में व्याप्त थी। धर्म समाज के पतन का कारण और इन अनाचारों का हेतु हो रहा था। पोप के अत्याचार से समस्त योरोप कांप सा रहा था। ईश्वर के समस्त अधिकार उसके पास थे। उसके पैरों पर योरोप का राज मुकुट लटकता था, उसकी वाणी में राजशक्तियां विराजमान थीं और उसकी टेढ़ी भृकुटी से मानव संहार कारी बारूद की चिनगारियां निकलती थीं। यह पता लगाना कठिन था कि ईश्वर एक भिन्न शक्ति है या पोप ही ईश्वर है। ऐसे समय में मार्टिन लूथर ने जन्म लेकर पोप के अत्याचार के आवर्त में डूबती हुई ईसाइयत की रक्षा की। ठीक ऐसी ही परिस्थिति में महर्षि दयानन्द सरस्वती का इस भारत भूमि पर जन्म हुआ।

वह एक समय था जब भारतीय संस्कृति विश्व के प्रत्येक आदिम सभ्य राष्ट्रों को सभ्य बनाने में सहायक हुई थी। किन्तु मनुष्य जब चोटी पर से नीचे की ओर लुढ़कने लगता है तो, उसकी वह अगति उसकी शताब्दियों की सभ्यता को क्षण भर में नष्ट कर देती है। हम भारतवासियों की भी यही दशा हुई। हमारे पूर्वजों ने कभी यह कल्पना भी नहीं की होगी कि उनका स्वर्णिम भारत कभी आज की महान् विपिन्नता के पाश में आबद्ध होगा। जिस जाति की सर्वाङ्गीण सुन्दर सभ्यता तथा आदर्श एवम् विमल आध्यात्मिक जीवन जो उसके चरम उत्थान का कारण हुआ था, उसका वही इतने बड़े पतन का कारण होगा।

जिस समय महर्षि दयानन्द सरस्वती का इस भारत वसुन्धरा पर आगमन हुआ, उस समय यह भूमि अनाचार का केन्द्र हो रही थी। चारों ओर पाखण्ड का साम्राज्य था। यहां के मन्दिर आदर्श-भ्रष्ट तथा साधु समाज पथ भ्रष्ट हो गये थे। विद्वानों में दकियानूसी विचारों का पूर्ण रूपेण समावेश हो गया था। यह नष्ट समाज अवनति के आवर्त में गिरता जा रहा था। यहां भी पोप की जगह मन्दिरों के पुजारी तथा पादरियों की जगह साधु-सन्यासियों का झुण्ड समस्त देश में उपस्थित थे। उनका काम ही दूसरों को ठगना हो गया था।

इन्होंने अपनी वंचकता को जारी रखने के लिये लोगों में विचित्र-विचित्र कहानिया प्रचार करना शुरू किया। इन्होंने जो कुछ किया उसमें देश और जाति कल्याण की भावना का सर्वथा अभाव था। उनके उन कुकर्मों के प्रचार में यहा पर प्रचलित सदियों का अनेकेश्वरवाद ने तथा पराधीनता के अभिशाप, अज्ञानता और अशिक्षा ने उन्हें यथेष्ट सहायता पहुँचाई। जिस प्रकार योरोप की अशिक्षित जनता रोमन लिपि तथा रोमन भाषा से अज्ञ होने के कारण बाईबिल न पढ़कर पोप और पादरियों के कथनानुसार कार्य करती थी उसी प्रकार भारत की आम जनता संस्कृत भाषा एवम् साहित्य से अनभिज्ञ होने के कारण वेदों उपनिषदों स्मृतियों इत्यादि के न पढ़ने के कारण वास्तविक ज्ञान को न जान कर यहा के वञ्चक साधु संन्यासियों के चंगुल में बुरी तरह फंस गई यहा के पण्डितों ने भी जिन्हें पण्डे और पुरोहित बनकर यहा की अज्ञान हिन्दू-जनता की लुटी हुई सम्पत्ति में हिस्सा लेना था, अण्ट-सण्ट शास्त्रों और पुराणों का सृजन करना शुरू किया। इसमें सन्देह नहीं कि उन लोगों ने जो कुछ भी किया सब स्वार्थ के वश होकर किया उनके सामने कोई दूसरा उद्देश्य नहीं था। अतः स्वामी जी को भी ठीक लूथर की ही भांति सर्व प्रथम यहा के पंडितों एवम् साधु-संन्यासियों से लड़ना पड़ा। इसके लिये उनको तरह तरह की कठिनाइयां तथा दुःख झेलने पड़े और अन्त में इसी के लिये उनको अपने जीवन से भी हाथ धोना पड़ा।

जहां मार्टिन लूथर और स्वामी दयानन्द के जीवन में अनेक साम्य है, वहा कुछ अन्तर भी दृष्टिगोचर होता है। यह अन्तर केवल कार्य्य कलाप में है, लूथर को अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिये अनेक सुविधायें थीं। पहली बात तो यह थी कि योरोप की जनता उस तरह की अशिक्षित नहीं थी जिस तरह भारत की आज की जनता अशिक्षित है। वहा के लोग अपने हितों को समझते थे। दूसरी बात यह है कि वहा की तत्कालीन राजनीति ने भी वहा के धर्म सुधार को यथेष्ट सहायता पहुंचाई।

उस समय योरोप के बहुत से राजा अपने २ देश में धर्म सुधार के पूर्ण पक्षपाती थे। इनमें बहुतों ने योरप की प्रमुख शक्ति होने के कारण अपने निकट के दूसरे दूसरे देशों में इस सुधार का प्रचार करवाया। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यदि योरप के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न था उसका निराकरण वहा के देशों को धार्मिक दृष्टिकोण से न कर राजनैतिक दृष्टि से करना था। किन्तु इसके विपरीत स्वामी दयानन्द के लिये धर्म सुधार एक राष्ट्रीय और जातीय प्रश्न था और जिसका निराकरण यहा के कट्टर पन्थियों से उन्हे राजनैतिक दृष्टि से न कर विशुद्ध धार्मिक दृष्टि से करना था। यहा की राजनीति स्वामी जी को कुछ भी सहायता न दे सकी। इसका कारण यह था कि उस समय तक, जब स्वामी जी ने यहा पर इतना बड़ा कार्य करने का सकल्प किया, यहा की राजनीति मरी हुई थी। स्वामी जी ने ही सर्वप्रथम भारत वासियों को धार्मिक चेतना के अतिरिक्त राजनैतिक जागृति दी। इसका प्रधान कारण यह था कि उस समय तक अंग्रेजों के कठोर शासन के कारण किसी भी तरह के सुधार का अकुर एकाएक नहीं जमाया जा सकता था। इसके अतिरिक्त स्वामी जी के प्रचार कार्य में जहा एक ओर यहा के कट्टर पन्थी रोडे अटका रहे थे वहा दूसरी

ओर यहा के शासक वर्ग जो हम भारतवासियों में किसी भी प्रकार की जागृति नहीं चाहते थे, स्वामी जी की तथा उनका अमूल्य कृति आर्य्य समाज के कार्य्य कलाप को सशंक होकर देखने लगे। यही एक कारण था कि भारत के सर्वोच्च अङ्गरेज अधिकारी तत्कालीन वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड ने गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में एक दिन एका-एक पदार्पण किया और उनने अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी से कहा—"यदि आप गुरुकुल को युनिवर्सिटी ऐक्ट के अनुसार किसी सरकारी नियन्त्रण में रखें तो आपको यथेष्ट सहायता प्रदान की जायगी।" किन्तु उस दूरदर्शी सन्यासी ने सब रहस्यों को समझ कर उनकी ऐसी अनुकम्पा की उन्हें अनावश्यकता बतलाई। पीछे फिर उस गुरु-कुल महा विद्यालयमें उनको गुप्तचरों का पता लगा जो यह पता लगाने के लिये वहा नियुक्त किये गये थे कि वहाँ सरकार के विरुद्ध कोई राजनैतिक गैंग का तो सृजन नहीं किया जा रहा है। इस तरह की अनुकम्पा स्वामी जी पर तथा उनकी आत्मा आर्य्य समाज पर सदैव ही सरकार की रहती आयी है। इसी अनुकरण से आभारी होकर आर्य समाज को ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत रहने पर भी निजाम तथा सिन्ध के सत्याग्रह संग्राम की तैयारी करनी पड़ी है।

मार्टिन लूथर और स्वामी दयानन्द के कार्य्य कलापों में एक और बहुत बड़ा अन्तर है। वह है भाषा और समस्त देश का एक धर्म लूथर को केवल ईसाई धर्म में सुधार करना था। उसको यह डर नहीं था कि यदि उसके कार्य्य कलाप में किंचित् त्रुटि हुई तो ईसाइयत को धक्का लगेगा। क्योंकि समस्त यूरोप का ईसाइयत ही एक धर्म था। किन्तु स्वामी दयानन्द को जहा वैदिक धर्म (सनातन धर्म) का कायाकल्प करना था वहां उन को अपने कार्य्य-कलाप को इस ढग से ले चलना था कि उनके धर्मावलम्बी अन्य धर्मावलम्बी बनने से बचें। उस समय अंग्रेज लोग अपने साम्राज्य विस्तार के लिये धर्म का आश्रय ले रहे थे। इधर अन्य सब से प्रमुख-धर्म भी भारत वर्ष को दूसरे रंग में रंग कर प्राचीन भारतीय सभ्यता को जिसका गुणगान मिश्र और यूनान करता है और जिसकी यश पताका मिश्र तक लहरा रही थी नष्ट कर देना चाहते थे। दुःख है कि उनके अदूरदर्शी भारतीय विधर्मियों के उस समय इति-हास के पृष्ठों को न उलट कर भारतीय राजनीति के बीज को वपन होने देने में एक बाधक सिद्ध हुए। यदि वे इतिहास के पृष्ठों को उलटते तो उन्हें सबक मिलता कि क्यों औरङ्गजेबी तलवार हिन्दू सभ्यता को मिटाने में असफल रही।

स्वामी दयानन्द के प्रचार कार्य्य में भाषा भी बाधक रही। इस विस्तीर्ण महादेश में भिन्न-भिन्न जाति के लोग, भिन्न-भिन्न धर्म्मावलम्बी तथा भिन्न-भिन्न भाषा भाषी हैं। एक मिथिलावासी यदि मद्रास में जाय तो वह निश्चय ही अपने से एक सुन्दर देश में पाया देखेगा, जहा न केवल भाषा में ही अपितु खान-पान, रहन सहन, एवम् रीति रिवाज प्रत्येक में उसको एक गहरी भिन्नता मालूम पडेगी। उस समय हिन्दुस्तान के हरेक प्रान्त की भिन्न-भिन्न भाषा थी। किसी राष्ट्र के राष्ट्रीय करण में, वहां के समाज के एकत्रीकरण में वहांकी भाषा बहुत सहायक सिद्ध हुई है किसी भी धर्म या सम्प्रदाय का प्रचार तभी हो सकता है जब कि समस्त देश की भाषा एक ही हो। मार्टिन लूथर की सफलता का एक प्रमुख कारण योरोप की अन्तर्राष्ट्रीय भाषा इगलिश है। यह ठीक है

स्वामी जी के समय तक राष्ट्र भाषा हिन्दी के उत्थान एवम् उद्धार की एक लहर यहाँके हिन्दी भाषियों के हृदय में उठी थी। किन्तु यह वास्तव में एक तरंग के रूप में ही थी। इसकी रूप रेखा भी उस समय तक स्थिर नहीं हुई थी। अत स्वामी जी को अपने प्रचार कार्य के लिए भारत वर्ष के प्राय: प्रत्येक तत्कालीन प्रमुख भाषाओं की शरण लेनी पड़ी। किन्तु इनमें हिन्दी प्रधान थी। वे स्वयम् तीन भाषायें—गुजराती हिन्दी एवम् संस्कृत जानते थे। सस्कृत के वे अगाध पण्डित थे और इस का प्रयोग शास्त्रीय विषयों के विवेचनार्थ तथा यहा के पण्डितों से शास्त्रार्थ के समय प्रयोग किया करते थे, गुजराती का प्रयोग वे अपने प्रान्त के अतिरिक्त दूसरे प्रान्त में नहीं कर सकते थे। शेष रही हिन्दी इसके लिये वे जानते थे कि हिन्दी कभी न कभी अवश्य ही हिन्दुस्तान राष्ट्र-भाषा के सम्मान को सुशोभित करेगी। अतः उन्होंने समस्त भारत में प्रचार कार्य्य करने के लिये हिन्दी को प्रधानता दी। हिन्दी जो आज प्रतिदिन गौरवशालिनी होती जा रही है उसका एकमात्र कारण उसको स्वामी जी के द्वारा मिली हुई प्रधानता है। इसको आज प्रत्येक हिन्दी के विद्वान् सहर्ष स्वीकार करते हैं। प्रोफेसर रामदास गौड़ ने हिन्दी साहित्य की एक छोटी पुस्तक में स्वामी जी का परिचय देते हुए कहा है कि हिन्दी के प्रचार कार्य्य अकेले स्वामी जी ने जितना किया उतना सैकड़ों मनुष्य मिल कर अथक परिश्रम करने पर भी नहीं कर सकते थे।

स्वामी जी के प्रचार कार्य्य में जो सब से विलक्षण वस्तु है वह उनका असीम पुरुषार्थ है। उस दृढ़व्रती सन्यासी ने वास्तव में एक बड़ा ही विलक्षण कार्य्य किया है। एक ओर बाधायें, असफलतायें चट्टान के सदृश सीने तान कर खड़ी हुई थी दूसरी ओर वह निर्भीक सन्यासी वैदिक मन्त्रों का अस्त्र लेकर प्रति पल अपने लक्ष्य की मञ्जिल पर बढ़ता जा रहा था। उसकी रक्षा के लिये न यहा के देशी नरेशों की सेनायें थी न सेठ साहूकारों की मनोमोहिनी लक्ष्मी ही। मैंने मार्टिन लूथर से स्वामी दयानन्द की तुलना करने का प्रयास किया है यह मेरी क्षुद्रता है। ऐसा करके मैंने उस महापुरुष के व्यक्तित्व के साथ खिलवार किया है किन्तु वास्तव में यह मेरी गलती नहीं है और यदि गलती हो भी तो मैं इस के लिये क्षम्य हू। क्योंकि कुछ इतिहासकारों ने अपने इतिहासों में स्वामी जी की तुलना मार्टिनलूथर से करते हुए लिखा है कि—स्वामी जी को भारतीय इतिहास में वही स्थान प्राप्त है, जो स्थान योरोप के इतिहास में मार्टिन लूथर को है।" प्रस्तुत लेख में मेरी एक मात्र अभिलाषा यही थी कि मैं स्वामीजी की विशेष कठिनाइयों और उनके विशेष महत्वपूर्ण कार्य्यों को जिस को कि उन्होंने हम भारतीयों के लिए किया है, यहा के शिक्षित समाज के समक्ष रखू। स्वामीदयानन्द की तुलना में मार्टिन लूथर नहीं आ सकता। इस का कारण यह है कि उस का मार्ग अबाध था, योरोप की बड़ी बड़ी शक्तियां उसकी सहायिका थीं। अन्य धर्मावलम्बियों का उसे भय नहीं था, योरोप की अन्तर्राष्ट्रीय भाषा इंगलिश उस के प्रचार कार्य्य में बहुत बड़ी सहायिका थी। अतः उसको केवल एक कार्य्य करना था और यह कि ईसाइयों में आई हुई बुराइयों का उन्मूलन, जिस का कारण वहां के पोप तथा पादरी थे।

किन्तु महर्षि दयानन्द का मार्ग एक दम ही कटक पूर्ण था। उनको भीषण कठिनाइयों का सामना करना था। मार्टिन लूथर को परिस्थिति ने जिन सुगमताओं को प्रदान किया था, ठीक इसके विपरीत महर्षि दयानन्द सरस्वती को बाधाओं, कठिनाइयों और सामाजिक अत्याचारों का सामना करना पड़ा। इतना होने पर भी उन्होंने भारतवर्ष के लिये तीन प्रधान कार्य्य किये, जिस के लिये अलग अलग तीन महापुरुषों को एक साथ जन्म लेना पड़ता। वे कार्य्य ये हैं—१. धर्म का कायाकल्प, २ राष्ट्र भाषा हिन्दी का पूर्ण विकास और ३ यहा की राजनीति में प्रगति। इन दृष्टियों से हमें कहना पडेगा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती निश्चय ही एक महान् आत्मा थे। जिन्होंने भारतवर्ष को अगति, अनीति और पतन के आवर्त्त में डूबने से बचाया।

वेद में विज्ञान

ऋग्वेद मंडल १ सूक्त ६ मंत्र ५ में स्थित "वीलु" शब्द के प्रसंग मे

अणु सम्बन्धी विस्तृत विवरण

Atomic Disinteg ration

(लेखक—श्री दीनदयालु जी M SC नई देहली)

वीलु चित आरुजत्नुभिः गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः अविन्द उस्रिया अनु ॥ ऋ० १-६-५॥

पदार्थ.—वीलु-बल, निघ० २-६ । वीडयति ब्रीडयतिश्च, संस्तम्भ कर्मा इन दो धातुओ से वीलु शब्द सिद्ध होता है (निरुक्त ५-६-१८)। बल पूर्वक जिसमे (वृभि-प्रतिबन्धे, धातु पाठे) जिसके दो वा अधिक अग एक दूसरे से बन्धे हो ऐसा दृढ़ सयुक्त पदार्थ । चित्-उपमा अर्थ मे (निरुक्त) । आ-समन्तात्-अर्वाक् अर्थे च (निरुक्त) । पूर्व अवस्था में (वीलु) परस्पर दृढ़ता पूर्वक स्थिर रूपेण जिसके अवयव बन्धे हुए वा समवेत हों ऐसे अणु । (रुजत्नुभिः वह्निभिः) रुज-भंगे, तोड़ फोड़ कर अवयवी करण करने वाली (वह्निभि.—मरुद्भिः- अग्निभि.) रश्मिओं वा तेजोशों के द्वारा गुहा -गुहायाम्-गूहते (गुहू-सम्वरण करना, आच्छादन करना)। अन्तरिक्षे दया० भा० । इन्द्र-इराम (जलको) दृणाति, ददाति, दधाति, दारयते नि० दै० १०-१-८४, इरा-स्वधा निघं० २-७। यत् अशनि इन्द्रःतेन विद्युत् । वायुः इन्द्रः श० ४-१-३-१६। प्रवाहित तेज । अविन्दः लभते । उस्रियाः किरणाः। अनु पश्चात् अर्थे।

भावार्थ—विद्युत् के तेजोंशों द्वारा जो दृढ़ता पूर्वक परस्पर बन्धे हुए स्थिर अणुओ के अवयवो को भंग कर दिया जावे। अणु-ऐसे स्थान में हों जहाँ आकाश ही केवल शेष (Vacuum) हों। तब Xray नामक किरणें उत्पन्न हों।

अणु विस्फोट सम्बन्धी वेद मंत्र

उपर्युक्त मन्त्र के स्वाध्याय में वीलु शब्द का अर्थ ऐसे दृढ़ एवं स्थिर पदार्थ से है जिसके अवयव बलपूर्वक एक दूसरे से बन्धे हो यह वीडयति-ब्रीडयति धातुओं से सिद्ध है । फिर भी ऋग्वेद २-२४-३ मंत्र को देखिये ।

तद् देवाना देवतमाय कर्त्वम्
अश्रध्नन् दृलहा व्रदन्त वीलिता।
उन् गा आजत् अभिनत् ब्रह्मणा
बलम् अगूहत तमो वि अचक्षयत् स्व ॥

पदार्थः—(देवानाम्) दिव्य शक्ति मत् पदार्थों मे (देवतमाय कर्त्वम्) परम सूक्ष्म दिव्य तेज (बृहस्पति-ब्रह्मणस्पति) एवं व्यापक शक्ति का यह कार्य है कि वह (दृलहा अश्रध्नन्) दृढ़ पदार्थों की (श्लथ) हिंसा करे वा (श्रन्थ) दृढ़ बन्धन से उनके अवयवों को वियुक्त करे एव (वीलिता) सस्तम्भित बन्धे हुए अवयवों को (अणु के अंशों को) अलग २ कर अणु का ध्वस करे तथा कठोर स्थिर (अणु) को मुलायम करे (Loose pre-explasive stage) । (उन् गा आजत्) किरणों को उत्पन्न करे। (अभिनत् ब्रह्मणा बलं) उपरोक्त व्यापक शक्ति द्वारा बल को (वीलु को) (भिदि-अवयवे) अवयव अवयव करके खंड खंड कर देवे। (बल-वीलु-अणु यह एकार्थक हैं)। (अगूहत् तमः) तम-तनोते, तनु विस्तारे । पोल Vaccum

को उत्पन्न करते हुए वा तम-अन्धकार को नाश करते हुए। स्वः—सूर्यसदृश प्रकाश को विभचक्ष-यत्—विशेष रूपेण दर्शावे।

उपरोक्त मन्त्र में (वीलिता) शब्द (बलं अभि-मत्) के साथ प्रयुक्त है। तभी निघंटु में वीलु को बल नाम से लिखा है। इसे अवयत्र अवयव अर्थात (भिदि) खड २ किया जाता है। गुहू धातु का भी यहा प्रयोग है जो हमारे पूर्व मन्त्र मे गुहा शब्द से प्रकट होता है। ग्रन्थ-बन्धन से मुक्त करना इस मन्त्र मे है जिससे पूर्व मन्त्र में आये 'वीलु' शब्द का संस्तम्भित पदार्थ होना (ष्टभि-संस्तम्भे) सिद्ध है। (प्रतिबन्धे)

अतः वीलु स्पष्ट है अवयव समुदाय है जिस के अवयव दृढ़ रूपेण बन्धन मे कसे हैं जिसको महान् शक्ति द्वारा एव व्यापक तेज द्वारा (रुज) भंग किया जा सकता है। क्या यह पदार्थ अणु atom है? क्या वीलु शब्द से वेद सच-मुच अणु का अर्थ लिया जावेगा। इस प्रश्न का उत्तर देखिये।

आपान्तमन्यु. तृप्तलप्रभर्मा धुनि·
शिमीवान् शरुमा ऋजीषीः।
सोमोविश्वानि अतसा वनानि नार्वाक्
इन्द्रं प्रतिमानानि देभुः ॥ऋ० १०-८६-५॥
न यस्य द्यावा पृथिवी न धन्व
न अन्तरिक्षं न अद्रयः सोमो अक्षाः।
यदस्य मन्युः अधिनीयमानः शृणाति वीलु
रुजति स्थिराणि ॥ऋ० १०-८६-६॥

यह दोनो मन्त्र १० वें मण्डल के ८६ सूक्त के पाचवें और छठे हैं। इस सूक्त के ऋषि रेणु हैं। अर्थात् इन मन्त्रों सम्बन्धी ज्ञान-रेणु परक है। उ० को० ३-३८ के अनुसार—ऋणाति—गच्छति हिनस्ति-हन्यतेवा स रेणुः। त्रसरेणुः सुरेणुः वा। अर्थात जो गति करे एवं संयुक्त पदार्थ को नष्ट करे तथा स्वयं भी तोड़ा जाकर नष्ट किया जा सके। त्रसरेणु शब्द में त्रस—गति करने वाला (अमर कोष) एवं रेणु—परमाणु। अतः उपर्युक्त दोनों मन्त्रों का दृष्टिकोण (atom) परमाणु वा अणु है जो अतिशीघ्र गति करता हुआ अन्य पदार्थों को भेदन करे एवं स्वयं भी भेदन (अव-यव अवयव) किया जा सके। इन दोनों मन्त्रो में से पिछले मे स्पष्ट 'वीलु' (atom) शब्द है जिसे शृणाति—नष्ट किया जाता है एवं स्थिर अणुओ को रुज—भग किया जाता है। इस वीलु का अर्थ ऋषि की दृष्टि से रेणु (atom) परक ही करना होगा। अब इन दोनो मन्त्रों के अर्थों को देखिये।

(आपान्त मन्यु·) आपातित मन्यु.। मन्युः मन्यते—दीप्ति कर्मण बधकर्मण. वा। निरु० दै० १०-२६-१८। प्रकाश की चिनगारी (Spark) अथवा अणु ध्वस करने वाला झपट झपट कर ऊँचे (voltage) से गिरने वाला तेज जो (तृपल प्रभर्मा) क्षिप्रप्रहारी-शीघ्र शीघ्र प्रहार करने वाला एव प्रगति करने वाला (धुनिः धुनोतेः) कम्पन (waves vibrations) गति को उत्पन्न करने वाला (शिमीवान्) स्वयं प्रवाहित होनेवाला यह तेज (शरुमां) देखने और भेदन करने में सहायक (ऋजीषी—सोमोवज्री) वज्ररूप आकाश को भेदन करता हुआ एवं प्रेरक विद्युत् तेज—(विश्वानि) समस्त [अतसा (नि)] निरन्तर गति करनेवाले (वनानि) रश्मियों (wireless Ethereal vibrations) का प्रेरक यह सोम (विद्युत्

तेज) है यदि इसका पहिले से पराभव किया जावे तो इसे शत्रु नहीं दबा सकते।

अब इससे आगे मन्त्र ६ में सोमो अक्षा. का वर्णन करते हुए कहते हैं कि (यस्य) इसके तेज कम्पन्न गति (vibrations) को द्युलोक पृथ्वी समुद्र आकाश और न पर्वत रोक सकते हैं विद्युत् (सोम) जिनमें सदा रहे (अक्षाः-निवासे क्षियति) तथा विद्युत् जिनसे (अक्षाः क्षरति) प्रवाहित हो ऐसे (सोमो अक्षाः) (Electrodes) बिजली के दृढ हैं वा विद्युत कोषो (condensers) के दोनो (terminals) सिरे हैं। (यन् अस्य मन्युः अधिनीयभान.) जो इसका तेज है। वह जब लेजाया जाता है तो (शृणाति वीलु) अणु को ध्वस कर देता है । (रुजति स्थिराणि) और भग न होने वाले अणु हैं उन्हें भंग कर देता है । प्रसिद्ध है कि (atom) अणु (chemical action) रासायनिक क्रियाओ मे (indivisible) अभेद्य है वह इस प्रकार विद्युत तेज के आघात से तोडा जाता है।

इस प्रकार अणु भग करने हेतु सोमो अक्षा का प्रयोग किया जावे। यह सोमो अक्षा, सिवाय induction coil और condenser के और कोई वस्तु नहीं जैसा कि हम सार्वदेशिक पूर्व अंकों में कह आये हैं। इनका कार्य है विद्युत् के प्रवाह को (wireless vibrations) के रूप में उत्पन्न करना। धुनि-कम्पाना तृपल प्रभर्मा—क्षिप्रप्रहारी, ऋजीषीः वनानि, वीलु शृणाति,रुजति आदि शब्दों से समस्त वैज्ञानिक क्रियाओ का पृथक् २ वर्णन है।

अब शंका होती है कि अक्षा शब्द तो जुए के फांसों का अर्थ देता है यहा सोमो अक्षाः का अर्थ विद्युत् कोष कैसे किया। निघंटु में सोमो अक्षा पद नाम में लिखा है। यास्क ने जुए में अर्थ करते हुए निम्न ऋ० १०-३४-१ मन्त्र का प्रमाण दिया है। उत्तर यह है कि उपरोक्त ऋ० १०-८९-६ में आये सोमो अक्षाः शब्दों से भला दृढ़ (अणु) का नाश एवं स्थिर (अणुओं) का रुज भंग होना तथा मन्युः तेज का आपातित हो शीघ्र शीघ्र प्रहार—कम्पाना तथा वनानि-रश्मियों की सिद्धि कैसे की जायगी यदि—अक्षा का अर्थ जुए के फासे से ही लिया जावे।

यास्क ने जिस मन्त्र १०-३४-१ को जुए की प्रशंसा निन्दा परक माना है उसका अर्थ भी यास्क द्वारा उद्धृत शब्दार्थों से ही देखिये कितना विज्ञान परक है जिसमें जुए के फासों की गन्ध भी नहीं पावेंगे। मन्त्र यह है—

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति
प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः ।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविः
मह्यमच्छान् ॥ ऋ० १०-३४-१ ॥

यास्कानुसार, अक्षा-अश्नुवत् एनान् इति वा अभिअश्नुवत् एभि. इतिवा से स्पष्ट है कि सोमो अक्षा वह है जो तेजोशों को प्रभावित करे अथवा जो तेजोशो द्वारा व्याप्त हो—क्षियति-निवासे तथा क्षरति-प्रवाहे। इन धातुओ से भी विद्युत् को धारण करने वाले तथा प्रवाहित करने वाले-सोमो अक्षाः हैं। यास्कानुगत ही पूर्ण मंत्रार्थ इस प्रकार होगा।

प्रावेपा.—प्रवेपिणः—कम्पन करने वाले—बृहतः महा शक्तिशाली तेज प्रवातेजाः—क्रमश. नीचे (Voltage) स्थान में प्रवाहित होने वाले तेज (इरिणे) गति और कम्पन के स्थान में वर्वृतानाः) वर्तमान—मुझे अति आनन्दित करते हैं मौजवत

सोम । मुञ्जवान् पर्वत विमुच्यत इषीकया । ईषते गतिकर्मणः ।

यास्क ने इस प्रकार पदार्थ किया है जिससे स्पष्ट है कि सोम-विद्युत-उच्च धरातल (पर्वत) से विमुक्त होता है प्रवाह द्वारा पर्वत—पर्व भार (Voltage) गिर जाता है । उस विद्युत तेज को 'भक्ष.' खर्च करने को वा शोषण करके उद्रस्थ रूपय करने वाला—यह सोमो अक्षा है—विद्युत कोष है जो (विभीदकः) शीघ्र शीघ्र प्रहार करके अणुओ को (भिदि-अवयवे) खंड २ कर देता है एव मेरे हेतु (अच्छान्-अचच्छदन) भागाशों की जागृविः—तेजोमय बना देता है ।

इससे स्पष्ट है कि विद्युत ऊँचे धरातल से झपट कर क्रम वार दो दडो के बीच जिनमे विद्युत इकट्ठी होकर फिर उनमे से आकाश को भेदन करती हुई बार २ प्रवाहित होती है । यह दो दंड वा सिरे (Condensers) विद्युत कोष-सोमो अक्षा के हैं जिसके (यदस्य मन्युः अधिनी यमानः शृणाति वीलु रुजति स्थिराणि) अधिष्ठान में अणुध्वंस की प्रक्रिया होती रहती है ।

इसे तेज प्रपात द्वारा-अणु ध्वस द्वारा अस्त्रो के निर्माण हेतु—ऋ २-२४-३ मत्र मे (ब्रह्मणा बल अभिनत् अगूहत तमो विअचक्षयतस्वः) ब्रह्मास्त्र द्वारा (बल) अणु का ध्वंस एवं सूर्य सदृश प्रकाश की उत्पत्ति का वर्णन ऊपर कर आये हैं तथा च

मरुत्वः आयुधाः संशिशानाः अग्नि रूपाः आरुजन्तः अभिप्रयन्तु (मरुत्वः) रश्मि सदृश तेज परमाणु के प्रयोग में लाने वाले (आयुधा.) अस्त्र प्रयोग में लाये जावे वे भेदन करने एवं मारने वाले (आरुजन्त.) तोड़ फोड़ कर अवयव कर देने वाले (सशिशाना) तीक्ष्ण भेदक (अग्निरूपा) अग्निरूप हैं । ऐसे अस्त्र जैसा पूर्व लिख आये है, यदि पहिले से प्रतीकार न किये जा सके और चल गये तो (नाद्यागिन्द्र प्रतिमाना-निदेभु.) तो फिर शत्रु इन अस्त्रो का मुकाबला नहीं कर सकते तथा (न द्यावा पृथिवी न धन्व न अन्तरिक्षं न अद्रय.) कोई भी रुकावटें इन अस्त्रो को रोक नहीं सकती ।

पाठक किंचित विचार करें (रेणु ऋषि atomsic view) परक यह ब्रह्मास्त्र का वर्णन वेद मन्त्रो मे कितना स्पष्ट है जिसका निर्माण अणुध्वंस Atomic disruption के आधार पर कहा गया है ।

आर्यंयुवक से।

(रचयिता . रामसिया "रमेश" साहित्यरत्न")

जागो जागो आर्य-वीर फिर देखो स्वर्ग विहान हुवा।
आर्य पुत्र तेरे रहते भारत मा का अपमान हुवा ॥

एक समय भारत नभ मे जब निविड़ कालिमा छाई थी।
जाति चन्द्रपर मोह राहु ने जब निज आख जमाई थी,
ऋषि की उज्जवल वाणी ने नूतन आभा प्रगटाई थी,
मृतक जाति मे फिर से अनुपम नव चेतनता आई थी।
अब क्यों सोये आलस मे, देखो जो कार्य महान हुवा।
आर्य पुत्र तेरे रहते भारत मां का अपमान हुवा ॥ १ ॥

आज कुचक्री, क्रूर, कलापी फिर से शोर मचाते हैं।
आर्यवर्त्त से पोषित हो उसपर ही घात लगाते हैं।
हैं कृतघ्न वे महा नीच जो निज माया फैलाते हैं।
खंड खंड करने भारत को नव प्रस्ताव सुनाते हैं।
मर मिटने को वीरो देखो पैदा पाकिस्तान हुवा।
आर्य पुत्र तेरे रहते भारत मा का अपमान हुवा ॥ २ ॥

शत जिन्ना हों पैदा चाहें, कोटि लियाकत वाले हों,
बनें कायदे आजम चाहे आफत के पर काले हों,
उन्हें दिखा दो वीरो जिनके बने विचार निराले हो ?
मा की गोद पले खेले, क्यों उसके लिए कसाले हों ?
जो अपने थे बेगाने हैं, उन को गर्व महान हुवा।
आर्य पुत्र तेरे रहते, भारत मा का अपमान हुवा ॥ ३ ॥

हिन्दी की है आज दुर्दशा, गौ माता भीं रोती है।
दुखड़ा अपना सुना सुना कर, आसू से मुह धोती है।
आज पापियो के कर्मों से, हानि देश की होती है।
था जो निर्मम काच वही तो, बना हुवा अब मोती है।
करो विचार हृदय मे वीरों, यह कैसा अभिमान हुवा ?
आर्य पुत्र तेरे रहते, भारत मा का अपमान हुवा। ॥ ४ ॥

पांच जन्य का गूंजे रव, मुरली की टेर निराली हो,
उस आदित्य ब्रह्मचारी की, भारत पर रखवाली हो।
वीरो श्रद्धानन्द वीर सम गोली जिसने खाली हो।
वही वीर हुंकार, उठेगी जिसने लाज बचा ली हो।
विश्व देखकर चकित रहेगा, जब अनुपम बलिदान हुवा,
आर्य पुत्र तेरे रहते, भारत मा का अपमान हुवा ॥ ५ ॥

नई समाज-व्यवस्था
(१)

(ले०—श्री रघुनाथप्रसाद जी, पाठक)

संसार के प्रवाह को बारीकी से देखने वालों की यह सही धारणा है कि इन दिनो आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से एक नए संसार के निर्माण की आवश्यकता है।

यह संसार किस प्रकार का होना चाहिए? मोटे तौर पर इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन नहीं है। हमारी सम्मति में उस संसार को निम्न बातो की पूर्ति करने वाला होना चाहिए।

(१) हम विश्व में शान्ति का वातावरण चाहते हैं जिसमें हमें उचित विश्वास हो कि प्रति २५ वे वर्ष महायुद्ध न छिड़ेंगे। जिस समय हमारे बच्चे संसार-प्रवेश की तयारी में लगे होंगे उसी समय उन्हें युद्ध की आग में बलात् झोंका न जायगा और युद्ध से पलटने पर बेकारी के बाजार में उन्हें पटका न जायगा। हम ऐसा संसार चाहते हैं जहां काली रातें भय का संचार करने वाली न हों और युद्ध की रञ्जित वेदी पर अपने श्रेष्ठ मनुष्यों का निरन्तर बलिदान करने के लिए निर्बल राष्ट्र बाधित न हों।

(२) हम ऐसा संसार चाहते हैं जहां हम सब प्रकार की सुरक्षा अनुभव करें। जहां हमें तथा हमारे परिवार को खाने को अन्न, पहनने को कपड़ा, जीवन-निर्वाह की आवश्यक वस्तुएं तथा रहने को घर उपलब्ध हो सकें।

(३) हम अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा घर, बगीचा, फर्नीचर, तथा गृहस्थी का सामान, बर्तन, पशु, रोशनी, औषधि, पुस्तकें पत्र और शस्त्रास्त्र इत्यादि आवश्यक वस्तुएं चाहते हैं। हमारे घर का स्वरूप ऐसा हो जो हममें मोह, अभिमान और आलस्य उत्पन्न न कर सके। गृहस्थ की वस्तुएं भी ऐसी हों जिनके प्राप्त करने में किसी प्राणी की हानि न हो। जो मनुष्य-समाज में ईर्ष्या और असमानता उत्पन्न न कर सकें और उनकी प्राप्ति कष्टदायक भी न हो।

(४) हम शारीरिक स्वास्थ्य चाहते हैं जिसमे हम नीरोग रहें और रोगो तथा रोग-जन्य असमर्थता से बचे रहें जिनके फल स्वरूप जीवन का आनन्द और रचना-शक्ति नष्ट हो जाती है।

(५) जिस काम में हमारी स्वाभाविक प्रवृत्ति हो उसमें पूर्ण योग्यता के सम्पादन का हमे अवसर मिले। हमारी शक्तियों के निर्यात और विकास का मार्ग कुण्ठित न हो।

(६) अपने मानसिक क्षितिज को ऊँचा करने और अपने सामाजिक सम्बन्धों को मधुर और विस्तृत बनाने का हमे अवसर मिलना ही चाहिए। विकास और उन्नति के लिए हम में से प्रत्येक को शिक्षा और ज्ञान की प्राप्ति की सुविधा भी होनी चाहिए। शरीर की तरह मन को भी भोजन की आवश्यकता होती है। अतः दोनो प्रकार के भोजनों से हम वंचित न रहें। हमारे लिए संगीत, काव्य, कला, नाटक, साहित्य, प्रकृति निरीक्षण, इत्यादि सुरुचिपूर्ण मनोरंजनो की समुचित व्यवस्था हो।

(७) अपने विचारों और अनुभवों को विस्तृत पवित्र और परिपक्व करने के साथ साथ

उनका प्रकाश करने की भी हमें स्वतन्त्रता होनी चाहिए। सत्य का मण्डन और असत्य का खंडन करने से हमें रोका न जाय। खुफिया पुलिस वा राज्य का हमारे विचारों और कार्यों पर अन्याय पूर्ण प्रतिबन्ध न लगे।

(८) हम अपने मित्रों और परिवार के मध्य प्रेम पूर्वक रह सकें। हमारे प्रेम की पृष्ठ-भूमि (आधार शिला) परिवार और समाज हो। मनुष्य का निर्माण इस रीति से हुआ है कि यदि वह स्नेह की भूख से पीड़ित रहे तो उसका जीवन नीरस और निराशामय हो जाता है। जीवन को सुखी और मधुर बनाने के लिए ही नहीं वरन् मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए पारिवारिक सुख, स्नेह और सामाजिक सौहार्द परमावश्यक होते हैं हमारा ससार इन सम्बन्धों के पूर्णविकास और रक्षा की सुविधाएँ उपस्थित करने वाला होना चाहिए।

इस तालिका को हम पूर्ण नही कह सकते। कौन वस्तु कितने परिणाम मे मिलनी चाहिए इस सम्बन्ध में हम आगे विचार करेंगे।

इस तालिका के पुनः अवलोकन से विदित होगा कि विविध आवश्यकताओं की पूर्ति को असंदिग्ध बनाने के लिए भिन्न भिन्न प्रकार की बातों की आवश्यकता होगी। उदाहरण के लिए स० ४ की पूर्त्यर्थ हमे चिकित्सा शास्त्र पर निर्भर होना होगा। चिकित्सा और सफाई स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्रारम्भिक आवश्यकताएँ मानी जाती हैं। परन्तु इस स्थान पर अनायास ही अर्थ का प्रश्न उपस्थित हो जाता है। राज्य और अर्थ प्रणाली इस बात का निरूपण करने में सहायक होंगे कि हम गन्दी बस्तियों में रहते हैं अथवा खुले हुए स्थानों पर। हमें उचित प्रकार का शारीरिक और मानसिक भोजन उचित मात्रा मे मिलता है वा गन्दे अस्वास्थ्यकर अपर्याप्त भोजन। इसमें संदेह नहीं हमारी अपनी आदतो और पैत्रिक संस्कारों का भी हमारे स्वास्थ्य पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है।

सं० ८—विशुद्ध रूप में व्यक्तिगत विषय है। हमारा घर सुख और शान्ति का धाम है अथवा कलह की धधकती भट्टी, यह सर्वथा हमारे ऊपर निर्भर है जिनके मध्य में हम सब रहतेहैं वे हमारे लिए प्रेम, सौहार्द और सहानुभूति की सजीव प्रतिमाएँ हैं वा ईर्ष्या, द्वेष और कटुता के साक्षात अवतार हैं, यह भी हमारे अपने ही व्यवहारों पर निर्भर करता है। परन्तु यहा भी अर्थ का प्रश्न सामने आ जाता है। यदि हम बहुत निर्धन हैं, यदि हम रोजगार के लिए परेशान हैं और जीवन-निर्वाह की वस्तुओं के लिए तंग हैं, तो निश्चय ही हम अच्छे पारिवारिक और सामाजिक वातावरण की सृष्टि नहीं कर सकते।

सं० १, २ और ३ विशुद्ध रूप में आर्थिक और राजनैतिक प्रणाली से सम्बन्धित हैं जिनके अधीन हमें रहना होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संसार में निरन्तर युद्ध होते रहेंगे अथवा सुख और शान्ति का साम्राज्य रहेगा, हम अच्छे घर की व्यवस्था करने में समर्थ होंगे वा असमर्थ वृद्धावस्थामें हमारे दिन सुख से कटेंगे वा दुःख से यह बात मुख्य रूप में समाज के आर्थिक और राजनैतिक संगठन से सम्बन्ध रखती है। हम और हमारी विशेषताओं का इन दोनों के सामने कोई मूल्य न होगा। हमारे कठोर परिश्रम और मितव्ययिता का भी विशेष महत्व न होगा।

अतः हम इस परिणाम पर पहुचते हैं कि अपने उपर्युक्त प्रकारके संसार के निर्माणार्थ ऐसी आर्थिक प्रणाली होनी चाहिए जो उस संसार को सभव बना सके। इसके लिए विज्ञान के आविष्कारो पर निर्भर रहना पर्याप्त न होगा। उन अवस्थाओ से लोहा लेने के लिए जिनसे हम घिरे होंगे, अपने यत्नो पर भी निर्भर रहना विशेष उपयोगी न होगा। मनुष्य के व्यवहारो को उत्तम बनाने के उद्देश्य से मनुष्य स्वभाव को सुधारने का यत्न भी काफी न होगा। निश्चय ही हमें अपने संसार के निर्माण के लिए उसकी नीव 'अर्थ' की भित्ति पर रखनी होगी।

हिन्दू विश्वविद्यालय का अधिकारी वर्ग विशेष ध्यान दे।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के मन्त्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए० ने प्रेस को निम्न वक्तव्य दिया है।

"हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के प्रो० महेश प्रसाद जी आलिम फाजिल ने विश्वविद्यालय के "धर्म विज्ञान महा विद्यालय" (Gollege of Theology की वेद मध्यमा श्रेणी में अपनी पुत्री के प्रवेश के लिये गत जुलाई मे प्रार्थना पत्र दिया था। परन्तु यह अभी तक स्वीकृत नहीं हुआ है। श्री प्रो० महेशप्रसाद जी का पक्ष है कि इस कालेज में हिन्दू मात्र को प्रवेश का अधिकार है अत. उनकी पुत्री प्रवेश की अधिकारिणी है, इसके विरुद्ध विश्व विद्यालय वालो का पक्ष है कि वेद मध्यमा के वेद के कोर्स मे कर्मकाड भी उस कोर्स का एक अग है। इस सम्बन्ध मे एक विषय यह है कि इस कोर्स को केवल वही विद्यार्थी पढ सकेंगे जो हिन्दू धर्म की स्वीकृत प्रथा के अनुसार हिन्दू संस्कारों और अनुष्ठानों को कराने के अधिकारी हैं।

विश्व विद्यालय के उपर्युक्त पक्ष के विरोध में समाचार पत्रो मे चर्चा प्रारम्भ हो गई थी। विश्व विद्यालय की ओर से भी पत्रो मे १-२ वक्तव्य प्रकाशित हुये थे परन्तु इन वक्तव्यो के निकल जाने के पश्चात भी यह चर्चा आन्दोलन का रूप लेने लग गई थी। इस पर विश्व विद्यालय की सीनेट को इस प्रश्न पर विचार के लिये एक उपसमिति नियुक्त करनी पड़ गई थी।

इस सभा की ओर से विश्व विद्यालय के अधिकारियों को यह लिख कर कि उनका पक्ष शास्त्रीय दृष्टि से निर्बल है अतः प्रेरणा की गई कि वे अपने निर्णय पर पुनर्विचार करके उस कन्या को वेद मध्यमा श्रेणी में प्रविष्ट कर लेवें। इसके उत्तर में यूनिवर्सिटी के वाइस चासलर महोदय ने हमारे पास अपने उस वक्तव्य की एक प्रति भिजवाई जिसमे उपसमिति की नियुक्ति की चर्चा थी। इस सभा की ६।१२।४५ की अन्तरग सभा की बैठक के निश्चयानुसार जी प्रो० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री से प्रार्थना की गई कि वे बनारस जाकर स्थिति का ठीक २ परिज्ञान प्राप्त करके विश्व विद्यालय के अधिकारियों से मिल कर कन्या के प्रवेश का यत्न करें। प्रो० महेन्द्र प्रताप जी की रिपोर्ट की प्रतीक्षा है।

२३।१।४६ के समाचार पत्रों में उक्त उपसमिति की सिफारिश छपी है। उसके अनुसार विश्व विद्यालय की परीक्षाओं में बैठने वाली कन्याओ को वेद के कर्मकाड भाग के पढने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिये। कारण यह प्रकट किया गया है कि यह भाग केवल पुरोहित बनने वालो के लिये अभिप्रेत है। हिन्दू शास्त्र स्त्रियो को पौरोहित्य कर्म की अनुमति नहीं देते हैं। समिति की यह सिफारिश भी है कि कन्यायें वेद के साहित्यिक भाग को पढ़ सकती है।

अब देखना यह है कि विश्वविद्यालय की सीनेट उपसमिति की सिफारिशो को स्वीकार करके अपने विरुद्ध खडे हुये आन्दोलन को बढ़ने देना पसन्द करेगी अथवा वेद की शिक्षाओ के ठीक २ भाग और अर्थों के अनुसार प्रो० महेश प्रसाद जी की पुत्री के प्रवेश को स्वीकार करके अपनी एक बड़ी भूल को सुधारेगी।

२८।१।४६ सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय देहली

सामाजिक जगत्

सायला राज महलों में वेद कथा

(संवाददाता द्वारा)

१७-१-४६ को बढवान जङ्क्शन पर सायला स्टेट के एज्यूकेशनल इन्सपेक्टर श्रीयुत ब्रजलाल जी ज्ञानी एम०ए०श्री प० कन्हैयालालजी को लेने आये। जोरावर नगर से सायला राज की अपनी ट्रेन चलती है जिसके स्पेशल सैलून में उन्हें बिठलाकर सायला लाये। उन्हें राज गेस्ट हाउस में ठहराया। १८-१-४६ को राजा साहब ठाकुर कर्ण सिंहजी बैण्ड बाजा बजवाते हुए अपनी मिलिट्रीके साथ प्रजाजन तथा राजपरिवार के साथ ६ बजे पण्डित जी के पास आये। उन्हें दो घोड़े की अपनी खास फिटन पर बिठला कर जलूस बना नगर मे घुमाया। पश्चात् राजमहलों में ले गये जहा पर सुन्दर यज्ञशाला बनाई गई थी। रानी साहिबा ने राजकुमारी सहित पं० जी का स्वागत कर उनके पुस्तक पर केसर से तिलक कर स्वर्ण की पुखराज जड़ित अंगूठी और एक रेशमी थान भेंट कर उन्हें एक बड़ी चादी की चौकी पर बिठला कर आचार्य बना यजुर्वेद द्वारा यज्ञ कराने की प्रार्थना की। यज्ञ मे राजा साहब, रानी साहिबा, राजकुमारी तथा रानी साहिबा की छोटी बहिन आहुति डालने लगीं और पं० जी ने मंत्र पढ़ने प्रारम्भ किये। दो घण्टा यज्ञ कराने के पीछे पं० जी को दरबार में ले जाया गया। वहा पर भी एक ऊंचे स्थान पर सुन्दर सजा कर व्यास पीठ बनाई गई थी। राजा साहब ने पं० जी के मस्तक पर केशर का तिलक कर पुष्पहार पहिना कुछ मुक्ता भेंट कर व्यास पीठ पर बिठला यजुर्वेद से कथा करनेकी प्रार्थना की पं. जी के सामने चादी की चौकी पर यजुर्वेद रखा था जिसे खोल उन्होने मन्त्रों की व्याख्या प्रथम अध्याय से प्रारम्भ की। इस प्रकार पं० जी आजकल दो घण्टा यज्ञ कराते हैं। और दो घण्टा दिन में ३ घटा सन्ध्या समय यजुर्वेद की कथा होती है यज्ञ तथा कथा की पूर्ण आहुति १-२-४६ को होगी राजा साहब इतने उदार व्यक्ति हैं कि दरबार में अन्य जनों को भी आने की आज्ञा दे रक्खी है। सवर्णों के अतिरिक्त अन्त्यज स्त्री पुरुष सैकड़ो की संख्या मे कथा सुनने आते हैं। दरबार सब लोगो से खचाखच भरा रहता है। दूसरी ओर रानिया व राजकुमारिया और नगर निवासिनी स्त्रिया सैकड़ों की संख्या मे सम्मिलित हो कथा सुनती हैं। मुसलमानों की संख्या भी श्रवणार्थियो में काफी हो जाती है। राज परिवार,राजा, रानी, प्रजाजन पर कथा का बहुत अच्छा असर पड़ रहा है।

मेरा पता.—मार्फत राजा साहब ठाकुर कर्ण सिंह जी सायला नरेश सायला, वाया बढवान काठियावाड़, बी० बी० सी० आई० आर०।

[हमें इस समाचार से अत्यन्त हर्ष हुआ है और हम श्री प० कन्हैयालाल जी को इस सन्मान के लिए हार्दिक बधाई देते हैं।

—सम्पादक सा० दे०]

'बरेली शास्त्रार्थ' में आर्य समाज की अपूर्व विजय

आर्य समाज विहारीपुर बरेली का वार्षिक उत्सव २८ अक्तूबर से ७ नवम्बर तक बड़े समारोह के साथ मनाया गया। जिसमें स्वामी विशुद्धानन्द जी बम्बई, पं० कालीचरण जी मौलवी

कानपुर, आचार्य विश्वश्रवा जी आदि के प्रभाव शाली भाषण हुए।

इस वर्ष के उत्सव में विशेष महत्व का विषय शास्त्रार्थ था व्याकरणाचार्य प० शिवदत्त शास्त्री सनातन धर्मी विद्वान् ने कुछ मास पूर्व से ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य आदि पर सात प्रश्न मुद्रित करके बांटे थे। जिनमे व्याकरण निरुक्त ब्राह्मण ग्रन्थों के न समझने का आरोप ऋषि पर किया था। हमने इस चैलेंज को स्वीकार किया और आर्यसमाज की ओर सेशास्त्रार्थ कर्ता श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी नियत हुए। शास्त्रार्थ संस्कृत मे लेख बद्ध और भाषा में मौखिक हुआ। क्योंकि शास्त्रार्थ सस्कृत मे था और विद्या सम्बन्धी व्याकरण आदि के प्रश्न थे अतः सस्कृत मे विद्वान् दर्शकों की बहुत बड़ी भीड़ और जनता थी। उपस्थिति सात आठ हजार थी।

आर्य समाज के विशेष गौरव की बात इस शास्त्रार्थ में यह भी थी कि आचार्य जी की विदुषी पत्नी श्रीमती देवी जी मञ्च पर विद्यमान होकर संस्कृत के लेखन मे तथा ग्रन्थों के प्रमाणों को देने आदि मे शास्त्रार्थ मे सहायता कर रही थी। यह शास्त्रार्थ ७ नवम्बर १६४५ को आर्य समाज अनाथालय बरेली के मैदान मे हुआ। शास्त्रार्थ के प्रधान आर्य समाज की ओर से स्वामी विशुद्धानन्द जी बम्बई वाले थे और सनातन धर्म की ओर से प्रधान प० रामलोचन जी शास्त्री वैयाकरण केसरी थे। शास्त्रार्थ तीन घण्टे तक धारा प्रवाह संस्कृत और हिन्दी में होता रहा जिस में आचार्य विश्वश्रवा जी ने वेदो, ब्राह्मण ग्रन्थों और निरुक्त व्याकरण आदि के प्रमाणो को देकर समस्त पण्डित मण्डली को चकित कर दिया। श्रोताओं पर ऋषि दयानन्द की विद्या सम्बन्धी योग्यता क्या थी इस का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

पं० शिवदत्त जी शास्त्री ने बड़ी योग्यता और सभ्यता के साथ शास्त्रार्थ किया। यदि आर्य समाज और 'सनातन धर्म'में इसी प्रकार शास्त्रार्थ हों तो धार्मिक सिद्धान्तों पर अच्छा विचार हो। शास्त्रार्थ के अन्त में सनातन धर्म के प्रधान वैयाकरण केसरी पं० रामलोचन शास्त्री ने आचार्य विश्वश्रवाः जी की विद्या सम्बन्धी योग्यता की बहुत प्रशंसा की। इस शास्त्रार्थ में कई शास्त्रीय रहस्य स्पष्ट हुए। यह संस्कृत का लेख बद्ध शास्त्रार्थ शीघ्र मुद्रित होगा।

बांके बिहारीलाल बी० ए० एल एल बी
प्रधान आर्य समाज बिहारीपुर
बरेली।

एक अनुकरणीय अन्तर्जातीय विवाहः—

जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ के अध्यक्ष श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज के भाई श्रीयुत प्यारे लाल जी रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट ऐन्ड सेशन्स जज की सुपुत्री श्री सरला रानी एम० ए० का शुभ विवाह गत ५ जनवरी को पूर्ण वैदिक रीति से श्री जगदीश जी माथुर ब० सेक्रेटरी सप्लाई डिपार्टमेंएट के साथ मेरे पौरोहित्य में अच्छे समारोह से सम्पन्न हुआ जिस में वैदिक मन्त्रों और विधियों की व्याख्या की गई। इस अन्तर्जातीय विवाह में दोनों पक्षो के सम्बन्धियों ने बहुत बड़ी संख्या में सहर्ष भाग लिया। हम नवदम्पती की दीर्घायु तथा सुख समृद्धि के लिये भगवान् से प्रार्थना करते हैं और अन्य आर्यो से भी निवेदन करते हैं कि कल्पित जाति बन्धन को तोड़ कर वैदिक आदर्श को पूर्णतया अपनाएं। ध० दे०

An Inter-caste Arya Marriage

Under the auspices of the Arya Samaj, Chintadripet, Madras, a marriage took place in the Samaj premises on 25th January'46 Sri Kattamuri Rama Seshagiri Rao, Proprietor, South India Supplies Ltd Bezwada, a Prominent Andhra leader, belonging to the Brahmin community, married Shrimathi Dasari Satyavathama, widow of late Dasari Nageswara Rao, belonging to the Naidu community, of Bezwada The marriage was officiated by Pandit G Kanniah, Hony Arya Missionary of Madras A large number of members and friends attended the function and blessed the couple

M Bharathan, B Sc
Hony Secretary
THE ARYA SAMAJ, CHINTADRIPET
MADRAS

स्त्रियों का कर्मकाण्ड में अधिकार

(२)

(लेखक—श्री प० धर्मदेव विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा)

'सार्वदेशिक' के गत जनवरी अङ्क मे मैने अनेक प्रमाणों से स्त्रियो का कर्मकाण्ड में अधिकार सिद्ध करने का प्रयत्न किया था। इसी विषय में कुछ अन्य स्पष्ट प्रमाण विचारशील निष्पक्ष पात विद्वानो के सामने इस लेख द्वारा रखना चाहता हू ।

काठक गृह्यसूत्र ३।१।३०= में निम्न वचन विवाहसंस्कार प्रकरण में पाये जाते है।

तान् (शमीलाजान्) अविच्छिन्दती जुहोति 'अर्यमणं नु देव कन्या अग्निमयक्षतासो अस्मान् देवो अर्यमा प्रेतोमु चतु मामुष्य गृहेभ्य -स्वाहा, इति इसकी व्याख्या में टीकाकार देवपाल, ब्राह्मण बल आदित्य दर्शन आदि ने लिखा है। कि:—

तान् लाजान् अविच्छिन्दती विच्छेदमकुर्वती एकेनैव प्रक्षेपेण जुहोति अमुष्येति सामान्येन भर्तृनाम लक्ष्यते।

ब्राह्मण बल—तान् ऋत्विगभिधारितान (लाजान्) वधूं सततम् 'अर्यमण नु देवम्' इतिवाच यित्वा हावयति। अमुष्यस्येति वरस्यषष्ठ्यन्त नाम गृह्णाति वधूः।"

(काठक गृह्य सूत्र—डा० विलियम कालेण्ड द्वारा सम्पादित ३ टीका सहित पृ० १०६) अर्थात् वधू लाजों को 'अर्यमणं नु देवम्' इस मंत्र का उच्चारण करती हुई अग्नि में डाल देती है।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिपोषणम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्यो मुक्षीय मामुष्य गृहेभ्यः स्वाहा॥

अर्थात् वधू से त्र्यम्बकं यजामहे' इस मन्त्र का पाठ कराकर आहुति डलवाई जाती है। काठक गृह्य सूत्र ३।३।३४) में निम्न वचन आते हैं:—

अपराह्णेऽधिवृक्ष सूर्ये गृहान् उपयाय 'ऊर्जं बिभ्रती वसुवनि: सुमेधा गृहान् आगा मोदमाना सुवर्चाः। अघोरेण चक्षुषाह मैत्रेण गृहाणां पश्यन्ती वय उत्तिरामीति॥ गृहाणामायु:प्र वय तिराम गृहा अस्माकं प्रतिरन्त्वायुः। गृहानहं सुमनसः प्रपद्येऽवीरघ्नी वीरपतिः सुशेवाः॥

इरा वहती घृतमुक्षमाणा स्तेष्वहं सुमनाः संविशामि। येषा मध्येऽधि प्रवसन्नति सौमनसबहु। गृहानुपह्वयामहे ते नो जानन्तु जानतः॥ सूनृतावन्तः स्वधावन्त इरावन्तो हसामदाः।अक्षुध्या अतृष्या गृहा मास्मद् बिभेतन॥ उपहूता इह गाव उपहूता अजावयः। अथो अन्नस्य कीलाल उपहूतो गृहेषु मे॥ उपहूता भूरिधनाः सखाय. साधु संमदाः। अरिष्टा. सर्वपूरुषा गृहा न सन्तु सर्वदेति॥

(काठक गृह्यसूत्र पृ० १२०)

इसकी व्याख्या में भाष्यकार देवपाल ने लिखा है—स्वग्राम समीपं गत्वा तत्र स्वगृहान् प्रति दृश्य ऊर्जं बिभ्रतीति जपति। वध्वा एष जपो मन्त्र लिंगात्॥

इसी प्रकार भाष्यकार आदित्यशरण ने इसकी व्याख्या में लिखा है—गृहाणा समीपमागत्य ऊर्जं बिभ्रतीति गृहानवलोक्य जपति कन्या सप्तैता ऋचः। कन्याया।जपः मन्त्रवर्णात्॥

(काठक गृह्य सूत्र पृ० १२१)

अर्थात्—वधू अपने ग्राम के समीप आकर और अपने घर को देखकर 'ऊर्जं विभ्रती वसुवनिः सुमेधाः आदि मन्त्रो का जाप करती है।

शाङ्खायन गृह्य सूत्र में भी अनेक स्थानो पर स्त्रियों के कर्मकाण्ड में भाग लेन और मन्त्र पढ़ने का विधान है उदाहरणार्थ अ० १ ख० १७ सूत्र २१६ में लिखा है—

"सायं प्रातर्वैवाह्यमग्निं परिचरेयाताम् अग्नये स्वाहा स्विष्टकृते स्वाहेति।"

सू० २२० पुमासौ मित्रावरुणौ पुमासावश्विनावुभौ। पुमानिन्द्र श्राग्निश्च पुमासंवर्ततां मयि स्वाहेतिं पूर्वा गर्भकामा॥

अर्थात्—पति पत्नी प्रातः सायम् अग्नये स्वाहा स्विष्टकृते स्वाहा इत्यादि मन्त्रो से अग्निहोत्र करें। गर्भ की कामना करने वाली पत्नी पुमासौ मित्रावरुणौ इत्यादि वेद मन्त्र का उच्चारण करके आहुति दे इत्यादि।

ऐसे ही आश्वालयन गृहसूत्र में भी अनेक वाक्य कर्मकाण्ड में स्त्रियों के भाग लेने के सम्बन्ध में आते हैं। उदाहरणाथ प्रथम अध्याय मे अश्मारोहण विधि और ध्रुव अरुन्धती दर्शन के पश्चात् वधू के मुख से उच्चारण कराया गया है कि—

"जीव पत्नी प्रजा विन्देयेति।"

इसकी व्याख्या में हरदत्ताचार्य ने कहा है कि जीवस्य पत्नी-जीवतः पत्नी जीवपत्नी—पत्युर्नो यज्ञसंयोगे (अष्टा० ४।१।३३) इति प्रक्रिया द्रष्टव्या। आयुष्मता भवता भर्त्रा सह यज्ञ संयुक्ते त्यर्थः। प्रजा पुत्र पौत्रादिलक्षणा विन्देय लभेय विष्णो. प्रसादेनेति॥

अर्थात्—ईश्वर की कृपा से मैं आप पति की यज्ञ द्वारा संयुक्त पत्नी उत्तम सन्तानादि प्राप्त करू।

प्रयाण उपपद्यमाने :—

पूषा त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्रवहता रथेन। गृहान् गच्छ गृह पत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमावदासि॥ (ऋ० १०।८५।२६)

इस की व्याख्या में श्री हरदत्ताचार्य ने लिखा है कि—

'वधूरभिधेया हे वधु। पूषा त्वाम् इत. पितृगृहान् पतिगृहं नयतु रथेन त्व पितृ गृहात् पति गृहान् गच्छ गत्वा च त्व गृहपत्नी मदीयाना गृहाणा स्वामिनी यथा असः—भवसि तथा भव। वशिनी आत्मवशवर्तिनी सर्वं प्रजा विषयमनुराग कुर्वतीत्यर्थः। किंच त्वं (विदथ) यज्ञ नामेतन् श्रौत स्मार्तलक्षण यज्ञम् (आवदासि) लोडर्थेऽयं पंचमो लकारः। आभिमुख्येन वद। श्रौतस्मार्त लक्षणानि कर्माणि कुर्वित्यर्थः। एतदुक्त भवति-मदीयान् गृहान प्राप्य मया सार्धं श्रौत स्मार्त-लक्षणेषु कर्मस्वधि कुर्वित्यर्थः॥

(आश्वलायन गृह्यमन्त्र व्याख्या हरदत्त व्याख्या साम्बशिव शास्त्रिणा सशोधिता त्रिवेन्द्रम् पृ० १४)

अर्थात् हे वधु! तुम मेरे घर की स्वामिनी बनो और प्रेम पूर्वक सबको वश में रखती हुई श्रौत स्मार्त यज्ञो का मेरे साथ अनुष्ठान और उनका उपदेश सब को करो।

यह मन्त्र तथा उसकी व्याख्या में श्री हरदत्ताचार्य अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में स्त्रियों के न केवल कर्मकाण्ड में भाग लेने बल्कि उस विषयक उपदेश देने आदि का प्रतिपादन करते हैं फिर यह कहना कितना अज्ञान सूचक और अशुद्ध है कि स्त्रियों को वैदिक कर्मकाण्ड में भाग लेने का अधिकार नहीं। वैदिक

कर्मकाण्ड का अध्ययन किये बिना कैसे स्त्रियां उन में भाग ले सकतीं और उनकी विधियों का ठीक अनुष्ठान कर सकती हैं ? वस्तुतः वेद मन्त्र न केवल वैदिक यज्ञ वा कर्मकाण्ड के अनुष्ठान का स्त्रियों को अधिकार देते हैं बल्कि अनुभव प्राप्त कर के विशेषतः वृद्धावस्था में उनके उपदेश को भी जैसे कि उपर्युक्त १०।८५।२६ के मन्त्र में जो थोड़े से पाठ भेद से अथर्व १४।१।२० में आया है स्पष्ट बताया गया है। इससे अगले मन्त्र 'इह प्रियं प्रजया ते समृद्ध्यताम् अस्मिनगृ हे गार्हपत्याय जागृहि । एना पत्या तन्व संसृजस्वाधा जिव्री विदथमावदाथ ।। ऋ० १०। ८५। २७

यह बात बिल्कुल स्पष्ट रूप में कही गई है। जैसे कि श्री हरदत्ताचार्य ने इस मन्त्र की व्याख्या में लिखा है.—

गृहं प्रवेश्यमाना वधूरभिधेया (एना) अनेन मया (पत्या) तन्वम् शरीरम् आत्मीयं (ससृजस्व) संयोजय मा परिष्वजेथा इत्यर्थः। एवमुक्तेन प्रकारेण यौवनम् अनुनीय (अथ) अनन्तर (जिव्री) जीर्णौ सन्तौ आवादम्पती (विदथम्) यज्ञनामैतत् । यज्ञम् (आवदाथः) आवदाव श्रौतस्मार्त कर्म विषया कथा कीर्तयिष्याव इत्यर्थः। आश्वलायन गृह्यमन्त्रव्याख्या श्री हरदत्ताचार्य कृता पृ० २१)

अर्थात् गृहप्रवेश समय में वर वधू को सम्बोधित करते हुए कहता है तुम इस घर की स्वामिनी बन कर रहो। मुझ पति के साथ संयुक्त होओ और इस प्रकार युवावस्था को व्यतीत करके हम दोनों वृद्धावस्था में श्रौत स्मार्त यज्ञ कर्म विषयक कथा का कीर्तन करेंगे । अर्थात् औरों को उपदेश करेंगे। यही मन्त्र अथर्व १४।१।२१ में "एनापत्या तन्वं संसृशस्वाथ जिर्विर्विदथमा वदासि" इस थोड़े पाठ भेद से आया है । उस में भी भाव उपर्युक्त है। ये मन्त्र स्त्री को न केवल वैदिक यज्ञ के स्वयम् अनुष्ठान करने का बल्कि अनुभव के पश्चात् विशेषत' वृद्धावस्था में पौरोहित्य का भी अधिकार देते हैं । इस विषय में निम्न लिखित ऐतिहासिक उदाहरण भी यहां उल्लेखनीय हैं।

आश्वलायन गृह्यसूत्र ३।४ में गार्गी वाचक्नवी, वडवा, प्रातीथेयी सुलभा, मैत्रेयी इत्यादि की गणना आचार्य गण में करते हुए इस प्रकार के शब्द आये हैं:—

अथ ऋषयः शतर्चिनो माध्यमा गृत्समदो विश्वामित्रो वामदेवः · गार्गीवाचक्नवीवडवा प्रातिथेयी सुलभा मैत्रेयी ये चान्ये आचार्यास्ते सर्वेतृप्यन्तु इति ।।

हरदत्ताचार्यकृत व्याख्या में लिखा है कि 'गार्ग्यादयो ब्रह्मवादिन्यः उपनिषत्सु प्रसिद्धाः ।।

(गृह्यसूत्रमन्त्र व्याख्या पृ० १६८)

अर्थात् गार्गी आदि ब्रह्मवादिनियां उपनिषदों में प्रसिद्ध हैं। आचार्यका लक्षण उपनीय तुयः शिष्यं, वेदमध्यापयेद्द्विजः। सकल्पं सरहस्यंच, तमाचार्य प्रचक्षते॥ ऐसा मनुस्मृति २।१४० में बतलाया गया है अर्थात् जो शिष्य वर्ग का उपनयन संस्कार कराकर कल्प रहस्य सहित वेद पढ़ावे वह आचार्य कहाता है। गार्गी मैत्रेयीसुलभा आदि की आचार्य गण में गणना से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि ये शिष्याओं का उपनयनादि संस्कार कराकर उन्हें वेद पढ़ाती थीं।

इस विषय में मनुस्मृति ११।३६ का निम्न श्लोक विशेष उल्लेखनीय है जिसमें कहा है—

न वै कन्या न युवतिर्नाल्पविद्यो न बालिशः।
होता स्यादग्नि होत्रस्य, नार्तो नासंस्कृतस्तथा ॥

अर्थात्—कन्या, युवति, थोड़ी विद्यावाला पुरुष, मूर्ख, रोगी और उपनयनादि संस्कार रहित पुरुष ये अग्निहोत्र के होता न बनें। इसका स्पष्ट अर्थ निकलता है कि अनुभव प्राप्त वृद्ध विदुषी स्त्रिया होतृकर्म (पौरोहित्य) करा सकती हैं। यह वचन 'अथर्जिर्विविदथमावदाथ.।'

इत्यादि ऊपर उद्धृत वेद मन्त्रो के अनुकूल होने के कारण मान्य और इसके विपरीत वर्तमान मनुस्मृति तथा अन्य स्मृतियो में पाये जाने वाले वचन सर्वथा अमान्य हैं क्योकि 'श्रुतिस्मृत्योर्विरोधे तु, श्रुतिरेव गरीयसी।"

अर्थात्—वेद और स्मृति का विरोध होने पर वेद का वचन ही प्रामाणिक है स्मृति का नहीं। मनुस्मृति के ऐसे वेद विरुद्ध वचनों को भी प्रक्षिप्त ही समझना सर्वथा उचित है जैसे कि स्वयं मनु महाराज ने कहा है—

या वेदा बाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः।
सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य,तमोनिष्ठा हि ताः स्मृता.॥
उत्पद्यन्ते च्यवन्ते च, यान्यतोऽन्यानि कानिचित्।
तान्यर्वाक् कालिकतया, निष्फलान्यनृतानि च ॥
(मनु०।७५-६६)

अर्थात्—जो वेद विरुद्ध स्मृति वचनादि हैं वे अन्धकार में ले जाने वाले, अर्वाचीन, निष्फल, असत्य हैं।

जो मान्य श्री पं० मालवीय जी आदि पुराणों में आस्था रखते हैं उनमें भी अनेक ब्रह्मवादिनियों का वर्णन आता है (जिनके लिये तत्र ब्रह्मवादिनीनाम् उपनयनं वेदाध्ययनम् आदि यम हारीतादि स्मृतियों में बताया गया है) यथा भागवत स्क० ४ अ० १ में—

तेभ्यो दधार कन्ये द्वे,
वयुना धारिणीं स्वधा।
उभे ते ब्रह्मवादिन्यौ,
ज्ञान विज्ञान पारगे॥

विष्णुपुराण अंश १ अध्याय १० में
तेभ्यः स्वधा सुते जज्ञे, मेनां वै धारिणीं तथा।
ते उभे ब्रह्मवादिन्यौ, योगिन्यौ चाप्युभे द्विजे॥

यही श्लोक मार्कण्डेय पुराण अ० ५२ में भी आया है। इन श्लोकों में मेना, (वयुना) धारिणी नाम्नी स्वधा की पुत्रियों को ब्रह्मवादिनी, ज्ञान विज्ञान पारगा तथा योगिनी बताया गया है। वेदवती का उदाहरण मै ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रति खण्ड अ० १४ से नव ४५ के सार्वदेशिक में उद्धृत कर चुका हूँ जहा लिखा है कि

सतत मूर्तिमन्तश्च वेदाश्चत्वार एव च।
सन्ति यस्याश्च जिह्वाग्रे, साथ वेद वती स्मृता॥

अर्थात् चारो वेद कण्ठस्थ होने के कारण कुशाध्वज राजा की पुत्री का नाम वेदवती प्रसिद्ध हो गया था। पौराणिक भाष्यकारों के अनुसारतो वेदों का मुख्य विषय ही कर्मकाण्ड का प्रतिपादन है फिर उसके अध्ययन अध्यापन का निषेध पौराणिक विद्वान् कैसे कर सकते हैं? शिवपुराण रुद्र संहिता पार्वतीख ४७ में दुर्गादेवी के यज्ञोपवीत ग्रहण का इस प्रकार वर्णन आया है।

ततः शैलवरः सोऽपि, प्रीत्या दुर्गोपवीतकम्।
कारयामास सोत्साहं, वेदमन्त्रैः शिवस्य च॥

अर्थात् हिमालय ने प्रेम से वेद मन्त्रों द्वारा शिवजी और दुर्गा का यज्ञोपवीत करवाया। इतना ही नहीं, बल्कि शिव पुराण कोटि रुद्र संहिता अ० १३ में पार्वती जी के अपने पुत्र को यज्ञोपवीत देने का प्रतिपादन है यथा

ततो घृतस्नानं कृत्वा, पुत्रस्य गिरिजा स्वयम् ।
त्रिरावृत्तोपवीतं च, ग्रन्थिनैकेन, संयुतम् ॥
सुदर्शनाय पुत्राय, ददौ प्रीत्या तदम्बिका ।
उद्दिश्य शिवगायत्रीं, षोडशाक्षरसंयुताम् ॥

इस प्रकार न केवल वेदादि सत्य शास्त्रों के अनुसार बल्कि पुराणों के वेदानुकूल भागों के अनुसार भी स्त्रियों का वैदिक कर्म काण्ड मे अधिकार स्पष्ट सिद्ध होता है उसके अध्ययन अध्यापन तथा अनुष्ठान से उनको वञ्चित करना सर्वथा अनुचित और अशास्त्रीय है। हिन्दू विश्व-विद्यालय के अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे वैदिक कर्मकाण्ड में स्त्रियो के अधिकार को उपर्युक्त प्रमाणानुसार स्वीकार करके श्री कल्याणी देवी के धर्म विज्ञान विद्यालय में प्रवेश की अनुमति दें अन्यथा सब वैदिक धर्म प्रेमियो को उनके विरुद्ध प्रबल आन्दोलन करने को बाधित होना पड़ेगा।

साहित्य समीक्षा

हमारी राष्ट्रभाषा

लेखक—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति,
पृष्ठ संख्या २६, मूल्य ≥)

प्रकाशक—मंत्री केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति श्रद्धानन्द बाजार देहली। छपाई, सफाई अच्छी मू०≥)

इस पुस्तिका मे विद्वान् लेखक ने राष्ट्रभाषा के महत्त्व पूर्ण विषय पर बड़ी योग्यता से विचार किया है।

लेखक ने राष्ट्र भाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में यह स्थापना की है कि प्रान्तीय भाषाओ के सस्कृत-प्रधान होने के कारण अन्तः प्रान्तीय भाषा या राष्ट्रभाषा भी सस्कृत-प्रधान ही होनी चाहिए। इस स्थापना की पुष्टि में और उदाहरण प्रचुर मात्रा में उपस्थित किये गये हैं। कृत्रिम रूप से, उर्दू और फारसी के शब्दों को भर कर और संस्कृत के सामान्य प्रयोग मे आने वाले शब्दो का बहिष्कार कर के, भाषा घड़ने की प्रवृत्ति की लेखक ने निन्दा की है। पुस्तक वर्तमान हिन्दी प्रसार आन्दोलन मे बहुत सहायक सिद्ध होगी।

रामगोपाल विद्यालंकार
सम्पादक "अर्जुन"

नैमित्तिक वैदिक पाठ

लेखक—स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी अध्यक्ष दयानन्द मठ दीनानगर। प्रकाशक—स्वा-वेदानन्दजी तीर्थ अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक सस्थान लाहौर मूल्य =)

इस छोटी सी पुस्तिका में उठने, सोने, चलने नहाने, खाने, दूध पीने, वस्त्र पहरने तथा क्षौर कराने आदि के समय किन वेद मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिये तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को अपने कर्तव्य पालनार्थ किन विशेष मन्त्रों से प्रार्थना करनी चाहिये इस बात को अर्थ सहित बताया गया है जो वैदिक आर्य जीवन बनाने की दृष्टि से विशेष उपयोगी है। इसमें २,३ बातें हमे कुछ विचित्र प्रतीत हुई हैं एक तो 'तेजोऽसि तेजो मयि धेहि' इस सुप्रसिद्ध प्रार्थना मन्त्र को केवल शूद्रों के लिये पठनीय क्यों माना गया है यह हमें ज्ञात नहीं हो सका। वस्त्र पहनते समय जिस मंत्र का उल्लेख किया गया है वह 'वासो यत् पत्नीभिरुतं तन्नः स्योनमुपस्पृशात्' मन्त्र केवल गृहस्थों के लिये उपयोगी हो सकता है अन्याश्रमियो के लिये नहीं।

ध० दे०

नया ससार—लेखक श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक—आर्य साहित्य सदन देहली शहादरा मूल्य ≥)

इस छोटी सी पुस्तिका में संसार की वर्तमान शोचनीय अवस्था का चित्रण करते हुए उसके सुधारार्थ आर्य सस्कृति और वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था के आदर्श का संक्षिप्त विवेचन किया गया है। इस आवश्यक विषय पर वस्तुतः विस्तृत तुलनात्मक ग्रन्थ की आवश्यकता है पर उस की सक्षिप्त रूप रेखा इस पुस्तिका मे सर्व साधारण के विचारार्थ दी गई है जो अच्छी उपयुक्त है।

ध० दे०

वरकी अवश्यकता

एक १६ वर्षीय कन्या के लिये जो कन्या गुरुकुल हाथरस की स्नातिका है एक सुयोग्य वर की आवश्यकता है। कन्या के पिता हैदराबाद राज्य में एक प्रसिद्ध वैद्य हैं। वर का किसी रोजगार में लगा होना और किसी प्रामाणिक गुरुकुल का स्नातक होना आवश्यक है। पत्र व्यवहार का पता मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

सम्पादकीय

महर्षि दयानन्द और अन्य आचार्य

मूर्तिपूजा विषयक विचार

शिवरात्रि को (जो इस वर्ष २ मार्चको पड़ती है) हम आर्य ऋषिबोधोत्सव के नाम से मनाते हैं क्योकि इसी रात की सुप्रसिद्ध घटना ने बालक मूल जी के आन्तरिक नेत्र खोल दिये थे और उन के मन मे सच्चे शिव की तलाश की उत्कट इच्छा उत्पन्न करदी थी। अत: एक निराकार, सर्वव्यापक शिव (शान्तिमय भगवान्) की उपासना और मूर्ति पूजादि अवैदिक हानिकारक प्रथाओ के त्याग को ही शिवरात्रि का मुख्य सन्देश कहा जा सकता है। हम पाठको की सूचनार्थ इस मूर्ति पूजा और निराकार की मानस पूजा के विषय मे श्री शङ्कराचार्य जी और श्री स्वामी आनन्दतीर्थ (श्री मध्वाचार्य) जैसे सुप्रसिद्ध मध्यकालीन आचार्यों के ग्रन्थो से कुछ उद्धरण देना चाहते हैं जिन से महर्षि दयानन्द जी के इस विषयक मन्तव्य की प्रबल पुष्टि होती है।

श्री शङ्कराचार्य जी निर्गुण मानस पूजा नामक पुस्तक में प्रचलित पोडशोपचार पूजा का खण्डन करते हुए यों लिखते हैं—

"पूर्णस्यावाहनं कुत्र, सर्वाधारस्य चासनम।
स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च, शुद्धस्याचमनं कुत: ॥ २
निर्मलस्य कुतः स्नानं, वस्त्रं विश्वोदरस्य च ॥ ३
निर्लेपस्य कुतो गन्ध:, पुष्प निर्वासनस्य च।
निर्विशेषस्य का भूषा, कोऽलङ्कारो निराकृतेः ॥४
नित्यतृप्तस्य नैवेद्यं, ताम्बूल च कुतो विभोः।
स्वयं प्रकाशमानस्य, कुतो नीराजनं विभोः।
अन्तर्बहिश्च पूर्णस्य, कुतो निर्वासनंभवेत् ? ॥५
निरञ्जनस्यकिंधूपैः, दीपैर्वा सर्व साक्षिणः।
निजानन्दैक तृप्तस्य, नैवेद्यं कि भवेदिह ? ॥६
स्वय प्रकाशचिद्रूपो योऽसावर्कादिभासक.।
गीयते श्रुतिभिस्तस्य, नीराजनेविधि: कुतः ॥ ७
प्रदक्षिणमनन्तस्य, प्रमाणोऽद्वय वस्तुनः ॥
अन्तर्बहि. संस्थितस्य, उद्वासनविधिः कुतः ॥ ८

ये श्लोक वाणी विलास प्रेस श्रीरंगम् में मुद्रित श्री शङ्कराचार्य जी के समस्त ग्रन्थो की सख्या १८ के पृ० १०७-१०८ से यहा उद्धृत किये गये हैं। बृहत्स्तोत्र रत्नाकर मे भी ये श्लोक पाये जाते हैं।

इन श्लोको का भावार्थ यह है कि जो भगवान् सर्वत्र पूर्ण है उसका आवाहन कहा किया जा सकता है ? सर्वथा स्वच्छ भगवान् को पाद्य, अर्घ्य, आचमनादि क्यो कराये जाएँ ? निर्मल भगवान् को स्नान, सर्व व्यापक को वस्त्र, निर्लेप को गन्ध, वासनारहित को पुष्प, निराकार को भूषण, नित्य तृप्त को नैवेद्य (भोग) लगाना, विभु परमात्मा को ताम्बूल खिलाना, स्वय प्रकाशमान परमात्मा की आरती, अन्दर बाहर सर्वत्र पूर्ण का निर्वासन अथवा 'गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ' इत्यादि रूप से विसर्जन, सूर्य चन्द्रादि के प्रकाशक

परमेश्वर की धूपदीपादि द्वारा आरती, अनन्त परमात्मा की प्रदक्षिणा इन सब का क्या प्रयोजन है ? इनकी क्या आवश्यकता है इत्यादि। पाठक महानुभाव देखें कि षोडशोपचार पूजा का यह कितना स्पष्ट खंडन है तथापि आश्चर्य की बात है कि श्री शङ्कराचार्य जी के अनुयायी मूर्ति पूजा करते हैं और शृङ्गेरी, द्वारका, गोवर्धन आदि के सब शङ्कर मठों में मूर्ति पूजा की जाती है जिस का विधान वे लोग श्री शङ्कराचार्य जी द्वारा निर्मित कई स्तोत्रो तथा लेखो में बताते हैं। इसी प्रकार सुप्रसिद्ध द्वैतवादी आचार्य श्री स्वामी आनन्दतीर्थ (श्री मध्वाचार्य) ने

न ह्यचेतनकं किञ्चिन, फलद स्यात्कदाचन।
तस्माद्चेतनापासा, न कुर्यात् क्वापि कश्चन॥
न चासत्या न चायोग्या, यदीच्छेदुत्तम फलम्॥

इन श्लोको को अपने छान्दोग्योपनिषद् ७-१४ के भाष्य में उपासना लक्षण नामक किसी प्राचीन ग्रन्थ से उद्धृत किया है जिसमें बताया गया है कि अचेतन (जड) वस्तु की उपासना से कोई फल नहीं मिलता। इसलिये किसी को कभी जड़ की तथा असत्य और अयोग्य वस्तु की उपासना नहीं करनी चाहिये।

इसी प्रकार छान्दोग्य भाष्य में ही सामसहिता नामक प्राचीन ग्रन्थ से निम्न श्लोक उद्धृत किया गया है। जो मूर्ति पूजा का प्रबल खण्डन करता है—

अचेतनमयोग्यं च, तथैवातात्विकं च यत्।
नोपासीत परोऽनर्थ, स्यात्तथोपासनाकृत॥

(सर्गमूल पृ० ६३०)

अर्थात—जो वस्तु अचेतन (जड़) अयोग्य और अयथार्थ है उसकी कभी उपासना नहीं करनी चाहिये। इस प्रकार उपासना करने से बड़ा अनर्थ होता है। इसी आशय का वचन सर्व मूल पृष्ठ ६३० छान्दोग्य भाष्य में श्री स्वामी आनन्दतीर्थ जी ने 'सकर्षणसूत्र' नामक प्राचीन ग्रन्थ से उद्धृत किया है

'अचेतनासत्यायोग्यान्यनुपास्यान्यफलत्व विपर्ययाभ्याम्।'

अर्थात्—अचेतन, असत्य और अयोग्य वस्तुओ की उपासना नहीं करनी चाहिये क्योंकि इससे कोई लाभ नहीं होता बल्कि इसके विपरीत हानि होती है।

इस प्रकार प्राचीन ग्रन्थों के प्रमाण देकर जिन स्वामी आनन्दतीर्थ जी ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया उनके सब अनुयायी मूर्ति पूजा करते और उनके मठो मे मूर्ति पूजा प्रतिदिन बड़े समारोह से की जाती है जिसके लिये वे उन के ग्रन्थो से 'प्रतिमास्वप्रबुद्धानाम' इत्यादि प्रमाण भी उद्धृत करने का साहस करते और यहा तक कहते हैं कि उन्होने स्वयं रजतपीठपुर (उडपी) में श्रीकृष्ण की मूर्ति की स्थापना की थी यद्यपि हमे इसकी सत्यता में बड़ा सन्देह है। कुछ भी हो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जिस निर्भयता और साहस के साथ महर्षि दयानन्द ने मूर्ति पूजनादि 'न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद् यश' (यजु० ३२।३) आदि वैदिक आदेश विरुद्ध प्रथाओं का प्रबल और स्पष्ट खण्डन किया उतनी दृढ़ता से करने का अन्य मध्यकालीन आचार्यों को साहस नहीं हुआ और उन प्रथाओं को ठीक न मानते हुए भी सम्भवत. उन्होंने समझौता कर लेना ही उचित समझा पर महर्षि दयानन्द ने 'घोरासो अनृतद्विषः' इस वैदिक लक्षणानुसार असत्य का घोर विरोध करके अपने देवत्व का

परिचय दिया। ऐसे देव पुरुष के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमे उनके बताये सत्य मार्ग पर दृढ़ता और निर्भयता के साथ चलना चाहिये और ऐसा करते हुए जो आपत्तिया आए उन्हे सहर्ष सहन करना चाहिये।

महात्मा गांधीजी का अद्भुत 'हिंदुस्तानी' प्रेमः—

गत बंगाल और मद्रास यात्रा मे महात्मा गाधी जी ने भारतीयों के विदेशी भाषा के प्रति मोह की निन्दा करते हुए जो इस आशय के शब्द कहे कि "यदि हम अंग्रेजी भाषा से अपना पिण्ड नही छुडाते तो हम लोग दासता की बेडियो में से एक अर्थात अंग्रेजी से अपने को मुक्त न कर सकेंगे। मै सोचता हूँ कि हमे अवश्य इस से अपना पिण्ड छुडा लेना चाहिये" उन की हम प्रशंसा करते हैं किन्तु उन्होने प्रत्येक भारतीय के लिए हिन्दी के साथ २ उर्दू सीखना भी आवश्यक बताते हुए जो यहा तक कह डाला कि जो उर्दू नहीं सीखना चाहता उसे स्वराज्य का प्रेम भी नहीं तथा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (जिस का नाम अब उन्होंने द० भा० हिन्दुस्तानी प्रचार सभा रख दिया है) मद्रास के रजत जयन्ती महोत्सव के प्रधान रूप से भाषण देते हुए उन्होने प्रचारको से जो यह बात कही कि तुम्हें अब ज्ञात हो गया होगा कि हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी नहीं बल्कि हिन्दुस्तानी है' उस से हम सर्वथा असहमत हैं। हमें निश्चय है कि इस प्रकार के प्रचार का परिणाम यह होगा कि महात्मा जी के भक्त हिन्दू तो उर्दू सीखना अपना कर्तव्य समझने लगेंगे किन्तु मुसलमानो में से हजार में से एक भी कठिनाई से होगा जो हिन्दी और देवनागरी लिपि को सीखना प्रारम्भ कर दे जिस से उर्दू बोलने और जानने वालो की ही संख्या वृद्धि के कारण उसके राष्ट्रभाषा होने का डकेकी चोटसे दावा किया जाएगा। हमें स्पष्ट प्रतीत होता है कि महात्मा गाधी जी मुसलमान भाइयों को भी अपने साथ लेने के लिए जिस हिन्दुस्तानी के राष्ट्र भाषा होने की घोषणा कर रहे हैं मुसलमान उससे उर्दू का ही ग्रहण करते हैं उदाहरणार्थ 'आल इन्डिया मुस्लिम ऐज्यूकेशनल कान्फ्रेंस, में जो जुलाई सन् १९३७ में अलीगढ़ मे हुई यह प्रस्ताव स्वीकृत किया गया कि "उर्दू की जगह 'हिन्दुस्तानी' नाम चालू किया जाए। साथ ही उसमे कहा गया कि यह समझना भी दुरुस्त नही कि इस तजवीज़ के पेश करने वालो का यह मक्सद है कि हम अपनी ज़बान मे कोई ऐसी तबदीली करलें कि जिस से वह हिन्दी के क़रीब बन जाए। हाशा व कला इस किस्म की कोई बात नही है बल्कि बईन उसीउर्दू, उसी ज़बान उसी बोलचाल, को जो हम बोलते हैं हम हिन्दुस्तानी कहते हैं।" (देखो अलीगढ़ मैगजीन जुलाई सन् १९३७) वस्तुत. संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही हमारी राष्ट्र भाषा है क्योंकि भारत मे लगभग ७० प्रतिशत तक लोग इस को समझ सकते हैं और बगाली, गुजराती, मराठी, मारवाड़ी, पजाबी, कन्नड़, तिलगु, मयालम, तामिल इत्यादि सभी प्रान्तीय भाषाओ में संस्कृत शब्दो का विशेष प्रयोग होता है जिन का हिन्दी मे भी साधारणतया प्रयोग किया जाता है जैसे कि 'हमारी राष्ट्र भाषा' लघु नामक पुस्तकमे हमने इन सब भाषाओ के उदाहरण देकर सप्रमाण सिद्ध किया है। इस विषय को जानने के उत्सुक सज्जनो को केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति श्रद्धानन्द बाजार देहली से ४ आ० भेज कर पुस्तक मॅगवा कर

पढ़नी चाहिए। महात्मा गान्धी जी के 'हिन्दुस्तानी प्रचार' को हम कई दृष्टियों से हानिकारक समझते हैं और उनसे सानुरोध निवेदन करते हैं कि वे वस्तु स्थिति को समझते हुए पूर्ववत् संस्कृत निष्ठ हिन्दी को ही राष्ट्र भाषा के रूप में घोषित करें।

सरदार पटेल और पं० नेहरू जी की प्रशंसनीय घोषणाः—

गत मास सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता सर्दार पटेल ने (जिन के इस वर्ष राष्ट्रपति चुने जाने की प्रबल आशा है) अहमदाबाद में भाषण देते हुए स्पष्ट घोषणा की कि 'पाकिस्तान देना ब्रिटिश सरकार के हाथ में नहीं है। यदि पाकिस्तान प्राप्त करना ही हो तो हिन्दू मुसलमानों के घरेलू युद्ध के विना वह कभी सम्भव न होगा। कांग्रेस अब लीग के द्वार नही खटखटाएगी। इस ने अनेक बार लीग के साथ समझौता करने का यत्न किया है पर इस को धक्के दिये गये हैं। कांग्रेस ने निश्चय कर लिया है कि जब तक लीग अपनी नीति में परिवर्तन न कर ले तब तक वह उसके पास न जाएगी। लीग जो कुछ चाहे जबर्दस्ती लेने का यत्न कर सकती है।" इसी प्रकार श्री प० जवाहर लालजी ने ६ जनवरी को शिकारपुर (सिन्ध) में घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार तथा लीग के सहमत हो जाने तथा संयुक्त प्रयास करने पर भी पाकिस्तान की स्थापना न हो सकेगी। हिन्दुओं और सिक्खो को पृथक रहने के लिये बाध्य नहीं किया जा सकता। ऐसी ही स्पष्ट घोषणा श्री गोविन्द वल्लभ पन्त तथा डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने की है जिस के लिए हम उनका अभिनन्दन करते हैं और उन से अनुरोध करते हैं कि वे किसी भी अवस्था में पाकिस्तान के आधार पर लीग से समझौते के लिए तैयार न हों। सम्भव है कि सर आगाखां जो कांग्रेस और लीग में समझौता कराने के लिये महात्मा गाधी जी से २० फरवरी को मिल रहे हैं पाकिस्तान की स्वीकृति के लिये प्रयत्न करें किन्तु महात्मा जी तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं को मुस्लिम लीग की इस तथा अन्य अराष्ट्रीय मागों की पूर्ति के आधार पर समझौते स स्पष्ट इन्कार कर देना चाहिए।

एक रोमांचकारिणी दुर्घटनाः—

गत सितम्बर मास मे देहली मे एक आर्य परिवार की कन्या का वैदिक रीति से विवाह संस्कार कराया गया था। वह कन्या सन्ध्या, हवन, स्वाध्यायादि प्रति दिन करने वाली तथा अत्यन्त शान्त स्वभाव की थी। विवाह सम्बन्ध का निश्चय करते हुए सम्बन्धियो ने अपनी जाति बिरादरी और वर की जीविकादि का ही विचार किया था अन्य बातो का नहीं। दुर्भाग्यवश विवाह के पश्चात् वह देवी जब पति के घर गई तो वहा उस ने मास, शराब आदि के प्रयोग को पाया। उसे सन्ध्या, हवन, स्वाध्यायादि की भी स्वतन्त्रता वर के पौराणिक सम्बन्धियो ने नहीं दी और इन कामो के करने से उसे रोका। इस प्रतिकूल वायुमण्डल ने उस देवी के स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डाला और वह बीमार पड़ गई। उसके मस्तिष्क में भी कुछ विकार हो गया और उस अवस्था में उसके मुख से हाय मास, हाय शराब, हाय अण्डे ऐसे ही शब्द निकलते रहे। वर के सम्बन्धियो ने समझा कि उस पर भूत सवार हो गया है और तब 'भूत' उतारने वाले सयाने को बुलाया गया जिसने बाल खींचने, जूतों और तथा चपेटो से उस देवी का 'सत्कार' करने आदि का आदेश दिया। वर के सम्बन्धियो ने

'भूत' भगाने के लिये वैसे ही किया। शान्ति देवी की अवस्था भयङ्कर रूप धारण कर गई तब उसे इर्विन हस्पताल मे प्रविष्ट किया गया जहा उस का गत मास देहावसान हो गया।

यह रोमाचकारिणी दुर्घटना प्रचलित जाति-भेद की बुराइयो को जिन से अनेक आर्य परिवार भी अपने को नहीं बचा सके प्रबल रूप से हमारे सन्मुख लाती है। यदि शान्ति देवी के सम्बन्धियो ने जातपात का विचार छोड़ कर उसका विवाह सम्बन्ध केवल गुणकर्म स्वभावानुसार किसी आर्य परिवार मे किया होता तो यह भयङ्कर परिणाम न होता। शान्ति देवी के इस 'बलिदान' ने उस के सम्बन्धियो की आखे खोल दी हैं और उन्हो ने अब निश्चय कर लिया है कि वे जात पात की दल दल मे नही फसे रहेंगे। इस विषयक क्रियात्मक उदाहरण भी वे शीघ्र जनता के सन्मुख रखने लगे हैं। हम समस्त आर्यों से अनुरोध करते हैं कि वे ऐसी रोमांचकारिणी दुर्घटनाओ से शिक्षा ग्रहण करें और 'जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ' के सदस्य बन कर समाज के लिये अत्यन्त हानिकारक जाति भेद की प्रथा का समूल नाश कर दें। इस के क्रियात्मक विनाश के बिना आर्य समाज की यथार्थ उन्नति हमे सम्भव नहीं प्रतीत होती।

हमारी विवशताः—

हमे खेद है कि सार्वदेशिकार्थ नियत काग़ज की राशि के अत्यन्त विलम्ब से ४ फ़रवरी को मिलने के कारण 'सार्वदेशिक' का यह अङ्क विलम्ब से प्रकाशित हो रहा है और जब तक वर्तमान सरकारी व्यवस्था में परिवर्तन न हो यह प्रत्येक अंग्रेजी मास की १५ ता० के लगभग प्रकाशित हुआ करेगा। कृपया पाठक नोट करलें और अपनी कृपा दृष्टि पूर्ववत् बनाये रक्खें।

ध० दे०

जाति-भेद निवारक आर्य परिवार संघ

नैतिक और आर्थिक सहयोग की अपील

जन्म गत जातिभेद (जात पात) की सर्वथा अशास्त्रीय और समाज के लिए अत्यन्त घातक प्रथा की भयङ्कर हानियो को देखते हुए उस के विरुद्ध प्रबल और संगठित आन्दोलन करने की आवश्यकता है इस से कोई विचार शील आर्य इन्कार नहीं कर सकता साथ ही सहयोग तथा सहानुभूति द्वारा आर्यो में परस्पर प्रेम तथा भ्रातृ भाव उत्पन्न करने और आर्य पुरुषों के परिवारों को सच्चा आर्य परिवार बनाने की आवश्यकता है जिसको सभी समाज के हितैषी अनुभव करते हैं इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये जाति-भेद निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना की गई है। इस आन्दोलन को प्रबल और अधिक संगठित बनाने के लिये विचार शील आर्य जनता के नैतिक और आर्थिक सहयोग की आवश्यकता है। यह संघ सुयोग्य प्रचारकों को रख कर तथा पुस्तक, पुस्तिकाओं और पत्रों द्वारा समस्त देश मे जाति-भेद के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन करके अतिरिक्त अन्तर्जातीय विवाहों की उचित व्यवस्था करना चाहता है और इस विषयक कार्य इसने प्रारम्भ कर दिया है। हम समस्त आर्य जनता से सानुरोध निवेदन करते हैं कि वे निम्न लिखित फार्म को भर कर इस संघ के सदस्य बनें तथा अन्य धनी मानी सज्जन विवाह तथा अन्य संस्कारो के अवसर पर इस संघ के कार्य को अधिक संगठित रूप में चलाने के लिये उदार आर्थिक सहायता दें। आर्थिक सहायता कोषाध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के पते पर भेजी जानी चाहिये।

गङ्गाप्रसाद एम० ए० रिटायर्ड चीफ जस्टिस
अध्यक्ष
धर्मदेव विद्यावाचस्पति—उपाध्यक्ष
आचार्य भद्रसेन—संचालक
जाति-भेद निवारक आर्य परिवार संघ।

पुस्तकें !

जिनके लिए जनता तड़प रही थी, अब फिर छप गई !

आर्य मुसाफिर—पं० लेखराम जी 'आर्य पथिक ग्रन्थावली' जिसने बेराम को शान्ति देवी बनाया, मतमतान्तरों के मल्लों को पछाड़ने की शक्ति जिसे पढ़ते ही आती है, पुरानी, किरानी, कुरानी, जैनी जिससे दहलते हैं, शास्त्रार्थ के शूर महारथी बनाने के लिए यह अलभ्य पुस्तक पढ़िये । मूल्य ६)

हिन्दी कुरान—मय आयतों और अर्थों के पढ़कर मुसलमानों और कठमुल्लों के छक्के छुड़ाइये मूल्य प्राप्य खण्डों का १।) १।) २) है। कुरान का कच्चा चिट्ठा।) इस्लाम की छानबीन ३।।)

विदुरनीति—जिसे प्रत्येक बच्चे और स्त्री पुरुष को पढ़ने का आदेश ऋषि दयानन्द ने दिया है व्यवहार और राजनीति की यह पुस्तक पारतोषिक मे काम आती है। मू० ।)

सनातन धर्म रहस्य—पुराणों में सनातन धर्म की कैसी मिट्टी पलीद की है यह जानकर के अखिलानन्द आदि का मुह बन्द कीजिए। मू० १)

काग्रेस की उदारनीति—मुसलामानों को सिर चढ़ाकर काग्रेस ने उन्हे पाकिस्तान का प्रश्न उठाने और हिन्दुओं को मिटाने का बीडा उठाया है उसका रहस्य । मू० ।)

Religions Intolerance

इस्लाम और ईसाई मतका बलपूर्वक प्रचार करने का ढंग और वैदिक आर्य सस्कृति का उपदेश द्वारा प्रचार मार्ग स्वामी श्रद्धानन्दजी ने अंग्रेजी में लिखा है। मू० =)

सगठन के फूल—हिन्दु सगठन द्वारा देश में किस प्रकार अपनी सस्कृति और स्वराज्य की सिद्धि होती है। यह पढ़ने योग्य पुस्तक है। मू० ।।=)

आजाद फौज—में लेखक श्री प० प्रेमशरणजी प्रणत ने सेना और उनके कार्यों का विवरण दिया है मू० २) नई छपाई है।

उपनिषद् प्रकाश—ससार को चकित कराने और अपूर्व अध्यात्म ज्ञान और वेदों का उपदेश देने वाली उपनिषदों का प्रकाश स्वामी दर्शनानन्दजी द्वारा डाला हुआ अपने ढग का शान्ति दायक अनुवाद । मू० ३)

नित्यकर्म पद्धति—यदि सन्ध्या में मन नही लगता तो नित्यकर्म पद्धति की दिन चर्या, स्वास्थ्य रक्षा, आसन प्राणयाम के नियम, सन्ध्या आदि पचयज्ञ इस पुस्तक के सहारे करिए । मू० ।-)

स्त्री शिक्षा—स्त्री शिक्षा का ढग विदुषियों के चारु चरित्र पुत्र पालन तथा अन्य स्त्रियोचित तथा गर्भ सम्बन्धी ज्ञातव्य विषय,बालकों का पालन और चेचक की बीमारी और गृह प्रबन्ध और स्त्रियों की उपासना आदि मू० ।।)

सजीवनी बूटी—ब्रह्मचर्य का उपदेश आल्हा में प्रत्येक आर्य और हिन्दू बालक को पढ़कर पराक्रमी बनावेगा। मू० ।।)

ब्रह्मचर्य जीवन—गुरुकुलों के अभाव तथा ब्रह्मचर्य व्रत के पालन की उपेक्षा के कारण आज स्कूली बच्चों मे महा अनर्थ फैल रहा है उसका समूल नाश करने के लिये यह पुस्तक बच्चों के हाथ में दीजिये । मूल्य १।)

महिला मगलाचार—विवाह, पुत्र जन्म, नाम करण, मुण्डन आदि अवसरों पर स्त्रियों के गाने योग्य भजन, प्रार्थना प्रभाती आदि । मूल्य ।।-)

ये पुस्तके थोड़ी थोड़ी है अत शीघ्र मंगाइये। प्रत्येक आर्य और आर्य समाज को अपनी छपाई एक मात्र आर्यो के प्रेस में भेजनी चाहिये।

प्रेम पुस्तकालय तथा प्रेम प्रेस, फुलट्टी बाज़ार, आगरा

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस", श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

Regd No L 121

म... ...न... ...र भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२ विदेशों में आर्य समाज	,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,	१।)
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाज का सूचा	,,	॥)
(६) मानव ... क इतिहास		
(७ बालगान		
(८) आर्य डायरेक्टरी		
(९) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर		
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण		
(११) आर्य वीर दल लेखमाला (श्री ओं		
(१२) धर्मपितृ परिचय (प० प्रियरत्न जी		
(१३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	
(१४) वैदिक सू विज्ञान	,	
(१५) वेद में असित शब्द	,,	
(१६) अथर्व वेद म देवकामा	,,	
(१७) वेद म दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	?
(१८) विमान शास्त्र	,,	~ ।~)॥
(१९) मातृत्व क और श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक		अ० १), स० १॥)
(२०) कथा माला	,,	॥।)
(२१) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		२।)
(२२) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२३) योग रहस्य		१)

(२४) उपनिषद् ईश ।=) केन ॥) कठ ॥), प्रश्न ।=) माण्डूक्य ≡), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥।) बृहदारण्यक २)

(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी —)

(४) श्री पुस्तकालय जी गुरुकुल कांगड़ी जि० सहारनपुर

(२६) वैदिक सन्ध्या रहस्य (श्री नारायण स्वामीजी ≈)॥

(२७) शहीदी पद्दिका ।~)

(२८) आर्य समाज मन्दिर चित्र ।)

(२९) इजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य ॥।≈)

(३०) भक्ति कुसुमाञ्जलि श्री प० धर्मदेवजी वि०वा० ॥।)

(३१) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी) ॥।)

(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी) १॥)

(३३) कुमुदनाचन्द्र (श्री प० मेधाव्रतजी) ४)

(३४) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी ≈)

(३५) स्वामी दयानन्द जीवन चरित्र (प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति) १॥)

(३६) दयानन्द (कविता) प० यशदत्त शास्त्री ।=)

(३७) ध्यान योग प्रकाश स्वामी लक्ष्मणानन्द जी १॥~)

(३८) सत्यार्थ प्रकाश गान(प० सत्यभूषणजी योगी) ।≈)

(३९) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)

(४०) भारतवर्ष में जाति भेद , ।)

(४१) सत्यार्थप्रकाश की सार्वभौमता —)

(४२) भारतीय डाकघरों में हिन्दी का अपमान क्यों? —)॥

(४३) हम और हमारे समालोचक

(४४) ... ...की रक्षा





१९४६ ई०
२००२ सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश ७शि

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २२ | मार्च १९४६ ई० | फाल्गुन २००२ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क १

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् त्वं नृचक्षा असि सोम विश्वतः पवमान वृषभ ता विधावसि । स नः पवस्व वसुमद् हिरण्यवद् वयं स्याम भुवनेषु राजसे ॥

ऋ० ९।८६।३८। साम० मं० ९५६

शब्दार्थ—(सोम) हे शान्त स्वरूप प्रभो! (त्व) तू (नृचक्षा असि) समस्त मनुष्यों का द्रष्टा, सबको सन्मार्ग का उपदेश करने वाला है, हे (पवमान) सबको पवित्र करने वाले (वृषभ) सुखों की वर्षा करने वाले हे सर्वोत्तम परमेश्वर! तू (ता) उन सब लोकों को (विश्वत विधावसि) सब ओर से प्राप्त होता और पवित्र करता है (सः) वह तू (नः) हमें (वसुमन्) ज्ञानादि ऐश्वर्यों से युक्त कर और (हिरण्यवत्) सुवर्ण की तरह (पवस्व) पवित्र कर अथवा चमका। (वयम्) हम (भुवनेषु) सब लोकों में (राजसे) गुणों द्वारा प्रकाशमान होने के लिये (भवेम) समर्थ होवें।

विनय—हे सर्व व्यापक सर्वज्ञ सुखवर्षक प्रभो! आप समस्त संसार के शासक हैं। आप सबको पवित्र करने वाले हैं। आप हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें कि हम सर्वथा पवित्र बनकर अपने श्रेष्ठ गुणों के कारण सर्वत्र चमकने और शासन करने वाले हों। आप हमें ज्ञानादि ऐश्वर्य से सम्पन्न करें।

वेदोपदेश

सामाजिक उन्नति के तत्व

(१) ओ३म् अश्मन्वती रीयते संरभध्वम् उत्तिष्ठत प्रतरता सखाय. । अत्रा जहाम ये असन्नशेवा. शिवान् वयमुत तरेमाभि वाजान् ॥ ऋ० १० । ५३ । ८

(२) ओ३म् उत्तिष्ठत प्रतरता सखायो ऽश्मन्वती स्यन्दत इयम् । अत्रा जहीत ये असन्नशिवाः शिवान् स्योनानुत्तरेमाभि वाचान ॥ अथर्व १२ । २ । २७

(३) ओ३म् वैश्वदेवीं वर्चस आरभध्व शुद्धा भवन्त.शुचय. पावका । अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमा सर्ववीरा मदेम ॥ अथर्व १२ । २ । २८

(४) ओ३म् उद्यान ते पुरुष नावयान जीवातुन्ते दक्षतातिं करोमि । आहि रोहेममसृत सुख रथम् अथ जिर्वि विदथमावदासि ॥ अथर्व०

शब्दार्थ —(अश्मन्वती रीयते) पत्थरों और शिलाओं से भरी नदी के समान यह ससार नदी बह रही है इसलिये हे (सखाय) मित्रो ! (उत्तिष्ठत) उठो (सरभध्वम) सब मिलकर अपने कार्य उत्तमता से प्रारम्भ करो (प्रतरत) इस प्रकार इस नदी को तैर जाओ । (ये अशेवा. असन) जो दु ख देने वाले दुर्गुण वा दुर्व्यसन हैं उन को (अत्रा जहाम) यहीं छोड़ देते है (शिवान वाजान अभि) शान्ति दायक ज्ञान और बल को लक्ष्य बना कर उसकी प्राप्ति के लिए (उत्तरेम) इस नदी के पार चले जाएँ —इसे तैर जाएं।

(२) पूर्वार्ध—ऋग्वेद के मन्त्र समान है (ये अशिवा असन्) जो अकल्याण वा अहित करने वाले दुर्गुण है उनको (अत्रा जहीत) यहीं छोड़ दो । (शिवान्) कल्याणकारी (स्योनान्) सुख दायक (वाचान्) वाणी के व्यवहार तथा ज्ञान, बल की प्राप्ति का उद्देश्य रख कर (उत्तरेम) हम सब तैर जाएँ ।

(३) हे पुरुषो ! आप सब (शुचय.) शुद्ध वा मल रहित (भवन्त·) होते हुए (वर्चसे) तेज की प्राप्ति के लिये (वैश्वदेवीम आरभध्वम) सारे संसार के स्वामी परमात्मा की दी हुई इस वेदवाणी की कथा और उस प्रभु की उपासना का आरम्भ करो और हम सब (सर्ववीराः) सब प्रकार से बलवान बन कर (दुरिता पदानि) दुःख मे पार करने योग्य दुर्गम स्थानों या अवसरों को (अतिक्रामन्त·) पार करते हुए (शत हिमा मदेम) सौ वर्षों तक आनन्द से जीवन व्यतीत करे ।

(४) हे पुरुष (ते उद्यानम्) तेरी सदा उन्नति हो (न अवयानम) अवनति न हो (ते जीवातुम) तेरे जीवन को उन्नत बनाने के लिये मै परमेश्वर (दक्षतातिं करोमि) बल का विस्तार करता हूँ, तुझे बल प्रदान करता हूँ। (इमं सुखं रथम हि आरोह) इस सुखमय शरीररूपी रथ पर तू निश्चय से चारो ओर से सवार हो जा (अथ) इस के पश्चात (जिर्वि·) वृद्ध वा अनुभवी हो कर (विदथम आवदासि) ज्ञान का सब को उपदेश कर ॥

व्याख्या—इन वेद मन्त्रो मे वैयक्तिक और सामाजिक उन्नति के तत्त्वो का बड़ी उत्तमता से

उपदेश किया गया है। इस संसार की उपमा एक पथरीली नदी से दी गई है क्योंकि इस मे शुभ कार्य करते हुए अनेक प्रकार की विघ्न बाधाएं उपस्थित होती हैं। मनुष्यों का कर्तव्य है कि उन विघ्न बाधाओं को देखकर वे भयभीत न हो जाएं किन्तु वीरता-पूर्वक उनका मुकाबला करें, आलस्य प्रमाद का परित्याग करके खड़े हो और परस्पर मित्रभाव को धारण करते हुए उस नदी के पार पहुच जाएं। यह तभी सम्भव है जब कि सब बुराइयो का परित्याग कर दिया जाय। उत्तम सुख दायक ज्ञान और बल की प्राप्ति का उद्देश्य बनाकर निरन्तर उस दिशा मे प्रयत्न किया जाए। अथर्व वेद १२।२।२६ मे 'वीरयध्व प्रतरता सखाय' ऐसा पाठ है जिसमे वीरो के समान पराक्रमशील होकर कार्य करो यह भाव और भी स्पष्ट है। (वेदो मे पाठ भेद अर्थ के स्पष्टीकरण के लिये तथा महत्त्व पूर्ण होते हैं यह इस मन्त्र के पाठ भेदों से स्पष्ट है) समाज व्यक्तियो से मिलकर बनता है जब तक व्यक्ति शुद्ध पवित्र न हो तब तक समाज के अन्दर भी पवित्रता नहीं आ सकती। इस लिये ऊपर उद्धृत तृतीय मन्त्र मे कहा गया है कि हे मनुष्यो! तुम सब मन वचन कर्म से पवित्र बनो। इस पवित्रता और तेज की प्राप्ति के लिए वैदिक ज्ञान का मनन करो और परम पवित्र परमात्मा की उपासना करो। इस प्रकार स्वयं पवित्र बन कर सब को पवित्र बनाओ। अग्नि के समान सब के दोषों और अपवित्रताओ का नाश करने वाले बनो। केवल पवित्र बनना और बनाना ही पर्याप्त नहीं है। अपनी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक शक्तियों का विकास करते हुए 'सर्ववीर' सब प्रकार से वीर बनना भी आवश्यक है ताकि सब बुराइयों और दु:खो से पार होकर मनुष्य कम से कम सौ वर्ष की आयु तक आनन्द पूर्वक जी सके।

चतुर्थ मन्त्र मे मनुष्य को सम्बोधन करते हुए उसे फिर सावधान किया गया है कि वह आगे ही आगे बढ़ता जाए। ऐसे काम न करे जिससे उसकी अवनति वा अधोगति हो जाए। परमात्मा का सच्चे और शुद्ध हृदय से ध्यान करने से बड़े अद्भुत बल की प्राप्ति होती है और जीवन उन्नत होता है, अतः सन्ध्योपासना का कभी परित्याग नहीं करना चाहिये। साथ ही शरीर की भी उपेक्षा न करनी चाहिये। यह भगवान् का दिया हुआ सुखमय रथ है जिस पर सवार होकर हमे शुभ कार्य करने हैं। इस शरीर को स्वस्थ और बलवान बनाना चाहिये तथा उसको अपने अधीन रखना चाहिये, ऐसा न हो कि इन्द्रिय मन आदि का मनुष्य दास बन जाए और इस प्रकार अपने को दु:खित तथा अवनत कर दे। इस तरह उन्नत और अनुभवी होकर मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह औरों को भी सच्चा ज्ञान देकर उन्नत करने का प्रयत्न करे।

इन वेद मन्त्रो मे वर्णित वैयक्तिक और सामाजिक उन्नति के तत्त्वो की ओर आर्यसमाज के सदस्य नर नारियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करते हुए हम उन से निवेदन करते हैं कि वे इन मन्त्रों का मनन करते हुए आत्म निरीक्षण करें और जो त्रुटिया उन्हें अपने अन्दर प्रतीत होती हो उन्हें दूर करने का प्रयत्न करें जिससे आर्य समाज की यथेष्ट उन्नति हो सके।

—धर्मदेव वि० वा०

अध्यात्म सुधा

मां को कभी न भूलूं

(कवयित्री—श्रीमती विद्यावती देवी जी धर्मपत्नी प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति देहली)

मेरी मा मेरी मा मेरी मा मेरी मा।
तुझे भूलू कभी ना, कभी ना कभी ना ।। ध्रुव

(१)

तेरी लख लख लीला न्यारी,
दिल की खिल जाए फुलवारी।
तन मन धन सब दू मैं वारी,
तुझे कभी भूलू ना ।।
तू ही है सच्चा महतारी।
तुझे कभी भूलू ना ।।

(२)

जो शुभ कर्म करू मैं दिन मे,
अर्पण कर दू तव चरणन मे।
समय बिताऊ नाम जपन मे,
तुझे कभी भूलू ना ।।

(३)

तेरे नाम की खोलू शाला,
जिसमें धुल जाए मन काला।
बन जाऊ मैं सरला बाला,
तुझे भी भूलू ना ।।
बन जा मेरे गल की माला।
तुझे कभी भूलूं ना ।।

वेदार्थ करने के भिन्न भिन्न प्रकार

(लेखक—आचार्य विश्वश्रवा जी वेदमन्दिर बरेली)

वेदों को अपौरुषेय ज्ञान या सर्व प्राचीन ग्रन्थ मानने वाले भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वान् या अन्य वेद के सम्बन्ध मे कुछ न कुछ लिखने वाले व्यक्ति भिन्न भिन्न शैलियो मे वेद मन्त्रो के अर्थ करते है। उनके विशेष पाच भेद हैं :—

१ मन्त्रो को देववाणी मे समझ कर अर्थ करने वाले।

(यह पक्ष महर्षि स्वा० दयानन्द सरस्वती का है)

२ मन्त्रो को संस्कृत भाषा मे समझ कर अर्थ करने वाले।

(यह पक्ष पौराणिको का है)

३ भाषा विज्ञान द्वारा मन्त्रों के अर्थ करने वाले।

(यह पक्ष विदेशी विद्वानो का तथा उनके अनुयायी भारतीयो का है)

४ मन्त्रो को इतिहास परक लगाने वाले।

(यह पक्ष पौराणिको तथा पाश्चात्यो का है)

५ तुक्कड़बाज।

(यह पक्ष शौकीन भाष्यकारो का है)

१, २-'देव वाणी और संस्कृतभाषा'

आरम्भ के दो पक्षों को मै एक साथ लेता हूँ।

देववाणी और संस्कृत भाषा भिन्न भिन्न हैं। दोनों में समानता होने के कारण लोग वेदो को संस्कृत भाषा में समझते हैं। समानता तो बहुत सी भाषाओं में हुआ करती है पर समानता होने से दोनो एक नहीं हो जाती।

शब्दों की समानता तो बहुत साधारण बात है कहीं कहीं पूरा श्लोक भी दो भाषाओ में एक जैसा हो जाता है इसमे आनन्दवर्धन का एक श्लोक निम्न प्रकार है—

महदेसुरसधम्मे तमवसमासगमागमाहरणे।
हरबहुसरणं तं चित्तमोहमवसरउमे सहसा॥

संस्कृत भाषा और प्राकृत भाषा दोनो में यह श्लोक एक जैसा ही है। संस्कृत मे—

महदे। सुरसन्धम्। मे। तम्। अव। समासङ्गम्। आगमाहरणे। हर। बहुसरणम्। तम्। चित्तमोहम्। अवसरे। उमे। सहसा।

अर्थात्—हे देवि! आनन्दप्रद वेदविद्योपार्जन के विषय मे मेरी आसक्ति की रक्षा कीजिये जिससे मै देवसायुज्य को प्राप्त हो जाऊं और मोह नाश का जो उचित समय हो उस समय अनेक प्रकार की गति वाले चित्त के मोह को दूर करना।

प्राकृत मे—

मह। देसु। रसम्। धम्मे। तमवसम्। आसम्। गमागमा। हर। णे। हरबहु। सरणम्। तम्। चित्तमोहम्। अवसरउ। मे। सहसा।

अर्थात्—हे देवि! मुझे धर्म मे प्रीति दीजिये, मेरी तमोगुणयुक्त आशा को ससार से दूर करदे। मै तेरी शरण हूँ। मेरा चित्तमोह शीघ्र दूर हो जावे। यहा देखने मे समानता होने पर भी अर्थ भिन्न है। सहस्रो ऐसे शब्द हैं जो संस्कृत और देववाणी मे देखने मे समान हैं पर अर्थ भिन्न भिन्न हैं। जैसे—

शब्द	संस्कृत भाषा में अर्थ	देववाणी में अर्थ
अहि	साप	मेघ
अद्रि	पहाड़	मेघ
धारा	जल प्रवाह	वाणी
अहिल्या	ऋषि पत्नी	रात्रि
जमदग्नि	एक ऋषि	आख

देव वाणी मे वेद हैं, संस्कृत भाषा में नहीं। दोनो के कोष (Dictionaries) पृथक् पृथक् हैं। देववाणी के कोष निघण्टु आदि। देववाणी और संस्कृत भाषा सृष्टि के आरम्भ से ही चली आ रही हैं जैसा लिखा है कि—

तस्माद्ब्राह्मणा उभयीं वाचं वदन्ति या देवानां या च मानुषाणाम्।

देव वाणी बोलचाल की भाषा कभी नहीं हुई और संस्कृत भाषा आर्यावर्त मे मातृ-भाषा होकर आरम्भ से रही है। आर्यजाति के आलस्य प्रमाद और बुद्धूपन के कारण संस्कृत मातृ-भाषा नहीं हो पाती।

"दोनों के संमिश्रण से वेदार्थ पर प्रभाव"

विष्णु शब्द का अर्थ देववाणी मे सूर्य है देखो निघण्टु ५।६॥ और निरुक्त १२। १९। समुद्र शब्द का अर्थ देव वाणी मे आकाश भी है देखो निघण्टु १। ३॥

सुपर्ण शब्द का अर्थ देववाणी में किरण है देखो निघण्टु १। ५

अहि शब्द का अर्थ देववाणी मे मेघ है देखो—निघण्टु १। १०

अर्थात—(विष्णु) सूर्य (समुद्र) आकाश में वर्तमान है जो (सुपर्ण) किरणों द्वारा हमारे पास आता है। किरण ही उसके वाहन हैं। ये किरणें (अहि) बादलों को छिन्न भिन्न करती हैं अर्थात् बादलों को खाती हैं।

संस्कृत भाषा मे 'समुद्र' का अर्थ सागर ही है और 'सुपर्ण' का अर्थ गरुड पक्षी तथा 'अहि' का अर्थ साप है।

अर्थात् एक ऐसा विष्णु देवता है जो समुद्र में शयन करता है, गरुड जिसकी सवारी है और उसका गरुड सापो को खाता है इत्यादि।

यह एक ही उदाहरण इस बात पर प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकता कि एक ही वाक्य देववाणी द्वारा अन्य अर्थ बतावेगा तथा संस्कृत भाषा द्वारा अन्य अर्थ प्रकट करेगा।

३—'भाषा विज्ञान'

पाश्चात्य विद्वानो के किये हुए वेदों के अंग्रेजी आदि भाषाओं में अनुवाद यद्यपि सायण आदि भाष्यकारो के छायानुवाद मात्र हैं तथापि वे विज्ञान सिद्धान्त रूप से भाषा विज्ञान द्वारा मन्त्रार्थ करने का दावा करते है उनका कहना है कि—

जितनी भाषाएं इस समय संसार मे विद्यमान हैं उन सब भाषाओं की मूल भाषा एक ही है वह सृष्टि के आरम्भ में बोली जाती होगी। उसका ठीक ठीक ज्ञान इस समय होना कठिन है तथापि कोई मूल भाषा एक ही थी अवश्य। जिस से संस्कृत, जर्मन, अंग्रेजी आदि भाषाएं निकली हैं। एक ही शब्द थोड़ा थोड़ा बिगड़ता बदलता हुआ अनेक भाषाओं में पाया जाता है। और सब जगह अर्थ एक ही है जैसे—

संस्कृत में	पीत
अंग्रेजी में	Pale
आर्य भाषा में	पीला। इत्यादि

शब्द में थोड़ा थोड़ा भेद है पर अर्थ समान है। अतः क्योंकि वेद के शब्द आज कल अप-

सिद्ध जैसे हैं उससे मिलते शब्द जहा जहा अन्य भाषाओं में आते हैं वहा उन शब्दों के जो अर्थ होते हैं उसके सहारे मन्त्रार्थ करना चाहिये।

भाषाओं का तुलनात्मक ज्ञान एक आवश्यक ज्ञान है परन्तु पाश्चात्य विद्वानो ने पक्षपात से प्रेरित होकर इसके सिद्धान्त निर्धारित किये हैं। भारतीय देशभक्त विद्वानों ने इस ओर अभी ध्यान नहीं दिया है। अन्यथा पाश्चात्य विद्वानो के पक्षपात पूर्ण वादों का खण्डन करके भाषा-विज्ञान के वास्तविक मूलसिद्धान्तो का ठीक ठीक पता अब तक सत्यान्वेषियो को लग गया होता।

भिन्न भिन्न भाषाओ मे प्राप्त समानता रखने वाले शब्द आवश्यक नहीं कि समान अर्थ वाले ही हों जैसे—

शब्द	अंग्रेजी	आर्य भाषा
(More) मोर	अधिक	एक पक्षी
(Save) सव	रक्षा	एक फल
(Come) कम	आना	न्यून इत्यादि

शब्द	अंग्रेजी	जर्मन
डीप	गहरा	Dieb चोर
ड्राई	सूखा	Drei तीन
रीजन	कारण	Riesen राक्षस
फ़ील	अनुभव	Fiel गिरा इत्यादि

पीत, पेल, पीला, एक से शब्द हैं परन्तु जर्द शब्द इन से नहीं मिलता। उस का भी अर्थ पीला है। जो वास्तव में 'हरिद्रा' शब्द से बिगड़ा है। हरिद्रा का अर्थ है हल्दी। हल्दी का रंग पीला होता ही है। सस्कृत का 'ह' जन्दावस्था में 'ज' हो जाता है जैसे होता का जोता।

हरिद्रा—जरिद्रा—जर्द। इस प्रकार यह शब्द बदलता है।

इस भाषा विज्ञान के द्वारा सहसा सिद्धान्त निर्धारित नहीं किया जा सकता जब तक सारी भाषाओ का इतिहास हमारे पास न हो। जो इस समय विद्यमान नहीं है। अन्य साधनों द्वारा अर्थ के निश्चय होने पर सहायक रूप में इस समय भाषाविज्ञान वर्ता जा सकता है। न कि केवल इस के आधार पर सर्व आर्ष साहित्य विरोधी अर्थ निर्धारित करना। वास्तव में ऋषियों का साहित्य वेद के बहुत समीप है उसके द्वारा मन्त्रार्थ समझने का यत्न करना चाहिये। न कि पाश्चात्य विद्वानों के समान पक्षपात पूर्ण दृष्टि से भारतीय आर्ष साहित्य को अप्रमाण ठहरा कर इधर उधर भटक कर वेदार्थ को दूषित करने मे सफल मनोरथ अपने को समझना।

४—ऐतिहासिक

यह एक स्वतन्त्र विषय है। इस सम्बन्ध मे हम पृथक् निबन्ध द्वारा विचार करेंगे। संक्षेप से यहा इतना लिखते हैं कि मन्त्रों को इतिहास परक लगाने वाले व्यक्ति मन्त्रों में विचित्र असत्य इतिहास की कल्पना करते हैं जिससे वास्तविक मन्त्रार्थ छिप जाता है। जैसे—

'गौतम' शब्द का अर्थ चन्द्रमा है। अहिल्या का अर्थ रात्रि है क्यो कि इस में अह अर्थात दिन का लय होना है और आलकारिक रूप से रात्रि चन्द्रमा की पत्नी है। इन्द्र का अर्थ सूर्य है और 'जार' का अर्थ नाशक अर्थात् सूर्य रात्रि का नाशक है। इस प्राकृतिक वर्णन को इतिहास परक लगा कर अर्थ किया जाता है कि गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या नाम वाली थी जिस के सतीत्व का नाश इन्द्र ने किया। कितना घृणित वर्णन है।

ऋग्वेद मे एक मन्त्र है—

"उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठ." ऋ० ७।-३।११।।

अर्थात् हे वसिष्ठ तू मित्र और वरुण से उत्पन्न है। यहा ऐतिहासिक लोग कथा निकालते हैं कि उर्वशी वेश्या को देखकर मित्र और वरुण देवताओ का मन चञ्चल हो गया। उनका वीर्य उर्वशी मे न गिर कर कुछ स्थल पर गिरा और कुछ घड़े मे। घड़े से अगस्त्य और स्थल से वसिष्ठ पैदा हुए। जो वसिष्ठ सूर्यवश के पुरोहित हुए।

शतपथब्राह्मण मे लिखा है कि—

ब्रह्मैव मित्र चत्र वरुण । अभिमन्तैव ब्रह्म। कर्ता क्षत्रिय । ते हैते अग्रे नानेवासतु ब्रह्म च क्षत्र च। शतपथ ४। १ ।।

अर्थात—मित्र का अर्थ है ब्रह्म, और वरुण का अर्थ है क्षत्र। विचार देने वाले का नाम ब्रह्म और काय करने वाले का नाम क्षत्र है। वे पृथक पृथक् रहते थे। मित्र के सब कार्य वरुण के विना हो जाते थे पर वरुण के काय मित्र के विना सफल नही होते थे वरुण ने मित्र से कहा कि हम दोनो मिल जावे। वे दोनो मिल गये इत्यादि वर्णन शतपथ मे है जिस का अभिप्राय यह है कि किसी भी राष्ट्र मे दो शक्तिया होती हैं धर्म और नीति। इन दोनो को मिला रहना चाहिये। जैसा कि अन्यत्र भी वेद मे कहा है कि—

यत्र ब्रह्म च क्षत्र च सम्यञ्चौ चरत सह।
त लोक पुण्य प्रज्ञेष यत्र देवा सहाग्निना॥

अर्थात जहा ब्रह्म और क्षत्र मिले हुए साथ साथ कार्य करते है मै उस स्थान को पुण्य स्थान समझता हूँ। कितना सुन्दर अर्थ 'मैत्रावरुण वसिष्ठ' का है, आज भारत में जो धर्म,ईश्वर,वेद, आर्य सभ्यता सब कुछ कुचल कर जो राजनीति का आन्दोलन चाहते हैं उन्हें यह मन्त्र उपदेश करता है। ऐसे अलौकिक वर्णनों को इतिहास परक लगा कर सत्य अर्थ छिपाया और प्राचीन ऋषियो पर असत्य कलङ्क ऐतिहासिक लोगों ने लगाये।

५—तुकड़ बाज

गुरुकुल के एक स्नातक महोदय विदेश में शिक्षा प्राप्त करने गये वहा से लौट कर पाश्चात्य गुरुओ के भी गुरु बनकर लौटे। उन के वेदार्थ करने का आधार न आर्षसाहित्य था न आधुनिक भाषा विज्ञान। आप तुकड़ बाजी से मन्त्रार्थ कर के अग्रेजी समाचार पत्रो मे प्रकाशित करते थे। उनके साथियो ने भाषानुवाद करके ग्रन्थ छपवाये बडा उपद्रव मचा। यह महोदय हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस मे प्रोफेसर हुए। यूनिवर्सिटी के कुछ व्यक्तियों ने मुझे भी निमन्त्रण दिया। कई दिन इस सम्बन्ध मे यूनिवर्सिटी भूमि मे व्याख्यान मैने दिये और इस बात का यत्न किया कि प्रोफेसर महोदय इस सम्बन्ध म बात करे पर उन्होने कोई सुनवाई नही की। आपने ऋग्वेद के एक सूक्त पर विचार प्रकट किये जिस का प्रथम मन्त्र निम्न प्रकार है—

उभे पुनामि रोदसी ऋतेन द्रुहो दहामि समहीरनिन्द्रा अभिव्लग्या यत्र हता अमित्रा वैलस्थान परितृढा अशेरन ।

स्नातक प्रोफेसर ने इस का अर्थ इस प्रकार किया ऊचे नीचे स्थानो को ठीक करता हूँ। सत्य द्रोहियो को जलाता हूँ। वैविलोनिया के निवासी मारे गये और निपुर नगर मे गिरे जाकर।

यहा 'अभिव्लग्य' का अर्थ वैविलोनिया के

निवासी वैल स्थानम्' का अर्थ निपुर नगर आपने किया। यह सिवा तुक्कड़ बाजी के और कुछ नहीं जैसाकि 'ईशावास्यम्' मन्त्रमे ईसामसीहका वर्णन समझना 'तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः' ज्येष्ठ के महीने मे ब्राह्मण को तस्मै अर्थात् पायस या खीर भोजन, 'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः' गोपाल नन्दन कृष्ण ने दो गधे पाले थे और वे गधे 'व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन' कुरु नन्दन अर्जुन के यहा रेंकते थे।

B B G, I G., T P O, P K I G

अर्थात् यह प्रश्नोत्तर हैं।

बी बी जी ?

आई जी।

टी पी ओ अर्थात् चाय पीओ।

पी के आई जी अर्थात मै तो पीकर आई हूँ

इस तुक्कड़ बाजी से किसी शास्त्र का अर्थ नहीं हुआ करता। उपयुक्त मन्त्र का सत्यार्थ निम्न प्रकार है—

वैदिक सम्राट् कहता है कि—

मै दोनो लोको को सचाई से पवित्र करता हूँ। और राज्य मे से दुष्टो का दमन करता हूँ। तथा जिन राष्ट्रो मे राजा नहीं अराजकता है या जहा दुष्ट राजा है वहा चढ़ाई करके मेरे द्वारा नाश किये गये शत्रु मारे हुए दुर्गम स्थान मे जाकर पड़े।

यह वैदिक साम्राज्य का दिग्दर्शन है। यह एक स्वतन्त्र विषय है इस पर फिर लिखा जायगा। यहा इतना ही प्रकरण है कि संस्कृत भाषा द्वारा मन्त्रार्थ करना या आधुनिक भाषा विज्ञान से मन्त्रार्थ समझना, या इतिहास की कल्पना करना या तुक्कड़बाजी से अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाना वेद समझने का साधन नहीं। वेद का अर्थ तो आर्य साहित्य के द्वारा ही जाना जा सकता है।

ऋषियों के किये भाष्यो का अध्ययन करना चाहिए और आर्य साहित्य द्वारा मन्त्रार्थ का अनुसन्धान करना चाहिये।

स्त्रियों को पौरोहित्याधिकार

(लेखक श्री० प० रामचन्द्र जी विद्यारत्न, आचार्य गुरुकुल होशगाबाद सी० पी०)

पाठक वृन्द ! जब से प्रो० महेश प्रसाद जी की सुपुत्री कल्याणी देवी को हिन्दू विश्व विद्यालय काशी ने पौरोहित्य विभाग में लेने से निषेध किया है तब से यह प्रश्न उठ रहा है कि ब्राह्मणेतर कन्याओं को वेद पढ़ने तथा पौरोहित्य करने का अधिकार है या नहीं। इस पर समाचार पत्रों में नाना प्रकार के लेख अधिकार प्राप्ति व निषेध के सम्बन्ध में निकल रहे हैं। सार्वदेशिक पत्र में इस सम्बन्ध के लेख बड़े गवेषणा पूर्ण हैं। इन सब लेखों मे पत्नी को पति के साथ यज्ञ करने के कारण वह वेदाध्ययनाधिकारिणी है या कि यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार चूंकि कन्या को वेद प्रतिपादित है इस लिये वह बिना वेदाध्ययन के यज्ञोपवीत पहन कर यज्ञ में कैसे बैठ सकती है, नहीं बैठसकती इस लिये वेदाध्ययनाधिकारिणी है इत्यादि विषयों पर सप्रमाण लेख लिखे गये हैं। परन्तु वेदाध्ययन का अधिकार, यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार सिद्ध होने पर भी प्रश्न यह उपस्थित रह जाता है कि क्या यज्ञोपवीत पहन कर वेदाध्ययन करके भी कोई स्त्री यज्ञो मे पारोहित्य कर सकती है या नहीं ? इस का सुस्पष्ट उत्तर तो यह है कि स्त्री भी यज्ञो मे पुरोहित का काम कर सकती है उसे पूर्ण अधिकार है जब पुरुष पुरोहित का काम कर सकता है तो उस की अर्धाङ्गिनी स्त्री भी योग्य होने पर बराबर पुरोहित हो सकती है। जिन मन्त्रो से पुरुष को पुरोहित बनने का अधिकार है, उन्हीं मन्त्रों से स्त्री को भी अधिकार है। क्योंकि मन्त्रों में जो विधान पुलिङ्ग शब्दो से किये गये हैं वे पुरुष जाति परक हैं। उन मन्त्रों से स्त्री व पुरुष दोनों का ग्रहण होता है।

परन्तु कुछ मन्त्र स्पष्ट स्त्रियो के लिये भी प्रयुक्त हुए हैं जैसे कि—

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने। सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त, सरस्वती दाशुषे वार्यं धात् ॥

ऋग्वेद मन्त्र १० सू० १७ मं० ७

इस मन्त्र से स्पष्ट रूप से यज्ञ मे यज्ञ के प्रारम्भ होने पर ज्ञानवती, विदुषी स्त्री को बुलाने का अधिकार लिखा है। परन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि यदि ज्ञानवती विदुषी स्त्री यज्ञ मे आवे तो क्या वह पुरोहित बने या नही। यह दूसरी बात है कि अर्थापत्ति से यह सिद्ध होता है कि जब यज्ञ का प्रारम्भ हो रहा हो, और विदुषी स्त्रियो को बुलाया जावे तो कोई काम तो उन्हे देना ही चाहिये।

अस्तु इसी प्रकार

सं होत्रं स्म पुरा नारी समनं वाव गच्छति।

ऋग्वेद १०-८६-१०

अर्थात् नारिया उत्तम कर्मकाण्ड यज्ञ में समान रूप से जाती हैं 'समन वाव गच्छति' जिस प्रकार से पुरुष यज्ञ मे जाते हैं स्त्रिया भी जाती हैं। इससे भी कहा तो गया कि पुरुष के समान स्त्री भी यज्ञ में अधिकार प्राप्त करती है। परन्तु अब मैं एक मन्त्र आप लोगों के सामने इस प्रकार का प्रस्तुत करता हूँ जिस में स्पष्ट यह लिखा है कि स्त्री यज्ञ में पुरोहित क्या ब्रह्मा बन सकती है जो यज्ञ में पौरोहित्य दृष्टि से सर्वतोभद्र सब से

ऊंचा पद है, स्त्री ब्रह्मापद को प्राप्त कर सकती है। देखिये मन्त्र

अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरा पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृशन् स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ॥

ऋग्वेद ८-३३-१६

जो स्त्रियां विद्याभ्यास करके उद्धत नहीं होती नीचे देखकर चलती हैं और अपने पैर नीचा ऊचा देखकर रखती हैं जो अपने घुटनों को ढाक कर चलती हैं कोई देख न सके अर्थात् अतीव विदुषी सुसभ्य स्त्री योग्य आचरण वाली विदुषी देवी, स्त्री ब्रह्मा तक बन सकती है। आशा है अब वैदिक विद्वान् इन मन्त्र के रहते यह कहने का साहस न करेंगे कि स्त्री को यज्ञ मे पुरोहित बनने का अधिकार नहीं है। मै ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि हमे सुबुद्धि प्रदान करे जिससे माताओं को समानाधिकार देकर हम उन्नति पथ गामी बनें।

शमित्योश्म्

जाति-भेद निवारक आर्य्य परिवार संघ

"हमारी अवनति का मुख्य कारण जातिभेद"

(ले०—श्री आचार्य भद्रसेन जी, सचालक जातिभेद निवारक आर्य परिवार सघ, अजमेर)

कोई भी देश या जाति तभी समुन्नत हो सकती है जबकि वह वैयक्तिक तथा सामाजिक इन दोनो प्रकार की उन्नतियो के करने मे अग्रसर हो। जो देश या जाति इन दोनो प्रकार की उन्नतियो में से एक की भी उपेक्षा कर देती है, वह कभी उन्नत अवस्था को प्राप्त नहीं हो सकती। क्यों कि एक की उन्नति दूसरे पर निर्भर है। विना वैयक्तिक उन्नति के समाज का उन्नत होना असम्भव है क्योकि व्यक्तियो से ही समाज बना करता है। उसी प्रकार विना सामाजिक उन्नति के व्यक्ति भी अपने को उन्नत नही बना सकता। क्योकि समाज का अवनत अवस्था का दुष्प्रभाव व्यक्ति पर अवश्य पड़ा करता है चाहे वह उस दुष्प्रभाव से भी बचने का प्रयत्न क्यो न करे। इसीलिए हमारे प्राचीन महर्षियो ने व्यक्ति तथा समाज दोनो को उन्नत बनाने के उपायो पर विचार किया था और उसके परिणाम स्वरूप उन्होने अपनी दिव्य दृष्टि से वैयक्तिक उन्नति के लिए आश्रम व्यवस्था तथा सामाजिक उन्नति के लिए वर्ण व्यवस्था का निर्माण किया था। यही दो अचूक उपाय है जो कि वास्तव मे व्यक्ति और समाज को उन्नत कर देश और जाति को उन्नति की चरमसीमा तक पहुचा सकते हैं। विना आश्रम तथा वर्णव्यवस्था के देश तथा जाति का उन्नत होना असम्भव है।

इसीलिए जब तक इन दोनो व्यवस्थाओ का अपने असली स्वरूप मे प्रचार रहा, तब तक हमारा देश सब प्रकार की उन्नति तथा वैभव से पूर्ण था। किन्तु जब से सच्ची आश्रम व्यवस्था का स्थान नाम मात्र के ब्रह्मचारियो, गृहस्थियो, वानप्रस्थियो तथा साधुओ ने ले लिया तथा गुण कर्म, स्वभाव से निर्धारित की जाने वाली वास्तविक वर्ण व्यवस्था का स्थान नाम मात्र की जन्म की वर्ण व्यवस्था ने ले लिया अर्थात लोग सब ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि के बनने का प्रयत्न छोड़कर जन्म से ही अपने को ब्राह्मण आदि मानने लग पड़े तब से ही देश उत्तरोत्तर अवनति के गर्त मे गिर गया और यहा तक गिरा कि अपने स्वातन्त्र्य तक को भी हाथ से खो बैठा।

जैसे यदि किसी देश के लोग विना परिश्रम किए तथा परीक्षा दिए डिग्रिया लेने के अभ्यासी बन जाए तो जहा उस देश मे डिग्री दाताओ की सख्या बढ़ जाए वहा सहस्रो प्रकार की नाम मात्र की डिग्रिया भी प्रचलित हो जाए। इसी प्रकार जब से हमारे देश के लोगो ने तप, त्याग, विद्वत्ता वीरता तथा कला कौशल को प्राप्त किए विना तथा उनकी परीक्षा दिए बिना केवल जन्म से ही ब्राह्मण आदि डिग्रिया लेना प्रारम्भ कर दिया तब से ये चार डिग्रिया जो कि प्राचीन काल मे गुण-कर्म-स्वभाव से मिला करती थी, केवल चार ही न रह कर हजारो प्रकार की नाममात्र की डिग्रियो में परिवर्तित होगई। और आगे चल कर इन्ही नाम मात्र की डिग्रियो ने जाति तथा उपजाति का रूप धारण कर लिया और वह वर्णव्यवस्था जो कि किसी समय देश की उन्नति मे परम सहायक थी, हजारों जाति उपजातियों के विकृत रूपको धारण

कर देश की उन्नति मे बाधक बन गई। इन हजारो प्रकार की जातियो और उपजातियो ने देश को जो भारी हानि पहुचाई है उससे विज्ञ पाठक भली प्रकार परिचित ही हैं।

जैसे किसी देश में यदि नाममात्र की डिग्रिया मिलने लगे तो उस देश से सच्ची शिक्षा का नाश हो जाता है। उसी प्रकार जब से हमारे देश मे नाममात्र की जन्ममूलक जातिया और उप जातिया प्रचलित हो गई। तभी देश से ज्ञान, विज्ञान, शौर्य, बल, कला कौशल आदि सब का नाश हो गया। क्योंकि इन सब सद्गुणो का मूल कारण सच्ची वर्ण व्यवस्था ही है और सच्ची वर्ण व्यवस्था का यदि किसी ने नाश किया है तो इस जन्म मूलक जातपात ने ही। अत: इस जन्म मूलक जातियो और उपजातियो ने देश को सब से पहिला जो नुकसान पहुचाया है वह है देश के ज्ञान, विज्ञान, बल, शौर्य और कला कौशल आदि का नाश। जिन गुणो से रहित होकर देश अवनति के गर्त मे उत्तरोत्तर गिरता जा रहा है।

(२) इन जातियो से दूसरी जो सब से भारी हानि पहुची है वह है जाति की एकता का नाश! वह जाति जो कभी एक सूत्र मे पिरोये मोतियो की तरह संगठित होकर एक ही आर्य जाति कहलाती थी आज वर्तमान जात पात के संकुचित दायरों में बँट कर उसने अपनी एकता को नष्ट कर दिया है। आज आर्य जाति एक आर्य जाति न रहकर हजारो जातियों और उपजातियो मे विभक्त हो गई है। यही कारण है कि आज आर्य जाति तीस करोड़ पुत्रो की माता होते हुए भी उसके पुत्रो मे परस्पर प्रेम और सहानुभुति न होने के कारण पद दलित और पराधीन हो रही है। आज हम यदि किसी से प्रेम करना जानते भी हैं तो केवल अपनी उपजातियोके चद व्यक्तियो से न कि सारी आर्य जाति से। आज हमारे प्रेम और सहयोग की सीमा केवल अपनी जन्म बिरादरी के कुछ एक व्यक्ति ही रह गए है। हम एक ही आर्य जाति के अग होते हुए भी इन जातियो और उप जातियो के कारण हमे परस्पर पूछना पडता है—"आप कौन जाति के है"। एक वैश्य दूसरे से जाति पूछने पर यदि वह भी जन्म का वैश्य हुआ तो उससे कुछ कुछ प्रेम दर्शाता है। किन्तु वह प्रेम और सहानुभूति भी वहीं तक ही रहती है जबकि वह उससे उपजाति नही पूछ लेता पूछने पर यदि दोनो की जाति अग्रवाल ही निकली तब तो पूछने वाले का प्रेम कुछ बना रहता है। किन्तु यदि उत्तर दाता ने दुर्भाग्यवश अपने को जैसवाल या ओसवाल कह दिया तो प्रश्नकर्त्ता का प्रेम और सहानुभूति इस प्रकार भाग जाते है जैसे खरगोश के सिर से सींग। इतना ही नही उत्तरदाता अग्रवाल होता हुआ भी यदि उसने अपने को दस्सा अग्रवाल कह दिया और प्रश्नकर्त्ता बीसा अग्रवाल हुआ तो भी प्रश्न कर्त्ता यह कह कर अरे! यह तो दस्सा अग्रवाल है? इस प्रकार उससे मुँह फेर लेता है मानो यह उसका पुराना शत्रु है। यही अवस्था ब्राह्मणो आदि की है। अब आप ही विचार करे कि इन जात पात के सकुचित दायरो ने आर्य जाति को किस प्रकार से छिन्न भिन्न कर आपस के प्रेम और सहानुभूति को नष्ट कर दिया है, जो आर्य जाति किसी समय दूसरी जातियो को 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पाठ पढ़ाया करती थी आज वही आर्य जाति इस जन्म की जात पात मे फँस कर आपस की प्रेम और सहानुभूति को भी खो बैठी

है और परस्पर में प्रेम और सहानुभूति के न होने के कारण दूसरे के अत्याचारों को सहन कर रही है।

(३) बल सम्पन्न जाति ही सुख शान्ति और स्वातन्त्र्य का भोग कर सकती है और जातियां तभी बल सम्पन्न बना करती हैं जब कि उनकी सन्तानें बलवान और नीरोग हों। सन्तान के बलवान् और नीरोग होने का सबसे मुख्य साधन माता पिता का विवाह योग्य आयु में विवाह करना है। किन्तु इस जातपात के सकुचित दायरों ने योग्य विवाह को हटाकर अनमेल और बाल-विवाह को जन्म दिया है। मेरी कन्या १६ वर्षकी हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ हो तो भी मुझे अपनी बिरादरी से डरकर उस तंग दायरे में ही दस बारह वर्ष के निर्बल बालक अथवा चालीस पैंतालीस वर्ष के रोगी अधेड़ से ही उसका सम्बन्ध करना पड़ता है। इसी प्रकार लड़के के पूर्ण स्वस्थ तथा बलवान् होने पर भी मुझे उसका विवाह अपनी बिरादरी की संकुचित चारदिवारी की सर्वथा छोटी अथवा बहुत बड़ी निर्बल और रोगी कन्या मे ही करने के लिए बाधित होना पड़ता है। यही अवस्था बाल-विवाह की है। यही कारण है कि जो आर्य जाति किसी समय 'वीर-प्रसविनी' कहलाती थी; आज इन अनमेल तथा बाल-विवाहो के कारण शक्ति हीन तथा बलहीन बन गई है।

४—जातियां उन्नत तभी हुआ करती हैं, जब कि उनकी संतानें उत्तम गुण-कर्म स्वभाव तथा उच्च विचारोवाली हों। किन्तु सन्तान का उत्तम गुण कर्म स्वभाव तथा उच्च विचारों वाला होना उसके माता-पिता पर निर्भर है। माता पिता के जैसे विचार तथा स्वभाव होंगे, सन्तान वैसी ही बनेगी, इस रहस्य को आर्य जाति ने खूब समझा था। प्राचीन आर्य जहा अपनी जाति को स्वस्थ और बलवान् बनाए रखने के लिए अपने विवाह पूर्ण युवावस्था मे किया करते थे, वहां जाति को सद्गुणों और उच्च विचारों वाली बनाने के लिए अपने विवाह वर वधू के गुण कर्म स्वभाव तथा विचारों को मिला कर ही किया करते थे। वे इस बात को भली-भांति जानते थे कि परस्पर विरुद्ध तथा हीन विचारों वाले माता-पिता अपनी सतान को उच्च विचार दे ही नही सकते। परन्तु आज हमारे विवाह इस जन्म की जात पात के कारण गुण कर्म स्वभाव तथा विचार प्रधान न बन कर केवल जन्म-प्रधान ही बन रहे हैं। आज हम अपने लड़के या लड़की का विवाह करते समय लड़के या लड़की के जन्म की ही खोज करते हैं न कि उनके गुण कर्म स्वभाव और विचारो की। मुझे अपनी जन्म-जाति या उस जाति के बाहर अपने लड़के लड़की के गुण कर्मानुसार चाहे कितना भी योग्य तथा उच्च विचारों वाला लड़का या लड़की क्यो न मिलती हो, किन्तु चूकि वह मेरी जन्म-बिरादरी का नहीं, इस लिए उसे छोड़कर अपनी बिरादरी के तंग दायरे के हीन विचारों वाले मूर्ख तथा अशिक्षित लड़के लड़की से ही सम्बन्ध करने के लिए बाधित होना पड़ता है। जिसका परिणाम यह होता है कि माता-पिता के विचार तथा स्वभाव एक न होने के कारण हमारी सन्तान किसी एक निश्चित तथा उच्च विचार और गुण कर्म स्वभाव वाली नहीं बन सकती। शास्त्रों मे इस प्रकार की अनमेल सन्तान को ही "वर्णसकर" के नाम से पुकारा गया है और उसे देश-जाति की उन्नति में बाधक

बताया है। परन्तु वर्तमान जन्म मूलक जात-पात के कारण पूर्ण गुण कर्म स्वभावानुसार सम्बन्ध कर नहीं सकने के कारण हमें उच्च विचारों से शून्य सर्वथा अयोग्य और वर्णसंकर संतान पैदा करने के लिये बाधित होना पड़ता है। जहां प्राचीन-काल में जात पात का विचार किये बिना 'स्वयम्वर' विवाह हुआ करते थे, वहां आज हम में से अनेक इन उप जातियों के कारण ब्राह्मण-ब्राह्मण क्षत्रिय-क्षत्रिय और वैश्य-वैश्य में भी अपना या अपनी सन्तान का विवाह सम्बन्ध करना पाप समझने लगे हैं।

५—जिस प्रकार कोई मनुष्य नीरोग और बलवान तभी बन सकता है जब कि उस की जठराग्नि अर्थात पाचन शक्ति बलवान् हो, जिस से कि वह गरिष्ठ से गरिष्ठ पदार्थ को खाकर भी उसे अपने शरीर का अंग बना सके। इसी प्रकार जाति भी तभी बलवान् बन सकती है जब कि उस की जठराग्नि अर्थात् पाचन क्रिया तेज हो। वह प्रत्येक को अपने अन्दर पचाने की शक्ति रखती हो। यदि किसी अन्य-जाति या धर्म का मनुष्य उस की शरण में आना चाहे तो वह उसे न केवल शरण दे अपितु इस तरह से उसे अपने अन्दर जजब करले कि मानो वह किसी अन्य-धर्म या जाति का था ही नहीं। आर्य जाति ने इस रहस्य को भी भली प्रकार समझा था। इसलिए उसने मध्यकाल में भी शक और हूण जैसी बड़ी बड़ी विदेशों से आई जातियों को भी इस प्रकार से अपने अन्दर खपा लिया था कि आज भारत में उनका नाम तक भी सुनाई नहीं देता। दु:ख से लिखना पड़ता है कि वह आर्य जाति जिसने केवल दो चार व्यक्ति ही नहीं, प्रत्युत जातियों की जातियो को अपने अन्दर मिला लिया था—आज वह जन्म मूलक जातपात के बखेड़ो में फस कर दो चार विधर्मी या विजातीय धर्म पिपासुओं को भी अपने अन्दर जज्ब नहीं कर सकती और तो क्या, जो कुछ समय पहले उसके ही अंग थे, उन्हें भी वापिस अपना अंग बनाते समय उसे संग्रहणी और बदहजमी का भय सताने लगता है। आर्य जाति की पाचन शक्ति इतनी कमजोर क्यो हुई? इसका एक मात्र उत्तर यही है, कि इस विशाल आर्य जाति के जातपात के छोटे छोटे संकुचित दायरों मे बंटकर छूआछूत के भूत का शिकार बन जाने से। अब विचारशील सज्जन स्वयं विचार करे कि वर्तमान जन्म-मूलक जात-पात से हमे कितनी भारी हानि पहुच रही है और किस तरह वह देश और जातिकी उन्नतिमें बाधक बन रही है। परन्तु दु:ख से लिखना पड़ता है कि हमारी जाति के अनेक विचारवान् नेता भी इस जातपात की बीमारी को देश के लिए सर्वथा हानिकर समझते हुए भी इस महाभयंकर बीमारी के दूर करने का कुछ भी विशेष प्रयत्न नहीं कर रहे हैं।

[शेष अगले अङ्क मे]

॥ ओ३म ॥

जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ की

सदस्यता

का

प्रार्थना पत्र

मै प्रतिज्ञा करता हूँ कि.—

(१) मै संघ के उद्देश्यों से पूर्ण सहानुभूति रखता हूँ और उनके अनुकूल ही आचरण करूँगा।

(२) अपना विवाह (यदि अविवाहित हो) और ऐसे अविवाहित युवक वा युवतियो का विवाह जो मेरी सन्तान हो या मेरी संरक्षता मे हो जन्मगत जातिभेद का विचार छोड़कर वैदिक वर्णव्यवस्था के अनुसार करूँगा।

(३) नित्य सन्ध्या अग्निहोत्र करूँगा, और अपना जीवन सदाचार पूर्वक व्यतीत करूँगा।

(४) संघ को ३) वार्षिक चन्दा दूँगा।

कृपया मेरा नाम इस सघ के सदस्या मे लिख लीजिये।

नाम व पता·· ··

·· · ·· .

हस्ताक्षर (सदस्य)

···

इस प्रकार के फार्म को भर कर श्री सचालक जी जाति भेद निवारक आर्यपरिवार सङ्घ अजमेर के पते पर भेजिये और सङ्घ की सदस्यता का चन्दा ३) और दान कोषाध्यक्ष जी जा० भे० नि० आर्य परिवार सङ्घ अजमेर के पते पर शीघ्र भेजिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति,
उपाध्यक्ष जाति भेद निवारक
आर्यपरिवार सङ्घ, बलिदान भवन,
देहली।

जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ के

उद्देश्य

१ गुणकर्म स्वभावानुसार वैदिक वर्णव्यवस्था की स्थापना के लिये साधन प्रस्तुत करना।

२ जन्मगत जातपात का विचार छोड़कर आर्या मे गुणकर्म स्वभावानुसार विवाह सम्बन्ध कराना और विशेषकर युवक युवतियो से व्रत कराना कि वे जातपात का विचार छोड़कर गुणकर्मानुसार ही अपना विवाह करेंगे।

३ सहयोग तथा सहानुभूति द्वारा आर्यों मे परस्पर प्रेम तथा भ्रातृभाव उत्पन्न करना।

४ आर्य पुरुषो के परिवारो को सच्चा आर्य परिवार बनाना।

विश्व शान्ति कैसे हो?

(लेखक—देशभक्त कुं० चांदकरण जी शारदा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा, अजमेर)

ऋषि बोधोत्सव वसत ऋतु मे आता है जब पतझड़ के बाद प्रकृति नवीन यौवन धारण करती है। नये २ पल्लव व कू पलें निकल २ कर अपने नये उत्साह तथा नवीन जीवन से संसार को प्रफुल्लित कर देते हैं। ऋषि बोधोत्सव हमें नवीन ज्योति और वर्चस्व धारण कराने के लिए प्रति वर्ष आता है इसे हम अपने वैदिक प्रणो को याद दिलाने के लिए और सघर्षा मे वीरो की भाति लडन के लिए गत ५० वर्षा से मनाते आ रहे हैं और 'अग्ने व्रतपत व्रत चरिष्यामि' मन्त्र बोलकर आर्य समाज की सेवा का व्रत लेते हैं और आर्यसमाज के लिए मरना और आर्यसमाज के लिए जीना हमारे जीवन का ध्येय बनाते हैं। आयसमाज ने इस व्रत को निभाने म आशातीत सफलता प्राप्त की है परन्तु इस बार का ऋषि-बोधोत्सव हमारे लिए अग्नि परीक्षा है, क्यांकि सिध मे मुस्लिम लीगी मन्त्री मण्डल बन गया है और हमे उनस टक्कर लेकर हमारी प्यारी धर्म पुस्तक सत्यार्थप्रकाश की रक्षा करनी है। बदलते जमाने के साथ हमे हमारी रक्षा के लिए नवीन नवीन साधन ढूढ़ने हैं और स्थायी शांतिके लिये हमें विश्व के सभी गुलाम देशो मे स्वराज्य स्थापित करना है। विदेशियो को हमारे रक्त शोषण से दूर भागना है ट्रस्टी शिप, साम्राज्य शाही सरक्षित राज्य आदि सब सिद्धान्तो को हटाकर शुद्ध पवित्र स्वतंत्रता देवी को उसके उच्चासन पर प्रत्येक गुलाम देश में बिठाना है। इसी वास्ते इस वर्ष का ऋषि बोधोत्सव और इसमे लिए हुए व्रत बड़े महत्व के होंगे। हमें भारत के अंग्रेजो की निरकुश एव दुर्नीति एव चालों को हटाना है और पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करना है इसके लिये गीता के उपदेशो को अपने हृदय में धारण करना है।

अब तक सत्याग्रह करना, जेलें भरना, आदि अहिंसावादी सिद्धात हम काम में लाते रहे, अब तो अहिंसावादी प्रतिरोध का समय समाप्त हो गया और हमें अपनी शक्ति पर भरोसा करके अपने बल पर ही स्वतत्रता प्राप्त करना है। गुलाम देश हाथ जोड़ने से स्वतन्त्र नहीं हो सकते और प्रार्थना करने से बडे राष्ट्रो के हृदय मे परिवर्तन नहीं आ सकता उनके हृदयो मे परिवर्तन लाने का एकमात्र उपाय शक्ति सचय है और आर्यसमाज को उसी शान्ति सचय मे जुट जाना चाहिए। परन्तु आज जरा अन्तर्मुख होकर हम अपने आपको देखें और आत्मचिन्तन करें तो हमे ज्ञात होगा कि आज नव-चेतना और उत्साह के स्थान में ससार की जातिया और राष्ट्र निराशा के किनारे पर खडे हैं क्योकि संग्राम में लाखों सहस्रो मनुष्यो को जीतकर और युद्ध समाप्त होने पर भी आज वही भुखमरी, कपडे की कमी नाना प्रकार के कष्ट हम भोग रहे हैं क्योंकि हमने बाह्य शत्रुओ से युद्ध करने के साथ २ अपने अन्दर के शत्रुओ से युद्ध नहीं किया। यदि हम अपनी आत्मा द्वारा अपनी आत्मा को जीत लें तो सुख और शान्ति मिलती। भोग-विलास में रत प्रत्येक बात मे येन केन प्रकारेण रुपये एकत्रित करने की धुन हमें आगे नहीं बढ़ने देती और इसी वास्ते विश्व में स्थायी शांति स्थापित नहीं हो सकती और तीसरे विश्व युद्ध की तैयारिया हो रही हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा सम्मेलन मे पारस्परिक झगडो मे रूस और अमेरिका के मनमुटाव रोज हम समाचार पत्रो मे पढ रहे हैं और निःशस्त्रीकरण के स्थान मे प्रत्येक राष्ट्र भावी युद्ध के लिए सामग्री जुटाने की धुन मे व्यस्त है । सब राष्ट्र अपने पास अणु-बम (Atom Bomb) रखना चाहते हैं।

ससार में सुख शान्ति स्थापित करने के लिए महर्षि ने आज के दिन सच्चे ईश्वर की खोज मे अपना मन लगाया । जिस प्रकार कोयला अग्नि के समीप आते ही लाल व सुन्दर अगारा बन जाता है उसी प्रकार हम परमात्मा के समीप आते ही तेजस्वी निर्भय वीर बन सकते है । जिस प्रकार लोहा चुम्बक के पास आते ही क्रियाशील होकर उससे चिपट जाता है उसी प्रकार मनुष्य परमात्मा का ज्ञान होते ही सात्विक कामोमे क्रिया शील हो जाता है । महर्षि दयानन्द ने हमे बताया कि हमारा मूल रोग तो परतन्त्रता है, बाकी भुखमरी, बेरोजगारी, दरिद्रता, आदि तो इस मूल रोग के उपद्रव मात्र हैं अत सबसे पहला काम हमे स्वाधीनता प्राप्त करना है । इस स्वाधीनता प्राप्ति के लिए हमे क्या २ उपाय करने चाहिए यह सब बाते महर्षि दयानन्द ने अपनी अमर पुस्तक सत्यार्थप्रकाश मे बतलाई हैं। मनुष्य को वर्णाश्रम धर्म पर चलकर मुक्ति पद या अन्तिम स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है। जहाँ हमे रोटी, कपडा, मकान चाहिए, वहा हमे दुख मे बीमारी मे, आपत्ति मे, सम्बन्धियो के तथा मित्रो के वियोग मे ईश्वर भक्ति से शान्ति मिलती है उसका दुख रोटी खाने या सुन्दर वस्त्र पहिनने से नहीं मिटेगा वह तो आध्यात्मिक भोजन से ही शान्ति प्राप्त करेगा। इस लिए महर्षि ने हमको सासारिक भोजन और आध्यात्मिक भोजन दोनो की आवश्यकता बतलाई है। जब ईश्वरभक्ति मे मनुष्य लवलीन हो जाता है तो वह कविवर रवीन्द्रनाथ टगोर के शब्दों मे यह कहने लगता है कि 'यह मत भूलो कि मै वोही हूँ Do not forget I am He ईश्वरभक्ति से मनुष्य मे अपूर्व कर्म योग की शक्ति आ जाती है और वह सात्विक बुद्धि वाला कर्म योगी बन जाता है और पूज्य मालवीय जी के शब्दो मे यह कहने लगता है यदि मै किसी मुसलमान भाई की स्त्री को बुरी दृष्टि से स्वप्न मे भी देख लूं या किसी प्राणी का अनिष्ट चिन्तन करू तो हे प्रभो! आप मुझे पूर्ण दण्ड दीजिये। अगर मै अपनी मा-बहिन की इज्जत लेने वाले को या सपत्ति छीनने वाले को दण्ड न दूँ या युक्ति से दण्ड दिलाने का सामर्थ्य न रखूँ तो हे प्रभो! आप मुझे द्विगुणित दण्ड दीजिए। ईश्वरभक्त के हृदय मे तेज और ओज वैसे ही प्रकाशित हो जाता है, जैसे सूर्य और चन्द्र भिन्न २ स्वच्छ जल वाले जलाशय मे सुन्दर तेजस्वी दृष्टिगोचर होते है ईश्वरभक्त वाणी की स्वतन्त्रता धार्मिक स्वतन्त्रता तथा खान-पान की, जीवन की आवश्यक सामग्री के लिए निर्भय होकर युद्ध लडेगा। हम विश्व शाति चाहते हैं, परन्तु विश्व मे स्थायी शान्ति तब ही हो सकती है जब मानव, मानव को शत्रु न समझे बल्कि आत्मिक शत्रु को ही शत्रु समझे। ससार के राजनीतिज्ञ मानव जाति की भावी शासन व्यवस्था की रूपरेखा चाहे कितनी ही विशाल बनावें तथा विश्व के धर्माचार्य विश्वधर्म सम्मेलन मे एकत्रित होकर कितने ही उपदेश देवें, परन्तु संसार मे वास्तविक और चिरस्थायी शाति तब ही स्थापित

हो सकती है जब हम सब प्राणियों को परमात्मा का अमृत पुत्र मानकर भाईचारे का बर्ताव करें। दलित, निर्बल जातियों को ऊचा उठावे। पीले, काले, गोरे, निग्रो का भेद भुलावे। सबके स्वत्वों की रक्षा करें चाहे वे अल्पसंख्यक हो या बहु-संख्यक, विश्व शाति के लिए राष्ट्र सघ पहले भी निष्फल हो चुका है और अब भी संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् असफल होगी क्योंकि इनके मन साफ नहीं है जब तक दुनिया के राष्ट्र अपनी विदेशी नीति नहीं बदलेंगे और अपनी साम्राज्यवादी भावनाए नहीं छोड़ेंगे तब तक शाति कदापि नहीं हो सकती और ससार का तीसरा महाभारत होगा और इसमें आविष्कृत नये परमाणु बम्ब खूब चलेंगे और भयकर विनाश होगा। नये राष्ट्रीय सगठन में स्पष्ट ही है कि संसार की शाति नहीं हो सकती। संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद में हारे हुए राष्ट्रों को कोई स्थान नहीं दिया गया और जो राष्ट्र निरपक्ष रहे उनको भी कोई स्थान नहीं दिया गया इसमें तो रूस, अमेरिका और ब्रिटेन अपनी साम्राज्यशाही चलावेंगे। अन्तर्राष्ट्रीय फौज का जो ढाँचा रचा गया है उसमें भी यह स्पष्ट लिख दिया गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय फौज उस राष्ट्र के विरुद्ध काम में नहीं लाई जायगी जो राष्ट्रीय संघ का सभासद् होगा। इससे तो यह स्पष्ट सिद्ध होगया कि यदि सघ के सभासद् की नीयत खराब हो गई और उसने आक्रमण कर दिया तो अन्तर्राष्ट्रीय सघ चुप चाप बैठा तमाशा देखता रहेगा इसी वास्ते हम कहते है योरोप की नकल मत करो और सत्यार्थ प्रकाश में छटे समुल्लास में लिखी हुई महर्षि की राजनीति को मानो। यूरोप की नकल करने से और उसके पीछे चलने से जापान का सत्यानाश होगया। यूरोप के लोग या तो दिन रात लडते है या लड़ाई के समाप्त होने पर लडाई की तैयारी में शाति काल में भी लगे रहते है। इनके नेता जीवो और दूसरो को जीने दो और अपने पड़ौसी को अपने समान प्यार करो इस सिद्धान्त को भूल बैठे है, जब तक इनमे यह भाव "आत्मवत सर्वभूतेषु य पश्यति स पडित." (जो अपने समान सब प्राणियो को देखते है वही पडित है) नहीं फैलाया जावेगा तब तक शाति मृग मरीचिका है। आज कल के यूरोपीय नेता अपनी जनता के सामने उनके भयकर दु:ख रखते हैं उनकी आवश्यकताएं रखते है और फिर उनकी सामाजिक बुराइयो को दूर करने के लिए युद्ध ही एक मात्र उपाय बताते है और जनता इस विष को पी लेती है और लडने के लिए उद्यत हो जाती है। परन्तु यदि उन को इस विष को दूर करने की बात भी बतादी जावे और कहा जावे कि तुम्हारे पास इतने बडे २ उपनिवेश खाली पडे है उनमें तुम उन लोगों को रख दो जिनके पास रहने और खाने कमाने का साधन नहीं है क्यो कि वे भी परमात्मा के अमृत पुत्र तुम्हारे भाई है और तुम्हारे भाई को जीने का हक है अत तुम मत लड़ो। जबतक समानता का सिद्धात काम में नहीं लाया जायगा तबतक ससार में शाति नहीं फैल सकती जब तक एशिया अफ्रीका और भारत पराधीन है तबतक शाति स्वप्नवत् है। जबतक यह अनुभव नहीं किया जावेगा कि हमारी भलाई सामूहिक भलाई में जुडी हुई है और ससार के विभिन्न देशों में रहने वाले सब एक ही परिवार के सदस्य है जैसा कि आर्य समाज कहता है तब तक शाति की आशा नहीं की जा सकती। जबतक बड़े राष्ट्र स्वार्थों में फसे

हुए हैं और पराधीन देशों की समस्या हल नही करते तबतक शाति मृगमरीचिका ही है । आर्य समाज कहता है कि तुम अन्याय मत करो हरएक आदमी को अपनी उन्नति करने का अधिकार है परन्तु दूसरे को मार कर दूसरे को नुकसान पहुचा कर तुम्हें अपनी उन्नति करने का कोई अधिकार नहीं है । तुम ऐसा काम करो जिससे सबका भला हो यह ठीक है कि पहले भलाई घर से ही प्रारभ होनी चाहिए । परन्तु यह भलाई घर मे ही नही रुकी रहनी चाहिए बल्कि हमारा ध्येय यह होना चाहिए कि सारा विश्व इस भलाई से लाभ उठावे । परन्तु यूरोप वाले इस बात को नही मानते वे कहते हैं कि दूसरे चाहे मरे या जहन्नुम में जावे हमे आराम से रहना है । हमें तो हमारे आराम में बाधा डालने वालो का नाश ही करना है चाहे वे न्याय या सत्य पक्ष पर ही क्यों न हो । इसी वास्ते उन्होने जगली जातियो का शोषण किया । उनको बेईमानी व धोके से मारा। उनको नष्ट भ्रष्ट कर दिया और अपने उन्नति देश उनके मुहल्लों में बसा लिए ।

प्रिय आर्य पुरुषो ! फूट राग द्वेष को छोड़ कर निराशा को तिलाजलि देकर नवीन उत्साह से कार्य प्रारम्भ करो क्रान्ति की चिनगारिया भारत मे पहुच चुकी हैं । भारत की पीड़ित जनता आपके उच्च उद्देश्यों से प्रेरित होकर आपकी ओर आखे लगाये बैठी है । आपकी सगठित शक्ति को ससार की कोई शक्ति नहीं दबा सकती। विजय श्री आपके हाथ मे है । ओ३म् का पवित्र झडा हाथ मे लेकर दृढ़ता और वीरता के साथ आगे बढो और एक स्वर से वार्य रूप मे वैदिक धर्म की जय बोलो । बोलो सच्चे शिव के उपासक महर्षि दयानन्द की जय ।

[देशभक्त कु वर चाद करण जी का विचार-पूर्ण लेख ऋषिबोधोत्सव के उपलक्ष्य मे और उससे पूर्व लिखा गया था किन्तु खेद है कि वह उस विवशता के कारण जिस का हम गत अङ्क में निर्देश कर चुके है ऋषि बोधोत्सव के पश्चात पाठक महोदयो के हाथ मे आएगा तथापि वे विचार सदा ही मननीय है अत. कुछ दिनों के अन्तर की कोई बात नही । "अब तक सत्याग्रह करना, जेले भरना आदि अहिसा वादी सिद्धान्त हम काम मे लाते रहे, अब तो अहिसा वादी प्रतिरोध का समय समाप्त होगया" ये लेखक महोदय के वैयक्तिक विचार है जिन से कइयो का मतभेद सम्भव है । सिद्धान्त की दृष्टि से वैदिक धर्मी पापियों के साथ युद्ध और उनकी हिसा को पाप नही समझते किन्तु भारत की वर्तमान परिस्थिति में हिंसात्मक साधनो का उपयोग करने से कहा तक सफलता मिल सकती है यह बात अवश्य विचारणीय है— सम्पादक सा० दे०]

महर्षि दयानन्द और स्वराज्य

(ले०—श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०)

इस नाम का एक लेख मेरे परम स्नेही श्री पं० मदनमोहन विद्यासागर का लिखा हुआ सार्वदेशिक के फरवरी के अङ्क मे निकला है । श्री प० जी आर्यसमाज के बहुत सफल जोशीले और त्यागी उपदेशक हैं और वे वही बात कहते हैं जो उन को हितकर मालूम होती है । उसके निम्नलिखित अश विचारणीय हैं ‐—

(१) सच बात यह है कि वे विश्व मे चक्रवर्ती साम्राज्य चाहते थे । किनका ? आर्यो का । इससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता ।

(२) कोई महानुभाव व्यक्ति तौर पर कुछ भी कह सकते हैं । पर आर्य्य समाज को सामूहिक तौर पर राजनीति से परे रखने का "महा पुण्य" वे न कमावें हमारी यही विनीत प्रार्थना है ।"

(३) उनका कथन ऐसा है कि ऐ वीरो ! जाओ ! ऋषि का चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करो । परन्तु सब मिलकर 'सामूहिक प्रयत्न' न करना, सामूहिक तौर पर इस प्रयत्न मे भाग न लेना ।"

(४) "बौद्धमत इतना फैल क्यो गया ? ईसाइयत कब फैली ? इस्लाम का दबदबा कब बढ़ा ? कम्यूनिस्ट का भय दुनिया में कब छाया ? ···" 'उन्होंने शासन अपने हाथ में लिया तभी यह सब कुछ हुआ ।'

यह विचार नये नहीं हैं । बहुतो का यही विश्वास है और उनको आर्य्य समाज से यही शिकायत है जो श्री विद्यासागर जी ने ऊपर के वाक्यों संख्या ३ और ४ में की है । आर्यसमाज सन १८७५ ई० में स्थापित हुआ । ८ वर्ष तक ऋषि दयानन्द के समय में और ६३ वर्ष उनके पीछे, इन ७१ वर्षों मे आर्य्य समाज की नीति यही रही कि आर्य्य समाज सामूहिक रीति से राजनीति मे भाग नही लेता और अपने सदस्यो को पूर्ण स्वतन्त्रता देता है कि वह चाहे जिस राजनीतिक संस्थाके सदस्य बनें और अपने मतानुसार जो चाहे राजनीतिक विचार रक्खें ।

प्राय बाहरवालो ने यह लाञ्छन लगाया कि आर्य्य समाज धार्मिक संस्था (Religious Body) नही है केवल धर्म की आड़मे पोलीटिकल शिकार खेलना चाहती है । आर्य्य समाज ने इस का बलपूर्वक प्रतिवाद किया । इसका प्रमाण पटियाला केस, (Detractors of the Arya Samaj) हैदराबाद सत्याग्रह और श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के अपने जीवन के व्यवहार है । श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी किसी से डरते न थे और निर्भीकता से पोलीटीकल आग मे कूद पड़ते थे । परन्तु उस समय केवल भ्रान्ति दूर करने के लिये गुरुकुल और आर्य्य समाज के मुख्य २ पदो से अलग हो जाते थे । श्री मदनमोहन जी को यही शिकायत है कि अब तक जो नीति स्वामी दयानन्द ने 'आर्य समाज के विषय' मे अपने जीवन मे और उनके अनुयायियो ने पीछे से बर्ती वह गलत थी और अब इस नीति मे परिवर्तन होना चाहिये । अर्थात् स्थानिक आर्य्य समाजों, प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक सभा को यह घोषणा कर देनी चाहिये कि "यद्यपि आजकल उन्होंने अपने सदस्य को यह स्वतंत्रता दी कि वे चाहे जिस राजनीतिक दल में सम्मिलित होकर काम कर सकते हैं,

परन्तु आज से हम सामूहिक रूप से राजनीति मे भाग लेंगे और हमारा ध्येय होगा ससार भर मे आर्यों का चक्रवर्ती राज स्थापित करना।"

क्या श्री विद्यासागरजी का यही मन्तव्य है? लेख इतना स्पष्ट है कि और हो भी क्या सकता है? शब्द अधिकतर उन्हीं के हैं।

परन्तु उन्होने यह व्याख्या नहीं की कि आर्यों के चक्रवर्ती राज्य से उनका क्या तात्पर्य है। वाक्य स० ४ मे उन्होने कुछ उदाहरण दिये हैं। बौद्ध धर्मको छोड़कर ईसाई मुसलमान और कम्यूनिस्टो से हम कुछ कुछ श्री विद्यासागर जी का मन्तव्य जान सकते है। मुहम्मद साहेब और उनके खलीफे इधर उधर के राजो के पास यह सन्देशा भेजा करते थे कि या तो इस्लाम स्वीकार करो या हमसे लड़ो, महाराज कंस्टैंएटायन के समय से कुछ काल तक ईसाइयों की भी अधिकाश में यही नीति रही। कम्यूनिस्ट तो सोलह आना पोलीटीकल सस्था है। उसकी आयु भी अभी बहुत नहीं है। इसकी विवेचना करने का यह स्थल भी नहीं है। ऋषि दयानन्द की किसी बात से यह सिद्ध नहीं होता कि वे ऐसा करना चाहते थे न तो उनकी प्रार्थनाओ से न छठे समुल्लास से, क्या श्री मदन-मोहन जी सार्वदेशिक सभा को इस समय या भविष्य मे ऐसा करने का परामर्श देते है और उसका निश्चित रूप क्या होगा?

ऊपर के वाक्य संख्या ३ के यह शब्द भी विचारणीय हैं :—

"वीरो जाओ! ऋषि का चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करो। परन्तु सब मिलकर "सामूहिक प्रयत्न" न करना। सामूहिक तौर पर इस प्रयत्न में भाग न लेना।"

'सामूहिक' एक परिचित शब्द है और मैं समझता था कि इसका अर्थ भी परिचित होगा। परन्तु आज मुझको मालूम हुआ कि "श्लेष" ऐसा भयङ्कर रोग है कि बडे बडे विद्वानो को भी चक्कर मे डाल देता है। अब तक इस प्रसङ्ग मे सामूहिक शब्द का यह अर्थ ही लिया जाता था कि आर्य्य समाज के सास्थिक विधानमे तात्कालिक राजनीति पर विचार करने के लिये स्थान नहीं है। अर्थात् आर्य समाज के कान्स्टीट्यूशन को एक सामयिक राजनीतिक क्षेत्र से बाहर रक्खा गया है। परन्तु प० विद्यासागर जी ने 'सामूहिक' शब्द का पारिभाषिक और सर्वसम्मानित अर्थ न लेकर व्युत्पत्ति परक अर्थ लिया अर्थात् योग रूढ़ि न लेकर शुद्ध यौगिक। विचार की यह शैली दार्शनिक तो किसी प्रकार भी नहीं कही जा सकती। व्यावहारिक भी नहीं है। परन्तु श्री विद्यासागर जी ने यही अर्थ लिया तभी तो उपालम्भ के तौर पर उनको लिखना पड़ा "चक्रवर्ती साम्राज्य इक्के दुक्के से स्थापित नहीं हुआ करते। सगठित शक्ति ही उस का उपाय है।" इसी के पश्चात् सख्या ३ आजाता है जो उपालम्भ को ठीक ठीक और स्पष्ट रूप मे प्रकाशित कर देता है। मै समझता हूँ कि जहा आर्य समाज की स्थायी नीति का प्रश्न हो वह श्लेषात्मक प्रयोगो से काम नही चलता। हमको अपने विचारों को निश्चित करना चाहिये। अन्यथा जनता म भ्रम फैलता है।

एक बार मैने सार्वदेशिक द्वारा यह प्रार्थना की थी कि कोई सज्जन एक ऐसी पुस्तक लिखें जिसमें ऋषि दयानन्द के राजनीतिक विचारों का (१) स्पष्ट (२) निश्चित और (३) सप्रमाण उल्लेख हो। इस से आर्यों और इतर लोगों दोनों को

लाभ हो सकता है। इसमें पहले सिद्धान्त पक्ष को देकर फिर अन्य राजनीतिक पक्षों की तुलनात्मक मीमासा भी हो सकती है। परन्तु छठे समुल्लास की तो सब दुहाई देते हैं, यह कोई नहीं बताता कि आपका राजनीतिक प्रोग्राम अस्थायी क्या है और स्थायी क्या है? उदाहरण के लिये चक्रवर्ती राज का क्या अर्थ है? और आर्य शब्द का क्या अर्थ है? क्या आर्य का अर्थ है आर्य सामाजिक और चक्रवर्ती राज्य का अर्थ है इम्पीरियलिज्म (Imperialism)। आप ईश्वर से प्रार्थना तो कर सकते हैं कि ससार के सभी नरनारी वैदिक धर्मी हो जावें और इस प्रकार समस्त जगत का शासन आर्यों के हाथ में हो जाय। परन्तु जब तक आपकी इस प्रार्थना को ससार के सभी नरनारी स्वीकार नहीं कर लेते और वेदइतर धर्मावलम्बी भी विद्यमान हैं उस समय तक आर्य समाजों और उनकी प्रतिनिधि सभाओं के सामने कौन सा राजनैतिक प्रोग्राम रखना चाहते हैं? इस समय सैकड़ो आर्य्य सदस्य कांग्रेस में भाग ले रहे हैं और बहुत से कांग्रेस में भाग नहीं भी ले रहे हैं। उनमें से कुछ तो कांग्रेस से मतभेद रखते और दूसरी नैतिक संस्थाओं में काम करते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो "राजनैतिक संस्थाओं" (कानूनी अर्थ में) का कानूनी उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना नहीं चाहते और "राजनीतिक क्षेत्र" से बाहर हैं। आर्य्य समाज की ओर से यह सब स्वतन्त्र हैं। क्या विद्यासागर जी इनकी स्वतन्त्रता का अपहरण करना चाहते हैं। क्या वह चाहते हैं कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी के समान सार्वदेशिक सभा की ओर से यह व्यवस्था निकला करे कि आर्य्य समाज के सदस्यों को अमुक प्रोग्राम पर चलना होगा अमुक सस्था के साथ सहयोग करना होगा और अमुक संस्था के साथ असहयोग। यदि ऐसा हुआ तो आर्य्य समाज और अन्य नैतिक संस्थाओं में वैधानिक मत-भेद होना भी अवश्यम्भावी है। क्या देश और जगत की राजनीतिक दृष्टि से यह बात हितकर होगी? क्या इससे उन्हीं लोगों को असन्तोष न होगा जो इस समय राजनीतिक क्षेत्रों में काम कर रहे हैं?

मैंने एक अन्य प्रसङ्ग में आर्य्य मित्र लखनऊ को इसी विषय का एक लेख भेजा है। यदि वह प्रकाशित हो जाय तो मैं अन्य पत्रों से भी प्रार्थना करूंगा कि उसको छाप देवें। यहां मैं उसको दुहराना नहीं चाहता। श्री विद्यासागर जी मेरे इस 'महापुण्य' कमाने को क्षमा की दृष्टि से देखेंगे ऐसी मेरी आशा है। यह लेख लिखा तो पुण्यार्थ ही है क्योंकि मेरे विचार में निश्चित सिद्धान्तों को प्रकाशित करना पुण्य भी है और महा पुण्य भी। मैंने लिखा तो पुण्य ही समझ कर है। अज्ञान वश पुण्य के स्थान में पाप हो गया हो तो दूसरी बात है।

(मान्य उपाध्याय जी का यह लेख मननीय है यद्यपि इसमें मतभेद के लिये अवकाश पर्याप्त है। श्री प० मदनमोहन जी वेदालकार इस विषय में जो उत्तर देंगे उसे विद्वानों के विचारार्थ अगले अङ्क में हम प्रकाशित कर देंगे क्योंकि इस विषय पर गम्भीरता से विचार करके क्रियात्मक कार्य करने की आवश्यकता है—सं० सा० दे०)

सत्यार्थप्रकाश !

(ओमप्रकाश आर्य वीर तृतीय वर्ष बी० एस० सी०)

प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

निज वैभव की उडती पताका
लहराते जग का मुख द्वार
कैसे छिपोगे हम से अब तुम
आर्य जीवन के प्रिय उद्गार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

जग मे बहती सुगन्धि का तू
नायक है प्रिय रखवार
दुर्गन्धि नाशक सत्य प्रकाशक
बहतो की तू पतवार
प्राणों के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

दिव्य जीवन की आशा है तू
ज्योतिर्मय है तव आकार
सत्य प्रेम है तेरा नाता
सत्य का ही है तव व्यवहार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

जगते जीवन की तू आशा
अभिलाषाओ का भण्डार
राष्ट्र निमाता, जग विख्याता
सुप्रवीण कलाकार
प्राणों के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

सिंह गर्जना है अदम्य तू
अग्नि ज्वाला है प्रचण्ड तू
सर्व पाप की भस्म बनेगी
और होगा तब आकार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

तू रवि है जग मग करता
अन्धकार तू सब का हरता
'चमगादड़' से भला क्यो डरता
उजियाला है नहीं अधकार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

जिस ऋषि ने इसको लिखा
बोला इस को बारम्बार
दयानन्द से जन्मे फिर से
फिर से हम मे सौ सौ बार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

असल्य आर्य हैं तेरी भुजायें
ललनायें भी तब गुण गायें
सहस बाहु से धर्म कमायें
क्यो न तू हो वृद्धाकार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

आर्य वीर हैं तेरी खड्गें
झनकारें इनकी हैं तुझ मे
तुझ से ही चलती हैं यह
फिर, फिर कर गोलाकार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

प्रभु की वाणी अपनी का ही
जो हो प्रतिपादक
सर्व ज्ञान का जो भण्डार
कैसे हो बहिष्कार
प्राणो के आधार हे सत्यार्थप्रकाश !

नई समाज-व्यवस्था

(२)

(ले०—श्री रघुनाथप्रसाद पाठक)

अब हम एक बहुत आवश्यक विषय की ओर आते हैं। हम इस सूची में दी हुई अवस्थायें चाहते हैं। जीवन की इन वस्तुओं की इच्छा करते हुये हम अनुभव करते हैं कि हमारा इन वस्तुओं पर अधिकार है परन्तु क्या हम स्वीकार करेंगे कि जीवन की इन वस्तुओं पर दूसरो का भी अधिकार है। न केवल हमारे परिवार और इष्ट मित्रों का प्रत्युत समस्त प्राणियो का भी ?

सुखी जीवन की जिन वस्तुओ के सम्बन्ध मे हम सब का मत एक है यदि उनको प्राप्ति का हमें सौभाग्य प्राप्त है तो क्या हम अनुभव करते हैं कि यह ससार यथेष्ट रूप से अच्छा है ? अथवा हमारा यह विश्वास है कि यह संसार तब तक अच्छा न होगा जब तक प्रत्येक प्राणी को इन वस्तुओ की प्राप्ति की सुविधा न होगी। दूसरे शब्दो मे क्या हमारी मनोवृत्ति स्वार्थ-रत है अथवा परार्थरत ? क्या हम अपने लिये इन वस्तुओ की माग करते हैं अथवा समस्त प्राणियो के लिये ? आओ इन प्रश्नो के उत्तर पर क्षणभर विचार करें।

मोटे तौर पर हम यह अनुभव करते हैं कि हम अपने जीवन में न्यायोचित अवसर चाहते हैं परन्तु साथ ही हम यह अनुभव करते हैं कि जब तक हमारा समाज सब के लिये उचित सुख की व्यवस्था न करेगा तब तक हम भी सुखी न होंगे।

दूसरों के दुःख सुख, उन्नति अवनति, यश अपयश और हानि लाभ को अपना ही दुःख सुख, उन्नति अवनति, यश अपयश और हानि लाभ मानना मानव जाति की मूलभूत समानता को स्वीकार करना है जो एक ऊँचा आदर्श और सामाजिक व्यवहार का उत्कृष्ट नियम है अत. सुखी संसार के निर्माण के लिये आर्थिक प्रणाली की प्रेरक भावना व्यक्तित्व का विकास होना चाहिये न कि उसका अध. पतन। दूसरे शब्दों में आर्थिक प्रणाली ऐसी होनी चाहिये जो मनुष्य बनाने वाली हो। इस सम्बन्ध में वेद और गीता का मत विशेष ध्यान देने योग्य है।

सब को समान अर्थ के लेने की आज्ञा देते हुये वेद में परमात्मा उपदेश करते हैं।

समानी प्रपा सह वो अन्नभाग. अथर्व ३।३०।६

ये समाना. समनसो जीवा जीवेषु मामका। यजु० १९।४६

सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः अथर्व ०३।३०।१

समानी व आकूति. ऋ ८।४९।४

समानो मन्त्र. समिति. समानी ऋ० ८।४९।३

अर्थात् तुम्हारे दुग्धादि पेय पदार्थ समान हों और अन्न का विभाग साथ साथ हो जिस प्रकार रथनाभि के चारो ओर आरे एक समान होते हैं उसी प्रकार तुम सब लोग एक समान होकर यज्ञ करो। समस्त जीवों में जो मन मे साम्य भाववाले हैं वही मुझ को प्रिय हैं और उन्हीं की सम्पत्ति सैकड़ो वर्ष तक कायम रहती है। इसलिये मैं तुम सब को समान हृदय और समान मन

वाला करके द्वेषरहित करता हूँ। तुम एक दूसरे से इस प्रकार प्यार करो जैसे गौ अपने सद्यःजात बछड़े से प्यार करती है। तुम अपने विचार हृदय और मन को एक समान करो तथा अपनी गुप्त सलाहों, सभाओं और हार्दिक विचारों को एक समान करने का यत्न करो। ये अर्थ सम्बन्धी वेदों के उपदेश हैं इन में समान अर्थ ग्रहण का उपदेश है। इन्ही वैदिक उपदेशों को ध्यान में रख कर मनु भगवान् कहते हैं कि:—

वयसः कर्मणोर्थस्य मनु० ४। १८

अर्थात् गृहस्थ अपनी उम्र, कर्म, वेद और समस्त मनुष्यों के अनुरूप ही अपने वेद, वाणी और बुद्धि से आचरण करता हुआ संसार मे रहे। यहां सब के समान ही अपना वैदिक वेष रखने के लिये जोर दिया गया है। इसका कारण यही है कि प्रायः वेष भूषा ही असमानता को प्रकट करती है। शोभा शृंगार और ठाटबाट ही से असमानता का आरम्भ होता है इसी लिये उसकी रोक की गई है। आर्य सभ्यता में इस साम्यभाव की बड़ी ही महिमा है। उस सभ्यता मे परमेश्वर समदर्शी कहलाता है। इसी लिये भगवद् गीता मे कहा गया है कि "शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता समदर्शिन" अर्थात् वही पण्डित है बुद्धिमान है जो चांडाल और कुत्ते के साथ भी साम्यभाव से व्यवहार करता है। आर्य सभ्यता का यही आदर्श है।

(२) साम्यबुद्धि को बढाते रहने का अभ्यास प्रत्येक मनुष्य को करते रहना चाहिये और इस क्रम से संसार भर के मनुष्यो की बुद्धि जब पूर्ण साम्य अवस्था मे पहुच जायगी तभी सुनहरे युग (Golden Age) की प्राप्ति हो जायेगी। कार्य अकार्य शास्त्र की प्रवृत्ति भी इसी लिए हुई है और इस कारण इस की इमारत को भी साम्य बुद्धि की ही नींव पर खड़ा करना चाहिये।

अहिंसकं सत्य विद्धि· सर्वभूत हिते रतैः।
भवेत् कृतयुग प्राप्ति· आशीः कर्म विवर्जिताः॥

आत्म ज्ञानी, अहिंसक, एकान्त धर्म के ज्ञानी और प्राणिमात्र की भलाई करने वाले पुरुषो से यदि यह जगत भर जावे तो आशीः कर्म अर्थात् काम्य अथवा स्वार्थ बुद्धि से किये हुये सारे कर्म इस जगत से दूर होकर फिर कृत युग प्राप्त हो जावे। (महाभारत शा० ३४८,६३) क्योंकि ऐसी स्थिति मे सभी पुरुषो के ज्ञानवान रहने से कोई किसी का नुकसान तो करेगा नहीं प्रत्युत प्रत्येक मनुष्य सब के कल्याण पर ध्यान देकर तदनुसार ही शुद्ध अन्तःकरण और निष्काम बुद्धि से अपना वर्ताव करेगा। हमारे शास्त्रकारो का मत है कि बहुत पुराने समय मे समाज की ऐसी ही स्थिति थी और वह फिर कभी न कभी प्राप्त होगी ही।

(गीतारहस्य पृष्ट ४४० और ३६८)

यह तो रही अर्थ प्रणाली के सम्बन्ध मे आदर्श की बात। जब हम आदर्श के इस ऊँचे भवन से उतर कर व्यावहारिक जगत मे आते हैं तब भी हम अर्थ प्रणालियो वा विश्लेषण करने वाले विद्वानो को इसी प्रकार के परिणामों पर पहुचते हुये पाते हैं।

प्रो० हारोल्ड जे लास्की Harold J Laski अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (Communism) में पूंजीवाद साम्यवाद के गुण दोष पर विचार करते हुए लिखते हैं।

"It is significant, for instance

that where as a hundred years ago it did not have to square its accounts with the churches because these were prostrate before its achievement, to day the churches increasingly insist the economic system must be judged in terms of their religious message It is significant because the ultimate dogma of the churches is the conviction of the basic equality of men Communism has made its way by its idealism and not its realism by its spiritual promise not its materialistic prospect It is a creed in which there is intellectual error, moral blindness social perversity Religions make their way despite these things Mankind in history has been amazingly responsive to any creed which builds its temple upon spiritual impulses

अर्थात अर्थ प्रणाली का औचित्य व अनौचित्य मानवी प्रेरणा की कसौटी में आंका जाना चाहिये अर्थ की समानता मानवी प्रवृत्तियों को पतित होने से रोकेगी।

लाहौर के २५।२।४६ के ट्रिब्यून में प्रकाशित Some Economic Problems of peace शीर्षक लेख में भी अर्थ प्रणाली में मानवी सुधार की बात को मुख्यता दी गई है। लेख का एक उद्धरण इस प्रकार है —

'As to the objective of economic planning it must not be laid down in narrow terms viz that of raising the standard of living For economic planning must not be taken as synonymous with accelerated economic development but should embrace social planning based on the accelerated economic development so as to not only to stir the best elements in individuals but also lead to their full flowering and fulfilment

अर्थात अर्थ व्यवस्था का उद्देश्य संकुचित नहीं होना चाहिये अर्थात केवल मात्र जीवन का स्टैंडर्ड ऊंचा करना। अर्थ व्यवस्था ऐसी होनी चाहिये जो आर्थिक उन्नति के साथ २ व्यक्तित्व के सर्व श्रेष्ठ तत्वों का भी पूरा २ विकास करने वाली हो।'

अर्थ क्या है ?

अर्थ प्रणाली की प्रेरक भावना और उसके आदर्श पर विचार करने के पश्चात् हमारे सामने २ प्रश्न उपस्थित होते हैं। एक तो यह कि अर्थ किसे कहते हैं और दूसरा यह कि प्रत्येक प्राणी को यह किस मात्रा में मिले। आजकल सोना, चांदी तांबा इत्यादि धन समझा जाता है। यदि हम किसी भूखे व्यक्ति को अन्न के बजाय ये वस्तुयें देकर कहें कि तुम इनसे अपनी भूख मिटालो अन्न न मिलेगा तो क्या वह इनसे सन्तुष्ट हो जायेगा। १९१४ के महायुद्ध के सर्विया के कुछ भूखे सैनिकों को उनके अधिकारियों ने खाने के बदले गिन्नियां देकर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहा परन्तु उन सैनिकों ने उन गिन्नियों को फेंक कर कहा हमें अन्न चाहिये। अन्न के मुकाबले में सोना चांदी आदि की नितान्त निस्सारता के द्योतक अन्य अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। सोना चांदी आदि वस्तुतः विनिमय का माध्यम हैं ये वास्तविक धन वा अर्थ नहीं है। सर्व प्रथम धन के सम्बन्ध में

इस आवश्यक और प्रारम्भिक तथ्य को समझ लेना आवश्यक है। ससार के समस्त प्राणियो को चाहे वे राजा हों वा सन्यासी, अमीर हो वा गरीब, ब्रह्मचारी हों वा गृहस्थी चाहे वे योरुप म रहते हों चाहे अमेरिका में और चाहे एशिया में समान रूप से अन्न वस्त्र इत्यादि जीवन निर्वाह की आवश्यक वस्तुओं की जरूरत होती है।

मनुष्य बिना 'काम' के जीवित रह सकता है परन्तु अर्थ के बिना जीवित नहीं रह सकता। इसीलिये जीवन में इसकी बड़ी प्रधानता है। इसका सम्बन्ध शरीर रक्षा से होता है। अर्थ की आवश्यकता के इस अभिप्राय को ठीक २ रूप में समझने और हृदय पर अंकित कर लेने से इस सच्चाई को समझने मे दिक्कत न होगी कि हम खाने के लिये नहीं जीते हैं वरन जीने के लिये खाते हैं। मनकी यह अवस्था हो जाने पर संसार के पदार्थों में से आवश्यकतानुसार सरल रीति से कम से कम पदार्थ ग्रहण करने और सादा जीवन और उच्च विचार के आदर्श को क्रियान्वित करने की हम में योग्यता आजाती है। उस समय हमारे सामने जीने का कोई उद्देश्य होता है। यों ही ऊल जलूल ढग से खाते पीते और लुढ़कते रहने के उद्देश्य रहित जीवन और उसके अभिशापों से हम बच जाते हैं। इस रीति से हम अपने को और अपने साथ समाज को भी ऊंचा उठा देते हैं।

अत. स्पष्ट हो गया कि जीवन निर्वाह के लिये निम्न पदार्थ अनिवार्य होते हैं —१ ज्ञान २ अन्न ३ वस्त्र ४ निवास स्थान ५ चिकित्सा।

यदि समाज के व्यक्तियों को ये वस्तुयें मिलती रहें तो समाज का कार्य भले प्रकार चल सकता है। इस प्रसंग मे महात्मा गाधी के विचार जो उन्होने १६२८ मे गुजराती नवजीवन में प्रकट किये थे। उल्लेखनीय हैं:—

"इस देश और सारे संसार की आर्थिक रचना ऐसी होनी चाहिये कि एक भी प्राणी अन्न वस्त्र के अभाव से पीड़ित न हो अर्थात सब को अपने निर्वाह योग्य उद्यम मिल जाय। सारे ससार के लिये यदि हम ऐसी इच्छा करते हो तो अन्न वस्त्र पैदा करने वाले साधन प्रत्येक मनुष्य के पास रहना चाहिये किसी को भी दूसरे की कमाई से सम्पत्तिमान् होने का लोभ बिलकुल न होना चाहिये जिस प्रकार हवा पानी पर सब का समान स्वत्व है अथवा होना चाहिये उसी प्रकार अन्न वस्त्र पर भी होना चाहिये। इसका इजारा किसी एक देश, जाति, अथवा गद्दी पर होना न्याय नहीं है अन्याय है। इस महान् सिद्धात का अमल और बहुधा विचार भी ही किया जाता। इसी से इस देश और ससार के अन्य देशो मे भूख का दुःख बना रहता है।

(२८। १०। २८ गुजराती नवजीवन)

हम केवल मात्र इन पदार्थों की प्राप्ति से ही सन्तुष्ट न होगे। जीवन मे रति, श्री, शोभा शृंगार ठाठबाट, पशु, बाग, बगीचा, स्वादिष्ट भोजन, संगीत, कला, आमोद प्रमोद, बलप्राप्ति, दीर्घ जीवन, आदि का भी तो स्थान है। अवश्य जीवन मे इन चीजों का स्थान है और वह भी कम महत्व पूर्ण नहीं। परन्तु ये सब शरीर रक्षा से सम्बन्धित नही है। इन का सम्बन्ध तो मन की सतुष्टि से है। परन्तु इन वस्तुओ के रूप और उपभोग मे विशेष सावधानता की आवश्यकता होती है। उनके अनुचित रूप और उपभोग

ही समाज में आर्थिक असमानता का जन्म होता है और इस के कारण मनुष्य की प्रवृत्तियां पतन की ओर अग्रसर होती हैं। यदि समाज के हित में इन में से कुछ वस्तुओं पर प्रतिबन्ध लगाया जाये अथवा सब को इन की प्राप्ति न हो सके तब भी समाज का कार्य चल सकता है। यदि हमारी समाज व्यवस्था मे जीवन निर्वाह की आवश्यक वस्तुयें भी मिलती रहें तो वह व्यवस्था आदर्श व्यवस्था समझी जायेगी परन्तु ये वस्तुयें ज्ञान का प्रकाश और अज्ञान का नाश करने वाली होनी चाहिये।

परिमाण

अब वस्तुओ के बटवारे का प्रश्न रह जाता है। इस समय लाखो करोड़ो व्यक्तियो का भूखो मरना, नगे फिरना, अपराधो मे वृद्धि का होना यह बतलाता है कि आज कल का बटवारा ठीक नहीं है और वर्तमान अर्थ प्रणाली मे कहीं मूलभूत त्रुटि हैं।

बहुत से आदमी यह हिसाब लगाने में व्यस्त है कि जीवन निर्वाह की अनिवार्य वस्तुओ का मूल्य क्या है और कितने व्यक्तियो के पास उन वस्तुओ को क्रय करने के लिये पर्याप्त आमदनी है?

श्रीयुत Frank Verulams ने अपनी पुस्तक Production for the people मे जीवन के दो स्तर Standard) नियत किये हैं। एक स्तर को कम से कम (Minimum) और दूसरे को उचित (Reasonable) स्तर कहा गया है। कम से कम जीवन निर्वाह की आवश्यक वस्तुयें, खाना कपड़ा, घर और ईंधन आदि हैं जिन का एक मात्र सम्बन्ध शरीर रक्षा से है और उचित स्टेन्डर्ड मे इन पदार्थो का कुछ ऊँचा स्तर है। प्रमाणो के आधार पर आश्रित उन का निर्णय इस प्रकार है।

सक्षेप मे हम इस परिणाम पर पहुच सकते हैं कि समस्त प्रजा का १।४ भाग और आधे बच्चे उन परिवारो मे रहते हैं जो कम से कम स्टेन्डर्ड के भी नीचे आते है। दूसरी ओर का दो तिहाई भाग और बच्चो का ५।६ भाग हमारे उचित स्टेन्डर्ड से नीचे के परिवारो मे रहता है।

To sum up we may conclude, that about one quarter of the total population half the children are living in families below minimum, while two third of the population and five sixth of the children are living in families below our reasonable standard

अपने प्रत्यक्ष अनुभव और इस प्रकार के लेखो के प्रकाश मे गरीबी और अमीरी को अपनी चरम सीमा पर पहुचा देखते है। ये दोनो किनारो की बातें बनी हुई है। यह बात यद्यपि साधारण सी देख पडती है परन्तु है अत्यन्त महत्त्वपूर्ण। क्या हम इसे सन्तोष जनक व्यवस्था कह सकते हैं। इस प्रश्न के उत्तर में हमारा मस्तिष्क बहुत साफ होना चाहिये। क्या हम इसे सत्य मान सकते हैं। यदि इसे सत्य नहीं मानते और इसे बुराई समझते है तो हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम इस बुराई को दूर करने का यत्न करें।

पदार्थों के बटवारे के प्रकार के सम्बन्ध में हम फिर कभी विचार करेंगे।

इस्लाम की झूठी वकालत

(पं० ऋभुदेव जी शर्मा 'साहित्याऽऽयुर्वेद भूषण हैदराबाद द०)

मुम्बापुरी (बम्बई) से प्रकाशित 'समीक्षक' पत्र के जनवरी १९४६ अक में श्री पं० पुरुषोत्तम दास शास्त्री दत्तवाडकर काव्यतीर्थ, हिन्दी भाषा रत्न का 'सत्यार्थप्रकाश' पर मराठी मे एक लेख छपा है । श्री पंडित जी साहित्यिक पुरुष है, साहित्य के साथ कुछ अध्यात्म ग्रन्थो का भी अध्ययन किया है परन्तु आप बोलते या लिखते समय अधिकार पूर्ण भाषा मे निष्पक्ष बनकर बोलते हैं। आपकी आलोचना कहा तक सत्य है और आपने इस्लाम का कहा तक अध्ययन किया है यह तो आप स्वय अनुभव कर सकते हैं परन्तु ऋषि दयानन्द को उपदेश करते हुए आपने उन उपदेशों पर बहुत कम आचरण किया है। यथा-

(१) "असा प्रश्न करणे थोड़े धार्ष्ट्याचे दिसते"

अर्थात ऐसा प्रश्न करना थोड़ी धृष्टता दिखाई देती है।

(२) "या वचनावर तर स्वामीजीनीं कहरच उडविला आहे"

अर्थात इस वचन पर तो स्वामी जी ने कहर ही उड़ा दिया है।

(३) "मग हे शब्द मुसल्मानान्च्या डोक्यावर लादून त्याची कुचेष्टा करण्याचा हास्यास्पद प्रयत्न स्वामीजीनीं का करावा हें समजत नाही"

अर्थात् यह शब्द मुसलमानों के शिर पर लादकर उनकी हीनता दर्शाने का हास्यास्पद प्रयत्न स्वामी जी ने क्यो किया, यह समझ में नहीं आता।

(४) "मग या अर्थविपर्यासाला जातीयविद्वेषा खेरीज अन्य काहीं सार्थ नाव देता येईल असे वाटत नाहीं"

अर्थात इस अर्थ विपर्यय का (अर्थ बिगाड़ने का) जातीय-विद्वेष के अतिरिक्त अन्य कोई सार्थक नाम नही दिया जा सकता।

(५) "ना पाहिल्यास स्वामीजीनीं सम्पूर्ण कुराण वाचल्याची जी गप्प आपल्या प्रस्तावनेत ठोकून दिली आहे ते कितपत यथार्थ आहे याची कल्पना वाचकास चागली येईल।"

अर्थात् उसको देखने पर, स्वामी जी ने अपनी प्रस्तावना में सम्पूर्ण कुराण पढ़ने की जो गप्प मारी है वह कहा तक यथार्थ है, इसकी कल्पना पाठको को भले प्रकार आ जायेगी।

(६) "कुराणातील काही वचने उद्धृत करून त्यावर समीक्षक या नात्यानें स्वामी दयानन्दानीं खडसून टीका केली आहे त्याना त्या वचनात चागुलपणा कोठेच आढलला नाही ।"

अर्थात स्वामी दयानन्द जी ने कुरान से कुछ वचन उद्धृत कर उस पर कठोरता से टीका की है। उन्हें उसमें अच्छाई कहीं दिखाई नहीं दी।

उपर्युक्त निर्देशो को पढ़कर यही प्रतीत होता है कि लेखक महोदय इस्लाम की आलोचना सहन नहीं कर सकते और इस्लाम के खण्डन में जिस भाषा का प्रयोग किया गया है वही भाषा श्री स्वामी दयानन्द के खण्डन मे प्रयुक्त की जा सकती है। लेखक की भाषा निष्पक्षता द्योतक है और स्वामी जी की भाषा विद्वेष जनक।

श्री पं० दत्तवाडकर जी को हम बुरा नहीं कह

सकते, उन्हें अपने विचार प्रकट करने का अधिकार, है केवल यही निवेदन करेंगे कि प्रत्येक समीक्षक बुराई का, जिसे कि वह बुराई समझता है, शत्रु है और उसे उस पर रोष आ ही जाता है। श्री ऋषि दयानन्द जी महाराज अविद्या और अधर्म के शत्रु थे वे सज्जनों का आदर और दुर्जनों के तिरस्कार के पक्षपाती थे यही कारण था कि उन्होने अपने जीवन मे खण्डन जैसे अप्रिय साधन को स्वीकार किया। ऐसी स्थिति मे जबकि वैदिकधर्म पर ईसाई और मुसलमानो का ओछे हथियारो से आक्रमण हो रहा था, वैदिक धर्म को सत्य सनातन मानते हुए स्वामी जी चुप कैसे रहते! राम को निर्लज्ज, महारानी सीता को हरजाई (पुंश्चली) श्रीकृष्ण को दुराचारी बतानेवाले वैदिक धर्म की अच्छाई को भी बुराई और अपनी बुराइ को भी अच्छाई बताने वाले ईसाई, मुसलमान क्या मेल करने योग्य थे? क्या वेद के दूषण बताने वालो का उत्तर कुरान और बाइबिल की महत्ता गान करना था? हम ऐसा नहीं मानते।

हम सभी लोग अपने लिये लिखने और बोलने की स्वतन्त्रता चाहते है तो हमे दूसरो को भी वे अधिकार देने चाहियें। यदि दूसरो को अधिकार नहीं है तो हमारी स्वतन्त्रता भी सुरक्षित नहीं रह सकती। हा, यह प्रश्न कि स्वतंत्रता सभ्यता के साथ हो, इसे मानते हुए यह भूल न जायं कि असभ्यों के साथ सभ्यता के व्यवहार नहीं चल सकते। जो ऋषि दयानन्द इस्लाम और ईसाइयत का खण्डन करते थे वे ही सर सय्यद अहमद खा जैसे सभ्य मुसलमान और अनेक ईसाई पादरी तथा अगरेज अधिकारियो के मित्र भी थे उनका जीवन इतना ऊँचा था कि कुरीति का विरोधी प्रत्येक मनुष्य उनसे मित्रता करना चाहता था। अतः स्वामी जी का एक ही अपराध है कि वेद पर आस्था रखते थे और वेद विरुद्ध अन्य ग्रन्थ उनके लिये हेय थे। वे वेद की प्रशंसा और वेद विरुद्ध ग्रन्थो की अप्रतिष्ठा करते थे यह उनके विश्वास के अनुसार था अन्यथा नहीं।

जब घर में आग लगी हो

वह समय समझौते की चर्चा का अथवा न्याय अन्याय विचारने का नहीं होता। वैदिक धर्म पर वाणी और बल से इतने कड़े प्रहार किये जा रहे हैं जो हमारी सहन-शक्ति के बाहर हैं। हमारे निर्बल भाइयो को इस्लाम स्वीकार करने पर विवश करना और हमारे साहित्य पर मिथ्या मिट्टी-पानी फेंकना हम कब तक सहते रहेंगे? जब आग बुझ जायगी और शत्रुओं के प्रहार धीमे कर लेंगे तब शान्त मन से दोनो पक्षो पर विचार करेंगे। अभी वह समय बहुत दूर है और निष्पक्ष जनो से चुप रहने के लिये ही निवेदन करूंगा।

मिथ्या आरोप

मान्य पण्डित जी ने स्वामी दयानन्द जी पर यह आरोप लगाया है कि उन्हें इस्लाम से द्वेष था इसी कारण उन्होंने गुण न दिखा कर केवल दोष दिखाये हैं। इसका उत्तर स्वामी जी के शब्दो मे ही पढ़िये—

"अब इस कुरान के विषय को लिखके बुद्धिमानो के सम्मुख स्थापित करता हूँ कि यह पुस्तक कैसा है?

मुझसे पूछो तो यह किताब न विद्वान् की बनाई और न विद्या की हो सकती है। यह तो बहुत थोड़ा सा दोष प्रकट किया इसलिये कि लोग धोखे मे पड़कर अपना जन्म व्यर्थ न गमावें। जो

कुछ इसमे थोडा सा सत्य है वह वेदादि विद्या-पुस्तको के अनुकूल होने मे जैसे मुझको ग्राह्य है वैसे अन्य भी मजहब के हठ और पक्षपात रहित विद्वानो और बुद्धिमानो को ग्राह्य है, इसके बिना जो कुछ इसमे है वह सब अविद्या, भ्रमजाल और मनुष्य के आत्मा को पशुवत् बनाकर शान्तिभङ्ग कराके उपद्रव मचा, मनुष्यो में विद्रोह फैला परस्पर दुःखोन्नति करने वाला विषय है।"

किसी भी निष्पक्ष और इस्लाम के गम्भीर अध्येता को इन वाक्यो से सन्तोष मिल सकता है उन्होने वर्तमान सत्य सिद्धान्ता को वेदादि सत्य शास्त्रो से प्रथम दश समुल्लासो मे लिख दिया है, ये सिद्धान्त कुरान और बाईबिल मे भी हो सकते है। उन्हीं को फिर यहा दुहराना पिष्टपेषण ही होता इसलिये दुबारा नही लिखा। जब असत्य सिद्धान्त दिखाने लगे तब यही उचित था कि पुराण, बाइबल और कुरानादि मे जो २ असत्य बाते हैं उन्हें प्रकट किया जाय। कोई न्यायाधीश चोर को दण्ड सुनाते हुए इस बात का उल्लेख नहीं करता कि इसमे जहा चोरीका दोष है वहा छिपने दौड़ने, लाठी चलाने और कपड़ा बुनने के गुण भी है अत यह चोर नहीं है, इसे साधुओ की गणना मे रखना चाहिये। सत्यार्थप्रकाश के समीक्षक पंडित जी को कुरान का नया भाष्य करना पड़ेगा। समस्या तो यह है कि उसे मानेगा कौन? मुसलमान तो मानने से रहे. हा कुछ निष्पक्ष खोपड़ी वाले समदर्शी महात्मा उसे अवश्य मान लेगे। पण्डित जी की धारणा है कि वेद के समान ही कुरान भी गुणों का भण्डार है अत कुरान का खण्डन उसका अर्थ न जानने, उसका सम्यक् अध्ययन न करने और विद्वेष के कारण ही किया जाता है। मैं अत्यन्त नम्रता से निवेदन करूंगा कि ऐसा सोचना पण्डित जी की भूल है। पण्डित दत्तवाड़कर जी ने स्वामी दयानन्द जी महाराज का जीवन पढ़ा होगा तो उन्हें विदित होगा कि श्री स्वामी जी का जीवन मौलवियों के साथ वाद-विवाद मे ही बीता है तब यह कैसे हो सकता है कि श्री स्वामी जी को मौलवी लोगो के मुख से सुनकर भी कुरान के सत्यार्थ का पता न लगा हो। कई वर्षो के अध्ययन, विचार और प्रचार के पश्चात चौदहवा समुल्लास छपा है इतने दिनो में अपढ भी सुनकर बहुत कुछ जान सकता है विद्वान की तो बात ही क्या है? यदि आपको इस पर भी आग्रह हो कि कुरान का कोई साहित्यिक अर्थ होना चाहिये तो उसका उत्तर स्वामी जी के शब्दों में ही सुनिये—

"यद्यपि फिरके होने के कारण किसी शब्द अर्थ आदि विषय मे विरुद्ध बात है तथापि कुरान पर सब ऐकमत्य है। जो कुरान अरबी भाषा में है उस पर मौलवियो ने उर्दू मे अर्थ लिखा है उस अर्थ का देवनागरी अक्षर और आर्य भाषान्तर कराके पश्चात अर्बी के बड़े २ विद्वानो से शुद्ध करवा के लिखा गया है, 'यदि कोई कहे कि यह अर्थ ठीक नही है' तो उसको उचित है कि मौलवी साहबो के तर्जुमो का पहिले खण्डन करे, पश्चात इस विषय पर लिखे।"

(सत्या० अनुभू० ४)

यदि वेद के समान कुरान का भी कोई सत्य अर्थ होता तो ऋषि दयानन्द उसे मान लेते। अलकार तो वे भी जानते थे परन्तु मौलवियों ने उन्हें अलंकार प्रयोग करने की आज्ञा नहीं दी यदि मौलवी लोग कुरान का कोई अन्य अर्थ बताते तो स्वामी जी उसे अवश्य मान लेते। श्री महात्मा गाधी जी का कोई कट्टर अनुयायी शिवा

जी महाराज के युद्धों का सुन्दर अध्यात्म अर्थ करे तो लोग उसकी प्रशंसा तो करेंगे पर उसे सत्य नहीं मानेंगे। श्री शिवाजी महाराज अहिंसा-वादी नहीं थे वे अध्यात्म शत्रुओं से नहीं, दुष्ट मनुष्यों से लड़े।

हजरत मुहम्मद तथा दूसरे नबियों के चरित्र कुरान में भरे पड़े हैं। हजरत ने अनेक लड़ाइया लड़ीं, क्या वे अहिंसक लड़ाइया थीं? क्या उनके अनुयायी केवल मरते थे, मारते नहीं थे? मारने वाले भावों और पदों का कोई क्या अर्थ करेगा और क्या यह अर्थ सत्य भी होगा?

कुरान की हिंसा, लूट-पाट और असम्भव गप्पों के कुछ उदाहरण पढ़िये—

(१) और अल्लाह नहीं हिदायत करता कौम ज़ालिमों को ॥२॥

(२) तहकीक अल्लाह ने मोल लीं हैं मुसल्मानो से जानें उनकी, और माल उनके। बदले उसके कि वास्ते उनके बहिश्त है, लड़ेंगे बीच राह अल्लाह के, पस मारेंगे और मारे जावेंगे।

(तोब. आ० ११०-१११)

(३) ऐ लोगो! जो ईमान लाये हो, याद करो अल्लाह को, याद करना बहुत और पाकी बयान करो उसकी सुबह और शाम। वही है, जो रहमत भेजता है ऊपर तुम्हारे, और फरिश्ते उसके, तो कि निकाले तुमको अन्धेरों से तरफ रोशनी की। और है साथ ईमानवालों के मिहरबान, दुआ उनकी जिस दिन मुलाकात करेंगे इससे सलाम है और तय्यार किया है वास्ते उनके सवाब बुजुर्ग॥ ऐ नबी! तहक़ीक़ हमने भेजा है तुझको गवाह और खुशखबरी देने वाला और डराने वाला और पुकारने वाला तरफ अल्लाह की साथ हुक्म उसके के और चिराग रोशन। और खुशखबरी दे ईमान वालों को साथ इसके कि वास्ते उनके है फज़ल बड़ा। और मत कहा मान काफिरों का।

(सूरतुल्हज्राब ४०-४८ शाह रफी उद्दीन देहलवी का उर्दू तर्जुमा)

(४) लानत है अल्लाह की ऊपर काफिरों के।

(सू० बक़र)

(५) और वास्ते काफिरों के अज़ाब है रुसवा करने वाला।

(सू० बक़र)

कोई भी पाठक इन पंक्तियों को पढ़ कर इस्लाम का अनुमान कर सकता है। ईसाई, बौद्ध, जैन या पारसी धर्म में भी अल्लाह की ओर से लड़ने और मरने मारने की शिक्षा नहीं दी गई है। इन धर्मों के संस्थापकों ने शाप या वरदान भले ही दिये हों, पर हाथ में शस्त्र ले, अपने अनुयायियों की सेना बना अपना जीवन लड़ने में बिताया हो, यह तो इस्लाम की ही विशेषता है। इस्लाम के सारे इतिहास में युद्ध ही युद्ध भरा पड़ा है। जहाद करने वाला और काफिर को 'वाजिबुल्कत्ल' मार डालने योग्य सम्प्रदाय कभी शान्त नहीं रह सकता और न शान्ति का पाठ पढ़ा सकता है। इस लिये इस्लाम को मानने वाले लूट-पाट और हिंसा के दोषों से नहीं बच सकते। इस्लाम की असम्भव गप्पों में हज़रत मुहम्मद का ईश्वर की ओर से भेजा जाना बड़ी गप्प है। ईश्वर कहता है कि 'हे नबी! हमने तुम को अपना गवाह और सन्देशहर बनाकर भेजा है।' क्या यह सत्य है कि ईश्वर ने हज़रत को अपना गवाह बनाया? जिस किताब की नींव ही ग़ल्त-

बयानी पर डाली गई हो उसमे सचाई की क्या आशा !

वेद और कुरान

मान्य लेखक ने कुरान को वेद के स्थान पर ला खड़ा किया है और लिखा है कि वेद के समान कुरान में भी साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया गया है। वेद के सारे भाष्यकार वेद के दैवत तथा अध्यात्म अर्थ स्वीकार करते है परन्तु कुरान के भाष्यकार और मुसलमान ऐसा अर्थ स्वीकारने को उद्यत नहीं। जिन लोगो ने वेद के प्रकाश मे कुरान के अर्थ की धृष्टता की है वे मुसलमानो के कोप भाजन बने है। यदि मुसलमान आज की धारणाओ को छोड़ने को उद्यत हैं और कुरान का वर्तमान अर्थ बदलना चाहते है तो सत्यार्थप्रकाश का चौदहवा समुल्लास उन की सहायता करेगा। श्री प० दत्तबाबकर जी पुराने ग्रन्थो को एकान्त प्रमाण नहीं मानते वे कुरानको भी सर्वथा प्रमाण नहीं मान सकते परन्तु मुसलमान मानते है निश्चय मुसलमानो से टक्कर हो जाने पर सत्यार्थप्रकाश उन की सहायता करेगा। उन्हें सत्यार्थ के प्रकाश मे सब धर्म पुस्तको का अध्ययन करना है मै अन्त मे यही निवेदन करता हूँ।

होली

(ले०—प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति 'ध्रुव' देहली)

(१)

यह कैसी है होली भाई, कैसी है यह होली !
रंग विदेशी लेकर सब के, ऊपर उसे छिड़कना,
त्याग शिष्टता बेशर्मी से, गन्दी गाली बकना।
कीचड़ फेंक शरारत करके, तङ्ग सभी को करना,
बेहूदी चेष्टा असभ्यता, जग को सूचित करना।
हट जंगलीपन की भाई, आज तुम्हारी होली,
छोड़ो यह अपवित्र निंद्य बस, बर्बरता मय होली॥

(२)

है वसन्त की ऋतु अतिसुन्दर, सबके मन को हरती,
यह उल्लास हास से सब के, निर्मल चित को भरती।
रम्य ईश ने अपनी सुषमा की है थैली खोली,
लीला मय की लीला लखकर, भरो हर्ष मे झोली।
गावे गुणगण परमप्रेम से, मिल हरि के सब टोली,
बर्बरता को तज कर ऐसी, शुद्ध मनाओ होली॥

(३)

वैर विरोध मिटाओ सब से, सब को गले लगाओ,
रंग भक्ति का गूढ़ा अपने, ऊपर खूब चढ़ाओ।
औरो के चोलों पर भी यह, रंग सदा छिड़काओ,
मस्त बने तब जगदीश्वर के, सब मिलकर गुणगाओ
भक्तिधार से मैल मनो की होवे सब ने धोली,
हरि के गान भजन मे रत हों बालाएँ भी भोली।
ऐसी पावन मिलकर खेलो, भाई बहिनो होली॥

(४)

करो यज्ञ मिल जो सुगन्ध से, सब रोगो को हरलें,
सब के मन को मन्त्र पूतकर, शुभ भाव से भरलें।
देश भक्ति का रंग चढ़ा हो, सदा सब के ऊपर,
हम स्वराज्य सम्पादन के बिन, चैन न लेंगे भू पर
यही भावना मन मे धर कर व्रत लो सभी स्वदेशी
तज दो वस्त्र सभ्यता फैशन, भाव पदार्थ विदेशी॥
जब अकाल का ताण्डव नृत्य दिखाई चहु दिशि देता
यह आमोद प्रमोद हमे क्या है तब शोभा देता ?
अब तो अपनी पराधीनता, हट दास्य की होली,
देशभक्ति का रंग चढ़ाकर, खेलो पावन होली॥

आर्य की परिभाषा

(लेखक—पं० सिद्धगोपाल जी 'कविरत्न' साहित्य-वाचस्पति' देहली)

(१)

आर्य वह जग में कहाता।
जो सदा कर्मण्यता का पाठ कण कण को पढ़ाता।
जो कभी रोना न जाने किन्तु रोते को हसावे।
हंस रहे हों दूसरों को देखकर उनको रुलादे।
देख दुखियों को दुखी जो हों उन्हें नेता बनादे।
कर विषमता दूर जग को सीख समता की सिखादे॥
जो अनेको संकटों में भी रहे हँसता हँसाता।
मर्द वह जग में कहाता॥

(२)

हो नहीं परवाह नभ फट जाय जावें टूट तारे।
यह धरा धसके चहें भूकम्प हों बरसें अंगारे।
सिन्धु सन्मुख हो चहे आंधी बवन्डर विघ्न सारे।
हो प्रलय का दृश्य पर वह वीर वर हिम्मत न हारे।
जो जगतमें भाग्य अपने का बने खुद ही विधाता।
आर्य वह जग में कहाता।

(३)

जो किया प्रण प्राण-पण से प्राण देकर भी निभाये।
जान जाये किन्तु उसकी आन दुनियां जान जाये॥
विश्व भर को आत्म गौरव मान पर मरना सिखाये।
धर्म धन का हो धनी ध्रुव ध्येय का नित ध्यान लाये।
जो परस्पर का मनो मालिन्य पल भर में मिटाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(४)

विश्व भर के मानवों को जो कि मानव मानता है।
भेद काले और गोरे का न बिल्कुल जानता है॥
एक प्रभु की हैं सभी सन्तान जो पहिचानता है।
जो कि छूत अछूत का झगड़ा न बिल्कुल ठानता है॥
जो घृणा करता है पापों से नहीं नर से घिनाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(५)

जो कि मर्दों से कभी भी जिन्दगी लेने न जावे।
जीवितों से जिन्दगी ले ज्योति जीवन में जगावे॥
स्वप्न में भी अर्चना निर्जीव की जिसको न भावे।
जो अचेतन पर कभी विश्वास चेतन का न लावे॥
प्राण का जो मान करता प्राण ही में मन लगाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(६)

जो नहीं कुछ कर सके उसको कभी कर्त्ता न माने।
आत्मा पर ही सदा विश्वास रखकर काम ठाने॥
दुष्ट दल नाशक स्वयं मैं हूँ नहीं अवतार जाने।
मैं स्वयं हूँ सज्जनों का त्राण कर्त्ता ये बखाने॥
जो कि धन जन लाल ललनायें लुटेरो से बचाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(७)

क्रान्तिकारी पापहारी हो निरन्तर भावनायें।
विश्व के कल्याण की हों सन्निवेशित कामनायें॥
त्याग तप में तृप्त हो आनन्दमय हों आपदायें।
भाव भय का हो न जिसमें हों नहीं दुर्वासनायें॥
जो न गुरुडों से कभी मठ और धर्मालय लुटाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(८)

बुद्धिवादी दे बना निर्बुद्धिता का भाव खो दे।
अन्ध श्रद्धा पापिनी को जो अतल तल में डुबोदे॥
जो कुरीती के पड़े हैं घाव तन पर जल्द धोदे।
दासता को नष्ट कर स्वाधीनता का बीज बो दे॥
बन रहे गीदड़ उन्हें दे ज्ञान नर नाहर बनाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(९)

आर्य वे होते नहीं हैं नाम को जो काम करते।
काम के हित काम करते आर्य वे ही नाम करते॥
काम कर निष्काम वे वसुधा सुधा का धाम करते।
काम ही आराम उनका वे नहीं आराम करते॥
जो सदा 'गोपाल' कवि जीवन स्वयं नियमित बनाता।
आर्य वह जग में कहाता॥

(आर्य समाज स्थापना दिवस २४४६ को मनाते हुए सब आर्यों को इस हृदयंगम कविता के भावों को हृत्पटल पर पूर्णतया अङ्कित कर लेना चाहिये—सम्पादक सा० दे०)

पाकिस्तान और आत्म-निर्णय का सिद्धान्त

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालङ्कार सिद्धान्त शास्त्री एम० ए० एल० टा०, डी० लिट् वाइस प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज, अजमेर)

(लेखक की "साहित्य निकेतन" अजमेर से प्रकाशित होने वाली पुस्तक से]

पाकिस्तान के पक्षपाती भारत के विभाजन और पाकिस्तान बनाने के पक्ष में एक बड़ा तर्क उपस्थित करते हैं और इसका सब से प्रबल समर्थन भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी (साम्यवादी दल) कर रही है जो पाकिस्तान के प्रश्न पर मुस्लिम-लीग के साथ है। उस के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता श्री जो० अधिकारी ने अपनी पुस्तक 'Pakistan & National Unity, (१६४४) के पृष्ठ १४ पर लिखा है कि इस समय भारत की राजनैतिक गुत्थी को सुलझाने के लिए और राष्ट्रीय सरकार स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग मिलकर सरकार से उस की माग करें। इस लिये मुस्लिम लीग को अपने साथ मिलाने के लिए कांग्रेस को चाहिए कि वह मुस्लिम-लीग की पाकिस्तान की माग को पहले स्वीकार करले क्योंकि यह माग आत्म-निर्णय के सिद्धान्त (Principle of self-determination) पर आधारित है जो कि एक बहुत अच्छा सिद्धान्त है और जिसे रूस की सोवियट सरकार ने माना हुआ है। रूस की तरह भारत में भी प्रत्येक मनुष्य समुदाय को यह अधिकार होना चाहिए कि वह समान भाषा, संस्कृति, आर्थिक हित आदि के आधार पर भारत से पृथक् हो सके। कम्यूनिस्ट लोग इस विषय में रूस को अपना आधार मान कर चलते हैं इस लिये रूस के समान भारत निवासियों को भी आत्मिक-निर्णय का अधिकार मानते हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी की उपरोक्त तर्क शैली बड़ी विचित्र है। कांग्रेस से कहा जाता है कि वह पाकिस्तान को स्वीकार करले ताकि मुस्लिम लीग उस के साथ सहयोग कर सके लेकिन कम्यूनिस्ट पार्टी यह भूल जाती है कि पाकिस्तान को स्वीकार करना कांग्रेस के हाथ मे नहीं है। जैसा कि श्री प० जवाहरलाल नेहरू ने अपने १३ नवम्बर १६४५ के बम्बई के वक्तव्य में कहा है, "पाकिस्तान को स्वीकार करना भारत की समस्त जनता के हाथ मे है क्योंकि जनता का ही उस से सम्बन्ध है और जनता ही उस का अन्तिम निर्णय कर सकती है" फिर यह कहा का न्याय है कि पंजाब मे बसने वाले ४४ फीसदी हिन्दू और सिक्खों की माग को, जो पाकिस्तान नहीं चाहते ठुकरा दिया जाय और इस से भी बढ़कर कुल भारत की ७६ फीसदी जनता जो पाकिस्तान के पक्ष में नहीं है, उसकी माग को ठुकरा दिया जाय और उस के मुकाबले में भारत भरके केवल २४ फीसदी मुसलमानों की माग को स्वीकार कर लिया जाय और सो भी पाकिस्तान की माग भारत के सारे मुसलमानो की माग नहीं है केवल मुस्लिम-लीग की माग है जो कि सारे मुसलमानों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। इस बात को मि० जिन्ना ने भी अभी हाल में अपने बम्बई के वक्तव्य में कहा था जिस पर लाहौर के राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता प्रोफेसर अब्दुल मजीद खा ने ता० १५ नवम्बर १६४५ को अपना

वक्तव्य इस प्रकार दिया, 'मि० जिन्ना के हाल में दिये गये वक्तव्य से दो राष्ट्रो का सिद्धान्त छिन्न-भिन्न हो गया है तथा यह बात स्वीकृत हो गई है कि कांग्रेस केवल हिन्दुओ की संस्था नहीं है। मि० जिन्ना ने अब अपने पुराने राग में कुछ परिवर्तन कर दिया है कि लीग केवल अधिकाश मुसलमानो का प्रतिनिधित्व करती है, सबका नहीं और मि० जिन्ना की अधिकाश मुसलमानों वाली बात भी ठीक नहीं है क्योकि सन् १९३७ के चुनाव मे मुसलमानो के ७३ लाख वोटो में से मुस्लिम लीग को केवल ३ लाख वोट ही मिल सके थे। इसके अतिरिक्त उन चुनावो में मत देने के अधिकार से बहुत लोग वचित रखे गये थे अन्यथा यह निश्चय दीख पडता है कि राष्ट्र वादी मुसलमान ९० फीसदी मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करते हैं।" (हिन्दुस्तान १६-११-४५)

प्रोफेसर साहब के उपरोक्त कथन से स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि मुस्लिम लीग केवल १० फीसदी अर्थात् कुल भारत मे १ करोड़ से भी कम मुसलमानो का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार भारत की ४० करोड़ आबादी में से केवल १ करोड़ अर्थात् केवल कुल आबादी का २।। फीसदी लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाली मुस्लिम लीग है। फिर भला यह कहा का न्याय है कि २।। फीसदी लोगों की पाकिस्तान की माग को तो स्वीकार कर लिया जाय और भारत के शेष लगभग ३७।। करोड़ लोगों की माग को ठुकरा दिया जाय ? यह है कम्यूनिस्ट पार्टी का न्याय ! इसी लिये प० जवाहरलाल नेहरू ने अपने लाहौर के भाषण में कहा था कि यह बिलकुल बेहूदगी होगी कि एक जाति को आत्म-निर्णय का अधिकार दिया जावे और अन्यों को नहीं और उन्हें पाकिस्तान का एक अंग बनाया जाय यद्यपि वे उसके विरोध में हैं और बहुमत में हैं।

फिर कम्युनिस्ट पार्टी आत्म-निर्णय के अधिकार के लिए रूस की दुहाई देती है, लेकिन वह भूल जाती है कि रूस और भारत की राजनैतिक और सामाजिक अवस्था भिन्न २ है और भारत मे रूस का अनुकरण नहीं किया जा सकता। रूस में जो दशा है उस का दिग्दर्शन लखनऊ युनिवर्सिटी के इतिहास विभाग के अध्यक्ष श्री डा० राधाकुमुद मुकर्जी ने अपने एक लेख में बड़े सुन्दर ढग से किया है । वह लिखते हैं, कि, "सोवियट रूस में लगभग १७ करोड़ मनुष्य रहते हैं, १८० विभिन्न राष्ट्रीयताओं के लोग हैं, १५७ भाषाएँ बोली जाती हैं, ११ राष्ट्रीय प्रजातन्त्र हैं और २२ स्वाधीन प्रजातन्त्र हैं। आरम्भ मे ११ प्रजातन्त्र राष्ट्रो ने मिलकर संगठन किया था। वे आन्तरिक कार्यों में सब स्वतन्त्र हैं उनमे से प्रत्येक को संघ से अलग होने का अधिकार है लेकिन यह अधिकार और प्रजातन्त्रों को नहीं दिया गया है और उन ११ राज्यों में भी उनको केवल नाम के लिये सुरक्षित रख छोड़ा है वह आज तक कभी काम मे नहीं लाया गया। शेष बाईस प्रजातन्त्रों को या किसी भी प्रान्त, प्रदेश, जिला और सस्था को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है। जिन ११ प्रजातन्त्रो को अलग होने का अधिकार है उन के विषय में भी ता० १४ नवम्बर १९३६ को श्री स्टैलिन ने अपने स्मरणीय भाषण मे कहा था कि सोवियट सघ में कोई भी ऐसा प्रजातन्त्र नहीं जो संघ से पृथक् होना चाहता हो और

न ही कोई ऐसा प्रजातन्त्र है जो संघ से पृथक् होने की कभी आवाज़ भी उठाये। प्रथम महायुद्ध के रूस पर होने वाले परिणामों के विषय में श्री स्टैलिन ने लिखा था कि तीन ऐसे बड़े कारण हैं कि जिन से सब प्रजातन्त्रों को सोविट संघ में रहना आवश्यक है:—

पहला कारण आर्थिक है। कोई भी छोटा प्रजातन्त्र संघ से अलग होकर आत्म-निर्भर नहीं हो सकता।

दूसरा कारण सैनिक है। कोई भी प्रजातन्त्र संघ से पृथक् होकर सैनिक शक्ति से अपनी रक्षा नहीं कर सकता।

तीसरा कारण अन्तर्राष्ट्रीय है। आवागमन के साधन, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और अन्य राष्ट्रों से सम्बन्ध कोई छोटा प्रजातन्त्र अलग नही रख सकता।"

उपरोक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि आत्म-निर्णय का सिद्धान्त जिस की दुहाई हमारे कम्युनिस्ट दे रहे हैं रूस मे कहा तक व्यवहार मे लाया जाता है। जैसा कि श्री वैब ने लिखा है, रूस की केन्द्रीय सत्ता अतीव बलवती है जिस के सामने किसी प्रजातन्त्र को संघ से पृथक् होने का साहस ही नहीं हो सकता। फिर, यदि रूस मे आत्म निर्णय का सिद्धान्त माना भी जाता है तो वह वहा के लिए ठीक हो सकता है क्योंकि वहा प्रजातन्त्रों में कोई कटुता की भावना नहीं और न परस्पर झगड़े की आशंका, तथा वहा प्रत्येक प्रजातन्त्र में साम्यवादी सिद्धान्तों पर शासन होता है और सारा सघ भी साम्यवादी है, लेकिन इन में से भारत में एक भी बात विद्यमान नहीं। श्री स्टालिन ने सन् १९१७ में कहा था कि रूस के दलित वर्गों को जहा हम संघ से पृथक् होने का तथा राजनैतिक स्वतन्त्रता का अधिकार देते हैं, वहा हम यह नहीं तय कर सकते कि कोई प्रजातन्त्र किस समय रूसी संघ से पृथक् होगा। इस से स्पष्ट ध्वनि निकलती है कि रूस के जिन ११ प्रजातन्त्रों को पृथक् होने का अधिकार मिला हुआ है उनका भी केवल नाम मात्र का अधिकार है। कोई प्रजातन्त्र जब पृथक् होने की माग करेगा तब का समय निश्चित नहीं है और पहले तो कोई प्रजातन्त्र अलग होने की मांग करेगा ही नहीं।

यह कहने की आवश्यकता नही कि भारतकी दशा रूस से बिल्कुल भिन्न है फिर जो लोग रूस के आत्मनिर्णय का सिद्धान्त भारत मे लागू करना चाहते हैं, मालूम पड़ता है कि वे भारत की दशा से आँख बन्द कर लेते हैं। भारत एक पराधीन देश है। उसकी सब से बड़ी माँग तो इस समय स्वतन्त्रता है और फिर स्वतन्त्र हो जाने पर भी यदि आत्म-निर्णय का अधिकार दिया भी जायगा तो केवल मुसलमानो को ही क्यों? सिक्खो, पारसियो, अछूतों, द्राविड़ो आदि को क्यो नहीं? फिर मि० जिन्ना का सरासर अन्याय तो देखिये, भारत के मुसलमानो के लिये तो आत्म-निर्णय का अधिकार माँग रहे हैं, लेकिन वही आत्म-निर्णय का अधिकार अपने पाकिस्तान में हिन्दू और सिक्खो को नहीं देना चाहते, यहाँ तक कि पाकिस्तान बनाने के समय भी हिन्दू और सिक्खों की सम्मति लेना भी आवश्यक नहीं समझते। यह कहाँ का न्याय है? और यदि आत्म-निर्णय का सिद्धान्त इस प्रकार प्रचलित हो जावे तो फिर भारत के प्रान्त ही

करा, प्रत्येक जिला, उसकी प्रत्येक तहसील, उसका प्रत्येक परगना, परगने का प्रत्येक ग्राम और ग्राम का प्रत्येक मोहल्ला तक आत्म-निर्णय का अधिकार माँगेगा और इस प्रकार भारत के दो ही क्या, लाखों करोड़ो टुकड़े हो जायेंगे। एक पाकिस्तान ही क्या, लाखो 'स्तान' बन जायेंगे और तब विदेशी शासन सदा सर्वदा के लिये हमारे ऊपर अटल हो जायगा। क्या मि० जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग तथा भारत की कम्युनिस्ट पार्टी भारत को जन्म,जन्मान्तर तक दासता की बेड़ियों में ही जकड़े रखना चाहती हैं इस लिये वे पाकिस्तान की दुहाई दे रही हैं ?

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी का दूसरा तर्क यह भी है कि पाकिस्तान के आंदोलन से देश में राजनैतिक जागृति हो जायगी इसलिये भारत को स्वतन्त्र कराने मे उससे सहायता मिलेगी। लेकिन हमे आश्चर्य है कि जो कम्युनिस्ट पार्टी मजहब और धर्म का बिल्कुल बायकाट करती है, वह मजहब के आधार पर बनाये जाने वाली पाकिस्तानी योजना का समर्थन कैसे करती है ? और वह फिर यह बात क्यो भूल जाती है कि मजहब के नाम पर जो जागृति मुसलमानो मे होगी, वह कितनी भयकर होगी ? जैसा कि डा० शौकतुल्ला अन्सारी ने लिखा है कि मुसलमानों मे पाकिस्तान के आन्दोलन से मजहबी कट्टरता बढ़ेगी और उससे भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अवस्था और भी खराब हो जायगी। देश के राष्ट्रीय आन्दोलन को धक्का लगेगा और आगे चलकर देश गृहयुद्ध (Civil war) का अखाड़ा बन जायेगा। इसलिये पाकिस्तान के नाम पर देश की साधारण जनता में राष्ट्रीय जागृति की आशा करना कम्युनिस्टों का एक स्वप्न मात्र है। इससे देश स्वतन्त्रता की ओर नहीं किन्तु गृह कलह की ओर जायेगा।

इस प्रकार आत्म निर्णय का सिद्धान्त कभी भी पाकिस्तान का आधार नहीं बनाया जा सकता। इसमे कोई सन्देह नहीं कि आत्म-निर्णय का सिद्धान्त बड़ा अच्छा है और इसी लिये कॉंग्रेस ने प्रादेशिक इकाइयों के लिये इस सिद्धान्त को प्रस्ताव रूप में स्वीकार किया है और म० गाँधी, प० जवाहरलाल नेहरू तथा मौ० अब्दुल कलाम आजाद ने भी अपने वक्तव्यों में अनेक बार इसको दोहराया है और श्री राजगोपालाचार्य ने अपने प्रस्ताव में जो मि० जिन्ना को भेजा गया था, इस सिद्धान्त को एक प्रकार से माना था, लेकिन यह सिद्धान्त केवल प्रादेशिक इकाइयो के लिये और वह भी उस प्रदेश के समस्त जनता की सम्मति होने पर, कॉंग्रेस उस प्रदेश के आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को मानने को तैयार है, किसी सम्प्रदाय, मजहब और भाषा आदि के आधार पर नहीं। हमारी सम्मति में तो कॉंग्रेस और उसके नेता अपने उस प्रस्ताव पर दृढ़ रहते तो और भी अच्छा था, जो कॉंग्रेस ने सन् १९४२ में अपने प्रयाग के अधिवेशन में बिहार के श्री जगत नारायण लाल द्वारा प्रस्तुत होने पर पास किया था और जिसके अनुसार किसी भी दशा में कभी भी भारत का विभाजन नहीं किया जायगा। भारत की अखण्डता और स्वतन्त्रता कॉंग्रेस का ध्येय रही है और रहनी चाहिये।

सम्पादकीय

आर्य समाज स्थापना दिवस और आत्मनिरीक्षण:—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रकाशित आर्यपर्व सूची के अनुसार इस वर्ष आर्य समाज स्थापना दिवस ३ अप्रैल को मनाया जाना है। इस दिवस को बड़े उत्साह और श्रद्धा के साथ मनाते हुए आर्यों को आत्म निरीक्षण करना चाहिये तथा अपनी त्रुटियों को दूर करने का निश्चय करते हुए आर्य समाज के पवित्र उद्देश्य की पूर्ति में पूर्णतया तत्पर हो जाना चाहिये। 'आर्य' का अर्थ पूज्य, श्रेष्ठ, सदाचारी, धर्मात्मा, न्याय मार्गावलम्बी, उदार चरित, शान्तचित्त, कर्त्तव्य परायण ईश्वर का सच्चा पुत्र है। प्रत्येक आर्य समाज के सदस्य और सहायक को उस दिन विशेष रूप से आत्म निरीक्षण करके देखना चाहिये कि वह आर्यत्व के आदर्श पर कितने अंश तक चल रहा है। वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन में आर्य आदर्श की दृष्टि से जो न्यूनता उसके अन्दर हो उसे दूर करने का दृढ़ सङ्कल्प करना चाहिये तथा सर्वशक्तिमान् भगवान् से एतदर्थ हार्दिक प्रार्थना करनी चाहिये। कई बार देखने में आया है कि आर्यसमाज के उप नियम सं० ४(ख) में वर्णित सदाचार की निम्न परिभाषा की आर्य समाज के अनेक सदस्य, अधिकारियों का निर्वाचनादि करते समय उपेक्षा कर जाते हैं तथा सदाचार की अपेक्षा धन, प्रभाव इत्यादि बाह्य विषयों का अधिक विचार करते हैं जिसका परिणाम समाज के वास्तविक हित के लिये घातक सिद्ध होता है, वह सदाचार दुराचार की परिभाषा निम्न है —

"सन्ध्या आदि नित्य कर्म, शुद्ध वृत्ति, वैदिक संस्कार, पतिव्रत तथा पत्नीव्रत आदि सदाचार हैं। व्यभिचार, मद्यादि मादक द्रव्यों और मांस आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन, जुआ, चोरी, छल कपट, रिश्वत आदि दुराचार हैं।"

यदि सब आर्य इस सदाचार की परिभाषा को पूर्ण क्रियात्मक रूप दें और दुराचार से सर्वथा निवृत्त रहें तो निस्सन्देह आर्य समाज की बड़ी भारी उन्नति हो सकती है तथा इस समय अनेक आर्यों और आर्य संस्थाओं के विषय में जो शिकायतें समय २ पर सुनाई देती हैं और जिनसे हमारा सिर लज्जा के मारे झुक जाता है वे बहुत अंश तक कम हो सकती हैं। यदि पारिवारिक जीवनों को आर्य आदर्शानुकूल बनाने की ओर उचित ध्यान दिया जाता तो जाति भेद निवारण, शुद्धि और दलितोद्धारादि विषयक जो कठिनाइयां प्रस्तुत होती हैं वे न होतीं तथा सामाजिक सुधार के कार्य में आर्य समाज और भी अधिक अग्रसर होता। आवश्यकता इस बात की है कि आर्यों ने जहां पोपलीला का प्रायः स्वयं परित्याग किया

हुआ है वहां उनके परिवार भी उसका त्याग कर दें किन्तु उसका स्थान लोपलीला (सन्ध्या, हवन, स्वाध्याय, यज्ञ, संस्कारादि की उपेक्षा) नहीं बल्कि वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रति सच्ची श्रद्धा ले जिससे आर्यों के जीवन भी धर्मप्रचार के साधन बनें। आर्य समाज के पवित्र स्थापना दिवस यदि आत्मनिरीक्षण करते हुए आर्य, जीवनों में ऐसा सुधारात्मक परिवर्तन लाने का दृढ़ निश्चय करें तो उससे बड़ा लाभ हो सकता है। नवयुवकों और देवियों, दलित वर्ग तथा ग्रामवासियों में प्रचार की ओर अधिक देने की आवश्यकता है। सार्वदेशिक सभा द्वारा निश्चित त्रैवार्षिक कार्यक्रम की पूर्ति के लिये सब आर्य सज्जनों, देवियों और आर्य समाजों को विशेष रूप से तत्पर हो जाना चाहिये। जो विदेशी वस्तुओं तथा वेषभूषा के प्रति मोह, आर्य परिवारों मे भी नवीन शिक्षा पद्धति के कारण से प्रवेश करता जा रहा है उसको सर्वथा तिलांजलि दे देनी चाहिये। आर्य भाषा और स्वदेशी को प्रत्येक व्यवहार में अपनाना प्रत्येक आर्य नरनारी का कर्तव्य है। ३ अप्रेल को सत्यार्थप्रकाश दिवस भी उत्साह से मनाना चाहिये।

भारतीय स्त्री सहायक दल की करुण कहानी :—

गत मास भारतीय स्त्री सहायक दल (W A C I.) की १०० सदस्याओं के हस्ताक्षरों से ब्रिटिश पार्लियामेंट और केन्द्रीय असेम्बली के सदस्यों के नाम एक अपील समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई है जिसमें उनके प्रति किये गये 'सहसा अविश्वसनीय किंतु सत्य दुराचार' की जांच की प्रार्थना की गई है तथा दुराचार करने वालों के प्रति फौजी अदालत की कार्यवाही की मांग की गई है। उस पत्र के कुछ अंश निम्न प्रकार हैं जो अत्यन्त भयङ्कर और रोमांचकारी हैं। ये भारतीय शिक्षित देवियां लिखती हैं.—

'हमारा सब से मुख्य अभियोग यह है कि युद्धकालीन संगठन ने हममें से बहुतों के जीवन, घर, आचरण, अनुशासन और नैतिकता को विनष्ट कर दिया है जिसके लिये हम स्वयं भी दोषी नहीं हैं। ''स्वयं सैन्य सेवा में हमारा कोई काम नहीं था सिवाय इसके कि ब्रिटिश फौजी अफसरों के साथ मदिरापान करें, नाचें और गले में बांह डालकर प्रेम का झूठा अभिनय करें।'

"ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमें कि अबोध युवतियां अभारतीय अफसरों के साथ नाचने, प्रेम का हाव भाव प्रकट करने, शराब पीने आदि के लिये बाहर भेजी गईं। कई बार लड़कियों को केवल इसलिये सुदूर स्थानों पर परिवर्तन किया गया कि वे किसी अफसर की पार्टी के मनोरंजन की सामग्री बन सकें। कभी २ हमें ऐसी बरकों में रखा गया जिनकी निचली और ऊपरी मंजिल में ब्रिटिश अफसर रहते थे और बीच की मंजिल में हम। बलात्कार, बाधित मातृत्व, भ्रूणपात, घृणित गुप्त रोग और आत्मघात आदि की अगणित घटनाएं हुई हैं।" इत्यादि

कौन ऐसा आर्य संस्कृति का प्रेमी है जिसकी आंखें इस पत्र में वर्णित भयङ्कर तथा निन्दनीय घोर दुराचार सूचक दुर्घटनाओं का वृत्तान्त पढ़ कर लाल न हो जाएगी ? जहां एक ओर ऐसे सैनिक अधिकारियों पर मन्यु आये बिना नहीं रह सकता जो सैंकड़ों शिक्षिता भारतीय महिलाओं के नैतिक जीवन के नाश का कारण बने और उनको घोर तम दण्ड अवश्य मिलना ही

चाहिये वहां उन भारतीय महिलाओं के प्रति दया का भाव रखते हुए भी जो ऐसे नर पशुओं की काम वासना का शिकार बनीं हम यह लिखे बिना नहीं रह सकते कि इसमें धार्मिकता शून्य शिक्षा तथा विदेशी सभ्यता का भी दोष अवश्य है जिसे इन शिक्षिता महिलाओं ने प्राय. अपना रक्खा है। ऐसी धार्मिकता शून्य शिक्षा से भारतीय नर-नारियों का नैतिक जीवन कितने रसातल मे पहुंच रहा है यह ऊपर वर्णित दुराचार कथा से (जिसके सत्य होने मे सन्देह का कारण नहीं प्रतीत होता) सर्वथा स्पष्ट है। अब भी यदि हमारे देशवासी पाश्चात्य सभ्यता और शिक्षा का अन्ध अनुकरण करने मे ही अपना गौरव समझें तो इससे बढ़कर आश्चर्य और दु.ख की क्या बात हो सकती है ?

राजस्थान में ईसाइयों का विशाल जाल—

प्रवासी भारतीयों के सुप्रसिद्ध और मान्य नेता श्री भवानी दयाल जी सन्यासी ने हमारे पास 'राजस्थान की आत्मा की गुहार। राजस्थान क्या ईसा स्थान बन कर रहेगा ? हिन्दुओं के सामने जीवन मरण की समस्या' इस शीर्षक की पुस्तिका प्रकाशनार्थ भेजी है जिसमें उन्होने बताया है कि 'राजस्थान के केन्द्र अजमेर नगर में ईसाइयों का प्रभाव और उत्कर्ष देख कर आश्चर्य चकित होना पड़ता है अब पादरियों ने नगर का मोह त्याग कर गावों पर धावा बोल दिया है। ग्रामीण हिन्दुओं को ईसाई बनाने में उनको आशातीत सफलता हो रही है जो हिंदुओं के लिये सब से बड़ी चिन्ता व्यथा और भय की बात है। ईसाई प्रचारक ग्राम प्रचार की ओर अधिकाधिक ध्यान दे रहे हैं क्योकि उनको मालूम है कि हिन्दुस्तान का हृदय गाव ही हैं। इसलिये गावों मे उनके आलीशान गिरजे गर्व से मस्तक उठाये मसीह का सन्देश सुना रहे हैं, उनकी पाठशालाएं बालको के कोमल हृदय पर ईसाइयत का रंग चढ़ा रही हैं और उनके औषधालय रोगियों को ईसामसीह की शरण में आकर शारीरिक व्याधियो के साथ ही मानसिक व्याधि से भी मुक्त होने के लिये आमन्त्रण दे रहे हैं। ग्रामीण हिन्दुओ का धनी कोई नहीं, वे लावारिस माल की तरह ठोकरें खाते और धूल फाकते पड़े हैं इसलिये पादरियो को खुला क्षेत्र मिल गया है। उनके प्रयास से गाव के गाव ईसाई होते जाते हैं। ईसाइयों की सख्या बढ़ाने में साम-दान भेद दण्ड सभी उपायो से काम लिया जा रहा है। किसी को उधार कर्ज देकर किसी को नौकरी चाकरी लगाकर और किसी को मुकदमे में सहायता पहुंचा कर हिन्दू से ईसाई बनाया जा रहा है। उच्चवर्ण कहलाने वाले हिन्दुओं के अत्याचारों से दलित, पीडित एव व्यथित हरिजन सहज ही पादरियों के बिछाये हुए जाल में फँस जाते हैं और अपने सनातन धर्म को तिलाजलि देकर ईसा के भेड़ों के झुण्ड मे मिल जाते हैं।

•• यदि यही अवस्था बनी रही तो कुछ ही काल में गाव के गाव ईसाई दृष्टिगोचर होगे और मशाल लेकर ढूंढने पर भी हिन्दुओ का चिन्ह न मिलेगा।" इत्यादि

राजस्थान जैसे प्रान्त मे जहा धर्म देश रक्षार्थ महाराणा प्रताप जैसे नर केसरियो और सहस्रो महिलाओ ने अपने तन मन धन को समर्पित कर दिया इस प्रकार ईसाइयो का जाल फैलना और उसमें भोले भाले, पद दलित लोगों तथा ग्रामीण

नर नारियों का फँसना कितना खेद जनक है। किन्तु केवल खेद प्रकट करने से कोई लाभ नहीं हो सकता। कृत्रिम जातिभेद, अस्पृश्यता तथा अन्य कुरीतियों और आलस्य प्रमाद का सर्वथा परित्याग करके समस्त आर्य (हिन्दू) समाज को संगठित करने और प्रबल बनाने की आवश्यकता है जो प्रेम और सहानुभूति की भावना को जागृत करने तथा सेवा का क्रियात्मक कार्य करने से ही हो सकती है। कोरी बातों से काम नही चल सकता। केवल नगरों मे प्रचार के मोह का त्याग कर अब सेवा पूर्वक ग्राम प्रचार की ओर अधिकाधिक ध्यान देने की आवश्यकता है तभी ईसाइयों के भयङ्कर मोहक जाल से हम अपने भाइयो को बचा सकेंगे। यह प्रसन्नता की बात है कि आदर्श नगर अजमेर आर्यसमाज ने इस समस्या पर गभीरता पूर्वक विचार करके ग्रामों मे वैदिक धर्म प्रचार, आर्य-संस्कृति का प्रचार एवम् ईसाइयों से हिन्दुओं का उद्धार करने का दृढ़ संकल्प कर लिया है और उसके लिये केन्द्र स्वरूप आर्य मन्दिर के निर्माण का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है जिसकी पूर्ति के लिये उन्होने अभी २५ हजार रु० की अपील की है। हमें विश्वास है कि राजस्थान तथा अन्य प्रान्तों के धनी मानी सज्जन इस अपील के उदार उत्तर से अपने आर्यधर्म और संस्कृति के प्रति सच्चे प्रेम का परिचय देकर अपने कर्तव्य का पालन करेंगे तथा राजस्थान को ईसास्थान बनाने से बचाएंगे। अन्य प्रान्तो में भी सर्वत्र इस विषयक प्रयत्न सगठित रूप से किया जाना चाहिये।

श्री जनार्दनजी आर्य पर निर्दय आक्रमणः—

गाजियाबाद आर्य समाज के अत्यन्त उत्साही स० मन्त्री श्री जनार्दन जी आर्य उन कर्मशील आर्य रत्नों मे से हैं जिन्हे दिन रात उठते-बैठते जागते सोते हर समय आर्यसमाज के हित की ही चिन्ता रहती है तथा जो आर्यसमाज के गौरव को बढ़ाने के लिये निरन्तर प्रयत्न शील रहते हैं। मुराद नगर के एक शुद्धिशुदा परिवार के ऊपर जिसके मुखिया श्री प्रेम कुमार जी सुपरवाइजर आर्डिनेन्स फैक्टरी हैं। मगलसिंह यादव नामक एक व्यक्ति ने स्वार्थ वश एक अभियोग चला रक्खा है (इसका विवरण स्थानाभाव से यहा नहीं दिया जा सकता फिर कभी दिया जायेगा) उस प्रसग मे सहायतार्थ श्री जनार्दनजी अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती देवी जीप्रचार मन्त्रिणी आर्यसमाज गाजियाबाद सहित २७ फरवरी को कानपुर गये हुये थे लौटते समय मगलसिंह यादव के चार गुण्डो ने प्लेटफार्म पर उन पर तथा उनके साथियों प० रामचन्द्र जी शास्त्री पुरोहित आर्यसमाज बिरला लाइन्स और श्री शम्भुसिंह पर लाठियों से भयकर आक्रमण कर दिया जिससे उन्हें भारी चोटें आईं तथा उनके सब वस्त्र रक्त से लतपत हो गये। खेद है कि डी० ए० वी० कालेज कानपुर के छात्रों की सहायता मागने पर भी उन्हें न मिल सकी तथापि श्री जनार्दन जी तथा उनकी धर्मपत्नी ने आर्योचित साहस से काम लिया और वे जरा भी उद्विग्न वा भयभीत नहीं हुये। ईश्वर की कृपा तथा आर्यों की सहायता से श्री जनार्दनजी अब गाजियाबाद में अच्छा स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। हम मगलसिंह यादव के द्वारा कराये इस अत्यन्त अनुचित बर्बरता पूर्ण आक्रमण की घोर निन्दा करते और श्री जनार्दन जी तथा उन

के परिवार के साथ समवेदना प्रकट करते हुये उनके धर्म प्रेम, उत्साह और साहस की हार्दिक प्रशंसा करते हैं। ऐसे नीचतापूर्ण आक्रमणो और आपत्तियों से भयभीत न होते हुए यदि समस्त आर्य श्री जनार्दन जी की तरह आर्य-समाज के कार्य में निष्काम भाव से तत्पर रहे तो आर्यसमाज की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति हो सकती है। ईश्वर कृपा करें कि ऐसे सच्चे आर्य-हमारे देश में करोड़ो की सख्या में उत्पन्न हों।

वीरवर राजा महेन्द्र प्रताप पर प्रतिबन्धः-

सुप्रसिद्ध देशभक्त, स्वतन्त्रता के उत्कट प्रेमी प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन के संस्थापक श्री राजा महेन्द्र प्रताप को जापान में बन्धन मुक्त कर दिया गया है यह प्रसन्नता की बात है किन्तु भारत सरकार ने अब तक उन पर भारत न लौटने विषयक प्रतिबन्ध को नहीं हटाया यह खेद जनक वार्ता है जिसके कारण समस्त भारतीय जनता में विशेषतः आर्यजगत् में घोर असन्तोष है। हम भारत सरकार से अनुरोध करते हैं कि वह सच्चे देशभक्त वीरवर राजा महेन्द्र प्रताप पर से सब प्रतिबन्धों को तुरन्त हटा ले ताकि वे अपनी प्रिय मातृभूमि की सेवा करने में समर्थ हो सकें।

ध० दे०

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा

... देशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्य समाज	„	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	„	०।)
(४) आर्य्य सिद्धान्त विमर्श	„	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	„	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	„	अ० २)
(७) बलिदान	„	॥)
(८) आर्य डायरेक्टरी	„	अ० १)
(९) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर	„	=)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (प इन्द्रजी)		।=)
(११) आर्यवीर दल लेखमाला (श्री ओंप्रकाश जी)		१)
(१२) यमपितृ परिचय (प० प्रियरत्न जी आर्ष)		२)
(१३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	„	१)
(१४) वैदिक सूर्य विज्ञान	„	=)
(१५) वेद में असित शब्द	„	-)॥
(१६) ऋग्वेद में देवृकामा	„	-)
(१७) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	„	१)
(१८) विमान शास्त्र	„	।=)॥
(१९) मातृत्व की ओर श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक		अ० १), स० १॥)
(२०) नया संसार		=
(२१) कथा माला	„	
(२२) आर्य जीवन गृहस्थ		
(२३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		
(२४) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		
(२५) योग रहस्य		१)
(२६) उपनिषद् ईश ।=) केन ॥) कठ ॥), प्रश्न ।=) मायडूक्य ≈), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥।) बृहदारण्यक २)		
(२७) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		-)
(२८) वैदिक सन्ध्या रहस्य (श्री नारायण स्वामीजी		≈)॥
(२९) शहादत पत्रिका		।-
(३०) आर्य समाज मन्दिर चित्र		।)
(३१) इजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३२) बहिनों की बातें		१
(३३) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी)		॥।)
(३४) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३५) कुमुदिनीचन्द्र (श्री प० मेधाव्रतजी)		२)
(३६) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी		≈)
(३७) स्वामी दयानन्द जीवन चरित्र (प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)		१॥)
(३८) दयानन्द (कविता) प० यज्ञदत्त त्यागी		।=)
(३९) ध्यान योग प्रकाश स्वामी लक्ष्मणानन्द जी		१॥-)
(४०) सत्यार्थ प्रकाश गान(प० सत्यभूषणजी योगी)		।=)
(४१) हमारे घर (श्री ... जी गौतम)		॥=
(४२) भारतवर्ष ...		।)
(४३) हमा...		≈)
(४४) ...		-)
(... अपमान क्यों ?		-)॥
... लोचक		-)
... और उसकी रक्षा		-)



१९४६ ई०
२००६ सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश १०शि

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २२ { जून १६४६ ई०] ज्येष्ठ २००३ दयानन्दाब्द १२२ { अङ्क ४

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् तमु हुवे वाज सातये इन्द्रं भराय शुष्मिणम्। भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥

ऋग्वेद ८ । १३ । ३ ॥

शब्दार्थः—मैं (वाज सातये) ज्ञान और बल की जिस में प्राप्ति हो ऐसे (भराय) काम क्रोधादि शत्रुओं से संग्राम के लिये (तम् उ) उसी (शुष्मिणम्) बलशाली (इन्द्रं) परमेश्वर को (हुवे) पुकारता हूँ—हृदय में स्मरण करता हूँ। हे परमेश्वर तू (नः) हमारी (वृधे) शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति के लिये और (सुम्ने) सुख के निमित्त (अन्तमः सखा भव) अन्तरङ्ग—घनिष्ठ निकटतम मित्र हो जा।

विनय—हे सर्वज्ञ सर्वशक्तिमय प्रभो! हम सच्चे ज्ञान और बल को प्राप्त करना चाहते हैं आप हमें ऐसी शक्ति दें कि हम काम क्रोध लोभ मोह आदि आन्तरिक तथा बाह्य दुष्ट शत्रुओं पर विजय लाभ कर सकें। हमें सच्चे सुख के देने वाले आप ही हैं अतः हम आप से प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी सब प्रकार की उन्नति के लिये हमारे निकटतम श्रेष्ठ मित्रवत् सहायक बनें।

वेदोपदेश

पतितोद्धार

[व्याख्याकार—श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ आचार्य दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर]

ओ३म् अरमयः सरपसस्तराय कं तुर्वीतये च वय्याय च स्रुतिम् । नीचा सन्तमुदनयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं श्रवयन्त्सास्युक्थ्यः ॥

ऋ० २ । १३ । १२

शब्दार्थ—तू (सरपसः) अपराधियो को, पापियो को (तराय) तरने के लिये (कम्) सुखपूर्वक (अरमय) रमण कराता है (च) और (स्रुतिम्) विविध प्रकार की गति को (तुर्वीतये) साधनो से व्याप्ति के लिये (च) और (वय्याय) विस्तार के लिये कराता है (नीचा-सन्तम्) नीचे हुए हुए को (उद् अनय) ऊपर उठाता है उन्नत करता है (परावृजम्) सर्वथा वर्जित को (अन्धम्) अन्धे को (प्र) उत्तम रीति से दिखाता है (श्रोणम्) बहिरे को (श्रावयन्) सुनाता है, श्रवण शक्ति युक्त कर देता है (स.) ऐसा तू (उक्थ्य) प्रशसा करने योग्य है।

विवरण—अल्पज्ञता, अविद्या और दुराग्रह की प्रबलता के कारण मनुष्य से अपराध होते है। यही मनुष्य की गिरावट है। गिरते पर हंसना खलो का, दुष्टो का काम है। सज्जन उस पर करुणा करते हैं। इसी भाव को लेकर वेद का उपदेश है "अरमयः सरपसस्तराय कम्" पापियो को तराने के लिये सुखपूर्वक रमण कराते हो। योग्य धार्मिक को सभी प्यार करते है। सच्ची वीरता पापी को पाप से हटा कर धर्म पर लाने मे है। यह महत्कार्य पापी पर घृणा करने से नहीं हो सकता। पाप से घृणा करो पापी से मत करो। जिस पुण्य सुख की प्राप्ति के लिये तुम दान पुण्य, भगवदाराधन करते हो, उसी की प्राप्ति के लिये वह पाप पथ का पथिक बना है। यह उसकी भूल है। भूला भटका मनुष्य फटकार का पात्र नहीं होता, वह तो करुणा का पात्र है। अतः "नीचा-सन्तमुदनय" नीचे गिरे को ऊपर उठा, अन्धे को रूप दिखा और बहिरे को शब्द सुनवा।

यह कार्य साधारण जना का नहीं है, प्रत्युत देवो का है।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः ॥

अ० ४ । १३ । १ ।

देव गिरो हुओं को बार बार उठाते है, पाप करने वाले को बार बार जिलाते है। पाप करना मानो मरना है। पापी को पापसे हटाकर धर्ममार्ग पर उसे चलाना जिलाना है नया जीवन दान देना है जीवन दान कितना महान कार्य है। जिस की आखे नही है उस से पूछो आखो का मूल्य। बहरे से श्रवणेन्द्रिय का महत्त्व सुनो। अन्धे को आख देना उसको नया जीवन देना है। अन्धकारमय ससार से उद्धार करके आलोकमय लोक में लाना है, अन्धे का संसार सूना होता है। आखें देकर उसके उजड़े घर को बसाना है।

पापी की भी हृदय की आख फूट गई है। उसे पाप पुण्य मे भेद प्रतीत नहीं होता। विवेक-नेत्र, ज्ञानचक्षु देकर उसका पुनर्जन्म करना है।

पतितोद्धार सचमुच पवित्र कार्य है। इस की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है॥

अध्यात्म सुधा

॥ एक मुमुक्षु ॥

(लेखक—आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक महात्मा)

नाम जपने से नचिकेता के यह आया है बल,
मेरे अन्दर से गई हैं हीनता सारी निकल।
जड़ भरत शुकदेव आदि की हैं मन में मूर्ती,
किस लिये उद्देश्य की मेरे न होगी पूर्ती।
नम्रता से उनके चरणों में हूँ मस्तक टेकता,
श्रध्दा भक्ति से किया करता हूँ मै पूजन सदा।
पुस्तकों मे हमको बतलाते हैं जो मुक्ति का गुर,
है ऋषिमुनियो का दर्शन और भाषण क्या मधुर।
जितने साधु हो चुके, साधन चतुष्टय में निपुण,
छेड़ सकते थे नहीं जिनको कभी भी तीनो गुण।
हार्दिक देता हूँ उनको कोटि कोटि धन्यवाद,
अपनी करुणा से दिया गुरुओ ने है आशीर्वाद।
उनकी पद धूली है मेरी आँख का सुर्मा बना,
वास्तविक कल्याणपथ जिसने मुझे दिखला दिया।
न्यूनतायें और निर्बलतायें दीं जड़ से उखाड़,
शूरता से दीनताओ को दिया मैंने पछाड़।
डगमगा सकती नहीं निष्ठा मेरी मेरा परण,
आज आजाये करूँगा मौत का शुभआगमन।
है यह सम्भव भूल जा सूरज को सूरज की किरण,
मैं नहीं करने का अपनी धारणा का विस्मरण।
तृप्त करसकते नही हैं मुझको ये प्रकृति के भोग,
मैंने अनुभव कर लिया है इनका
संयोग और वियोग।

वह व्यथा है कौन सी जो त्रास पहुंचाये मुझे,
कोई बेचैनी नहीं है जो कि तड़पाये मुझे—
रात दिन आध्यात्मिक रहती है प्यारी बात चीत
सुनता हूँ हर उपनिषद् के और
ललित गीता के गीत।

व्यर्थ चर्चा में नहीं खोता हूँ मे अपना समय,
ब्रह्मविद्या का ही है अध्ययन बस मेरा विषय।
लालसा आशा व तृष्णा और इच्छायें कुटिल,
कूड़े करकट की तरह सब फेंकदीं, है साफ दिल।
चेष्टायें दुष्ट सब रहने लगी हैं मुझ से दूर,
हानि कर आकांक्षाओ को किया है चकनाचूर।
कितनी ही गहरी हों चोटें, मै नहीं हूँगा उदास,
दुर्दशा मुझ को बना सकती नहीं है अपना दास।
जो निरर्थक बात है मस्तिष्क मे लाता नहीं,
जो निकम्मा बोझ है वह उससे उठवाता नहीं।
अब अशिव चिन्तन नहीं करता कभी भी भूलकर,
सोचता हूँ देखता हूँ शुभ ही शुभ, आठों पहर।
क्षुब्ध और उद्विग्न मैं होता नहीं हूँ शान्त हूँ,
सकटों क्लेशो दु.खो से वीर होकर क्यों डरूँ।
भारी से भारी विपत्ती और पीडायें हजार,
पास मेरे आ रही है करने को मेरा सुधार।
मेरे बन्धन काटने को भेजता है ईश्वर,
कष्ट सन्ताप और विपदायें हैं जितनी घोरतर।
होके हर्षित उनका स्वागत चाहिये करना मुझे,
धीर उत्साही हूँ मै कब है उचित डरना मुझे।
जिस तरह भी हो सके बनना है मुझको वीत राग,
मैं निछावर तुम पे हूँ ऐ तप तितिक्षा और त्याग।
मान प्रतिष्ठा को पैरो से दिया मैंने कुचल,
धो दिये अन्त करण के आवरण विक्षेप मल।
लग गया है यह पता मुझको, नही मैं जिस्म हूँ,
छोड़ चेतनता को अपनी भ्रमसे क्यों मैं जड़ बनूँ।
डाह की ज्वाला से यह हृदय नहीं जलता है अब,
हो गये ठंडे धधकती आग के उद्वेग सब।

हो चुकी हैं राख, इस भट्टी की कुल चिंगारियां,
कामनायें चाहनायें फूँकती है अब कहां।
वेदनायें और व्याकुलतायें आयें हर घड़ी,
शान्ति सन्तोषादि के आगे रहेंगी कब खड़ी।
क्षोभ और विक्षेप मेरा कुछ नहीं सकते बिगाड़,
हाथियों के झुंड को एक शेर देता है लताड़।
अपने निश्चय बलको पक्का कर लिया है मैंने अब,
कैसी शंका कैसा संशय मिट गये संदेह सब।
दृढ़ मेरी शुभ भावना है और है ऐसी अटल,
सामने कितनी हो कठिनाई रहेगी यह अचल।
कोई आपत्ति इसे पीछे हटा सकती नहीं,
फूंक मारे से भला पर्वत उखड़ता है कहीं।
हो गया आदर्श पर आरूढ़ मेरा हर विचार,
और वस्तु से नहीं, है आत्मा से मुझ को प्यार।
काम लोभ आदिक कभी मुझको सता सकते नहीं
क्रोध मोह आकर मुझे किंचित दबा सकते नहीं।
विघ्न बाधाओं के टुकड़े टुकड़े मैंने कर दिये,
कोई भय या कोई घबराहट नहीं मेरे लिये।
लक्ष्य तक पहुंचूंगा जीवन भर नहीं हूँगा शिथिल,
त्रुटि निर्बलतायें सारी खाक में जायेंगी मिल।
सामने मेरे ठहर सकता नहीं कोई विकार,
उड़ गये संकल्प कुत्सित और दूषित संस्कार।
इन्द्रिय, मन, देह पर मेरा है शासन सर्वथा,
आज्ञा पालन मे तत्पर रहते हैं यह सर्वदा।
जानता हूँ ओ३म से सम्बन्ध है मेरा अटूट,
ध्यान मे उसके ही इक दिन प्राण यह जायेंगे छूट।
मैं सफल हूँगा, सफल हूँगा, सफल हूगा अभी,
हैं मेरे धर्मात्मा रक्षक सहायक अब सभी॥

["मुमुक्षु" विषयक ये उत्तम उद्गार आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक उच्च कोटि के महात्मा पुरुष ने भेजे हैं जो अपना नाम भी पत्रो मे प्रकाशित नहीं करना चाहते। ये वैयक्तिक लाभार्थ उन्होंने मेरे पास भेजे थे प्रकाशनार्थ नहीं तथापि इन्हें अध्यात्म प्रेमियो के लिये विशेष उपयोगी समझ कर उनकी अनुमति के बिना भी प्रकाशित कराया जा रहा है—सम्पादक सा० दे०]

शंका समाधान

श्री प्यारे लाल जी वैश्य आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर महोदय ने सार्वदेशिक मई १६४६ मे पृष्ठ ११८ पर एक प्रश्न किया है कि—

'स्वा० दयानन्द ने संस्कार विधि मे विवाह प्रकरण में पारस्कर गृह्यसूत्र के अनुसार लाजाहोम लिखा है। परन्तु यजुर्वेद भाष्य अ० १६ म०८१ में (लाजा) भूजा हुआ सूखा अन्न आदि होम करने योग्य नहीं होता उसको तुम जानो।" ऐसा लिखा है।

शंका-समाधान—

श्री प्यारे लाल जी ने स्वामी दयानन्द जी के भाष्य का अभिप्राय ही नहीं समझा। उसी से यह शंका उत्पन्न हुई है।

पदार्थ भाष्य इस प्रकार है— हे मनुष्यो। अच्छे प्रकार देने पढ़ाने पढने और परीक्षा करने हारे तीन विद्वान् लोग उत्तम ज्ञान और कर्मों के साथ बहुत प्रकारों से जिस यज्ञ को, दीर्घ लोमों के साथ लोमों को धारण करें और उस इस यज्ञके (अमृत रूप) नाशरहित रूप को तुम लोग जानो, यह बालकों से नहीं अनुष्ठान करने योग्य है, और इसके मध्य त्वचा, मास और भूजा हुआ सूखा अन्न आदि होम करने योग्य नहीं होता। इस को भी तुम जानो।

ऋषि दयानन्द के इस पदार्थ भाष्य को समझने का यत्न कीजिये।

१—ऋषि दयानन्द एक विशेष यज्ञ बतला रहे हैं जिसमें तीन देवता—प्रज्ञा, कर्मों द्वारा बड़े लोमों से छोटे लोमों को धारण करते हैं, उस यज्ञ में त्वचा, मास और लाजा हवि नहीं बनते। यह आपको जानना चाहिये।

२—बतलाइये विद्वानो। यह वैदिक पहेली कि यह कैसा यज्ञ है जिसमे न वृक्षों की छाल पडती है, न फलों का गूदा, न भुने अन्न आदि (लाजा) का उपयोग है। करने वाले तीन उत्तम देने वाले है। पढने पढाने और परीक्षा करने वाले हैं। उस यज्ञ का रूप अमर है, वह कभी नष्ट नहीं होता। बालक उसे कर नही सकते। उसमे दीर्घ लोमों के साथ देह के और लोमों को भी धारण करते है। अर्थात् चौर नहीं कराते।

३—यह अनोखा यज्ञ ज्ञान—दान यज्ञ है। ब्रह्म यज्ञ है, द्रव्य मय यज्ञ नहीं है, उसी से इस मे छालें गूदा और भुने पके अन्नादि का उपयोग नहीं है, उसका पठन पाठन करने और परीक्षा करने वाले तीन तरह के विद्या वृद्ध पुरुष ही सम्पादन करते हैं बालक जन, अल्पविद्या वाले मूर्खजन इस ब्रह्म दान यज्ञ का सम्पादन नहीं कर सकते। गुरुजनों से शिष्य पढ़ते हैं, वे गुरु हो जाते हैं, उनसे फिर शिष्य पढ़ते हैं, इस प्रकार शिष्य परम्परा से या गुरु परम्परा से अनादि काल से वेद अध्ययनाध्यापनयज्ञ चल रहा है, चलता रहेगा उसका नाश नहीं होता, यही उसका अमृत रूप है, यह बात आप सब को जाननी चाहिये। अमृत में एक विशेषता यह है कि दीर्घ लोमों के साथ शरीर के अल्प लोम भी इस यज्ञ में धारण किये रहते हैं, अर्थात् अन्य यज्ञ दीक्षा में जैसे यजमान दाढ़ी मूछ केशादि वपन करता है वैसे इस यज्ञ में लोमों का वपन आवश्यक नहीं प्रत्युत

दीर्घ लोम केश श्मश्रु आदि सहित ब्रह्मचर्य धारण करना पडता है, ब्रह्मचर्य पूवक ही वेदाध्ययनाध्यापन का महायज्ञ सम्पादन हो सकता है, अन्यथा नही। फैशनेबल केश, कघी, काटा के शौकीन लाग इस यज्ञ का सम्पादन नही कर सकते। यह ज्ञानमय यज्ञ है इस मे (उक्त) वृत्तों की छाले, (मास) गूदा रूप पुरोडाशादि, (लाजा) मूजे हुए अन्नादि भी होम करने योग्य पदाथ नही है अर्थात् ये स्थूल हविष्य पदार्थ ज्ञान यज्ञ के उपयोगी नही है।

४—इस प्रकार ऋषिदयानन्द ने वेद भाष्य मे ज्ञानयज्ञ या ब्रह्म यज्ञका स्पष्ट वर्णन किया है उसमे शका का कोई अवकाश नही है। सस्कार विधि में जो विवाह आदि सस्कारों के प्रधान होम हैं वे द्रव्य यज्ञ है, उनमे केशधारणादि आवश्यक नहीं है। उनमे अनेक प्रकार के स्थूल पदार्थ छाल, गुडादियुक्त पदार्थ व लाजा आदि भी उपयोगी हैं, इससे कोई विरोध भी नही है।

मै ने ऋषि के भाष्य के आशय को स्पष्ट कर दिया है। सार्वदेशिक के पाठक जन विवेक करलें।

निवेदक—
जयदेवशर्मा—विद्यालकार
मीमासा तीर्थ—
(चतुर्वेद भाष्य कार)
ज्ञान भवन आदर्शनगर अजमेर।

क्या कम्युनिज़्म सोलह आना राजनैतिक वाद है ?

(पण्डित मदनमोहन जी विद्यासागर वेदालङ्कार, प्रेम मन्दिर तेनाली मद्रास)

कुछ दिनों से भारतीय राजनैतिक क्षेत्र में "कम्यूनिस्ट" पार्टी ने अपना हल भी चलाना प्रारम्भ कर दिया है। जनता की इसके विषय में तरह २ की धारणायें हैं। मुझे उनसे कोई मतलब नहीं। मुझे अपनी टिप्पणी देने के लिये 'भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी' के कार्यक्रम को भी आधार नहीं बनाना। मै तो सीधे सादे तौर पर 'वास्तविक कम्यूनिज्म' (जैसा मै समझ सका हूँ) क्या है, आर्यजगत् के सामन रखदेना चाहता हूँ। साथ में यह भी स्पष्ट कर दूँ कि मै कम्यूनिस्ट नही हूँ। कम्यूनिज्म को मानव शान्ति के लिये पूर्णत हितकर भी नही समझता। मेरी दृष्टि मे कम्यूनिज्म "एक भयानक शराब है, वह भी विदेशी।" खैर,

१ कम्यूनिज्म (जैसा कि मार्क्स, एञ्जल्स आदि ने अपने ग्रन्थों में बयान किया है) मानव इतिहास में गुजरने वाली सब घटनाओं का कारण 'भौतिक' बताता है। राजनैतिक व सामाजिक उथल पुथल का कारण केवलमात्र 'आर्थिक' ही मानता है।

२ कम्यूनिज्म में 'चेतन तत्व का (मूल आदि कारण रूप में) कोई स्थान नहीं।

३ (मूल) कम्यूनिज्म, अन्तर्जातीयवाद (=अर्थात्'मानव मानव में देशकुल जाति किसी प्रकार का भेद नहीं) का पोषक है।

४ 'व्यक्तिगत जायदाद' को पैतृक या परम्परागत नहीं मानता।

५ जीवन को धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टि से न देखकर 'आर्थिक दृष्टिबिन्दु' से जाचता है।

६ पदार्थों के उत्पत्ति व वितरण में पर्याप्तता व समानता को स्वीकार करता है। उपभोग में मानव के लिये 'भक्ष्यअभक्ष्य' का कोई विचार नहीं करता।

७ पापपुण्य सब को व्याख्या आर्थिक या भौतिक कारण मे से ही करने का प्रयत्न करता है।

८ स्त्री पुरुषों में नैसर्गिक भेद को छोड़ कर सामाजिक व राजनैतिक किसी प्रकार के भेद को स्वीकार नहीं करता।

९ कम्यूनिज्म का यह निश्चित सिद्धान्त है कि मृत्यु के बाद पुनर्जन्म नहीं होता। 'आत्मा' कोई पृथक् नित्य चेतन तत्व नही।

१० किसी अपौरुषेय ज्ञान मे विश्वास नहीं करता।

११ विकासवाद का पोषक है। 'भौतिक' तत्व ही वर्त्तमान मे दृष्टिगोचर होने वाले 'जड़-चेतन जगत्' का आदि मूल है।

इस प्रकार अन्य भी बहुत सी बातें लिखी जा सकती हैं, पर साधारण बाह्य रूप रेखा देने के लिये इतनी पर्याप्त समझता हू।

क्या उपर्युक्त सिद्धान्तों को प्रतिपादन करने वाला वाद सोलह आना राजनीतिक हो सकता है? कम्यूनिस्ट मानव जीवन में जो राजनैतिक पहलू है, केवल उनका हल ही बयान नहीं करता। वह तो स्पष्ट तौर पर बहुत सारे अराजनीतिक विषयों पर भी अपनी निश्चित सम्मति देता है।

(यहां उसकी अच्छाई बुराई जानने का मैं प्रयत्न नहीं करता।)

दूसरी तरफ कांग्रेस को लीजिये यह विशुद्ध राजनैतिक संस्था है, क्योंकि इसका 'अराजनैतिक' विषयों के सम्बन्ध में कुछ भी मत नहीं। आप ईश्वर को मानें या न मानें, साकार मानें या निराकार, वेद का पारायण करें या कुरान की आयतें घोटें, कांग्रेस चुप।

हिन्दू महासभा को भी लीजिये। जन्म से वर्णव्यवस्था मानिये या गुणकर्म से, नास्तिक रहिये या आस्तिक, वेद मानिये या गीता, श्रीकृष्ण को पूजिये या शिव को हिन्दू महासभा आप को कुछ नहीं कहती।

कांग्रेस का सदस्य बनकर भी प्रत्येक व्यक्ति 'आर्यसमाजी' 'शैव' 'वैष्णव' 'हिन्दू' 'मुसलमान' अपने को कह सकता है। यही दशा हिन्दू महा-सभा की सदस्यता के लिये है। भेद इतना ही है कि भारत का अन्न खाकर मक्कामदीने का स्वप्न लेने वालों के लिये इसमें जगह नहीं। यह केवल 'हिन्दुओं' की राजनीतिक संस्था है, जब कि कांग्रेस भारतीयों की।

क्या यही दशा कम्यूनिस्ट बनने पर रहती है? क्या कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य बन कर कोई अपने को हिन्दू या मुसलमान कह सकता है? हर्गिज नहीं। कम्यूनिस्ट शासन में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता होती है, यह बात और है। परन्तु सदस्य बनने के लिये 'धर्म, मत, सम्प्रदाय' से इन्कार करना आवश्यक है। इन दोनों में सूक्ष्म भेद को भूलना नहीं चाहिये।

कारण स्पष्ट है कि कम्यूनिज्म राजनीतिक वाद न होकर अपने आप में पूर्ण सादा जीवन का एक दर्शन है। इस का सदस्य बन कर आर्य-समाजी नहीं बना जा सकता। हिन्दू नहीं कहलाया जा सकता। जो इज्म स्पष्ट तौर पर 'ईश्वर, धर्म, ज्ञान पुस्तक' से इन्कार करता हो, इन का तीव्रता से खण्डन करता हो, धर्म को अफीम समझता हो, उस का सदस्य 'इन तीनों में विश्वास' रखते हुए बना कैसे जा सकता है?

मै इस लिये आर्य जगत् की सेवा में यह निवेदन करना चाहता हू कि इसे सोलह आने राजनीतिक न समझें। अन्यथा आपको प्रत्येक आर्य को यदि वह चाहे तो इस में अपने मतानुसार प्रवेश कर अधिकार देना पड़ेगा। जो कि अपनी मौत की स्वय आज्ञा देना है।

इस्लाम मत मीमांसा

(१)

इस्लामी अल्लाह

[लेखक—श्री पं० शिव शर्मा जी शास्त्रार्थ महारथी साभल]

सज्जनो। मुसलमान मौलवियों को, कुरान में बताये हुए अल्लाह पर बड़ा ही अभिमान है। इस अभिमान के वशीभूत होकर वे सारे ही ससार के मत मतान्तर वादियों को, काफिर आदि निन्दित शब्दों द्वारा, सम्बोधन करते हैं। इस लेखमाला मे हम, कुरान आदि से ही यह दिखाने का यत्न करेंगे कि क्या वास्तव म इस्लाम ने, अल्लाह को ऐसे ही रूप मे प्रकट किया है जिस पर उनको इतना अभिमान करना पड़े, और वैदिक धर्मियों जैसे एक ईश्वर के उपासकों को भी काफिर आदि की निन्दित उपाधियों से स्मरण किया जाय? हम इस लेख माला में इस्लामी प्रामाणिक ग्रन्थों के ही हवालों से केवल अल्लाह ही के ऊपर नहीं, किन्तु इस्लाम के प्रत्येक सिद्धान्त पर 'सार्वदेशिक प॰ मे यथा सम्भव प्रत्येक अङ्क मे पूर्ण प्रकाश डालने का यत्न करते रहेंगे। यदि पाठक न्याय दृष्टि से इस लेखमाला को पढेंगे तो उन को भले प्रकार ज्ञात हो जायगा कि इस्लाम का प्रत्येक सिद्धान्त कितना युक्तिहीन और असम्भवता पूर्ण है जिस पर उनको इतना दुरभिमान है।

अल्लाह का अनित्यता

यह सर्वतन्त्र सिद्धान्त है कि प्रत्येक परिवर्तन शील वस्तु अनित्य होती है। इस कसौटी पर हमको कुरानी अल्लाह को परखना है—वह एकरस कूटस्थ और अपरिवर्तनशील है अथवा विकारी होकर अनित्य ठहरता है। "यौम युकशिफो अन् साक" । सु० कलम, रुकूअ २। १—तर्जुमा शाह अब्दुल कादिर साहब—'जिस दिन खोली जावे पिडली। सफा ६७०॥ २—एक और तर्जुमा—जिस दिन खोली जावे पिडली॥ सफा ७०१॥ ३—तफसीर फतेहुर्रहमान 'रोजे कि जामा बर्दाश्ता बाशद अजसाक' ४—तर्जुमा ख्वाजा हसन निजामी साहब जिस दिन परदा उठा दिया जायगा। जिल्द ० सु० ८१५॥ ५—तर्जुमा शम्सुल उलमा नजी अहमद साहब 'जिस दिन अर्श की पिडली से परदा उठा दिया जायगा।" सु० ८१५॥ ६—तफसीर मूज—'जिस दिन खुलेगी पिडली अर्श की या तजल्ली करेगा नूर खुदायता ला का और एक रिवायत यह है कि जो खोलेगा और जाहिर करेगा परवर दिगार पिडली अपनी। सफा ५६०॥ इस आयत पर तफसीर मूजह ने बड़ा लम्बा हाशिया चढ़ाया है—

हश्र (कियामत) के दिन हर उम्मत सम्प्रदाय) जिसका पूजती थी उनके साथ आवेगी। मुसलमान खडे रहेंगे। परवर दिगार आवेगा जिस सूरत मे न पहचानें। फरमायगा—मै तुम्हारा रब्ब हूं। मेरे साथ आओ'। कहेंगे—नऊजो बिल्लाह हमारा रब्ब आवेगा तो हम पहचान लेंगे' फरमायगा—कुछ उस का निशान जानते हो? कहेंगे—जानते हैं। फिर जाहिर होगा उनकी पहचान मुआफिक और पिडली खोलेगा तो सजदे मे गिरेंगे'। सफा ५६७॥

७—तफ़सीर कादरी—"तुम लाना उन शरीकों को जब उठाया जायगा परद' या खुल जायगी और दिखाई देगी साक़ या तजल्ली फ़रमायेगा हक़ताला"। जिल्द २ सुफ़ा ५६७ ॥

८—मुहम्मद अली एम० ए० साहब का अँगरेज़ी अनुवाद—

"On the day when sthere hall be a severe affliction, and they shall be called upon to make obeisance, bot they shall not be able P. 569

हमने ये उपर्युक्त सात अनुवाद इस आयत के पाठकों के समक्ष धर दिये हैं। इनमें प्राय बहुतों ने "साक़" शब्द के अर्थ 'पिडली' किये हैं। जिन महानुभावों ने पिडली के साथ २ परदा या तजल्ली अर्थ किये हैं, हम उन से सानुरोध प्रार्थना करेंगे कि उन ो कोई भी अधिकार, पिडली के अतिरिक्त, और अन्य अर्थ करने का नहीं हैं। क्योंकि जो ठीक २ अर्थ कुरान के जनाब मुहम्मद साहब ने समझे हैं बस अन्य कोई नहीं जान सकता।

हदीसें भी हज़रत मुहम्मद साहब के कथन के सग्रह हैं। वहा पर देखना चाहिये कि इस आयत के क्या अर्थ किये गये हैं ?—

१—"(रसूले खुदा सल्ले अल्लाह अलैहेव सल्लमने) फ़रमाया—तब उनके पास उन का परवरदिगार उस सूरत मे आयेगा जिस में उन्होंने उस को पहले न देखा होगा और फ़रमायेगा—'मैं तुम्हारा रब्ब हूँ'। ये कहेंगे 'तू हमारा रब्ब है'। और उस दिन नबियों के सिवाय और कोई बात न कर सकेगा। फिर फ़रमायेगा—तुम को कोई निशान भी मालूम है जिस से तुम उस को पहचान सको ? यह कहेंगे हाँ 'साक़' (यानी पिडली) है'।

इसवक़्त, (अल्लाह अज़्ज़शानहू) अपनी पिडली खोलेगा और मोमिन उसको सजद करेगा" ॥ तर्जुमासही बुख़ारी उर्दू। जिल्द ३।

हदीसनबर २२८६। पृ० ३२९ ॥

छाया कर्ज़० प्रेस, देहली

२—रोज़क़यामत हक़ताला मुसलमानों के पास आयगा ऐसी सूरत में कि उनके एतक़ाद के मुख़ालिफ़ है पस फ़रमायगा कि 'मैं तुम्हारा-रब्बहू'। तब मुसलमान कहेंगे कि 'नऊज़ बिल्लाह यानी खुदा हमको तुमसे पनाह दे। हम इस मकान में मुन्तज़िर हैं यहाँ तक कि हमारा रब्ब हमारे पास आये'। पस जब कि आयेगा हमारा रब्ब हम पहचान लेंगे अपने रब्ब को'। पस हक़ताला ऐसी सूरत में आयेगा कि उनके एतक़ाद के मुआफ़िक़ है। पस फ़रमायगा—'मैं रब्बतुम्हारा हूँ'। तब मुसलमान कहेंगे—'हाँ तू हमारारब्ब है'। पस उसकी अताअत करेंगे" ॥ मशारिक़ुल अनवार बहवाले बुख़ारी व मुसलिम ॥

३—सही बुख़ारी में एक और हदीस इस प्रकार विद्यमान है—

"अबूहुरेरं फ़रमाते हैं—लोगों ने रसूले खुद। से दरयाफ्त किया कि या रसूलल्लाह। 'क्याहम क़यामत में अपने परवर दिगार को देखेंगे' ? रसूलल्लाह ने फ़रमाया—'क्यातुम्हें चौदहवीं रातको चॉद के देखने में कुछ मशक्क़त होती है' ? लोगों ने अर्ज़ की—'नहीं'। फ़रमाया अब अब्रन हो तो सूरज के देखने में तुमको मशक्क़त होती है' ? लोगों ने कहा—'नहीं'। 'इसी तरह तुम उसको देखोगे'। और इसी तरह .खुदावन्द ताला

क़यामत में लोगोंको जमाकरेगा और फ़रमायेगा—'जो जिसकी परस्तिश करता हो वह उसके साथ होजाय। फिर इस (उम्मत) के पास खुदावन्द ताला (ऐसी सूरत में) आयेगा (जिसमें यह उसको न पहचानेंगे) और वह उनसे फ़रमायेगा कि—'मै तुम्हारा रब्ब हूँ। ये लोग कहेंगे—'जब तक हमारा रब्ब आये हम यहीं ठहरे हुए हैं'। 'और जब वह आयेगा हम उसको पहचान लेंगे'। फिर खुदा वन्दताला उनके पास उस सूरत सिफ़ात में आयेगा जिसमें वह उसको पहचानेंगे और फ़रमायेगा 'मै तुम्हारा रब्ब हूँ'। ये कहेंगे—'हाँ तू हमारा परवरदिगार है' फिर ये लोग उसके पीछे होजायेंगे"। सहीबुखारी। जि० ३। ह० न०२२८५। पृ०३२९॥

इन उपर्युक्त कुरान और हदीसोंसे सिद्ध है कि—

१—कुरानी अल्लाह एक देशी है-सर्वव्यापक नहीं है।

२—आता जाता है-किसी एक स्थानपर स्थिर नहीं रहता,

३—परिवर्त्तनशील—मुतग़ैय्यर है—सूरतें बदलता है।

४—जो संप्रदाय जिस सूरत में अपने प्रभु को देखते हैं,उसी रूपमें अल्लाह आयेगा। अनेकहिन्दू लोग साकार—अवतार मानते हैं। कच्छ मच्छ वाराह आदि रूप मानते हैं। तो क्या यह विविध अवतारों के रूप धारण करके हिन्दुओं के सामने आयगा? जो हिन्दू मुसलमान बने हैं, उनके समक्ष तो, उनके पूर्व विश्वासानुसार, ही अल्लाह क़ियामत के दिन आयगा? बौद्ध मुसलमानों के सामने बुद्ध बनकर, जैनियों के सामने तीर्थङ्कर, ईसाइयों के रोबरू ह० मसीह बनकर और यहूदियों के समक्ष उनके पूर्व विश्वासानुसार उज़ैर आदि बनकर आयगा? इस रूप परिवर्त्तन को क्या 'तग़ैयुर—परिवर्त्तन—अनित्य शीलता नहीं कहते हैं? अब यूनानी मन्तिक़ (तर्क) के अनुसार—"सारा जगत् परिवर्त्तन शील है, प्रत्येक परिवर्त्तन शील अनित्य है-अत यह जगत् अनित्य है" यह कुरानी अल्लाह अनित्य है या नहीं?

अब परिवर्त्तन शील जगत् में और कुरानी अल्लाह में क्या अन्तर रहा?

क्या निर्विकार वैदिक ब्रह्मके सामने, ऐसे परिवर्त्तनशील-अनित्य अल्लाह को मुसलमान विद्वान्, किसी प्रकार भी रख सकने का साहस कर सकते है?

साक़ शब्द और क़ुरान—

१—वल् तफ़्फ़' तिस्साक़ो बिस्साक़। सू० लुक़मान। रु० १ आयत २९॥

अर्थात्—लिपट गई हैं पिंडली पर पिंडली।

हदी—यकूशिफ़ो रब्बना अनसाकि ही॥ तजरीद बुखारी। ह० ६१२। पृ० ३०१

"—यकूशफ़ा रब्बना मिन साक़े फसजदुल्लाह कुल्लुन् मोमिन व मोमिनात॥ मिश्कात बाबुल हश्र॥

कुरान में 'साक' शब्दके अर्थ पिंडलीके ही आये हैं। चाहे कोशमें अन्य अर्थ भी हों परन्तु यहां पर 'साक़' शब्दके अर्थ पुराने सबही भाष्यकारोंने, ही पिंडली किये हैं'। हम अपने मुसलमान मौलवियों से प्रार्थना करते हे कि वे सही बुखारी में जनाब हज़रत मुहम्मद साहब के किये हुए अर्थों का समाधान करे। शेष पुन

आर्य-वीरों से

रचयिता—'कविवर शान्ति वीर आर्य "वीर सम्भल)

तुम ही हो अभिमान विश्व के, भारत के आधार तुम्हीं ॥
आज डूबती आर्य जाति की, नैया के पतवार तुम्हीं ॥ ध्रुव

भुला दिया क्या आज तुम्हारे ने—
ऋषिवर का वह त्याग महान ।
जाति धर्म के हेतु हकीकत
से बालक का शीश प्रदान ।

भूल गये क्यों हँसते हँसते—
गाते जाना रण का गान ।
करो स्मरण निज पुरुषाओं का—
धर्म भूमि के हित बलिदान ॥

उठो ! करो अब जाति-धर्म हित अरि दल का संहार तुम्हीं ॥

मरना ही है जब निश्चित तो—
डरना और घबराना क्यों ।
आज देश की बलिवेदी पर—
कायरता का गाना क्यों ।

रण कौशल के साथ उठो—
अपनी मा के बन्धन खोलो ।
कौन हरेगा भारत-भूतल—
भार अरे ! बोलो, बोलो ।

करो आज सर्वस्व मिटा कर, गौरव का उद्धार तुम्हीं ॥

आज तुम्हारी स्वर्ग-भूमि में—
म्लेच्छों का कैसा अन्धेर ।
है तुमको धिक्कार, सुनो—
अब तो दुखिया माता की टेर ।

बहुत समय है बीता अब तो—
रणभूमि को त्याग चलो ।
'वीर" आज वीरत्व प्रदर्शित—
कर र आगन पाट चलो ।

उठो ! विश्व में आज गुंजा दो, सिंहों की ललकार तुम्हीं ॥

प्रचार-क्रम

(लेखक—श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाज़िल, हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस)

मुझे भली भाति स्मरण है कि १९०६ ई० के आसपास में आर्य समाज के वार्षिक उत्सव किस ढगसे होते थे अथवा यह कहना चाहिये कि प्रचार क्यों कर हुआ करता था। अब जिस ढंग पर हुआ करते हैं उस के बतलाने की विशेष आवश्वकता नहीं। मेरे विचार से ४० वर्ष बीतने पर भी ढग नहीं बदला और यदि बदला भी है तो बहुत ही कम।

भारत में ईसाई प्रचारक जिस लगन के साथ काम कर रहे हैं उस लगन के साथ शायद किसी अन्य समुदाय का काम नहीं हो रहा है। जो लोग इस समय ४० वर्ष के लगभग हैं उनको अवश्य ध्यान होगा कि सन् १९१५ ई० के आस-पास में ईसाई प्रचारक सड़कों पर, बाजारों में और मेलों आदि में बराबर मौखिक प्रचार किया करते थे किन्तु अब यह बात देखने में बहुत कम आती है क्यों कि उन्होंने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये कुछ और सोचा है। उन्हों ने अपना ढग बदल दिया है किन्तु हम हैं कि लकीर के फकीर हो रहे हैं यद्यपि चारों ओर से आवाज उठ रही है कि आर्य समाज का काम शिथिल हो रहा है।

अब विचार यह करना है कि हम को क्या करना चाहिये। मेरे विचार से इस सम्बन्ध में जो कुछ होना आवश्यक है उसमें से एक यह है कि उत्सव के अवसर पर एक प्लैटफार्म शिक्षित व अशिक्षित सभों के लिये हो जैसा कि होता है किन्तु समस्त शिक्षित अशिक्षित के लिये केवल एक ही प्लैटफार्म होना काफ़ी नहीं क्यों कि समस्त शिक्षित समुदाय में से शायद ही कोई ऐसा मिले जो आर्य समाज के सिद्धान्तों से थोड़े बहुत सचेत न हों अथवा जिन को थोड़ी-बहुत सहानु-भूति न हो। निदान आवश्यकता है कि उत्सवों पर दो व्याख्यान विशेष रूप से केवल शिक्षित लोगों के लिय हुआ करें इन में शिक्षाविभाग से सम्बन्ध रखने वाले लोगों के सिवा अन्य विभागों के हिन्दू, मुसलमान व ईसाइयों को भी निमंत्रित किया जाय। ऐसे लोगों को निमंत्रण में ही सूचित किया जाय कि जिन विषयों पर व्याख्यान होंगे उन के सम्बन्ध में व्याख्यानदाता से पूछने का अवसर भी लोगों को दिया जायगा। कोई व्या-ख्यान एक घण्टा से अधिक का न हो। व्याख्यान के पूर्व प्रार्थना ज़रूरी है किन्तु भजन होना न पूर्व आवश्यक व बाद को आवश्यक हो। व्याख्यान आर्य समाज मन्दिर में हो अथवा किसी अन्य स्थान में हो। ऐसे व्याख्यानके श्रोताओं की संख्या चाहे थोड़ी रहे किन्तु बहुत से लोगों को भरती करना ठीक नहीं।

यदि उत्सव के अवसर पर उक्त प्रकार के व्याख्यानों का प्रबन्ध कठिन हो तो किसी अन्य अवसर पर होना आवश्यक है। ऐसी दशा में ही उच्चकोटि के लोगों को उत्तम सामग्री मिल सकेगी और वे आर्य समाज की महत्ता को मानेंगे अथवा उनका ध्यान आर्य समाज की महत्ता की ओर आकर्षित होगा, ऐसा होने पर साधारण उत्सव पर उच्चकोटि के शिक्षित लोग सम्मिलित हो सकेंगे।

विशेष व्याख्यानों का विषय स्थानीय आवश्यकता के अनुसार भी होना चाहिये। जहां कहीं ईसाइयत का जोर है वहा ईसाइयत पर और जहा कहीं अन्य बात आवश्यक हैं वहा उस प्रकार का विषय हो अन्यथा कोई ऐसा विषय हो जो लोगों पर अच्छा प्रभाव डाले और लोगों में धार्मिक रुचि व भाव पैदा करे। एक बार जिस विषय पर किसी का व्याख्यान हो चुका हो उसी पर दूसरी बार होना आवश्यक नहीं। आर्य सामाजिक जगत् में जो विज्ञान के पण्डित हैं जैसे इलाहाबाद यूनीवर्सिटी मे श्री डाक्टर सत्यप्रकाशजी हैं उन से वैदिक धर्म और विज्ञान ऐसे विषय पर शिक्षित समाज में व्याख्यान दिलाना अच्छा होगा।

श्री डाक्टर सत्यप्रकाश जी के सिवा अनेक लोग ऐसे हैं जिनका व्यक्तित्व ऐसा है कि उनके विषय से साधारण तथा अशिक्षित लोग लाभ उठा सकें। निदान केवल चुने हुये लोगों के ही लिये दो व्याख्यानों का होना विशेष रूप से होना परम आवश्यक है। आशा है कि इस प्रश्न पर विचारशील पुरुष ध्यान देंगे और यथा सभव कार्य भी करेंगे अथवा प्रचार के निमित्त वह ढग व्यवहार मे लायेंगे जिससे शिक्षित समुदाय को विशेष रूप से आकर्षित किया जा सके।

महेश प्रसाद
मौलवी आलिम फाज़िल
हिन्दू यूनीवर्सिटी बनारस।

वे और हम

(ले०—श्री० डा० सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालंकार सिद्धान्त शास्त्री, एम० ए० एल० टी० डी० लि० अजमेर)

(१)

किस भांति कहो कैसे होगा, भारत मां का उद्धार कभी ?
किस भांति जाति का यह बेड़ा, होगा विपदा से पार कभी।
किस भांति भारतीय संस्कृति का, होगा जग में विस्तार कभी।
किस भांति हमारे गौरव को जानेगा फिर संसार सभी।

(२)

होगा, होगा, हाँ फिर होगा, भारत माँ का उद्धार कभी।
इस आर्य जाति का बेड़ा भी होगा विपदा से पार कभी।
उस भव्य भारतीय संस्कृति का फिर से होगा विस्तार कभी।
सर्वोच्च हमारे गौरव को मानेगा फिर ससार सभी।

(३)

यह कब होगा ? जब हम सारे अपने पन को पहिचानेंगे।
भारत माता की पीड़ा को हम अपनी पीड़ा मानेंगे।
हम, पहिले क्या थे अब क्या हैं, यह तथ्य पूर्णत जानेंगे।
प्राचीन हमारे गौरव को, सच्चे इतिहास बखानेंगे।

(४)

हम देखेंगें क्यों कब किसने, यह झूठा सा इतिहास लिखा।
इस जगत विजयिनी आर्य जातिका, किसने क्यों उपहास लिखा।
क्यों आर्य जाति के वीरों को, अन्यों का दास उदास लिखा।
इतिहास लिखा उपहास लिखा या महा मृत्यु का पास लिखा।

(५)

जिन वन्य क्रूरों ने भारत के, वे सुन्दर भवन पजारे थे।
हां हरे भरे सुन्दर सुरभित, उपवन उद्यान उजारे थे ॥
ऋषि भूमि रक्त रञ्जित करदी, लाखों ही हिन्दू मारे थे।
वे मानव थे या दानव थे, या हिंसक पशु हत्यारे थे ॥

(६)

तलवार सदा मजहब जिनका, तलवार दीन ईमान रही।
तलवार एक कर में जिनके, दूसरे हाथ कुरआन रही॥
जो खण्ड खण्ड करना सीखे, हक कीन जिन्हें पहिचान रही।
जो करें चाद के भी टुकडे टुकडे मे जिनकी आन रही॥

(७)

अब उनकी ही सन्तानों ने, कैसा विचित्र प्रण ठाना है।
भारत अखण्ड के खण्ड खण्ड कर, पाकिस्तान बनाना है॥
माता का जिनको मोह नही, छाती पर छुरा चलाना है।
वे गीत अरब के गाते हैं, भारत निज देश न माना है॥

(८)

हम यत्न एकता 'का करते, वे खिचडी अलग पकाते है।
हम स्वतन्त्रता का गान करें, वे ढपली अलग बजाते है॥
हम तो जेलों मे जाते है, वे बन्धन कड़े कराते है।
हम उनको पास बुलाते है वे दूर भागते जाते है॥

(९)

बस बहुत मना देखे उनको, अब यों तो चलता काम नहीं।
अब और खुशामद क्या करनी, उसका कुछ भी परिणाम नहीं॥
अब जो कुछ करना है हमको कर डाले तनिक विराम नहीं।
भारत अखण्ड स्वाधीन न हो, तब तक हमको आराम नहीं॥

(१०)

हम भी देखें अब भारत में, को पाकिस्तान बनाता है।
करके सत्यार्थ प्रकाश जप्त, फिर कौन कुरान बचाता है॥
सोते सिंहों को आज कौन माई का लाल जगाता है।
बारूद भवन में आग कौन, माई का लाल लगाता है॥

(११)

इन आर्य जाति के वीरों की, क्या सुनी न रण हुँकार कभी ?
भारत के सिंह सुपूतों की, क्या सुनी न घोर दहाड़ कभी।
हम क्या हैं बतला देंगे, आने दो तो समय पुकार कभी।
तब "सूर्य" समान सुवीरों की, सुन लेना जय जय कार कभी॥

स्त्रियों का वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार

(लेखक—पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति संस्कृत धुरीण, तर्क मनीषी, साहित्य भूषण स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा देहली)

(३)

मैंने 'सार्वदेशिक' पत्र के नवम्बर, दिसम्बर १९४५ तथा जनवरी, फर्वरी १९४६ के अङ्कों में स्त्रियों के वेदाध्ययन और कर्मकाण्ड में अधिकार के सम्बन्ध में सम्पादकीय टिप्पणियां तथा लेख लिखे थे जिन में वेदों तथा अन्य शास्त्रों से उन के इस विषयक अधिकार को सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया था। मुलतान सनातन धर्म कालेज के मुख्याध्यापक श्री दीना नाथ जी शास्त्री विद्याभूषण ने 'सिद्धान्त' नामक काशी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र के वैशाख शुक्ल ७ और १४ तथा ज्येष्ठ कृष्ण ५ संवत् २००३ के अङ्कों में 'स्त्रियों के वेदाधिकार पर विचार' तथा 'स्त्रियों के पौरोहित्याधिकार पर विचार' इन शीर्षक वाले लेखों द्वारा उन का उत्तर देने का प्रयत्न किया है। उन के लेख 'सिद्धान्त' पत्र में विचार विनिमय के स्तम्भ में प्रकाशित हुए हैं तथा अनेक निष्पक्ष विद्वानों ने मुझे उन के विषय में अपने विचार प्रकट करने के लिये लिखा है अतः मैं इस लेखमाला द्वारा उनकी शङ्काओं का समाधान करना तथा इस आवश्यक विषय पर सप्रमाण अधिक प्रकाश डालना अपना कर्तव्य समझता हूं। मुझे आशा है कि मेरे मित्र श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री तथा अन्य विद्वान् निष्पक्षपात होकर सत्य को स्वीकार करने में सङ्कोच न करेंगे। श्री पं० दीनानाथ जी के लेखों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने मेरी नवम्बर और दिसम्बर १९४५ के 'सार्वदेशिक' के अङ्कों में प्रकाशित सम्पादकीय टिप्पणियों को पढ़ने का कष्ट नहीं उठाया केवल जनवरी और फर्वरी के अङ्कों को देख कर ही उन्होंने अपनी लेखनी उठाई है। यदि वे उन अङ्कों में प्रकाशित टिप्पणियों को ध्यानपूर्वक पढ़ते तो उनकी अनेक शङ्काओं का स्वयं समाधान हो जाता। किसी भी लेखक के समस्त लेख को ध्यानपूर्वक निष्पक्षपात भाव से पढ़े बिना उन पर आक्षेप करना कहां तक उचित है यह पाठक महानुभाव स्वयं विचार सकते हैं। अस्तु

सब से पहली बात जो मैं यहां स्पष्टतया लिखना चाहता हूं वह यह है कि 'धर्मं जिज्ञासमानानां, प्रमाणं परमं श्रुतिः' (मनुस्मृतिः- २। १३) श्रुतिस्मृत्योर्विरोधे तु, श्रुतिरेव गरीयसी ॥ (जाबाल) विरोधेत्वनपेक्ष्यं स्यादसति ह्यनुमानम् (पू० मीमांसा) इत्यादि सर्व शास्त्र सम्मत सिद्धान्त के अनुसार धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिये वेद ही हमारे लिये परम व स्वतः प्रमाण हैं अन्य सब ग्रन्थ (चाहे वे स्मृति हों, या श्रौत वा गृह्य सूत्रादि) परतः प्रमाण हैं। उन का प्रामाण्य हमें वहीं तक स्वीकरणीय है जहां तक वे वेद के अनुकूल हों, जहां उन के वचन वेदों की आज्ञा वा सिद्धान्त के विरुद्ध हों वहां वे अप्रमाण हैं। वेद ही सर्वथा माननीय हैं। मनुस्मृति तथा श्रौत सूत्र, गृह्यसूत्रादि में अनेक प्रक्षेप वाममार्गियों तथा अन्य स्वार्थी लोगों ने किये हैं इसी लिये उनके अन्दर मांस की व्यवस्था-

भक्ष्यतादि विषयों में इतने परस्पर विरुद्ध वचन पाये जाते हैं इस बात से कोई निष्पक्ष विद्वान् इन्कार नहीं कर सकता। क्या श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री वर्तमान मनुस्मृति मे पाये जाने वाले—

'नियुक्तस्तु यथान्यायं यो मांसं नात्ति मानवः।
स प्रेत्य पशुतां याति, सम्भवानेक विंशतिम् ॥
मनु० ५। ३५)

दशमासं तु तृप्यन्ति, वराहमहिषामिषैः ।
शशकूर्मयोस्तु मांसेन, मासानेकादशैव तु ॥
(मनु० ३। २)

वार्ध्रीणसस्य मांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ॥
(मनु० ३। २७)

इत्यादि श्लोकों को प्रामाणिक मानते हैं जिन मे लिखा है कि श्राद्ध, मधुपर्कादि मे (श्राद्धे मधुपर्के च यथाशास्त्रं नियुक्त इति कुल्लूक) जो मनुष्य मांस नहीं खाता वह मर कर इक्कीस जन्मों तक पशु बनता है। श्राद्ध के विषय में मनु० ३। २७० में लिखा है कि सूअर और भैंसे के मांस से पितरों की १० मास तक तृप्ति होती है, खरगोश और कछुए के मांस से ११ मास, वृद्ध बकरे के मांस से १२ वर्ष, महाशल्क नामक मछलियों और गैंडे के मांस से अनन्त काल के लिये पितरों की तृप्ति होती है। क्या ऐसे श्लोकों को मांस भक्षण का सर्वथा निषेध करने वाले "नाकृत्वा प्राणिनां हिंसाम् तस्मान्मांसं विवर्जयेत् ॥ (मनु० ५। ४८)" इत्यादि मनु महाराज के अपने वेदानुकूल वचनों के विरुद्ध होने के कारण वे प्रक्षिप्त वा अप्रामाणिक न मानेंगे' ?

ऐसे ही पारस्कर गृह्यसूत्रादि के अन्न प्राशन संस्कार प्रकरण में आये 'भारद्वाज्या मांसेन वाक् प्रसार कामस्य, (७) कपिञ्जल मांसेनान्नाद्य-कामस्य (८) मत्स्यैर्जवनकामस्य (९) आटूया ब्रह्मवर्चसकामस्य (१०) (पारस्कर का० १ कण्डिका १९) अर्थात् जो माता पिता चाहें कि बालक अच्छा व्याख्याता बने वे चिड़िया के मांस से अन्नादि की इच्छा वाले मोर या तीतर के मांस से, गति चाहने वाले मछली के मांस से, ब्रह्मतेज की इच्छा वाले आटी नामक जल जन्तु के मांस से बालक का अन्न प्राशन संस्कार कराए इतना ही नहीं, पारस्कर ३। ८ में शूलगव तथा गोभिल गृह्यसूत्र ३। १०। १८-३२ में वर्णित अष्टका कर्म (जिसमें गाय तक की हत्या करके उसके मांस की आहुति डालने का विधान है) क्या उसको श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री मांस-प्रिय धूर्त लोगों द्वारा प्रक्षिप्त और अतएव अप्रामाणिक न मानेंगे जैसे कि महाभारत शान्ति पर्व अ० २६५ में

'अव्यवस्थितमर्यादैर्विमूढैर्नास्तिकैर्नरैः ।
संशयात्मभिरव्यक्तैः हिंसा समनुवर्णिता ॥२६५।४
सर्वकर्मस्वहिंसा हि, धर्मात्मा मनुरब्रवीत् ।
कामकाराद् विहिंसन्ति, बहिर्वेद्यां पशून्नराः ॥
२६५। ५

सुरा मत्स्यान् मधु मांस मासवं कृसरौदनम् ।
धूर्तैः प्रवर्तितं ह्येतद्, नैतद् वेदेषु विद्यते ॥ २६५। ९
मानान्मोहाच्च लोभाच्च, लौल्यमेतत्प्रकल्पितम् ॥
॥ २६५। १०

इत्यादि श्लोकों द्वारा स्पष्ट बताया गया है कि वेदों में मांस मद्यादि सेवन का कहीं विधान नहीं, यह धूर्तों ने चलाया है। मूर्ख, नास्तिक, संशय ग्रस्त लोगों ने हिंसा का वर्णन किया है।

मनु महाराज ने तो सब कर्मों में अहिंसा का ही प्रतिपादन किया था इस लिये जो यज्ञवेदि में वा बाहर हिंसा करते हैं वह अपनी इच्छा से ऐसा करते हैं इत्यादि । उपर्युक्त विषय का प्रकृत विषय के साथ सीधा संबंध न होने पर भी इसलिये लिखने की आवश्यकता हुई है कि श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री ने अपने लेखों के प्रारम्भ में (वे (आर्य) लोग कभी किसी अप्रसिद्ध ग्रन्थ की टीका तक भी मान लिया करते हैं तो कभी प्रसिद्ध तथा प्रामाणिक मूल ग्रन्थ तक को मानने से इनकार कर दिया करते हैं ।" इत्यादि शब्दों द्वारा उपहास करने का यत्न किया है वस्तुतः हमारी इस विषयक स्थिति सर्वथा सच्छास्त्र तथा तर्क से अनुमोदित है । हम सुप्रसिद्ध आचार्य श्री स्वामी आनन्द तीर्थ (श्री मध्वाचार्य) के इस वचन से सर्वथा सहमत हैं कि—

क्वचिद् ग्रन्थान् प्रक्षिपन्ति, क्वचिदन्तरितानपि ।
कुर्युः क्वचिच्च व्यत्यासं, प्रमादात्क्वचिदन्यथा ॥
अनुत्सन्ना अपि ग्रन्था:, व्याकुला इति सर्वश: ॥

(महाभारत तात्पर्य निर्णय अ० २)

जिसका सारांश यह है कि प्राचीन ग्रन्थों में लोग कहीं प्रक्षेप करते हैं, कहीं वाक्यों को हटा देते हैं, कहीं प्रमाद से और कहीं जान बूझकर अन्तर कर देते हैं, इस प्रकार जो ग्रन्थ नष्ट नहीं हुए वे भी व्याकुल वा अस्तव्यस्त (गड़बड़ से) हो गये हैं । ऐसी अवस्था मे यदि हम वर्तमान स्मृतियों और अन्य ग्रन्थों के वचनों को (विशेषत: अब वे वेद और परस्पर विरुद्ध तथा तर्क विरुद्ध हों) बिना विवेक के आख मूंद कर मानने को तय्यार नहीं तो इस में हम पर उपहास करने की कोई बात नहीं । पौराणिक तथा साम्प्रदायिक टीकाओं और भाष्यों का तो हमारे लिये जरा भी मूल्य नहीं विशेषत: अब उन्होंने अपनी कल्पनाओं को मूल वचन की व्याख्या में मिला दिया जैसे कि श्री पं० दीनानाथ जी द्वारा उद्धृत अनेक स्थलों में है ।

अब हम मूल विषय पर आते हैं । गत लगभग ३५ वर्ष से वेदों के निरन्तर अध्ययन के पश्चात् मैं बिना किसी संकोच के इस बात को कह सकता हूँ कि वेदों में न केवल स्त्रियों के वेदाध्ययन का कहीं निषेध नहीं बल्कि हजारों मन्त्रों में उन के कर्त्तव्यों का विशेष रूपसे प्रतिपादन है और उन्हें सम्बोधित किया गया है । वेदों का कोई भी निष्पक्षपात विद्वान् इस बात से इन्कार करने का साहस नहीं कर सकता । ऋग्वेद का १०।८५, १०।८६, १०।१५९, १०।१८३, १०।१८४, अथर्व वेद का चतुर्दश काण्ड, २।३६, ३।३६, ५।१७, ६।८, ६।९, ६।११, ६।१७, ६।७८, ६।१०१, ६।१०२, ६।१३०, ६।१३१, तथा यजुर्वेद के अनेक सूक्त और मन्त्र स्त्रियों को सम्बोधित करते हुए उनके कर्तव्यों का विशेष विधान करते हैं । ऐसी अवस्था में यह कहना कि स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार नहीं कितना अशुद्ध है ? जिन के विषय में बात कह जा रही है, जिन को सम्बोधित करते हुए यह बताया जा रहा है कि तुम्हें इस प्रकार से पति पुत्र, देवरादि से बर्ताव करना चाहिये उन्हें उन तथा अन्य वेद मन्त्रों को पढ़ने का अधिकार ही नहीं इस बात को कौन निष्पक्षपात विद्वान् स्वीकार करेगा ? उदाहरणार्थ ऋग्वेद १०।८५ में जिस की ऋषिका सूर्या सावित्री कहा है

"गृहान् गच्छ गृह पत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमावदासि ॥" (ऋ० १०।८५।२६)

अर्थात् तुम पति के घर जाओ जिससे गृह की स्वामिनी बनो और सबको अपने वश में रखती हुई यज्ञादि का उपदेश करो।

विदथ नाम यज्ञ का निघण्टु ३।१७ में दिया है ३।३ में उसका अर्थ ज्ञान भी किया गया है दोनों ही अर्थ यहा अभीष्ट हैं। श्री हरदत्ताचार्य ने आश्वलायन गृह्य मन्त्र व्याख्या में 'किं च त्वं (विदथ) यज्ञनामैतत् श्रौत स्मार्त लक्षणं यज्ञम् (आवदासि) आभिमुख्येन वद' इत्यादि व्याख्या की है जैसे कि फर्वरी १९४६ के सार्वदेशिक में दिखाया जा चुका है। यदि श्री हरदत्ताचार्य के वेद मन्त्रों में स्त्रियों के न केवल यज्ञ करने बल्कि उसके उपदेशादि का अधिकार स्पष्ट प्रतिपादित होने और स्वयं वैसी व्याख्या करने पर भी पौराणिक संस्कार वश स्त्रियों का वेदाध्ययन में अनधिकार कहीं लिख दिया है जैसा कि श्री शास्त्री जी ने एकाध उद्धरण देकर दिखाने का यत्न किया है तो वह वैदिक आदेश विरुद्ध होने से अमान्य है १०।८५।२७ में स्त्री को सम्बोधित करते हुए कहा गया है 'एना पत्या तन्वं संसृजस्व अधा जिव्रीविदथमावदाथ' ॥'

अर्थात् इस पति के साथ तुम अपने शरीर का स्पर्श करो और फिर ज्ञानादि वृद्ध होकर तुम दोनों (पति-पत्नी) यज्ञ और ज्ञान विषयक उपदेश करो। उनकी कथा करो। श्री हरदत्ताचार्य ने आश्वलायन गृह्य मन्त्र व्याख्या पृ० २१ त्रिवेन्द्र प्रकाशित में 'अनन्तर जीर्णौ सन्तौ आवा दम्पती (विदथम) यज्ञनामैतत् यज्ञम् आवदाव श्रौत-स्मार्त कर्म विषयां कथा कीर्तयिष्यावः ।" इस रूप से उक्त मन्त्र का अर्थ किया है। क्या इससे स्त्रियों के वेद और यज्ञ विषयक अधिकार की स्पष्ट पुष्टि नहीं होती? क्या पं० दीनानाथ जी शास्त्री जिस स्त्री को अनेक स्थानों पर 'अविद्या' वा अशिक्षिता रखना शास्त्रसम्मत बतलाने का व्यर्थ प्रयास करते हैं वह यज्ञ का ठीक तौर पर अनुष्ठान और उस विषयक कथा कर सकती है? निष्पक्षपात पाठक स्वयं विचार करें। ऋ० १०। ८५।४६ में नव वधू को सम्बोधित करते हुए कहा गया है "सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव। ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि-देवृषु ॥ अर्थात् तुम श्वशुर, श्वश्रू (सास) ननद, देवर इत्यादि सब में अपनी योग्यतादि के कारण अच्छी प्रकार से चमकने वाली रानी के समान बन कर रहो' अथर्व १४।१।४४ में भी थोड़े से पाठ भेद से यही मन्त्र आया है और १४।१।४३ में कहा है 'एवा त्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य ॥ अर्थात् पति के घर में आ कर तुम सम्-राज्ञी ज्ञान सुशीलतादि गुणों से भली भांति प्रकाशमान महारानी बनो। अथर्व १४।१।६४ में स्त्री को सम्बोधित करते हुए अत्यन्त महत्त्व पूर्ण उपदेश है कि—

"ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः। अनाव्याधां देवपुरां प्रपद्य शिवा स्योना पतिलोके विराज ॥"

अर्थात् हे वधु! तेरे आगे पीछे, मध्य में अन्त में सर्वत्र वेद विषयक ज्ञान रहे। वेद ज्ञान को प्राप्त कर के तदनुसार तू अपना सारा जीवन बना। तू मङ्गलमयी सुखदायिनी नीरोगा होकर पति के घर में विराजमान विशेष रूप से

ज्ञानादि गुणों से चमकने वाली बन। इस से स्पष्ट स्त्रियों के लिये वेद विषयक ज्ञान को प्राप्त करने और तदनुसार जीवन बनाने का उपदेश देने वाला मन्त्र क्या हो सकता है ? इस पर भी स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार को अस्वीकार करना अपने पक्षपात, अज्ञान वा दुराग्रह को सूचित करना है अन्य कुछ नहीं।

अथर्व १४।२।७५ में स्त्री को सम्बोधित करते हुए कहा है कि 'प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय।' अर्थात् तू अत्यन्त बुद्धिमती और ज्ञान सम्पन्ना होती हुई सौ वर्ष दीर्घ आयु के लिये ज्ञान पूर्वक कार्य करती रह। अपने कर्तव्य पालन में सदा जागती रह।

ऐसे ही हजारों मन्त्र हैं जो स्त्रियों को सम्बोधित करते हुए उनको ज्ञानादि सम्पन्ना होने तथा यज्ञ करने, अनुभव प्राप्त करके तद्विषयक उपदेशादि अन्यों को देने का प्रतिपादन करते हैं यदि प० दीनानाथ जी शास्त्री के कथनानुसार स्त्रियों का वेद पढ़ने का अधिकार ही नहीं तो फिर इन मन्त्रों का वेदों में होना सर्वथा व्यर्थ हो जाता है अतः उत्सर्ग रूप में ही (केवल अपवाद रूप से नहीं जैसे कि मान्य शास्त्री जी को मेरे लेखों में उद्धृत प्रबल शास्त्रीय प्रमाणों के कारण मानना पड़ा है) स्त्रियों का वेदाध्ययनाधिकार वेदों द्वारा सिद्ध है।'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।' ॥ अथर्व० ११।५।१८॥ में स्पष्ट विधान है कि कन्या वेदाध्ययनादि रूप ब्रह्मचर्य का पालन करके युवक पति का वरण करती है। ब्रह्मचर्य शब्द का मुख्य अर्थ ब्रह्म अर्थात् वेद का अध्ययन और तदर्थ व्रत धारण करना है। श्री सायणाचार्य ने इस सूक्त में आये ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचारी पदों की ऐसी ही व्याख्या अनेक स्थानों पर की है उदाहरणार्थ 'ब्रह्मचारीष्णंश्चरति' इस मन्त्र की व्याख्या में उन्होंने लिखा है कि 'ब्रह्मणि—वेदात्मके ऽध्येतव्ये चरितुं शीलमस्य स ब्रह्मचारी अर्थात वेद का अध्ययन करने वाले। म० १७ की व्याख्या में उन्होंने 'ब्रह्मचर्येण' का अर्थ 'ब्रह्म वेदः तदध्ययनार्थमाचर्य-कर्म ब्रह्मचर्यम् अर्थात् वेद के अध्ययनार्थ आचरणीय कर्म को ब्रह्मचर्य कहते हैं। कोई कारण नहीं कि ब्रह्मचर्य के इस मुख्य अर्थ को ऊपर उद्धृत कन्या के ब्रह्मचर्य प्रतिपादक मन्त्र में क्यों न माना जाए ? 'मुख्यामुख्ययोर्मुख्ये कार्यसंप्रत्ययः' यह सर्वशास्त्र सम्मत सिद्धान्त है अर्थात मुख्य और अमुख्य में से मुख्य का ही ग्रहण करना उचित है इस लिये यह मन्त्र अत्यन्त स्पष्टतया कन्याओं के लिये वेदाध्ययन का (ब्रह्म-वेद चर चर गतिभक्षणयोः गति के ज्ञान, गमन, प्राप्ति ये ३ अर्थ होते हैं अतः ब्रह्मचर्य का अर्थ वेद ज्ञान प्राप्त करना हुआ) विधान करता है। इस के विरुद्ध वचन चाहे जिस किसी स्मृति वा अन्य ग्रन्थों में पाये जाएं वा सायणाचार्यादि पौराणिक कालीन विद्वानों ने लिखे हों वे 'विरोधेत्वनपेक्ष्यं स्यात्' इस मीमांसोक्त सिद्धान्त के अनुसार अमान्य हैं।

'अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाश्वो घासं जिगीर्षति" का अर्थ अनेक विद्वानों ने वात्स्यायन कामशास्त्रादि के लक्षणानुसार वृषभ संज्ञक और अश्वसंज्ञक पुरुष किया है जो ब्रह्मचर्य के बल से ही भोग्य पदार्थों का भोग कर सकते हैं। यदि प० दीनानाथ जी इस अर्थ को न स्वीकार करें तो मुख्यार्थ के असम्भव होने के कारण ही अमुख्य वा गौण अर्थ का ग्रहण उन्हें वहां करना

पड़ेगा पर उससे मुख्यार्थ का निषेध नहीं हो सकता जबकि बृहद्देवतादि में दी सूची के अनुसार गोधा, घोषा, विश्ववारा, अपाला, उप निषत्, निषत्, ब्रह्मजाया, जुहू, अदिति, इन्द्राणी, इन्द्रमाता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपामुद्रा, यमी, नारी, शाश्वती, श्री, लक्ष्मी, सार्पराज्ञी, वाक्, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्री, सूर्या, सावित्री (देखो बृहद्देवता अ० २ ८४-८६) इत्यादि सैकड़ों ऋषिकाएँ वैदिककाल में और गार्गी, मैत्रेयी आदि उपनिषद्काल में हुई हैं जिन्हें ब्रह्मवादिनियों के नाम से पुकारा जाता था। इन ब्रह्मवादिनियों के विषय में हारीत स्मृति में लिखा है कि 'तत्र-ब्रह्मवादिनीनामुपनयनम् अग्नीन्धन वेदाध्ययन स्वगृहे भिक्षाचर्येति।

अर्थात् ब्रह्मवादिनियों का उपनयन, अग्नि-होत्र, वेद का अध्ययन और अपने घर में भिक्षा इत्यादि नियम होते हैं। ऐसा ही यम स्मृति में प्राचीन काल की आर्य मर्यादा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि—

पुराकल्पे कुमारीणां मौञ्जी बन्धन मिष्यते।
अध्यापन च वेदाना, सावित्री वाचनं तथा ॥

अर्थात् प्राचीन शास्त्रविधि के अनुसार कुमारियों का मौञ्जीबन्धन, वेदों का न केवल अध्ययन बल्कि अध्यापन (पढ़ाना) और सावित्री वा गायत्री मन्त्र का न केवल स्वयं जप बल्कि उपदेश विहित तथा इष्ट है।

ये वचन यद्यपि वर्तमान काल में पाई जाने वाली हारीत और यम स्मृतियों में से उड़ा लिये गये हैं जैसे कि और भी अनेक ऐसे वचनों में परिवर्तन कर दिये गये हैं— तथापि पराशर स्मृति के सायण माधवीय भाष्य आचार काण्ड १ अ० २ पृ० ८२ Government Central Book Depot Bombay 1893में उपर्युक्त ऋषियों के नाम से उद्धृत किये गये हैं जो प० दीनानाथजी जैसे महानुभावों के इस मूलाधार को ही काट देते हैं कि "स्त्रियों का उपनयन नहीं हो सकता। जब उपनयन ही नहीं, तब वेदाधिकार कैसा ?" (सिद्धात १४ वैशाख पृ० ३६)

न केवल ब्रह्मवादिनियों का उपनयन बल्कि सद्योवधू नाम से वर्णित साधारण स्त्रियों का उपनयन भी इसी प्रकरण में इन शब्दों में प्रतिपादित है।

"तत्र द्विविधा स्त्रियः। ब्रह्मवादिन्य सद्योवध्वश्च तत्र ब्रह्मवादिनीनाम् उपनयनम् वेदाध्ययनम् सद्योवधूना तूपस्थिते विवाह काले कथञ्चिदुपनयन मात्र कृत्वा विवाह कार्य इति हारीतेनोक्तम् ।"

अर्थात् दो प्रकार की स्त्रिया होती हैं ब्रह्मवादिनी और सद्योवधू। ब्रह्मवादिनियों का उपनयन वेदाध्ययनादि नियम पूर्वक होता है सद्योवधुओं का विवाह काल के समीप आने पर उपनयन संस्कार मात्र करा कर विवाह करा देना चाहिये। इससे ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल में ब्रह्मवादिनी सद्योवधू सब प्रकार की स्त्रियों का उपनयन संस्कार अवश्य होताथा इसीलिये गोभिल गृह्यसूत्र में वधू के लिये 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह विशेषण दिया गया है (देखो प्र० २ ख० १ सू० १९) जिसे कि मैंने सार्वदेशिक के नवम्बर १९४८ के अङ्क में उद्धृत किया था जिसके खण्डन का व्यर्थ प्रयास पं० दीनानाथजी शास्त्री ने यज्ञोपवीत वत् कृत्तोत्तरीयाम् इस खैंचातानी के अर्थ को करके किया है। महर्षि दयानन्द जी तो स्पष्ट कन्याओं का यज्ञोपवीत मानते हैं अत उनका अपने अर्थ की पुष्टि में प्रमाण देना सर्वथा व्यर्थ है।

मुख्य स्पष्टार्थ को छोड़कर पक्षपात वश खैंचा-तानी करके अर्थ को बदलने का यत्न करना और पं० सत्यव्रत सामाश्रमी जैसे धुरन्धर विद्वान् का उस मुख्यार्थ के करने पर उपहास करना शास्त्री जी को शोभा नहीं देता। पराशर गृह्यसूत्र के निर्माण के समय वैदिक मर्यादा का कुछ लोप हो चुका था अत उसमें 'स्त्रिय उपनीता अनुपनीताश्च, ऐसा लेख सन् १६२६ में सिद्ध विनायक प्रेस काशी में छपे संस्करण के पृ० ८४ में पाया जाता है जिस से सिद्ध होता है कि उस काल में आर्य स्त्रियों का उपनयन संस्कार हुआ करता था। पं० दीनानाथ जी शास्त्री तथा अन्य विद्वानों की सूचनार्थ मैं यहां यह भी बतलाना चाहता हूं कि

पुरा कल्पे कुमारीणां मौञ्जी बन्धन मिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां, सावित्रीवचनं तथा ॥

यह ऊपर उद्धृत श्लोक न केवल यम स्मृति में बल्कि स्वयं मनुस्मृति में भी पाया जाता था। स्मृति चन्द्रिका नामक सुप्रसिद्ध निबन्ध ग्रन्थ में इसे मनु के नाम से उद्धृत किया गया है ऐसा चौखम्भा संस्कृत सीरीज पुस्तकमाला बनारस में कुल्लूक भट्ट की व्याख्या सहित प्रकाशित मनुस्मृति के परिशिष्ट पृ०१४ में बताया गया है। कल्प का अर्थ कल्प्यतेऽनुष्ठीयते' ऽनेनेति कल्प अनुष्ठान परिपाटी प्रकाशक' ग्रन्थ ऐसा होता ही है जैसे कि उत्तर रामचरित्र के 'क्षत्रिय कल्पेनोपनीय' की व्याख्या में वीर राघवाचार्य ने लिखा है। टालमटोलके लिये साधारण कल्प अर्थ माननेपर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि पूर्व काल में कुमारियों का वेदाध्ययन अध्यापन, सावित्री जप तथा उपदेश वेदोक्त होने से इष्ट माना जाता था क्योंकि ऋ०१०।१०६।४ में विदुषी के लिये 'उपनीता' यह महत्व विशेषण आया है। मन्त्र इस प्रकार है—

देवा एतस्यामवदन्त पूर्वे सप्त ऋषयस्तपसे ये निषेदुः। भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता दुर्धां दधाति परमे व्योमन् ॥ ऋ० १०।१०६।४ इस मन्त्र में जो उपनीता ब्रह्मज्ञान-सम्पन्ना स्त्री के अद्भुत तेज का वर्णन करता है उपनीता का मुख्य अर्थ क्यों न उपनयन-संस्कार-युक्ता किया जाए इस बात के लिए सिवाय पक्षपात और दुराग्रह के और कोई कारण नहीं। ऐसे ही प्रमाणों को दृष्टि में रखते हुए सुप्रसिद्ध सनातन धर्मी विद्वान् श्री काशीशेष वेंकटाचल शास्त्री जी ने लिखा था—

'ब्राह्मणेन षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च इत्यादि। 'अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत' अत्र ब्राह्मण पद जातिपरम् तेन ब्राह्मणजातीयानां पुंसामिव स्त्रीणामपि तज्जातीयानां तदध्ययनमध्यापन मुपनयन च भवति।'

(इन्दुशर्मरचित कन्योपनयन संस्कार पृ० ५७ में उद्धृत)

अर्थात् ८ वर्ष के ब्राह्मण कुमार के उपनयन और वेदाध्ययन का जो विधान है वह जाति परक है। अत. ब्राह्मण कुमारों की तरह कन्याओं का भी वेद का अध्ययन, अध्यापन और उपनयन होना चाहिये।

हम चाहते हैं कि पं० दीनानाथ शास्त्री जी स्त्री जाति के प्रति अपनी हीन भावना जो उन के लेखों में प्राय प्रकट होती है तथा संकुचित हृदयता छोड़ कर श्री वेंकटाचल शास्त्री जी के समान निष्पक्षपात होकर उदारता ग्रहण करें। स्व० महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी शास्त्री, मुख्याध्यापक ओरियन्टल कालेज लाहौर ने भी 'जैमिनीय न्यायमाला विस्तार' के पत्नी के यज्ञाधिकार प्रकरण पर

विचार करते हुये उपर्युक्त उदार भाव ही प्रकट किया था—

'अस्यैवाधिकरणस्यानुसारेण' अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत, इत्यत्रापि स्त्रियाअप्यधिकार' अतएव 'प्रावृता यज्ञोपवीतिनीम्' (गोभिल गृह्यसूत्रे २ । १ । १६) मनसा भर्तुरतिचारे सावित्र्या अष्टशतेन जुहुयात् पूता भवति (वसिष्ठस्मृतौ अ० २० स ५) अथ य इच्छेद् दुहिता मे पण्डिता जायेत (बृहदा. उ) किंच यजमानपत्न्या अध्ययनमन्तरेण ऋत्विगादिप्रोक्तार्थस्य ज्ञानाभावात् तदुक्तकर्मणि प्रवृत्तिरेव न स्यात् उपलभ्यते च प्राचीनेतिहासेषु-सीतामहाश्वेतादीना सन्ध्योपासनमपि" (जैमिनीय न्याय माला विस्तार आनन्दाश्रम प्रेस पूना पृ० ३०५)

भावार्थ यह है कि 'अष्ट वर्ष ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत' इत्यादि वाक्यों में कन्याओं का भी उपनयन वेदाध्ययनादि का अधिकार है इसी लिए गोभिल गृह्यसूत्र में 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह वधू का विशेषण है, वसिष्ठ स्मृति में स्त्री के मन से भी पाप होने पर १०८ बार गायत्री मन्त्र के जप का विधान है। प्राचीन इतिहासों में सीता देवी जी, महाश्वेतादि के सन्ध्योपासन का भी वर्णन है। वैदिक अध्ययन के बिना यजमान पत्नी की ऋत्विजों द्वारा बताये कर्म में अज्ञान के कारण प्रवृत्ति ही नहीं हो सकती अतः उनका अध्ययन आवश्यक है।

मैं सीता देवी जी के नियम पूर्वक सन्ध्या करने का प्रमाण सन्ध्या काल मना श्यामा··· सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी (वाल्मीकि रामायण ५ । १४ । १६) सार्वदेशिक के दिस० १६४५ के अङ्क में दे चुका हूं। महाश्वेता के वर्णन में कादम्बरी में (ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकायाम्' अर्थात् यज्ञोपवीत से पवित्र शरीर वाली यह विशेषण आया है यह ध्यान देने योग्य है श्री शास्त्री जी के अन्य आक्षेपों का सप्रमाण समाधान अन्य लेखों में किया जायगा।

मैं ने नवम्बर १६४५ के सार्वदेशिक के अङ्क में स्त्रियों के वेदाध्ययन के विषय में यजु० १४।२ का निम्न मन्त्र उद्धृत किया था।

कुलायिनी घृतवती पुरन्धिः स्योने सीद सदने पृथिव्याः। अभित्वा रुद्रा वसवो गृणन्तु इमा ब्रह्म पीपिहि सौभगाय अश्विनाध्वर्यू साद-यतामिह त्वा॥ यजु १०१२। ता त्वा विश्वे अभि गृणन्तु देवा स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद॥ यजु १४।४।

इन मन्त्रों में स्त्रियों के कर्तव्यों का उपदेश करते हुए बताया गया है कि तुम कुल का हित और वृद्धि चाहने वाली, उत्तम घृतादि का सेवन करने वाली तथा तेजस्विनी (घृ-क्षरण दीप्त्योः) बहुत बुद्धि और कर्म युक्त होकर अपने घर में निवास करो। सौभाग्य की वृद्धि के लिये इन वेद मन्त्रों के अमृत का निरन्तर पान करो जिससे सब विद्वान तुम्हारी प्रशंसा करें।

श्री प० दीनानाथ शास्त्री ने इन मन्त्रों को छूने का भी कष्ट नहीं उठाया। यहां स्त्रियों के वेदाध्ययन का प्रतिपादन करने वाला आदेश वा विधि शास्त्र स्पष्ट विद्यमान है।

यद्यपि पौराणिक तथा वाम मार्गी उव्वट महीधरादि भाष्यकारों ने इन मन्त्रों की इष्टका-परक व्याख्या का उपहास जनक प्रयत्न किया है जो 'बुद्धि पूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे' के विरुद्ध तथा सारहीन होने के कारण अमान्य है तथापि

(सौभगाय) ऐश्वर्याय (इमा) इमानि (ब्रह्म) ब्रह्माणि-मन्त्रान् (पीपिहि) आप्यायस्व मन्त्रान प्राप्नुहि यह व्याख्या कुछ अंश तक मूल के अनुकूल है। वेद मन्त्राध्ययन का भाव इन शब्दों से भी स्पष्ट है। मैंने ऋ० १।३।११ क चोदयित्री सूनृताना चेतन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती ॥ इस वेद मन्त्र को भी स्त्रियों के वैदिक यज्ञाधिकार के विषय में उद्धृत किया था। श्री पं० रामचन्द्र जी ने भी अपने लेख में इसे उद्धृत किया था जिसके खण्डन का सिर तोड़ यत्न करते हुए मान्य शास्त्री जी ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि इस मन्त्र में जिस सरस्वती के यज्ञ करने कराने का स्पष्ट विधान है वह एक देवी है मानुषी स्त्री नही किन्तु उनके ऐसा कह देने मात्र से काम नहीं चल सकता। वैदिक सब शब्द यौगिक होते हैं यह नैरुक्त सिद्धान्त है 'नामान्याख्यातजानीति–नाम च धातुजमाह निरुक्ते'। सरस्वती शब्द सृ-गतौ इस धातु से बनता है और गति के ज्ञान, गमन, प्राप्ति ये तीन अर्थ होते हैं अत: सरस्वती का ज्ञान वती विदुषी यह अर्थ स्पष्ट है स्वयं प० दीनानाथजी ने 'सिद्धान्त" के १४ वैशाख के अङ्क में प्रकाशित लेख में वैदिक शब्दों के यौगिक अर्थ मानते हुए स्त्री वाचक सुप्रसिद्ध योषित् शब्द का 'युष्यन्ते सेव्यन्ते इति योषित' इस व्युत्पत्ति से जल अर्थ कर डाला है। ऐसी अवस्था में सरस्वती के सीधे यौगिक अर्थ ज्ञानवती वा विदुषी स्त्री पर उन्हें क्यों आपत्ति होनी चाहिये? श्री शास्त्री जी भी अपने लेखों में स्वीकार करते हैं कि निघण्टु २-११ में भी सरस्वती शब्द 'वाक्' के नामों में आता है। वाक् सरस्वती श० ७।५।१।३१। वाग्वै सरस्वती कौ० ५।२। वाग्घि सरस्वती ऐ० ३।२। इत्यादि वचनों में भी वाणी का नाम सरस्वती आया ही है। जिस में शास्त्री जी का सरस्वती को केवल देवता मानने का पक्ष खण्डित हो जाता है और उत्तम वाणी युक्त वा उस के समान स्त्री यह अर्थ इस से भी समर्थित होता है जैसे कि महर्षि दयानन्द जी ने विद्यासुशिक्षिता वागिव पत्नी यजु० १०।३४। भाष्य वागिव वर्तमाना स्त्री ऋ० भा० १।१६४।४१। इत्यादि में लिखा है। मैंने अपने लेख में "योषा वै सरस्वती" इस शत० १।५।१।११। के वचन को सरस्वती के विदुषी स्त्री के वाचक होने में किया था इस पर शास्त्री जी लिखते हैं कि "इस से सरस्वती शब्द स्त्री का पर्याय वाचक नहीं बन जाता किन्तु सरस्वती भी स्त्री विशेष है यह सूचित होता है मानुषी शब्द साथ नहीं है जिस से वह मानुषी स्त्री मानी जाए।

यह शास्त्री जी का कथन उपहास जनक है। क्या किसी को सरस्वती के पुल्लिङ्ग वाचक होने का सन्देह हो गया था जो यह बताने की आवश्यकता थी कि वह स्त्री विशेष है। वह विदुषी स्त्री का वाचक क्यों नहीं माना जाए जब कि योषा वै सरस्वती वृषा पूषा यह स्पष्ट वचन उसके स्त्रीवाचकत्व को घोषित कर रहा है। मानुषी स्त्री का सुमति देना अनैकान्तिक क्यों है? केवल इसलिये कि आप स्त्रियों के विषय में हीन भावना रखते हुए यह मानने को तय्यार नहीं कि विदुषी स्त्री कितनी अच्छी बुद्धि दे सकती है। आपने शिवा न शन्तमा भव सुमृडीका सरस्वति। मा ते युयोम सन्दृश ॥ (अथर्व ७।७१।६८।२) यह जो मन्त्र उद्धृत किया है वह तो अत्यन्त

स्पष्टतया सरस्वती के स्त्री वाचकत्व को प्रमाणित करता है कि हे विदुषी स्त्री। तुम हमें सुख और शान्ति देने वाली हवो। हम तुम्हारी उत्तम दृष्टि से वियुक्त न हों। यह पति पत्नी को सम्बोधित कर के कहता है इसमें यदि आपको अब भी सन्देह हो तो मानव गृह्यसूत्र को देखिये जहां १।११।१८ में सप्तपदी के अवसर पर वर वधू को सम्बोधित करते हुए 'सखा सप्तपदी भव सुमृडीका सरस्वती। मा तेवियोम सन्दृशि" ऐसा कहता है। यहां तो किसी निष्पक्षपात विद्वान् को अणुमात्र भी सन्देह नहीं रह सकता कि स्त्री को ही सरस्वती के नाम से पुकारा गया है पक्षपातग्रह ग्रस्तों की तो बात ही पृथक् है। मुझे आशा करनी चाहिये कि मान्य शास्त्रीजी की गणना उनमें न होगी। "पावीरवी कन्या चित्रायु सरस्वती वीरपत्नी धियं धात ॥ ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत्॥" यह ऋ० ६।४६।६ का मन्त्र भी जिसे उद्धृत कर के शास्त्री जी ने लिखा है कि इस मन्त्र में भी सरस्वती को बुद्धिदात्री कहा है वह उस के स्त्री वाचकत्व में भी स्पष्ट प्रमाण है क्यों कि वहां उसके लिये वीरपत्नी शब्द का प्रयोग है। "इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिति सरस्वति महि विश्रुति" (यजु० ८।४३) में भी जिसका पत्नी देवता है सरस्वती का विदुषीस्त्रीवाचकत्व स्पष्ट है। विदुषी स्त्री का देवी वा देवता के नाम से कहना तो आपकी अभिमत दक्ष स्मृति के 'अनुकूला त्ववाग्दुष्टा दक्षा साध्वी प्रियंवदा। आत्म गुप्ता स्वामि भक्ता देवता सा न मानुषी॥" (दक्ष स्मृति ४।४) अनुसार भी सर्वथा उचित है। ऐसी विदुषी स्त्री का सद्बुद्धि अथवा उत्तम परामर्श देना हम जैसे वैदिक धर्मियों का अनुभव सिद्ध है अवैदिक बाल्य विवाह और स्त्रियों को अशिक्षिता रखने के पक्षपाती इसका क्या अनुभव ले सकते हैं तथापि सरस्वती (स्त्री विशेष) को विद्या और बुद्धि की अधिष्ठात्री देवता मान कर स्त्रियों को उससे वञ्चित रखना सर्वथा अन्याय है इस मान्य डा० भगवान दास जी के वचन पर श्री शास्त्री जी जैसे महानुभाव ध्यान दें तो समाज का महान् उपकार हो। सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वती मध्वरे तायमाने। सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यं दात्॥ (ऋ० १०।१७।७) में सरस्वती का विदुषी स्त्री वाचक होना और यज्ञ करना कराना भी उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट समर्थित होता है उसको "वेदादि शास्त्रों के विरुद्ध अत्यन्त दुःसाहस' बतलाना शास्त्री जी का अपना दुस्साहस है। इस मन्त्र में 'वार्यम्' का अर्थ 'वरणीय ज्ञानम्' अर्थात् श्रेष्ठ ज्ञान है। श्री सायणाचार्य का 'वरणीय कर्म फलम्' यह अर्थ कल्पित और अमान्य है। स्वयं शास्त्री जी ने 'श्री' पत्रिका के आश्विन १६६२ के अङ्क में लिखा था कि "सनातन धर्मस्याधारस्तम्भ न कोऽपि सायणं मनुते सनातन धर्मा। सायणः ऋषिमुनिर्नासीत्' पृ० ३८। अर्थात् सायण को कोई सनातनधर्मी सनातनधर्म का आधार स्तम्भ नहीं मानता। सायण ऋषिमुनि नहीं था। ऐसी अवस्था में हम पर सायण के अर्थ को जो कपोल कल्पित है आप क्यों लादना चाहते हैं? हमारा यही उत्तर स्त्रीहि ब्रह्मा बभूविथ' (ऋ० ८।३३।१६) इस मन्त्र के सायण भाष्यके संबंध में है। मन्त्र के शब्द सर्वथा स्पष्ट हैं कि विदुषी स्त्री निश्चय से

ब्रह्मा बन सकती है। ब्रह्मा का चतुर्वेदवित्, भव-षिया यह अर्थ सुप्रसिद्ध ही है। इसलिये इस मन्त्र से विदुषी स्त्री का न केवल साधारण पौरोहित्य बल्कि सर्वश्रेष्ठ पुरोहित ब्रह्मा तक के आसन को ग्रहण करने का अधिकार सिद्ध होता है। इस अत्यधिक स्पष्ट अर्थ को न मान कर सायणाचार्य के भाष्य को आधार मानते हुए प० दीनानाथ जी लिखते हैं कि सायोगि आसङ्ग नामक एक ब्राह्मण था जो स्त्री होगया था। इन्द्र ने उसको सम्बोधित करते हुए कहा है कि तू ब्राह्मण पुरुष स्त्री होगया है। सायणाचार्य ने मीमांसा के आख्या प्रवचनात्, परन्तु श्रुतिसामान्य मात्रम् "इत्यादि सूत्रों के आधार पर अपने ऋग्वेद भाष्य के उपोद्घात में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करके भी कि वेदों के नित्य और अपौरुषेय होने के कारण उनमें अनित्य पुरुषों के इतिहासादि नहीं हो सकते 'न तु तत्रानित्यो बबराख्य कश्चित् पुरुषो विवक्षित किन्तु बबर इति शब्दानुकृत्ति तथा सति बबर इति शब्द कुर्वन् वायुरभिधीयते।' इत्यादि फिर ऊटपटांग, असङ्गत और अनेक स्थानों पर अश्लील इतिहासों का व्याख्या मे बतलाना निष्पक्षपात विद्वानों के लिये सर्वथा अमान्य है। प० सातवलेकर जी तो स्वय ही आर्य समाजी विद्वान् होने का दावा नहीं करते उन का अर्थ हमें ऋषिवत् माननीय नहीं हो सकता। आप तो स्वय भी जब सायण के विषय में लिखते हैं कि वह ऋषि मुनि नहीं था इतना ही नहीं 'प्राङ् मूलवेद वाक्यस्य तत ऋषिमुनिवचनानां प्राधान्यता भवति। यदि सायणस्तद्वचनानि विरुणद्धि मूलतो विरुद्धं वा व्याचष्टे, तर्हि न तत्र कोपि त प्रमाणं मनुते।" (श्री आश्विन १९९३) अर्थात् पहले मूल वेद का वाक्य प्रमाण है, उसके पश्चात् ऋषि मुनियों का वचन। यदि सायण उनके वचन का विरोध करता है या मूल के विरुद्ध व्याख्या करता है तो उस को कोई प्रमाण नहीं मानता। ऐसी अवस्था में वेद की अपौरुषेयता और नित्यता तथा मीमांसा के वचन के विरुद्ध सायोगि के स्त्रीत्वादि विषयक उसकी कपोल कल्पना को श्री शास्त्रीजी क्यों हमे मानने को बाधित करते हैं और क्यों नहीं मन्त्र के सीधे महत्त्वपूर्ण उदारता सूचक अर्थ को स्वीकार करते। इस को सिवाय उनके पक्षपात वा दुराग्रह के क्या कहा जाए?

इन सब स्पष्ट प्रमाणों से स्त्रियों का वेदाध्ययन और यज्ञ करने कराने में अधिकार निस्सन्देह सिद्ध होता है। यदि इनके विरुद्ध वचन वर्तमान मनुस्मृति के कुछ श्लोकों में तथा अन्य कुछ स्मृतियों आदि में पाये जाते हैं तो वे वेद विरुद्ध होने के कारण अमान्य हैं। 'वैवाहिको विधि स्त्रीणाम्' इत्यादि पर हम अगले लेख में विमर्श करेंगे।

इस प्रसङ्ग में मै इतना और निवेदन कर देना आवश्यक समझता हूँ कि गोधा, विश्व वारा, घोषा अपाला, उपनिषत्, निषत्, रोमशा, सूर्या आदि ब्रह्मवादिनियां प्राचीन काल मे थीं जिन्होंने ऋ० १०।१३४, ऋ० ५।२८, ऋ० १०।३९, १०।४०, ऋ० ८।९१, ऋ० १०।८५, ऋ० १०।४०, १०।१५१, १०।८६, १०।९५, १०।१०७, ५।२८, १०।१०९, १।१७९, १०।१५४, १०।१५९, १०।१८९, इत्यादि वैदिक सूक्तों के रहस्यों का प्रचार किया। पुराणों मे भी वेदवती वयुना, धारिणी, मेना आदि ब्रह्मवादिनियो का वर्णन आया है जैसे कि—

सततं मूर्तिमन्तश्च, वेदाश्चत्वार एव च।
सन्ति यस्याश्च जिह्वाग्रे साथ वेदवती स्मृता ॥
(ब्रह्मवैवर्त प्रकृतिखण्ड अ० १४। ६५
आनन्दाश्रम प्रेस पूना पृ० १४०)
तेभ्यो दधार कन्ये द्वे, वयुना धारिणीं तथा।
उभे ते ब्रह्मवादिन्यौ ज्ञान विज्ञान पारगे ॥
(भागवत ४। १। ६४)
तेभ्यः स्वधासुते जज्ञे मेनां वै धारिणीं तथा।
ते उभे ब्रह्मवादिन्यौ, योगिन्यौ चाप्युभे द्विज ॥
(विष्णु पुराण अंश १ अ० १०)

तथा मार्कण्डेय पुराण अ० ५२। ३१ (जहां यही विष्णुपुराणोक्त श्लोक आया है) इत्यादि श्लोक उद्धृत करके दिखा चुका हूँ। मण्डन मिश्र की पत्नी भारती देवी के विषय में शङ्कर दिग्विजय ३। १६ में वर्णन है कि

"सर्वाणि शास्त्राणि षडङ्ग वेदान्
काव्यादिकान् वेत्ति परं च सर्वम्।
तन्नास्ति नो वेत्ति यदत्र बाला
तस्मादभूच्चित्रपदं जनानाम् ॥

अर्थात् भारती देवी सर्वशास्त्र तथा अङ्ग सहित वेदों को जानती थी। क्या इन सब महिलाओं ने वेदाध्ययन वेद की आज्ञा का उल्लङ्घन करके किया था? मेरा श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री जैसे विद्वानों को खुला आह्वान है कि मूल वेदों में से कोई प्रमाण उद्धृत करे जिन में स्त्रियों के वेदाध्ययन करने का निषेध हो।

(क्रमशः)

आर्य कुमार जगत्

आर्य कुमारो से

माननीय श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त प्रधान अ० भा० आर्य कुमार परिषद् ने विशेष रूप से आर्यकुमार सभाओ तथा आर्य कुमारो से निम्न शब्दो मे विशेष प्रेरणा की है। आशा है कि आप उनकी प्रेरणा से प्रभावित होकर अपने कर्तव्य का यथेष्ट पालन करेंगे।

श्री गुप्त जी का सन्देश

आर्य कुमार और आर्यकुमार सभाओ स मै एक ही निवेदन विशेष रूप से करना चाहता हूँ वह यह है कि सदाचार क आधार पर ही हम अपनी उन्नति कर सकते है। अपने आचरण को पवित्र बनाने का सतत प्रयत्न करने स ही हमे सफलता मिलने की आशा हो सकती है। सदाचरण का मूल मन्त्र सत्यता है। परन्तु हम याद रखना चाहिये कि सत्यता के साथ विनय और मिठास हो। इसी से सोने मे सुगन्ध हो सकता है। सचाई को कठोर वचन का साथी बताने वाले गलती मे है। सचाई का असली साथी विनय है और तभी हम आपस मे द्वन्द्व को दूर रख सकते हैं। आपसी द्वन्द को दूर करने का हम सब को ही यत्न करना चाहिये।

मै आशा करता हूँ कि प्रत्येक आर्य कुमार सभा, भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् से सम्बन्धित होगी।

घनश्याम सिंह गुप्त
२१-५-४६

भरतपुर आर्यकुमार सम्मेलन

भरतपुर आर्य मित्र सभा तथा आर्य समाज के उत्साही कार्य कर्ताओ के प्रयत्न स १६, २०, २१ मई १६४६ को सम्मेलन समारोहपूर्वक मनाया गया। यद्यपि १८ मई स सम्मेलन का कार्य प्रारम्भ होना था परन्तु सभापति जी १६ मई को प्रात काल पधारे।

सायकाल को सभापतिजी का जलूस निकाला गया। उसके पश्चात् सम्मेलन का कार्य श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री द्वारा प्रार्थना किए जाने पर प्रारम्भ हुआ। श्री रायसाहब मदनमोहन जी सेठ ने स्वागताध्यक्ष भाषण पढा और आर्य कुमारो से प्रेरणा की अब जबकि स्वराज्य की स्थापना का प्रश्न हमारे सामने प्रस्तुत है तो हमे और भी अधिक उत्तरदायित्व के साथ सेवा कार्य करना चाहिए।

भाषण श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त

"आर्य कुमारो!

आप पर न केवल आर्य समाज अपितु समस्त देश की आशा ये लगी हुई है। आप अपने त्याग, लगन व कार्य स जनता की सच्ची सेवा कर सकते है।"

आपने विस्तार के साथ प्रकट किया कि किस प्रकार आर्य समाज की ओर से सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक कार्य किया गया और उस का कितना भाग जनता ने अपने कार्य मे सम्मिलित कर लिया। आपने कहा "भारत के उत्थान मे आर्यसमाज का हाथ रहा है और उसके कार्यों को जनता ने बहुत अशो मे अपनालिया है, पर

अब उसके लिए आगे बढ़ने को अनेकों कार्य है जिन पर उस अपनी शक्ति केन्द्रित करनी चाहिये स्वराज्य स्थापित कर लेने पर तो आर्यसमाज की जिम्मेदारी और भी अधिक हो जायगी। उस सेवा के लिए और भी अधिक तत्पर रहना होगा।"

आपने शुद्ध हिन्दी और देवनागरी लिपि को अपनाने की प्रेरणा की और देशी रजवाड़ो से आशा की कि वे जनता द्वारा प्रयोग मे लाई जाने वाली भाषा के स्थान मे किसी और भाषा को जबरदस्ती स्थान न देगे। उनस हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि का अपनान की माग की।

आपने चरित्र निमाण का और युवको का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, 'आप अपने चरित्र बल पर ही आर्य समाज का मस्तक ऊ चा कर सकते है। आपको अपने शरीर बलिष्ठ रखन चाहिये। सत्य को कभी न छोड़ना चाहिय। नशीली वस्तुओ के प्रयोग स बचना चाहिये। देश की गतिविधि स पूर्ण परिचित रहना चाहिये।' इस प्रकार सम्मेलन की प्रारम्भिक बठक बड़ी सफलता से समाप्त हुई।

सम्मेलन के प्रस्ताव

सम्मेलन मे निम्न लिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए—

प्रस्ताव न० १—

आर्य कुमारो का यह सम्मेलन भारतवर्ष के यशस्वी,अर्थशास्त्र के धुरन्धर पडित श्री श्रीनिवास शास्त्री व कर्मनिष्ठ विधानवादी श्री भूलाभाई देसाई, प्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्त्री सुश्री सत्यवती एवं आर्य सामाजिक नेता श्री स्वामी ईश्वरानन्द, प० व्यासदेव शास्त्री, श्री चन्द्रगुप्त वेदालकार के असामयिक देहावसान पर शोक प्रकट करता है एवं दिवगतात्माओं के लिए सद्गति की प्रार्थना करता है।

सभापति जी की ओर से

प्रस्ताव न० २—

भारतवर्षीय आर्य कुमारों का सम्मेलन सरकार से आग्रह करता है कि जब देश मे शान्ति और सुव्यवस्था का प्रयत्न किया जा रहा है, सभी राजनैतिक तथा क्रान्तिकारी कैदी काराविमुक्त हो रहे है, ऐसी परिस्थिति मे आर्यन सेना के सस्थापक और भारतीय स्वतन्त्रता के उपासक राजा महेन्द्र प्रताप जो विगत कई वर्षों से मातृ भूमि से दूर है उन पर से देश आने का प्रतिबन्ध हटा ले। हम इस विषय मे देश के राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट करते है।

प्रस्तावक—श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी।

अनुमोदक—श्री कु वर रतनसिह जी।

प्रस्ताव न० ३—

(क) यह सम्मेलन प्रत्येक आर्यकुमार स अनुरोध करता है कि वह विशुद्ध हिन्दी का प्रयोग करे। हिन्दुस्तानी के नाम पर उर्दू भाषा का जो प्रचार हिन्दी भाषा भाषियो मे किया जा रहा है उससे हर एक आर्यकुमार सावधान रहे।

(ख) यह सम्मेलन भारतवर्ष की प्रत्येक देशी रियासत के शासको से सानुरोध निवेदन करता है कि वह अपने राज्य मे समस्त काय शुद्ध हिन्दी भाषा मे ही करे, अन्य भाषा मे नहीं और जो फार्म आदि शासन सम्बन्धी क्लिष्ट उर्दू भाषा मे बने हुए हैं और उनकी लिपि हिन्दी की हुई है उन्हें शुद्ध हिन्दी कर दिया जाय।

प्रस्तावक—श्री बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट।

अनुमोदक—श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री।

प्रस्ताव न० ४—

यह आर्यकुमार सम्मेलन उस्मानिया यूनिवर्सिटी के संचालको से अनुरोध करता है कि वह यूनिवर्सिटी मे उर्दू भाषा के साथ साथ हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपिको शिक्षा का माध्यम बनावे।

एवं हैदराबाद राज्य के शासको स सम्मेलन अनुरोध करता है कि वे हिन्दी भाषा व देवनागरी लिपि को राज्य के काय मे वही स्थान दे जो उन्होंने उर्दू को दिया है।

प्रस्तावक—श्री नन्दकिशोर जी खन्ना।

अनुमोदक—श्री प० रामदत्त जी शुक्ल।

प्रस्ताव न० ५—

इस सम्मेलन की निश्चित सम्मति है कि जन्मगत उच्च नीचता के भाव पर आश्रित वर्तमान जाति-भेद व जात-पात की पद्धति गुण-कर्म-स्वभाव पर आश्रित वैदिक धर्म व्यवस्था के सिद्धान्त के सर्वथा विरुद्ध और समाज हित के लिए अत्यन्त घातक है। अतः यह सम्मेलन सब आर्यकुमार व कुमारियो से अनुरोध करता है कि वे जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के सहयोग से इस जाति-भेद पद्धति के निवारणार्थ क्रियात्मक कार्य करें और व्रत ले कि वे जान बूझ कर जाति बन्धन को तोड़ कर केवल गुण-कर्म-स्वभाव का विचार करते हुए विवाहादि सम्बन्ध करेंगे।

प्रस्तावक—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति।

अनुमोदक—श्री ओम्प्रकाश जी।

प्रस्ताव नं० ६—

भारत के कतिपय मुस्लिम लीगी नेताओं के उत्तेजनात्मक एवं साम्प्रदायिकता पूर्ण व्याख्यान व वक्तव्यों के तथा लीगी पत्रो के ऐसे ही लेखो के कारण देश में (मुख्यतः अलीगढ़ व भोपाल आदि नगरों में) जो भीषण हत्याकाड व लूटमार आदि हुई है उस पर यह सम्मेलन खेद प्रकट करता है एव वहा के दु ख ग्रसित लोगों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करता है और प्रान्तीय व केन्द्रीय सरकारों स अनुरोध करता है कि वे इस प्रकार के समाचार पत्रो के विषैले प्रचार पर कड़ी दृष्टि रक्खे और अपराधियो को उचित दण्ड दे एव शान्ति तथा सुव्यवस्था कायम रखें।

प्रस्तावक—श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी।

अनुमोदक—श्री रामनारायण जी शास्त्री।

वार्षिक अधिवेशन

श्री घनश्यामसिंह गुप्त जी के सभापतित्व में २० मई को दोपहर २ बजे वार्षिक अधिवेशन का कार्य आरम्भ हुआ। श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी मन्त्री परिषद् ने गत दो वर्ष का आय-व्यय का विवरण तथा धार्मिक परीक्षाओ की विवरण सूची प्रस्तुत की और इस बात पर खेद प्रकट किया कि परिषद् का कार्य कार्यालय की उचित व्यवस्था न होने के कारण सन्तोषजनक न हुआ। आपने यह भी संकेत किया कि भविष्य में कार्यालय की व्यवस्था बहुत उत्तम होनी चाहिये और परिषद् को प्रकाशन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

निर्वाचन में निम्नलिखित अधिकारी व अंतरंग सदस्य निर्वाचित किये गयेः—

प्रधान— श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त

कार्यकर्त्ता प्रधान—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति देहली।

उप प्रधान— १ श्री मदनमोहन जी सेठ एम० ए० एल-एल० बी० चीफ जस्टिस भरतपुर।

२ श्री डा० युद्धवीर सिंह जी देहली।

३ श्री नरेन्द्र जी हैदराबाद।

४ श्री रामनारायण जी शास्त्री (विहार)

प्रधान मन्त्री— श्री रामोहन मुरादाबाद।

परीक्षा मन्त्री— डा० सूर्यदेव जी एम० ए० एल० टी० डी० लिट० अजमेर।

उप मन्त्री १ श्री उमेशचन्द्र जी विद्यार्थी।

२ श्री बद्रीदत्त जी देहली।

३ श्री प्रेम प्रकाश जी अजमेर।

कोषाध्यक्ष— श्री रघुनाथ प्रसादजी पाठक देहली।

अन्तरङ्ग सभासद्—श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी, श्री विश्वम्भर प्रसाद जायसवाल विहार, श्री हरिश्चन्द्र जी सरायतरीन, श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री, श्री प० धुरेन्द्र जी शास्त्री, श्री ओमप्रकाश जी अजमेर, श्री डा० कृष्णचन्द्र जी कानपुर, श्री शिवस्वरूप जी पीलीभीत, श्री नारायणसिंह जी इन्दौर, श्री रतनसिंहजी भरतपुर, श्री नन्दकिशोर जी खन्ना देहली।

वादविवाद प्रतियोगिता

सम्मेलन के अवसर पर "अखण्ड भारत या पाकिस्तान" विषय पर छोटे व बड़े आर्य कुमारों की वादविवाद प्रतियोगिता हुई जिसके सम्बन्ध मे श्री गुप्त जी ने प्रकट किया कि मेरा हृदय ऐसे गम्भीर विषय पर कुमारो के इतने सुन्दर विचार सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। प्रतियोगिता का फल निम्न प्रकार रहा—

प्रथम—श्री रवीन्द्र नारायण कुल श्र भरतपुर।

द्वितीय —श्री जगत् प्रकाश सेठ अजमेर।

तृतीय—श्री नारायण सिंह जी इन्दौर।

निम्न कुमारो को विशेष पुरस्कार सम्मेलन के सभापति जी ने दिये जाने की आज्ञा दी—

१ श्री महेन्द्रकुमार प्रेमी मेरठ।

२ श्री सत्यदेव जी अजमेर।

निबन्ध प्रतियोगिता—

(बड़े कुमारो मे)

श्री सत्यप्रकाश जी गोयल नजीबाबाद।

(छोटे कुमारो मे)

प्रथम—श्री प्रेमप्रकाश जी अजमेर।

द्वितीय—श्री महेन्द्रकुमार जी प्रेमी मेरठ।

तृतीय—श्री रवीन्द्र नारायण कुल श्रेष्ठ भरतपुर।

श्री बा० बैजनाथ जी ऐडवोकेट ने २० मई को समस्त आर्य कुमारो तथा बाहर से आए अन्य महानुभावों को प्रीतिभोज दिया।

सम्मेलन मे निम्न विद्वानो ने विशेष रूप से भाग लिया—

श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री, श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, श्री प० रामदत्त जी शर्मा, बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट, श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति।

महत्वपूर्ण कार्य

परिषद् की अन्तरङ्ग सभा ने निश्चय किया है कि इस वर्ष 'आर्यकुमार' मासिक पत्र प्रकाशित किया जाय। इसके लिए डा० सूर्यदेव जी श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी व प० धर्मदेवजी का सम्पादक मण्डल नियत कर दिया है और इसके प्रकाशन का समस्त कार्य भार श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी मेरठ को सौंपा गया है। इसी प्रकार आर्यकुमार डायरी १९४६ तथा उन्नति की ओर' पुस्तक भी प्रकाशित करने का निश्चय किया गया है।

तम्बाकू निषेध अश्लील सिनेमाओं का बहिष्कार, गाली देने की कुप्रथाओं को रोकने आदि के सम्बन्ध मे विशेष कार्य किया जायगा।

धार्मिक परीक्षाएँ—

परिषद् के कार्यों में धार्मिक परीक्षाएँ विशेष स्थान रखती हैं। इस वर्ष इसका कार्य भार श्री प० सूर्यदेव जी शर्मा एम० ए०, डी लिट वाइस प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज अजमेर को सौंपा गया है। अत एतद् विषयक समस्त पत्र व्यवहार उन्हीं के पते पर किया जाय। परीक्षाओं के सम्बन्ध में यदि किसी सम्बन्ध की कोई शिकायत हो तो उसे निम्न पते पर भेजिये—

राममोहन, मन्त्री, भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् मुरादाबाद।

निवेदक —

राममोहन

मन्त्री

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्

मुरादाबाद।

समस्त आर्यकुमार सभाओं के मन्त्री महोदयो से—

इस वर्ष भरतपुर मे भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद के अ० भा० सम्मेलन के अवसर पर एकत्रित भिन्न २ प्रान्तो के आर्य कुमार सभाओ के प्रतिनिधियो ने सर्वसम्मति से मुझे परिषद् का कार्यकर्ता प्रधान चुनकर जिस प्रेम और विश्वास का परिचय दिया है उसके लिये उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हुए मैं निम्न बातो की ओर समस्त आर्य कुमार सभाओ के सचालको का ध्यान आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

(१) प्रत्येक आर्य कुमार सभा को स्थानीय आर्य समाज के साथ पूर्ण सहयोग की भावना रखनी चाहिये। यथा दैनिक और साप्ताहिक सत्सङ्गो मे सम्मिलित होकर आर्य कुमारो को लाभ उठाना चाहिये। किसी प्रकार का विरोध, सघर्ष व प्रतिस्पर्धा का भाव मन मे न रखना चाहिये। ऐसा ही स्नेह और सहयोग का भाव आर्यसमाजो के अधिकारियो को आर्य कुमारो के प्रति रखना चाहिये।

(२) अधिक से अधिक विद्यार्थियो और अन्य कुमारो को आर्य कुमार सभाओ मे सम्मिलित करने का यत्न करना चाहिये। वाद विवाद सभा मे सम्मिलित करने का यत्न करना चाहिये। वाद विवाद सभाओ और प्रतियोगिता निबन्धो की भी इस उद्देश्य से आयोजना करनी चाहिये।

(३) प्रत्येक आर्य कुमार सभा को कुमार और युवकोपयोगी साहित्य का एक पुस्तकालय, एक वाचनालय तथा व्यायामशाला की स्थापना का यत्न करना चाहिये जिससे अधिक से अधिक

कुमार लाभ उठा सकें। जहां आर्य वीर दल स्थापित हो वहां उनसे पूर्ण सहयोग करके शारीरिक उन्नति का विशेष यत्न करना चाहिये अन्यथा आर्य वीर दल की स्थापना करनी चाहिये।

(४) बीड़ी, सीमेट, तम्बाकू आदि का निषेध, अश्लील सिनेमाओं का बहिष्कार तथा गाली देने की कुप्रथा आदि के विरुद्ध सब आर्यकुमारों को प्रबल आन्दोलन करना चाहिये जिससे नागरिक वातावरण पवित्र बन सके।

(५) सन्ध्या हवन, स्वाध्याय, सत्सङ्गादि के द्वारा अपने जीवन को अधिक से अधिक पवित्र बनाने का यत्न करना चाहिये तथा सेवाभाव द्वारा जनता में प्रेम उत्पन्न करना चाहिये।

(६) ग्रीष्मावकाश तथा अन्य अवकाश के दिनों में ग्रामवासियों में प्रचार और अशिक्षा तथा अस्पृश्यता निवारणार्थ विशेष समय देना चाहिये जिससे सामाजिक सेवा का अभ्यास हो सके।

(७) जन्म मूलक वर्ण व्यवस्था या जाति भेद समाज के लिये अत्यन्त घातक प्रथा है अतः आर्य कुमारो और आर्य कुमारियों को इस के निवारणार्थ व्रत पत्र भरने चाहियें और जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ अजमेर को पूर्ण सहयोग देना चाहिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति,
का० प्रधान अ० भा० आर्य
कुमार परिषत् देहली।

श्री अम्बेडकर जी और वर्ण व्यवस्था

(लेखक—श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ)

श्री सन्तराम बी०ए० मन्त्री जात पात तोडक मण्डल लाहौर ने मेरे पास एक प्रति श्री अम्बेडकर कृत Annihilation of Caste की भेजी। उससे पाया जाता है कि सन् १९३५ में श्री अम्बेडकर जी जात पांत तोडक मण्डल लाहौर के वार्षिकोत्सव के लिये जो सन् १९३६ के मई मास में होने वाला था सभापति चुने गये थे। परन्तु उन्होंने उस अवसर के लिए जो अपना भाषण तैयार किया वह इतना उग्र वा कठोर था कि मण्डल की स्वागत समिति ने उसमें कुछ परिवर्तन चाहे जिनको श्री अम्बेडकर जी ने स्वीकार नहीं किया। परिणाम यह हुआ कि मण्डल का उत्सव स्थगित कर दिया गया—तब श्री अम्बेडकर जी ने अपने पूर्वोक्त भाषण को पुस्तक रूप में छपवाया। महात्मा गांधी ने उक्त पुस्तक पर १८ जुलाई और १५ अगस्त सन् १९३६ के "हरिजन" पत्र में आलोचना की। श्री अम्बेड कर ने महात्मा गाधी की आलोचना के उत्तर सहित अपने भाषण को पूर्वोक्त पुस्तक के रूप मे प्रकाशित किया है।

मैंने उक्त पुस्तक को ध्यान पूर्वक पढ़ा। श्री अम्बेडकर जी एक सुप्रसिद्ध विद्वान् और जन्म मूलक जाति भेद को मिटाने वाले सुधारकों में एक ख्याति प्राप्त नेता हैं। महात्मा गान्धी से उनका केवल सामाजिक सुधार पर ही नहीं अपि तु राजनैतिक विषयों पर भी मत भेद रहा है। श्री अम्बेडकर को जाति भेद की बुराइयों के कारण हिन्दू मत से भी घृणा होगई थी। जिस समय उनको पूर्वोक्त भाषण देना था, उस समय वे हिन्दू मत को परित्याग करने का संकल्प कर चुके थे और इस विचार को अपने भाषण में भी प्रकट किया था।

जन्म मूलक जाति भेद की बुराइयों को इस पुस्तक में बडी योग्यता के साथ दिखलाया गया है—आरम्भ में श्री अम्बेडकर ने भारत तथा यूरोप के कुछ देशों के इतिहास से यह सिद्ध किया है कि राजनैतिक सुधारों से पहले सामाजिक सुधार होना आवश्यक है, और इसलिये इसका राजनैतिक सुधार से भी अधिक महत्व है। भारतवर्ष में विना जाति भेद को नष्ट किये सामाजिक सुधार होना उन्होंने असम्भव बतलाया है, और वास्तव में यह सत्य ही है। पुस्तक में दिखलाया गया है कि यह जाति पाति की कुप्रथा शुद्धि और संगठन के कार्य्य में बाधक हैं और विधवा विवाह आदि सुधारों में रुकावट डालती है। श्री अम्बेडकर ने यह ठीक लिखा है कि— Turn in any direction you like, caste is the monster that crosses your path "अर्थात् आप किसी ओर जावें जाति पांति का भूत आपके मार्ग को काटता है। जब तक आप इस भूत को नष्ट नहीं करते आप कोई राजनैतिक या आर्थिक सुधार नहीं कर सकते"।

यह खेद की बात है कि जन्ममूलक जाति भेद का खण्डन करते हुए श्री अम्बेड कर ने वैदिक वर्ण व्यवस्था को भी उसके साथ घसीट लिया यद्यपि वह उससे बिलकुल भिन्न है। पुस्तक के १५-१९ विभागों में

उन्होंने चातुर्वर्ण्य की आलोचना की है। उन्होंने आरम्भ में कहा है कि आर्य समाज इस व्यवस्था का प्रचार करता है और यह स्वीकार किया है कि आर्य समाज इसको जन्म के आधार पर नहीं मानता गुणकर्म के आधार पर मानता है तो भी वे लिखते हैं " It is an ideal to which I cannot reconcile myself " अर्थात् मैं इस आदर्श से सहमत नहीं होसकता आगे लिखा है कि " To me this chaturvarnya with its old labels is utterly repellent and my whole being rebels against it," अर्थात् 'यह चातुर्वर्ण्य पुराने लेबिल व नामों के साथ मुझको नितान्त घृणित प्रतीत होता है। मेरी आत्मा इससे सर्वथा विद्रोह करती है।" परन्तु इसके लिये उन्होंने कोई उपयुक्त कारण नहीं बताये। उन्होंने यह ठीक लिखा है कि वर्ण व्यवस्था स्थापित करने के लिये पहले जाति भेद को नष्ट करना आवश्यक है। परन्तु यह प्रश्न किया है कि ४००० जन्म मूलक जाति उपजाति-यो को गुण-कर्म स्वभाव के आधार पर चार वर्णों में कैसे लाया जायगा यह भी लिखा है कि सब मनुष्यों का चार वर्णों में विभाग नहीं हो सकता यह प्रश्न भी उठाया है कि आर्य समाजी ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य व शूद्र के लेबिल व नामों पर क्यों आग्रह करते हैं। इसके उत्तर में यह लिखना पर्याप्त होगा कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र मानव [illegible] के [illegible] प्रमुख भाग हैं। जैसे कि मानव शरीर के सिर, बाहु, ऊरु (मध्यम भाग) और पा[illegible] चार मुख्य भाग हैं। वेद के उस प्रसिद्ध मन्त्र [illegible] व्यवस्था का आधार है अलङ्कार रूप से ब्राह्मण वर्ण को मनुष्य समाज का सिर, क्षत्रि-यों को बाहु, वैश्यों को मध्यम भाग, और शूद्रों को पांव बतलाया गया है। सिर में सब ज्ञाने-न्द्रियां और मन जो विचार शक्ति का केन्द्र है स्थित हैं इस लिये वे सब मनुष्य जो मुख्यतया ज्ञान विज्ञान सम्बन्धी कार्य करते हों, जैसा कि शरीर में शिर व दिमाग करते हैं ब्राह्मण वर्ण के अन्तर्गत हैं। उसमें केवल अध्यापक या पुरोहित ही नहीं किन्तु न्यायाधीश, वकील उच्च श्रेणी के शिल्पकार कलाकार व नेता आदि जो विशेष कर दिमाग से काम करते हैं वे सब आजाते हैं। वे अपने २ व्यवसाय के अनुसार जज वकील इञ्जी-नियर आदि कहलावेंगे चाहे ब्राह्मण नाम से न पुकारे जावें, जो मनुष्य समाज की रक्षा का कार्य करते हैं वे सब क्षत्रिय वर्ण के अन्तर्गत हैं। उनमें केवल सिपाही वा फौज में काम करने वाले ही नहीं किन्तु पुलिस व शासक वर्ग के सब कर्मचारी शामिल हैं चाहे वे क्षत्रिय नाम से प्रसिद्ध न हों और अपने २ व्यवसाय के अनुसार भिन्न भिन्न नामों से पुकारे जावें। शरीर के मध्य भाग में, मेदा जिगर आंतें गुर्दे दिल-फेफड़े आदि सब मुख्य अंग हैं। उसी प्रकार वैश्य वर्ण के अन्तर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय, व शूद्र के सिवाय सब प्रकार के व्यवसाय करने वाले जैसे कृषक, जमींदार, साहू-कार, व्यापारी और सब शिल्पकार (लुहार, बढ़-ई, चमार, जुलाहे, धोबी आदि) हैं जो मनुष्य केवल साधारण सेवा वा छोटी श्रेणी का काम करते हैं वे शूद्र वर्ण के अन्तर्गत हैं। इन अनेक व्यवसाय या पेशों को मनुष्य शरीर के मुख्य चार भागों की उपमा के अनुसार ४ प्रमुख भागों में रखना कोई आपत्तिजनक बात नहीं। और न उन के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र

शब्दों का प्रयोग करना आपत्ति जनक होना चाहिए। यदि यह ध्यान में रक्खा जावे कि यह विभाग गुण कर्मों के अनुसार है और प्रत्येक मनुष्य को पूर्ण अधिकार है कि वह अपनी योग्यता के अनुसार चाहे जिस व्यवसाय वा पेशे को करे। वर्ण शब्द वृ (To choose) छाटना या पसन्द करना, धातु से बना है और उसका भाव ही उस पेशे से है जिस को मनुष्य अपनी इच्छा व योग्यता के अनुसार छाटे या स्वीकार करे और जिससे उसकी वृत्ति वा रोजगार होता हो। वृत्ति शब्द भी वृ धातु से ही निकला है। यह खेद की बात है कि आजकल वर्ण शब्द का भी प्रयोग जन्म मूलक जाति भेद के कारण जाति Caste के अर्थ में आने लगा है।

श्री अम्बेडकर ने एक प्रश्न यह भी उठाया है कि बिना किसी दण्ड विधान के चातुर्वर्ण्य का व्यवहार कैसे होगा, इसका उत्तर यही है कि जाति भेद के झूठे विचार दूर होनेपर जिसके लिये सब सुधारक लोग यत्न करते हैं और लोकमत के ठीक हो जाने पर सब मनुष्यो के साथ उन की योग्यता के अनुसार व्यवहार किया जाने लगेगा। यदि फिर भी कोई मनुष्य योग्यता न रखते हुए अपने को ब्राह्मण वा क्षत्रिय कहे तो उस को विचार शील व समझदार लोग नहीं मानेंगे, और उस से समाज की विशेष हानि नहीं हो सकती, एक प्रश्न यह है कि चातुर्वर्ण्य के प्रचलित होने पर स्त्रियो का क्या होगा और "श्री अम्बेडकर जी लिखते हैं—He would be a bold person who would say that it will allow women priests and women soldiers" अर्थात् यह कहना कठिन होगा कि चातुर्वर्ण्य के अनुसार स्त्री पुरोहित वा स्त्री सिपाही मानी जा सकें। यह कुछ आश्चर्यकी बात है कि श्री अम्बेडकर जैसे योग्य सुधारक ने ऐसा प्रश्न उठाया। आजाद हिन्द फौज मे जिसकी स्थापना श्री सुभाषचन्द्र बोस की अध्यक्षता मे हुई थी रानी झासी रेजी मेण्ट के नाम से स्त्री सिपाहियों का भी एक दल बनाया गया था जिसकी नेत्री श्रीमती कैप्टेन लक्ष्मी थीं, और जिसको भारतीय जनता ने बड़े मान और आदर की दृष्टि से देखा। स्त्रियो में पुरोहिताओं व अध्यापिकाओ का होना भी उसी प्रकार सम्भव और उस से भी अधिक सुगम है।

श्री अम्बेडकर ने पुस्तक के ५७ पृष्ठ पर जाति भेद को दूर करने में अन्तर्जातीय सहभोजो की असफलता का वर्णन करते हुए लिखा है कि—I am canvinced that the real remedy is inter-marriage" अर्थात् मेरा विश्वास है कि जाति भेद दूर करने का वास्तविक उपाय अन्तर्जातीय विवाह हैं। आर्य समाज इस से पूर्णतया सहमत है और अन्तर्जातीय विवाहो मे जो कानूनी कठिनाइया थीं उनको दूर करने के लिए उसने एक आर्य विवाह विधान (Arya Marriage Validation Act) के नाम से केन्द्रीय धारा सभा से स्वीकृत कराकर प्रचलित करा दिया है। उसको व्यवहार में लाने के लिये आर्य समाज की ओर से श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वीकृति से और उस की अध्यक्षता में एक जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ" हाल में स्थापित किया गया है। जो लोग अन्तर्जातीय विवाह कराने के इच्छुक हों उन के लिए इस संघ की ओर से सब

प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था की जायगी, इस संघ का यह भी उद्देश्य है कि गुरुकुल, कालिज, स्कूल आदि के विद्यार्थियों और अन्य कुमार युवकों में संघ के उद्देश्यों का प्रचार करके उनसे यह व्रत धारण करावे कि वे अपना विवाह जाति पांति का विचार छोड़ कर अपनी जाति से बाहर करेंगे।

पुस्तक के अन्तिम भाग में श्री अम्बेडकर ने महात्मा गान्धी के इस मत से घोर विरोध प्रकट किया है कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी जन्मगत जाति के अनुसार ही रोजगार करना चाहिए, इसमें आर्य समाज भी डा॰ अम्बेडकर से सर्वथा सहमत है। महात्मा गान्धी का इस समय भी ऊपर लिखा मत है या नहीं यह कहना कठिन है। सन् १९२२ तक महात्मा गान्धी जाति पांति के समर्थक माने जाते थे। सन् १९२५ में उनके विचारों में परिवर्तन पाया जाता है ३ फरवरी १९२५ को उन्होंने लिखा है—

"मैं जाति पांति का समर्थक था क्योंकि यह संयम सिखलाती है परन्तु इस समय जाति पांति का अभिप्राय संयम नहीं, किन्तु एक संकीर्णता है जो जंजीर के समान जकड़ देती है। जाति पांति में, जैसी वह इस समय है, कोई भी बात प्रशंसनीय नहीं है। वह शास्त्रों की आज्ञा के विरुद्ध है। जातियों की संख्या अगणित है और उनमें परस्पर रोटी बेटी की मनाही है। यह उन्नति की व्यवस्था नहीं यह अवनति का मार्ग है। सर्वोत्तम उपाय यह है कि ो छोटी जातियां मिलकर एक बड़ी जाति बन जाय। ऐसी बड़ी जातियां चार होनी चाहिएं, ताकि हम उनके चार वर्ण बना सकें (श्री सन्तराम बी. ए. कृत "सबका सफाई" पुस्तिका से उद्धृत) यहां तक ये विचार बहुत उत्तम हैं और वैदिक वर्ण व्यवस्था के सर्वथा अनुकूल ही हैं। परन्तु मालूम होता है कि उस समय महात्मा गांधी ने चार वर्णों को जन्म के आधार पर ही रखा था क्योंकि आगे लिखा है कि "वर्ण का अभिप्राय है मनुष्य के जन्म से पहले ही उसके पेशे का निर्णय। वर्ण व्यवस्था में किसी मनुष्य को अपना पेशा चुनने की स्वतन्त्रता नहीं, विरासत (heredity) ही उसके लिए व्यवसाय नियत कर देती है।" (पूर्वोक्त पुस्तिका से उद्धृत)

ऊपर लिखे विचार वैदिक वर्ण व्यवस्था और आर्य समाज की शिक्षा के सर्वथा प्रतिकूल हैं और वे न्याय विरुद्ध तथा समाज के लिये हानिकारक भी हैं। यह ठीक है कि साधारणतया मनुष्यको अपने पैतृक व्यवसाय करने में कई प्रकार की सुविधाएं होती हैं और इसलिये बहुत से मनुष्य अपना पैतृक व्यवसाय या पेशा ही करते हैं। परन्तु यदि कोई मनुष्य अपनी इच्छा और योग्यता के अनुसार पैतृक व्यवसाय से भिन्न और उत्तम कोई दूसरा पेशा करना चाहे तो उसको उसके लिए पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये, यदि समाज उसको ऐसा करने से रोके वा उसमें बाधा डाले तो समाज का ऐसा कार्य उस पर घोर अन्याय व अत्याचार करना होगा। योरुप के किसी सभ्य देश के इतिहास को देखिये, ऐसे असंख्य उदाहरण मिलेंगे कि लोगों ने अपने पैतृक पेशे को न करके अन्य व्यवसाय करके बहुत उन्नति की और देश को भी लाभ पहुंचाया। यदि भारत में ऐसे उदा-

दरया कम पाये जाते हैं तो इसका मुख्य कारण यही है कि इस देश में जाति भेद की अन्याय पूर्ण प्रथा के कारण उनको अन्य व्यवसाय करने में रुकावट डाली जाती है ।

परन्तु जैसा ऊपर लिखा गया यह कहना कठिन है कि म० गांधी अब भी उन विचारो को मानते हैं जो ऊपर उद्धृत किये गये । हिन्दुस्तान टाइम्स के १५ अप्रैल १९४५ के परचे में वे कहते हैं "जात पात वर्तमान समय के लिये अनुकूल नहीं"। इसका यह तात्पर्य हो सकता है कि वे ऊपर लिखे विचारो का अब समर्थन नहीं करते ।

पुस्तक पृ० ७४ व ७५ पर जाति भेद को मिटाने के लिये जो ५ मुख्य उपाय बतलाये गये हैं उनसे किसी भी सुधारक को विरोध या मत भेद न होगा । श्री अम्बेडकर ने पृ० ७५ पर यह ठीक लिखा है—

There should be no opposition to this reform from any quarter It should be welcome even by the Arya samajists, because this is merely an application of their own doctrine of Guna Karma

अर्थात् इस सुधार में किसी ओर से भी विरोध नहीं होना चाहिये । इस का आर्य्य समाजियों को भी खण्डन न करना चाहिये क्यों कि यह उन्हीं के गुण कर्म के सिद्धान्त का उपयोग है" ।

श्री अम्बेडकर की पुस्तक Annihilation of caste सामाजिक सुधार के लिये एक उत्तम और उपयोगी पुस्तक है । परन्तु उसमें जातिभेद की महा हानिकारक और अन्याय पूर्ण कुप्रथा के खण्डन के साथ चातुर्वर्ण्य अथवा वैदिक वर्ण व्यवस्था को, उस रूप में भी जिसमें कि आर्य समाज उसका प्रचार करता है और जो गुण कर्म स्वभाव के आधार पर होने से सब प्रकार युक्त और उपयोगी है, व्यर्थ लपेट लिया गया है । यदि कोई लोग ४००० जाति उपजातियों का तिरस्कार करते हुए केवल चार वर्णों को मानते हों परन्तु जन्म के आधार पर मानें वे वैदिक धर्म के विरोधी हैं । और उसमें जन्मगत जाति भेद की सब बुराइयां आजाती हैं । वैदिक वर्ण व्यवस्था और पौराणिक जातिभेद में मुख्य अन्तर यही है कि पहली गुण कर्म और योग्यता के आधार पर है और दूसरी जन्म के आधार पर, चार वर्णों के अतिरिक्त अन्य जाति उपजातियों का जिनकी संख्या अब कई सहस्र है पुराणों में भी कोई स्थान नहीं, और न एक वर्ण के भीतर भिन्न उपजातियों मे परस्पर विवाह का निषेध ही पाया जाता है ।

एक आवश्यक सभा

सत्यार्थप्रकाश पर लगे प्रतिबंध के निराकरण के लिए अन्तिम उपाय का निश्चय करने के उद्देश्य से सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति और सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा की आवश्यक बैठक ३० । ६ । ४९ को बलिदान भवन देहली में बुलाई गई है ।

नारायण दत्त
का० मन्त्री

आवश्यक घोषणा

आर्य वीर दल और रक्षा समिति जिस की सरक्षता में दल काम करता है, १९२७ मे सगठित हुई आर्य कांग्रेस के निश्चयानुसार निर्मित हुई थी। उस समय से आर्य वीर दल देश भर में संगठित हो कर काम कर रहा है। इस दल के सम्बन्ध मे श्री प० ज्ञान चन्द्र जी ने एक विज्ञप्ति प्रकाशित की है जिसके द्वारा उन्होंने इस दल का नाम आर्य वीर सघ रख कर आर्य समाजों को इसी परिवर्तित नाम के प्रयोग करने का आदेश दिया है। ज्ञान चन्द्र जी की इस विज्ञप्ति पर सार्वदेशिक सभा ने अपने २७ अप्रैल १९४६ के साधारण अधिवेशन में रिपोर्ट के प्रसग मे विचार करके निश्चय किया है कि 'इस सभा की सम्मति है कि आर्य व र दल को आय वीर सघ में सम्मिलित होने की प्रेरणा करने के सम्बन्ध में जो पत्र पं० ज्ञान चन्द्र जी ने आर्य वीर दलों को भेजा है वह सार्वदेशिक सभा द्वारा सचालित आर्य वीर दल सगठन का भग करने वाला और नियन्त्रण का विरोधी है।" इस लिये समस्त प्रांतिक सभाओं, आर्य समाजों और समस्त आर्य वीर दलों को चाहिये कि वे आय वीर दल ही के नाम से यथापूर्व इस दल को संबोधित किया करें।

नारायण स्वामी
प्रधान
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

काफ़ी ज्यादा पुरस्कार

१४ वर्ष का लडका लापता

मेरा पुत्र ताराशकर उर्फ मान्तु, उम्र १४ वर्ष, बदन का रग हल्का गेहुआ और पतला गठन, दाहिनी आख के नजदीक दाग, ६ जून सवेरे से लापता है। मालूम हुआ है कि उसे एक पजाबी मुसलमान के साथ देखा गया जोकि उसे स्टेशन की तरफ उसका पहिनावा बदल कर ले जारहा था। मकान से वह कत्थ- रग का हाफ कमीज और काला हाफपैन्ट पहन कर गया है। कोई सहृदय पुरुष जोकि इस लड़के के उद्धार में सहायता करेंगे उन्हें अच्छा इनाम और खरचा दिया जायेगा।

कविराज हाराणचन्द राय चौधरी
३२२ जगमबाड़ी, बनारस।

सम्पादकीय

'सत्यार्थ प्रकाश प्रतिबन्ध' पर सिन्ध सरकार का प्रतिबन्ध—

पाठक महोदयों ने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा कि गत मास सिन्ध सरकार ने श्री ला० केशवराम जी उप प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर द्वारा प्रकाशित 'सत्यार्थ प्रकाश प्रतिबन्ध' विषयक पुस्तक के मुद्रण प्रकाशन वितरण और बिक्री पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। कुछ मास पूर्व मैंने इस पुस्तिका को जिसमें केवल १४ पृष्ठ हैं पढ़ा था। उत्सुकतावश अब फिर आद्योपान्त पढ़ कर यह टिप्पणी लिख रहा हूं। इस अंग्रेजी पुस्तिका का पूरा नाम The Sind Ban on Satyarth Prakash -A Rational Demand for its removal यह है। लेखक श्री परमेश्वरन् नामक एक मलाबार के सज्जन हैं जो आर्यसमाजी होने का दावा नहीं करते पर जो ऋषि दयानन्द के बड़े भक्त हैं। उन्होंने पुस्तिका में ऋषि दयानन्द की उदार हृदयता को सत्यार्थ प्रकाश की भूमिकादि के आधार पर अच्छी प्रकार दिखा कर वायसराय महोदय से अपील की है कि सिन्ध सरकार द्वारा सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास पर लगाये अत्यन्त अनुचित और अन्यायपूर्ण, हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कुठाराघात करने वाले प्रतिबन्ध को हटवा दें। भाई परमानन्द जी के इस विषयक प्रस्ताव पर हुए भाषणों में से भी कुछ आवश्यक उद्धरण पुस्तिका में दिये गए हैं। पुस्तिका को आद्योपान्त पुनः ध्यानपूर्वक पढ़ने पर भी हमारी समझ में नहीं आया कि ऐसी निर्दोष और शुद्ध भाव से लिखित पुस्तक पर सिन्ध के मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल ने प्रतिबन्ध लगाने की क्यों आवश्यकता समझी सिवाय इसके कि आर्यों को जानबूझ कर चिढ़ाना ही उन्होंने अपना उद्देश्य बना लिया हो। 'सत्यार्थ प्रकाश' पर प्रतिबन्ध को आर्यों ने चुपचाप सहन कर लिया है और वे इस विषय में अब चुप्पी साध कर बैठ गये हैं ऐसा यदि सिन्ध का मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल समझता है तो वह सर्वथा अशुद्ध धारणा है। उस प्रतिबन्ध के विरुद्ध आज भी आर्य (हिन्दू) जनता में उतना ही असन्तोष और उसको हटवाने के लिये उतना ही उत्साह है जितना कि पहले था यद्यपि देश की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए सत्याग्रहादि के प्रबल आन्दोलन को कुछ समय के लिये स्थगित करना नेताओं ने उचित समझा था। अब इस विषयक भविष्य का कार्यक्रम निश्चित करने के लिये सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति और सार्वदेशिक सभा की अन्तरङ्ग सभा का सम्मिलित अधिवेशन ३० जून को देहली में किया जा रहा है। हमें निश्चय है कि आर्य जनता जिसने अपनी अनुशासन प्रियता और धैर्य का इतने समय

तक विशेष परिचय दिया है भविष्य में भी अदम्य उत्साह और कर्तव्य परायणता का परिचय देकर इस अत्यन्त अनुचित प्रतिबन्ध को हटवाने में सफल होगी।

प्रचार शैली में परिवर्तन की आवश्यकता—

इस अङ्क में अन्यत्र हमने हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के सुयोग्य उपाध्याय श्री प्रो० महेशप्रसाद जी का एक विचारपूर्ण लेख प्रकाशित किया है। प्रचार की वर्तमान शैलीमें जिसमें आर्य-समाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर बहुत से उपदेशकों और भजनीकों को एकत्रित करके जोर से प्रचार की धूमधाम कर दी जाती है पर्याप्त परिवर्तन की आवश्यकता है इससे इन्कार नहीं हो सकता। बहुत बार यहां तक देखने में आया है कि २ ३ दिनों के लिये इतने व्याख्याताओं और भजनीकों को बुला लिया जाता है कि उनमें से बहुतों को १० १५ मि० के लिये भी अपने विचार प्रकट करने का अवसर नहीं मिलता जो व्यर्थ का व्यय इस प्रकार करना पड़ता है और उसके मुकाबले में जो वास्तविक लाभ जनता को पहुँचता है यह एक विचारणीय विषय है। यह भी देखने में आता है कि गम्भीर धार्मिक या सिद्धान्त विषयक भाषणों—यहां तक कि वेद विषयक व्याख्यानों को सुनने के लिये जनता उतनी तत्पर नहीं होती जितनी कि मखौलभरी गपशप या अत्युक्ति पूर्ण चटपटी मसालेदार बातें सुनने के लिये जिनसे वास्तविक लाभ सर्वसाधारण जनता को भी बहुत कम पहुँचता है सुशिक्षित जनता तो उससे सर्वथा वञ्चित रह जाती है क्योंकि समाजों के अनेक अधिकारी भी साधारण जनता की विनोदप्रियता का ध्यान करते हुए वैसे ही व्याख्यान वा भजनादि करवाना पसन्द करते हैं इस प्रकार व्याख्याताओं को भी बहुत नीचे स्तर (Level) पर आना पड़ता है और विद्वान् भी अपने गम्भीर विचारों को जनता के सम्मुख रखते हुए प्रायः सङ्कोच अनुभव करते हैं। यह दशा अत्यन्त शोचनीय है। जनता के विनोद के लिये कई ऐसे अवाञ्छनीय व्यक्तियों को भी आर्य समाज की वेदि पर खड़ा कर दिया जाता है जिनके आचार व्यवहार के विषय में भी लोगों में पर्याप्त चर्चा होती है। इस प्रकार उत्सवों में धूमधाम मच जाने और आर्यों की शक्ति का कुछ सङ्गठित प्रदर्शन हो जाने पर भी प्रचार की दृष्टि से वास्तविक लाभ कम होता है अतः उसमें उचित परिवर्तन करने नितान्त आवश्यक हैं। सदाचार और विद्वत्ता का आर्य समाज की वेदीपर भाषण देने वाले व्यक्तियों के लिये विशेष ध्यान अवश्य रक्खा जाना चाहिए। अनेक विषयों पर सार हीन धुआंधार भाषणों की अपेक्षा किन्हीं सुयोग्य सदाचारी विद्वान् महानुभाव द्वारा कथा के रूप में कुछ दिन प्रवचन जनता के लिये अधिक उपयोगी होसकता है (जैसा कि अनेक समाजों में प्रचलित भी हो गया है)। सर्व साधारण जनता के अतिरिक्त सुशिक्षित जनता के लाभार्थ विशेष व्याख्यानों का प्रबन्ध भी अवश्य होना चाहिये अन्यथा आर्य समाज का माप दण्ड (Standard) बहुत कम हो जायगा। विद्यार्थियों और शिक्षा केन्द्रों में प्रचार की विशेष व्यवस्था की जानी चाहिये। सीमित क्षेत्र बनाकर उनमें सुयोग्य पुरोहितों और अन्य विद्वानों द्वारा सेवादि कार्य के

साथ क्रियात्मक प्रचार की विशेष आयोजना की जानी चाहिये केवल दो एक दिन के धुआंधार भाषणों से काम नहीं चल सकता। आर्यों के वैयक्तिक पारिवारिक और सामाजिक जीवनों को उन्नत कराना प्रचार का मुख्य लक्ष्य होना चाहिये जनता का मनोरञ्जन मात्र नहीं।

दक्षिण अफ्रीका में काले कानून के विरुद्ध सत्याग्रह—

यह खेद की बात है कि प्रतिवाद के अन्य सब उपाय विफल होते देखकर दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों को जिन में अनेक महिलाएँ भी सम्मिलित हैं) डा० नायकर के नेतृत्व में अपमान जनक तथा घृणासूचक कानूनके विरुद्ध सत्याग्रह का अस्त्र ग्रहण करने को बाधित होना पड़ा समाचार प्राप्त हुआ है कि भारतीयों के शान्त प्रतिरोध शिविर पर लगभग ३ यूरोपियनों ने ७ जून की रात को छापा मारा और शिविर को काट डाला शिविर तथा वहां पड़ी हुई आवश्यक वस्तुओं को भी वे ले भागे भारतीयों ने उसका प्रतिरोध नहीं किया।

जब सत्याग्रह में सम्मिलित स्त्रियों से घर लौटने के लिये अनुरोध किया गया तो उन्होंने कहा कि हम अन्याय का प्रतीकार करने आई हैं। यहां दुःख सहन करना हमें सहर्ष स्वीकार है किंतु पीछे लौट जाना हमें स्वीकार नहीं। हम किसी अवस्था में भी तब तक नहीं लौटेंगी जब तक कि एशियाटिक कानून रद्द नहीं कर दिया जाए।

हम इन मान्य महिलाओं तथा अन्य सत्याग्रही महानुभावों के प्रति आदर का भाव प्रकट करते हुए इस काले कानून को बनवाने में सहयोग देने वाले मदोन्मत्त यूरोपियनों की इस घृणित मन वृत्ति की घोर निन्दा करते हैं और आशा करते हैं कि वहां की सरकार अपनी भूल के लिये पश्चात्ताप करके उस कानून को रद्द करा देगी। ऐसा कानून सभ्यता पर घोर कलङ्क रूप है।

दक्षिण हैदराबादवासी आर्यों का अनुकरणीय कार्य—

हैदराबाद (दक्षिण) आर्य प्रतिनिधि सभा के उत्साही मन्त्री श्री कृष्ण दत्तजी बी ए ने सम्पादक सार्वदेशिक के नाम एक विस्तृत पत्र भेजा था जिस में से निम्न लिखित उद्धरण देना हम उपयोगी प्रतीत होता है—आप को यह जान कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हैदराबाद रियासत में प्रारम्भ से ही जन्ममूलक जात पात को तोड़ने का विचार आर्यसमाज में पैदा कर दिया गया है जिस का परिणाम यह हुआ है कि अनेकों युवकों ने जान बूझ कर जन्ममूलक जाति भेद की दृढ़ दीवारों को गिराने के उद्देश्य से अन्तर्जातीय विवाह किया है ऐसे विवाहों का प्रभाव समाज पर पड़ा है उन की संख्या पचास से भी अधिक है। इसी का यह परिणाम है कि यदि विवाह के समय उसने जन्ममूलक जात पात को नहीं तोड़ा तो उस ने एक बड़ी भूल की और यह उस की निर्बलता है। रियासत में आर्य समाजी एक दूसरे की जाति का पूछना भी भूल और सिद्धान्त के विरुद्ध समझता है हम ने बड़े जोर से अन्तर्जातीय विवाह का क्रियात्मक प्रचार किया है। मुझे यह पूर्ण आशा है कि यदि यह गति रही तो दस वर्ष के पश्चात् आर्य समाजियों का एक बहुत बड़ा परिवार बन जायगा जिन में

परस्पर केवल आर्य समाजी होने के नाते विवाह प्रचलित हो जाएंगे। फ़र्वरी १९४६ से मई १९४६ तक रियासत में चार ऐसे प्रमुख अन्तर्जातीय विवाह हुए हैं जिनका समाज के युवकों पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है जिनका विवरण निम्न है इत्यादि

'सार्वदेशिक' के सम्पादक और जातिभेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ के उपाध्यक्ष रूप से मैं हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा के उत्साही अधिकारियों और प० ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्त शास्त्री श्री काली चरणजी, श्री ओं प्रकाश जी सिद्धान्त रत्न और प० राजेन्द्रनाथ जी सिद्धान्त भूषण श्री मेलाराम जी (देहरादून) आदि उन महानुभावों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ जो जातिभेद के विरुद्ध क्रियात्मक युद्ध कर के आर्य जनता के सन्मुख एक उत्तम आदर्श रख रहे हैं। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि जब तक जात पात के दलदल में आर्य लोग फँसे रहेंगे तब तक उनका उद्धार नहीं हो सकता तथा दलितोद्धार, शुद्धि आदि विषयक आन्दोलनों में यथेष्ट सफलता नहीं मिल सकती। खेद की बात है कि बहुत से आर्य समाज के सदस्यों और कार्यकर्ताओं ने अभी इस आवश्यक विषय की ओर ध्यान नहीं दिया और जातिभेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ के सदस्यों की संख्या में सन्तोष जनक वृद्धि नहीं हो रही। आर्य समाज, शुद्धि और दलितोद्धार का भविष्य जिस आन्दोलन की प्रगति पर निर्भर हो उस विषयक ऐसी उपेक्षा नितान्त शोचनीय है। हैदराबाद सभा की तरह अन्य सभाओं को भी अपने अधीन समस्त आर्य समाजों और प्रचारकों को प्रेरित करना चाहिये कि वे जातिभेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ अजमेर से सदस्यता फार्म तथा कुमार कुमारियों के लिये व्रत पत्र मंगवा कर इस अत्यावश्यक आन्दोलन को अधिक प्रबल और सगठित बनाने में सहायक हों। केवल जातिभेद के खण्डन में व्याख्यान देने से काम नहीं चल सकता, उसके विरुद्ध क्रियात्मक आन्दोलन की आवश्यकता है। यह प्रसन्नता की बात है कि पूज्य महात्मा गांधी जी भी इस जातिभेद निवारक आन्दोलन के अब पूर्ण समर्थक हो गये हैं। मई सन १९४६ के 'हरिजन सेवक' में 'जात पात रूपी घुन' इस शीर्षक से उनका जो लेख प्रकाशित हुआ है उस में उन्होंने ठीक ही लिखा है कि—

'जब पानी से जमीन कटने लगती है तो अच्छी जमीन भी बरबाद होने लगती है। यह काफी बुरी चीज है मगर जातपात रूपी घुन उस से भी बुरा है। वह आदमियों को बरबाद कर देता है और उन्हें एक दूसरे से अलग कर देता है।" इत्यादि विश्व की विभूति के इन वचनों पर भी जनता को अवश्य ध्यान देना चाहिये।

महात्मा जी की प्रार्थना सभा में रामधुनः—

पूज्य महात्मा गान्धी जी प्रार्थना के महत्त्व और उसकी आध्यात्मिक दृष्टि से उपयोगिता की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हुए आस्तिकता की भावना को बढ़ाने का प्रार्थना सभाओं द्वारा जो निरन्तर नियम पूर्वक प्रयत्न कर रहे हैं वह अभिनन्दनीय है। प्रार्थना सभाओं में उनके प्रवचन प्रायः बड़े ही उत्तम और जनता के लिये उपयोगी होते हैं। किन्तु एक बात का इस सम्बन्ध में संकेत किये बिना हम नहीं रह सकते

जो हम आर्यों को आक्षेप योग्य प्रतीत होती है ।। और वह "रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम" यह राम धुन है जो इन प्रार्थना सभाओं का अत्यावश्यक अङ्ग है और जिसमें सबके भाग लेने पर स्वयं पूज्य महात्मा जी का बड़ा बल रहता है। हमें भी इन प्रार्थना सभाओं में सम्मिलित होने का कई वार सौभाग्य प्राप्त हुआ है किन्तु इस राम धुन में सम्मिलित होना हमें अपनी अन्तरात्मा के प्रतिकूल होने से रुचिकर नहीं प्रतीत हुआ। यद्यपि स्थित प्रज्ञ विषयक भगवद् गीता के श्लोकादि का हम सदा प्रेम पूर्वक उच्चारण करते रहे हैं। पू० महात्मा जी ने ५ मई सन् १९४६ के हरिजन सेवक में लिखा था कि "रामधुन गाने में तो सब शामिल हो सकते हैं। ताल के साथ रामधुन गाना प्रार्थना का सादे से सादा रूप है।"

इस में प्रथम बात तो यह है कि "रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीताराम" यह केवल स्तुति है प्रार्थना नहीं। यह स्तुति भी महाराज दशरथ पुत्र सीतापति रघुकुलोत्पन्न श्री रामचन्द्र जी की हो सकती है सर्व व्यापक, सर्वशक्तिमान् निराकार, निर्विकार भगवान् की नहीं, यह इस पद्य में दिये विशेषणों से स्पष्ट है। किन्तु जब पूज्य महात्मा जी से प्रश्न किया गया कि 'लेकिन ग़ैर हिन्दू इस में कैसे शामिल हो सकते हैं? इसके उत्तर में उन्होंने कहा था कि 'जब कोई यह एतराज (आक्षेप) पेश करता है कि राम का नाम लेना या रामधुन गाना तो सिर्फ हिन्दुओं के लिये है तब मुझे मन ही मन हंसी आती है। मेरा राम, हमारी प्रार्थना के समय का राम, वह ऐतिहासिक राम नहीं है जो दशरथ का पुत्र और अयोध्या का राजा था। यह तो सनातन, अजन्मा और अद्वितीय राम है। मैं उसी की पूजा करता हू। उसी की मदद चाहता हूँ। आपको भी यही करना चाहिये। वह सब किसी का है। इस लिये मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों किसी मुसलमान को या दूसरे किसी को उसका नाम लेने में एतराज होना चाहिये।" इत्यादि ("हरिजन सेवक" ५-५-४६)

२ जून के 'हरिजन' (अंग्रेजी संस्करण) में Who is Rama ? इस शीर्षक से पूज्य महात्मा जी ने किसी के उपर्युक्त प्रश्न का कि आप प्राय कहा करते हैं कि जब आप राम का नाम लेते हैं तो आपका तात्पर्य दशरथ पुत्र सीता पति श्री राम से नहीं होता किन्तु 'रामधुन' में राजा राम, 'सीतापति' इत्यादि विशेषण आते हैं यदि इनसे तात्पर्य दशरथ पुत्र राम का नहीं तो किसका है? इसका उत्तर देते हुए महात्मा जी लिखा है कि हिन्दू धर्म में ईश्वर के बहुत से नाम हैं। निःसन्देह हजारों लोग राम और कृष्ण को ऐतिहासिक व्यक्ति मानते हैं और यह विश्वास करते हैं कि दशरथ पुत्र राम के रूप में भगवान् ने अवतार लिया और उसकी पूजा करने से मनुष्य मुक्ति प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार श्री कृष्ण के विषय में भी है। मैंने ईश्वर के इन सब नामों और रूपों को एक निराकार सर्व व्यापक रामके चिन्ह के रूप में स्वीकार किया है

(I have accepted all the names and forms attributed to God, as symbols connoting one formless Omnipresent Rama)

इस लिये मेरे लिये सीतापति, दशरथपुत्र के रूप में वर्णित राम वह सर्वशक्तिमय तत्व है जिसका

हृदय में अङ्कित नाम सब मानसिक, नैतिक और शारीरिक कष्टों को दूर कर देता है। इत्यादि

यदि पूज्य महात्मा जी एक निर्विकार निराकार सर्व व्यापक परमात्मा को मानते हैं और उसी को "रमन्ते योगिनोऽस्मिन्" अथवा रमते सर्वेषु भूतेषु' इत्यादि व्युत्पत्ति के अनुसार राम नाम से पुकारते हैं तो इसमें इसके सिवाय कोई आक्षेप की विशेष बात नहीं कि राम शब्द वेदों तथा प्राचीन शास्त्रों में ईश्वर वाचक नहीं पाया जाता और न इसके जप का कहीं विधान है। 'ओ३म् क्रतो स्मर'इत्यादि में ओ३म् इस परमेश्वर के सर्वोत्तम नाम का ही जप बताया गया है जिस में वस्तुतः परमेश्वर के सब गुण आ जाते हैं। ऐसे सर्वोत्तम तथा महात्माजी की अत्यन्त प्रिय ईशोपनिषत् तथा भगवद्गीतादि मे प्रतिपादित भगवान् के ओ३म् नाम को छोड़कर राम नाम के जप तथा धुन का विधान करना सर्व साधारण के लिये भ्रम जनक हो सकता है विशेषतः जब कि उस धुन मे रघुपति, राघव सीताराम इत्यादि विशेषण स्पष्टतया दशरथपुत्र श्री राम को सूचित कर रहे हैं और महात्माजी के यत्न करने पर भी वे सर्व व्यापक निराकार ईश्वर के वाचक नहीं बन सकते। इसलिये अवतारवाद को न मानने वाले और एक निराकार निर्विकार सर्वव्यापक ईश्वर की ही मानसिक पूजा करने वाले आर्य तथा श्रीराम में विश्वास न रखने वाले ईसाई मुसलमान आदि उनकी रामधुन में यदि हृदय पूर्वक सम्मिलित न हो सके तो स्वाभाविक ही है। उनकी प्रार्थना सभाओं में अन्य भी अनेक पौराणिक भाव समर्थक भजन गाये जाते हैं जिनमें विशुद्ध एकेश्वर पूजक सम्मिलित नहीं हो सकते। हमारी पूज्य महात्मा जी से प्रार्थना है कि वे अपनी सार्वजनिक प्रार्थना सभाओं के लिए ऐसे वक्यों तथा भजनों का संग्रह कराए जिनमे सब एकेश्वर वादी हृदयपूर्वक सम्मिलित होकर लाभ उठा सकें। "विश्वानि देवसवितर्दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव॥ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्" इत्यादि वेद मन्त्रों की प्रार्थनाए ऐसी ही सार्वभौम प्रार्थनाए हैं जिन मे सब आस्तिक सम्मिलित हो सकते है। इन मन्त्रों के साथ इनके अर्थसूचक भजनों को गाया जाए तो बड़ा लाभ हो सकता है। स्तुति और धुन के रूप में 'अशरण शरण शान्ति का धाम, एक प्यारा तेरा नाम' जैसे पदों को गाया जा सकता है जिसके भाव को सब आस्तिक स्वीकार करते हैं। आशा है पूज्य महात्मा जी इस निवेदन पर अवश्य ध्यान देने की कृपा करेंगे।

ध० दे०

हमारी विवशता

पाठकों से निवेदन

हमें पाठकों को यह सूचित करते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि इस मास चन्द्र प्रिन्टिंग प्रेस देहली में (जहां सार्वदेशिक पत्र छपता है) कुछ चोरी हो जाने तथा कई बार मशीनोंके बिगड़ जाने के कारण सार्वदेशिक के प्रकाशित होने में पर्याप्त विलम्ब होगया है जिस के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं आशा है हमारी इस विवशता को ध्यान में रखते हुए ग्राहक महोदय अपनी कृपा दृष्टि पूर्ववत् बनाये रक्खेंगे और प्रत्येक सज्जन ४ और मित्रों को इस के ग्राहक बना कर अनुगृहीत करेंगे जिस से इसे स्वालम्बी बनाया जा सके।

व्यवस्थापक "सार्वदेशिक"

सार्वदेशिक के ग्राहकों से

सार्वदेशिक के निम्नांकित ग्राहकों का वार्षिक शुल्क जून १९४६ में समाप्त हो जाता है अतः सम्बन्धित ग्राहकों से निवेदन है कि वे शीघ्र ही अपना वार्षिक शुल्क ५) भेज कर आगामी वर्ष के लिये सार्वदेशिक चालू रखें। वी० पी० द्वारा पत्र भेजने में ग्राहकों को असुविधा हो सकती है क्योंकि वी० पी० की कूपन बहुत समय में लौटती है और जब तक यह कूपन हमें लौट कर न मिल जाये आगामी मास का अंक उनको भेजना सम्भव न होगा। यदि वे चाहते हैं कि उन तक प्रतिमास लगातार अंक पहुँचता रहे तो निश्चित रूप से वे अपना चन्दा मनिआर्डर से भेज देवें। इस से धन और समय दोनों की बचत होगी।

यदि मनिआर्डर अथवा कोई पत्र १५ जुलाई तक अन्त तक हमें न मिला तो जुलाई ३ सप्ताह में आगामी अंक वी० पी० से ही भेज दिया जायेगा। और आशा है ग्राहक महोदय वी० पी० अवश्य स्वीकार करेंगे।

ग्राहक संख्या जिन का चन्दा मास जून में समाप्त होता है।

६०२, ६८६, ९४, १०५८, १२९१, १२९४, १२९०, १३९९, १४०२, १४११, १४१३, १४५६, १५८५, १५८७, १५९१, १५९५, १५९६, १५९९, २०९७, २१०२, २१०६, २१०७, २११२, २११४, २११५, २११८, २१२०, २१२१, २१३१, २४०२, २४०३, २४०४, २४०५, २४०६, २४०७, २४०८, २४०९, २४१०, २४१२, २४१३, २४१४, २४१५, २४१६, २४१७, २४१८, २४१९, २४२०, २४२१, २४२२, २४२३, २४२४, २४२५, २४२६, २४२७, २४२९, २४३२, २४३३

व्यवस्थापक सा० दे०

दान सूची सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

(२)

५० आर्य समाज बूडे वाला (मुल्तान)
३) ,, साहोवाल (स्यालकोट)
३०) ,, मिठाटिवाना (पञ्जाब)
५) ,, मन्दसौर (ग्वालियर)
४) ,, छोटी सादड़ी (मेवाड़)
११॥।-) ,, हिरियडूक (मद्रास)
५) ,, गोरखपुर (सयुक्तप्रान्त)
२॥) ,, पुरवा (उन्नाव)
५) श्री ममाराम लूणकर जी आर्य सोमेसर (मारवाड़)

८६।-)
०६२।=) गत योग

३८१॥=)

दान दाताओं को धन्यवाद

नोट—जिन समाजों ने अभी तक अपना भाग नहीं भेजा है, वे यथा सम्भव शीघ्र भेज देवें और सभा के नियंत्रण और अनुशासन का पूर्ण रीत्या सम्मान करें। सभा के निश्चयानुसार इस दिवस के उपलक्ष्य में प्रत्येक समाज से उसका भाग प्राप्त करना है, अत बिना स्मरण या प्रेरणा के ही यह भाग आजाना चाहिए।

विविध दान

मई सन् १९४६

१३२१॥- ८ आर्य प्रतिनिधि सभा दक्षिण अफ्रीका नेटाल (मद्रास में शुद्धि कार्यार्थ)
१५) श्री जी लाल जी सिकन्दराबाद दकन (वेद प्रचारार्थ)
२) ,, प० बलराम जी सिद्धान्त भूषण पुलसरा, गजाम द्वारा सगृहीत)
८) ,, प रुद्र देव जी शास्त्री उड़ीसा द्वारा सगृहीत (उड़ीसा प्रचारार्थ)
१०) ,, ला० शिवराम जी देवनगर देहली (पुत्र के विवाहोपलक्ष्य में)
१०) आर्य समाज थाना भवन मुज-फ्फर नगर (सत्यार्थ प्रकाशार्थ)
२५) ,राज शत्रुञ्जयसिंह जी ताल्लुकेदार (आर्य) किनवा राज लखमीपुर खेरी (वेद प्रचारार्थ)
५०) ,, आर्य समाज गोरखपुर (जबलपुर) आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य देश द्वारा (सत्यार्थ प्रकाशार्थ)
१५६) ,, आर्य प्रतिनिधि मध्यप्रदेश ,,
१०) ,, ला० प्यारेलाल रामेलाल जी फिरोर (मैनपुरी) सत्यार्थ प्रकाशार्थ
५) ,, चौ० सग्राम सिंह जी चहोल निवासी तहसील कैथल (करनाल) (वेद प्रचारार्थ)
५) ,, राम स्वरूप जी बढ़ापुर (बिजनौर) सत्यार्थप्रकाशार्थ

१६२०॥।-) ८

दान दाताओं को धन्यवाद।

मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा

मा[illegible] [illegible]

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	,,	॥
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर		२)
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	)
(७) बलिदान	,,	।,
(८) आर्य डायरेक्टरी	,, अ	
(९) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर ,		
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण प० द्वारा)		=
(११) आर्यवीर दल लेखमाला (श्री ओंप्रकाश जी)		१)
(१२) धर्मपितृ परिचय (प० प्रियरत्न जी आर्ष)		२
(१३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	)
(१४) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	=
(१५) वेद में असित शब्द	,	-)
(१६) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	-)
(१७) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	१)
(१८) विमान शास्त्र	,,	।=॥
(१९) मानत्व का आधार श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक		अ० १),
(२०) नया संसार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≡)
(२१) कथा माला	,,	॥)
(२२) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म	,	॥=)
(२३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		≈।)
*(२४) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२५) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२६) विद्यार्थी जीवन रहस्य		।)
(२७) उपनिषद् ईश =) केन ॥) कठ ॥), प्रश्न ।=) मुण्डक ≡) माण्डूक्य ≡), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२८) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		-)
(२९) वैदिक सन्ध्या रहस्य (श्री नारायण स्वामीजी)		=)॥
नारायण सुधा सजिल्द		१॥)
(३०) शहीदी पत्रिका		=)
(३१) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(३२) इञ्जील के परस्पर विरोधी कल्पना लाला ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३३) बाइबिल के गीत (प० सिद्धगोपाल जी काव्यरत्न)		)
(३४) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी)		॥)
(३५) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३६) कुमुद दयानन्द (श्री प० धर्मव्रतजी)		≈)
(३७) वेद और रोग श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी		≈
(३८) दयानन्द कविता) प० जदत्त त्यागी		।-)
(३९) ध्यान योग प्रकाश स्वामी लक्ष्मणानन्द जी		१॥-)
(४०) सत्यार्थ प्रकाश गान (प० सत्यभूषण जी)		।)-)
(४१) हमारे पर्व (श्री जनलाल जी गौतम)		॥-)
(४२) भारतवर्ष में जाति भेद	,	।)
(४३) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≡)
(४४) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४५) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-
(४६) वैदिक सन्ध्या तथा हवन के स० में धर्मार्य सभा की घोषणाएं		-)
(४७) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग का कार्यक्रम		)



१९४६ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य
		विदेश १० शि०
२००२ सं०		

विषय सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २२ { जौलाई १९४६ ई०] श्रावण २००३ दयानन्दाब्द १२२ { अङ्क ५

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् मा प्रगाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः । मान्तः स्थुर्नो अरातयः ।

॥ ऋ० १० । ५७ । १ ॥

(इन्द्र) हे परमेश्वर (वयम्) हम (पथः) उत्तम मार्ग से (मा प्र गाम) दूर न जाएं-न हटें (सोमिन) ऐश्वर्ययुक्त होते हुए (यज्ञात् मा प्रगाम) हम यज्ञ को छोड़कर न चलें (अरातयः) अदानता तथा काम क्रोध लोभ मोहादि शत्रु (न अन्त) हमारे अन्दर (मा स्थु) न ठहरे ।

विनय—हे सर्वैश्वर्य सम्पन्न प्रभो ! आप शक्ति के भण्डार हैं । आप हमें ऐसी शक्ति दें जिससे हम सत्य धर्म तथा न्याय के पवित्र मार्ग से कभी विचलित न हों । बड़ी से बड़ी विपत्तियों और प्रलोभनों के आने पर भी हम सन्मार्ग का कभी परित्याग न करें । ऐश्वर्य को प्राप्त करते हुए हम यज्ञ अर्थात् त्याग, और परोपकार की भावना को कभी न छोडे । हमारे अन्दर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान और ईर्ष्यादि शत्रु कभी न ठहर सकें ।

वेदोपदेश

जलता दीपक

(ले० —श्री पूर्णचन्द्र जी बी ए. एल. एल बी ऐडवोकेट आगरा)

ओ३म् त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन् सता। सखा सख्या समिध्यसे ॥ ऋ ८।४३।१४

अर्थ—(अग्ने) हे अग्ने (त्वम्) तू (हि) निस्सन्देह (अग्निना) अग्नि द्वारा (समिध्यसे) प्रदीप्त किया जाता है (विप्र) तू विप्र-परम ज्ञानी (विप्रेण) मुझ ज्ञानी द्वारा (सन्) तू श्रेष्ठ (सता) मुझ साधु श्रेष्ठ द्वारा प्रदीप्त किया जाता है—प्रकाशित किया जाता है।

व्याख्या—संसार मे जलता दीपक एक आकर्षक उपयोगी वस्तु है। इससे अन्धकार दूर हुआ है। किसी दीपक को जलता बनने के लिए किसी बाह्य निमित्त की आवश्यकता है चाहे वह दियासलाई हो चाहे दूसरा दीपक। उस निमित्त के अतिरिक्त उसको अपने सामर्थ्य की आवश्यकता है। दीपक में तेल होना आवश्यक है व बत्ती भी। दीपक का आकार हो, उसके लिए तेल व बत्ती दोनों हों फिर वह निमित्त के सहारे प्रकाशित हो सकेगा। जिस प्रकार एक दीपक निमित्त की सहायता से प्रकाशित होता वैसे ही वह दूसरे दीपकों के लिए निमित्त बन जाता है। एक दीपक से सैंकड़ों व हजारों दीपक जल सकते हैं परन्तु वे ही जल सकेंगे जिनमें प्रकाशित होने की सामर्थ्य होगी। दीपक की प्रशंसा इस में है कि उसने कितने स्थानों का अन्धकार दूर किया कितने और दीपक प्रकाशित किये एकान्त में निष्प्रयोजन जलने वाले दीपक का बहुत कम मान होता है। इस लिए यह कहना बिल्कुल ठीक है कि दीपक स्वयं प्रकाशमान होता हुआ भी उसका प्रकाश दूसरों पर तब प्रकट होता है जब उससे प्रकाशित हुए दीपक दृष्टिगोचर होते हैं। ऊपर लिखे वेद मन्त्र में सबसे अन्तिम शब्द बड़े महत्व का है। अग्निहोत्र के हवन में समिधा शब्द का प्रयोग है। हवन के लिए समिधा अनिवार्य है समिधा शब्द से यह अभिप्राय है कि जो स्वयं प्रकाशित हो सके और दूसरों को प्रकाशित कर सके। इस वेद मन्त्र मे एक सुन्दर प्रश्न है फिर उसका उत्तर है। संसार में मूल्य व प्रशंसा है अग्नि की, तेजकी, विप्र की, ज्ञानी की, सज्जन की, श्रेष्ठ की और सखा व मित्र की। वेद में प्रश्न है कि ये प्रकाशित कैसे हो सकते हैं अर्थात् तेज, ज्ञान, सज्जनता और मित्रता का यश कब प्राप्त होता है जब अपना तेज दूसरे को तेजस्वी बना दे। अपनी श्रेष्ठता दूसरे को श्रेष्ठ बना दे। ज्ञान औरों को ज्ञानी बना दे। हमारी मैत्री दूसरों को मित्र बना दे। मित्र का मित्र देख कर मित्र की प्रशंसा है। शिष्य से गुरु की, अनुयायियों से नेता की। आज गुरु विरजानन्द को कौन जानता यदि ऋषि दयानन्द से शिष्य उनको न मिलते। आज महर्षि दयानन्द की उतनी ख्याति न होती यदि वे आर्य समाज की स्थापना और वैदिक धर्म का प्रचार न करते। पण्डित लेखराम व स्वामी श्रद्धानन्द से शिष्य उन के न होते। हमें अपने ज्ञान के लिए निमित्त की

खोज में रहना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करके ज्ञान को अपने तक सीमित नहीं रखना चाहिए। उस को दूसरों तक पहुंचा देना चाहिए। यदि यह परिपाटी स्थिर रहेगी तो ससार में सुख व शांति का साम्राज्य होगा। यदि ज्ञान प्राप्त करने की ओर ध्यान न रहा तो भी हानि है। यदि प्राप्त किये हुए ज्ञान का विस्तार नियम पूर्वक न हुआ तो भी हानि है। इस परम्परा में एक उपयोगिता है। निमित्त का ध्यान करते ही परमात्मा का ध्यान आता है क्योंकि आदि निमित्त वह ही है। परमात्मा का ध्यान आते ही परमात्मा के परोपकार की ओर ध्यान जाता है जिस से परोपकार व देश सेवा की भावना पैदा होती है। दूसरों को लाभ पहुँचाने की भावना उत्पन्न होनी है।

यदि हमारी यह धारणा रहे कि हमारा ज्ञानी होना, तेजस्वी होना, सज्जन होना, मित्र होना उस समय तक ही सफल है जब हम दूसरों तक अपने गुणों का प्रभाव पहुंचा सकें तभी पूर्ण लाभ हो सकता है। महर्षि दयानन्द ने ऐसे ही भावों से प्रेरित हो कर शक्तियों का संचय करके संसार के उपकार की ओर ध्यान दिया केवल अपनी ही उन्नति व मोक्ष की चिन्ता नहीं की।

अध्यात्म सुधा

आनन्द गङ्गा

(१)

आनन्द की गङ्गा मेरे
दिल में समा रही।
सन्ताप पाप की सभी
ज्वाला बुझा रही ॥

(२)

आनन्द की मेरे कहीं
सीमा नहीं रही
परमेश की ही प्रीति अब
मुझ को नचा रही ॥

(३)

क्या काम शोक मोह का
चिन्ता भयादि का ?
जब ज्योति देव की हृदय में
जगमगा रही ॥

(४)

अब सोमपान कर लिया
पा देव की दया।
मस्ती उसी की मस्त अब
मुझ को बना रही ॥

(५)

मैं पाप ताप मुक्त हो
सब को सुखी करूँ।
यह कामना दिन रात अब
मुझ को सता रही ॥

(६)

बस चाहता अब सोम से
कल्लोल मै करूँ।
उस के दरश की आशा ही
मुझ को घुमा रही ॥

"ध्रुव"

संस्कृत भाषा-और आर्य जाति

संसार में जो जाति जीवित रहना चाहती है उसका यह प्रधान कर्त्तव्य हो जाता है, कि वह अपने को इस प्रकार की सुन्दर शिक्षा दीक्षा से विभूषित करे, जिससे कि दूसरी जातियाँ उस पर अपना प्रभाव न डाल सकें अपि तु उसमें मिल जायें और उसकी शिक्षा को अपनाने में अपना गौरव समझें। भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास इस बात की साक्षी दे रहा है कि आर्य जाति के सम्पर्क में जो जाति आई वह सभ्य बन गई, शुद्ध हो गई। यहां के ऋषि मुनियों और राजाओं ने अन्य देशों में जा २ कर लोगों को आध्यात्मिक विद्या का अमृत पान कराया और राज्य व्यवस्था करनी सिखाई। फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान् जैकोलियट महोदय अपनी "बाइबिल इन इण्डिया" नाम को पुस्तक में लिखते हैं कि सब विद्या और भलाइयों का भंडार आर्य्यावर्त्त देश है, इसी से सारे देशों में विद्या फैली है। जिस जाति के साधु-महात्मा सिकन्दर जैसे सम्राटों को यह कह कर धिक्कार दिया करते थे कि 'यह फ़कीरी है मेरे आराम पाने के लिये। बादशाही है तुझे नीचा दिखाने के लिये" शोक। महाशोक। वही आर्य जाति जिसको मुसलमान सात सौ वर्ष तलवार चलाने पर भी नष्ट न कर सके और उसके स्थान में अरब स्थान की रेतीली और खूनी सभ्यता न फैला सके आज लुप्त प्राय होती जा रही है। जो जाति गो माता, गायत्री, शिखा और सूत्र की रक्षा के लिये अपना सब कुछ भी न्यौछावर करने को तैयार रहती थी, आज ईसाइयत ने उस पर अनायास ही विजय प्राप्त कर ली। अनेकों अंग्रेजियत के शौक़ीन हिन्दु सहज ही में गो मास खाने लगे। गायत्री पुराने ढर्रे के गवारों का गीत समझी जाने लगी और शिखा सूत्र तो सात समुन्दर पार का काला कलङ्क समझ कर अनायास ही उतार दिये गये। सभ्यता बदल गई, कपडे बदल गये, खाना बदल गया, मातृ भाषा बदल गई सब कुछ बदल गया कुछ भी शेष न रहा, हमें कहने दीजिये कि अंग्रेजियत के रंगीले रंगरूट हिन्दुओं का बस नहीं चला, नहीं तो शायद वे किसी कलर कम्पनी से सफेद पाउडर मंगाकर अपनी चमड़ी भी बदल डालते और गौरांग महाप्रभुओं के चरणों की धूलि पाने के पूर्ण अधिकारी बन जाते। यह सब कुछ इतनी जल्दी कैसे हो गया, अंग्रेजों ने कौनसा ऐसा जादू डाला जिससे हम अपनी शारीरिक, मानसिक, और सामाजिक शक्ति को सर्वथा खोकर पराधीन हो गये और दिन प्रतिदिन अकाल मृत्यु का ग्रास बनने लगे। महाराज मनु ने इस विषय मे बहुत ही उपयुक्त श्लोक लिखा है—

अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्जनात्।
आलस्यादन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्राञ्जिघांसति॥

अर्थात् जो लोग वेदों का पठन पाठन छोड़कर अपने आचार विचार को दूषित कर लेते हैं और आलस्य में पडे रहकर निकृष्ट अन्न का सेवन करते हैं वे जल्दी ही मौत के मुंह चले जाते हैं और दूसरे लोग उन पर अपना प्रभुत्व जमा लेते हैं। आर्य जाति के रसातल पहुँचने में भी यही कारण हुआ आलस्य और आपस में फूट

होने के कारण इसने अपनी सारी शक्ति नष्ट कर दी और दूसरों को उच्च बना लिया। अंग्रेज जाति ने ऐसे अवसर से लाभ उठाया और भारत को पराधीनता के पाश में जकड़ने के लिये इंगलैण्ड का शासन चिरस्थायी करने के लिये रही सही भारतीय सभ्यता को नष्ट करना अपना परम कर्त्तव्य समझा। निदान लार्ड मैकाले ने एक योजना बनाई और सन् १८३ ई० में इंगलैण्ड की पार्लियामैन्ट में यह प्रस्ताव रखा कि जब तक भारतवासी अंग्रेजी रंग में न ढाले जाते तब तक ब्रिटिश राज्य की नींव भारत में बालू के टीले पर रहेगी। इसलिये हमें ऐसे लोगों को उत्पन्न करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिये जो हमारे और भारत की आम जनता के बीच में दुभाषिये का काम कर सकें। हम ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जिनकी नसों में भारतीय रुधिर बहता हो परन्तु जो मनोभावों में, रीति नीति में बिल्कुल अंग्रेज हों। इस प्रकार अंग्रेजों ने अपना लक्ष्य बना कर नौकरियों का लोभ दे देकर हमें अंग्रेज बनने के लिये उत्साहित किया और सारे कला कौशल हमारे हाथ से छीनकर हमें दासता के बन्धन में जकड़ दिया। इसी कारण अब हमारी मनोवृत्ति ऐसी बन गई कि हम थोड़ी बहुत अंग्रेजी पढ़कर नौकरी करना अपने जीवन का उद्देश्य समझने लगे और वेद शास्त्र धर्म कर्म सबको तिलाञ्जलि दे दी। धीरे २ अंगरेजी भाषा ने हम पर ऐसा रंग जमाया कि हम इसे सभ्यता का मूल समझ बैठे और सब भाषाओं की जननी देवताओं की वाणी संस्कृत भाषा को मुर्दा भाषा कहकर पुकारने में अपना गौरव समझने लगे इसी लिये हमारे हिन्दी भाषा में लिखे हुए पत्र भी पहिले मुर्दा घर की सैर करने जाते हैं और फिर हमारे पास पहुँचते हैं। इस समय जब कि भारत को स्वतन्त्र करने के लिये भयङ्कर आन्दोलन हो रहा है और देश का बच्चा २ भारत की आजादी का स्वप्न लेते हुए मर मिटने को तैय्यार है तब भी अंगरेजी भाषा के स्कूल और कौलेजों की जो निरन्तर संख्या बढ़ रही है (यद्यपि इस समय ७ यूनिवर्सिटियों ने अपना शिक्षा माध्यम हिन्दी भाषा में कर दिया है किन्तु वह अभी नगण्य के बराबर है) वह इस बात का प्रबल प्रमाण है कि हम आङ्गल भाषा को उन्नति में बाधादायक न मानकर सर्वाङ्ग परिपूर्ण समझते हैं और इसी के द्वारा आर्थिक नैतिक और सामाजिक उन्नति करना अपना महान् लक्ष्य मान बैठे हैं। किन्तु क्या इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम भारत छोड़ो का नारा लगाकर अंग्रेजों को भारत से निकाल कर अंग्रेजियत को यहां चिरस्थायी बनाना चाहते हैं क्या कोई बुद्धिमान व्यक्ति इस बात को मान सकता है कि हम आग में हाथ डालकर जलने से बच सकते हैं अंग्रेजियत को भारत में रख कर अंग्रेजों की गुलामी से पीछा छुड़ा सकते हैं, नहीं २ कभी नहीं। इस विषय में महात्मा गांधी जी ने ठीक ही कहा है कि दासता की जञ्जीरों में से अंग्रेजी भाषा भी एक जञ्जीर है इसको भी काट न डालें हम स्वतन्त्र नहीं हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में क्या हमारा कर्त्तव्य नहीं हो जाता कि हम पाश्चात्य सभ्यता और शिक्षा का त्याग कर स्वतन्त्र होने के लिए और पूर्ण स्वतन्त्र होने के लिए प्राच्य शिक्षा, संस्कृत

भाषा को अपनाएँ । ओहो ऐसे समय मे हमें मुनिवर प० गुरुदत्त एम० ए की याद आ जाती है जिन्होंने बडे दुख भरे शब्दों मे अपने व्याख्यान में कहा था कि क्या ही अच्छा होता कि मै सारी अँग्रेजी और पश्चिमी विद्या भुला सकता और केवल सस्कृत जानता होता। यूरोप के सारे दार्शनिकों और वैज्ञानिकों की पुस्तकें छान डालने के बाद निराश होकर अन्त मे प० गुरुदत्त को ये शब्द कहने पडे थे, कि आधुनिक विज्ञान में चाहे कितने ही गुण क्यों न हों वह मानव जीवन की समस्या को हल नहीं कर सकता। वेद ही ससार मे ऐसे अद्भुत ग्रन्थ है जो मनुष्य के जीवन का सर्वाङ्ग पूर्ण उद्देश्य बतला सकते है, ऐसी दृढ धारणा के कारण ही उन्होंने अष्टाध्यायी को वेदों का द्वार समझते हुए कालिज की प्रोफेसरी छोड कर अष्टाध्यायी पढनी प्रारम्भ करदी और इस प्रकार अंग्रेजी का उद्भट विद्वान् सस्कृत का विद्यार्थी बन गया, किन्तु क्या अब भी भारत के नवयुवक प० गुरुदत्त के पदचिन्हों पर चलते हुए पाश्चात्य शिक्षा को छोड कर पूर्वीय शिक्षा को नहीं अपनायेंगे ?। डार्विन की थ्यूरी, कॉट, मिल और बेन के सिद्धान्तों को महर्षि कपिल, कणाद और गौतम की युक्तियों पर कस कर सत्यासत्य के निर्णय करने को तैयार न होंगे ? अब आवश्यकता है ऐसे कर्मवीरों और त्यागियों की जो मानापमान, हानि लाभ की पर्वाह न करें और प्राचीन ऋषि-मुनियों के संस्मरणों को हृदयों पर अङ्कित करते हुए भारत माता का भविष्य उज्ज्वल कर दें। आज जहाँ हमारे सामने अँग्रेजी भाषा का विस्तृत साहित्य विद्यमान है वहाँ संस्कृतभाषा का शुद्ध ज्ञान विज्ञानमय कोष भी हमारे हृदयों को आकर्षित करने के लिए मस्तिष्क को पवित्र बनाने के लिये उपस्थित है आज फिर कई हजार वर्षों के बाद वर्णाश्रम व्यवस्था का उच्चादर्श और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली द्वारा जाति निर्माण का महान उद्देश्य हमारे सामने है। यह सब कृपा इस युग के महान् सुधारक महर्षि दयानन्द की है जिसने जहर पी २ कर हमे अमृत पिलाने का भरसक प्रयत्न किया और अन्धेरे मार्ग से निकाल कर प्रकाशमय मार्ग पर लाकर खडा कर दिया। यदि हम अब भी न चेते ऋषि के अमर सन्देश पर ध्यान न दिया तो आर्य जाति का अस्तित्व ससार से सदा के लिये मिट जाएगा और दूसरी जातियों को शुद्ध करके अपने मे मिलाया था वह जाति दूसरी जातियों मे मिल कर अपवित्र और महा अपवित्र बन जायगी। इसलिए अब आर्यसमाज का प्रधान कर्त्तव्य है कि वह तपस्या की प्रचण्डाग्नि में शुद्ध होकर देश के अन्य नेताओं के सामने प्राच्य शिक्षा का आदर्श रखे जिससे भारत ही नहीं सारा विश्व प्रेम और शान्ति प्राप्त कर सके और परमाणु बम से सन्तप्त वायुमडल तथा जन-समुदाय पुन प्रफुल्लित होकर ऋषि के गुणगान करने लगे ॥ इति शम् ॥

[हम लेखक महोदय के विचारों से इस अश तक सहमत हैं कि सस्कृत भाषा और प्राचीन सभ्यता तथा शिक्षा प्रणाली को हमे प्रधानता देनी चाहिये और विद्यार्थियों में इनके प्रति विशेष प्रेम उत्पन्न करना चाहिये। सस्कृत भाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी वा अन्य भाषाओं को पढ़ने और तुलनात्मक दृष्टि से उनके साहित्य

का अनुशीलन कर लाभ उठाने में कोई हानि नहीं किन्तु अपनी प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति के प्रसार में कुछ सहायता मिल सकती है क्योंकि हम चाहें वा न चाहें, दुर्भाग्य वश अंग्रेजी ने कुछ अंश तक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का रूप ले लिया है तथापि इसको जितना प्रधानता दी जाती है और उस के साथ संस्कृत, आर्य भाषादि की जो उपेक्षा की जाती है वह सर्वथा अनुचित है। प्रत्येक आर्य का महर्षि दयानन्द के आदेशानुसार यह कर्तव्य है कि वह स्वयं भी संस्कृत का अभ्यास करे और यदि अत्यन्त वृद्धावस्था के कारण वह स्वयम् ऐसा नहीं कर सकता तो अपनी सन्तान के लिये तो संस्कृत की शिक्षा का विशेष प्रबन्ध अवश्य करे जिसके विना वेदादि सत्य शास्त्रों और प्राचीन संस्कृत तथा इतिहास का यथार्थ ज्ञान असम्भव है। सम्पादक सा० दे०]

दो राष्ट्रों का सिद्धान्त

(ले० श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट, साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त शास्त्री अजमेर)

भारत के और विशेषकर उत्तरी भारत के निवासी, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, शुद्ध आर्य जाति के हैं। ए जाति के लोग किसी मत के भी मानने वाले क्यों न हों उनकी राष्ट्रीयता नहीं बदल सकती। राष्ट्रीयता धर्म या मजहब के आधार पर नहीं बनती। राष्ट्रीयता तो चीज ही अलग है जैसा कि श्री राम नारायण जी ने "भारतीय सस्कृति और नागरिक जीवन" नामक पुस्तक के पृष्ठ ६८ पर लिखा है— 'राष्ट्र एक ऐसा जन समुदाय है जो विशिष्ट सम्बन्धों से बधा हुआ है। और यह सम्बन्ध ऐसे शक्तिशाली होते हैं कि जिनसे प्रत्येक व्यक्ति उस राष्ट्र के अन्य व्यक्तियों के साथ एकता का अनुभव करता है और वह जिस देश मे रहता है उसे अपनी मातृभूमि मानता है वे सम्बन्ध जिनके कारण एक जन समूह राष्ट्र कहलाता है, कई प्रकार क हैं— भौगोलिक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, और जातीय। इनमें सबसे प्रमुख भौगोलिक सम्बन्ध है। एक देश में रहने के कारण व्यक्तियों में देश भक्ति की भावना पैदा हो जाती है और वे उसे अपनी मातृभूमि समझते हैं। एक ही सस्कृति एव ऐतिहासिक परम्परा भी व्यक्ति समूह के पारस्परिक बन्धनों को मजबूत बनाती है। धर्म की एकता, आर्थिक हितों की समानता तथा जातीय एकता (रक्त सम्बन्ध) भी राष्ट्र का एक बन्धन है परन्तु उन पर अधिक जोर देने की आवश्यकता नही है प्रोफेसर रैमजे म्यूर के साथ किया हुआ बलिदान ऐसा श्रेष्ठ और पौष्टिक भोजन है जिससे राष्ट्र की आत्मा को शक्ति और उत्साह मिलता है। इसी से अमर और पवित्र परम्परा और इतिहास का निर्माण होता है फलत राष्ट्र निर्माण का मार्ग भी साफ हो जाता है।" राष्ट्र की उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि भारत में भौगोलिक दृष्टि तथा ऐतिहासिक परम्परा की दृष्टि से केवल एक ही राष्ट्र हो सकता है, दो राष्ट्र नहीं। फिर भी मुस्लिम लीग और मि० जिन्ना का दो राष्ट्र का सिद्धान्त विचारणीय है।

पाकिस्तान योजना का और भारत के विभाजन का मुख्य आधार यही दो राष्ट्रों का सिद्धान्त है जिसके अनुसार मि० जिन्ना का यह दावा है कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग २ राष्ट्र हैं इसलिये भारत का विभाजन आवश्यक है जैसा कि हम पहले लिख आये हैं। अक्टुबर सन १६३८ तक मि० जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग मुसलमानों को भारत की एक अल्प सख्यक जाति (Minority) और एक सम्प्रदाय (Community) कहते थे, लेकिन सबसे पहले अक्टुबर सन १६३८ के सिन्ध प्रान्तीय मुस्लिम लीग के प्रधान पद से मि० जिन्ना ने हिन्दू और मुसलमानों के दो राष्ट्रों की चर्चा की और भारत के शासन विधान में हिन्दू-सघ और मुस्लिम सघ की कल्पना की। सितम्बर १६३६ में मुस्लिम लीग की वर्किंग कमेटी ने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त

मुस्लिम लीग ने भारत के विभाजन का प्रस्ताव ही पास कर दिया लेकिन उस प्रस्ताव में दो राष्ट्रों के सिद्धान्त की चर्चा नहीं की गई, जैसा कि महात्मा गाधी और मि० जिन्ना के मध्य मे सन् १९४४ मे जो वार्तालाप हुआ उसके मध्य में तारीख १५ सितम्बर को महात्मा गाधी ने मि० जिन्ना को लिखा था कि "आपको यह स्वीकार करना चाहिये कि लाहौर वाले प्रस्ताव में कहीं दो राष्ट्रों के सिद्धान्त का वर्णन नहीं है लेकिन आप उस पर बहुत जोर दे रहे हैं।' अपने १५ सितम्बर १९४४ के पत्र में महात्मा गाधी जी ने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त और पाकिस्तान योजना के सम्बन्ध मे जो १५ प्रश्न किये थे वे इतने युक्ति पूर्वक और हमारे विषय के लिए इतने उपयुक्त हैं कि उनको यहा पर उद्धृत करना अत्यन्त आवश्यक है। महात्मा गाधी ने लिखा था—

जैसे ही हमारी बातचीत आगे बढ़ती है, मुझे आपका (पाकिस्तान का) चित्र अधिक भयकर प्रतीत होता है इतिहास में मुझे ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जब कि किसी जाति के थोड़े से धर्म परिवर्तन करने वाले और उन की सन्तानों ने एक अलग राष्ट्र होने का दावा किया हो। यदि इस्लाम के भारत मे आगमन से पहिले भारत एक राष्ट्र था तो भारत माता के बहुत से पुत्रों के मत परिवर्तन करने के बाद भी भारत एक ही राष्ट्र रहेगा। आप विजेता होने के नाते पृथक् राष्ट्र का दावा नहीं करते किन्तु इस्लाम के स्वीकार करने के नाते यह दावा करते है तो क्या यदि सारा भारत इस्लाम को स्वीकार करले, दोनों राष्ट्र आन्ध्र, तामिल, महाराष्ट्री आदि यदि वे मुसलमान हो जाँय तो अपनी सारी विशेषताओं को छोड़ देंगे? आप शायद राष्ट्र की एक नई परिभाषा उपस्थित कर रहे हैं। यदि मैं उसको मान लेता हूँ तो मेरे सामने कई और दावे किये जावेंगे और मुझे एक कभी न हल होने वाली समस्या का सामना करना पड़ेगा। हमारे एक राष्ट्र की असली परिभाषा तो इस कारण से ठीक है कि हम सब एक ही राजनैतिक दासता मे जकड़े हुये हैं इस भूमिका के साथ मै, आपके प्रस्ताव को स्वीकार करने में मुझे जो आपत्तिया हैं उनको आपके सामने रखता हूँ –

१ आपके (लाहौर वाले) प्रस्ताव मे पाकिस्तान नहीं है। क्या वह पजाब, सिन्ध आदि प्रान्तों को मिला कर बनने वाला प्रान्त ही है? यदि नहीं, तो वह क्या है?

२ क्या पाकिस्तान का उद्देश्य विश्व-मुस्लिम-सघ है।

३ मजहब के अतिरिक्त ऐसी कौनसी वस्तु है जो एक भारतीय मुसलमान को अन्य भारतीयों से पृथक् करती है? क्या वह एक तुर्क अथवा अरब निवासी से भिन्न है?

४ प्रस्ताव में आए हुए शब्द "मुसलमानों" की क्या परिभाषा है? क्या उसका अभिप्राय भौगोलिक भारत के मुसलमानों से है अथवा पाकिस्तान के मुसलमानों से?

५ क्या वह प्रस्ताव मुसलमानों का ज्ञान बढ़ाने के लिये अथवा भारतीयों से अपील करने के लिये अथवा विदेशी शासक को अल्टीमेटम

६ क्या पाकिस्तान के दोनों मंडलों के राज्य स्वतन्त्र होंगे ?

७ क्या ब्रिटिश राज्य की संरक्षता में विभाजन किया जायगा ?

८ यदि हाँ, तो पहले ब्रिटेन से स्वीकृति लेनी आवश्यक है। भारत पर पहले इसे क्यों लादा जाय ?

६ क्या आप सन्तुष्ट होगये हैं कि पाकिस्तान की स्वतन्त्र रियासतें आर्थिक दृष्टि से लाभ में लिये रहेंगी ?

१० कृपया मुझे सन्तुष्ट कीजिये कि ये पाकिस्तानी रियासतें दीन हीन होकर शेष भारत के भार रूप नहीं होंगी ?

११ कृपया मुझे आंकड़े देकर बताइये कि आपके प्रस्ताव को स्वीकार करने से भारत को स्वतन्त्रता और समृद्धि कैसे प्राप्त हो जायगी ?

१२ देशी राज्यों के मुसलमानों का इस योजना से क्या बनेगा ?

१३ अल्पसंख्यकों की परिभाषा आपके अनुसार क्या है ?

१४ अल्पसंख्यकों के लिये संरक्षणों की परिभाषा क्या है ?

१५ लाहौर प्रस्ताव केवल एक उद्देश्य बतलाता है लेकिन उसको कार्य रूप में परिणत करने का क्या उपाय है ?

जब मैं यह पत्र लिख रहा हूँ और आपके प्रस्ताव को कार्य रूप में लाये जाने की कल्पना कर रहा हूँ तो मुझे समस्त भारत के लिये विनाश के अतिरिक्त कुछ नहीं दिखलाई पड़ता ।"

महात्मा गांधी के उपरोक्त पत्र से स्पष्ट सिद्ध है कि पाकिस्तान की योजना भारत के लिये खतरनाक है और दो राष्ट्रों का सिद्धान्त भारतीय इतिहास परम्परा के कितने विरुद्ध है। महात्मा गांधी के उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर शायद इसीलिये मि० जिन्ना ने ठीक न देकर टालमटूल करने की चेष्टा की थी, क्योंकि वह जानते थे कि उनका दो राष्ट्रों का सिद्धान्त कितना निराधार और देश के लिये कितना हानिकर है जिसे हिन्दू तो हिन्दू कोई स्वतन्त्रता वादी मुसलमान भी स्वीकार नहीं करेगा।

लेकिन फिर भी मि० जिन्ना अपने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त को छोड़ने के लिये तैयार नहीं हैं जैसा कि उन्होंने सन् १६४० के मुस्लिम लीग के अधिवेशन में कहा था, वह तो इस्लाम और हिन्दू धर्म को केवल धर्म ही नहीं मानते किन्तु उनको पृथक् सामाजिक संगठन मानते हैं, वह यह भूल जाते हैं कि जैसा कि पूर्व अध्याय में सिद्ध किया जा चुका है, भारत के हिन्दू और मुसलमान दोनों एक ही आर्य वंश के हैं और सर सैय्यद अहमद खाँ के शब्दों में एक भारत देश में रहने के कारण वे दोनों एक ही राष्ट्र के अङ्ग हैं। वह कहते हैं, "Those who live in any country constitute a nation Hindus and Muslims are religious terms Hindus and Muslims and Christians who live in this country constitute one nation The time has past when inhabitants of a country professing different religions were considered separate nations' (Collected speeches of Sir Syed Ahmad Khan, Page 167)

इस देश में रहते हैं, मिलकर एक राष्ट्र बनाते हैं। हिन्दू और मुसलमान कोई अलग राष्ट्र नहीं, वे तो धर्म वाचक शब्द हैं। अब वह समय व्यतीत होगया जब कि किसी देश के विभिन्न-मतों के लोग पृथक् राष्ट्रों मे गिने जाते थे।

कितना सुन्दर और सामयिक उपदेश है। क्या ही अच्छा होता कि मि० जिन्ना और उनके अनुयायी उस पर ध्यान देते और भारत को एक राष्ट्र मानकर कांग्रेस के साथ मिलकर उसकी स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न करते, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। यह देश का दुर्भाग्य है। भारत में दो राष्ट्रों का सिद्धान्त खडा करके मुस्लिम लीग ने सदा के लिये हिन्दू मुसलमानों मे फूट का बीज बो दिया और भारत के लिये बहुत सी नई समस्याए खडी करदी हैं, जैसा कि गत १३ नवम्बर सन् १९४५ को प्रेस कान्फ्रेंस में एक वक्तव्य देते हुए श्री प० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "Pakistan would create new problems instead of solving the existing ones' अर्थात् वर्तमान समस्याओं को हल करने के स्थान मे पाकिस्तान नई समस्याएँ खड़ी कर देगा।

दो राष्ट्रों का सिद्धान्त अभी बहुत पुराना नहीं है, केवल ६, ७ वर्ष से मि० जिन्ना के दिमाग में इस सिद्धान्त की उत्पत्ति हुई है लेकिन आज तक कोई भी मुस्लिम लीगी इस सिद्धान्त का कोई दृढ आधार नहीं बना सका। केवल मजहब के आधार पर यह सिद्धान्त खडा नहीं रह सकता। इस युक्ति के अनुसार यदि कोई अंग्रेज इस्लाम को स्वीकार कर लेता है तो क्या उसकी जर्मनी में एक करोड़ आदमी मुसलमान बन जाँय तो क्या वे जर्मन नहीं रहेंगे? क्या वह दो राष्ट्र हो जाँयगे? इसी प्रकार यूरोप के अनेक देशों मे मुसलमान, ईसाई और यहूदी रहते हैं, बहुतों में कैथुलिक और प्रौटेस्टैट लोग रहते हैं तो क्या वहाँ एक २ देश में कई २ राष्ट्र हैं? यदि नहीं तो बेचारे भारत ने ही क्या बिगाडा है जो यहाँ मजहब के नाम पर दो राष्ट्र बनें? और यदि मजहबों के आधार पर ही राष्ट्र बनाये जाँय तो फिर केवल पाकिस्तान ही क्यों, उसमे भी शियास्तान, सुन्नीस्तान, अहमदियस्तान तथा भारत मे सिक्खस्तान जैनस्तान पारसीस्तान, शैवस्तान, वैष्णवस्तान कबीरस्तान, दादूस्तान और न मालूम कितने स्तान बनाने पडेगे जिनकी गणना नहीं हो सकती।

इसी प्रकार भाषा के आधार को लेकर मि० जिन्ना भारत में दो राष्ट्र बनाना चाहते हैं यह भी बिलकुल असभव है। क्या मि० जिन्ना यह भूल जाते हैं कि भारत के सारे मुसलमानों की भाषा उर्दू नहीं है? क्या वह नहीं जानते कि बहुत से सीमाप्रान्त के मुसलमान पश्तो बोलते हैं, पजाब के पजाबी, सिन्ध के मुसलमान सिन्धी भाषा मे लिखते पढ़ते हैं, गुजरात के गुजराती मे, दक्षिण के तिलगू, तामिल आदि में और बगाल के बगाली में। भारत हिन्दुओं की तरह मुसलमानों की भी पितृ भूमि है जैसा कि मुस्लिम लीग की विदेश सम्बन्ध समिति के प्रधान सर अबदुल्ला हारून ने ता०४ अप्रेल १९४० को कहा था, "९० फीसदी भारतीय मुसलमान इस भूमि की सन्तान हैं और उन्होंने या उनके

किया है। मि० जिन्ना एक भाटिया परिवार से हैं, सर सिकन्दर हयातखां एक राजपूत परिवार से और मैं एक लोहाना हिन्दू परिवार से। केवल १० फीसदी या इससे भी कम मुसलमान ऐसे हैं जो अरब, मुगल, या फारसी परिवारों की औलाद हैं। इसलिए भारत जितनी हिन्दुओं की पितृ-भूमि है उतनी ही मुसलमानों की भी है। अरबों, मुगलों और ईरानियों की सतान १० फी सदी मुसलमानों ने भी अब भारत को अपना देश बना लिया है।"

भारत में दो पृथक् राष्ट्र नहीं बनाये जा सकते। जहाँ तक भारत में जातीय भेद वर्तमान हैं, जाति की दृष्टि से एक प्रान्त के हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के अधिक सन्निकट हैं, दो प्रान्तों के मुसलमान आपस में उतने सन्निकट नहीं हैं। उदाहरण के लिये, पजाब के हिन्दू और मुसलमान शारीरिक बनावट में एक दूसरे के उतने अधिक समान हैं जितने कि बगाल या मद्रास के मुसलमान और सीमाप्रान्त के ही मुसलमान पंजाबी मुसलमानों के समान नहीं"

इसी प्रकार और छोटे भेद, रीति रिवाज, खान पान, विवाह आदि के आधार पर भी किसी देश में दो या अधिक राष्ट्र नहीं बना करते। खान पान और शादी विवाह तो बहुत से हिन्दुओं में परस्पर प्रचलित नहीं हैं और सब मुसलमानों के विवाह भी सब मुसलमानों में नहीं होते, तो उनमें भी अनेक राष्ट्र बनाने पडेगे? नहीं। डा० के० एम० अशरफ ने अपनी पुस्तक 'पाकिस्तान" के पृष्ठ ६१ पर कितना सुन्दर लिखा है। वह लिखते हैं —

"मि० जिन्ना का कहना है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों एक भारत राष्ट्र में नहीं रह सकते क्योंकि उनके न तो परस्पर शादी विवाह होते हैं और न वे एक दूसरे के साथ खा पी सकते हैं तथा उनकी धार्मिक फिलास्फी भी भिन्न २ है। लेकिन क्या हिन्दुओं में ही अनेक जातियाँ नहीं हैं जो न परस्पर विवाह सम्बन्ध करती हैं और न साथ २ खा पी सकती हैं। दलित जातियों तक में ऐसे कडे बन्धन हैं और इतने भेद हैं कि वे आपस में खान पान और शादी विवाह कुछ नहीं कर सकते। जैनी, बौद्ध, लिगायत, तामिल और तिलगू लोगों में भी धार्मिक मतभेद है उनकी फिलास्फी अलग है और वे भिन्न २ देवताओं की पूजा करते हैं। मुसलमानों मे भी शिया और सुन्नी लोगों में कट्टर धार्मिक मतभेद है जिससे कभी २ उनमे परस्पर दगे, फिसाद और रक्तपात भी हो जाते हैं। तो क्या इन छोटे २ मत भेदों से ये सब अलग २ राष्ट्र माने जाने चाहिये? और फिर यह भी तो नही भूलना चाहिये कि अधिकतर भारतीय मुसलमानो के पूर्वज हिन्दू ही तो थे जिन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। बम्बई प्रान्त में वर्तमान खोजा और मैमाँ मुसलमानों के पूर्वज लोहार और भाटिया हिन्दू थे जिन्होंने गत २०० और ४०० वर्षों के अन्दर ही इस्लाम को स्वीकार किया था (और मि० जिन्ना के पूर्वज भी तो भाटिया हिन्दू थे)। उनमें अब तक भी अपनी पुरानी जाति के रीति रस्म इतने अधिक प्रचलित हैं कि तीन वर्ष पहले तक जब कि उनको पूरे तौर से मुस्लिम कानून के अन्दर लाने के लिये कानून बनाया गया, खोजा लोगों और कच्छी मेमनों में जायदाद, सम्पत्ति,

दाय भाग और उत्तराधिकार के सब नियम हिन्दू धर्म शास्त्रों के अनुसार ही प्रचलित थे।"

इसी प्रकार प्रान्तीय मुस्लिम लीग पंजाब की महिला कमेटी की अध्यक्षा श्रीमती बेगम बशीर अहमद को उत्तर देते हुए श्रीमती जुबेदा खातून ने ता० १८ नवम्बर १६४५ को "अर्जुन साप्ताहिक" में लिखा था, 'मैं यहाँ यह भी कह देना चाहती हूँ कि यद्यपि हम हिन्दू भाइयों को दोष दिया करते हैं कि उनमें जाति पाँति की निकृष्ट प्रथा विद्यमान है तथापि व्यवहार में हम में भी जाति पाँत का कम ख्याल नहीं है, जैसे हिन्दुओं में ब्राह्मण का आदर होता है उसी तरह मुसलमानों में एक सैय्यद का। पठान लोग अपने दायरे से बाहर विवाह सम्बन्ध नहीं करते। कसाई और जुलाहे आपस में विवाह सम्बन्ध नहीं करते। और स्वयं मुस्लिम जाति इन दोनों को नीच समझती है। वह न्याय और विश्व-भ्रातृत्व कहाँ गया जिसकी नींव हमारे पैगम्बरों ने डाली थी?

जब स्विटजरलैण्ड में जर्मन, फ्रेञ्च और इटली इन तीन राष्ट्रों के निवासी होते हुए भी एक स्विस राष्ट्र में रह सकते हैं जब दक्षिण अफ्रीका में डच और अंग्रेज दोनों एक राष्ट्र में रह सकते हैं और जब रूस में मुसलमान ईसाई, यहूदी और अनेक मत वाले लोग एक राष्ट्र में रह सकते हैं तो फिर भारत में ही हिन्दू और मुसलमान एक राष्ट्र में क्यों नहीं रह सकते? वास्तव में राष्ट्र की भावना एक बहुत विस्तृत भावना है जो जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति तथा प्रान्तीयता के पृथक् २ घेरे से बहुत ऊँची है इन में से कोई भी एक चीज राष्ट्रीयता का आधार नहीं बन सकती। राष्ट्रीयता का स्वरूप तो लोगों के रीति रस्म संस्था, विधान, इतिहास, परम्परा आदि के संगठित मानव जीवन में प्रकट होता है। इन सब चीजों का समूह मिलकर राष्ट्रीयता का जन्म देता है। इन में से मजहब या भाषा या और कोई एक चीज राष्ट्र का आधार नहीं बन सकती। इस विचार धारा के अनुसार भारत के निवासी हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्रों में नहीं बाँटे जा सकते। वे सदा एक राष्ट्र में रहे हैं और रहेंगे।

इसलिये मि० जिन्ना और उनके अनुयायी किसी भी तर्क और युक्ति से अथवा ऐतिहासिक प्रमाणों से यह सिद्ध नहीं कर सकते कि भारत में हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्र (Two nations) हैं। मजहब, भाषा, जाति, संस्कृति, रीति-रस्म आदि के साधारण मत भेदों से कभी पृथक् राष्ट्र नहीं बना करते। ऐसी धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी भिन्नतायें तो अनेक देशों में पाई जाती हैं फिर भी उनकी राष्ट्रीयता एक है जैसी भारत में भी होनी चाहिये।

नई समाज व्यवस्था
(४)

(लेखक—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक)

अर्थ शुद्धि

जिस प्रकार क ससार हम चाहते हैं उसकी मोटी रूप रेखा देने का हमने पिछले पृष्ठों में यत्न किया था। हमारा ससार प्रत्यक व्य क्त को उन्नत बनने तथा सभ्य और सुखी जीवन व्यतीत करने की सुविधा देने वाला होना चाहिए इस बात से सब सहमत हैं इस अवस्था को लाने के लिए आवश्यक है कि हमारा आर्थिक सगठन शुद्ध और सात्विक हो जिसमें व्यक्ति का आर्थिक अभ्युत्थान समष्टि के लिए और समष्टि का अभ्युत्थान व्यक्ति के लिए सहायक तो हो किन्तु घातक न हो। जिसमें व्यक्ति अपने को आर्थिक दृष्टि से सुखी और समृद्ध बनाता हुआ अपना आध्यात्मिक विकास भी कर सके। व्यक्ति के आर्थिक अभ्युत्थान का अभिप्राय यही हो कि उससे दूसरे व्यक्तियों की आयु और भोग में विघ्न उत्पन्न न हो और उनका अपहरण भी न हो। अर्थोपार्जन में मनु महाराज का निम्न आदर्श सदैव लक्ष्य में रखना चाहिए।

"सर्वेषामेव शौचानामर्थशौच परं स्मृतम्।
योऽर्थे शुचि स हि शुचिर्न मृद्वारिशुचि शुचि ॥
मनुस्मृति (१०६)

अर्थात् समस्त पवित्रताओं में अर्थ की पवित्रता ही सर्व श्रेष्ठ है। जिसके धन कमाने के साधन शुद्ध नहीं हैं वह कितना ही अन्य बातों में शुद्ध क्यों न हो शुद्ध नहीं कहा जा सकता।

मनु ने अ. सग्रह में निम्न बातें आवश्यक बताई हैं।

अर्थोपार्जन का आदर्श

(१) अर्थ सग्रह करते समय किसी प्राणी को कष्ट न हो।

(२) अपने पुरुषार्थ से उत्पन्न किए गए अर्थ से ही निर्वाह किया जाय। दूसरों की कमाई से नहीं।

(३) अपना अर्थ भी किसी बुरे कर्म से सग्रह न किया जाय।

इन नियमों के आचरण से अर्थ का न्यायोचित वितरण सहज ही हो सकता है और प्रजा में अर्थ सकट उत्पन्न नहीं हो सकता। अर्थ के न्यायोचित विभाजन के लिए यह भी आवश्यक है कि अनुपार्जित (Unearned) धन के सग्रह की अनुमति न दी जाय। श्रम करने में समर्थ प्रत्येक व्यक्ति को कार्य पर लगा कर उससे कार्य लिया जाय। यदि व्यक्ति की सम्पत्ति उसके परिश्रम से कमाई गई आय हो तो हम उसके लिए एक निश्चित राशि नियत कर सकते हैं जिससे बहुत अधिक और बहुत कम उसे प्राप्त न हो। परन्तु अर्थ का न्यायोचित विभाजन तब तक सम्भव नहीं जब तक कुछ व्यक्तियों को उत्तराधिकार मे बहुमूल्य सम्पत्ति मिलती रहे अथवा धनवान् व्यक्ति धन का विनिमय करके उससे सट्टा करते रहें।

अनुपार्जित धन के नियन्त्रण के लिए वेतन और मजदूरी का नियत किया जाना अधिक श्रेयस्कर और प्रभावोत्पादक है।

पूँजीवाद के अभिशाप

हमारी आजकल की अर्थ प्रणाली एव उस पर बनी सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था पर इने गिने पूँजीपतियों का प्रभुत्व है और सम्पत्ति के उत्पादन और वितरण पर उनका एकाधिकार है। इसीलिए धन के वितरण में आपाधापी मची हुई है। इसीलिए बेकारी और दरिद्रता ससार की जीवन शक्ति को चूस रही है। इसीलिए घोर आर्थिक असमानता व्याप्त हो रही है। इसीलिए ससार व्यापी महायुद्ध मनुष्य समाज को ग्रस्त और नष्ट करते रहते हैं। इसीलिए मनुष्य की उच्च प्रवृत्तियों के विकास के स्थान पर निम्नगामी प्रवृत्तियों का अट्टहास देख पड़ता है।

वस्तु बाहुल्य और धनाभाव

आज पदार्थों का उत्पादन इतना अधिक देख पड़ता है कि उस पर कोई भी आश्चर्य किए बिना नहीं रह सकता। ससार के सभी उन्नत देशों में उत्पादन शक्ति अभूत पूर्व सीमा तक पहुँच चुकी है। समाजवादियों ने भी पूजीवाद की इस सफलता की मुक्तकण्ठ से प्रशसा की है। कहा जाता है कि अमेरिका का कालर बनाने वाला एक कारखाना प्रत्येक अमेरिका निवासी के लिए ३ कालर प्रति वर्ष बना सकता है। यही बात अन्य बहुत से पदार्थों के उत्पादन के विषय में कही जा सकती है। फिर भी मनुष्य दीन हीन, बेकार, निर्धन, भूखा, नगा, गृहविहीन, रोगी, कृश, अकिचन और निरुपाय क्यों?

इसका एक मात्र कारण यही है कि मनुष्यों के पास वस्तुए क्रय करने के लिये धन का अभाव है, परन्तु धन की कमी के कारण ऐसा नहीं कर सकते।

मनुष्यों के पास धन के अभाव का मुख्य कारण है बेकारी की बढती हुई समस्या। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि मजदूरों का वेतन कम और उनकी सख्या अधिक है।

इस प्रकार बेकारों के पास तो धन का अभाव है ही पर कार्य पर लगे हुए मनुष्यों की स्थिति भी अच्छी नहीं है। वे भी मशीन की तरह कार्य-सलग्न रहते हैं। उनका वेतन केवल इतना होता है जिससे वे जीवित रह सकें। जिनके वेतन उचित कहे जा सकते हैं वे भी मनोरंजन के पदार्थों के अभाव पर अपने भाग्य को प्राय कोसते देख पड़ते हैं। जिनके वेतन उस राशि का अतिक्रमण किए हुए है जिसके बाहर सेवा के बदले मिलने वाला पारिश्रमिक अतिरिक्त धन समझा जाता है, वे लाभ की इच्छा से नए नए उद्योग धन्धों में अपने अतिरिक्त धन को लगाकर पूजीवाद को प्रश्रय देते हैं। यह सचाई है कि बढती हुई आमदनी से मनोरजन और विलास के अवसरों मे एक सुनिश्चित सीमा से परे वृद्धि नहीं होती। जहा तक इन व्यक्तियों की निजू आवश्यकताओं और विलास का सम्बन्ध है, उनकी अतिरिक्त आय अत्यधिक होती है। उन्हें भी एक निश्चित राशि से अधिक दिए जाने की आवश्यकता नहीं है।

जब वस्तु बाहुल्य है और ये वस्तुए सर्वसाधारण तक नहीं पहुँचती हैं तब प्रश्न उपस्थित होता है कि इन वस्तुओं का बनता क्या है? इस सम्बन्ध में निम्न अवतरण ध्यान देने योग्य है—

जाता है तब वह पूंजीपतियों के पास पड़ा होता है। यह माल गोदामों और दुकानों में भरा रहता है और कीड़ों मकाड़ों द्वारा नष्ट होता रहता है। जो माल शेष रह जाता है वह जान बूझकर नष्ट कर दिया जाता है। यदि पूंजीपति इस माल को नष्ट न करके निर्धनों को अमूल्य प्रदान करदें तो उनका बहुत भला हो, यदि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो माल का मूल्य कम करदें जिससे कुछ माल बिक जाय। परन्तु वे ऐसा भी नहीं करते, क्योंकि ऐसा करने से उनको कम लाभ होगा। माल का मूल्य ऊंचा रखने के लिए वे करोड़ों मन गेहूं में आग लगवा देते हैं। रुई के पेड़ और कपास के पेड को नष्ट कर देने वाले कीडे पाल पाल कर लाखों मन रुई नष्ट करवा देते हैं और असंख्य नारंगियां आदि वस्तुएं समुद्र में विलीन कर दी जाती हैं। यह पूंजीवाद की अत्यन्त शोचनीय और हृदय विदारक समस्या है। एक ओर तो असंख्य मनुष्यों का भूखों मरना और वस्त्रहीन होना और दूसरी ओर असीम उपयोगी वस्तुओं का विनाश इस मत के मत पदक हैं कि वर्तमान सामाजिक संगठन में कुछ नात्विक दोष हैं।

पूंजीवाद में एक ही विरोधात्मक बात नहीं, वरन और भी बहुत हैं। एक ओर तो बहुत सा काम करने के लिये मनुष्यों की आवश्यकता है। गन्दी और दुर्गन्धपूर्ण नालियों, कच्ची झोंपड़ियों तथा संकीर्ण गलियों आदि की स्वच्छता वहां के वातावरण को शुद्ध बनाने तथा रहन सहन के सम्बन्धी सामग्री को संगठित करने में सहस्त्रों मनुष्यों को नियुक्त किया जा सकता है। परन्तु इसके प्रतिकूल दूसरी ओर संसार के आधे मनुष्य बेकार हैं। मनुष्य काम चाहते हैं काम का अभाव नहीं परन्तु फिर भी चारों ओर बेकारी दृष्टि गत होती है।

पूंजीवाद अब निराश तथा निस्सहायावस्था में है। स्वाभाविक रूप से अब उनका विनाश होने वाला है। संयुक्त राष्ट्र सहस्त्रों मन गेहूं जला देता है। इंग्लैन्ड असंख्य नारंगियां समुद्र में विलीन करता रहा है। ब्राजील ने कहवे को रेल के इंजिनों में कोयले की भांति जलाया है। परन्तु कोई भी देश यह घोषणा नहीं कर सकता कि उसके मनुष्य पूर्णतः संतुष्ट तथा सुखी हैं। संसार भर में बेकारी अपना तिमिराचल विस्तृत किये हुये है परन्तु कोई भी देश नहीं कह सकता कि उसे काम कराने के लिए मनुष्यों की आवश्यकता नहीं है। यह दशा बहुत ही विरोधात्मक तथा दुःखदायक है। श्रीमती बारबारा वूटन (Mrs Barbara Wootton) लिखती हैं कि भूखा मरना अथवा अत्यन्त निर्धन होना अथवा बेकार रहना सदैव ही हृदय विदारक होता है परन्तु बाहुल्य के बीच में भूखों मरना तथा वस्त्र-हीन रहना कष्टोत्पादक ही नहीं वरन हास्यास्पद भी है साथ ही साथ काम के रहते हुये और काम की सामग्री उपस्थित होते हुये भी बेकार रहना और भी हास्यास्पद है।

क्या ऐसे विरोधात्मक सामाजिक संगठन में बुद्धि-दौर्बल्य का कुछ अंश नहीं ? क्या भावी संतान यह दावा करे कि हम इस प्रणाली के दोषों तथा असफलताओं से परिचित होते हुए भी इसके दास बने रहे, हमारी दुर्बलताओं पर खेद

नही प्रकट करेगी ? क्या अब वह समय नहीं आगया है जबकि हम खाली पेट और भरे हुये गोदामों, बेकार मनुष्यों क अस्तित्व और काम के बाहुल्य के कुचक्र को नष्ट करने का चेष्टा करें ? इन प्रश्नों का केवल एक ही उत्तर है 'अवश्य'। पूजीवाद म अब उपयोगिता का अंश लेश मात्र भी नहीं रह गया है यदि ससार का किसी प्रकार का कल्याण हो सकता है तो क ल इसी म कि हम पूजीवाद का परित्याग कर समाजवाद को अपनाव

इस अ तरग म ... है कि हमारी आर्थिक प्रणाली अनैतिक है। यही ... यह ... सामा जिक ... और निर्धनता ... देती है परन्तु ... विरुद्ध केवल मात्र एक यही गभीर आ ... नही है। ... रोग के ... मात्र हैं। ... रोग नहीं है। हमारी इस प्रणाली में मूल भूत ... यही ... कि ... मूल्यों के ... प ... है और इस ... का ... विस्तृत कर ... रखती है।

... कीजिए पूजीवाद का ... पारि तोषि ... मे प्राप्त हाता है ? यह ... चोटी पर पहुँचा कर धन ... जाते हैं ... दुनियों का ... दुनिया का छाड ... बडा ... समझे जाते हैं। ... परिश्रम

करना पडता और पारितोषिक सेवा के मूल्य के रूप में उन्हें दिया जाता तो सचमुच यह ढंग गन्दा न होता। यदि वे स्टाक एक्सचेंज पर जुआ खेलकर धन कमाते हैं अथवा अपनी वस्तुओं क चातुर्यपूर्ण मिथ्याविज्ञापन में सफल हो जाते हैं, तो उन्हे धन का पारितोषिक दिया जाता है। सट्टबाजी कम्पीटीशन, युद्ध यही इस खेल की रीत नीति है। जब वे लोग चोटी पर पहुँच कर पारितोषिक जीत लेते है तब यदि वे अपने टैक्सों को अदा करद और एक अच्छी बडी राशि दान म दे द तो अपनी सम्पत्ति और शक्ति क बल पर वे जो चाहे कर सकते है।

कहा जाता है धन वान् ... कि है जो अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करत है परन्तु यह तक पूजीवाद के पक्ष में ... नहीं जाता। इन गुणों का उद्भव इस अर्थ प्रणाली से न होता और न इससे उन्हे प्रोत्साहन मिलता है। समाज के हित मे उदारता पूर्वक धन व्यय करने क गुण पर पूजीवाद की सस्कृति बल नही देती। यह तो धन सग्रह करने की योग्यता और उस योग्यता का पारितोषिक दन पर बल देती है

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पूजीवाद क अधीन बडे बडे सुधारक हुये है। यद्यपि यह बात ध्यान रखने की है कि धनपतियों के होते हुये भ सरकार द्वारा ही ये सुधार हुए है। परन्तु हमे यह अवश्य मानना पडेगा कि बडे बड सुधार हुए है। परन्तु इस तर्क प्रणाली में यह मानना भ्रमात्मक है कि पूजीवाद के अधीन यह क्रम आवश्यक रूप से जारी रहता है। जब तक समय अच्छा रहता है तब तक ही पूजीवाद

समाज सुधार के लिए धन व्यय में समर्थ रहता है। पूंजीवाद व्यक्तिगत लाभ पर निर्भर है अ खराब समय आने पर वह समाज सुधार पर धन व्यय न कर सकेगा। यह खराब समय में मजदूर म नौती करके बेकारी में वृद्धि कर देगा और सदा ऐसा करता रहा है इस नीति के अवलम्बन से तो सब साधारण गरीब व्यक्तियों को ही कष्ट पहुचता है

कुरानी अल्लाह साकार है

(लेखक—श्री प० शिव शर्मा जी शास्त्रार्थ महारथी सभल)

१—यौमनकूलो लिजहन्नम हलिम् तअते वतकूलो हलमिम् मजीद ? सू० क़ाफ़, रु० ३ ॥

(१) तर्जुमा शाहअब्दुल कादर साहब—'जिस दिन हम कहेंगे दोज़ख को तू भर चुकी ? और वह बोली कुछ और भी है" ?

सु० ८८६ ॥

(२) दूसरा तर्जुमा—'जिस दिन हम दोज़ख को कहेंगे तू भर चुकी ? और वह बोले-कुछ और भी है" ? सु० ६४२ ॥

(३) तर्जुमा हसन निजामी साहब—"उस दि हम दोज़ख से पूछेंगे कि तू (दोज़खियों से) भर चुकी या नहीं ? और अर्ज करेगी कुछ और भी है ? जि० २ सु० ७४४ ॥

(४) शमशुलउलमा नज़ीर अहमद साहब—"उस दिन हम दोज़ख से पूछेंगे कि क्या तू भर चुकी ? और वह कहेगी क्या कुछ और भी है" ? जि० २ सु० ७४४ ॥

(५) तफ़सीर मूज़—"याद कर जिस दिन कहेंगे हम दोज़ख को कि ऐ दोज़ख ! भरी ? ता वह कहे कि कुछ और भी है तो लाओ।

सु० ५४१ ॥

कहते हैं कि तब खुदा ताला क़दम कुदरत अपने का दोज़ख पर रक्खेगा। उस वक़्त दोज़ख कहेगी कि—बस बस मुई मैं। तफ़सीर मूज ॥

(६) "(यौमनकूलो) और याद करो उस दिन को जब हम कहेंगे, और बकर ने 'यकूला" ये से पढ़ा है। यानी हक़ताला फ़रमायेगा (लिजहन्नम) दोज़ख को कि (हलिम तला) क्या तू भर गई ? (वतकूलो) और कहेगी (हलमिम् मजीद) क्या ज्यादती है" ? और एक कौल यह है कि दोज़ख नहीं भरेगी "हत्ता यज अलजब्बारो क़दमेह' फ़तक़लो क़त्क़त्'—यानी यहाँ तक कि हज़रत जब्बार उसमें अपने दोनों क़दम रख देगा, फिर कहेगी कि बस बस जि० २, सु० ४६३ ॥

(७) मौ० मुहम्मद अली M A कादयानी—

"On the day that we will say to hell Art thou filled up? And it will say Are there any more?" P 514

सही बुखारी—

(१) '....दोज़ख कहेगी-'हलमिम्मज़ीद' ? अल्लाहताला दोज़खियों को दोज़ख में डालेगा, वह फिर कहेगी—'हलमिम्मज़ीद, ? तीन मर्तबा इस तरह होगा। यहाँ तक कि अल्लाहताला इसमें अपना कदम रक्खेगा। तब वह भर जायगी और सब कोने उसके एक दूसरे से मिल जायेंगे और वह कहेगी बस बस ॥

सही बुखारी तर्जुमा उर्दू जि० ३ । सु० ३३२ । ह० नं० ७९५ ॥

(२) हत्ता यज़अ रिजलहू फ़तकूलो क़त्क़त्। सु० २९६ ह० न० ९४८ ॥

(३) क़ाल युल्क़ा फ़िआरे वतकूलो हलमिम्मज़ीदिम् हत्ता यज़अ क़दमहू फ़तकूलो क़त्क़त् सु० ७९५ । ह० न० ५९७ ॥

नोट—मिश्कात, जि० ४ ह० नं० ११३४ और ११३६ सु० ३२०, ३२१ देखिये।

मखलूक पैदा करने से पहले खुदा अमाह' हलका अब्र में था। मिश्कात जि० ४ ह० नं० ११६६ सु० ३३३। जिब्रील और अल्लाह के दरमयान ७० पर्दे नूर के मिश्कात जि० ४ ह० नं० ११७० सु० ३४।

(४) अनसुन् लातजालो जहन्नमो तकूलो हलमिम्मजीदिन् ? हत्ता यजअ फीहा रब्बुल इज्जत कदमहू फनकूलो कतकत्

तजरीद बुखारी। सु० ६२। ह० नं० ४४१॥

(५) अल्लाह अपना पांव दोजख में रक्खेगा बहिश्त के वास्ते नई मखलूक पैदा करेगा। इस हदीस को सबने माना है।

मिश्कात जि० ४। ह० नं० ११३४॥

(६) दोजख में कुछ न कुछ पड़ता रहेगा और वह कहती रहेगी—'हलमिम्मजीदिन्' कुछ और है ? अल्लाह अपना कदम रख देगा। बहिश्त में खाली मकान पड़े रहेंगे। अल्लाह उनके लिये नई मखलूक पैदा करेगा

मिश्कात। जि० ४। ह० नं० ११४६॥

सही मुस्लिम—

(७) फयजअो कदमहू अलैहा फ कूलो कतकत्। किताब जन्नत और जहन्नम के रहने वालों का बयान। बाब जहन्नमका बयान सफा २७२३। तर्जुमा। फिर परवरदिगार अपना पांव रख देगा, वह कहेगी बस बस।

(८) अनसे बिन् मालकिन रजियल्लाहोतआला अन्हो अन नबियल्लाहेसल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम कालल्लातजालो जहन्नमो तकूलो हलमिम्मजीदिन हत्ता यजआ फीहारब्बुल इज्जते तबारक वताला कदमहू फतकूलो कतकत्। सही मुस्लिम सु० २७२४।

तर्जुमा—अनस बिन मालिक से रिवायत है कि रसूल अल्लाह सल्लेअल्ला अलैहे व सल्लमने फरमाया—हमेशा दोजख कहती रहेगी—और कुछ है ? और कुछ है ? (यानी और लोगों को मांगेगी) यहां तक कि मालिक इज्जत वाला बडी बरकत वाला, बुलन्दी वाला अपना कदम उसमें रख देगा तब वह कहेगी बस बस॥

(९) हत्ता यज अल्लाहो तबारक बताला रिजलहू तकूलो कतकत्। सु० २७२४॥

(१०) खुदा अपना पैर दोजख में रक्खेगा। मिश्कात जि० ४ हदीस नं० ११३४ सु० ३२१॥

नोट—सतनइवे माना में है कि पहले खुदा अबूबकर से मुसाफा करेगा॥

अल्लाह के हाथ—

सही मुस्लिम है कि अल्लाह अपने दोनों हाथ फैलाकर फरमाता है कि—कौन है कि कर्जा देवे ऐसे को कि न फकीर है न जालिम है सुबह तक कहता रहेगा॥

वकतबनालहू फिल अलवाहे मिन् कुल्ले शौ। सू० अअराफ रु० १७। आयत १४५॥

तर्जुमा—और लिखा था हमने वास्ते मूसा के बीच तख्तों के हर चीज से नसीहत। तफसीर मूजा सु० १४५॥

मौ० मुहम्मद अली M A कादियानी—

And we ordained for him in the tablets admonition of every kind and clear explanation of all things

हदीस—

(१) ""फ़क़ाललहू आदम अन्नमूसा इस्तफ़ाक ल्लाहो बिकलामिही व खत्तलक तौरात बियदेही ॥

मुस्लिम किताब क़दर बाब ह० आदम और ह० मूसा का मुबाहसा। २४६७—४-६६॥

फ़ायदा—अल्लाह ताला ने तौरात शरीफ को अपने हाथ से लिखा, इस मुक़ाम पर अहले हदीस का यह मतलब है कि अल्लाह ताला के दोनों हाथ हैं। और दोनों दाहिने हैं। और हाथ अपने जाहिरी मानों पर महमूल हैं। इमाम आजम रहमतुल्लाह अलैह ने फ़िक्रा कबीर में लिखा है कि हाथ की तावील निअमत और कुदरत से नहीं करेंगे क्योंकि यह क़ादरिया और मुअतजिला का क़ौल है।

सु० २५६८॥

(२) "" इन्न कुलूब बनी आदम कुल्लहा बैन इसबऐने मिन् असाबि इर्रहमाने॥ मुसलिम। किताब कदीर। बाब दिल अल्लाह के इख्त्यार में है॥ सु० २५७१॥

फ़ायदा—"""""" "अल्लाहताला कुरान में फ़रमाता है—

तुम किसी चीज को चाह भी नहीं सकते जब तक खुदा बन्द ताला न चाहे। सलफ़ का मजहब इन आयत और हदीस में यह है कि वह अपने जाहिरी मानों पर महमूल है। और उसकी कैफ़ियत का इल्म खुदा को है। बेशक खुदा की उँगलिया हैं।

नोट—तिरमजी में है कि—आ हजरत ने खुदा को खूबसूरत आदमी की शक्ल में देखा। खुदा ने अपनी हथेली हजरत के पिस्तान के दरम्यान रक्खी।

आसमान पर हजरत ने क़लमों की घिस २ सुनी। जिब्रील हाथ पकड़ कर हजरत को आसमान पर ले गये।

बुखारी जि० २, पारा १३, ह० न० ४३४।

जैसे उसके हाथ हैं। पर न हाथ की हक़ीक़त मालूम है न उँगलियों की। और वह पाक है मख़लूकात की मुशाबिहत से और जिन्होंने तावील की है वह कहते हैं—उँगलियों से मुराद यहाँ कुदरत है और इख्त्यार है और इन लोगों ने यह न समझा कि कुदरत का तसनिया (द्विवचन) नहीं होता। (बहुवचन भी नहीं होता) कुरान में साफ़ तसनिया (द्विवचन) मौजूद है। दोनों हाथ उसके खुले हैं। और हदीस में "असावअ" का लफ़्ज, जो जमा है 'असबअ' भी मौजूद है।

मुसलिम, सु० २५७१॥

यही बात बाइबिल में है—

(१) जब मूसा परमेश्वर से सीने पर्वत पर ऐसी बातें कर चुका तब उसने उसको अपनी उँगलियों से लिखी हुई साक्षी देन वाली पत्थर की दोनों पट्टियाँ दीं॥

निर्गमन का पुस्तक ३१। १८॥

पाठक गण! हमने कुरान, हदीस और तौरेत आदि से यह भले प्रकार सिद्ध कर दिया है कि अल्लाह साकार-शरीरधारी है।

और भी देखिये—

(२) जिस पर परमेश्वर ने अपनी उँगली से लिखा था॥ विवाद ९। १०। पृ० ४५७।

(३) और वे पट्टियाँ ईश्वर के कर्ई थीं, और जो लिखा हुआ सो ईश्वर का लिखा पट्टियों पर खोदा हुआ॥ यात्रा ३२। १६-१७। पृ० २१३॥

हमने अपनी पुष्टि में तौरेत के प्रमाण इस लिये दिये हैं कि कुरान ने स्वय ही तौरेत की प्रशंसा करते हुए लिखा है—

सुम्म आतैना मूसल् किताब तमामन् अल-लज़ी अह्सन् व तफ़सीलन् लिकुल्ले शैइन् व हुदँव्वरह्मतम् लअल्लहुम बिलिक़ाइ रब्बेहिम् यूमिनून

सू० अनआम रु० १६ ॥

तर्जुमा—पस दी हमने मूसा अलैस्सलामको तौरैत वास्ते तमाम करने निअमतके उसपर उस किसीके कि नेक करे अमलको और वास्ते बयान करने हरचीजको दीनमे और हिदायत और बख़शिश थी शायद की बनी इस्माईल साथ मुलाक़ात पर्वरदिगार अपनेके ईमान लायें ॥ तफ़सीर मूजः । सु० १३७ ॥

(२) इन्ना अन्ज़लना तौरातफ़ीहि हुदँव्वनूर ॥ सू० मायद । रु० ७ ।

तर्जुमा—हमने उतारी तौरैत इसमें हिदायत और रौशनी है ।

(३) कुलफ़तू बिकिताबिम्मिन् इन्दिल्लाहे हुवं अहदामिन् हुमाऽऽत्तबेऽहू इनकुन्तु स्वादिक़ीन ॥ सू० क़सस । रु० ५ ॥

तर्जुमा—कहो रसूल सल्लअल्लाहः कि लाओ कोई किताब खुदायताला के पास से जो वह राह दिखाने वाली ज्याद होवे तौरैत और कुरान शरीफ़ से तो मैं ताबेदारी करूँ उस किताब की अगर तुम सच्चे इस बात में ॥ त० मूजः सु० ४११—१२ ॥

मौ० मुहम्मदअली M A क़ादियानी भी इस आयतके नोटमें कहते हैं—

"Both occupy higher position than any other revelation P 392

इन उपर्युक्त प्रमाणोंमे यह स्पष्ट होगया कि बाइबिल और कुरान दोनों ही उच्चकोटि की पुस्तकें खुदाको शरीरी मानते हैं।

एकदेशी अल्लाह—

(१) वजाअरब्बोक वल् मलको सफ्फ़न सफ्फ़ ॥ सू० फ़ज्र । रु० १॥

तर्जुमा—शाह अब्दुलक़ादर साहब "और आये तेरा रब्ब और फ़रिश्ते आवें क़तार कतार"।

सु० १०१६ ॥

(२) दूसरा तर्जुमा और आवे तेरा रब्ब और फ़रिश्ते आवें क़तार २ ॥ सु० ७३७॥

(३) ख्वाजा हसन निज़ामी साहब—

"और ऐ पैग़म्बर । तुम्हारा परवर दिगार रौनक अफ़रोज़ होगा।" और फ़रिश्ते म्फ़बस्ता (उसके जुलूसमें होंगे)। जि० २। सु० ८५८।

(४) शम्सुलउलमा मौ० नजीर अहमद साहब

"और तुम्हारा पालनकर्ता (शान शौकत के साथ) विराजमान होगा "

"और फ़रिश्तों की ?नाये आवेंगी" ॥

जि० २। सु० ८५८॥

(५) तफसीरमूज़ "और आवेगा हुक्म और निशानियाँ तेरे परवरदिगार की और फ़रिश्तें आवेंगे क़तार क़तार" ॥ जि० १। सु० ६२३॥

(६) तफ़सीर क़ादरी—"और आवेगी तेरे परवर दिगार की कुदरत और हैबतकी निशानियाँ यानी जाहर होंगी और आवेंगे फ़रिश्ते मैदानहश्र में सफ़ सफ़" जि० २। सु० ६३०॥

(७) मौ० मुहम्मदअली साहब M A क़ादियानी—

And thy Lord shall come and the angels in raw P 604 (lbs)

"हजरत फ़रमाते हैं—मैराजके मौक़ेपर मैंने खुदाको बेहतरीन (अच्छीसूरत) में देखा। ख़ुदाने मेरे दोनों रानोंके बीचमें हाथ रक्खा खूनकी (ठंडक) उङ्गलियोंकी खुदाकी मुझको मालूम हुई।" मदारजन्मवव्वत जि० २ सुफ़ा ७३॥

उपर्युक्त आयतके क़ादयानी तर्जुमे से भी यह सिद्ध होरहा है कि क़ियामतके दिन मैदान में आवेगा, कैसे आयेगा सो भी देखिये—

वयह्‌ मिलो अर्श रब्बिक़ फ़ौक़हुम यौम इज़िन् समनियत॥ सू० हाक्क़ा रु० १। आयत ७॥

शाह अबदुल क़ादर साहब—

'और उठा रहे हैं तख्त तेरे रब्ब को अपने ऊपर आठ शख्स"। सु० ६७०॥

हाशिया—"अब चार के कन्धे पर है, चार उस दिन और लगेंगे"॥

तफ़सीर कादरी—

"(वयह मिलो) और उठायेंगे (अर्श रब्बिक) अर्श तेरे रब्ब का (फ़ौक़हुम्) उन फ़रिश्तों पर जो आसमान के किनारे होंगे (यौमइज़िन्) उस दिन (समानियत) आठ फरिश्ते। और आज चार फरिश्ते अर्श उठाये हुए हैं मआलम' में है कि उस रोज अर्श उठाने वाले आठ फरिश्ते होंगे पहाड़ी बकरे की सूरत, उनके सुमों से जानू तक दूरी इस क़दर है कि जिस क़दर एक आसमान से दूसरे आसमान तक। बाज़ों ने कहा है कि फ़रिश्तों की आठ सफें अर्श को उठायेंगी कि उनको ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता"।

जि० २। सु० ५७०॥

ख्वाजा हसन निजामी साहब

"और उस दिन तुम्हारे परवर दिगार के तख्त को आठ (फ़रिश्ते) अपने ऊपर उठाये होंगे"॥ जि० २ सु० ८१८॥

मौ० नजीर अहमद साहब—

और फ़रिश्ते उनके किनारों पर (आ खड़े) होंगे। और तुम्हारे पालन कर्त्ता के अर्श को आठ फ़रिश्ते अपने ऊपर उठा लेंगे"। सु० ८१८॥

तफ़सीर मूज़—और फ़रिश्ते होंगे आसमान के किनारो पर हुक्म खुदा ताला के से। और उठावेंगे तख्त तेरे परवर दिगार का अपने ऊपर उस दिन आठ फ़रिश्ते॥ कहते हैं कि उठाने वाले तख्त रब्बुल आलमीन के अब हमेशा से चार फरिश्ते हैं और क़यामत के दिन आठ फरिश्ते होंगे। और बाज़े कहते हैं कि आठ कतार फरिश्तों की होंगी जो तख्त रब्बुल आलमीन का उस दिन उठावेंगे। जो उन फ़रिश्तों को शुमार बग़ैर हक़ताला के कोई नहीं जानता"।

सु० ५६४॥

मौ० मुहम्मद अली M A—

And the angles shall be on the sides thereof, and above them eight shall bear on that day thy Lord's throne P 511

यदि कुरान खुदा को सर्व व्यापक बतलाता तो मेअराज की आवश्यकता न पड़ती।

आयत पर ध्यान दीजिये -

"सुम्मदना फ़तदल्ला फ़कान काब क़ौसैन औ अदुना। सू० नज्म रु० १॥

शाह अबदुल कादर -

फिर नज़दीक हुआ और लटक आया फिर रह गया फ़र्क दो कमान के बराबर या उससे भी नज़दीक॥ सु० ८६८॥

हसन निज़ामी साहब-

जिस वक्त वह पाक [illegible]

पर था सारेका सारा और खड़ा हुआ और नज़दीक हुआ, और झुका कि दो कमान की क़द्र फ़ासला रहगया बल्कि कम ॥ जि० २। सु० ७५४॥

मौ० नज़ीर अहमद साहब—

(जब रसूल ने उसके दर्शन की इच्छा की) तो वह खुदा उनको पूरा नजर आया और वह (ईश्वर) उफ़क़-आला (सबसे ऊँचा स्थान) में (अपनी ज्योति दिखारहा था) फिर (वह खुदा अपने रसूलके) निकट हुआ (फिर ऊँचे स्थान से अपने बन्दे की ओर उतर आया (कि बन्दे और खुदा के बीचमें) दो कमान का अन्तर रह गया था उससे भी ज्यादा निकट ॥ सु० ७५४ ॥

तफ़सीरे रमूज़ —

"फिर नज़दीक हुआ मुहम्मद स० मेराजकी रात खुद ताला से"।

तफ़सीरे हुसैनी—

" (मुहम्मद ना) फिर नज़दीक आके (फ़ तदल्ला) सिर झुकाया (फ़काना) और था (काबाकौसैन) दो कमान के दरमयान (औअदना) बल्कि उससे भी बहुत कम" ॥ जि० २। सु० ४७८।

मौ० मुहम्मदअली M. A Then he drew near, and drew nearer, so that he was the measure of two bows or closer still P 523

मौ० रफ़ीउद्दीन देहलवी "क़ियामतनामें" में लिखते हैं कि—

"रोजे क़ियामत मुहम्मद साहब बतलब हक़ सुबहानहू अर्शपर तशरीफ़ लेजायेंगे। पस खुदा ताला ज़मीन पर तशरीफ़ लायेगा। फिर एक तख्त पर जिसको ८ फ़रिश्ते मिलकर ज़मीन पर उतारेंगे, जलूवगर होगा। गिरदागिर्द उसका मलाइका होंगे" हदीस मुत्तफ़िक़ अलेह है कि हज़रतने फ़रमाया-"मैं रोजे कियामत खुदा के घर जाऊँगा, और अन्दर जाने के लिये इजाजत पाऊँगा। जबकि हकताला को देखूँगा सजदा करता हुआ गिरूँगा"।

(शेष अगले अङ्क में)

स्त्रियों का वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार

(४)

(लेखक—पं धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार, विद्यावाचस्पति, साहित्यभूषण, संस्कृतधुरीण, तर्क मनीषी, स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, देहली)

'सार्वदेशिक' के जनवरी फ़र्वरी तथा मई सन् १९४९ के अङ्कों में मैंने स्त्रियों के वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार पर सप्रमाण विवेचन करते हुए गत अङ्क में श्री पं दीनानाथ जी शास्त्री के इस विषयक अनेक आक्षेपों का समाधान किया था। उन के अवशिष्ट मुख्य आक्षेपों का समाधान इस लेख में करना चाहता हूँ। श्री पं० दीनानाथ जी के लेखों से स्पष्ट है कि उन्हें वेदों में से अपने इस पक्ष की पुष्टि में कि स्त्रियों का वेदाध्ययनादि में अधिकार नहीं एक भी प्रमाण नहीं मिला इसलिये कुछ वर्तमान स्मृतियों में पाये जाने वाले वचन उद्धृत करके उन्होंने अपने पक्ष को समर्थित करने का यत्न किया है। उन कल्पित वचनों पर विचार करने से पूर्व मैं यह लिखे बिना नहीं रह सकता कि यदि उन के इस विचार को थोड़ी देर के लिये दुर्जनतोषन्याय से मान भी लिया जाए कि स्त्रियों का विवाह ही उपनयन स्थानीय है तो भी कम से कम विवाहित स्त्रियों का वेदाध्ययनाधिकार तो स्पष्ट सिद्ध हो जाता है। अपने को इस निर्बल स्थिति से बचाने के लिये मान्य शास्त्री जी लिखते हैं कि "वैवाहिको विधि स्त्रीणां संस्कारो वैदिक स्मृत" अथवा "औपनायनिकः स्मृत" इस पद्य के अनुसार इतना अवश्य है कि विवाह्यमान अथवा विवाहित स्त्री उपनीत पुरुष व हो जाती है। यहां 'कुछ' शब्द शास्त्री जी की अपनी कपोल कल्पना है। यदि आप 'वैवाहिको विधि स्त्रीणां संस्कारो वैदिकः स्मृतः' इस को मनु वचन मानते हैं और इसका यही अर्थ करते हैं जैसे कि अनेक भाष्य उद्धृत करके आप ने दिखाया है कि स्त्रियों का विवाह ही उपनयन स्थानीय है 'उपनयनं तु न कार्यं तासाम् विवाहसंस्कारस्य तत्स्थानीयत्वात्—नारायण" तो आप को अपनी तरफ़ से 'कुछ' शब्द को जोड़ने और उसे संकुचित करने का कोई अधिकार नहीं। आश्चर्य यह है कि श्री शास्त्री जी को स्वयम् इस बात का निश्चय नहीं कि इस श्लोक का जिसे वे अपने पक्ष का प्रबलतम समर्थक वा आधार स्तम्भ समझते हैं ठीक पाठ क्या है "संस्कारो वैदिक स्मृत" अथवा "औपनायनिक. स्मृत.।" मत अथवा करके दोनों पाठ अपने लेख में लिखते गये हैं। उन्हें स्वयम् पहले शुद्ध पाठ का निश्चय कर लेना चाहिये था। अस्तु मैं वेदों में से अनेक प्रमाण स्त्रियों के वेदाध्ययन करने के दिखा चुका हूँ। श्रौत और गृह्यसूत्र, ब्राह्मण ग्रन्थ इत्यादि से भी स्त्रियों के वेदाध्ययन, वैदिक कर्मकाण्ड में भाग लेने तथा यज्ञोपवीत विषयक पूर्व लेखों में अनेक प्रमाण उद्धृत कर चुका हूँ। यदि मनुस्मृति तथा अन्य कुछ स्मृतियों में पाये जाने वाले कई वचन वेद विरुद्ध आदेश देते हैं तो वे सर्वथा अमान्य हैं जैसे कि—

धर्म जिज्ञासमानानाम्, प्रमाणं परमं श्रुतिः।
(मनु० २ १३।)
श्रुतिस्मृत्योर्विरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी ॥ (जाबाल)
विरोधे त्वनपेक्ष्य स्यात् ॥ (पूर्व मीमांसा)
इत्यादि प्रमाणों को उद्धृत करके पिछले लेख में दिखाया जा चुका है। 'धर्म जिज्ञासमानानाम्' इस श्लोक की व्याख्या में कुल्लूक, मेधातिथि, गोविन्द राज, राघव, नारायण आदि सब टीकाकारों ने स्पष्ट लिखा है कि—

'धर्मं च ज्ञातुमिच्छतां प्रकृष्टं प्रमाणं श्रुति। प्रकर्षबोधनेन च श्रुतिस्मृतिविरोधे स्मृत्यर्थो नादरणीयः इति भाव' ॥ श्रुतिविरोधे स्मृतिवाक्यम् अनपेक्ष्यम् अप्रमाणम् अनादरणीयम्। (कुल्लूक)

श्रुतिस्मृत्यादिविरोधे सति तत्त्वं ज्ञातुमिच्छतां स्मृत्यादीनां मध्यात् श्रुति प्रकृष्टं प्रमाणम् अतश्च श्रुतिविरोधे स्मृत्यविरोध'।' (गोविन्द राज)

तेषां च परमं प्रमाणं श्रुतिरेव अत श्रुतिमूलकतयैव स्मृतेरप्यादरणीयतेत्यर्थः ॥ (नारायण)

(मनुटीकासंग्रह कलकत्ता १८८५ पृ० ८१)

अर्थात् वेद ही धर्म जानने की इच्छा रखने वालों के लिये परम प्रमाण है इसका तात्पर्य यह है कि श्रुति (वेद) और स्मृति का किसी विषय में विरोध हो तो स्मृति का वचन मानने योग्य नहीं रहता। स्मृति वचन वहीं तक प्रामाणिक है जहाँ तक वह वेदानुकूल हो। देवण भट्टोपाध्याय रचित सुप्रसिद्ध ग्रन्थ स्मृति-चन्द्रिका में भी इसी सिद्धान्त को अनेक प्रमाण उद्धृत करके बताया गया है कि 'श्रुतिस्मृत्योर्विरोधे स्मृतेः बाध एव। यथाह लौगाक्षि'—

"श्रुतिस्मृत्योर्विरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी।
अविरोधे सदा कार्यं, स्मार्तं वैदिकवत्सता ॥

भावार्थ ऊपर दिया जा चुका है कि श्रुति और स्मृति के विरोध होनेपर स्मृति का वचन अप्रामाणिक और अमाननीय ठहरता है जैसे कि लौगाक्षि आचार्य ने कहा है। वर्तमान मनुस्मृति के

या वेदबाह्या' स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टय।
सर्वास्ता निष्फला' प्रेत्य, तमोनिष्ठा हि ता स्मृता' ॥
(१२। ६५)

इत्यादि श्लोकों में भी वेद विरुद्ध स्मृति वचनों को निष्फल और अन्धकार में ले जाने वाला बतलाया है अत श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री द्वारा उद्धृत।

'अमन्त्रिका तु कार्येय, स्त्रीणामावृदशेषत'।
संस्कारार्थं शरीरस्य, यथा काल यथा क्रमम् ॥२।६६
वैवाहिको विधिः स्त्रीणा, संस्कारो वैदिक' स्मृत।
पति सेवा गुरौ वास, गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया ॥'
(२। ६७)

इन दोनों श्लोकों को वेद विरुद्ध होने से हम अप्रमाण और प्रक्षिप्त मानते हैं यदि इनका शास्त्री जी का अभिमत अर्थ ही ठीक है यद्यपि इनके कई विद्वानों ने दूसरे अर्थ करने का भी उत्तम प्रयास किया है। उन विद्वानों का कथन है कि यहा 'अमन्त्रिका' का अर्थ सर्वथा मन्त्र रहित नहीं किन्तु 'अनुदरी कन्या' की तरह अल्प-मन्त्रा करना चाहिये क्यों कि नञ् का प्रयोग—

तत्सादृश्यमभावश्च, तदन्यत्वं तदल्पता।
अप्राशस्त्यं विरोधश्च, नञर्था' षट् प्रकीर्तिता।"

(शब्द कल्पद्रुम मे उद्धृत) इत्यादि अर्थों में होता है कन्या संस्कार में मेखला बन्धनादि विषयक कई मन्त्र छोड़ने पड़ते हैं अतः 'अल्प मन्त्रा' कहा है। 'वैवाहिको विधि स्त्रीणाम्' का वे विद्वान् यह अर्थ करते हैं कि स्त्रियों की विवाह

विषयक विधि वैदिक है, पति सेवा, वेदाध्ययनार्थ गुरुओं के पास निवास, घर का कार्य और अग्नि होत्रादि ये स्त्रियों के कर्तव्य हैं। इस अर्थ को करने वाले विद्वानों का कथन है कि कुल्लूक भट्ट तथा अन्य टीकाकारों ने जो विवाहविधिरेव वैदिक संस्कार, पतिसेवा एव गुरुकुले वासो वेदाध्ययनरूप इत्यादि व्याख्या 'एव' को अपनी तरफ से जोड़ कर की है वह उनकी कपोलकल्पित होने से अमान्य है। श्लोक में 'एव' पद कहीं नहीं है।

यदि श्री प० दीनानाथ जी इस व्याख्या को मानने को तय्यार हैं तो हमें इस पर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, किन्तु यदि इस अर्थ में भी उन्हें कुछ खैंचातानी प्रतीत होती है और कुल्लूकादि टीकाकारों के अर्थ को ही ठीक मानने पर उनका आग्रह है तो हमें वेद विरुद्ध होने के कारण उनको अप्रामाणिक कहने में कोई संकोच नहीं क्योंकि 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम्' भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता इत्यादि पूर्व उद्धृत मन्त्र तथा वित्त्वा ततस्रे मिथुना अवस्यव –यद् गव्यन्ता द्वा जना समूहसि (ऋग्वेद अष्टक २ व १९ म ३)

'या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावत.। देवासो नित्यया शिरा ॥ वीतिहोत्रा कृतद्वसू (ऋग्वेद ८ । ३१ । ५, ९)इत्यादि वैदिक आदेशों के वे विरुद्ध हैं जिन में स्त्रियों के वेदाध्ययन तथा अग्निहोत्रादि करने का स्पष्ट विधान है। 'वित्वा ततस्रे मिथुना अवस्यव' इस वेद मन्त्र की व्याख्या में श्री सायणाचार्य ने लिखा है कि 'हे इन्द्र (त्वा) त्वाम् उद्दिश्य (मिथुनाः) पत्नी सहिता यजमाना (विततस्रे) यज्ञ वितन्वते। स्वम् (स्वर्यन्ता) स्वर्गं यन्तौ–गन्तु मुद्युक्तौ (द्वा जना) द्वौ जायापती रूपौ जनौ (समूहसि) सयुक्तयोरेवाभिमत स्वर्गादिक प्रापयसि अत पत्नीसहिता अनुतिष्ठन्तीत्यथ ॥

अर्थात् हे इन्द्र तेरी प्राप्ति के उद्देश्य से पत्नी सहित यजमान यज्ञ को करते हैं और तू उन जोड़ों को स्वर्ग सुख प्राप्त कराता है इत्यादि। इसी प्रसङ्ग में श्री सायणाचार्य ने जायापत्नी अग्निमादधीयाताम वेद पत्न्यै प्रदाय वाचयेम् सुप्रजसस्त्वा वयम इत्यादि प्रमाण देकर स्त्रियों का पति सहित यज्ञ और कर्म काण्ड में विहित मन्त्रों के पाठ का अधिकार स्वीकृत किया है जिससे "गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया" ही स्त्रियों के लिये अग्नि होत्र है इस भाव की अवैदिकता स्पष्ट सिद्ध होती है।

ऋग्वेद म० ८ सू० ३१ के "या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावत।" इत्यादि मन्त्रों में भी मिलकर यज्ञ करने वाले पति पत्नी की प्रशंसा तथा उनको उत्तम यश और सौभाग्य की प्राप्ति का वर्णन श्री सायणाचार्य ने 'अत्र यजने दम्पत्यो स्तुति हे देवा (समनसा) कर्मणि समानमनस्कौ (या) यौ (दम्पती) यज्ञकारिणौ जायापती (सुनुत) सोमाभिषव कुरुत तौ यष्टारौ सर्वदा अन्नसहितौ तिष्ठाताम् यज्ञेन तयो पुत्रादिक धनमायुश्च सभवति। (वीतिहोत्रा) वीति प्रियकरो होत्रा यज्ञो ययोस्तौ अनेन यज्ञेन तयाः सुखादिकं सम्भवति ॥ इत्यादि शब्दों में किया है। वेद के नियम पूर्वक अध्ययन के बिना यज्ञों में सहयोग देना, यज्ञों में विहित विविध क्रियाओं का करना असम्भव है जैसे कि छान्दोग्योपनिषत् ३ । १ । १०। में ठीक कहा है कि

'नाना तु विद्या च अविद्या च यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तर भवति।'

अर्थात् जा विद्या (ज्ञान) और श्रद्धा पूर्वक कार्य किया जाता है वही अधिक शक्तिशाली वा प्रभाव जनक होता है। यज्ञों को इस प्रकार सफल बनाने के लिये वेद मन्त्रों का (जिनमे से बहुत से स्त्रियों को सम्बोधित करके कहे गये हैं तथा जिन मे से बहुत से उनके लिये स्वयम् उच्चारणीय हैं) अर्थ ज्ञान आवश्यक है। शास्त्री जी के कथनानुसार स्त्रियों को मूर्ति की तरह यज्ञ में बिठा लेने से काम नहीं चल सकता। सीता देवी की प्रतिमा को यज्ञ में बिठाने की बात उत्तर काण्ड की अन्य बहुत सी बातों की तरह गप्प मालूम होती है। प्राय सब विवेकशील विद्वान् इस बात से सहमत हैं कि बाल्मीकि रामायण की समाप्ति युद्ध काण्ड पर होती है और उत्तर काण्ड पीछे से किसी और ने मिला दियो।

'अमन्त्रिका तु कार्येयम्' (२। ६ और वैवाहिको विधि स्त्रीणाम् (२ ६७) ये दोनों श्लोक प्रक्षिप्त हैं यह इस से भी स्पष्ट ज्ञात होता है कि मनु २। ६५ के

केशान्त षोडशे वर्षे, ब्राह्मणस्य विधीयते।
राजन्यबन्धोर्द्वाविशे, वैश्यस्य द्व्यधिके तत ॥
इस श्लोक की मनु २। ६८ के

"एष प्रोक्तो द्विजातीनाम् औपनायनिको विधि।"

इस के साथ सङ्गति मिल जाती है जिसमें उपनयन विषयक प्रसङ्ग का उपसंहार है। बीच के श्लोक सर्वथा अनावश्यक और वेद तथा स्वय मनु महाराज के अभिप्राय के विरुद्ध हैं क्योंकि मनुस्मृति ११-३६ में निम्न लिखित श्लोक पाया जाता है।

न वै कन्या न युवतिर्नाल्पविद्यो न बालिश।
होता स्यादग्निहोत्रस्य, नार्तो नासंस्कृतस्तथा ॥

अर्थात् कन्या, युवति, थोड़ी विद्या वाला पुरुष, मूर्ख, रोगी और उपनयनादि संस्कार रहित पुरुष ये अग्निहोत्र के होता न बनें क्योंकि 'तस्माद् वैतानकुशलो होता स्याद् वेदपारग ॥"

अर्थात् श्रौतकर्म मे प्रवीण, समस्त वेदों को जानने वाले व्यक्ति को ही होता बनाना चाहिये। इस मे अग्निहोत्र के कराने का भी निषेध कन्या और युवति के लिये है अर्थापत्ति से स्पष्ट सिद्ध होता है कि वृद्धा स्त्रियां (आयु वा ज्ञान की दृष्टि से) न केवल हवन कर सकती हैं बल्कि करा भी सकती हैं। उनके लिये कोई निषेध नहीं है। स्त्री मात्र के लिये निषेध होता तो 'न वै कन्या न युवति' यह कहने की आवश्यकता न थी। यदि स्त्री मात्र के लिये उपनयन संस्कार निषिद्ध होता तो भी 'न वै कन्या न युवति' पृथक लिखने की आवश्यकता न थी। यह श्लोक मनु महाराज के वास्तविक तात्पर्य को समझने के लिये जो अथ जिव्रिर्विदथमावदासि' (अथर्व १४। १। २१) तथा 'अथ जिव्री विदथमावदाथ' (ऋ० १०। ८५। २७) के सर्वथा अनुकूल है जहाँ स्त्रियों के आयु अथवा ज्ञान वृद्ध होकर यज्ञादि विषयक उपदेश का प्रतिपादन है अत्यावश्यक है। श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री इस पर बड़े तिलमिलाए हैं किन्तु यह स्पष्ट है कि उन से इसका कोई उत्तर नहीं बन पड़ा। आप ने 'सिद्धान्त' के ७ मई १६४६ के अङ्क में लिखा है कि 'न वै कन्या न युवति' '(मनु० ११

३६) इस वचन में वृद्धा स्त्री का होतृ-कर्म मनु को कैसे विवक्षित हो सकता है जब कि उसके मत में स्त्री मात्र को अधिकार नहीं। तो क्या आप फिर वृद्धा का उपनयन तथा अध्ययन कराओगे तब फिर कल्याणी देवी को अभी रोकिये। उसकी वृद्धा होने तक प्रतीक्षा कीजिये फिर देखा जायगा। आप कल्याणी को वा उस के पिता को नरक में न भिजवाइये। वे आपके सहारे रहें, आप से ऐसे लेख लिखवाएं और आप उनको नरक में भिजवाएं यह युक्त नहीं"

(पृ० ३०)

मैं निष्पक्षपात विचारशील विद्वानों से पूछता हूं कि क्या यह व्यङ्गपूर्ण भाषा और शैली विद्वानों को शोभा देती है जिसका प० दीनानाथ जी ने अनेक स्थानों पर अवलम्बन किया है? वेदाध्ययन और कर्मकाण्ड में अधिकार का प्रश्न हमारे लिये सिद्धान्त का प्रश्न है उसे वैयक्तिक समझ कर ऐसे ताने मारना प० दीनानाथ जी को शोभा नहीं देता और वह उनके पक्ष की दुर्बलता को सूचित करता है। मेरे लिये लल्लू आदि अपशब्दों का प्रयोग भी इसी कोटि में आता है। वेदाध्ययन तथा यज्ञादि विषयक प्रक्रिया के ज्ञान के लिये ब्रह्मचर्य काल सबसे अधिक उपयोगी है पर यज्ञादि करवाने तथा वेद पढ़ाने के लिये बहुत अभ्यास और अनुभव की अपेक्षा है इसलिये कन्या और युवति उसको नहीं करा सकतीं पर ज्ञान वृद्धा हो करा सकती है जैसे कि मनुस्मृति में ही कहा है कि 'यो वै युवाप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरं विदुः' जो युवावस्था में होते हुए भी विशेष विद्वान् है उसको विद्वान् वृद्ध ही मानते हैं। इसलिये आपके वृद्धावस्था तक श्रीमती कल्याणी देवी की प्रतीक्षा कराने विषयक ताने व्यर्थ और निस्सार हैं। हारीत संहिता, गोभिल गृह्यसूत्रादि से यज्ञोपवीत, उपनयनादि विषयक प्रमाण पहले दिये जा चुके हैं।

महामहोपाध्याय प० शिवदत्त जी शर्मा ने न्याय सिंधु (वेंकटेश्वर प्रेस सन् १९६४ का संस्करण) पृ० १६२ की टिप्पणी में जहाँ पूर्वोद्धृत "तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनम्, अग्नीन्धनं वेदाध्ययनम्। इत्यादि हारीत वचनों को उद्धृत किया गया है ठीक ही लिखा था कि 'अध्ययने वेदानामपि न दोष इति सूच्यते अन्यथा विवाह-प्रकरणोक्तनानामन्त्रपाठस्य वधूकर्तृकस्यानुपपत्तेः। किं च 'यज्ञकर्मणि पुनर्नापभाषन्ते' इति महाभाष्योक्त्या यज्ञकर्मण्यपभाषणनिषेधे पतिसहितगार्हस्थ्यसंस्कारस्यादोषे सकलं कर्मैव भ्रष्टं स्यात्।'

अर्थात् स्त्रियों के वेदाध्ययन में भी दोष नहीं अन्यथा विवाहादि संस्कार में ठीक २ मन्त्रों का उच्चारण न कर सकने से सारा कर्म ही भ्रष्ट हो जाय।

आशा है धुरन्धर पौराणिक विद्वान् महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी के इस युक्ति युक्त लेख से प० दीनानाथ जी का कुछ समाधान हो जाएगा और वे अनुचित ताने मारना बन्द कर देंगे।

इस प्रसङ्ग की समाप्ति के पूर्व मनुस्मृति के अनेक संस्करणों में 'अमन्त्रिका तु कार्येयम्' और 'वैवाहिको विधि, स्त्रीणाम्' के ठीक बाद पाये जाने वाले एक श्लोक का जो वेदानुकूल होने से मान्य है उल्लेख कर देना मैं आवश्यक समझता हूँ जो निम्न लिखित है:—

"अग्निहोत्रस्य शुश्रूषा, सन्ध्योपासनमेव च।
कार्यं पत्न्या प्रतिदिनं बलिकर्म च नैत्यिकम्॥"

यह श्लोक 'स्मृति रत्न' में मनु के नाम से उद्धृत है ऐसा चौखम्भा संस्कृत सीरीज बनारस में संवत् १९९२ में प्रकाशित कुल्लूक टीका सहित मनुस्मृति के 'परिशिष्ट' पृ० संख्या १ में बताया गया है और उसी संस्करण के पृ० ३८ पर 'वैवाहिको विधि: स्त्रीणाम्' के बाद थोड़े से पाठ भेद से (इति कर्म च वैदिकम्") इसे कोष्ठक में उद्धृत किया गया है। इस श्लोक का अर्थ है कि अग्नि होत्र (देवयज्ञ) सन्ध्योपासना (ब्रह्मयज्ञ) और बलिवैश्वदेव यज्ञ ये दैनिक वैदिक यज्ञ पत्नी को प्रतिदिन करने चाहिये। मालूम होता है कि संकुचित विचार वाले स्वार्थी लोगों ने इस वेदानुकूल आशय वाले श्लोक को मनुस्मृति में से पीछे से निकाल कर उसके स्थान पर वेद विरुद्ध श्लोक मिला दिये जिन की ऊपर आलोचना की गई है। स्त्रियों के विवाह संस्कार को छोड़ कर अन्य संस्कार क्यों मन्त्र रहित हों इस की आलोचना करते हुए सुप्रसिद्ध सनातन धर्मी विद्वान् श्री प० गङ्गाप्रसाद जी शास्त्री ने 'अछूतोद्धार निर्णय' में बड़ा अच्छा लिखा है कि "अब यहां प्रश्न होता है कि स्त्री का विवाह तो क्यों वेद मन्त्रों से करना बताया और अन्य संस्कार क्यों मन्त्र रहित विधान किये इस का उत्तर तेरी चुप, मेरी चुप के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं हो सकता। गृह्यसूत्रों में विवाह में कन्या के उच्चारण करने के अनेक मन्त्र लिखे हैं। गृह्यसूत्रों में ही क्या? स्वयं वेद मन्त्रों के अर्थों से यह प्रतीत हो जाता है कि वे कन्या के उच्चारण करने के मन्त्र हैं। इस से विवाह के तो अमन्त्रक बनाने में आधुनिक स्मृतिवचनकारकों की दाल नहीं गली, परन्तु गर्भाधानादि में स्त्री के उच्चारण के लिए मन्त्र नहीं हैं अतएव उन को अमन्त्रक लिख मारा। यदि आप पारस्करादि गृह्यसूत्रों को देखेंगे तो उनमें कन्या के भी समस्त संस्कार समन्त्रक ही पाएंगे। इसके अतिरिक्त कन्योचित यज्ञोपवीत वेदारम्भादि का निषेध किया है उन का भी शास्त्रों में विधान पाया जाता है"—

पुरा कल्पे तु नारीणां, मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां, सावित्रीवाचनं तथा।'
(निर्णयसिन्धु पृ० ४१४)

अर्थात् पुराकल्प ग्रन्थों में स्त्रियों को यज्ञोपवीत का विधान कहा गया है। इसी प्रकार वेदाध्ययन और गायत्री उपदेश का भी इनको अधिकार है। यहां हमको स्त्री अधिकार के विषय में अधिक नहीं लिखना है केवल इतना ही कथन अभीष्ट है कि जिस प्रकार स्त्री को सब संस्कारों के समन्त्रक अधिकार शास्त्रों में मिलने पर भी आधुनिक स्मृतिकारों ने उन को अमन्त्रक संस्कार कराने बताये—उसी प्रकार शूद्र को भी अमन्त्रक संस्कार पीछे लिख दिये हैं।"

(अछूतोद्धार निर्णय सम्वत् १९८९ पृ० ४८)

मनुस्मृति के 'न वै कन्या न युवति' इस श्लोक में आये 'असंस्कृत' पद का अर्थ कुल्लूक भट्टादि ने 'अनुपनीत' अर्थात् उपनयन संस्कार रहित ऐसा किया है। यही अर्थ यदि अन्य स्मृति वचनों में माना जाए तो कन्याओं का उपनयन और न होने पर उसका वृषली या शूद्रा समझा जाना स्पष्ट सिद्ध होता है। उदाहरणार्थ निम्न

स्मृति वचनों को लीजिये जहाँ असंस्कृत शब्द का प्रयोग हुआ है और उसकी निन्दा है—

प्रजापति स्मृति —

पितुर्गेहे तु या कन्या रज पश्यत्यसंस्कृता।
सा कन्या वृषली ज्ञेया तत्पतिर्वृषलीपतिः॥ ८४

वृद्धयम स्मृति —

पितुर्गेहे तु या कन्या पश्यत्यसंस्कृता रज ।
भ्रूणहत्या पितुस्तस्या कन्या सा वृषली स्मृता ॥
३ । १८ ॥

यस्ता विवाहयेत्कन्या ब्राह्मणो मदमोहित
असम्भाष्यो ह्यपाङ्क्तेय, स विप्रो वृषलापति ॥
३ । १९ ॥

देवल —

पितुर्गेहे तु या कन्या रज पश्यत्यसंस्कृता।
सा कन्या वृषली ज्ञेया, तद्भर्ता वृषली पति ॥

इन श्लोकों में यह कहा गया है कि जो कन्या पिता के घर में उपनयन संस्कार के बिना ऋतुमती हो जाती है वह वृषली या शूद्रा कहाती और उसका पति शूद्रापति समझा जाता है। वह भाषण करने योग्य और ब्राह्मणों की पंक्ति में बैठाने योग्य भी नहीं रहता। उसके पिता को भी गर्भ हत्या का पाप लगता है।

मैं जानता हूँ कि इन वाक्यों मे असंस्कृत का अर्थ पौराणिक भाई अविवाहिता कर देते हैं किन्तु कोई कारण नहीं प्रतीत होता कि मनु ११। ३६। की टीका में असंस्कृत का जो 'अनुपनीत' अर्थ लिया है वही यहाँ क्यो न लिया जाए जब कि वह प्राचीन आर्य मर्यादा के अनुकूल है। मार्कण्डेय का निम्न वचन जो हेमाद्रि प्रायश्चित्त काण्ड में उद्धृत किया गया है इस बात को स्पष्ट करता है कि असंस्कृता' का अर्थ 'अविवाहिता' नहीं 'अनुपनीता' ही लेना ठीक है। श्लोक निम्न हैं—

'या कन्या पितृवेश्मस्था यदि पुष्पवती भवेत्।
असंस्कृता परित्याज्या, न पश्येत्तां कदाचन॥
विवाहे च न योग्या स्यात्, लोकद्वयविगर्हिता।
एतां परिणयन् विप्रो न योग्यो हव्यकव्यो ॥

(यहाँ 'विवाहकालविमर्श' मैलापुर मद्रास पृ० ७६ से उद्धृत)

अर्थात जो कन्या पिता के घर में रहती हुई बिना उपनयन संस्कार के ऋतुमती हो जाती है वह परित्याग करने योग्य वा निन्दनीय हो जाती है। उसकी दोनो लोकों में निन्दा होती है वह विवाह के योग्य भी नहीं रहती। जो ब्राह्मण उसके साथ विवाह करता है वह हव्य कव्य के योग्य वा पूज्य नहीं रहता।

इस प्रकार ये श्लोक कन्याओं के उपनयन संस्कार की प्राचीन मर्यादा का स्पष्ट निर्देश करते हैं वस्तुत द्विजों का विवाह द्विजाओं के साथ होना ही वेदादि शास्त्र सम्मत और सब प्रकार से युक्ति युक्त है। यजुर्वेद १९। ४७। में पति पत्नी को सम्बोधन करते हुए कहा है 'सं वा मनांसि संव्रता समु चित्तान्याकरम्॥' अर्थात मैं परमेश्वर तुम दोनो के मन व्रत और चित्त को एक बनाता हूँ। व्रत का अर्थ अहिंसा सत्य स्वाध्यायादि व्रत और शुभ कर्म होता है। पति विद्वान और पत्नी अशिक्षिता होने पर उन का व्रत एक कैसे हो सकता है? अथर्व १४। १। ४२। के आशासाना सौमनसं प्रजां सौभाग्यं रयिम्। पत्युरनुव्रता भूत्वा सन्नह्यस्वामृताय कम्॥' में जो पत्नी को पति की अनुव्रता होकर सब प्रकार की प्रसन्नता, सुसन्तान, सौभाग्य और

ऐश्वर्य की प्राप्ति का उपदेश है वह भी तभी सम्भव है जब वह विदुषी होकर पति के वेदाध्ययन अध्यापन यज्ञादि व्रतों में सहयोग दे सके। सप्तपदी के अवसर पर जो ७ बार 'सा माम् अनुव्रता भव' ऐसा वर द्वारा कहा जाता है उसका तात्पर्य भी यही है।

उद्वहेत द्विजो भार्या, सवर्णां लक्षणान्विताम्।
मनु० ३।४।

इस मनु वचन में द्विज को सवर्णा से विवाह का जो विधान है वह कन्या के यज्ञोपवीत संस्कार रहिता और अशिक्षिता होने पर सङ्गत नहीं हो सकता। वसिष्ठ स्मृति अ० ८ में 'गृहस्थो विनीतक्रोधहर्षो गुरुणा अनुज्ञातः स्नात्वा असमानार्षाम् अस्पृष्ट मैथुना यवीयसीं सदृशीं भार्यां विन्देत।' जो सदृशी भार्या के साथ विवाह का उपदेश है वह द्विज के ब्रह्मचारिणी यज्ञोपवीत-संस्कार युक्ता तथा वेदाध्ययन करने वाली कन्या के साथ विवाह पर ही लागू होता है वेदज्ञ विद्वान् की सदृशी भार्या वेदज्ञान तथा यज्ञोपवीत-संस्कार-रहिता अविदुषी नहीं हो सकती। हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र १९।२ में "तामभ्याम् अनुज्ञातः भार्यामुपयच्छेत सजाता नग्निका ब्रह्मचारिणीम् असगोत्राम् ॥" सूत्र द्वारा ब्रह्मचारिणी कन्या के साथ विवाह का विधान है जिसका अर्थ 'असस्पृष्ट मैथुना' के अतिरिक्त ब्रह्म अर्थात् वेद का अध्ययन करने वाली स्पष्ट ही है। नग्निका का अर्थ मातृदत्तादि टीकाकारों ने भी मैथुनार्हा किया है। 'ब्रह्मचारिणी' के साथ विवाह का विधान महर्षि गार्ग्यायण प्रणीत 'प्रणववाद' के षष्ठ तरङ्ग के ३य प्रकरण में 'ब्रह्मचारिणाम् उद्वाहस्तु ब्रह्मचारिणीभिः सह प्रशस्तो भवति" सति च द्वयो र्ब्रह्मज्ञाने न हर्षशोकौ नापि चानियतकाले विकारोत्पत्तिर्न च रोगादि भवनम्। (प्रणववाद पृ० २४५) इन शब्दों में स्पष्टतया पाया जाता है जहां ब्रह्मचारियों का विवाह ब्रह्मचारिणियों के साथ ही प्रशस्त बतलाया गया है और दोनों के ब्रह्मज्ञान (वेद और परमेश्वर विषयक ज्ञान) होने पर हर्ष शोक, काम विकार और रोग की उत्पत्ति को असम्भव कहा है। यहां यह भी स्पष्ट है कि ब्रह्मचारिणी का अर्थ केवल कुमारी नहीं है। महाभारत के

अत्रैव ब्राह्मणी सिद्धा, कौमारब्रह्मचारिणी।
योगयुक्ता दिवं याता, तपःसिद्धा तपस्विनी ॥
शल्य पर्व ५४।

बभूव श्रीमती राजन्, शाण्डिल्यस्य महात्मनः।
सुता धृतव्रता साध्वी, नियता ब्रह्मचारिणी ॥
शल्य पर्व० ५४।

भारद्वाजस्य दुहिता, रूपेणाप्रतिमा भुवि।
श्रुतावती नाम विभो, कुमारी ब्रह्मचारिणी ॥
शल्य पर्व ४८।२

इन श्लोकों से भी यह बात स्पष्टतया प्रमाणित होती है जहां सिद्धा, श्रीमती, श्रुतावती इत्यादि के लिये कुमारी के साथ ब्रह्मचारिणी शब्द का प्रयोग है जो वेदज्ञानसम्पन्नता का सूचक है। आपस्तम्ब गृह्यसूत्र ४।१६, भारद्वाज गृह्यसूत्र, वाराह गृह्यसूत्र १४।२६, पारस्कर १।६।३ इत्यादि में विवाह के अवसर पर वर-वधू को 'सामाहमस्मि ऋक् त्वम्' इस प्रकार कहता है। उसे वेदज्ञान का अधिकार न होने पर तथा उससे शून्या होने पर ऋग्वेदस्वरूपिणी कहना सर्वथा असङ्गत हो जाता है। इस लिये हारीत संहिता २१।२० में स्पष्ट कहा है कि—

"न शूद्रसमाः स्त्रियः । न हि शूद्रयोनौ ब्राह्मणक्षत्रियवैश्या: जायन्ते । तस्माच्छन्दसा स्त्रियः संस्कार्याः ॥

अर्थात् स्त्रियां शूद्रों के समान नहीं । शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य नहीं उत्पन्न होते। इस लिये स्त्रियों के भी सब संस्कार वेद मन्त्र सहित होने चाहियें।

वस्तुतः वेदज्ञानसम्पन्ना विदुषी माता ही बाल्यावस्था में बालकों पर श्रेष्ठ प्रभाव डाल सकती है। इसी लिये उसके विषय में लिखा है कि-

सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते ॥

मनु० २।१४५

अर्थात् आचार्य का मान १० उपाध्यायों के समान है पिता का सौ आचार्यों के बराबर और माता अपने गौरव से १००० पिताओं से भी बढ़कर होती है। ऐसी माता को वेद ज्ञान-रहिता अथवा अशिक्षिता रखना समाज के लिये कितना घातक है इसे श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री जैसे विद्वान् क्या नहीं समझते यह बड़े आश्चर्य और खेद की बात है। महाभाष्यादि में स्त्रियों के उपाध्याया, आचार्या तथा व्याकरण, मीमांसादि शास्त्रों की पण्डिता होने का स्पष्ट निर्देश है उदाहरणार्थ 'इङश्च' ३।३।२१ के महाभाष्य में लिखा है "उपेत्याधीयतेऽस्या उपाध्यायी उपाध्याया ॥" अर्थात् जिस के पास आकर कन्याएं वेद के एक देश तथा वेदाङ्गों का अध्ययन करें वह उपाध्यायी वा उपाध्याया कहलाती है। उपाध्याय का लक्षण मनुजी ने "एकदेशं तु वेदस्य, वेदाङ्गान्यपि वा पुनः । योऽध्यापयति वृत्त्यर्थम्, उपाध्यायः स उच्यते ॥" २।१४१ में किया है। उस लक्षणयुक्त स्त्री उपाध्याया होती है। आचार्यादणत्वं च (अष्टाध्यायी ४।१।२।४९ पर वार्तिक) पर महाभाष्य में आचार्यादणत्वं चेति वक्तव्यम्-आचार्यानी। इस पर सिद्धान्त कौमुदी कार ने वार्तिक उद्धृत कर के लिखा है कि आचार्यस्य स्त्री-आचार्यानी पुंयोग इत्येव आचार्या स्वयं व्याख्यात्री (सिद्धान्त कौमुदी स्त्री प्रत्यय पृ० ५६ पण्डित पुस्तकालय काशी द्वारा संवत १९९९ में प्रकाशित) अर्थात् जो स्वयं वेदों का व्याख्यान करने वाली हो उसे आचार्या कहेंगे। आचार्य का लक्षण मनु महाराज ने 'उपनीय तु यः शिष्यं, वेदमध्यापयेद् द्विजः। सकल्पं सरहस्यं च, तमाचार्यं प्रचक्षते ॥ (२।१४०) ऐसा किया है अर्थात् जो शिष्य का उपनयन संस्कार कर के कल्प अर्थात् यज्ञ विद्या (कल्पो यज्ञ विद्येति कुल्लूक. सकल्पम्—यज्ञ कल्पसहितम् इति राघवः) और रहस्य वा गूढ़ तात्पर्य सहित जो वेद पढ़ाता है वह आचार्य कहाता है। ऐसे ही कल्प और रहस्य सहित वेद पढ़ाने वाली स्त्री को आचार्या कहते हैं। यहां व्याख्यात्री से साधारण व्याख्यान देने वाली का ग्रहण करें तो बड़ा अनर्थ हो जाएगा। उस अवस्था में किसी भी छोटी मोटी व्याख्यान देने वाली स्त्री को (जिनकी संख्या आज कल लाखों की है) आचार्या कहना पड़ेगा। अमरकोष द्वितीय काण्ड मनुष्य वर्ग श्लोक ५७७ में इस विषय में कहा है कि—

'उपाध्यायाप्युपाध्यायी, स्यादाचार्यापि च स्वतः।
आचार्यानी तु पुंयोगे, स्यादर्यी क्षत्रियी तथा ॥

अमरकोष २।५७७

इसकी टिप्पणी करते हुए श्री पं० काशीनाथ जी शास्त्री शास्त्राचार्य अध्यापक काशी हिन्दू

विश्व विद्यालय रणवीर संस्कृत पाठशाला ने लिखा है कि उपाध्यायी और उपाध्याया ये २ विद्या पढाने वाली स्त्री के नाम हैं। मन्त्र की व्याख्या करने वाली स्त्री को आचार्या कहते हैं। (देखो अमर कोष टिप्पणीकार-पं० काशीनाथ शास्त्री शास्त्राचार्य प्रकाशक फर्म बा० बैजनाथ प्रसाद राजा दर्वाजा बनारस सिटी विक्रमी संवत् १६६८ पृ० १६६) स्व० महामहोपाध्याय प० शिवदत्त जी शर्मा ने भी सिद्धान्त कौमुदी को सम्पादन करते हुए ठीक इसी आशय की टिप्पणी देकर अन्त में लिखा है कि—

उपनीय तु यः शिष्यम् इति मनु वचनेनापि।
स्त्रीणां वेदाध्यापनाधिकारो ध्वनित ॥
(सिद्धान्त कौमुदी टिप्पणी स्त्री प्रत्यय पृ० ८४)

अर्थात् इस से स्त्रियों का वेद पढ़ाने का अधिकार सूचित होता है। इस प्रकार शास्त्री जी की इस विषयक टालमटोल सर्वथा व्यर्थ सिद्ध होती और स्त्रियों का वेद पढ़ने पढ़ाने का अधिकार स्पष्टतया सिद्ध होता है। क्या शास्त्री जी 'आचिनोति अर्थात्' इस यौगिक अर्थ को लेकर अंग्रेजी शब्दों के अर्थ बताने वालों को भी आचार्य के पवित्र नाम से संबोधित करेंगे ? (शेष फिर)

महर्षि दयानन्द की जन्म-तिथि

[ले०—प्रो० भीमसेनजी शास्त्री, विद्याभूषण एम० ए०, कोटा]

(१) महापुरुषों की निरभिमानिता तथा हमारी घोर उपेक्षा

हमारे आदर्श ऋषि, मुनि, प्राचीन कवि आदि अपने विषय में सर्वथा मौनावलम्बी रहे हैं। हम पाणिनि, गौतम कणाद, वाल्मीकि, भास, कालिदास आदि के विषय में—उनके माता-पिता, निवास-स्थान, समय आदि के विषय में—कुछ भी नहीं जानते। महर्षि दयानन्द को भी संन्यासाश्रम के नियम, अपने बन्धुवर्ग के संपर्क का महान् भय आदि भी अधिक सावधान प्रत्युत सशङ्क बनाए रखते थे, अतः धर्म तत्त्वों को अपने दिव्य आलोक से आलोकित करने वाले अपूर्व वेदव्याख्याता+ दयानन्द दिवाकर ने अपने भक्तों का प्रबल अनुरोध होने पर भी अपने प्रारम्भिक जीवन पर पूर्ण प्रकाश न डाला।

आर्य-समाजी न होते हुए भी महर्षि के अनन्य भक्त, अद्भुत लगन के धनी श्री देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय ने, १५ वर्ष से अधिक काल तक तप करके महर्षि के पितृकुल, जन्म-स्थान आदि अनेक महत्त्व पूर्ण बातों का निर्णय करके आर्य-जगत् को परम उपकृत किया है तथापि जगद् गुरु के जीवन के पर्याप्त भागों पर अभी अधिकतम खोज व गम्भीर मनन किए जाने की आवश्यकता है। खेद का विषय है कि महर्षि की भक्ति का अदभ्र दम्भ धारण करने वाले, एवं कृतज्ञता की सर्वदा दुन्दुभि बजाने वाले हम आर्यसमाजी इस विषय में पूर्ण तटस्थ बने हुए हैं। इस विषय पर ध्यान देने वाले व्यक्तियों की संख्या नगण्य है, और उनके साधन भी अति सीमित हैं, अत यथोचित फल नहीं होता। कई सभाएं, समाजें तो इस ओर कर्णपात भी करने को तैय्यार नहीं हैं। हमें अपनी अवसादजनक प्रमाद-निद्रा को त्वरित त्यागना योग्य है।

भक्तों के प्रबल अनुरोध के वश हो परोपकारैक-समर्पित-वपु दयानन्द ने अपनी जीवन-कथा पर पूना के व्याख्यान (सं० १९३२ श्रावण शुक्ल ३ बुध=४-८-१८७५ में) तथा "थियासोफिस्ट" पत्र के लिए लिखवाए गए लेखों सन् १८७९ व १८८० में प्रकाश डाला है। "थियासोफिस्ट" में प्रकाशित लेखों में अपने जन्म तथा गृहत्याग के संवतों (संवत् १८८१ तथा १९०३ †क्रमशः) का तो निर्देश किया है, पर मास पक्षादि के विषय में मौनी रहे हैं तथापि महर्षि के आत्म-

† ऋषि ने सन् १८७९ (निर्वाण से ४ वर्ष पूर्व) भी लिखा है—"घर का बड़ा भय था, जो कि अब तक है"। [देखो श्री प० भगवद्दत्त जी सम्पादित ऋषि का आत्म-चरित "ऋषि दयानन्द का रचित जन्म-चरित्र" नामक, पृ० २३ पंक्ति १७-१८]

+ महर्षि का भाष्य वेद मन्त्रों के त्रिविध अर्थों को सूक्ष्म रूप में संकेत करता है।

† चैत्रादि संवतों का निर्देश है, गुजरात में प्रचलित कार्तिकादि का नहीं, यह हम सविस्तर पुनः दिखावेंगे।

चरित में ऐसी सामग्री विद्यमान है जो हमे काल परिच्छेदार्थ पर्याप्त आधार देती है।

महर्षि की जन्म-तिथि

इस विषय में ऋषि के आत्म-चरित मे शिव रात्रि जागरण-वर्णन की भूमिका प्रथम अवलोकनीय है—"मेरे कुल में शैव-मत था, उसी की शिक्षा भी किया करते थे और पिता आदि यह भी कहा करते थे कि मिट्टी का लिङ्ग बना के तू पूजा कर पर मेरी माता कहा करती थी कि यह प्रातःकाल भोजन कर लेता है इस से पूजा कभी न हो सकेगी। पिता हठ किया करते थे कि पूजा अवश्य करनी चाहिए क्योंकि कुल की रीति है। तथा कुछ २ व्याकरण आदि का विषय और वेद का पाठमात्र भी मुझ को पढ़ाया करते थे। पिता जी अपने साथ मुझको जहाँ तहाँ मन्दिर और मेल मिलापों में ले जाया करते थे और यह भी कहा करते थे कि शिव की उपासना सर्वश्रेष्ठ है" इस प्रकार चौदहवे वर्ष की अवस्था के प्रारम्भ तक यजुर्वेद की सहिता सपूर्ण और कुछ २ अन्य वेदों का भी पाठ पूरा हो गया था, और शब्द रूपावलि आदि व्याकरण के छोटे २ ग्रन्थ भी पूरे हो गए थे, जहाँ २ शिवपुराण आदि की कथा होती थी, वहाँ पिता जी मुझको पास बैठा कर सुनाया करते थे। घर में भिक्षा की जीविका नहीं थी, किन्तु जमींदारी व लेन देन से जीविका का प्रबन्ध करके सब काम चलाते थे। मेरे पिता ने माता के विरोध करने पर भी पार्थिव-पूजन का आरम्भ करा दिया था। मेरे पिता ने इस वर्ष* मुझे शिवरात्रि का व्रत रखने को कहा।" [ऋषि दयानन्द का आत्म चरित श्री प० भगवद्दत्त सपादित पृ० ११, प० ३—२२]

उद्धृत सदर्भ के अन्त्य वाक्य से संवत् १८९४ की शिवरात्रि (गुरुवार २२ फरवरी १८३८ ख्री०)* के जागरण का वर्णन प्रारम्भ होता है। वाचक तनिक ध्यान से देखें कि अन्तिम वाक्य के अतिरिक्त उपर्युक्त सम्पूर्ण अवतरण शिवरात्रि वर्णन की भूमिका मात्र है। शिवरात्रि जागरण का वर्णन करने से पूर्व महर्षि ने इस भूमिका में स्ववश की धर्मनिष्ठा तथा अपने पूज्य पिता जी की घोर शिव परायणता का वर्णन किया है। इन बातों का परिचय देते हुए महर्षि ने उस शिवरा-

*इस वर्ष=सं० (१८८१+१३=) १८९४।

*कोटे के बने पचाङ्ग में त्रयोदशी गुरुवार को सूर्योदय से ३९ घड़ी ५९ पल मानी गई है, अतः उसी रात शिवरात्रि जागरण व्यवस्थित हुआ था। टकारे का पलभा कोटे से भिन्न है ही, और यदि स० १८९४ के कोटे तथा टकारे के पचाङ्ग भिन्न करण ग्रन्थ के अनुसार बने हों तो तिथिमान में भेद हो सकता है। यदि टकारे के पंचाङ्ग में त्रयोदशी का मान कुछ घड़ी अधिक हो तो संभव है कि टकारे में शिवरात्रि का जागरण शुक्रवार २३ फरवरी १८३८ को हुआ हो। टंकारा आर्य समाज (अथवा अन्य सज्जन आर्य पुरुषों) को टंकारे में प्रयुक्त स० १८८१ से १९०३ तक के हस्तलिखित पचाङ्ग जितने भी मिल सकें, अवश्य संग्रह कर लेने चाहियें। यदि पञ्चाङ्गों के स्वामी देना न चाहें तो नोट कर लेना चाहिये कि किन संवतों के पञ्चाङ्ग किनके पास हैं, जिससे आवश्यकता होने पर वे देखे जा सकें और ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि उनमें से कोई आगे नष्ट न होने पावे।

त्रि-जागरण के समय अपने वय तथा विद्या-सम्बन्धी योग्यता का भी निर्देश कर दिया है, अर्थात् उस समय के अपने सम्पूर्ण वातावरण की रूपरेखा पूर्णत: निरूपित करदी है। इस प्रकार चौदहवें वर्ष की अवस्था के प्रारम्भ तक का भाव यही है कि इस प्रकार (कट्टर शिव निष्ठा के वातावरण में बाल्य काल अतिवाहित करते हुए बोध कराने वाली वर्णयिष्यमाण शिवरात्रि) चौदहवें वर्ष की अवस्था के प्रारम्भ में आई और उस समय तक बाल-ऋषि-दयानन्द विद्या प्राप्ति की दृष्टि से इतनी २ योग्यता प्राप्त कर चुके थे। इस वाक्य से कुछ आगे 'घर में भिक्षा की जीविका नहीं थी किन्तु जमींदारी व लेन देन से जीविका का प्रबन्ध करके सब काम चलाते थे" -इस वाक्य द्वारा भी ऋषि अपने कुल की धर्मनिष्ठा का ही संकेत कर रहे हैं, घर की समृद्धि का निरूपण उनका लक्ष्य नहीं है। यदि वैभव ही वर्णन करना होता तो वे लिखते कि मेरे पिता १०-१० सहस्र रुपये से अधिक ऋण एक समय में, एक एक व्यक्ति को, दे सकते थे, वे टकारा परगने के शासक थे † इत्यादि। उनका अभिप्राय यही है कि जो ब्राह्मण यजमान वृत्ति अथवा भिक्षा से अपना निर्वाह करते हैं, उन्हें तो हृदय में सच्ची भक्ति न होते हुए भी पूजा-जागरण आदि का आडम्बर करना ही पड़ता है पर ऋषि के कुल का निर्वाह भू-सम्पत्ति तथा साहूकारी से था अर्थात् उनके पितृकुल की धार्मिकता जीविका-प्रेरित नहीं थी, वह वास्तविक भक्तिमूलक थी। उद्धृत वाक्यों से पूर्व, मध्य में तथा पश्चात् भी कर्षन जी के मूल जी को पक्का शैव बनाने के प्रयत्नों का ही प्रतिपादन है।

पाठक उद्धृत सन्दर्भ को अगले वर्णन से मिलाकर मनन करेंगे तो हमसे सहमत होंगे कि निश्चय ही यह उद्धरण अगले शिवरात्रि वर्णन की भूमिका है और इस सन्दर्भ के भूमिकात्व को ध्यान में रखकर इस अंश को पढ़िए तो स्पष्ट है कि सं० १८९४ की शिवरात्रि महर्षि के चौदहवें वर्ष के प्रारम्भ में आई थी। फलत: सं० १८८१ की शिवरात्रि (बुधवार १६ फरवरी १८२५) से कुछ पूर्व महर्षि का जन्म हुआ था। इस प्रकार महर्षि के जन्म की एक सीमा निर्धारित हो जाती है कि उनका जन्म शिवरात्रि के समीप पूर्व में था।

प्रातःस्मरणीय महर्षि के गृह त्याग का वर्णन, जन्म को शिवरात्रि के संनिकट सूचित करता हुआ, जन्म की दूसरी सीमा का अवधारण करता है। देखिए—

तीन कोस पर एक ग्राम में अपनी जमींदारी थी, वहाँ एक अच्छा पण्डित था। माता पिता की आज्ञा लेकर उस पण्डित के पास पढ़ने का आरम्भ कर दिया। फिर माता पिता ने बुलाके विवाह की तैय्यारी करी तब तक इक्कीसवाँ वर्ष पूरा हो गया। उस समय मैंने निश्चित जाना कि अब विवाह किये बिना ये लोग कदापि न छोड़ेंगे। एक मास में विवाह की तैय्यारी भी हो गई। फिर गुपचुप सं० १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के साम के समय भाग उठा [ऋषि का उपरि निर्दिष्ट आत्म चरित पृ० १७ पंक्ति १६ से पृष्ठ १८ पंक्ति ६ तक]

†पिता की समृद्धि आदि का वर्णन दूसरे लेख में किया जाएगा।

श्री ब्रह्मचारी मूलशंकर अपने इक्कीसवें वर्ष के आरम्भ में टंकारे से तीन कोस पर+ अध्ययनार्थ गए थे। उनका यह अध्ययन पूरे एक वर्ष भी न चल सका। और माता पिता ने विवाहार्थ घर पर बुला भेजा। घर पहुँचने पर शीघ्र ही (संभवतः २-४ दिन में) उनका इक्कीसवाँ वर्ष समाप्त हुआ, ❀ अर्थात् वे सं० (१८८१+२१=) १९०२ में घर आये थे घर आने पर मास-डेढ़ मास ही बीता होगा कि श्री मूल जी ने निश्चय जान लिया कि जिस विवाह से उन्हें हार्दिक घृणा है, वह अब नहीं टल सकता। विवाह समय समीप जान श्री मूलजी निरुपाय हो घर से भाग निकले। इस अवतरण से स्पष्ट है कि—

(१) श्री मूलजी घर पर विक्रम संवत् १९०२ में लौटे थे।

( ) श्री मूलजी ने घर संवत् १९०३ में छोड़ा था।

+ इस ग्राम के नाम की खोज तथा अध्यापक के नामादि की खोज अद्यावधि नहीं की गई यह अब की जानी चाहिए।

❀ आज भी किसी सम्भ्रान्त श्रेष्ठ कुल में ज्येष्ठ पुत्र का वर्ष-ग्रन्थि ((anniversary)) पर घर से तीन कोस पर ठहरे रहना और घर न आना बिना विवशता के सहन न किया जावेगा, पुनः आज से १०० वर्ष पूर्व ऋषि के माता पिता जन्म तिथि से कुछ पूर्व कैसे न बुलाते। विवाह २ या २½ मास दूर था तो वैसे सम्भवतः १०-२० दिन और देर से बुलाते, पर शिवरात्रि की श्रद्धा तथा उससे बढ़कर वर्ष-वर्धन-मङ्गल ने और भी पूर्व बुलवा लिया।

(३) श्री मूलजी के घर लौटने तथा त्याग में अधिकतः दो मास का अन्तर था।

अतएव ४) [गृह त्याग की तिथि सं० १९०३ का प्रथम दिवस भी माना जावे तो भी] वे माघ शुक्ल प्रतिपदा से पूर्व घर नहीं आए तथा [सं० १९०२ का अन्तिम दिन भी घर आना कल्पना करें तो भी वे] सं० १९०३ ज्येष्ठ शुक्ला प्रतिपदा से पूर्व घर अवश्य छोड़ चुके थे।

तथा (५) ऋषि सं० १९०२ माघ शुक्ला प्रतिपदा के पश्चात् ही इक्कीस वर्ष के हुए।

अत (६) सं १८८१ माघ शुक्ला प्रतिपदा के पश्चात् ही उनका जन्म हुआ।

इस प्रकार शिवरात्रि तथा गृह त्याग के वर्णन महर्षि के जन्म को सं० १८८१ माघ शु० प्रतिपदा (२०-१-१८२५) तथा शिवरात्रि (१५ २ १८२५) के मध्य में अर्थात् २७ दिन में सीमित कर देते हैं।

पौराणिकों में जन्म नाम, जन्मकाल के नक्षत्र के विचार से रखा जाता है, और महर्षि के कुल में ऊँची विद्वत्ता कर्मकाण्ड नृपतिगण तथा प्रजा जन का पौरोहित्य आदि अविरत साढ़े आठ सौ वर्ष से तो अवश्य चले आते थे, * अतः उनका नाम पौराणिक अनुशासनों का अतिक्रमण करके न रखा जा सकता था। ऋषि के घर के दो नाम थे—१ मूलशंकर २ दयाराम। इनमें से मूलशंकर जन्म नाम था। वैदिक धर्म के अनन्य सेवक स्व० श्री० पं० लेखराम जी ने ऋषि का घर का एक ही नाम मूलशंकर लिखा है। यही नाम महर्षि के शिष्य वैयाकरण केसरी

स्व० पं० ज्वालादत्त ‡ तथा महर्षि के परम भक्त स्व० ठा० मुकुन्दसिंह जी रईस छलेसर आदि ने बताया था। अद्वितीय धुन के धनी स्व० प० देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय को दूसरे नाम दयाराम का भी पता चला और आरम्भ में उन्होंने इसी नाम को मुख्यता दी थी पर फिर वे भी मूलशंकर को ही प्रधान नाम मानने लगे थे+। वैसे भी जन्म नक्षत्रानुसारी नाम के आरम्भ में "मू" तो हो सकता है पर "द" (अकार विशिष्ट दकार) नहीं हो सकता। इन सर्व प्रमाणों से सुसिद्ध है कि मूलशकर ही ऋषि का जन्म नाम था और "मू" मघा नक्षत्र के तृतीय चरण में× जन्म का सूचक है अतः सं० १८८१ में शिवरात्रि से अव्यवहित पूर्व मघा नक्षत्र के तृतीय चरण में महर्षि दयानन्द का आविर्भाव हुआ था। यह मघा नक्षत्र माघ पूर्णिमा गुरुवार को सूर्योदय से ५३ घटिका ५० पल (=२१ घन्टे ३२ मि०) से प्रारम्भ होकर शुक्रवार को सूर्योदय से ४६ घड़ी ५४ पल (=१६ घन्टे ५७ मिनट ३६ सेकिन्ड) तक रहा। शुक्रवार को दिनमान २७ घटिका ३० पल था। इस प्रकार महर्षि का जन्म सं० १८८१ फाल्गुन वदि (गुजरात में इसे माघ वदि* कहते हैं) प्रतिपदा शुक्रवार (४ फरवरी १८२५) को (सिंह राशि,† मघा नक्षत्र तृतीय चरण अर्थात् मध्याह्नोत्तर ३ बजकर १४ मिनट ४८ सेकिंड से रात्रि के ८ बजकर ४१ मिनट १२ सेकिन्ड के मध्यवर्त्ती समय में हुआ था‡।

* इस विषय पर आगामी लेख में प्रकाश डालेंगे।

‡ देखो प० घासीराम जी द्वारा अनुवादित तथा सकलित "महर्षि दयानन्द का जीवन चरित" पृ० ४ पंक्ति १४-१५ तथा इस पृष्ठ के नीचे का दूसरा पाद टिप्पणी। पुनः देखो पृ० ४ अन्तिम पंक्ति तथा पृ० ७४३ पंक्ति २६ परिशिष्ट स० १)।

+ प्रतिवादि भयंकर सर्ववादविजयी प० गणपति शर्मा जी अद्वितीय दार्शनिक तथा उत्तम वैयाकरण थे। वे वाराणसी के विद्वन्मूधन्य प० शिवकुमार जी शास्त्री से शास्त्रार्थ को गए थे, तो कदाचित् व्याकरण-सम्बन्धी आवश्यकता पड़ जावे इस सम्भावना से प० ज्वालादत्त जी को साथ ले गए थे।

× मा—मी—मू में मघा स्मृता।

* हम औदीच्यों (उत्तर देश वासियों) में पूर्णिमान्त मास का प्रचलन है गुजरात में अमान्त का। अतएव शिवरात्रि की तिथि हम (उदीच्य) फाल्गुन व० १४ कहते हैं। गुर्जर इस का माघ व० १४ को होना बताते हैं। होता एक ही दिन है।

† मघा च पूर्वा फाल्गुनी उत्तरापादे सिंह।

‡ टकारा के पञ्चाङ्गों के दिन मान, तिथि मान, नक्षत्रमान आदि में थोड़ा भेद हो सकता है और इस कथा में टकारा के पचाङ्ग ही प्रमाण होंगे। मैं पूर्व निवेदन कर चुका हूं कि टकारे के सं० १८८१ से १९०३ तक के सारे पंचाङ्ग संग्रह किए जाने चाहिए। यदि श्री० कर्षन जी पुरोहित के घर के पचाङ्ग मिल जावें तो उनमें ऋषि तथा उनके सहोदर, सहोदरी की जन्म तिथियाँ नोट मिल जाना संभव हो सकता है। प्रायः पुरोहित जन्म-तिथियाँ पञ्चाङ्गों पर ही नोट कर देते रहे हैं।

हैदराबाद-सत्याग्रह-स्मृति में !

—हथकड़ियों की झंकार !

(रचयिताः—कविवर शान्ति वीर आर्य "वीर" सम्भल)

(१)

अमर शहीदों का स्मारक, वैदिक वीर मनाते आज,
जिनके बलिदानों के द्वारा, अमर रही जाति की लाज,
ईश्वर जगतपिता वह बल दें, ऐसे ही सब वीर बनें,
देश, धर्म की लाज बचावें, बलधारी रणधीर बनें।
हम सब के हृदयों में उपजे, जाति प्रेम का नव अंकुर ॥
गूंजे भाग्य नगर में फिर, हथकड़ियो की झंकार मधुर ॥

(२)

जब निजाम ने आर्य जाति पर, अगणित अत्याचार किये।
राम, कृष्ण के प्यारे मन्दिर, मस्जिद के आकार किये।
कितने ही भोले भाई थे, यवनो के अधिकार हुए।
अधिकारी सारे मानो, औरंगजेबी अवतार हुए।
यवनो के पाशो मे फंस कर, कितने वीर गये यमपुर ॥
भाग्य नगर में गूंज उठी, हथकड़ियों की झङ्कार मधुर ॥

(३)

सुनकर इन अत्याचारो को, जग में हाहाकार मचा,
आर्य जाति ने सत्याग्रह का, उसी समय प्रस्ताव रचा,
यवनों से लोहा लेने को, आर्य वीर एकत्र हुए,
वेद धर्म की बलिवेदी पर, मिटने को सन्नद्ध हुए,
भारत के गृह गृह मे गूंजा, कर्मयोग का राग प्रचुर ॥
वीरो मे गूंजी फिर से, हथकड़ियो की झङ्कार मधुर ॥

(४)

नारायण स्वामी चाद करण, खुशहालचन्द से यो शबर।
श्री धुरेन्द्र, श्री कृष्ण, विनायक राव, वेदव्रत म नम्बर।
आर्य जाति के नेतागण, ले 'ओश्म्' ध्व [illegible] र म [illegible]कले।
हिन्दू माता के नौ निहाल सर को हाथो पर [illegible] [illegible]

देख देख वीरों की टोली, काँपे सब यवनों के उर ॥
जेलों के आगन में गूंजी- हथकड़ियों की झङ्कार मधुर ॥

(५)

छोड़ झाड़ घर बार चले, जेलों से नाता जोड़ लिया।
आर्य जाति के शेरों ने, ममता से मुंह को मोड़ लिया।
बलिदान किया जीवन अपना, उन वीरों ने हंसते हंसते।
अमर रहेगा "वीर" सृष्टि तक, नाम सभी का निश्चय से।
रक्षा बन्धन पुण्य दिवस है, वीरों की स्मृति सुन्दर ॥
गुंजा रही नभ मण्डल को, हथकड़ियों की झङ्कार मधुर ॥

आर्य कुमार जगत्

धार्मिक परीक्षाओं की नियमावली में परिवर्तन

समस्त आर्य कुमार सभाओं के संचालक और परीक्षार्थी निम्न परिवर्तनों को जो २९-६-४६ को परीक्षा समिति द्वारा स्वीकृत हुए हैं कृपया अङ्कित कर लें।

सिद्धान्त सरोज परीक्षा

'वदिक सूक्ति सुधा' पाठ्य पुस्तक नहीं रही।

सिद्धान्त भास्कर परीक्षा

वेद सन्देश (शारदा मन्दिर)

अथवा वेदोपदेश (स्वा० वेदानन्द जी कृत)

'पञ्चयज्ञ प्रकाश' के स्थान पर आर्यसमाज क्या है ? (म० नारायण स्वामी जी कृत)

वैदिक सिद्धान्त–स्व० डा० रामप्रसाद जी कृत या

वैदिक सिद्धान्त–सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित

'अमर जीवन' के स्थान पर 'हम सौ वर्ष कैसे जीवें ? (केदार नाथ गुप्त)

ऋषि दयानन्द जीवन चरित्र (किसी भी आर्य लेखक का)

सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा

आर्य पर्व पद्धति सार्वदेशिक सभा या आर्य पर्वों का परिचय (आर्य प्रतिनिधि सभा यु० प्रा०),

उपनिषद् ८ के स्थान पर ४ ईश, केन, कठ, प्रश्न,

'विश्व की पहेली' के स्थान पर 'आर्य सिद्धान्त विमर्श' सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित।

अधिक से अधिक सख्या में आर्य कुमारों, कुमारियों तथा अन्य युवक युवतियों को इन परीक्षाओं में सम्मिलित होकर लाभ उठाना चाहिये।

सूर्य देव शर्मा एम० ए० डी० लिट्

परीक्षा मन्त्री

आर्य कुमार परिषत् (अजमेर)

सार्वदेशिक के ग्राहकों से

सार्वदेशिक के निम्नांकित ग्राहकों का वार्षिक शुल्क जुलाई १९४९ में समाप्त हो जाता है। अतः सम्बन्धित ग्राहकों से निवेदन है कि वे शीघ्र ही अपना वार्षिक शुल्क ५) भेजकर आगामी वर्ष के लिये सार्वदेशिक चालू रखें। वी० पी० द्वारा पत्र भेजने में ग्राहकों को असुविधा हो सकती है क्यों कि वी० पी० की कूपन हमें बहुत समय में लौटती है और जब तक यह कूपन हमें लौट कर न मिल जाये आगामी मास का अंक उन को भेजना सम्भव न होगा। यदि वे चाहते हैं कि उन तक प्रतिमास लगातार अंक पहुँचता रहे तो निश्चित रूप से वे अपना चन्दा मनिआर्डर से भेज देवें। इससे धन और समय दोनों की बचत होगी। यदि मनीआर्डर अथवा कोई पत्र १५ अगस्त के अन्त तक हमें न मिला तो अगस्त के ३य सप्ताह में आगामी अंक वी०पी० से ही भेज दिया जावेगा। और आशा है ग्राहक महोदय वी०पी० अवश्य स्वीकार करेंगे।

ग्राहक सं० जिन का चन्दा मास जुलाई में समाप्त होता है।

२५३, ४५१, ८८४, ८८६, ९५१, १०९७, ११५९, ११७२, १२९८, १५९७, १६०६, १६१२, १६१८, १९३३, २१२४, २१३५, २१४५, २१५०, २४३४, २४३५, २४५९, २४६५,

आवश्यकता

मौरीशस में आर्य समाज के प्रचार के लिये एक आर्य सन्यासी की आवश्यकता अनुभव की जा रही है अतः कोई सन्यासी महानुभाव वहां प्रचारार्थ जाना चाहें तो इस सभा को शीघ्र सूचना देने की कृपा करें।

नारायण दत्त

का० मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएं

आर्य महासम्मेलन कराची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अखिल भारतीय सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति ने माननीय श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त के सभापतित्व में ता० १ जौलाई सन् १९४६ को निम्न प्रस्ताव स्वीकार किया।

अखिल भारतीय सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति की इस बैठक ने सिन्ध सरकार द्वारा लगे प्रतिबन्ध की परिस्थिति का सिंहावलोकन किया तथा पूर्ण विचार के पश्चात् निश्चय किया कि इस विषय में उचित पग बढ़ाने के लिये युद्ध समिति का निर्माण किया जावे।

आगे यह भी निश्चय हुआ कि अखिल भारतीय महा सम्मेलन का एक अधिवेशन कराची में किया जावे तथा युद्ध समिति के सिन्ध के सदस्यों को अधिकार दिया जावे कि वे आर्य कांग्रेस अधिवेशन के लिये स्वागत समिति का निर्माण करे, धन एकत्रित करे तथा उसके सम्बन्ध में समस्त आवश्यक प्रबन्ध करे। २ अगस्त को इसी सम्बन्ध में युद्ध समिति का अधिवेशन कराची में किया जाए।।

शिव चन्द्र
स० मन्त्री,
अ० भा० सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समति

आर्य वीरदल

आय वीर दल विषयक आर्य प्रतिनिधि सभा सयुक्त प्रान्त का १४।६।४६ का पत्र प्रस्तुत होकर पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि (क) यतः अब आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब और सयुक्त प्रान्त ने आर्य वीर दल के काय को मुख्य रीति से अपना रक्खा है अतः ये सभायें आर्य वीर दल के उद्देश्य से प्रान्तीय समितियां समझी जावें और ये अपने२ प्रान्तों में केन्द्रीय आर्य वीर दल समिति के सहयोग से काम करें। अन्य प्रान्तीय सभाओं को भी जो आर्य वीर दल का काम कर रहीं हैं या करना चाहें प्रान्तीय समिति स्वीकार किया जावे।

(ख) यह सभा प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं द्वारा संचालित आर्य वीर दलों और उन के कार्यकर्त्ताओं को नियमित (रिकोग्नाइज्ड) स्वीकार करती है और बरेली के श्री डा० श्याम स्वरूप जी अथवा श्री सुखदेव जी आर्य द्वारा संचालित आर्य वीर दल अथवा उसके सम्बन्ध की किसी समिति का केन्द्रीय आर्य वीर दल समिति और इस सभा के साथ कोई किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं और न उक्त सज्जनों को इस सभा ने आर्य वीर दलों के सगठित करने का आदेश दिया है और न यह सभा उन्हें किसी प्रकार अपने सगठित आय वीर दल आन्दोलन का अङ्ग स्वीकार करती है। प्रान्तीय सभायें और आर्य समाजें भी इनको ऐसा ही मान कर तदनुसार व्यवहार करें।

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।



'श्रावणी' उपाकर्म का सन्देशः—

श्रावण पूर्णिमा (१७ अगस्त) को इस वर्ष श्रावणी उपाकर्म का पर्व पड़ता है जिस दिन सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार हैदराबाद सत्याग्रह स्मारक दिवस भी मनाया जाता है। इस पर्व को सर्वत्र बड़े उत्साह के साथ मनाते हुए श्रावणी उपाकर्म के मुख्य सन्देश–स्वाध्याय-को विशेष रूपसे हृदयाङ्कित करना चाहिये। प्राचीन काल में इस दिन से वैदिक स्वाध्याय का विशेष रूप से प्रारम्भ (उपाकर्म) किया जाता था जो वर्षाऋतु की समाप्ति वा चातुर्मास्य तक नियमित रूप से चलता था। यज्ञोपवीत को भी इस पर्व के अवसर पर बदलना होता है जिससे उस के द्वारा सूचित कर्तव्यों को फिर से स्मरण किया जाए। यज्ञोपवीत के ३ सूत्र, ३ प्रकार की पवित्रता (शारीरिक, वाचिक और मानसिक) शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार की शक्तियों के सम विकास, ज्ञान, कर्म उपासना इन मुक्ति के तीन साधनों के समन्वय, इन तीन साधनों का उपदेश करने वाले वेदों के नियमित स्वाध्याय तथा देव ऋण, पितृ ऋण, ऋषि ऋण इन तीन ऋणों से सन्ध्योपासना, माता पिता आदि की सेवा और स्वाध्याय द्वारा उऋण होने का स्मरण कराते हैं। इन कर्तव्यों का स्मरण कराने के कारण ही यज्ञोपवीत को परम पवित्र चिन्ह माना गया है। प्रत्येक आर्य कुमार और कुमारी तथा नर नारी को इन कर्तव्यों का पालन करने में सदा तत्पर रहना चाहिये तथा स्वाध्याय का कभी परित्याग न करना चाहिये। वैदिक स्वाध्याय की मानसिक और आत्मिक शक्तियों के विकास के लिये उतनी ही आवश्यकता है जितनी भौतिक पौष्टिक भोजन की शारीरिक शक्ति के विकास के लिये। "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है" इस आर्य समाज के तृतीय नियम द्वारा महर्षि दयानन्द जी ने इस परम धर्म की ओर सब आर्यों का ध्यान आकर्षित किया था। खेद है कि अनेक आर्य इस परम धर्म की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। 'श्रावणी उपाकर्म' के इस सन्देश को श्रवण कर प्रत्येक आर्य को नियमित स्वाध्याय का व्रत ग्रहण करना चाहिये जिस से जीवन को उन्नत करने में विशेष सहायता मिल सके।

अनमेल विवाह विरोधी बिलः—

हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि बम्बई की लैजिस्लेटिव असेम्बली ने एक अनमेल विवाह विरोधी बिल पर विचार करने की अनुमति दे दी है जिसके अनुसार ४५ या इस से अधिक आयु का पुरुष १८ वर्ष से कम आयु की कन्या से विवाह न कर सकेगा। अभी तक इस विष-

यक क़ानून न होने के कारण विषम विवाह पर्याप्त संख्या में होते रहे हैं । ५०, ६०, ७० वर्ष की आयु के वृद्ध भी जिनके पैर कबरों मे लटक रहे होते हैं १३, १४ वर्ष की अबोध बालिकाओं के साथ विवाह करके उन के सौभाग्य पर कुठाराघात करते पाये गये हैं । ५ जुलाई १९२८ के 'हिन्दू' नामक सुप्रसिद्ध अंग्रेज़ी पत्र में जो मद्रास से निकलता है एक समाचार प्रकाशित हुवा था जिसका शीर्षक था "Widow within 10 minutes" अर्थात् १० मि० के अन्दर विधवा। समाचार इस आशय का था कि कुम्भ कोणम् (मद्रास संस्थान) मे एक ५० वर्ष के वृद्ध का १६ वर्ष की कन्या से विवाह हुआ। विवाह के १० मिनट उपरान्त भोजन के समय उस वृद्ध का देहान्त हो गया जिससे वह नववधू विधवा बन गई। इस प्रकार की अनेक खेद जनक घटनाए हिन्दू समाज में प्रचलित अनमेल विवाह की प्रथा के कारण होती रहती हैं। हम इस बिल का स्वागत करते हुए आशा करते हैं कि अन्य धारा सभाए भी ऐसे कानून को बनवा लेंगी और उसके साथ ऐसा भी नियम बना दिया जाएगा कि विधुरों ने यदि विवाह करना ही हो तो विधवाओं के साथ करें कुमारियों के साथ नहीं। ५० से अधिक आयु के वृद्धों का विवाह किसी अवस्था में भी न होने देना चाहिये।

डा० देशमुख का विवाह विषयक नवीन बिलः—

केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य डा० जी० वी० देशमुख ने ६ मार्च १९४९ को एक बिल धारा सभा में प्रस्तुत किया है जिसका नाम 'विशेष विवाह सुधार ऐक्ट' है । इस के उद्देश्यों का वर्णन करते हुए डा० देशमुख ने कहा है कि शिक्षित जनता का बहुमत विवाह विषयक वर्तमान नियमों मे सुधार चाहता है अतः इस बिल का उद्देश्य विवाह सम्बन्धी नवीन विचारों से शिक्षित जनता को विविध मतानुयायियों की धार्मिक भावना मे हस्तक्षेप न करते हुए लाभ पहुचाना है।

इस बिल की मुख्य बात विवाह को (चाहे वह किसी भी धार्मिक रीति से हुआ हो और चाहे उसको हुए कितने ही वर्ष व्यतीत हो चुके हों) रजिस्टर्ड कराना है। यह बात सुनने में साधारण और निर्दोष सी प्रतीत होती है पर जब बिल की धारा १५ ए का ध्यान में रक्खा जाए तब इसकी गम्भीरता समझ मे आती है। वह धारा यह है कि "इस ऐक्ट के अनुसार विवाह के रजिस्टर्ड होने पर पति पत्नी का पूर्व विवाह विच्छिन्न समझा जाएगा और यह माना जाएगा कि रजिस्टर्ड होने के दिन से उन का विवाह हुआ है तथा उन पर और उन की सन्तान पर विशेष विवाह ऐक्ट के सब नियम लागू होंगे।"

इस धारा पर विचार करने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसके द्वारा विवाह सस्कार की धार्मिकता तथा पवित्रता में अवश्य हस्तक्षेप होगा और तलाक की प्रथा का असरल मार्ग से सूत्रपात होगा जो अवैदिक होने के अतिरिक्त पारिवारिक जीवन मे खलबली पैदा करने वाली वस्तु है। इसका परिणाम रजिस्ट्री से पूर्व विवाह से उत्पन्न सन्तान के भविष्य को सन्दिग्ध बनाना, संयुक्त पारिवारिक प्रणाली को भङ्ग करना तथा उत्तराधिकार विषयक विशेष नियमों को लागू करना

होगा जो हिन्दू कानून से भिन्न हैं। इन भयङ्कर परिणामों को देखते हुए जो समस्त आर्यों की धार्मिक भावना पर भी आघात पहुँचाने वाले हैं हम इस बिल का समर्थन नहीं कर सकते। विवाह विषयक वैदिक नियमों के अधिक से अधिक पालन और प्रचार से ही विवाह-जन्य कठिनाइयों का हल हो सकता है पश्चात्य सभ्यता के अन्धाधुन्ध अनुकरण से नहीं।

सिरोही रियासत में आर्यों पर अमानुषिक आक्रमण:—

२६ जून की रात को जब कि पं० आत्मदेव जी शास्त्री, प० हीरा लाल जी संयमी तथा कुछ छोटे बालक आर्य समाज और सत्यार्थ प्रकाश के महत्व को व्याख्यानों और भजनों द्वारा शिवगंज (सिरोही) रियासत आर्य समाज में बता रहे थे कुछ मतान्ध मुसलमानों ने भालों, तलवारों, छुरों, बन्दूकों और लाठियों से भरी सभा में समाज पर आक्रमण कर दिया यह समाचार जान कर हमें अत्यन्त दुःख और आश्चर्य हुआ। इस आक्रमण से आर्य समाज मन्दिर को काफी हानि पहुंची है तथा बहुत से आर्य (हिन्दू) सज्जनों और बालकों को बहुत चोटें आई हैं। इस प्रकार का अमानुषिक आक्रमण अत्यन्त निन्दनीय है और ऐसा क्रूर कर्म करने वालों को न दण्ड देना और भी निन्दनीय है। रियासत के अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे ऐसे अपराधियों का पता लगवा कर उन्हें कठोर दण्ड दें जिस से भविष्य में किसी को ऐसा करने का साहस न हो।

महर्षि दयानन्द और जर्मन विद्वान् डा० वेलः—

'सार्वदेशिक' के गत वर्ष के अनेक अङ्कों में (मुख्यतः जनवरी से अक्टू० १६४५ तक) हमने महर्षि दयानन्द की इस्लाम के अन्य समालोचक विद्वानों के साथ तुलना करते हुए सप्रमाण दिखाने का यत्न किया था कि यद्यपि महर्षि की आलोचना के यथार्थ अभिप्राय और पवित्र भावना को न समझकर कई मतान्ध मुसलमान उससे चिढ़ते और उसका उत्तर देने में अपनी असमर्थता मानकर उसे जब्त कराने के यत्न करते हैं पर वस्तुत महर्षि की आलोचना न केवल युक्ति युक्त किन्तु अन्य आलोचकों की अपेक्षा कोमल है। इस टिप्पणी में हम जिस सुप्रसिद्ध जर्मन विद्वान् के विचारों का दिग्दर्शन कराना चाहते हैं उसका नाम डा० वेल (Dr Weil) है जिस की इस्लाम के इतिहास विषयक जर्मन पुस्तक का अंग्रेजी में अनुवाद स्व० खुदाबख्श M A B C L. Bar at Law ने A History of the Islamic Peoples नाम से कलकत्ता यूनिवर्सिटी की ओर से सन् १६१४ में प्रकाशित कराया था। डा० गुस्टव वेल के विषय में मि० खुदाबख्श ने भूमिका में बतलाया है कि उनका प्राच्य विद्या के पंडितों में बड़ा ऊँचा स्थान है और उनका ग्रन्थ जिसका अंग्रेजी में अनुवाद कर रहा हूँ विद्यार्थियों के लिए इस्लाम के इतिहास के विषय में प्रामाणिक और विश्वसनीय ग्रन्थ है। इसमें मोहम्मद साहेब के जीवन की कई घटनाओं विशेषत अपने दत्तक पुत्र जैद की स्त्री जैनब के साथ विवाह और एक अबीसीनियन दासी मरियम (मेरी) के साथ सम्भोग का क़ुरान शरीफ़ और उसके भाष्यों

के आधार पर उल्लेख करते हुए (जिनकी महर्षि दयानन्द जी कृत आलोचना को अत्यधिक कठोर समझा जाता है) डा० बेल ने निम्न प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है—

"One other revelation relating to Mohamed's wedded life deserves a passing reference here It shows how easily the Prophet in matters sexual was carried away by his passions" (The History of Islamic Peoples P 18)

अर्थात् मोहम्मद साहेब के विवाहित जीवन के सम्बन्ध में एक 'ईश्वरीय आदेश' निर्देश करने योग्य है। इससे पता लगता है कि वे सम्भोगादि विषयक मामलों में अपने मानसिक आवेशों में कितनी शीघ्रता से बह जाते थे।

यह कहकर उन्होंने जैनब वाली सुप्रसिद्ध घटना का कुछ विस्तार से उल्लेख कर उसकी कड़ी आलोचना की है। उपसहार में डा० बेल ने लिखा है—

'However that may be, there is no doubt that Mohamed had frequent recourse to all sorts of fraud and imposture to secure his purpose calling into his service the angle Gebriel to reveal things which he himself could not believe" (P 26)

अर्थात् कुछ भी हो इसमें कोई सन्देह नहीं कि मोहम्मद अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिये सब प्रकार के छल कपट का प्राय काम में लाते थे और इस उद्देश्य से कि उन बातों को इलहाम के रूप में प्रकट किया जाए जिन पर वे स्वय भी विश्वास न कर सकते थे देवदूत जिब्राईल की सेवा से वे लाभ उठाते थे।

यह समालोचना महर्षि दयानन्द जी की इस विषयक युक्ति युक्त आलोचना की अपेक्षा भी अधिक कठोर है इसमें जरा भी सन्देह नहीं। ऐसी ही आलोचना अन्य सैकड़ों विद्वान् लेखकों ने की है। ऐसी अवस्था में 'सत्यार्थप्रकाश' के चतुर्दश समुल्लास की शुद्ध भाव से लिखी युक्ति युक्त आलोचना से लाभ उठाने के स्थान में उस को जब्त कराना वा उस पर मुकद्दमा चलाना कितना अनुचित है यह विचारशील विद्वान् स्वय विचार करें।

एक अध्यात्म प्रेमी सुयोग्य आर्य का देहावसानः—

हमें पाठक महानुभावों को यह सूचित करते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि १० जुलाई को मध्याह्न सार्वदेशिक सभा के भू० पू० प्रधान और जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ के अध्यक्ष श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज के छोटे भाई श्री प्यारेलाल जी रि० डिस्ट्रिक्ट ऐन्ड सेशन्स जज का नई देहली में हृदय रोग से लगभग ७० वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप बड़े अध्यात्म प्रेमी सज्जन थे। ध्यान भजन तथा उपनिषद् गीतादि के स्वाध्याय और सत्सग में आप गत वर्षों में अपना बहुत सा समय लगाते थे। जाति भेद निवारक आन्दोलन से भी आपको विशेष प्रेम था। आपने अपनी सुपुत्रियों का विवाह जाति बन्धन तोड़ कर करवाया था और इस वर्ष ५१) रु० जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ को दान रूप में दिये थे। ऐसे सुयोग्य आर्य सज्जन के वियोग पर हम उनके

ज्येष्ठ भ्राता श्री प० गङ्गाप्रसाद जी तथा शोक सन्तप्त परिवार से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए भगवान् से उनके पवित्रात्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करते हैं।

अन्तर्जातीय विवाहों की लोकप्रियता—

यह प्रसन्नता की बात है कि जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ तथा आर्यसमाज के प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप अन्तर्जातीय विवाह अधिक लोक प्रिय हो रहे हैं। इस वर्ष देहली में ऐसे कितने ही अन्तर्जातीय विवाह हुए जिन में से निम्न लिखित ३ विशेष उल्लेखनीय हैं। ५ जनवरी को देहली में श्री प्यारेलाल जी रि० डिस्ट्रिक्ट जज की सुपुत्री श्री सरला रानी एम० ए० का श्री जगदीश प्रसाद जी के साथ, १४ अप्रेल को श्री मुकुन्द मुरारी लाल जी की सुपुत्री श्री सावित्री देवी हिन्दी प्रभाकर, सिद्धान्त भास्कर का श्री मेला राम जी ठेकेदार देहरादून के साथ, १४ जुलाई को मैसूर के श्री राम स्वामी नामक ब्राह्मण कुलोत्पन्न सज्जन का श्री शारदा देवी नामक लिङ्गायत वंशज कन्या के साथ। तीनों विवाह संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से मेरे पौरोहित्य में उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुए जिनमें वर वधू के सम्बन्धियों ने बडे प्रेम से भाग लिया। ऐसे ही अन्य स्थानों में भी कई अन्तर्जातीय विवाह हुए किन्तु इस विषयक आन्दोलन की प्रगति को अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है। हम सब उत्साही आर्य सज्जनों और देवियों से इस आन्दोलन में क्रियात्मक तथा आर्थिक सहयोग के लिये सानुरोध निवेदन करते हैं क्योंकि हमारा दृढ़ विश्वास है कि आर्य समाज, शुद्धि और दलितोद्धार का भविष्य इसकी सफलता पर अधिकतर निर्भर है। ध० दे०

खेद प्रकाशन

हमें ग्राहक महानुभावों को यह सूचित करते हुए अत्यन्त दु:ख होता है कि २ वार जवाबी तार देने पर भी शिमला से कागज का पर्मिट प्राप्त न होने तथा इस कारण पर्याप्त प्रतीक्षा के पश्चात् कागज का दूसरा प्रबन्ध अनिवार्य हो जाने के कारण इस अङ्क के प्रकाशन मे भी विलम्ब हो गया है जिस के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

व्यवस्थापक सा० दे०

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	,,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।)
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	≈)
(७) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(८) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,,	।)
(९) आर्य वीर दल शिक्षण शिविर	,,	=)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण	प० इन्द्रजी)	।=
(११) आर्यवीर दल लेखमाला	(श्री ओम्प्रकाश जी)	१)
(१२) यमपितृ परिचय	(प० प्रियरत्न जी आर्ष)	२
(१३) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(१४) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	≠)
(१५) वेद में असित शब्द	,,	-)
(१६) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	-)
(१७) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	१)
(१८) विमान शास्त्र	,,	।≠)॥
(१९) नया संसार	श्री पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक	≠)
(२०) मातृत्व की ओर	,, ,, अ०	१)
(२१) कथा माला	,,	॥।)
(२२) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म	,,	॥≠)
(२३) आत्म कथा	श्री नारायण स्वामी जी	७।)
(२४) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२५) योग रहस्य	श्री महात्मा नारायण स्वामी जी	१)
(२६) विद्यार्थी जीवन रहस्य		॥)

(२७) उपनिषद् ईश ।≠) केन ॥) कठ ॥), प्रश्न ।=) मुण्डक ।≠) माण्डूक्य ≠), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥।)

(२८) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		-)
(२९) नारायण सुधा सजिल्द		१॥)
(३०) शहीदी पट्टिका		।=)
(३१) आर्यसमाज मन्दर चित्र		।)
(३२) हकीकत राय हकीकत	श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य	॥।=)
(३३) बहिनों की बातें	(प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न	१)
(३४) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय	(प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी	॥।)
(३५) भूमिका प्रकाश	(श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)	१॥)
(३६) कुमुदिनीचन्द्र	(श्री पं० मेधाव्रतजी)	२)
(३७) वेद और गोमेध	श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी	≠)
(३८) दयानन्द (कविता)	प० यज्ञदत्त त्यागी	।≠)
(३९) ध्यान योग प्रकाश	स्वामी लक्ष्मणानन्द जी	१॥-)
(४०) सत्यार्थ प्रकाश गान	(पं० सत्यभूषण जी योगी)	।≠)
(४१) हमारे घर	(श्री निरंजनलाल जी गौतम)	॥≠)
(४२) भारतवर्ष मे जाति भेद	,,	।)
(४३) हमारी राष्ट्र भाषा	(प० धर्मदेव जी)	≠)
(४४) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४५) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-)
(४६) वैदिक सन्ध्या तथा हवन के सं० में धर्मार्य सभा की घोषणाएं		-)
(४७) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग का कार्य क्रम		-)



अगस्त १९४९ ई०
भाद्रपद २००६ सं०

सम्पादक—
श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति
साहित्य भूषण

वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शि०
१ प्रति का ।।।)

विषय सूची

भूल सुधार

पृ २६८ पंक्ति २५ में 'मन्त्र को' के पश्चात 'न बोले' पढें।

पृ. २७० मे श्रौत्र के स्थान में श्रौत पढें ।

पृ. २७९ में Dcuncil के स्थान मे Council पढ़ें। अन्य प्रेस की भूलो को भी सुधार लें।

सम्पादक सा दे.

|| ओ३म् ||

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २२ { अगस्त १९४६ ई०] भाद्रपद २००३ दयानन्दाब्द १२२ { १

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् त्वे इन्द्राप्यभूम विप्रा धियं वनेम ऋतया सपन्तः । अवस्यवो प्रशस्तिं सद्यस्ते रायो दावने स्याम ॥

ऋग्वेद २ । ११ । १२

शब्दार्थ —(इन्द्र) हे परमेश्वर । हम (त्वे) तेरी अधीनता में (विप्रा) विविध विद्याओं को पूर्ण करने वाले ज्ञानी (अपि अभूम) बनें तथा (ऋतया सपन्त) ऋतम्भरा बुद्धि और सत्य को प्रकाशित करने वाली वाणी से सम्पन्न होकर (धियं वनेम) उत्तम कार्यों का सेवन व आचरण करें (अवस्यव) ज्ञान, रक्षा और आनन्द की प्राप्ति की इच्छा रखने वाले हम तेरी (प्रशस्तिम) प्रशंसा वा स्तुति को (धीमहि) धारण करें और (सद्य) शीघ्र ही (ते दावने स्याम) तेरे दान व कृपा के पात्र बनें ।

विनय—हे समस्त ऐश्वर्य के भण्डार प्रभो ! हम आप की शरण में आकर सच्चे ज्ञानी बनना चाहते हैं । आप हमें ऐसी शक्ति दें कि हम शुद्ध बुद्धि और पवित्र वाणी से युक्त होकर सदा शुभ कर्मों के अनुष्ठान में तत्पर रहें । हम सच्चे हृदय से आपकी स्तुति कर के आपके पवित्र गुणों को अपने अन्दर धारण करने का सदा प्रयत्न करें और इस प्रकार आप के कृपा पात्र बनें । यह हमारी आप से हार्दिक प्रार्थना है ॥

वेदोपदेश

कर्मयोग

(१) ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषे-च्छतँ समाः। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ यजु० ४०। २।

(२) ओ३म् स नो ज्योतींषि पूर्व्य पवमान विरोचय। क्रत्वे दक्षाय नो हिनु ॥
॥ ऋ० ६ । ३६ । ३ ॥

(३) इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति। यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥
अथर्व० २० । १८ ३ ॥

(४) अक्रन् कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा। देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः ॥
यजु० ३ । ४७ ॥

शब्दार्थ :—

१) प्रत्येक मनुष्य (इह) इस संसार में (कर्माणि कुर्वन् एव) उत्तम कर्मों को करता हुआ ही (शतं समाः जिजीविषेत्) सौ वर्ष तक वा उस से अधिक जीने की इच्छा करे। (एवम् इस प्रकार निष्काम भाव से कर्म करने पर (नरे त्वयि) सब को धर्म मार्ग की ओर ले जानेवाले तुझ में (कर्म न लिप्यते) कर्म का लेप नहीं होगा (इतः अन्यथा न अस्ति) कर्मों से अलिप्त होने और मुक्ति प्राप्त करने का इससे भिन्न और कोई मार्ग नहीं है।

(२) (पूर्व्य पवमान) हे। सनातन, सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् (सः) वह ज्योतिर्मय तू (नः) हमारे लिये (ज्योतींषि) ज्ञान ज्योति को (विरोचय) प्रकाशित कर (नः) हमें (क्रत्वे) उत्तम कर्म करने और (दक्षाय) बल की वृद्धि के लिये (हिनु) प्रेरित कर।

(३) (देवाः) सत्यनिष्ठ ज्ञानी लोग (सुन्वन्तम्) यज्ञादि शुभ कर्म करने वाले को ही (इच्छन्ति) चाहते हैं (स्वप्नाय न स्पृहयन्ति) सोने वाले आलसी आदमी को वे नहीं चाहते अतन्द्राः) स्वयम् आलस्य प्रमाद रहित होकर वे (प्रमादं यन्ति) विशेष हर्ष को प्राप्त करते अथवा प्रमाद करने वालों को दण्ड देते हैं।

(४) (कर्मकृत) कर्म योगी (मयो भुवा वाचा सह) सत्य, प्रिय, मङ्गल कारिणी वेद वाणी तथा अपनी मधुर वाणी के साथ (कर्म अक्रन् शुभ कर्म करते हैं। ते देवेभ्यः) सत्य निष्ठ विद्वानों के हित तथा दिव्य गुण व सुख की प्राप्ति केलिये (कर्म कृत्वा) कर्म करके (सचाभुव) सब के साथ मिलकर प्रेम से व्यवहार करते हुए (अस्तं प्रेत) अपने घर जाते हैं अथवा दिव्य परमपद को प्राप्त करते हैं।

विवरण :—

इन वेद मन्त्रों में कर्म योग विषयक उत्तम प्रार्थनाएं तथा उपदेश हैं जिन पर आचरण करने से मनुष्य समाज की उन्नति हो सकती है। यह संसार कर्म भूमि है। इस में आलसी आदमी के लिये कोई स्थान नहीं, न उस का कोई मान है। प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह निष्काम भाव से अपने कर्तव्य का पालन करने में सदा तत्पर रहे। संसार में अनासक्त रहने और सच्चे आनन्द की प्राप्ति का अन्य कोई मार्ग नहीं है। योगिराज श्री कृष्ण ने भगवद् गीता में

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूः, मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद् विद्वांस्तथा सक्त, चिकीर्षु लोकसंग्रहम्॥
एतान्यपि तु कर्माणि, सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च।
कर्तव्यानीति मे पार्थ, निश्चितं मतमुत्तमम्॥

इत्यादि श्लोकों द्वारा इसी वैदिक कर्म योग का अर्जुन को उपदेश देते हुए बताया था कि तेरा कर्म करने में ही अधिकार है कर्म फल में कभी नहीं। इसलिये कर्म फल की प्राप्ति की इच्छा से प्रेरित हो कर तू कर्म न कर, पर साथ ही अकर्म में आसक्त न हो। जिस प्रकार अज्ञानी कर्म में आसक्त होकर काम करते हैं वैसे ही विद्वान् को भी कर्म करने चाहियें पर आसक्ति रहित होकर और जनता के हित को दृष्टि में रख कर। मेरा (कृष्ण का) यह निश्चित मत है कि ये लौकिक कार्य भी आसक्ति और फल की इच्छा को छोड़ कर अवश्य करने चाहिएं। वर्तमान युग में महर्षि दयानन्दजी, स्वामी श्रद्धानन्दजी, लोकमान्य तिलकजी, महात्मा गान्धीजी आदि महापुरुषों ने इसी कर्म योग का आदर्श जनता के सन्मुख रक्खा है। वेद मन्त्र में आये "जिजीविषेच्छत समाः" इन शब्दों के अनुसार ही महात्मा गान्धीजी कहा करते हैं कि मैं १२५ वर्ष तक जीवित रह कर जनता की सेवा करना चाहता हूं तथा उस के लिए भगवान् से प्रार्थना करता हूँ। उनकी यह भावना वेदानुकूल और प्रशंसनीय है। विद्वान् लोग जहां स्वयं सच्चे कर्मयोगी होते हैं वहां वे कर्मशील पुरुषार्थियों को ही चाहते हैं आलसियों को नहीं। 'न वा ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवा' इस वेद वाक्य के अनुसार स्वयं भगवान् और उनकी शक्तियां उस की सहायता नहीं करती जो परिश्रम नहीं करता इसलिए प्रत्येक को कर्मशील तथा पुरुषार्थी बनना चाहिये पुरुषार्थी मनुष्य को ही सच्चे सुख व प्रसन्नता की प्राप्ति होती है कर्म योगी न केवल शरीर व इन्द्रियादि द्वारा उत्तम कार्य करते हैं बल्कि अपनी वाणी को भी मङ्गल कारिणी बनाते हैं। वे अपने स्वभाव को मधुर प्रेममय बनाकर सुख, शान्ति और आनन्द का उपभोग करते हैं और ज्ञान तथा उपासना के समन्वय से अन्त में मोक्ष लाभ भी करते हैं। इस वैदिक कर्मयोग के प्रचार की बड़ी भारी आवश्यकता है। इसके बिना कभी किसी समाज और देश की उन्नति नहीं हो सकती। योगिराज श्री कृष्ण का (जिन की जन्माष्टमी इस वर्ष २० अगस्त को सर्वत्र बड़े उत्साह और आदर के साथ मनाई जाएगी) सब से मुख्य सन्देश यही कर्मयोग था जिस पर आचरण करके ही हम उन के प्रति भक्ति भाव प्रकट कर सकते हैं।

अध्यात्म सुधा

शुद्ध विचार

(लेखक—आर्य वान प्रस्थाश्रम ज्वालापुर वासी एक वीतराग महात्मा)

सोचता रहता है जो कुछ, अपने, दिल में आदमी ।
एक दिन हो जाता है परिणाम म वह वैसा ही ॥
यह मेरा अनुभव है फिर इस पर न क्यों विश्वास हो।
अपने अन्दर अब न आने, दूंगा खोटे भाव को ॥

हा बढ़ाता जाऊँगा बस, लाभ कारी सद्विचार ।
किस लिये ससार सागर, से न होगा बेड़ा पार ॥
हृदय मन्दिर मे मेरे, खेला करेंगे बार बार ।
शुद्ध निर्मल स्वच्छ मगलकारी उत्तम सस्कार ॥

अब नहीं जायेगा बाहर, आगया है वश में मन ।
बस मेरा उत्थान ही, होगा नहीं होगा पतन ॥
मेरे ही सकल्प पर, निर्भर है मेरी उन्नति ।
जैसी होनी है मति, वैसी ही होती है गति ॥

सद् विचार और भावना, कितनी ही चाहे हो प्रबल ।
काम में जब तक न लाये, कुछ नहीं देती है फल ॥
प्रणव अपना ध्येय है, उपलब्ध करना है इसे ।
पाया है सवस्व देकर, राज ऋषियों ने जिसे ॥

[हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके वान प्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक वीतराग महात्मा ने जो अपने नाम को गुप्त ही रखना पसन्द करते हैं उपर्युक्त सद्विचार पद्यरूप में भेजने की कृपा की है जिनके लिये उन को हार्दिक धन्यवाद देते हुए सब पाठकों से निवेदन करते हैं कि वे ऐसे शुभ विचारों से अपने मन को पवित्र बना कर शुभ कार्यों के अनुष्ठान में तत्पर रहें—

सम्पादक 'सार्वदेशिक'] ।

आर्यत्व और आर्यध्वजा

(लेखक—श्री ८० सत्वदे जी वेदालङ्कार मन्त्री आर्य समाज लुधियाना)

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोमे श्रियमश्नुताम् ।यजु.

आर्य सभ्यता तथा संस्कृति में मुख्य रूप से दो गुणों को पाने का प्रयत्न आदर्शरूप में रक्खा गया है। वैदिक पारिभाषिक शब्दों में इसे 'ब्रह्म' वृत्ति और 'क्षत्र' वृत्ति कह सकते हैं। साधारण शब्दों में नैतिक जीवन के उच्चतम आदर्शों का जीवन में ढालते हुए परोपकारमय जीवन बिताना तथा अहिंसात्मक आस्तिकवाद सहित आचरण करना 'ब्रह्मवृत्ति' है। ब्रह्मवृत्ति की रक्षा के लिए लड़ाके स्वभाव सहित जीवन संग्राम से पराङ्मुख न होना 'क्षत्रवृत्ति' है। इन दोनों वृत्तियों का समन्वय 'आर्यत्व' मे आ जाता है। आर्यत्व की 'ब्रह्म' आत्मा है और क्षत्र' शरीर है।

संसार मे जहां २ आर्यत्व दिखाई देता है वहां २ ये दोनों गुण भी हमे देखने को मिलेंगे। ये दोनों गुण एक दूसरे के प्रकाशक तथा पालक होते हुए भी 'आर्यत्व' समन्वित हुए प्रतीत होंगे।

कुरुक्षेत्र के रणाङ्गन मे 'भैक्ष्यचर्या के लिए प्रवृत्त अर्जुन यद्यपि सन्यासोचित ब्रह्मवृत्ति का आदर्श सामने रखता है परन्तु जब मर्यादोचित धर्म को छोड़ता है और जीवन संग्राम से निवृत्त दिखाई देता है तभी श्रीकृष्ण को 'अनार्यजुष्ट" शब्द द्वारा उसे 'आर्यत्व' का उद्बोधन कराना पड़ता है। जब दुर्योधन की तरफ से न्याय न हो तो न्यायरूप क्षत्रवृत्ति के गुण की स्थापना के लिए 'क्षत्रवृत्ति' को अपना कर 'आर्यत्व' की स्थापना की गयी है तथा श्रीकृष्ण की हुङ्कार सुनाई देती है "युद्ध्यस्व विगतज्वरः"। गीतारहस्य द्वारा कर्मयोग को समझाने के लिए श्री लोक मान्य तिलक प्रारम्भ मे ही भगवदर्चन में समर्पण के समय 'आर्यत्व' का आह्वान करते हुए प्रतीत होते हैं—"तमार्याः भोतुमर्हन्ति कार्याकार्यविदश्च"।

भारतवर्ष के मुगलिया खानदान की हकूमत के दिनों में ब्रह्मवृत्ति पर आश्रित होकर सिक्ख गुरुओं, ब्राह्मणों, सती राजपूत नारियों आदि के बलिदान दिखाई देते हैं। संसार के सब महान् धर्मों का प्रारम्भ ब्रह्मवृत्ति द्वारा होता है जो साधारण जनता को अपने बलिदानों से जागृत रखती है और बाद मे 'क्षत्र वृत्ति" पैदा होकर ब्रह्म वृत्ति की रक्षा करती है। गुरुतेग बहादुर तक के पंजाबी तथा काश्मीरी बलिदान ब्रह्मवृत्ति के उग्ररूप मे परिचायक थे परन्तु बाद मे गुरु गोविन्द आदि के रूप मे क्षत्रवृत्ति पैदा होकर आर्यत्वरूप मे सफलता को प्राप्त करती है। आर्य समाजी पुरुषों के सब आजतक के बलिदान 'ब्रह्मवृत्ति' पर आश्रित बलिदान ही हैं। इन मे 'क्षत्र' अपने अत्यन्त सूक्ष्म रूप मे सन्निहित दिखाई देता है।

इसी तरह से वर्तमान समय की गान्धी मनोवृत्ति (अहिंसामय) 'ब्रह्मवृत्ति है और श्री सुभाष मनोवृत्ति 'क्षत्र वृत्ति' है। दोनों का पोषण और समन्वय 'आर्यत्व' मे होता है।

महर्षि दयानन्द के महान् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का मण्डनात्मकरूप 'ब्रह्ममनोवृत्ति' का रूप है और खण्डनात्मक असहिष्णुता पूर्णरूप (पाप और पाखण्ड के प्रति असहिष्णु होना महा-

गुण है जिसे वेद के "मन्युरसि मन्यु मयि धहि' से समझना चाहिए) 'क्षत्र मनोवृत्ति' का रूप है। दोनों मनोवृत्तियों का समन्वय 'आर्यसमाज' रूप में प्रकट हुआ है जहा आर्यत्व के अभिमानियों का भी तदनुकूल ही स्वभाव दिखाई देता है।

आर्यत्व की परिचायक 'आर्यध्वजा' ब्रह्म और क्षत्र का हमें रूप देती हुई महान् सांस्कृतिक समन्वय की दिशा दिखाती है। यहा पर ॐ ब्रह्मवृत्ति और लोहितरूप में रक्त कपड़ा क्षत्र वृत्ति का परिचायक हैं। इन दोनों के समन्वय से तेजोमय 'प्रकाश' का उद्भव समझ में आ सकता है। इसीसे सूर्य दर्शन है। पूर्व दिशा के 'सूर्य' से पश्चिमीय एशिया का 'चन्द्र' प्रकाशित होता हुआ अन्धेरी निशा में भी शान्तप्रकाश को दिखा सकता है। 'आर्यत्व' संसार में दैशिक और सामयिक सीमाओं की कोई विशेष पाबन्दियां नहीं रखता। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"।

आर्यत्व की आर्यध्वजा अपने आपमें जहां उपर्युक्त रूप को दिखाती है वहा संसार की वर्तमान राष्ट्रीय और सांस्कृतिक ध्वजाओं का रूप भी उस में है। पूर्वीय एशिया की ध्वजाओं का सूर्य उसमें सन्निहित है। समाज वादी रूस की लाली की पृष्ठभूमि लिए हुए उस पर से हथौड़े और दरातियों के कठोर रूप को हटाकर 'स्वस्तिमय' ॐ का दर्शन इस आर्यध्वजा का विशेष रूप है। इसी ॐ का (ँ) के रूप में इस्लाम के चन्द्र तारा का दर्शन भी स्पष्ट है जिस के बिना मुस्लिम लीग कोई बात सुनने को तय्यार नहीं। परन्तु तारे और चांद के नीचे की भूमि हरी न होकर मुस्लिम गरीबों के दल अहरारियों की लाल ध्वजा से आ मिलती है। रामराज के भक्त हिन्दुओं की सूर्यवंशियों की सूर्यध्वजा तो स्पष्ट ही है। महावीर हनुमान् के दल की लालध्वजा क्या सनातन प्रणाली को रुचिकर न होगी? गायत्रीमन्त्र का 'कल्मा' पढ़ने वाले भारतीयों का गायत्री मन्त्र का देवता सविता या सूर्य तो अपना प्रकाश विशेष रूप से देता है। सिक्खों का एक ओङ्कार भी स्पष्ट है। कैसा सुन्दर मिलाप है, जो रासायनिक वस्तुतत्वों की तरह का है। आर्यत्व की ध्वजा अन्तर्राष्ट्रीयता को हृदय में दबाये भारत की वास्तविक राष्ट्रीयता की परिचायक है जिसे देखने वाले देख सकते हैं और समझने वाले समझ सकते हैं। मान्धाता के जमाने के हलों या चर्खों से सुसज्जित ध्वजा पुराण पन्थियों के पुरातन तत्वों का ही दर्शन दे सकती है जब कि दुनिया बहुत आगे बढ़ चुकी है और बढ़ने की सोच रही है।

पाखण्ड खण्डिनी गेरुआ ध्वजा जिसे संन्यासी रूप में ऋषि ने हरिद्वार में प्रथम फहराया था और बाद में जिसका रूप लेकर ऋषि ने कपड़े पहिने थे (संन्यासियों के गेरुए कपड़े) वह आर्य संन्यासियों की ध्वजा का रूप तो ठीक है जहा ब्रह्मवृत्ति चरमरूप में प्रकट होती है, परन्तु "सामाजिक" जीवन का आधार "गृहस्थो" से होता है जिनके लिए एक ही आश्रम, आदर्श नहीं हो सकता तथा जिन्हें सामाजिक जीवन के नियन्त्रण में 'क्षत्र' की विशेष आवश्यकता रहती है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की गेरुआ 'हिन्दुत्व' की ध्वजा संसार में सन्यासियों की ध्वजा का ही दर्शन दे सकती है। इस संघ का सामयिक 'क्षत्ररूप' इस ध्वजा से भी मेल खा सकता है जब

'मरहठा प्रभुता' का ध्यान रक्खा जाय। यह महाराष्ट्र की परम्पराओं से अनुकूल होते हुए भी शेष भारत की परम्पराओं से मेल नहीं खाती। इसका उद्भव और अन्त शाङ्कर ब्रह्मसमाज के दर्शन में हो सकता है। आर्यत्व इससे आगे चलता है और एक कदम आगे बढ़ा कर ब्रह्ममग्न व्यक्तियों को सांसारिक जीवन के स्थिर तत्वों को समझाने के लिए "छत्र" के भौतिक रूप को समाज के लिए आवश्यक बताते हुए आर्यत्व पर स्थित "आर्य ध्वजा" का दर्शन देता है। हिन्दुओं का 'शाङ्कर ब्रह्मसमाज' 'ब्रह्मसत्य जगन्मिथ्या" की तरफ हमारी दृष्टि खींचेगा जब कि आर्यसमाज ऋषि की दृष्टि में "ब्रह्मसत्य जगत्सत्यम्" रूप से हमें दृष्टि या दर्शन देगा। हमें इस दिशा से विचारने पर "आर्यत्व और आर्यध्वजा" का उज्ज्वल भविष्य समझ में आ सकता है।

भारतीय "नाम रूपात्मक" जगत् दर्शन में तथा साधारण विवेचन में नाम रूप का महत्त्व भी आर्यत्व में से ओझल नहीं होने देना चाहिए। हिन्दुत्व का नाम और रूप भारतीय दृष्टि में विजातीयता लिए है और विदेशियों द्वारा आरोपित है जब कि 'आर्यत्व' अपने नाम और रूप में "सत्य शिव सुन्दरम्" होते हुए भारतीय देश, धर्म और संस्कृति के मैदानों पर स्वतन्त्रता से विचरता हुआ विदेशों में भी प्राचीन काल से आज तक सैर सपाटे कर रहा है और अपने निवासस्थान भी जगह २ बना चुका है। क्या यह सब कभी आर्यत्व के 'चक्रवर्तीसाम्राज्य' का आधार न हो सकेगा—"कालो ह्यय निरवधिर्विपुला च पृथ्वी"। आर्यवीरों के लिए यह भी एक दृष्टि है।

महर्षि दयानन्द का गृह त्याग काल

(लेखक—श्री प्रो० भीमसेन जी शास्त्री एम ए. कोटा)

—:(०)—

श्री मूलशंकर का गृह त्याग काल—

सं० १६०२, माघ पूर्णिमा बुधवार को महर्षि का २१वां वर्ष समाप्त हुआ था, और गुरुवार १२-२-१८४६ को उनकी वर्ष ग्रन्थि थी। इससे कुछ दिन पूर्व श्री मूलशंकर जी घर आए थे। वैसे हमारे देश में व्याकरण, न्यायादि विषय-विशेषों के पृथक् २ भी अनध्याय होते हैं, पर चतुर्दशी, अमावस्या तो सर्वविषय साधारण अनध्याय हैं ही। "अमावास्या गुरुं हन्ति, शिष्यं हन्ति चतुर्दशी" तो मनु महाराज के माथे भी मढ़ दिया गया है (अध्याय ४, श्लोक ११४)। अतः मूल जी त्रयोदशी सोमवार प्रातः पाठ करके मध्याह्न या सायं घर आ गए होंगे। यदि त्रयोदशी भी अनध्याय रहा हो, तो द्वादशी शनिवार (१८-२-१८४६) को घर आए होंगे। अभी तक किसी ने यह ध्यान नहीं दिया कि टकारा से तीन कोस पर कौन २ से ग्राम हैं और १०० वष पूव उनमें से किस ग्राम में किसी अच्छे विद्वान् की स्थिति का पता चलता है। इसकी खोज की जानी चाहिए। ग्राम से टंकारे की दिशा के अनुसार दिक्शूल भी सभव है विचारा गया हो। संभवत द्वादशी या त्रयोदशी (रवि या सोम, ८ या ६ फरवरी १८४६ को मूल जी घर पहुचे होंगे। होली तक उन्हें घर आए एक मास और ३-४ दिन हो चुके थे। इस समय तक विवाह की सामग्री सग्रह हो चुकी थी। एक पक्ष और सकल्प-विकल्प में रहने पर सं० १६०२ के अन्त तक उन्हें घर आए १ मास १८ दिन के लगभग हो चुके थे, इसके पश्चात् वे घर पर अधिक रहे हों ऐसा संभव प्रतीत नहीं होता, अर्थात् उन्होंने सं० १६०३ के प्रथम २-४ दिन में घर छोड़ दिया होगा।

सं० १६०३ में निरयण मेष सक्रान्ति चैत्र पूर्णिमा शनिवार (११-४-१८४६) को थी, अत उससे पूर्व कोई विवाह लग्न सभव न था। अगले दिन से आरम्भ होकर वैशाख शुक्ला ३ भौम (२८-४-१८४६) तक ६ विवाह लग्न पड़े थे। इन्हीं में से किसी आरम्भिक लग्न पर विवाह निश्चय हुआ होगा। कन्या का जन्मकाल विदित न होने से इससे अधिक विचार इस विषय में नहीं हो सकता। ज्येष्ठ शु० ८ भौम (२-६-१८४६) से आषाढ़ शुक्ल ११ रवि (५-७-१८४६) तक भी १७ विवाह लग्न थे, पर ज्येष्ठ मास में ज्येष्ठ पुत्र का विवाह प्रायः नहीं चाहा करते* और जब वे माघ शुक्ला द्वादशी के लगभग घर आ चुके थे तो चैत्र शुक्ल के आरम्भ में उनका गृह त्याग पहले ही निश्चय हो चुका, अत प्रारम्भिक लग्नों में ही उनका विवाह निश्चय हुआ होगा। विवाह से ५—७ दिन पूर्व हरिद्रा-तैल चढ़ने लगते हैं और इससे भी पूर्व लग्न पत्रिका पढ़ी जाती है। इससे पूर्व ही सारे सम्बन्धी एकट्ठा‡ हो जाते हैं।

* यदि कन्या भी ज्येष्ठ पुत्री हो तब तो अर्थात् वर- कन्या दोनों ही ज्येष्ठ सन्तान हों, तब तो ज्येष्ठ में कदापि विवाह नहीं करते। लाघवानुरोध से हम वचन उद्धृत नहीं कर रहे।

‡ इकट्ठा शब्द "एकस्थ" का अपभ्रंश है, न कि सर्व स्वीकृत "एकत्र" शब्द का

तेल चढ़ना आरम्भ होकर फिर घर को अकेले घूमने फिरने का स्वातन्त्र्य प्रायः नहीं रहता। पुराने समय में इन बातों में और भी अधिक कड़ाई होती थी। समृद्ध घरों में विवाह प्रारम्भ प्रायः विवाह तिथि से पर्याप्त दिन पूर्व कर दिया जाता है। संभवतः विवाह कृत्य प्रारम्भ से पूर्व ही मूल जी ने घर छोड़ दिया था।

मूल जी सिद्धपुर आश्विन शु० ८ के लगभग अथवा कुछ दिन पूर्व ही पहुंच चुके थे और गृह-त्याग से सिद्धपुर प्राप्ति तक की घटनाएं भी ६ मास से न्यून समय नहीं चाहतीं। इस प्रकार भी वे चैत्र शुक्ल के प्रारम्भिक भाग में ही गृह-त्यागी बन चुके थे। आइए इस घटना चक्र पर भी तनिक गम्भीरता से विचार करलें। इस विचार में हम सिद्धपुर से टंकारा विपरीतक्रम से चलेंगे। सिद्धपुर से उलटे पैरों चल कर टंकारा पहुंचेंगे।

पौराणिकों में वैशाख, कार्तिक तथा माघ स्नान का बड़ा माहात्म्य है, ये स्नान साधारणत एक मास तक पूर्णिमा से पूर्णिमा तक होते हैं। कार्तिक स्नान का मेला गढ़-मुक्तेश्वर, पुष्कर, सिद्धपुर आदि अनेक तीर्थ स्थानों में बड़े समारोह से होता है। श्रद्धालु गृहस्थ आदि जिन के पास समय न्यून होता है अन्तिम ५ दिन के लिये जाते हैं, परन्तु अधिक श्रद्धालु, पूर्णफल के अभिलाषुक आश्विन शु० ११ से † कार्तिक पूर्णिमा तक (१ मास ५ दिन) का स्नान करते हैं। इस प्रकार सं० १९०३ में यह मेला शुक्रवार १-१०-१८४६ से सौम ३-११-१८४६ तक रहा। श्री शुद्ध चैतन्यजी (महर्षि दयानन्द का नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का नाम) इस मेले पर योगियों की खोज में गये थे। वे योगियों से अधिकतम लाभ प्राप्ति को उत्सुक थे, अत उन के मेला प्रारम्भ से पूर्व वहा पहुंचने में संदेह नहीं किया जा सकता। आगे भी हम देखते हैं कि ऋषि हरिद्वार के कुम्भों पर योगियों की खोज में अथवा प्रचारार्थ जाते हैं, जो मेले के प्रारम्भ से पहुँच जाते हैं। हम समझते हैं कि श्री शुद्ध चैतन्यजी आश्विन शु० ८ सोमवार (२८-९-१८४६) तक सिद्धपुर अवश्य पहुँच चुके थे। हो सकता है कि इससे भी २-४ दिन पूर्व ही पहुँचे हों। श्री० महेश-प्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल ने अपनी महत्त्वपूर्ण पुस्तिका "महर्षि दयानन्द कहाँ और कब" में पृष्ठ ३ पर सिद्धपुर में मुमुक्षुवर्य का सं० १९०३ आश्विन शुक्ल से कार्तिक शुक्ल तक निवास दिखाने में स्तुत्य विवेक का परिचय दिया है।

महर्षि कोठ गाँगड़ से सिद्धपुर गये थे और कोठ गाँगड़ का त्याग ही सिद्धपुर के विचार से किया था। कोठ गाँगड़ अहमदाबाद के समीप है। अहमदाबाद से सिद्धपुर रेल मार्ग से ६४ मील है। २१ वर्ष के परमोत्साही मुमुक्षु युवक शुद्ध चैतन्य जी शीघ्रता होती तो दो दिन में भले * प्रकार सिद्धपुरमें पहुँच सकते थे, पर कोठ गाँगड़ से प्रस्थान करते ही एक परिचित वैरागी के मिलने पर उन्होंने

---

† आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्लैकादशी भवेत्। कार्तिकस्य व्रतानीह तस्या कुर्यादतन्द्रितः ॥
पद्मपुराणोत्तराखण्डान्तर्गतकार्तिकमाहात्म्य पंचमाध्याय श्लोक ३)

* बिन्दुविजयी बाल ब्रह्मचारी योगी दयानन्द एक दिन में चालीस कोस पैदल चल लिया करते थे।

कहा था—मैं कार्तिकी के मेले पर सिद्धपुर जाऊँगा।‡ 'जा रहा हूँ' के स्थान पर 'जाऊँगा' स्पष्ट बोधित करता है कि "अभी सिद्धपुर के कार्तिक मेले के प्रारम्भ में पर्याप्त अन्तर है। अत अभी तो अन्यत्र जारहा हूँ। उचित समय पर सिद्धपुर जाऊँगा।" यह सुव्यक्त है कि श्रो० शुद्ध चैतन्यजी अनेक मध्यवर्ती स्थानों पर ठहरते हुए अथवा संभवत' सीधे पथ का अवलम्बन न करके, रमते-रमाते मन्थर गति से सिद्धपुर गए थे। अनुमान होता है कि वे भाद्रपद पूर्णिमा (५-६-१८४६) ? लगभग कोठगाँगड़ से प्रस्थित हुए होंगे। ऋषि ने कोठगाँगड़ में अपनी तीन मास स्थिति वर्णन की है अतः वे वहाँ प्राय' ज्येष्ठ पूर्णिमा भौमवार (६ जून १८४६) से भाद्र पूर्णिमा शनिवार (५-६-१८४६) तक रहे होंगे।

कोठगाँगड़ को श्री शुद्धचैतन्य जी सापला नगर से गये थे। इन दोनों स्थानों में लगभग १०० मील का अन्तर है मार्ग में वघवान, वीरमगाँव आदि स्थान हैं। इस यात्रा में ८-१० दिन लगे होंगे। फलत' सापला में नैष्ठिक ब्रह्मचारीजी की स्थिति ज्येष्ठ शुक्ल में प्रथम कुछ दिन ही हो सकती है। वे मई १८४६ की समाप्ति (३१-५ १८४६ ज्येष्ठ शु० ६ रवि०) से कुछ पूर्व ही सापला से चल पड़े होंगे ?

मुमुक्षु मूल जी सापला नगर में, लाला भगत के स्थान में बहुत से साधुओं का निवास सुनकर गए थे। संभवत' यहीं उनका योग साधन प्रारम्भ हुआ था और यहीं उन्होंने नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर काषायाम्बर धारी शुद्धचैतन्य रूप धारण किया था। यहीं उनको रात्रि में योगाभ्यास करते समय पक्षि-शब्द सुनकर भूत का भय लगा था। महर्षि के वर्णन की शैली ही बताती है कि वे यहाँ कुछ समय अवश्य रहे थे। उपर्युक्त सब घटनाओं का यतिवर्य दयानन्द ने स्वयं वर्णन किया है और लिखा है कि "वहीं योग-साधन करने लगा।" मुमुक्षुवर्य मूल जी नित्य नया पुरोगम बनाने वाले चंचल प्रकृति युवक न थे। वे बाल्यावस्था से ही स्थिर-धारणा के धनी, अध्यवसायी, भव्य महानात्मा थे मेरा अनुमान है कि उन्होंने सापला में एक मास से कुछ अधिक निवास किया होगा। ऋषि ने अपनी कथा में केवल उन्हीं स्थानों तथा घटनाओं का वर्णन किया है जिनका उनकी जीवन-सरणि पर विशेष प्रभाव पड़ा था। ३३ वर्ष पश्चात् सं० १६३६ में अमूल्य समय वाले † महर्षि दयानन्द का ध्यान महत्वपूर्ण बातें ही आकृष्ट कर सकतीं थीं, और महत्व पूर्ण बातें ही उनके वर्णन में स्थान पा सकतीं थीं। योगी दयानन्द साधारण बातों को स्मृति में स्थान ही न देते थे। हमें श्री मुमुक्षुवर्य सापला में वैशाख शु० प्रतिपदा रविवार (१२-४-१८४६)के लगभग से और सभवत' कुछ पूर्व से ही विराजमान प्रतीत होते हैं।

श्री मूलशंकर जी टंकारे से सापला भी सीधे

‡ऋषि का आत्मचरित(श्री प भगवद्दत्त सपादित)।

† ऋषि दयानन्द के एक २ क्षण का बड़े विवेक पूर्वक सर्वोत्तम उपयोग होता था वे। ऋग्वेद के भाष्य आदि अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में सलग्न थे। यद्यपि भक्तों के प्रगाढ़ अनुरोध वश वे स्वजीवन वृत्त को लिखाने को तैय्यार हुए थे पर समय के अत्यन्ताभाववश वे वात्सल्यभाजन भक्तों के प्रणय-पालन में असमर्थ हो रहे थे। उनका समय वस्तुत' बहुमूल्य था।।उनके कई पत्र हमारे इस कथन का पूर्ण समर्थन करते हैं।

न गये थे। उन्होंने पकड़े जाने के भय से सर्वथा विपरीत मार्ग का अवलम्बन किया था। वे न जाने कहाँ २ घूमकर सापला पहुंचे होंगे। वे टंकारा से पूर्व अथवा दक्षिण मार्ग से न चलकर पश्चिम की ओर गए थे, और न जाने कितनों दिनों तक तो सुदूर पश्चिम दिशा में ही द्रुतगात से ही बढ़ते गए होंगे। "ढूँढ़ते २ थक कर अब मनुष्यों का दौड़ाना बन्द कर दिया होगा" ऐसी धारणा होने पर किसी चक्करदार मार्ग से अपनी अभीष्ट दिशा पूर्व की ओर अग्रसर होते हुए वे सापला पहुँचे होंगे। आंशिक निर्भयता का भाव भी कुछ दिन में उत्पन्न होसका होगा।

दूसरी बात यह है कि मूल जी निस्सन्देह परम विरक्त थे, पर उनका वैराग्य सांसारिक बन्धनों को बढाने के प्रति गृहस्थ बन्धन में जकडे जाने के प्रति ही उग्ररूप में था, और घर रहते उससे बचाव न हो सकता था, अतः वे घर से भागे थे। उनका एक भी आत्मीय जन से नाम मात्र भी मनोमालिन्य न था। वे एक समृद्ध कुल के ज्येष्ठ पुत्र थे और विद्यानुरागिता, बुद्धिमत्ता, सौशील्य, तेजस्विता†, आकृतिमत्ता आदि सद्गुणों के कारण वे सबके अत्यन्त प्रिय बने हुए थे। जिस पुत्र को माता पिता ने चिर अभिलाषाओं के पश्चात् ४०४२ वर्ष की अवस्था में * पाया हो और वह सकल कमनीय गुणों का आगार हो तो उसके प्रति वात्सल्य समुद्र की उत्ताल तरंगों की कल्पना सुकर नहीं है। ऐसे अद्भुत भावुक‡ मूलजी के लिए ममतामयी माता, अप्रतिमप्रेमाबद्ध पिता, वात्सल्यभूमि कनिष्ठ भगिनी-भ्राताओं का वियोग भी तो कोई अर्थ रखता है। इस विकट उद्वेग का आंशिक भी प्रशमन होकर योगानुकूल चित्तस्थिरता-सम्पादन को भी कुछ तो समय अपेक्षित है हो। इस सब विचार से भी यही निष्कर्ष निकलता है कि महापुरुष मूलजी ने सं० १६०३ के प्रथम पक्ष, चैत्र शुक्ल के प्रारम्भ ही में गृह-त्याग किया होगा। उनने पहली अप्रैल १८४६ के (चैत्र शु० ५ बुधवार) के लगभग ही स्वबन्धुवर्ग से नाता तोड़ दिया था। वाचक वृन्द, इस समय के ठीक २६ वर्ष पश्चात् इन्हीं जगद् वन्द्य महर्षि दयानन्द ने सं० १६३२ में सरस्वती पञ्चमी (चैत्र शु० ५ शनिवार=१० अप्रैल १८७५) को बम्बई में

† एक बार समीपी खेत वाले ने कर्षन जी के खेत पर अधिकार कर लिया था, वृत्तान्त विदित होने पर श्री मूलजी तलवार लेकर गए और अकेले ही नौकरों समेत खेत वालों को भगा दिया।

महर्षि की तेजस्विता देख कर बीकानेर के राजकवि सुन्दरजी नाथूराम को धारणा होगई थी कि महर्षि का जन्म काठियावाड़ का न था।

* महर्षि के माता पिता का वय, उनके अन्य पूर्वजों का आवश्यक वृत्तान्त, ऋषि के भाई बहिनों के जन्म, विवाह, मृत्यु आदि के संवत् तथा महर्षि के अक्षरारम्भ, उपनयन, पार्थिवपूजन आरम्भ आदि सर्व घटनाओं के संवतों का निरूपण हम अगले लेख में करेंगे।

‡ महर्षि दयानन्द स्वयं अनुभव करते थे कि उन्होंने माता-पिता की आत्मा को घोर संताप पहुँचाया है और कहते थे कि इसी कारण उन्हें कोई योग्य शिष्य नहीं मिलता

संसार के कल्याण के अर्थ आर्यसमाज की स्थापना की थी।

मुमुक्षु मूलजी के उस महान् कार्य को आज १०० वर्ष व्यतीत हो गए हैं। अब स० २००३ है, क्या ऋषि का कोई भी भक्त इस शुभ सवत् में महान् मद्र-साधक कार्य के लिए धृत-व्रत और उद्योग-परायण होगा ?

और क्या सुप्त आर्य जगत् इस पुनीत वर्ष में एक शताब्द्युत्सव भी न मनाएगा और पवित्र सत्यार्थप्रकाश की रक्षार्थ अध्यवसायी न होगा ?

— —

जगत् को आर्यसमाज की क्या आवश्यकता है ?

(लेखक—श्री प० सुधाकर जी सिद्धान्तविशारद बंगलौर)

बहुधा यह कहा जाता है कि संसार में जितनी अधिक संस्थायें होंगी, उतना ही अधिक झगड़ा फैलता जायगा। क्या, कहीं आर्यसमाज भी कलह बढ़ाने वाली संस्थाओं में से नहीं है ? एकता के नाम पर अनैक्य उत्पन्न करने वाली संस्था तो नहीं है ?

इन बातों का उत्तर हमें तभी मिलता है, जब हम सब से पहले समझ लें कि संस्था या समाज क्या चीज है। "सम्यक्प्रकारेण मानवान् स्थापयति इति संस्था।" सुचारु रूप से मानवों का स्थापन करने वाली ही संस्था है। पैसे बटोरने या अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये एकत्र होने वाले मनुष्यों के समूह को अगर हम संस्था कहेंगे तो हम या तो उस शब्द के महत्त्व से अपरिचित हो कर ऐसा करेंगे या जान बूझ कर उस पवित्र शब्द का दुरुपयोग करेंगे। मैं तो कहूँगा कि मनुष्यों को मनुष्यों से व्यर्थ में लड़ाने वाले समूहों का नाम 'दुःस्था' होना चाहिये, न कि संस्था।

और लड़ाने की बात रह जाती है। सृष्टि के आदि से झगड़ा होता आया है और होता रहेगा। जब तक यह संसार अल्पज्ञ जीवात्माओं का कर्मक्षेत्र बना रहेगा, झगड़ा भी होता रहेगा। परन्तु बात यह होनी चाहिये कि मनुष्य इस लड़ाई में पुण्य का सैनिक बन कर पाप का सामना करे, सत्य का सिपाही बन कर असत्य पर प्रहार करे। जो समूह मनुष्यों में ऐसे पवित्र भाव भरेंगे, उन को ही संस्था कहा जा सकता है। जो संघ या समूह सत्य के योद्धाओं के बदले असत्य के पुजारियों को तैयार करेंगे, उन का तो संस्थात्व ही सिद्ध नहीं होता।

अब हम जरा विचारें कि आर्यसमाज किस संस्था का नाम है। नाम से ही स्पष्ट है कि आर्य समाज श्रेष्ठ जनों का सच्चित समूह है। संस्था शब्द की मैंने जो व्युत्पत्ति बताई है, वही समाज शब्द पर भी लागू होती है। झूठ मूठ ही अन्यों को सताने वाले असत्य अन्याय, स्वार्थ आदि दुर्गुणों के प्रेमी जन तो आर्य हो ही नहीं सकते। समाज शब्द का तो अर्थ ही ठीक रास्ते पर ले जाने वाला समूह है। पर यह तो शब्दार्थ हुआ। हर एक पथ और हर एक सम्प्रदाय शब्दार्थ के बल से अपनी संस्था की महत्ता आसानी से सिद्ध कर सकता है। इस लिये, यदि हमें किसी संस्था की महत्ता या वास्तविक उपयोगिता का परिचय प्राप्त करना है तो हमें उस के सिद्धान्तों का पहले ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये और फिर देखना चाहिये कि क्या वे सिद्धान्त जगदुपकार के लिये सचमुच उपादेय हैं। इस लिये अब हमें देखना चाहिये कि आर्यसमाज के क्या सिद्धान्त हैं।

आर्यसमाज का धर्म वही है, जो वेदों का है। आर्यसमाज यह चाहता है कि वैदिक सिद्धान्त संसार भर में फैल जावें। किसी मतीय भावना से नहीं, मगर इस लिये कि वेद ईश्वरोक्त होने से सार्वभौम हैं, सारे विश्व की सम्पत्ति हैं। आर्य-समाज का यह दावा है कि आज दुनियां में जितने मतमतान्तर हैं, उन सब में विद्यमान सत्यांश का मूल स्रोत तो वेद ही हैं। लेकिन यह

तो कोई नयी बात नहीं लगती, क्योंकि प्रत्येक मतावलम्बी अपने मत के बारे मे शायद यही कहता हुआ नजर आता है। हमें एक घटना आज याद आ रही है। ३४ साल हुए होंगे मैं एक बार बेंगलूर से बस मे बैठे हुए केंगेरा जा रहा था। मेरे पास द मुसलमान बन्धु बैठे हुए थे। उन मे से एक तो अलीगढ़ मुसलिम विश्व विद्यालय मे रह चुके थे दूसरे बूढे बाबा तो बिल्कुल उन्नीसवीं शताब्दी के कट्टर मुल्ला लगते थे। बूढे बाबा मेरे खादी कपडे देखकर कहने लगे कि बस, यह तो इसलाम की विजय है, क्यों कि कुरान शरीफ की फलानी आयत में ज़ाहिरा तौर पर कहा हुआ है कि खादी ही पहननी चाहिये। मैंने कहा—होगा। वे और भी ज़ोरदार शब्दों में कहने लगे कि इन हिन्दुओं को, खास करके कांग्रेसी हिन्दुओं को इसलाम के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये, क्योंकि आज कल जो कुछ भी अच्छाई इन लोगों मे है, वह सब इन को इसलाम से ही मिली हुई है। खने का तो ऐसा मालूम होता है कि गान्धी ने यह सब बताया है, पर हकीकत यह है कि गान्धी जी ने यह सब इसलाम से सीखा है। आगे जाकर उन्होंने कहा कि देखो तुम्हारे गान्धी ने १६१४ की लडाई में सिपाही इक्ट्ठे किये थे, हिंसा का पक्ष लिया था। पर उसके बाद खुदा की मर्जी ऐसी हुई कि गान्धी जी खान अब्दुलगफ्फ़ार खान के सम्पर्क में आये। गफ्फ़ार खान क्या थे, कुरान शरीफ की जीती जागती तसवीर थे। उन्होंने गान्धी जी को अहिंसा सिखायी। बस, अब गान्धी जी महात्मा बन गये। फिर उन्होंने हिन्दुस्तानियों की अकल पर लानत भेजी कि ये लोग गफ्फार खान को सरहदी गान्धी कहते हैं, जो कि सरासर गलत है, कहना तो यह चाहिये कि गान्धी जी गुजराती गफ़्फ़ार खान हैं। एक मुसलमान भाई के मुख से अहिंसा सम्बन्धी ऐसा इतिहास सुन कर मेरे दिल पर और कोई प्रभाव भले ही न हुआ हो, पर कुछ मनोरञ्जन तो अवश्य हुआ। मैं मुस्कुरा कर रह गया, मुसलिम यूनिवर्सिटी वाले सज्जन भी हंस पडे।

खैर, यह घटना मैंने इस लिये सुनायी कि प्रत्येक मतधारी किस प्रकार दुनियाँ भर की अच्छाई का कारण अपने मतको ही मानता है। आप लोगों ने ईसाई प्रचारकों के मुख से यह बात हज़ारों बार सुनी ही होगी कि भगवान् ईसा ने ही दुनियाँ में सब से पहिले ईश्वर को पितृत्व और मानव को भ्रातृत्व का पाठ पढ़ाया। उन के सामने आप सैकड़ों वेद-मन्त्र पेश करें जिन में परमात्मा को पिता और मनुष्य को भ्राता कह कर पुकारा हो, वे मानते नहीं।

लेकिन इस प्रकार का दोष आर्यसमाज में नहीं आ ता। न केवल आर्यसमाजियों के, बल्कि अनार्यसमाजी भारतीयों और पाश्चात्य ईसाई विद्वानों के विचार में भी वेद मनुष्य जाति की पहली किताब है। फिर हम जो जो बातें वेद में से उद्धृत कर के बताते हैं, उन के बारे में यह कैसे कहा जा सकता है कि ये बातें क़ुरान् या इञ्जील की नकलें हैं ?

सबसे पहले, आर्यसमाज का यह सिद्धान्त है कि सार्वभौम वेदों के कथनानुसार परमात्मा एक निराकार और निर्विकार महती शक्ति है, जो कि सर्व-व्यापक और सर्वज्ञ तत्त्व है और यही

शक्ति विश्व की कर्त्री, धर्त्री और संहर्त्री है। यजुर्वेद स्पष्ट रूप से ऐसा बता रहा है:—

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

अर्थात्—वह परमात्मा सर्वव्यापी है तेज—स्वरूप है, अशरीर है, निर्विकार, बन्धनों से नित्य मुक्त है, शुद्ध है, पाप उसको छू भी नहीं सकते। वह सर्वज्ञ है, ज्ञानी है सर्वोपरि है और अजन्मा है। वही परमात्मा शाश्वत जीवों को यथास्वरूप में ज्ञान और द्रव्यों को प्रदान करता है ऐसे हज़ारों मन्त्र उद्धृत किये जा सकते हैं। ऐसे लक्षणों वाला परमात्मा नितान्त। वैज्ञानिक तत्त्व है, उसका मूर्तिमान् होना या अवतार लेना केवल एक कल्पना है। इसी लिये आर्यसमाजी न अवतारों में विश्वास करते हैं, न मूर्ति-पूजा में।

बुद्धि तो स्वयं कहती है कि ऐसा सर्वत्र व्यापक तत्त्व एक ही हो सकता है, फिर भी यह कहने वाले कहते ही रहते हैं कि वेदों में एकेश्वरवाद नहीं है, वेद तो सैकड़ों देवी देवताओं की पूजा का विधान बताते हैं। लेकिन यह वेदों के अपर्याप्त ज्ञान का परिणाम है। वेद स्वयं बताता है —

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्। एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः॥

अर्थात्, तेजः स्वरूप परमात्मा को इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, यम, मातरिश्वा आदि नामों से पुकारते हैं। वह तो दिव्य है, सुपर्ण है, महान् आत्मा है। विद्वान् लोग एक ही तत्त्व को भिन्न २ नामों से पुकारते हैं। कितनी स्पष्ट भावना है। इसी प्रकार के वेद-मन्त्र आर्यसमाज के ईश्वर-विषयक-सिद्धान्त के आधार हैं। वेदों में स्पष्ट-रूप में कहा गया है कि परमात्मा जीव-मात्र का पिता है। सुनिये:—

यो नः पिता जनिता यो विधाता
धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यो देवानां नामधा एक एव
तं सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या॥

अर्थात्—जो हमारा पिता है, जो उत्पादक है, जो हमारे भाग्यों का विधाता है, जो सर्वज्ञ है और सब देवों का एक ही देव है, ऐसा ही परमात्मा सारे विश्व की शरण है, वैदिक ईश्वर कल्पना का आधार प्रेम है ऐसे प्रेमस्वरूप पिता की पूजा का जो स्वरूप आज आप देख रहे हैं, उससे पिता की प्राप्ति तो दूर रही, मनुष्यों का हित भी सिद्ध नहीं हो रहा है। देश की सम्पत्ति का देवालयों में दुर्व्यय हो रहा है। धन का अपव्यय ही नहीं, राम, कृष्ण, शिव, महादेव, काली, मारी आदि हज़ारों देवी-देवताओं के पूजकों के अलग २ पथ बन गये हैं, नमाज़ और आरती, मसजिद के सामने बाजा और नगर कीर्तन, यज्ञोपवीत और लिङ्ग—न जाने क्या २ झगड़े फैले हुए हैं। जब तक एकेश्वरवाद का प्रचार और निराकार पिता की मानसी पूजा का प्रारम्भ न होगा, इन झगड़ों का निबटारा हो ही नहीं सकता।

हाँ, यहाँ समन्वयवादियों के एक प्रश्न का उत्तर दे देना आवश्यक है। वे कहते हैं कि हमारे उद्धृत वेद-मन्त्र में तो 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।' यह वाक्य पढ़ा ही गया है, बहुत से

नामों से पुकारते हैं तो बहुत से रूपों में देखते भी होंगे। इस दृष्टि से देखा जाय तो अनेकेश्वर पूजा तो हम करते नहीं, परन्तु एकेश्वर की ह अनेक रूपों में उपासना करते हैं। अत हम भी वैदिक हैं। सुनने में यह पक्ष सुन्दर ही लगता है, पर वास्तव में यह वैदिक धर्म के विरुद्ध है। उसके अंदर विद्यमान गुणों को देख कर एक व्यक्ति को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारना एक बात है, उस मनुष्य को कुत्ता, घोड़ा, गधा, हाथी, बन्दर आदि रूपों में देखने का प्रयत्न करना बिलकुल दूसरी बात। ईश्वर निराकार होने पर भी निर्गुण और निष्क्रिय तो है नहीं, फिर जहां गुण और क्रिया का सम्बन्ध है, वहाँ नाम भी हो सकते हैं। इस लिये ईश्वर को कई नामों से पुकार सकते हैं। पर जिसका रूप ही नहीं, उसके रूपों की कल्पना तो सिर्फ कल्पना ही है, कोई वास्तविक तत्व नहीं है।

आर्यसमाज का दूसरा सिद्धान्त है कि जीवात्मा भी नित्य है और जीवात्माओं का परस्पर भ्रातृ सम्बन्ध है वेदों में कहा है—

अकामो धीरो अमृत स्वयंभू
रसेन तृप्तो न कुतश्चनोन ।
तमेव विद्वान्न बिभेति मृत्यो-
रात्मान धीरमजर युवानम् ॥

"जीवात्मा तो अकाम है—केवल कामोत्तेजित देह-क्रिया से इसकी उत्पत्ति नही होती, सिर्फ इसके शरीर की रचना होती है। यह धीर है—ज्ञान वाला है, यह नित्य है, अजन्मा है। यह जीवात्मा रस अर्थात् परमात्मा की प्राप्ति से तृप्त होता है, यह परिणामी नहीं है। इसी प्रकार अपनी धीर, अजर और नित्य-युवा आत्मा को जान कर विद्वान् मृत्यु-भय को पार कर जाता है।

जरा विचार करने से ज्ञात हो जाता है कि जीवात्मा के नित्यत्व के बिना, धर्म निराधार ही प्रतीत होता है। क्योंकि जब एक बार मान लिया कि जीवात्मा एक तुच्छ तत्व है, जिसकी आदि भी है और अन्त भी, तो स्वाभाविक तौर पर यह मान लेना पड़ता है कि ईश्वर ने इसे बनाया है। ईश्वर ने व्यर्थ में कष्ट-सुखों के चक्र में डाल कर पीसने के लिये, पाप-पुण्य के झमेले डाल कर रुलाने के लिये इन जीवात्माओं को क्यों बनाया-आदि हजारों गम्भीर प्रश्न उत्पन्न हो जाते हैं। फिर सब पाप-पुण्य का भागी भी परमात्मा ही सिद्ध होता है। मौज आयी तो जीवात्माओं को बना लिया- किसी को रुलाया और किसी को हँसाया, फिर मौज आयी सबको मिट्टी में मिला दिया—यह भी कैसा ईश्वर है।

दूसरे यह कि जब जीवात्मा को अनित्य मान लिया गया तो धर्म में आस्था नहीं रह जाती। मैं दिन भर मेहनत करके इस लिये रोटी कमाता हूँ कि शाम को मजे से खाऊँ, पर मुझे यह अच्छी तरह मालूम हो जावे कि शाम तक तो मेरा नामो-निशान तक नहीं रह जायगा तो मैं किस लिये परिश्रम करूँगा? इसी प्रकार जीवात्मा इसी लिये उपासना आदि साधनायें करता है कि उस को मोक्षानुभव होवे। परन्तु तब तक उस का अस्तित्व ही मिट जाय तो वह किस लिये धर्म का आश्रय लेगा?

इस लिये आर्यसमाज जीवात्माओं का नित्यत्व मानता है, जो कि वेदों का सिद्धान्त है। सिर्फ इतना मान लेने से ही उद्देश्य की सिद्धि नहीं हो जाती। वेद बतलाता है कि तुम सब भाई-भाई हो

और समानभाव से ही तुम्हें रहना चाहिये।

"अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सम्भ्रातरो वावृधु: सौभगाय।"

अर्थात्, तुम मे न कोई बड़ा है, न कोई छोटा। ये सब भाई-भाई हैं, इकट्ठे चल कर ही उन्नति को प्राप्त होते हैं। फिर एक जगह कहा गया है —

"अज्येष्ठासो अकनिष्ठासो अमध्यमासो महता विवावृधु।"

अर्थात्, इन में न कोई छोटा है, न कोई बड़ा, नहीं कोई मध्यम है। सब एक साथ वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इन मन्त्रों में अत्यन्त स्पष्ट रूप से मानव-भ्रातृ भाव का वर्णन है, जो कि आर्यसमाज का सिद्धान्त है। परन्तु, हम दुनियाँ मे देखते हैं कि सर्वत्र द्वेष भाव ही दृग्गोचर हो रहा है? भ्रातृ भाव का तो नाम ही नाम है। अन्य मतावलम्बियों को तो छोड़िये, अपने को वैदिक धर्मी कहने वाले हमारे हिन्दू भाई भी आज तक जन्म मूलक जाति पद्धति का समर्थन ही करते चले जा रहे हैं। आर्यसमाज गुण-कर्म स्वभावानुसार वेदोक्त वर्णव्यवस्था को तो मानता है, पर यह स्पष्टतया बतला देता है कि आधुनिक जन्म-मूलक जातिपद्धति का वर्णव्यवस्था के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। वेदोक्त वर्णव्यवस्था तो गुण-कर्म-स्वभावाश्रित सामाजिक सङ्गठन है। उस में ऊँच-नीच का कोई भाव नहीं है। जिस ऋचा में वर्ण-व्यवस्था का निर्देश है, वह यह है —

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहू राजन्य: कृत:।
ऊरू तदस्य यद्वैश्य: पद्भ्या शूद्रो अजायत॥

इस मन्त्र का स्पष्ट अर्थ तो यह है कि इस विश्वका मुख ब्राह्मण है, बाहू क्षत्रिय हैं, ऊरू वैश्य हैं और पाद शूद्र हैं। लेकिन हमारे सनातनी बन्धु इस का यह अर्थ लगाते हैं कि चतुर्मुख ब्रह्मा जो कि सृष्टिकर्ता है, के मुख से ब्राह्मण पैदा हुए, बाहुओं से क्षत्रिय पैदा हुआ, रानों से वैश्य और पादों से शूद्र पैदा हुए। आप सारा पुरुष सूक्त पढ़ जाइये, आप को कहीं भी इस चतुर्मुख ब्रह्मा के शुभ दर्शन नहीं होंगे। प्रत्युत सूक्त के प्रारम्भ में ही आप एक ऐसे अद्भुत पुरुष के दर्शन करेंगे, जिस के एक हजार सिर, एक हजार आँखें और एक हजार पाँव हैं। उस के कितने हाथ हैं, यह तो नहीं बताया। हिसाब लगाकर देखना भी मुश्किल है, क्योंकि इस एक हजार सिरों वाले पुरुष के हमारे हिसाब के अनुसार तो दो सहस्र नेत्र और दो सहस्र पाद होने चाहिये थे, पर हैं तो एक एक हजार ही। इस हिसाब के अनुसार अनुमान कर लेना चाहिये कि उस के बाहु भी एक हजार ही होते होंगे। इन हजार सिरों में से किसी एक सिर में स्थित मुख से एक ब्राह्मण निकल आया, किन्हीं दो हाथों में से एक क्षत्रिय निकल आया, दो रानों से एक वैश्य निकल आया और दो पादों में से एक शूद्र फूट पड़ा-आदि अर्थों को देखते हुए बुद्धि चकरा जाती है। कोई विद्वान् यह भी कहते दिखाई देते हैं कि 'एक ब्राह्मण' एक क्षत्रिय' आदि एक वचन-वाले अर्थ अभीष्ट नहीं है, अपने २ समाज के प्रतिनिधि रूप से एक एक व्यक्ति का निर्देश है। यह मान लेने पर भी विभक्ति वाला आक्षेप रह ही जाता है। इस मन्त्र में 'पद्भ्यां' शब्द को छोड़ कर और कहीं पञ्चमी विभक्ति नहीं है, जैसे मुखात्, बाहुभ्याम्, ऊरूभ्याम्, जिससे यह अर्थ किया जाय कि मुख से, बाहु से, ऊरुसे। फिर उन अङ्गों से ब्राह्मण

आदि निकल आये, इस प्रकार का अर्थ ही अयुक्त प्रतीत होता है। जो 'पद्भ्यां' शब्द पढ़ा है, उस को चतुर्थी मान कर "पादों के लिए या पादों के स्थान के लिए" इस प्रकार अर्थ कर दें, तो अच्छी सङ्गति भी लग जाती है और हमारा किया हुआ अर्थ ही निष्पन्न होता है। हमारे पक्ष का समर्थन इस ऋचा के ऊपर वाले मन्त्र से भी हो रहा है। देखिये —

"मुख किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते।"

इस में चार प्रश्न हैं - १ इस का मुख क्या है? २ इस के बाहू क्या हैं? ३ इस के ऊरू क्या हैं? और ४ इस के पाद क्या हैं? अल्प बुद्धिवाला बालक भी जानता है कि इन प्रश्नों के उत्तर १ उस के मुख से ब्राह्मण निकल आया, २ उस के बाहुओं से क्षत्रिय पैदा हुआ, ३ उस की रानों से वैश्य उत्पन्न हुआ, ४ इस के पादों से शूद्र हुआ—इस प्रकार देना अपनी निर्बुद्धिता का प्रदर्शन करना ही है। कोई पूछे कि तुम्हारा नाम क्या है? मै कहूँ कि मेरे दो हाथ हैं- तो लोग मुझे क्या कहेंगे। हमारी उद्धृत ऋचा मे इन्हीं चार प्रश्नों के उत्तर हैं।

सारी बात तो यह है कि इस सूक्त में सृष्टि प्रकरण का आलङ्कारिक वर्णन है। वेद उच्च कोटि की कविता है। हर एक बुद्धिमान् व्यक्ति यह आसानी से समझ सकता है कि कविता की आत्मा अगर भाव है तो अलङ्कार उस का शरीर है। प्रथम मन्त्र में ही परमात्मा को पुरुष कहा गया है, निरुक्त कारने पुरुष शब्द की निरुक्ति ऐसी की हुई है:—

"पुरुष पुरिषाद । पुरिशय । पूरयतेर्वा। पूरयत्यन्तरिति अन्तरपुरुषमभिप्रेत्य।" ॥ नि० अ० २ ख० ३ ॥

अर्थ भी पढ़िये.-"पुर में स्थित है। पुर में आसीन है। अथवा सब को भर रहा है—सब में व्यापक हो रहा है इसलिये वह पुरुष है। जीवात्मा के अन्दर प्रविष्ट हो कर उस के आन्तरिक भाग को भरता है। इसलिये वह पुरुष है।" स्पष्ट है कि जीवात्माओं का भी अन्तरात्मा होने के लिये, सब में व्यापक होने के लिये सूक्ष्मता और निराकारत्व की अपेक्षा है। निराकार परमात्मा का ही वर्णन यहाँ अभिप्रेत है। फिर कैसे अनङ्ग के अङ्गों से वर्णों की उत्पत्ति हो सकती है? शतपथ तो "सर्वं वै सहस्रम्।" इस प्रकार बोल ही रहा है। फिर सहस्रशीर्षा आदि का भी अर्थ सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा, सर्वगन्ता आदि ही हो सकता है।

इतना कहने पर यह अपने आप सिद्ध हो जाता है कि विराट्-शरीर में वह कार्य जो मनुष्य शरीर में मुख के है-करने वाले ब्राह्मण होते है। बाहुओं के काम करने वाले क्षत्रिय, ऊरू के काम करने वाले वैश्य, पादों के काम करने वाले शूद्र होते है। शरीर के सारे ही अङ्ग, समान रूप से प्रिय है। कोई भी पुरुष, जो कि अपने मुख को तो नीरोग रखना चाहे, पर पाँवों के रुग्ण हो जाने पर भी उसकी सुधि न लेवे, निर्बुद्धि ही कहलायगा।

तो आर्यसमाज वर्णव्यवस्था को तो सामाजिक उन्नति का साधन मानता है, पर वर्तमान जाति पद्धति का उग्र खण्डन करता है। वर्ण का लक्षण ही "वर्णो वृणोते"-अर्थात् 'चुना जाता है, इस लिए वर्ण है"-ऐसा है। और जाति की

व्यवस्था न्याय दर्शनकार ने "आकृति जाति लिङ्गाख्या, समानप्रसवात्मिका जातिः" इस प्रकार की है। तात्पर्य यह है कि शकल ही जाति का चिन्ह है, अपने जैसों को पैदा करने वाली ही जाति है। तो आधुनिक जातिपद्धति कितनी अवैज्ञानिक और अशास्त्रीय है, यह इस से स्पष्ट हो जाता है।

(शेष अगले अङ्क में)

साहित्यिक प्रचार

(लेखक—श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फ़ाज़िल, हिन्दू विश्व विद्यालय, बनारस)

आर्य समाज के प्रचार कार्य में क्या परिवर्तन हो अथवा यह कि वार्षिक उत्सवों के प्रोग्राम में क्या ढंग रहे—इस प्रकार की बातों के निमित्त कई विचारशील व्यक्तियों ने किसी न किसी रूप में कुछ विचार प्रकट किया है और परिवर्तन होने की आवश्यकता समझी है। पिछले 'सार्वदेशिक' (जून) के अक में मौखिक प्रचार के विषय में मैंने कुछ लिखा था अब साहित्यिक प्रचार के विषय में कुछ कहना चाहता हूँ क्यों कि यह कार्य ही ऐसा है जिससे प्रचार स्थायी व ठोस हो सकता है। मौखिक प्रचार के पश्चात् या साथ ही साथ साहित्यिक प्रचार की कमी का परिणाम है कि आर्य समाज मे शिथिलता है। जो लोग अपने आपको आर्य समाजी कहते हैं उन में से अनेकों में दम नहीं है—इत्यादि

मैंने सयुक्त प्रान्त व कई अन्य प्रांतों के विशाल आर्यसमाज मन्दिरों को देखा है। उन में से कुछ ऐसे हैं जिन की यज्ञशाला बड़ी सुन्दर बनी है। कुछ समाजों में अतिथियों के ठहरने के लिये अच्छे स्थान हैं। कहीं पर पाखाने नये ढग पर बने हैं। कहीं स्नान-घर अच्छे ढग पर हैं। किन्तु पुस्तकालयों की दशा मुझे कहीं अच्छी न मिली। कई समाजों में वेद भाष्य के वे अक देखने में आये जो पहिले पहिल छपे थे परन्तु मैं ने उन्हें सब जगह बुरी दशा में ही देखा। खेद है कि उन की रक्षा या जिल्द बन्दी का प्रबन्ध असन्तोष जनक ही मैंने पाया।

आर्य समाज मन्दिरों के कमरों में वृद्धि हो, कोई पाठ-शाला वहा चले—इस प्रकार की बातों के लिये घूम-घूम कर लोगों ने चन्दा किया है। अनेक लोगों ने अच्छा दान भी ऐसे कामों के लिये दिया किन्तु पुस्तकालयों के लिये विशेष रूप से कहाँ कहाँ उद्योग हुआ इस का विचार हमारे भाई स्वयं कर सकते हैं और क्या यह बात स्पष्ट नहीं है कि दिल्ली में ही दीवान हाल आर्य समाज का भवन जैसा है उसके विचार से वहां का पुस्तकालय अभी तक वैसा नहीं है।

साफ़ बात यह है कि हमारा ध्यान पठन पाठन की ओर कम है और जिस ओर है वह प्रकट ही है। कहीं पर पद के लिये झगड़ा है, कहीं पर किसी सस्था को अपनाने का झगड़ा है इत्यादि। क्या हमारी अरुचि का फल नहीं कि आर्य समाज के उत्सवों पर जो पुस्तक विक्रेता आते हैं वे प्राय इधर उधर की पुस्तकें लाते हैं। उस अवसर पर यदि कोई चाहे कि आर्य समाज से सम्बन्ध रखने वाली उपयोगी पुस्तकें अथवा श्री स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रन्थों को खरीदे तो ऐसा होना बड़ा कठिन काम है। सन् १६२५ में दयानन्द शताब्दी बहुत धूम धाम के साथ मनाई गई थी। उस अवसर पर "दयानन्द ग्रन्थमाला" के नाम से श्री स्वामी जी के ग्रन्थों का संग्रह दो भागों में दस हज़ार की सख्या में निकला किन्तु अब बीस वर्षों से कुछ अधिक समय व्यतीत हुआ और दस हज़ार पुस्तकें शायद अभी तक सब की सब नहीं बिकीं। यदि कोई कहे कि

सत्यार्थ प्रकाश इतनी संख्या में बिका या छपा है तो इस सम्बन्ध म यह कहना आवश्यक है कि सत्यार्थ प्रकाश की खपत में विरोधियों के विरोध का भी अंश बहुत कुछ काम कर रहा है और केवल सत्यार्थ प्रकाश की खपत से ही सारा काम नहीं हो सकता है।

शायद ही कोई समाज ऐसी होगी जो वार्षिक उत्सवों के अवसर पर विशेष रूप से चन्दा न करती हो उसी चन्दे से उपदेशक व भजनीक आदि का उपदेश होता है। सुनने वालों में चन्दा देने वाले भी होते हैं और चन्दा न देने वाले भी होते हैं। सुनने वालों से किसी की फ़ीस नहीं ली जाती है अर्थात् उनको मुफ्त में उपदेश दिया जाता है परन्तु बहुत कम ऐसा होता है कि लोगों को धार्मिक साहित्य कम दाम या बिना दाम के दिया जाय। प्राय जबानी जमा-खर्च हुआ करता है।

मेरे विचार से आवश्यकता इस बात की है कि उत्सव के लिये जो बजट हो उस का उचित अंश धार्मिक साहित्य के लिये निर्धारित हो। ऐसा साहित्य लोगों को कम दामों पर दिया जाय और आवश्यकतानुसार किसी व्यक्ति को उपहार रूप में दिया जाय। यदि उत्सव में मगाया हुआ साहित्य सब का सब न छप सके तो हर्ज नहीं क्योंकि शिवरात्रि, आर्य समाज दिवस, सत्यार्थ प्रकाश दिवस, आदि के अवसर पर बचा हुआ साहित्य काम दे सकता है। और यदि कोई व्यक्ति अन्य किसी समय पर धार्मिक साहित्य क इच्छुक हो तो वह भी सुगमता के साथ प्राप्त कर सकता है।

धार्मिक साहित्य के लिये धन लगाने अथवा वार्षिक या किसी प्रकार के उत्सव पर उपदेशकों को बुलाने में स्थानीय परिस्थिति को भी ध्यान में रखना बहुत जरूरी है। उदाहरणार्थ जानना चाहिये कि जिस स्थान के आस-पास में शुद्धि पर जोर देने की विशेष आवश्यकता है वहाँ पर शुद्धि विषयक पुस्तकों को अंग्रेजी उर्दू, हिन्दी में मंगाना व उन का प्रचार करना चाहिये। और साथ ही साथ वार्षिक या अन्य उत्सव में एक ऐसा उपदेशक वहाँ बुलाना चाहिये जो शुद्धि पर केवल अच्छा व्याख्यान ही न दे सके बल्कि लोगों की शंकाओं का समाधान भी भली भांति कर सके ऐसे अवसर पर इस बात की भी घोषणा जोरों के साथ होनी चाहिये कि अमुक महाशय या पण्डित से जो कोई चाहे शुद्धि विषयक शंकाएं दूर करले।

सभासदों की टालियों का बनाना भी उपयोगी होगा प्रत्येक टाली कभी किसी मुहल्ले या स्थान में बारी २ जाया करे और अपने धार्मिक साहित्य पूरे या कम दाम पर बेचा करे। श्री स्वामी जी की पुस्तक-व्यहारभानु, आर्योद्देशरत्न माला या गो करुणा निधि की खपत कहीं कहीं बहुत अच्छी हो सकती है। ऐसा होने से धार्मिक साहित्य के प्रति लोगों की रुचि शनै: शनै: आगे बढ़ सकती है।

एक टोली यदि महीना में एक बार भी दो घंटे कुछ उद्योग किसी मुहल्ला या स्थान में करे तो सम्भवत बहुत उपयोगी फल हो सकता है। हम को लोगों की रुचि का विचार करके ही पुस्तकों का प्रचार न करना चाहिये बल्कि अपनी आवश्यकता को दृष्टि में रख कर लोगों के यहाँ धार्मिक साहित्य को पहुँचाना चाहिये। प्रत्येक टोली के पास पाच प्रकार की पुस्तकें हों तो अच्छा होगा ताकि लोगों को चुनने में अधिक समय लगाने की आवश्यकता न पड़े।

आशा है कि विचार शील सज्जन मेरी बातों पर कुछ ध्यान देंगे और यथासम्भव उन्हें कार्य रूप में लाने का उद्योग करेंगे।

———

आर्य कुमार जगत्

जैसे कि सार्वदेशिक के गत अङ्क में 'श्रावणी उपाकर्म के सन्देश' पर सम्पादकीय टिप्पणी करते हुए मैंने बताया था स्वाध्याय मनुष्य जीवन को उन्नत बनाने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। अखिल भारतीय आर्यकुमार परिषत् ने कुमार कुमारियों और युवक युवतियों में स्वाध्याय शीलता तथा धार्मिक ज्ञान बढाने के लिये जो परीक्षाओं का क्रम इस वर्ष नियत किया है उसे आर्य जनता की सूचनार्थ नीचे प्रकाशित किया जाता है कुमार कुमारियों और युवक युवतियों को अधिक से अधिक संख्या में इन परीक्षाओं में सम्मिलित होकर लाभ उठाना चाहिए।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति

कार्य कर्त्ता प्रधान अ भा आर्य कुमार परिषत्

❀ सिद्धान्त सरोज परीक्षा ❀

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) धार्मिक शिक्षा भाग १, २,
(प सूर्यदेव जी शर्मा ≡) ५०

(२) धार्मिक शिक्षा भाग ३,
(प० सूर्यदेव जी शर्मा ≡) ५०

साधारण ज्ञान

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न
(आ. सा. मण्डल) ।≈)
या आर्यजगत् के उज्ज्वल रत्न
(प्रेमी प्रेस, मेरठ) ।) अङ्क ४०

(२) बाल दयानन्द चरित्र
(शारदा मन्दिर लि०) ≡) ,, ४०

(३) हिन्दुस्तानी शिष्टाचार
(इन्डियन प्रेस) ≈)॥ , २०
या वैदिक शिष्टाचार
(प० हरिश्चन्द्र जी ≡)

❀ सिद्धान्त रत्न परीक्षा ❀

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) पञ्च महा यज्ञविधि ऋषि दयानन्द जी –)॥ अङ्क २०

(२) आर्योद्देश्य रत्नमाला ,, –)। ,, २०

(३) व्यवहार भानु ,, ,, ≈)॥ ,, ४०

(४) सत्यार्थप्रकाश का दसवा समुल्लास ,, २०

सिद्धान्त

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) कर्तव्य दर्पण, (महात्मा नारायण स्वामी जी) ॥।) अङ्क २०

(२) स्वामी श्रद्धानन्द, किसी भी आर्य लेखक का ,, ४०

(३) गोकरुणानिधि, ऋषि दयानन्द जी मूल्य –)॥ ,, २०

(४) बाल वेदामृत, (प्रो० किशोरीलाल जी एम ए) ।≈) ,, २०

॥ सिद्धान्त भास्कर परीक्षा ॥

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) सत्यार्थप्रकाश पूर्वार्ध, ऋषि दयानन्द जी ॥) अङ्क ७०

(२) वेद सदेश, (शारदा मन्दिर लि०) ॥≈) ,, ३०
या वेदोपदेश (स्वा० वेदानन्द)

सिद्धान्त

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) जीवन ज्योति, (प्रिंसिपल दीवानचन्द एम० ए०) ।) अङ्क ४०

(२) आर्य समाज क्या है ? (महात्मा नारायण स्वामी) ।।।) „ ६०

साधारण ज्ञान

तृतीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) वैदिक सिद्धान्त, स्व० लाला रामप्रसाद जी बी० ए० ।।।) अङ्क ५० या वैदिक सिद्धान्त (सार्वदेशिक सभा)

(२) हम १०० वर्ष कैसे जियें (केदारनाथ गुप्त) १।।।) „ ५०

निबन्ध व इतिहास

चतुर्थ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) किसी धार्मिक विषय पर स्वतन्त्र निबन्ध अङ्क ३०

(२) ऋषि दयानन्द जीवन चरित्र, (किसी भी आर्य लेखक का)

(३) आर्यसमाज का इतिहास, प० हरिश्चन्द्रजी ।।।) „ ३५

॥ सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा ॥

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) (ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, ऋषि दयानन्द ।।।) अङ्क ४०

(२) आर्य पर्व पद्धति, सार्वदेशिक सभा ।।।) „ ३० या आर्य पर्वों का परिचय (आर्य प्र० सभा यू० पी =)

(३ संस्कार विधि, ऋषि दयानन्दजी ।=) „ ३०

सिद्धान्त

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१ सत्यार्थ प्रकाश, ऋषि दयानन्दजी ।।) अङ्क ४०

(२) दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह पूर्वार्द्ध १।। „ या आनन्द संग्रह (स्वा० सर्वदानन्द) १।।) अङ्क ३०

(३) काया-कल्प प० बुद्धदेव विद्यालंकार १।) „ ३०

दर्शन व उपनिषद्

तृतीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) उपनिषदें चार (ईश० केन० कठ० प्रश्न) म० नारायण स्वा० द्वारा भाष्य १।।) अङ्क ४०

(२) मैं और मेरा भगवान्, प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय १।।) „ ३०

(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श (सार्व० सभा) १।।) „ ३०

इतिहास व निबन्ध

चतुर्थ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १००

(१) भारतवर्ष का इतिहास (प्रथम भाग) वैदिक तथा आर्ष पर्व, प्रो० रामदेवजी,१।।) अङ्क ५०

(२) निबन्ध किसी राजनैतिक, सामाजिक या धार्मिक विषय पर अङ्क ५०

सूर्यदेव शर्मा एम. ए. डी लिट् परीक्षा मन्त्री
आर्यकुमार परिषद्, अजमेर ।

स्त्रियों का वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार

(लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार, विद्यावाचस्पति, साहित्य भूषण, उ म त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा देहली)

सार्वदेशिक के गत अनेक अङ्कों में मैंने वेदों, ब्राह्मणों, श्रौत सूत्रों, गृह्यसूत्रों तथा अन्य अनेक प्राचीन ग्रन्थों के प्रमाण देकर स्त्रियों के वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार को सिद्ध करने का प्रयत्न किया है तथा इस विषयक श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री आदि की शङ्काओं का समाधान किया है। आशा है निष्पक्षपात विद्वान् इस परिणाम पर पहुचे बिना न रहेंगे कि वेदादि सत्य शास्त्रों के अनुसार स्त्रियों को भी वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाण्ड में भाग लेने का पूर्ण अधिकार है। गत अङ्क में 'आचार्य' शब्द की महाभाष्य दि सम्मत व्याख्या मैंने की थी जो स्पष्टतया विदुषी देवियों के यज्ञोपवीत संस्कार करवा कर वेदाध्यापन के अधिकार को सूचित करता है। मनुस्मृति के समान 'उपनीय ददद् वेदम् आचार्य स उदाहृत' (याज्ञवल्क्य स्मृ० २ । ३४) यह लक्षण भी उसी अर्थ का प्रतिपादक है। इसी प्रकार महाभाष्य ४ । १ । १४ के भाष्य में 'आपिशलमधीते आपिशला ब्राह्मणी, काशकृत्स्नमधीते काशकृत्स्ना ब्राह्मणी' इत्यादि द्वारा आपिशल नामक प्राचीन व्याकरण और काशकृत्स्नी नामक मीमासा की पण्डिता विदुषी का वर्णन है जो शास्त्री जी के स्त्रियों को अशिक्षिता रखने के सिद्धान्त का स्पष्ट विरोधी है। ऐसे ही अष्टाध्यायी ४ । १ । २ । ७८ अणिञोरनार्षयोर्गुरूपोत्तमयोः ष्यङ् गोत्रे के महाभाष्य में लिखा है कि औदमेध्यायाश्छात्रा औदमेधाः औदमेध्याना सङ्घ औदमेघ ॥ औदमेघी नामक स्त्री की छात्राए औदमेधा कहलाए गी और उनके सङ्घ को औदमेघ कहेंगे। इस तरह महाभाष्यादि के नाम से स्त्रियों को अशिक्षिता बताना शास्त्री जी के पक्षपात को सूचित करता है। अभिवादन विषयक व्याकरण नियम उनकी अशिक्षितता को सिद्ध नहीं कर। उस विषय में मनु० २.१२३ की टीका में गोविन्द राज ने लिखा है कि 'स्त्रियश्चाभिज्ञा' अप्येवमेव ब्रूयात् ॥ (मनुटीका संग्रह ख० २ पृ० १५३) शिक्षिता स्त्रियों को भी प्रणाम करते हुए ऐसे ही कहे। स्त्रिय' सर्वास्तथैव च। (मनु० २।१२३) से स्पष्ट है कि यह साधारण नियम सब स्त्रियों के विषय में है। ऐसी छोटी २ बातों से शास्त्री जी का सब स्त्रियों को अशिक्षिता सिद्ध करना पक्षपात सूचक तथा उपहास जनक है। लौगाक्षि गृह्यसूत्र में कन्याओं के लिये १० और १२ वर्ष के ब्रह्मचर्य का इन शब्दों में स्पष्ट विधान है 'दशवार्षिकं ब्रह्मचर्यं कुमारीणा द्वादशवार्षिकं वा ॥ १६।२ तदस्य ब्रह्मचर्यम् ५ । १ । ९४ के अनुसार 'मासो ब्रह्मचर्यमस्य मासिकं ब्रह्मचर्यम्' की तरह दस वर्ष अथवा १२ वर्ष के ब्रह्मचर्य से (न कि १० या १२ आयु तक) यहा तात्पर्य है। द्वादश वर्षाणि यो ब्रह्मचर्यं चरति लौ० सू० २ । ५ से यही अर्थ पुष्ट होता है। ब्रह्मचर्य का मुख्यार्थ ब्रह्म अर्थात् वेद का ज्ञान प्राप्त करना और उसके लिए व्रत करना है यह पहले अनेक प्रमाणों से सिद्ध किया जा चुका है। पुरुषों की तरह कन्याओं का

भी ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन करना चाहिये यह आश्वलायन श्रौतसूत्र १५। २४ में "समानं ब्रह्मचर्यम्" इस सूत्र द्वारा बताया गया है।

पूर्वमीमांसा ६। १। २४ में 'स्ववतोस्तु वचनादैककर्म्यं स्यात्' सू० १७ 'लिङ्गदर्शनाच्च' सू० १८ 'फलवत्ता च दर्शयति' इत्यादि सूत्रों द्वारा स्त्रियों के यज्ञाधिकार का प्रतिपादन करके जो 'तस्या यावदुक्तमाशीर्ब्रह्मचर्यम् अतुल्यत्वात्' ऐसा कहा है उसके शबर स्वामी के सर्वथा मूल विरुद्ध अशुद्ध अर्थ को लेकर शास्त्री जी बडे प्रसन्न हुए हैं और उसको उद्धृत करके उन्होंने लिखा है कि 'य…पर कितने स्पष्ट शब्दों में मीमांसा ने स्त्री को विद्यानधिकृत माना है तब वही मीमांसा स्त्री को वेदाधिकार कैसे दे सकती है? इत्यादि ("सिद्धान्त" पृ० ३६)

इस पर हम स्पष्ट कहना चाहते हैं कि मीमांसा के शबर स्वामी कृत भाष्य को मीमांसा का नाम दे देना उचित नहीं है। शबर स्वामी का इस तथा अन्य अनेक सूत्रों का भाष्य अशुद्ध और खैंचातानी का है यह कहने में हमें कोई सकोच नहीं। हम आर्य ही नहीं, श्री पं० गङ्गा प्रसाद जी शास्त्री जैसे अनेक धुरन्धर 'सनातन धर्मी' विद्वान् भी ऐसा ही मानते हैं। प० गङ्गा प्रसाद जी शास्त्री ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'सनातन धर्म शास्त्रीय अछूतोद्धार निर्णय' में मीमांसा सूत्रों की शबर स्वामी कृत भाष्य की अशुद्धियों को दिखाते हुए पृ० २०-२१ पर लिखा है—

"यह मीमांसा दर्शन के सूत्रों का अक्षरार्थ आपके सामने रखा गया है इस पर स्वतन्त्र रीति से विचार करने पर शूद्र को भी यज्ञ का अधिकार है यह स्पष्ट झलक जावेगा। मीमांसा दर्शन के भाष्यकार शबर स्वामी ने इन सूत्रों से 'शूद्र को यज्ञ का अधिकार नहीं' यह सिद्ध किया है। हम पाठकों की सेवा में तुलनार्थ कुछ विचार रखना चाहते हैं जिन से शबर स्वामी की खैंच आपको स्पष्ट प्रतीत हो जाएगी। तो कहना पडेगा कि शबर स्वामी ने मीमांसा का भाष्य करते समय खैंच की है और शूद्रों को जो यज्ञाधिकार सिद्ध होता था उसे जान बूझ कर छुपाया है।" (पृ० २१)

इसलिये जिस सूत्र में स्पष्ट स्त्री के ब्रह्मचर्य और आशीर्वाद का प्रतिपादन है उसमें 'अतुल्यत्वात्' पद का शबर स्वामी का यह अर्थ करना कि 'यजमान पुमान् विद्वांश्च, पत्नी स्त्री च अविद्या च। यानि च क्रत्वर्थानि समन्त्रकाणि तेषु अविद्यात्वात् पत्नी न स्यात् तस्मात् प्रतिषिद्धस्य पत्न्या अध्ययनस्य पुनः प्रसवे न किञ्चिदस्ति प्रमाणम् अतस्तदपि पत्नी न कुर्यात् ॥'

अर्थात् यजमान विद्वान् और पत्नी अविद्या या अशिक्षिता होती है। अशिक्षिता होने से पत्नी मन्त्र सहित यज्ञ क्रिया में भाग नहीं ले सकती। अध्ययन का निषेध है अतः उसे वह नहीं करना चाहिये। इत्यादि सर्वथा अशुद्ध और अज्ञान सूचक है। 'अतुल्यत्वात्' से तात्पर्य आयु (पुरुष २५ कन्या १६ विवाह के समय) तथा अनुभव आदि की दृष्टि से असमानता है विद्वान् और विद्या रहिता होने की नहीं अन्यथा वह पति की सवर्णा, सदृशी और सखी न कहला सकेगी जैसे कि सप्तपदी में 'सखा सप्तपदी भव सुमृडीका सरस्वती।' इत्यादि द्वारा कहा जाता है जो मानव गृह्यसूत्र के समान वाराह गृह्यसूत्र खं० १५। १६ आदि में भी पाया जाता है। सखा का अर्थ 'समानख्याना' समान

कथन करने ाली (ख्या-प्रकथने) होता है। विद्वान् की अविदुषी सखी नहीं कहला सकती। 'समानशीलव्यसनेषु सख्यम्' यह नीति वचन सुप्रसिद्ध है। यज्ञ तथा संस्कारों में स्त्रियों को सम्बोधित कर के कहे गये तथा उन द्वारा उच्चारणीय 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम् ॥ (यजु ३। ६०) त्वष्ट मन्तस्त्वा सपेम पुत्रान् पशून् मयि धेहि प्रजामस्मासु धेहि अरिष्टाहं सह पत्या भूयासम् (यजु ३७।२०) अपश्य त्वा मनसा चेकितान तपसो जात तपसो विभूतम्। इह प्रजामिह रयिं रराण प्र जायस्व प्रजया पुत्रकाम (ऋ १०। १८३। १) 'अहं केतुरहं मूर्धा अहमुग्रा विवाचनी। ममेदनुक्रतु पति सेहानाया उपाचरेत् ॥ (ऋ १०। १५९। २) 'उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः ॥ (ऋ १०। १५९। ३) इत्यादि हजारों मन्त्र हैं जिन को नियम पूर्वक वेदाध्ययन के विना समझना तथा शुद्ध उच्चारण करना (क्योंकि 'दुष्ट' शब्द स्वरतो वर्णतो वा मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह। स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति' इत्यादि वचनानुसार अशुद्ध उच्चारण करना बड़ा अनर्थ कारक है) सर्वथा असम्भव है इसलिये शबरस्वामी, रुद्र स्कन्द, गार्ग्य नरायण, सायण आदि जिस किसी टीकाकार ने भी पौराणिक कुसंस्कार वश स्त्रियों के लिये नियमित वेदाध्ययन को निषिद्ध माना है उस के वचन प्रत्यक्ष वेदविरुद्ध होने के कारण अप्रमाण हैं। उन का नाम लेकर शास्त्री जी हमें डरा या दबा नहीं सकते। उन के अन्दर शक्ति है तो वेदों में से स्त्रियों के वेदाध्ययन निषेध का प्रतिपादन करने वाले मंत्रों को उद्धृत करें अन्यथा 'न स्त्री जुहुयात्' जैसे वेदविरुद्ध वचनों की चाहे किस किसी ऋषि मुनि के नाम से पाये जाएं हमारे लिये कौड़ी भर की कीमत भी नहीं। क्यों कि ये 'त्र्यम्बक यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्' तथा 'या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः आदि वैदिक आदेशों के प्रतिकूल हैं।

इस प्रकार स्त्रियों द्वारा पठनीय मन्त्रों के विषय में मान्य शास्त्री जी ने अपने लेखों में २,३ स्थानों पर लिखा है कि 'तब स्त्री विषयक जितने भी मन्त्र पठनादि कार्य हैं स्त्रियों के लिये उत्सर्ग शास्त्र न होने से उनको उनका पति वा पुरोहित ही कर दिया करता है, उन स्त्रियों को उसी से फल मिल जाया करता है।' (सिद्धान्त' ७ वैशाख)

आइये पाठक वृन्द। शास्त्री जी के इस कथन को सत्य मान कर देखें कि वेदमन्त्रों की क्या दुर्गति होती है। वेद मन्त्र द्वारा स्त्री प्रार्थना करती है 'अरिष्टाहं सह पत्या भूयासम्' (यजु ३७। २०) अब शास्त्री जी के अनुसार उस का पाठ पति देवता या पुरोहित करते हैं जिसका अर्थ यह बन जाता है कि मैं अपने पतिदेव के साथ सुखपूर्वक निवास करू। अरिष्टा स्त्री लिङ्ग है इस का प्रयोग पुरुष कर हो नहीं सकता। वैसा करना तथा अपने पति के साथ सुख पूर्वक निवास की प्रार्थना करना कैसा उपहास जनक है।

अपश्य त्वा मनसा चेकितानम् (ऋ १०। १५९। २) के विषय में आपस्तम्ब गृह्यसूत्र ७।१०, वाराह गृह्यसूत्र १८। १९ तथा अन्य गृह्यसूत्रादि में लिखा है कि 'समागम काले वधूर्वरं समीक्षते अर्थात् संभोग के समय वधू वर को देखती हुई इस मंत्र का उच्चारण करती है कि 'त्वाम (अपश्यम्) पश्यामि (मनसा) हृदयेन संनेहमित्यर्थः [illegible]

अपने अभिप्राय को समझने वाले आप को देखती हू। हे पुत्रकाम। आप मुझ द्वारा उत्तम सन्तानोत्पादन करें। इत्यादि

इस मन्त्र को पति वा पुरोहित द्वारा उच्चारण करना वस्तुत कितना हास्यजनक है? हा, मूर्ख-मण्डली मे तो सब कुछ चल सकता है। ठाकुर उदय नारायण सिंह ने वाराह गृह्य सूत्र की व्याख्या में ठीक ही लिखा है कि "समागम से पहले 'अपश्य त्वा मनसा' मन्त्र को पति को देखती हुई पत्नी पढे। वाराह गृह्यसूत्र भाषानुवाद मधुपुर सन् १९३४ पृ ५५) "अह केतुरह मूर्धा अहमुग्रा विवाचनी।" (ऋ १०। १५९) इत्यादि मन्त्रों का उच्चारण करती हुई स्त्री कहती है कि मैं ज्ञान-सम्पन्ना हो कर वेदोपदेश श्रवण कराने वाली हू (चाय्-निशामने) मैं मस्तक के समान उन्नत बनू मैं तेजस्विनी और उत्तम भाषण करने वाली हू। पति देव मेरी इच्छा, ज्ञान वा कर्म के अनुकूल कार्य करें। 'उताहमस्मि सजया पत्यौ मे श्लोक उत्तम।' (ऋ १०। १५९। ३) यह स्त्री की उक्ति है जैसे कि स्त्रीप्रत्ययान्त सजया इत्यादि पदों से स्पष्ट है। स्त्री कहती है कि मैं काम क्रोध लोभ मोहादि शत्रुओं पर अच्छी प्रकार से विजय करने वाली हू तथा मैं ऐसा व्यवहार करती हू जिस से मेरे कारण मेरे पति देव की उत्तम कीर्ति बढ़े। अब श्री शास्त्रीजी के अनुसार यदि पति देव अथवा पुरोहित इस मन्त्र को पढ़ने लगें कि मैं अच्छी प्रकार जीतने वाली (सजया) हू और मेरे पति देव को मुझ द्वारा उत्तम यश मिले तो कितना भद्दा मालूम देगा। मैं जानता हू कि श्री प० दीनानाथ जी कह देंगे कि यह मन्त्र शची की ओर से बोले गये हैं मानुषी स्त्री की ओर से नहीं किन्तु उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि शची शब्द का प्रयोग निघण्टु में बुद्धि के लिये हुआ है अतः प्रत्येक बुद्धिमती स्त्री को शची कह सकते हैं। यदि शास्त्री जी का आग्रह पौराणिक इन्द्राणी देवी से हो तो भी उस की तरह प्रत्येक स्त्री को बनने का 'आरोह तल्पं सुमनस्यमाना, इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै। इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रति जागरासि॥ अथर्व १४। २। ३१ में उपदेश है अतः इस टालमटोल से भी जिस का श्री शास्त्री जी को विशेष अभ्यास प्रतीत होता है उन का काम नहीं चल सकता। 'डूबते को तिनके का सहारा' इस लोकोक्ति के अनुसार श्री शास्त्री जी को अपने इस पक्ष की पुष्टि में कि पत्नी के मन्त्रों को (जो उन्हें मानना पड़ा है कि यज्ञों और विवाहादि संस्कारों में अनेक हैं जैसे कि वे दबे शब्दों में लिखते हैं

"विवाहस्तु समन्त्रक" इस पूर्व कहे प्रमाण से कई मन्त्र अपवाद वश पत्नी के पढ़ने के हो सकते हैं पर उस समय स्त्री अवगुण्ठित होती है अत उसके मन्त्र पुरोहित वा वर ही पढ़ दिया करता है" (सिद्धान्त ७ बैशाख पृ० ३८)। पुरोहित वा वर पढ़ दे गोभिल गृह्यसूत्र का निम्न वचन है कि 'वर स्वय जपेत् अजपन्त्याम्' अर्थात् वधू यदि लज्जाविवश 'प्र मे पतियान पन्था कल्पताम् शिवा अरिष्टा पतिलोक गमेयम्' इस मन्त्र को बोले तो वर 'प्रास्या पतियान पन्था कल्पताम्' इस प्रकार पाठ बदल कर उच्चारण करले। इस लेख से स्पष्ट है कि शास्त्रविधि के अनुसार कन्या को स्वयं ही 'प्र मे पतियानः पन्था कल्पताम्' तथा अर्यमणं नु देवम्, इयं नार्युपब्रूते, तच्चक्षुर्देवहितम् इत्यादि मन्त्रों का पाठ करना चाहिये किन्तु यदि

वह संकोचादिवश ऐसा न कर सके तो अपवाद रूप से ही बाधित अवस्था में पति उस मन्त्र का पाठ बदल कर (स्वय अपेदअपस्यां प्रास्या इति) उच्चारण करले। वस्तुत' ऐसा संस्कार, विधि-हीन हो जाएगा जहां वधू द्वारा उच्चारणीय मन्त्रों का वह स्वय पाठ न करेगी और उसका वह महत्त्व भी न रहेगा यह स्पष्ट है। "यदि यजमान न पढ़ा हो तो इतने मन्त्र अवश्य पढ़ लेवे' इस ऋषि दयानन्द के लेख का तात्पर्य स्पष्ट है कि यदि यजमान विशेष विद्वान् न हो (सर्वथा अशिक्षित से मतलब नहीं) तो भी कम से कम इतने मन्त्रों को तो अवश्य सीखले। क्या इसको आप साधारण नियम मान लेंगे अथवा अपवाद? साधारण नियम तो द्विज मात्र के लिये यही है कि

'वेदानधीत्य वेदौ वा, वेद वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुतब्रह्मचर्यो, गृहस्थाश्रममाविशेत्॥
मनु० ३। २

अर्थात् ४, ३, २ या कम से कम एक वेद पढ़ के ब्रह्मचारी गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे। क्या काला अक्षर भैंस बराबर वाले शूद्रों को आप अनुकरणीय समझते हैं और उनकी पंक्ति में स्त्रियों को रखना चाहते हैं? यह बात भी पूर्वोद्धृत वेदादि सच्छास्त्रों के प्रमाणों तथा 'नहि शूद्रसमा' स्त्रिय। तस्मात् छन्दसा स्त्रिय' सस्कार्या' (हारीत संहिता २१-२०) और व्योम संहिता नामक प्राचीन ग्रन्थ के—

'आहुरप्युत्तमस्त्रीणाम्, अधिकार तु वैदिके।
यथोर्वशी यमी चैव, शच्याद्याश्च तथापराः॥

(श्र मध्वाचार्य कृत ब्रह्मसूत्र भाष्य पृ० ८४ कुम्भकोणम् में उद्धृत) स्पष्ट वचनों के सर्वथा विरुद्ध है जिनमें कहा है कि स्त्रियां शूद्र समान नहीं। उनके वेद मन्त्रों से सब संस्कार करने चाहिये। प्राचीन काल की उर्वशी, यमी, शची आदि ऋषिकाओं की तरह सब उत्तम स्त्रियों का वैदिक अध्ययन तथा कर्मकाण्ड में विद्वान् लोग अधिकार बताते हैं। इसी के आधार पर सुप्रसिद्ध द्वैत मत प्रचारक आचार्य स्वामी आनन्द तीर्थ जी (श्री मध्वाचार्य) ने महाभारत तात्पर्य निर्णय नामक अपने ग्रन्थ के अ० २१ में लिखा कि 'वेदा अप्युत्तमस्त्रीभि, कृष्णाद्याभिरिहाखिला'॥' श्लो० ३७ अर्थात् उत्तम स्त्रियों को कृष्णा (द्रौपदी देवी) की तरह सम्पूर्ण वेद पढ़ने चाहियें। सम्पूर्ण वेद पढ़ने के लिये स्त्रियों को अनुकूलता देना हिन्दू विश्वविद्यालय जैसी संस्थाओं के संचालकों का कर्तव्य है यदि उतना पढ़ाना सम्भव न हो तो कम से कम स्त्रियों के कर्तव्य बोधक और यज्ञों तथा अन्य कर्मकाण्ड के लिये उपयोगी मन्त्रादि को अर्थ सहित सिखाने के लिये तो व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये। मुझे खेद है कि श्र प० दीनानाथ जी शास्त्री जैसे विद्वान् पण्डित होते हुए भी ऐसे लेख लिख रहे हैं जो स्त्री जाति को ही नहीं, समस्त समाज को अवनति के गर्त में गिराने वाले हैं। स्त्रियों को वैदिक विद्या से वञ्चित करना उनको तथा समाज को अवनत करना है। मैं आशा करता हूँ कि उपर्युक्त प्रबल प्रमाणों को दृष्टि में रखते हुए मान्य शास्त्री जी अपने दुराग्रह का अवश्य परित्याग कर देंगे। इस पक्षपात पूर्ण दुराग्रह के कारण श्री शास्त्री जी से कई ऐसी भयङ्कर भूलें हो गई हैं जिनकी उन जैसे विद्वान् से कभी आशा न की जा सकती थी। इनमें से कुछ अत्यन्त भयङ्कर भूलों का निर्देश

करने से पूर्व मैं इतना और निर्देश कर देना चाहता हू कि वेद में और वेदानुकूल साहित्य में जिनमें से 'अर्यमणं नु देव कन्या अग्निमयक्षत' (मन्त्र ब्राह्मण) आदि मन्त्र स्त्रियों के कर्मकाण्ड में अधिकार (न कि केवल वेदाध्ययनाधिकार जैसा उस लेख के शीर्षक से स्पष्ट था) सिद्ध करने के लिये उद्‌धृत किये गये थे जिन ब्राह्मण ग्रन्थों तथा शाखाओं को श्री शास्त्री जी वेद मानते हैं और इस लिये जिन पर प्रश्न करने का उन्हें अधिकार न था, वे स्पष्टतया हमारे पक्ष के समर्थक हैं। उनमें न केवल स्त्रियों के मन्त्र पाठ करने, अर्थ समझ कर उनके अनुसार कर्म-काण्ड में भाग लेने और उनको पढ़ाने तथा प्रचार करने का ही प्रतिपादन है बल्कि साम गायन का भी जैसे लाट्यायन श्रौत्र सूत्र १।६ में 'निधनायैव स्तौर्भी वाच विसृजेत्। (२) निधनं नाम पञ्चभिः सप्तभिर्वा भागैरुपेतस्य साम्नोऽन्तिमो भाग'। उपग्रहप्रभृतीनि स्वरयन्त उपेयुर्गे धर्म उपयुक्ता स्यु (३) पत्नी च (४) उपग्रह प्रभृतीनि निधनान्युपेयादिति इत्यादि द्वारा स्त्री को साम गान करने का विधान है जिसके लिये विशेष अभ्यास अपेक्षित है।

पं० दीनानाथ शास्त्री जी की कुछ भयंकर भूलें—

(१) पारस्कर गृह्यसूत्र प्रथम काण्ड अष्टमी कण्डिका में विवाह प्रकरण में निम्न वाक्य आता है—

'अथैनां सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरिति।

अर्थात् वर-वधू को सूर्य दर्शन के लिये प्रेरित करता है और वह 'तच्चक्षुर्देव हित पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्' इस वेद मन्त्र को पढ़ कर सूर्य दर्शन करती है। कर्क, जयराम, हरिहर आदि सब भाष्यकारों ने स्पष्ट माना है कि इस वेद मन्त्र का उच्चारण वधू करती है, उदाहरणार्थ हरिहराचार्य ने लिखा है—वधूर्वरप्रेषिता सती तच्चक्षुरिति मन्त्रेण स्वय पठितेन सूर्यं निरीक्षते। (हरिहराचार्य-पारस्कर गृह्यसूत्र पञ्चभाष्योपेत बम्बई पृ० ८८) अर्थात् वर की प्रेरणा से वधू 'तच्चक्षुर्देवहितम्' इस वेद मन्त्र को स्वयं पढ़ कर सूर्य को देखती है। जयरामाचार्य ने ऐसे ही लिखा है कि 'ततश्च तच्चक्षुरिति मन्त्रेणोदीक्षते कन्या। (पृ० ८७) अर्थात् कन्या 'तच्चक्षुर्देवहितम्' इस वेद मन्त्र से सूर्य दर्शन करती है। कर्काचार्य के भाष्य में भी तच्चक्षुरित्यनेन मन्त्रेणोदीक्षते कन्या' यही शब्द हैं। सूत्र तथा भाष्य के इतने स्पष्ट वचन होनेपर भी प० दीनानाथ जी ने अपने दुराग्रह के कारण लिखा है कि इसका कर्ता वर है, मन्त्र पाठ का कर्ता भी वही है' इत्यादि (सिद्धान्त ७ मई का अङ्क)।

(२) "अर्यमण नु देवम्—इयं नार्युपब्रूते इमान् लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव।" इत्यादि विवाह सस्कार में लाजाहुति के अवसर पर प्रयुक्त मन्त्रों का पहले भी उल्लेख किया जा चुका है। मैंने पारस्कर गृह्यसूत्र से "अर्यमणं देव कन्या अग्निमयक्षत। स नो अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा। "इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका। आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम। इमाल्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धि करणं तव। मम तुभ्य च संवनन तदग्निरनुमन्यतामिय स्वाहा॥ इन मन्त्रों को श्री वेणीराम शर्मा और हिन्दू विश्व विद्यालय के धर्म विज्ञान विभाग के अध्यक्ष

पं० विद्याधर जी की टिप्पणी सहित उद्धृत किया था। श्री पं० दीनानाथ जी ने "आम्रान् पृष्ट: कोविदारान् आचष्टे" (आम कहां हैं, पूछने पर कोई उत्तर दे कि कचनार यहां हैं) इस लोकोक्ति को चरितार्थ करते हुए पारस्कर गृह्य सूत्रके स्थान पर आश्वलायन गृह्य सूत्र के वाक्य पर (जो पारस्कर से भिन्न हैं और जिनका मैंने उल्लेख न किया था) गार्ग्य नारायण नामक पौराणिक भाष्यकार की व्यवस्था को 'नहि स्त्रीणां मन्त्रेऽधिकारोऽस्ति' इत्यादि अ‍ उद्धृत शब्दों को उद्धृत करते हुए लिखा है—'कितने स्पष्ट शब्द हैं' अब बोलिये इससे बढ़ कर स्पष्टता क्या हो सकती है। (सिद्धान्त १४ मई का अङ्क)

ऐसे स्पष्ट शब्दों का वेद विरुद्ध होने के कारण हमारे लिये जरा भी मूल्य नहीं यह मैं अनेक बार स्पष्ट कर चुका हूँ। आखिर गार्ग्य नारायण ने भी माना है कि संस्कारादि में अनेक मन्त्र स्त्रियों के पढ़ने के हैं यद्यपि इन मन्त्रों के विषय में उन्हें स्वयं सन्देह है। उनके शब्द "ननु कथं पत्नीवाचनम्? उत्तरम्-तत्र वचनमस्ति अत्र तु सन्दिग्धम्" जादू वह जो सिर पर चढ़ कर बोले। पारस्कर गृह्य सूत्र में "स नो अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पते।" यह पाठ है न कि 'स इमां देवो अर्यमा' इत्यादि जैसा कि शास्त्री जी ने दिखाने का यत्न किया है। अर्थ सर्वथा स्पष्ट है कि हम कन्याएं अर्यमा अर्थात् न्यायकारी परमात्मा की पूजा करती हैं वह (न') हमें पितृ कुल से छुड़ाए किन्तु पति कुल से नहीं। अब शास्त्री जी बताएं कि क्या पति यह प्रार्थना करेगा कि परमात्मा हमें पिता के कुल से वियुक्त करे पति के कुल से नहीं। यदि आप भाष्यों को ही महत्त्व देते हैं तो देखिये पारस्कर गृह्यसूत्र के भाष्यकार इन मन्त्रों के विषय में कितनी स्पष्टता से लिखते हैं कि इन मन्त्रों को कन्या स्वयं पढ़ती है। जयरामाचार्य लिखते हैं "अत्रेदं मन्त्रत्रयं कन्यैव पठति" इन तीनों को कन्या ही पढ़ती है।

गदाधराचार्य लिखते हैं "अत्रेदं मन्त्रत्रयं कन्यैव वरपाठिता पठति।" अर्थ पूर्ववत् है कि इन तीन मन्त्रों को वर से प्रेरित कन्या पढ़ती है। हरिहराचार्य लिखते हैं 'मन्त्रत्रयं कन्यैव पठति' अर्थात् इन तीन मन्त्रों को कन्या ही पढ़ती है। (देखिये पारस्कर गृह्यसूत्र पञ्चभाष्योपेत गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस मुम्बई संस्करण पृ० ६३)

ऐसा ही विश्वनाथाचार्य ने "एभिस्त्रिभिर्मन्त्रैराहुतित्रयं कन्या जुहोत्यञ्जलिनेत्यर्थः।" तथा कर्काचार्य ने 'संहतेनाञ्जलिना तिष्ठती कुमारी प्रतिमन्त्रं लाजान् जुहोति 'अर्यमणं देवम्' इत्यादिभिर्मन्त्रैः' इत्यादि शब्दों से प्रकट किया है। वस्तुत जयरामाचार्य और गदाधर ने 'वर पाठिता' ये शब्द अपने भाष्य में जोड़ लिये हैं जो मूल में नहीं पाये जाते इसलिए हरिहर, विश्वनाथ तथा कर्काचार्य ने उसका उल्लेख नहीं किया। अब शास्त्री जी बताएं कि इन से स्पष्ट शब्द क्या हो सकते हैं जो मूल पाठ के तथा वेद के अनुकूल हैं। मानव गृह्यसूत्र १।११।१२ में भी "सोऽस्मान् देवो अर्यमा प्रेतो मुञ्चातु मामुतः स्वाहा" यह पाठ है। इसी प्रकार काठक गृह्यसूत्र २५।३० में सोऽस्मान् देवो अर्यमा प्रेतो मुञ्चातु मामुष्य गृहेभ्य' यह पाठ है जिसका कन्या उच्चारण करती हुई 'अमुष्य' के स्थानमें पतिका नाम लेती है जैसे कि देवपाल, ब्राह्मणबल, आदित्यशरण आदि सब भाष्यकारों ने 'अमुष्येति वरस्यषष्ठ्यन्तं नाम गृह्णाति

वधू इत्यादि वाक्यों द्वारा बताया है। क्या अवगुण्ठन (पर्दे) वाली वधू वेदमन्त्रों का उच्चारण तथा पतिदेव का नाम ग्रहणादि कर सकती है अत वह अवैदिक मुसल्मानी प्रथा है जैस कि 'इमा समेत पश्यत' (पारस्कर) इत्यादि से स्पष्ट है। क्या इस मन्त्र को जहाँ प्रार्थना है कि परमात्मा हमें पति के घर से (जिसका नाम यहाँ लिया जाता है) कभी न छुड़ाए पति स्वय बोलेगा ? 'इय नार्युप ब्रूते' पर देखिये आपके पौराणिक भाष्यकार प० भीमसेन जी आदि ने भी क्या लिखा है। मानव गृह्यसूत्र के हिन्दी अनुवाद में १।११।१२ में आये इन मन्त्रों पर प० भीम सेन शर्मा सम्पादक 'ब्राह्मण सर्वस्व' ने लिखा है 'इयं नार्युपब्रूते' मन्त्र को कन्या पढ़े।

(मानव गृह्यसूत्र—पं० भीमसेन कृत अनुवाद पृ० २८ वेदप्रकाश यन्त्रालय सवत् १९६१)

गोभिल गृह्यसूत्र प्र० २ ख० १ सू० ५ में 'सकृत् सगृहीत लाजानामञ्जलि भ्राता वध्वञ्जला-वावपति त सा अग्नौ जुहोति "इय नार्युपब्रूते" इस पर प० सत्यव्रत सामाश्रमी ने भाष्य में लिखा है 'सा वधूः त भ्रातृदत्त लाजाञ्जलिम् 'इय नार्युपब्रूते इत्यनेन मन्त्रेण अग्नौ जुहुयात्।" इस का अनुवाद ठाकुर उदय नारायण सिंह ने किया है कि सावधानी से 'इय नार्युपब्रूते' मन्त्र से वधू अग्नि में आहुति देवे।" (गोभिल गृह्यसूत्र प सत्यव्रत सामाश्रमि भाष्य ठाकुर उदय नारायण कृत अनुवाद पृ० ७०–७१) आशा है मान्य शास्त्री जी अपनी भूल को स्वीकार करने में सकोच न करेंगे। 'मन्त्र ब्राह्मण' से उद्धृत ये मन्त्र जो वेद के ही 'इय नार्युपब्रूते पूल्यानावपन्तिका। दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरद शतम्' का पाठान्तर है शास्त्री जी के मत में तो स्वय वेद मन्त्र ही हैं हमने उन्हें वैदिक कर्मकाण्ड में स्त्रियों का अधिकार सिद्ध करने के लिये उद्धृत किया है जिससे शास्त्री जी इन्कार नहीं कर सकते। मान्य शास्त्री जी का यह लिखना कि "इयं नारी उपब्रूते' यह प्रथम पुरुष है उत्तम पुरुष नहीं, तब वर ही इस मन्त्र को पढ़ता है कन्या नहीं" ('सिद्धान्त' १४ मई का अङ्क') उनके दुराग्रह को ही सूचित करता है। क्या शास्त्री जी इस बात को नहीं जानते कि "समुपस्थित एष जन" जैसे प्रयोग सस्कृत भाषा में अपने लिये होते हैं। अगले ही मन्त्र में उत्तम पुरुष प्रयोग स्पष्टतया पाया जाता है यथा

'इमान् लाजान् आवपाम्यग्नौ समृद्धिकरण तव। मम तुभ्य च सवनन तदग्निरनुमन्यताम्॥ पारस्कर गृह्यसूत्र प्रथम काण्ड पञ्चमी कण्डिका के इस मन्त्र में वधू, वर को सम्बोधित करते हुए कहती है कि आप की समृद्धि की कामना करती हुई मैं इन खीलों को अग्नि में डालती हूँ। अग्निदेव (परमेश्वर) मेरा और आपका प्रेम सदा बनाए रक्खें। इसी लिए भाष्यकारों ने इयं नारी वधूर्मद्रूपा—हे पते तव समृद्धिहेतून् इमान् लाजान् आवपामि अयम अग्नि मम तुभ्य च संभजनम् अन्योन्यानुरागलक्षणम् अनुमोदतु" (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय धर्म विज्ञान विभागाध्यक्ष श्री विद्याधर शर्मा कृत टिप्पणी पृ० ३१) इत्यादि रूप से उनका अर्थ किया है। आशा है शास्त्री जी अपनी भूल को ठीक कर लेंगे।

(३) मैंने "त पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः" (यजु० १५। ५०) तथा 'इम यज्ञ सह पत्नीभिरेत्य यावन्तो देवास्तविषा मादयन्ताम् (अथर्व० १९।

५८।६) इत्यादि मन्त्रों को उद्धृत करते हुए लिखा था कि इनमें विद्वानों को अपनी पत्नियों सहित यज्ञ में आने का विधान किया गया है। 'देव' शब्द का अर्थ ऐसे मन्त्रों में सत्यनिष्ठ विद्वान् होता है इसके लिये मैंने 'विद्वांसो हि देवा'' (शतपथ ३।७।३।१०) सत्यसंहिता वै देवाः (ऐतरेय १।६) सत्यमया च देवा (कौषीतकी २।८) इत्यादि प्रमाण दिये थे इसके खण्डन का व्यर्थ प्रयास करते हुए मान्य शास्त्री जी ने लिखा है कि 'विद्वांसो हि देवा' (शतपथ) से देवता को विद्वत्पर्याय वाचक बतलाना छल है। यहां पर 'हि' शब्द हेत्वर्थक है देवाः विशेष्य है विद्वांस विशेषण है" इत्यादि। इसके उत्तर में निवेदन है कि 'हि' अव्यय का एक अर्थ हेतु भी होता है पर केवल वही उसका अर्थ नहीं होता। अव्ययार्थ में हि' के 'हेत्वपदेशानुपृष्टाऽसूयाऽवधारणपादपूरण विस्मयषु' ये अर्थ दिये हैं। हम 'ह' का अर्थ यहां 'अवधारण' अर्थात् निश्चय लेते हैं। तब सीधा अर्थ यह होगा कि विद्वान् निश्चय से देव' कहलाते हैं। "सत्यसंहिता वै देवा" में तो 'वै' अव्यय का प्रयोग है जिसका अर्थ निश्चय से' यह सर्वसम्मत है। देवो दानाद् वा दीपनाद् वा द्योतनाद् वा द्युस्थानो भवतीति वा (निरुक्त दैवत काण्ड पाद ४) इस निरुक्त वचन के अनुसार देव के आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक दृष्टि से अनेक अर्थ होते हैं जिनमें से विद्या का दान अथवा प्रकाश वा प्रचार के कारण विद्वान्' यह अर्थ भी होता है जो उपर्युक्त मन्त्रों में स्पष्ट है। "आनन्द एवास्य विज्ञानम् आनन्दात्मानो हवै सर्वे देवा सा हैषैव देवानामद्धा विद्या स ह स न मनुष्यो य एवंविद् देवानाम् हैव स एक ॥" (शतपथ १०।३।५।१३) इस शतपथ के वाक्य में भी स्पष्ट है कि जो आनन्द विद्या को जान जाता है वह साधारण मनुष्य नहीं रहता वह देवों में से एक हो जाता है। 'अथ हैते मनुष्यदेवा ये ब्राह्मणा' (षड्विंशति ब्राह्मण १।१) "अथ ये ब्राह्मणा शुश्रुवांसोऽनूचानास्ते मनुष्य-देवा।" (शतपथ २।२।२।६॥४।३।४।४) इत्यादि मे भी स्पष्ट कहा है कि जो वेदों को जानने वाले जनता की सच्ची सेवा करने वाले ब्राह्मण होते हैं वही मनुष्यों में देव कहलाते हैं। लौकिक संस्कृत में भी ब्राह्मणों को भूदेव इसी लिए कहा जाता है कि आकाश में सूर्य चन्द्रादि देव जैसे प्रकाश करते हैं वैसे वे ज्ञान का प्रकाश करते हैं। 'त पत्नीभिरनुगच्छेम देवा' यजु० १५। ५० की व्याख्या में महीधरादि पौराणिक पण्डितों के प्रामाणिक भाष्यकारों ने 'देवा' का अर्थ 'दीप्यमाना ऋत्विज' ऐसा किया है जो निरुक्त की 'दीपनात्' इस व्युत्पत्ति के अनुसार है। स्वयं सायणाचार्य ने जिनके भाष्य को श्री शास्त्री जी बड़ी श्रद्धा से उद्धृत करते हैं इद तदक्रि देवा असपत्ना किलाभुवम् इस ऋ० १०।१५६।४ के भाष्य में 'देवा' का अर्थ 'स्तोतार. ऋत्विज" अर्थात् स्तुति करने वाले ऋत्विजो ऐसा किया है। ओमासश्चर्षणी-धृतो विश्वे देवास आगत। ऋ० १।१।६७ के भाष्य मे सायणाचार्य ने 'दीव्यन्तीति देवाः प्रकाशवन्त' प्रकाश युक्त यह यौगिक अर्थ लेते हुए लिखा है कि "स्वरानुसारेण च रूढित्यागेनापि देवशब्दस्य योगस्वीकारो युक्त एव' अर्थात् रूढि का त्याग करके भी देव का यौगिक अर्थ स्वीकार करना उचित ही है। ऋ० १०।१३५।१ के

"य इमम् वृत्ते सुपलाशो देवैं सपिबते यम" इस मन्त्र के भाष्य में सायणाचार्य लिखते हैं कि 'दीव्यन्तीति देवा रश्मय' अर्थात प्रकाश युक्त किरणें देव कहाती हैं ऐसे ही ऋ० १०।१३५।७ के भाष्य में सायण ने 'देवानाम्' का अर्थ 'रश्मीनाम्' अर्थात् किरणों का यह किया है जो यौगिक मानकर ही सम्भव है। अत शास्त्री जी का देव के यौगिक अर्थ के रूप में विद्वान्' अर्थ को न मानना उनकी भयङ्कर भूल है जो दुराग्रह के कारण हुई है।

प० दीनानाथ जी के लेखों से जो अनेक पत्रों में निकलते रहते हैं प्रतीत होता है कि उन्होंने इस योनिवाद को सब प्रश्नों का अचूक नुस्खा समझ रक्खा है। बा ॰ में वे लिख देते हैं कि देव मनुष्यों से पृथक् योनि के हैं, ऋषियों या ऋषिकाओं की पृथक् योनि है अत उन विषयक बातें मनुष्यों पर लागू नहीं होतीं। यह विषय विस्तृत होने के कारण स्वतन्त्र निबन्ध या पुस्तक की अपेक्षा रखता है पर प्रसङ्गवश इतना लिख देना आवश्यक समझता हूँ कि यदि शास्त्री जी के कथनानुसार देव और ऋषि पृथक् योनि के होते तो मनुष्यों से उन की उत्पत्ति सम्भव न थी किन्तु शास्त्रों में ऋषियों और देवों का लक्षण करते हुए उन को उत्पन्न करने के साधनों का स्पष्ट निर्देश किया गया है। उदाहरणार्थ बौधायन गृह्यसूत्र प्रथम प्रश्न अध्याय ७ म में लिखा है कि चतुर्वेदादृषि (सू० ७) अत ऊर्ध्वं देव (सू० ८) अर्थात् चारों वेदों का अध्ययन करने से मनुष्य ऋषि बनता है और इन के अतिरिक्त अन्य भी शास्त्रों का पूर्ण ज्ञाता बनने से देव बनता है। इसके पश्चात् लिखा है 'अथ] यदि कामयेत ऋषिं जनयेयमिति षण्मासानेतद् व्रतं चरेत॥ (बौधायन गृह्यसूत्र १।७।१८) व्रतान्ते पक्वहोम उपसंवेशनं च (सू० १९) अथ यदि कामयेत देवं जनयेयमिति संवत्सरमेतद् व्रत चरेत्। व्रतान्ते पक्वहोम उपसवेशन च (बौ० गृह्यसूत्र १।७।२०–२१) अर्थात यदि कोई गृहस्थ चाहे कि मैं ऋषि को पैदा करू तो विवाह के पश्चात् ६ मास तक पूर्णतया ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन करे उसके पश्चात् विशेष हवन कर के गर्भाधान शास्त्रोक्त रीति से करे। यदि कोई गृहस्थ चाहे कि मैं देव को पैदा करू तो विवाह के पश्चात् १ वर्ष तक पूर्णतया ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन करे उस के पश्चात् विशेष होम कर के शास्त्रोक्त रीति से गर्भाधान करे। इस प्रकार यह सर्वथा स्पष्ट है कि ऋषि और देव उच्चकोटि के मनुष्य होते हैं जिन को उत्पन्न करने की योग्यता के लिए विशेष साधना की आवश्यकता होती है। इस से यह भी सिद्ध होता है कि गोधा, घोषा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषत्, मिषत्, अदिति, जुहू, यमी, शची, शश्वती इत्यादि ऋषिकाएं चारों वेदों को जानने वाली थीं क्योंकि बौधायन गृह्यसूत्र के अनुसार चारों वेदों के अध्ययन से ही कोई ऋषि बन सकता है (चतुर्वेदाद् ऋषि)। शास्त्री जी के स्त्रियों के वेदाध्ययन निषेध के सारे परिश्रम पर इस से पानी फिर जाता है।

(४) शास्त्री जी की एक और पक्षपात वा दुराग्रह जन्य भयङ्कर भूल यह है कि 'पण्डिता' के लिये वे वेद शास्त्राध्ययन आवश्यक नहीं समझते शतपथ ब्राह्मण के 'अथ य इच्छेत् दुहिता मे पण्डिता जायेत (शत १४।९।४।१६) को उद्धृत

करते हुए आप बड़े हर्ष के साथ लिखते हैं कि 'स्नातक महाशय को यह जानना चाहिये कि उस (शतपथ) ने पुत्र के लिये तो वेदाध्ययन लिखा है पर दुहिता के लिये नहीं।" (सिद्धान्त ७ मई का अङ्क) यदि एक क्षण के लिये शास्त्री जी की इस बात को मान भी लें कि शतपथ में पुत्री के लिये वेदाध्ययन नहीं लिखा तो भी इस से शास्त्री जी का पक्ष तो अवश्य खण्डित हो जाता है क्योंकि वे तो स्त्रियों को अविद्या वा अशिक्षिता ही रखना चाहते हैं। यहां कम से कम उन के अनुसार भी पण्डिता बनाने का तो निर्देश स्पष्ट है। यहां शास्त्री जी की भूल यह है कि ये पण्डितों के शास्त्रप्रोक्त लक्षणों को भूल जाते हैं जिनके अनुसार वेदाध्ययन आवश्यक है उदाहरणार्थ महाभारत उद्योगपर्वान्तर्गत विदुर नीति मे जो पण्डित के लक्षण सूचक श्लोक हैं उन में से निम्न श्लोकों को देखिये

आत्मज्ञान समारम्भ, तितिक्षा धर्म नित्यता।
यमर्थो नापकर्षन्ति, स वै पण्डित उच्यते ॥ २०
निषेवते प्रशस्तानि, निन्दितानि न सेवते।
अनास्तिक. श्रद्दधान', एतत्पण्डितलक्षणम् ॥२१
तत्त्वज्ञ' सर्वभूताना, योगज्ञ सर्व कर्मणाम्।
उपायज्ञो मनुष्याणा, नर पण्डित उच्यते ॥३२
प्रवृत्तवाक् चित्रकथ', ऊहवान् प्रतिभान वान्।
आशु ग्रन्थस्य वक्ता च, यस्स पण्डित उच्यते ॥३३
श्रुत प्रज्ञानुग यस्य, प्रज्ञा चैव श्रुतानुगा।
'असम्भिन्नार्यमर्याद पण्डिताख्या लभेत स' ॥
(विदुर नीति श्लो ३४)

इन श्लोकों में बताया गया है कि जो आत्मा परमात्मा के यथार्थस्वरूप को जानने वाला हो, जो उत्तम कर्मों का सदा सेवन करने वाला हो, जो सब प्राणियों मे तत्त्व का ज्ञाता हो, जो वेदादि ग्रन्थों का उत्तम वक्ता तथा विचित्र प्रभाव जनक रूप से उन की कथा करने वाला हो, जिस की बुद्धि शास्त्र के पीछे चलने वाली हो, जो आर्य मर्यादा का कभी परित्याग न करने वाला हो वह पण्डित कहलाता है। "नावेदविन्मनुते त बृहन्तम्"

धर्म जिज्ञासमानाना प्रमाण परम श्रुतिः (मनुस्मृ) इत्यादि के अनुसार जब वेद जाने विना कोई उस परमात्मा का तथा धर्म का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर ही नहीं सकता और धम तथा आर्यमर्यादा का ज्ञान प्राप्त किये विना उस का अनुष्ठान असम्भव है तो स्पष्टतया सिद्ध होता है कि पण्डित या पण्डिता के लिये वेद ज्ञान अनिवार्य है अन्यथा वेद ज्ञान को अन्यथा सिद्ध और अनावश्यक मानना पड़ेगा इस लिये शतपथ ब्राह्मण में पण्डिता शब्द का ऐसा सर्वग्राही प्रयोग कर दिया है जो केवल १,२ या ३ वेदों के अध्ययन से भी अधिक विशाल है। महाभारत में जिस द्रौपदी देवी के लिये 'पण्डिता' शब्द का प्रयोग 'प्रिया च दर्शनीया च, पण्डिता च पतिव्रता (वन पर्व २७। २) हुआ है उस के वेदादिशास्त्रों के अध्ययन के स्पष्ट निर्देश महाभारत में पाये जाते हैं जिन को देखकर सुप्रसिद्ध द्वैत वादी आचार्य स्वामी आनन्दतीर्थ (श्रीमध्वाचार्य) ने महाभारत तात्पर्य निर्णय में लिखा है कि "वेदा अप्युत्तमस्त्रीभि, कृष्णाद्याभिरिहाखिला।"
(अ २१। ३७)

अर्थात् उत्तम स्त्रियों को कृष्णा (द्रौपदी) आदि की तरह सम्पूर्ण वेद पढ़ने चाहियें। शतपथ ब्राह्मण में जगह २ पर कुमारियों और स्त्रियों के वेद मन्त्रोच्चारण के प्रमाण मिलते हैं जैसे कि कई

प्रमाण देकर पहले भी सिद्ध किया जा चुका है। शतपथ २।६।२।१२-१४ के "तदुहापि कुमार्य परीयु' भगस्य भजामहा इति। तासाम् उतासा मन्त्रोऽस्ति "त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत इति॥" (यजु० ३।६०) इत्यादि वाक्य यहा पुन स्मरणीय हैं जहा 'त्र्यम्बक यजामहे सुगन्धि पतिवेदनम्।' इस वेदमन्त्र को कुमारियों के लिये विशेष मन्त्र कहा गया है। क्या अनुपनीता कुमारियों को शास्त्री जी ऐसे वेद मन्त्रों के पाठ का अधिकार देंगे ? शतपथ १३।५।२ में 'यकोऽसकौ शकुन्तक' (यजु० २३।२३ यह मन्त्र कुमारियों द्वारा और 'माता च ते पिता च ते' (२३।२५) 'ऊर्ध्व मेन मुच्छ्रयताम्' (यजु० २३।२७) 'यद् देवासो ललामगुम्' (य० २३।२९) यद्धरिणो यवमत्ति' (य० २३।३०) आदि अन्य स्त्रियों द्वारा जिनमें दासियां भी (अनुचर्य) सम्मिलित हैं बोलने का विधान है। शत० १४।२।१।१५-१६ में पिता नोऽसि पिता नो बोधि त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेम अरिष्टाहं सह पत्या भूयासम' (यजु० ३७।१०) इस मन्त्र के पत्नी द्वारा बोलने का विधान है जिस का अर्थ स्पष्ट है कि मैं अपने पति के साथ रोग रहित होकर सुख पूर्वक रहूं। ऐसा ही विधान कात्यायन श्रौतसूत्रादि में है। इस प्रकार वेदों, ब्राह्मणों, श्रौतसूत्रों, गृह्यसूत्रों तथा अन्य प्राचीन ग्रन्थों से स्त्रियों का वेदाध्ययन और कर्मकाण्ड में अधिकार स्पष्टतया सिद्ध होता है। कुछ वेद विरुद्ध स्वार्थि जन कल्पित वचनों के आधार पर उन्हें इस अधिकार से वञ्चित रखना सर्वथा अनुचित है। १२ अगस्त के 'हिन्दुस्तान' तथा १० के हिन्दुस्तान टाइम्स आदि पत्रों मे हिन्दू विश्वविद्यालय के धर्म विज्ञान महाविद्यालय के अध्यक्ष की घोषणा इस रूप मे प्रकाशित हुई है कि 'धर्मिक विद्यालय की मध्यमा श्रेणी के विधानानुसार स्त्रियों को शूद्र समझा जाता है और उन्हें अपनी व्यक्तिगत मुक्ति तथा अपने पथ प्रदर्शन के लिये भी वेद पढ़ने का अधिकार नहीं।"

यह घोषणा नितान्त अशुद्ध और वेदादि सत्य शास्त्र विरुद्ध है यह सर्वथा अन्यायपूर्ण और स्त्रियों के लिये घोर अपमान जनक है इसका सब विचारशील, न्याय तथा समानता के प्रेमियों को घोर प्रतिवाद करना चाहिये।

साहित्य समीक्षा

[समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की २ प्रतिया भेजनी चाहियें]

Life of Dayanand Saraswati by Shri Har Bilas Sharda Published by Bhagavan Swaroopji Manager Vedic Yantralaya Ajmere, Page 750 Price Rs. 12

ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा अजमेर के सुयोग्य मन्त्री श्री हर विलास शारदा जी ने जो बाल्य विवाह निरोधक कानून के कारण सामाजिक क्षेत्र में उत्तम ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। ७६ वर्ष की आयु में महर्षि दयानन्द जी के इस विस्तृत जीवन चरित्र को लिख कर समाज को बड़ी सेवा की है। उनकी ऋषि भक्ति और परिश्रम की जो इस जीवन चरित्र को अधिक से अधिक प्रामाणिक बनाने तथा ऋषि के कार्य पर तुलनात्मक दृष्टि से उत्तम प्रकाश डालने में उन्होंने किया है, जितनी भी प्रशसा की जाय थोड़ी है। इसमें केवल ऋषि के जीवन की घटनाओं का वर्णन ही नहीं है बल्कि वेद, वैदिक सिद्धात, सत्यार्थप्रकाश, थियासोफिकल सोसाइटी इत्यादि पर विस्तृत और विशाल अनुशीलन सूचक प्रकाश इसमें डाला गया है। प्रत्येक पुस्तकालय में इसकी एक प्रति अवश्य होनी चाहिये क्योंकि अंग्रेजी में इतना अनुसन्धान पूर्ण विस्तृत ऋषि का जीवन चरित्र अब तक प्रकाशित न हुआ था। खेद है कि शीघ्रता के कारण इसका प्रकाशन जितनी सावधानी से तथा आकर्षक रूप में होना चाहिए था वह नहीं हो सका और छापे की अनेक भूलें रह गयी हैं जिनके लिये ५ पृष्ठों का संशोधन पत्र पुस्तक के अन्त में लगा दिया गया है तथापि कई अन्य अशुद्धिया छूट गई हैं। हम श्री विलास जी शारदा की अद्भुत ऋषि भक्ति और अनुकरणीय परिश्रम की हार्दिक प्रशंसा करते हुए पूर्ण आशा करते हैं कि अंग्रेजी शिक्षित जनता इस पुस्तक का अनुरूप स्वागत करेगी और आगामी संस्करण को विशेष सावधानी से तथा पाश्चात्य विद्वानों के लिये भी विशेष आकर्षक रूप में प्रकाशित किया जाएगा। ऋषि दयानन्द के विषय में भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों की जो सम्मतिया पुस्तक के अन्तिम अध्याय में उद्धृत की गई हैं उनमें पुस्तकों वा पत्रों का (जहा से वे ली गई हैं) उल्लेख अत्यन्त आवश्यक था जो प्राय नहीं किया गया। अगले सस्करण में इस त्रुटि को भी अवश्य दूर कर देना चाहिये। जिससे पुस्तक की प्रामाणिकता और उपयोगिता अधिक बढ़ जाय।

सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन का इतिहास—
लेखक—श्री हितैषी जी सम्पादक 'प्रकाश' (उर्दू साप्ताहिक) देहली, मूल्य १)

गत वर्ष 'प्रकाश' के सुयोग्य सम्पादक श्री हितैषी जी ने एक सत्यार्थ प्रकाश विशेषाक पुस्तकाकार में प्रकाशित किया था जिसका परिवर्तित और परिवर्धित हिन्दी संस्करण अब उन्होंने उपर्युक्त नाम से प्रकाशित किया है। इसमें सत्यार्थप्रकाश की रचना के प्रयोजन, उसकी आवश्यकता तथा प्रभाव, ऋषि दयानन्द और सत्यार्थ प्रकाश के विषय में भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों और

अनेक निष्पक्षपात मुसलमान विद्वानों की सम्मतियों का उल्लेख करते हुए उसके विरुद्ध आन्दोलन का इतिहास दिया गया है। हमे यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि इस पुस्तक को (उर्दू में) पढ़ कर कई मुसलमान युवक भी आर्य बन गये हैं। पुस्तक वास्तव में बड़ी योग्यता से लिखी गई है तथा इसका खूब प्रचार होना चाहिए। मूल्य प्रचार दृष्टि से अधिक है।

ध० दे०

ओ३म्

सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन कराची

भ्रमण पत्रिका सं० १

कार्यालयः—
सार्ववदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
देहली।
तिथि ६—८—१९४६ ई०

सेवा मे
श्री मंत्री जी,
आर्य समाज ..

श्रीमन्नमस्ते।

आपको विदित है कि सत्यार्थ प्रकाश पर सिंध की गवर्नमेन्ट की लगाई गई पाबन्दी के विरुद्ध लगभग २ वर्ष से आन्दोलन चलरहा है। यह प्रतिबंध, साधारणतया ३० सितबर ४६ को जब भारतीय रक्षा कानून समाप्त हो जायगा, समाप्त होजाना चाहिये था परन्तु अभी जब कराची में संग्राम समिति (Douncil of Action) के एक अधिवेशन के अवसर पर हम सब कराची में थे तो वहां एक अफवाह हम तक पहुचो कि सिंध की मुसलिम लीगी सरकार उस प्रतिबंध की अवधि बढ़ाना चाहती है तथा एक सिंधी भाषा के दैनिक पत्र - इसका उल्लेख भी किया गया था इसलिये इन सब बातों पर दो दिनतक विचार करने के बाद निश्चय किया गया है कि उपर्युक्त सम्मेलन का छठा अधिवेशन कराची में कार्तिक शुदी अष्टमी तथा नवमी तदनुसार २री और ३री नवम्बर ४६ को संगठित किया जावे और यह अधिवेशन बड़े सजधज तथा उत्साह के साथ किया जावे और इस सम्मेलन में आर्य जाति (हिन्दू) के सिन्ध प्रांत में सिंध सरकार द्वारा पहुंचाये हुये अन्य कष्टों पर भी विचार किया जावे। इसलिये प्रत्येक आर्य समाज, आर्य संस्था, आर्य बहिन भाई तथा प्रत्येक व्यक्ति का जो आर्य समाज से सहानुभूति रखता है, कर्त्तव्य है कि वह इस सम्मेलन को सफल बनाने का यत्न करे।

(२) सार्वदेशिक सभा द्वारा बनाये हुए नियमों के अनुसारः—

(१) आर्यसमाज का प्रत्येक सभासद्, इस सम्मेलन का प्रतिनिधि हो सकता है।

(२) प्रत्येक आर्यसमाज को जिनमें स्त्री समाज भी शामिल है, कम से कम एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है।

(३) जिन समाजों में दस या दस से अधिक सभासद् हैं उन्हें प्रति दस सभासद् एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है।

आप इन नियमों के अनुसार अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करके उन की सूची अधिक से अधिक १५ सितम्बर १९४६ ई० तक कार्यालय में भेज देवें।

(३) आप जो प्रस्ताव सम्मेलन मे पेश करना चाहें उन्हें भी लिखवाकर अधिक से अधिक ३० सितम्बर १९४६ ई० तक भेज देवें जिससे वे नियमानुसार विषय निर्धारिणी सभा में विचारार्थ उपस्थित हो सकें।

नोट—सम्मेलन के छपे हुए नियम इस सभा के कार्यालय से आपको प्राप्त हो सकेंगे।

(४) संग्राम समिति ने अपना प्रधान श्री नारायण स्वामी जी महाराज को बनाते हुए निश्चय किया है कि वे सम्मेलन का प्रोग्राम बनाकर सम्मेलन के समस्त कार्यों का संचालन करें।

(५) ऋषि दयानन्द ने घर से चले जाने के बाद, अपने पिता श्री कर्सन जी तिवारी द्वारा पकड़े जाने के बाद, सदा के लिये गृह बंधन से ३री नवम्बर १८४६ ई० को जिसके ठीक १०० वर्ष के बाद यह सम्मेलन हो रहा है, मुक्ति प्राप्त की थी और अपने को श्रेष्ठ और जनता की सेवा और वेद प्रचार करने योग्य बनाकर इन्ही कार्यों मे अपना समस्त जीवन लगा देने का निश्चय किया था। कई सज्जनों ने इस गृह त्याग की शताब्दी मनाने के प्रस्ताव किये थे। अब इस सम्मेलन के अवसर पर इस उत्सव के मनाने का भी अवसर आर्य जनता को प्राप्त होगा। उत्सव का सर्वोत्कृष्ट रूप यह हो सकता है कि बहुत से भाई, जो गृहस्थ के उत्तरदायित्व को पूरा कर चुके हैं, गृह त्याग कर के वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करें और उन्हीं कार्यों की पूर्ति मे अपने को लगाने का व्रत लेवें जिन के लिये ऋषि दयानन्द ने गृह त्याग किया था और कराची के इस ऐतिहासिक सम्मेलन के अवसर पर नियम पूर्वक वानप्रस्थ व सन्यास आश्रम की दीक्षा लेवें। उनके ऐसा करने से सम्मेलन की क्रियात्मक उपयोगिता बहुत बढ सकती है।

नारायण दत्त
का०—मन्त्री

शंका समाधान

(लेखक—श्री महात्मा नारायणस्वामी जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य सभा)

श्री गगा राम आर्य कुमार सभा हरदोई ने इस प्रकार एक शंका की है—

शंका

क्या खाकी अन्डा जो न तो मुरगी और मरगे के संभोग का परिणाम होता है और न उस मे जीव होता है और जिसे मुरगी एक नियत समय पर देती है और यदि उसे खाया न जाय तो वह सड़ जाता है क्योकि उस में बच्चा नही होता खाने में कोई हर्ज है ?

समाधान

यह प्रश्न चिरकाल से चल रहा है। सब से पहले जानने योग्य बात यह है कि अन्डों के बाह्य आकार प्रकार से क्या यह जाना जा सकता है कि कौन सा खाकी है और कौनसा असली जिन के भीतर जीव मौजूद है ? यदि नहीं तो किस प्रकार जाना जा सकेगा कि यह अन्डा खाकी है असली नही ? और न जानने की अवस्था में असली और नकली सबका खाना शुरु हो जायगा।

(२) यदि किसी प्रकार से जान लिया जावे कि एक अन्डा असली नहीं बल्कि खाकी है तो इसका उत्तर मै वही देना चाहता हूँ जो ऋषि दयानन्द ने दशम समुलास में अपकारी मरे हुवे पशु के मास खाने के सबन्ध में दिया है—

ऋषि दयानन्द का उत्तर

"चाहे (उस मास को फेंक दें चाहे कुत्ते आदि मासाहारियों को खिला देवें अथवा कोई मासाहारी खालेवे तब भी ससार की कोई हानि न होगी परन्तु उस मनुष्य का स्वभाव मासाहारी होकर हिसक हो सकता है।"

इसी प्रकार खाकी अन्डे के खाने का अभ्यास होजाने से उस के न मिलने पर असली अन्डे का भी खाना शुरु होजाने की उचित रीति से आशका की जा सकती है।

XXXX XXXXXXXXX XXXX

प्रचारकों की आवश्यकता

भिन्न प्रान्त में प्रचारार्थ वान प्रस्थियों, सन्यासियों तथा अन्य प्रचारकों की आवश्यकता है। जो इस कार्य को करना चाहते हैं वे सार्वदेशिक सभा कार्यालय देहली को सूचित करें।

नारायणदत्त

का० क० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

XXXX XXXXXXXXX XXXX

सार्वदेशिक आर्यसम्मेलन का छठा अधिवेशन २ व ३ नवम्बर को कराची में

यह बात सभी पर प्रकट है कि सिन्ध सरकार के सत्यार्थप्रकाश पर लगाये प्रतिबन्ध के विरुद्ध लगभग दो वर्ष से आन्दोलन चल रहा है। साधारणतया यह प्रतिबन्ध ३० सितम्बर को जब भारत रक्षा नियम समाप्त होंगे, समाप्त हो जाना चाहिये था परन्तु कराची में यह किम्वदन्ती हम तक पहुँचाई गई कि सिन्ध की मुसलिम लीगी सरकार इस प्रतिबन्ध को बढ़ाना चाहती है। कराची के सिन्धी भाषा के दैनिक "हिन्दुस्तान" में इसका संकेत भी किया गया था। २ और ३ अगस्त ४६ में हुई संग्राम समिति की बैठकों में इस विषय पर भलीभांति विचार किया गया। कराची के प्रतिष्ठित सज्जनों से इस सम्बन्ध में विचार विनिमय भी किया गया और अन्त में निम्न निश्चय किये गये —

(१) कराची में सार्वदेशिक सम्मेलन की एक बैठक बडे पैमाने पर २री और ३री नवम्बर १९४६ को की जावे और उसमें इस सम्बन्ध में विचार करके अन्तिम निश्चय किया जावे। मुझ को इस (संग्राम) समिति के प्रधान पद को स्वीकार करने के लिये बाधित होना पड़ा। इस लिये अब इस सम्मेलन आदि के समस्त कार्य मेरी देख रेख और आदेशानुसार होंगे।

(२) यह भी निश्चय किया गया, कि इस सम्मेलन में सत्यार्थ प्रकाश के सिवा उन सब बातों पर भी विचार किया जावे जो मुसलिम लीग सरकार की ओर से सिन्ध के हिन्दुओं पर अन्याय और अत्याचार के रूप में की जाती हैं। मुझे यह प्रकट करते हुवे प्रसन्नता है कि सिन्ध के आर्य बहिनों और भाइयों ने बडे उत्साह के साथ सम्मेलन के प्रसंग में स्वागत कारिणी सभा के सदस्य बनाने शुरू कर दिये हैं तथा अन्य कार्यों के करने का भी सूत्रपात कर दिया है। अब आवश्यकता इस बात की है कि बाहर के भाई और बहिनें भी अधिक से अधिक अपना सहयोग प्रदान करें। स्वयं भी सम्मेलन में शरीक हों और धन जन से भी सम्मेलन की सहायता करें। यदि सम्मेलन शोलापुर की तरह सफल होगया तो फिर यह समझ लेना चाहिये कि आधे से अधिक युद्ध में विजय प्राप्त हो गई। यदि समस्त आर्य समाजों के सहयोग से सम्मेलन के अधिवेशन उपस्थिति आदि सभी दृष्टियों से कामयाब हो गये तो मुसलिम लीग और इसी श्रेणी के लोगों की आंखें खुल जावेंगी और फिर वे आर्य समाज से झगड़ा करने का साहस न कर सकेंगे। मैं सितम्बर के अन्त में फिर कराची जाऊंगा और युद्धान्त तक वहीं रह कर सम्मेलन के सफल बनाने का यत्न करूँगा।

नारायण स्वामी
प्रधान, संग्राम समिति,
अखिल भारतीय सत्यार्थप्रकाश
रक्षा समिति, देहली

आर्य वीर दल पञ्जाब

(१) प्रथम अगस्त से १५ अगस्त तक दीनानगर का शिविर सफलता पूर्वक समाप्त हुआ। जिन आर्य समाजों ने शिक्षा के लिये वीर भेजे उनका मैं धन्यवाद करता हूँ। आशा है भविष्य में भी आर्य समाजें इसी प्रकार अधिक से अधिक वीर शिविर में शिक्षा के लिये भेजेंगे और सब जगह आर्य वीरों का दल स्थापित करने का यत्न करेंगे।

(२) इस समय तक मेरे पास आर्य वीरों की पूर्ण सूची नहीं है अतएव आर्य वीर दलों को शीघ्रातिशीघ्र अपने यहां की दल शाखा का पूरा २ वृत्तान्त वीरों की संख्या, नाम आदि का पूरा २ पता लिख कर भेजना चाहिये। इस बात का भी ध्यान रहे कि प्रतिमास की १५ और अन्तिम दिनाङ्क को सब दल शाखा अपना पूरा २ वृत्तान्त केन्द्र में लिख कर भेजेंगे।

(३) आर्य संस्कृति में विजय दशमी वीरों का दिन है अतः निश्चय किया गया है कि आर्य वीर दल की ओर से यह उत्सव सब जगह पर समारोह के साथ मनाया जाय। यही दिन दल की सहायता के लिये नियुक्त किया गया है। अतः सब स्थानों पर आर्य वीर दल को धन संग्रह के काम में लग जाना चाहिये और इस कार्य को विजय दशमी वाले दिन समाप्त करके संग्रह की हुई धन राशि को मुख्य कार्यालय आर्य वीर दल दीना नगर (जि० गुरुदासपुर) के पते पर भेजा जावे। सब आर्य वीरों को याद रखना चाहिये कि उनके यहां से इकट्ठी की हुई धन राशि उन के यहां और बाकी जहां कहीं दल नेता जी उचित समझेंगे व्यय की जायेगी।

भवदीय—
स्वतन्त्रानन्द
दलनेता आर्य वीर दल, पञ्जाब

सम्पादकीय

लीगी गुण्डाशाही का नङ्गा नाचः—

गत १६ से २० अगस्त तक कलकत्ता में मुस्लिम लीगियों ने जिस अमानुषिक क्रूरता का नङ्गा नाच करवाया उसके रोमाञ्चकारी भयङ्कर वृत्तान्त पाठक समाचार पत्रों में पढ़ चुके होंगे। हम इस विषय में सुनी सुनाई बातों पर अधिक विश्वास न करते हुए 'अमृत बाजार पत्रिका' जैसे विश्वसनीय सुप्रसिद्ध पत्र में प्रकाशित एक 'प्रत्यक्षदर्शी' के वर्णन से कुछ आवश्यक अंश पाठकों की सूचनार्थ उद्धृत करना पर्याप्त समझते हैं ताकि वस्तुस्थिति पर प्रकाश पड़ सके। वह प्रत्यक्षदर्शी लिखता है—"कलकत्ते में लुटेरे पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार संगठित करके खुले छोड़ दिये गये थे। इन के साथ लारियों में सोडा वाटर की बोतलें, इटों के टुकड़े लाठियां व अन्य हथियार भरे हुए थे। इन में लीगी झण्डे फहरा रहे थे। १६ ता० को मैंने लारियों पर निकाला गया वह जलूस देखा जो कि हावड़ा से बड़ा बाजार जा रहा था। जलूस के हावड़ा पर पहुँचते ही लीगियों ने लारियों से उतर २ कर छुरेबाजी प्रारम्भ कर दी। वे घायलों को पूर्ण रूप से समाप्त कर के लाश को फुटपाथ से घसीट कर हुगली नदी में फैंक आते थे। इस प्रकार दूर खड़े हो कर मैंने आध दर्जन व्यक्तियों की हत्या देखी। उस समय वहां से केवल २० गज दूर खड़ी पुलिस भी यह सब देख रही थी पर उस ने कुछ नहीं किया।

"मैंने बड़ा बाजार में आगे बढ़ना चाहा तो मुझे कहा गया कि गुरुद्वारे से आगे न जाओ क्योंकि चितपुर रोड का प्रदेश गुण्डों के हाथ में है। लौटते हुए मैंने देखा कि लोगों के बदन बुरी तरह से चीर फाड़ दिये गए थे, स्त्रियों के स्तन काट डाले गए थे और बच्चों के टुकड़े २ कर दिये गये थे। एक हिन्दू सज्जन अपने मुसलमान मित्र की सहायता से मुसलमानी वेश धारण करके मरने से बच गये। इन सज्जन ने बताया कि मैंने स्थान २ पर हजारों नोटों के बण्डल, गहने, कपड़े और सोने की घड़ियां आदि देखीं। लारियां स्वतन्त्रता पूर्वक इधर उधर आ जा रही थीं और उन पर चढ़े लोग लीगी नारे लगा रहे थे। ये मुसलमानों को 'जिहाद' के लिये उकसा रहे थे।"

डान (Dawn) जैसे मुस्लिम लीगी पत्र हिन्दुओं और कांग्रेस को गालियां दे कर इन यथार्थ घटनाओं पर पर्दा डालने और बंगाल के मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल को सर्वथा निर्दोष सिद्ध करने का अब सिर तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं किन्तु मुस्लिम लीगी नेता तथा डॉन जैसे पत्र गत कई मासों से हिन्दुओं के विरुद्ध जिस प्रकार का विष वमन करते रहे हैं, जिस प्रकार कुरान

की आयतें उद्धृत कर २ के उन्हें जिहाद के लिए उकसाते रहे हैं कलकत्ते का पूर्वायोजित नृशंस काण्ड जिस ने इस प्रकार के सब साम्प्रदायिक दङ्गों को मात कर दिया है जिस में मृत्यु संख्या १० हजार और आहतों की संख्या २० हजार तक बताई जाती है उसका स्वाभाविक परिणाम था। सुहरावर्दी और उसका मन्त्रि मण्डल इस घोर नर हत्या के लिए उत्तरदायी है तथा उसे न केवल तुरन्त पदच्युत कर देना चाहिये बल्कि सार्वजनिक जाच कराकर कठोरतम दण्ड देना चाहिये इस मे किसी विचार शील न्याय प्रिय व्यक्ति का मतभेद नही हो सकता। १६ अगस्त को डाइरेक्ट डे' (खुली लड़ाई का दिवस) के उपलक्ष मे सार्वजनिक छुट्टी की घोषणा करके गुण्डाशाही को प्रोत्साहित किया गया तथा बहुत ही देर मे सैन्य को बुलाया गया इस की जिम्मेवारी स्पष्टतया बंगाल के मुस्लिम लीगी मन्त्रि मण्डल पर है और वहा के गवर्नर ने भी उत्पात शमनार्थ समस्त उचित साधनों का दृढ़ता से प्रयोग न कर के अपनी अयोग्यता का प्रमाणित किया है। डान का यह लिखना कि मुस्लिम लीगी मन्त्रि मण्डल को उस दिन (१६ अगस्त को) उत्पात की कोई आशङ्का न थी और इसी लिए उस न पहले से कोई तय्यारी न कर रक्खी थी यदि एक क्षण के लिए दुर्जनतोष न्याय से सत्य मान भी लिया जाय (यद्यपि उपर्युक्त प्रत्यक्षदर्शी के वृत्तान्त तथा अन्य प्रमाणों से ऐसा मानना सर्वथा असम्भव है) तो भी सुहरावर्दी और उसके मन्त्रि मण्डल की नितान्त अदूरदर्शिता और अयोग्यता ही उससे प्रमाणित होती है और कुछ नहीं। सुहरावर्दी जैसे शान्ति और प्रान्त की सुरक्षा के शत्रुओं का अपराध इतना भयङ्कर है कि उन्हें सार्वजनिक तौर पर फासी के तख्ते पर लटकाने में भी कोई संकोच न करना चाहिए ताकि भविष्य में इस प्रकार के नृशस काण्ड असम्भव हो जाए। हिन्दुओं तथा अन्य मुस्लिमेतरों का भी आत्म रक्षा के समस्त उचित साधनों को अपनाना तथा अपने को पूर्णतया सगठित बनाना चाहिये ताकि वे ऐसी गुण्डाशाही के शिकार न बन सकें।

केन्द्र में अन्तःकालिक राष्ट्रीय सरकारः—

यह प्रसन्नता की बात है कि २४ अगस्त की शाम को लार्ड वेवल ने अन्त कालीन राष्ट्रीय सरकार के संगठन की घोषणा कर दी है जो २ सित० को पद ग्रहण करेगी। देशरत्न प० जवाहर लाल जी नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, डा० राजेन्द्र प्रसाद, श्री शरच्चन्द्र बोस, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, श्री जगजीवन राम आदि कांग्रेस के मान्य नेता जिस सरकार के प्रमुख कर्णधार होंगे उस के द्वारा देश का उद्धार होगा, उस की दरिद्रता और निरक्षरता शीघ्र दूर होगी तथा उस के शिल्प व्यवसाय शिक्षादि मे सब प्रकार की उन्नति होगी ऐसी आशा हम सब को अवश्य करनी ही चाहिये किन्तु इस अवसर पर यह न भूलना चाहिये कि सिन्ध और बंगाल के पीर इलाही बख्श और सुहरावर्दी जैसे उत्तरदायी मन्त्रियों तथा गजदर जैसे मुस्लिम लीगी नेताओं ने राष्ट्रीय (कांग्रेस) सरकार के निर्माण होते ही इन दोनों प्रान्तों के पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा करने तथा केन्द्रीय सरकार से पूर्ण असहयोग कर न देने इत्यादि के रूप में करने की घोषणा की है तथा मि० गजदर प्रधान सिंध प्रान्तीय मुस्लिम लीग ने यहा तक

कहने की धृष्टता की है कि 'लीग की खुली लड़ाई हिंसात्मक होगी । यदि कांग्रेस ने हिन्दू बहुल प्रान्तों में किसी मुस्लिम को छेड़ने का साहस किया तो मुस्लिम बहुल प्रान्तों मे हिन्दुओं से उसका व्याज सहित बदला चुकाया जाएगा' यह राष्ट्रीय सरकार के लिये खुली चुनौती है जिस का दृढ़ता से मुकाबला करना होगा । ऐसे विद्रोहात्मक भाषणों और लेखों को चुप चाप सहन करना सरकार के लिये अत्यन्त हानिकारक होगा । इस नई सरकार के सदस्य सर शफ़ात अहमद खां को शिमला में दो मुस्लिम युवकों द्वारा छुरा भोंक कर मारने का जो यत्न किया गया, यदि नई राष्ट्रीय सरकार ने दृढ़ता से कार्य न लिया तो बहुत सम्भव है कि अन्य सदस्यों पर भी ऐसे ही कायरता पूर्ण आक्रमण करके उन्हें मुस्लिम लीग के आगे घुटने टेकने को बाधित किया जाए पर हमें पूर्ण आशा है कि सरदार वल्लभ भाई पटेल और पं० जवाहर लाल जी जसे देश के मान्य नेता दृढ़ता से काम लेकर ऐसे अपराधी देशद्रोहियों को सिर न उठाने देंगे और उन्हें कठोरतम दण्ड देकर देश के अनुशासन और सरकार के गौरव की रक्षा करेंगे।

जयपुर में विधवा विवाह समर्थक बिल स्वीकृतः—

हमे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि जयपुर रियासत की लेजिस्लेटिव कौन्सिल मे २२ अगस्त को हिन्दू विधवा पुनर्विवाह बिल स्वीकृत हो गया है । इस से पूर्व बाल्य विवाह निरोधक ऐक्ट भी वहां आर्यसमाज के विशेष उद्योग से इसी वर्ष बन चुका है । यह समाज सुधार की ओर प्रशंसनीय कदम है । बाल-विवाह की कुप्रथा के कारण हमारे देश में बालविधवाओं की संख्या बहुत अधिक है। बाधित वैधव्य का भयङ्कर परिणाम नैतिक पतन होता है जिस के प्रत्यक्ष हजारों उदाहरण भ्रूण-हत्यादि के रूप में आते हैं अत ऐसी युवती विधवाओं को जो ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन व्यतीत करने मे अपने को समर्थ नहीं पातीं नियमित विवाह की अनुमति देना समाज के शुभचिन्तकों का कर्तव्य है । हमे आशा है कि यह बिल शीघ्र ही कानून का रूप ग्रहण करके विधवाओं की वर्तमान शोचनीय अवस्था को दूर करने मे सहायक होगा।

हिन्दू विश्वविद्यालय उपसमिति का अभिनन्दनीय निर्णयः—

गत वर्ष जब यह समाचार पत्रों मे प्रकाशित हुआ कि हिन्दू विश्वविद्यालय के अरबी फारसी विभाग के अध्यक्ष श्री प्रो० महेश प्रसाद जी की सुपुत्री श्री कल्याणी देवी को धर्म विज्ञान महाविद्यालय की वेद मध्यमा श्रेणी में प्रविष्ट करने की उस महाविद्यालय के अधिकारियों ने अनुमति नहीं दी तो समस्त आर्य जगत् मे सनसनी फैल गई और उसके विरुद्ध आन्दोलन होता रहा । पाठकों को ज्ञात ही है कि 'सार्वदेशिक' पत्र में इस विषयक ३ सम्पादकीय टिप्पणियां और ३ विस्तृत लेख स्त्रियों के वेदाध्ययन तथा वैदिक कर्मकाण्ड मे अधिकार के सम्बन्ध में प्रकाशित हुए जिन की प्रतियां महामना पं० मदन मोहन जी मालवीय तथा हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित उपसमिति के सदस्यों और अन्य विद्वानों व 'सिद्धान्त' आदि पौराणिक पत्रों

में भेजे जाते रहे। हमें बनारस के 'आज' 'संसार' तथा अन्य पत्रों के २३, २४, अगस्त के अङ्क में यह समाचार पढ़ कर अत्यधिक प्रसन्नता हुई है कि—

स्त्रियां वेद पढ़ सकती हैं

हिन्दू विश्वविद्यालय की कमेटी का निर्णय

बनारस २२ अगस्त। हिन्दू विश्वविद्यालय ने पण्डित मदनमोहन जी मालवीय की अध्यक्षता में जो समिति बनाई थी उसने फैसला दिया है कि स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार है। स्त्रियों को कर्म काण्ड व पुरोहित विद्या सीखने के सम्बन्ध मे जो बहस चल रही थी वह इस निर्णय से समाप्त हो गई है। स्त्रियों को पुरोहित व कर्म काण्ड की शिक्षा देना शास्त्रों के अनुसार है।"

हम उपसमिति के सदस्यों और हिन्दू विश्वविद्यालय के अधिकारियों को इस वेदादि सत्य शास्त्रानुकूल, उदारता बुद्धिमत्ता पूर्ण निर्णय पर हार्दिक बधाई और धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि वे स्त्रियों के लिये वेदादि सत्य शास्त्रों तथा वैदिक कर्म-काण्ड की शिक्षा का यथोचित प्रबन्ध अति शीघ्र करेंगे।

स्नातक भाई का उचित सम्मानः—

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय में 'आर्य सिद्धान्त' के महोपाध्याय, गुरुकुल काङ्गड़ी के सुयोग्य स्नातक प० हरिदत्तजी वेदालङ्कार को (जिनके विद्वत्ता पूर्ण लेख 'सार्व देशिक' के अनेक अङ्कों में प्रकाशित होते रहे हैं) बगाल हिंदी परिषत् की ओर से 'हिन्दू परिवार मीमांसा' नामक पुस्तक पर १२५०) का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। गत वर्ष आप को इसी परिषत् की ओर से 'हिन्दू विवाह मीमांसा' नामक पुस्तक पर १२५०) का पुरस्कार मिला था। हम अपने प्रिय शिष्य सुयोग्य स्नातक भाई प० हरिदत्तजी के इस सम्मान पर उन्हें हार्दिक बधाई देते हैं। इस से पूर्व गुरुकुल काङ्गड़ी के दो सुप्रसिद्ध स्नातक प० जयचन्द्रजी विद्यालङ्कार तथा प० सत्यकेतुजी विद्यालङ्कार १२००) के मङ्गलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्त कर चुके हैं। इस पर भी जो गुरुकुल विश्वविद्यालय के स्नातकों की योग्यता में सन्देह करते रहते हैं उनको सिवाय पक्षपात वा दुराग्रह के क्या कहा जाए?

आर्य महा सम्मेलन कराची की सफलताः—

इस वर्ष २, ३ नवम्बर को कराची में जो आर्य महा सम्मेलन का अधिवेशन हो रहा है उस विषयक श्री महात्मा नारायण स्वामी जी प्रधान सार्वदेशिक सभा और संग्राम समिति तथा का मन्त्री जी की सूचनाए पाठक इस अङ्क में पढ़ चुके हैं। अब समस्त आर्य नर नारियों का कर्तव्य है कि इस महा सम्मेलन (आर्य कांग्रेस) को पूर्णतया सफल बनाने का प्रयत्न अभी से प्रारम्भ करें ताकि सिन्ध के मुस्लिमलीगी मन्त्रि मण्डल और मुस्लिम जनता पर भी आर्य समाज की संगठित शक्ति का प्रभाव पडे विना न रहे और वे हमारे प्राणप्रिय धर्मग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश पर लगाये प्रतिबन्ध को आगे बढ़ाने का साहस न कर सकें। आर्य जनता को अपने उत्साह और सत्यार्थ प्रकाश विषयक प्रेम का पूर्ण परिचय क्रियात्मक रूप में देना चाहिये। सत्यार्थ प्रकाश रक्षार्थ सब प्रकार के त्याग और बलदान के लिये तय्यार रहना चाहिये, सत्यार्थ प्रकाश निधि के

लिये अधिक तम आर्थिक सहायता देनी चाहिये तथा ५० से अधिक आयु के नर नारियों को अधिक से अधिक सख्या में वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करके समाज सेवा का व्रत लेना चाहिये। इस महासम्मेलन की सफलता सब प्रात गमी आर्य नर नारियों के पूर्ण सहयोग पर निर्भर है जिस के प्रदान मे कोई त्रुटि न रखनी चाहिये।

स्वतन्त्रता और प्रेम के पुजारी का हार्दिक स्वागत—

सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी और स्वतन्त्रता तथा प्रेम के पुजारी, प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन के प्रवर्तक राजा महेन्द्र प्रताप जी लगभग ३२ वर्षों के *प्रवास के पश्चात् लौट कर मातृभूमि में पधारे हैं यह प्रसन्नता की बात है।* हम आर्य जगत् की ओर से उन का हार्दिक स्वागत और उन की उज्ज्वल देश भक्ति तथा स्वतन्त्रता-प्रियता का अभिनन्दन करते हैं तथा जैसे कि सार्वदेशिक सभा की ओर से मान्य राजा जी को भेजे स्वागत सूचक तार में कहा गया था हम आशा करते हैं कि अपने बहुमूल्य जीवन के शेष वर्ष वे सार्व भौम वैदिक आदर्शों के अनुकूल महत्त्वपूर्ण सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा के कार्यों में व्यतीत करेंगे।

एक महान् और निर्भय जगद्विख्यात विचारक चल बसेः—

जगद्विख्यात विचारक और लेखक श्री एच० जी० वेल्स के इस मास लगभग ७६ वर्ष की आयु में देहावसान से संसार के एक महान् आदर्श वादी और निर्भय साहित्यिक उठगये हैं। उन की रचनाओं ने साहित्यिक क्षेत्र में एक क्रान्ति-सी उत्पन्न कर दी थी। Utopia, God the Invisible King, The shape of things to come, Out lines of World History, Short History of the World, Mind at the end of its tether आदि स्वर्गीय महान् विचारक की पुस्तकों को पढने के पश्चात् हमारे सम न कोई भी उनके प्रति आदर का भाव रक्खे बिना न रह सकता था। उन की निर्भयता के दो एक स्पष्ट उदाहरणों का उल्लेख किये बिना हम नहीं रह सकते। Outlines of World History में उन्होंने मुहम्मद साहेब के पारिवारिक जीवन की कठोर आलोचना करते हुए लिखा —

"There are those who write of this evidently lustful and rather shifty leader, although he was a man to put besides Jesus or Gautam But it is surely manifest that he (Mohamed) was a being of a commoner clay, he was vain, egotistical tyrannous and a self deceiver, and it would throw all our history out of proportion, if out of an insincere deference to a possible Moslem reader, we were to present him in any other light"

(Outline of History by H G. Wells One Volume New York Edition P, 609)

अर्थात् कई लोग हैं जो इस स्पष्टतया कामी और अवसरवादी नेता (मुहम्मद) के विषय में ऐसा लिखते हैं मानो उसे भी ईसामसीह व गौतम बुद्ध के साथ व उनकी कोटि में रक्खा जा सकता है किन्तु यह सर्वथा निश्चित और स्पष्ट बात है कि वह एक साधारण मट्टी से बना हुआ था। वह अभिमानी, अहङ्कारी, अत्याचारी और

आत्म वञ्चक था और यह हमारे सारे इतिहास को असङ्गत बनाना होगा यदि हम किसी सम्भावित मुसल्मान पाठक को अयथार्थतया प्रसन्न करने की इच्छा से उसे किसी और रूप में रक्खें। "Short History of The World" में भी श्री वेल्स ने मुहम्मद साहेब के विषय में ऐसे ही विचार निम्न शब्दों में प्रकट किये।

'Mohammed seems to have been a man compounded of very considerable vanity, greed, cunning, self deception and quite sincere religious passion". (Short History of the World P. 137)

अर्थात् मुहम्मद ऐसा व्यक्ति प्रतीत होता है जिस के अन्दर अहङ्कार, लोभ, धूर्तता, आत्म प्रवञ्चन और साथ ही धार्मिक भावना व लगन बहुत बड़ी मात्रा में पाई जाती है।' इत्यादि

इन पुस्तकों के प्रकाशन के २०, २२ वर्ष बाद कुछ मतान्ध मुसल्मानों ने लण्डन में काली झण्डियां हाथों में लेकर एक जलूस निकाला और वे स्व० मि० वेल्स के घर पर पहुँचे। उन्हें अपने मुहम्मद साहेब के विषय में अपमान जनक शब्दों को पुस्तकों में से निकालने के लिये बाधित किया गया किन्तु मि० वेल्स ने ऐसा करने से साफ इन्कार करते हुए कहा कि 'आप लोगों की धमकियों से मैं भयभीत होने वाला नहीं हूँ। जब तक मुझे आप विश्वास न दिला दें कि मैंने जो विचार प्रकट किये थे वे अशुद्ध हैं मैं एक अक्षर भी बदलने के लिये तय्यार नहीं हूँ।' इस पर वे मतान्ध मुसलमान अपना सा मुंह लेकर वापिस लौट गए और उनके सम्प्रदाय के नेता को मि० वेल्स से क्षमा मागनी पड़ी।

मि० वेल्स ईसाइयत के अनेक सिद्धान्तों के कट्टर विरोधी थे और वे एक सार्वभौम पवित्र बुद्धि सगत धर्म और राष्ट्र की आवश्यकता अनुभव करते थे। उनकी इच्छानुसार उनका देहान्त होने पर जलाया गया। ऐसे निर्भय महान् आदर्शवादी विचारक के प्रति हम श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं॥

ध० दे०

दान स्थापना दिवस

मास जुलाई सन् १६४६

१०)	आ०	स०	पूरनपुर (पीली भीत)
१५)	"	"	पीली भीत
३०)	"	"	हरदोई
३०)	"	"	बीकानेर
५)	"	"	हसनग ज पार (लखनऊ)
३०)	"	"	बहराइच
२१)	"	"	अम्बाला कन्ट
६	"	"	काल्पी
११)	श्री देसाई		

———

१५५)

३८-॥≡) गतयोग

———

५३७॥≡

सार्व० पत्र प्रा० स० जिनका चन्दा मास अगस्त सन् १६४६ मे समाप्त होता है।

७६, २६८, ४६४, ६२३, ६२६, ८०६, ८१०, ६५४, ११८०, १३०२, १३०५, १४०३ १४०८, १४१० १६२०, १६२२, १६२६, १६२७, १६ ८, १६३६, १६५६, १६५६, १६६३, १६६५, १७१४, १७१७, २१३०, २१४६ २१६३, २४३६ २४३७, २४३८ २४४२, २४५२, २४५५, २४५८, २४६०, २४६२, २४६३, २४६४, २४६६, २४६७, २४६८, २४६६, २४७०, २४७१, २४७२, २४७३ २४७४, २४७५, २४७६, २४७६, २४८१, २४८२, २४८४, २४८५, २४८८, २४८६, २४६०, २४६१, २४६२, २४६३, २४६४, २४६५ २४६६, २४६७, २४६८, २४६६, २५००, २५०१, २५०२, २५०३, २५०४, २५०५, २५०७, २५०८, २५०६ २५११, २५१२ २५१३, २५१४, २५१५, २५१६, २५१७, २५१८, २५१६, २५२०, २५२१, २५२२, २५२४, २५२५, २५३६, २५५६, २५६२, २५८७,

ये सज्जन अपना चन्दा ५) म० आ० से भेजने की कृपा करें।

व्यवस्थापक सा० दे०

Books to be had from Sarvadeshik Sabha, Delhi

1	In Defence of Satyarth Prakash	≈)
2	Rishi Dayanand and Satyarth Prakash	⊨)
3	We and our Critics	−)।
4	Universality of Satyarth Prakash	−
5	Voice of Arya Varta	≈)
6	Truth and Vedas Late Rai Thakur Datt Dhavan	⊨)
7	Truth Bed Rock of Aryan Culture	॥)
8	Vedic Teachings (Atma)	७॥)
9	Kenopanishat (English) (Pt Ganga Prasadji M A)	।)
10	Agnihotra Dr Satya Prakash	७॥)
11	The Scope, Mission of Aryasamaj Bound (Pt Ganga Prasadji Upadhyaya)	१
12	Ecclesia Divina (Swami Bhumanand Saraswati)	५)
13	Aryasamaj and Theosophical society (Shri Shyam Sunderlal Vakil)	≡)
14	Daily Prayer of An Arya (Shri Narayan Swamiji)	॥
15	Glimpes of Dayananda (Late Pt Chamupati M. A.) Bound	१॥)
16.	Principles and Bye-laws of the Aryasamaj	−)

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

Regd. No. L. 3131

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	,,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	११
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	-)
(७) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(८) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,	।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण पं० इन्द्रजी)		=
(१०) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(११) वैदिक सूय विज्ञान	,,	=)
(१२) वेद में असित शब्द	,	-)
(१३) ऋगवेद में देवृकामा	,,	-)
(१४) वद म दो बड़ा वैज्ञानिक शक्तिया	,,	१
(१५) विमान शास्त्र	,,	।=॥
(१६) नया ससार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≠)
(१७) मातृत्व की ओर ,,	,, अ०	१।)
(१८) कथा माला	,,	॥)
(१९) आर्य जवन गृहस्थ धर्म	,,	॥=)
(२०) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		२)
(२१) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२२) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२३) विद्यार्थी जीवन रहस्य		॥)
(२४) उपनिषद ईश ≠) केन ॥) कठ ॥, प्रश्न =) मुण्डक ≠) माण्डूक्य ≠), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी का संक्षिप्त जीवनी		-)
(२६) नारायण सुधा सजिल्द		१॥)
(२७) शहीदी पद्धिका		।=)
(२८) आर्यसमाज मन्दर चित्र		।)
(२९) हकीकत राय श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३०) बहिनों की बातें (प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न		१)
(३१) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी		॥)
(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३३) वेद और गोमेध श्री बा श्यामसुन्दरलाल जी		≠
(३४) दयानन्द कविता) प० यज्ञदत्त त्यागी		=)
(३५) सत्यार्थ प्रकाश गान(पं० सत्यभूषण जी योगी)		=)
(३६) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम)		॥=
(३७) भारतवर्ष मे जात भेद	,	।)
(३८) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≠)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४०) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-
(४१) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सग का कार्य क्रम		-)
(४२) आर्यसमाज क्या है ? (श्री नारायण स्वामी जी)		॥=)
(४३) सरल सन्ध्योपासना		)
(४४) भारतीय वाङ्मय के अमररत्न		-)
(४५) वेद सुधा (स्व० प० कालीराम जी)		।)
(४६) पर्दाप्रथा का वैनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥)
(४७) काया कल्प (प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)		१।)
(४८) आर्यसमाज के नियमोपनियम		-॥

कृण्वन्तोविश्वमार्यम्



सार्वदेशिक

सितम्बर १६४६ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
	श्री पं० धर्मदेव जी सि० वाचस्पति विद्यावाचस्पति	विदेश १० शि०
आश्विन २००३ सं०	साहित्य भूषण	१ प्रति ॥)

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २२ | सितम्बर १९४६ ई० | आश्विन २००३ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ७

* वैदिक प्रार्थना

ओ३म् शग्ध्यूषु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः । भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥

सामवेद म० २५२

शब्दार्थ—(शचीपते इन्द्र) हे ज्ञान और कर्मों के स्वामी परमेश्वर । (विश्वाभि ऊतिभिः) सब पवित्र ज्ञानों और रक्षाओं से तू हमें (सु शग्धि) अच्छी प्रकार शक्ति युक्त कर । (शूर) हे कष्टों के विनाशक शक्ति शालिन् (वसुविद यशसं त्वा) प्राण शक्ति के दाता पूर्ण यशस्वी आप के (हि अनु चरामसि हम निश्चय से अनुकूल होकर विचरते हैं भगम् न) जिस प्रकार साधारण अज्ञानी जन ऐश्वर्यादि के पीछे चलते हैं उस प्रकार ।

विनय—हे समस्त जगत् के राजाधिराज आप अनन्त ज्ञान और शक्ति के भण्डार हैं । आप उत्तम ज्ञान देकर हमे ऐसा समर्थ बना दें कि हम सदा आपकी आज्ञाओं का पालन करते रहें । हम आपके सच्चे आज्ञा कारी पुत्र बनें । हमारा सारा आचार व्यवहार आपकी वेद द्वारा प्रदत्त आज्ञाओं के अनुसार हो ॥

वेदोपदेश

वेद पढ़ने का अधिकार सबको है

(लेखक—विद्वद्वर श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)

वेद कहता है

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायु स्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः॥
यजु० ३२। १

एक सद् विप्रा बहुधा वदन्ति अग्नि यम मातरिश्वानमाहु ॥ ऋ० १। १६४। ४६॥

निरुक्त कार इसी मन्त्र को लेकर कहते हैं महाभाग्याद् एक एवात्मा बहुधा स्तूयते। इससे स्पष्ट है कि वेद में किसी देवता की स्तुति हो वह परमेश्वर की स्तुति अवश्य है। इस बात को भली प्रकार समझने के लिये हमें समकक्षवाद को समझना होगा। वेद में एक शब्द के अनन्त अर्थ हैं इसी लिये कहा है अनन्ता वै वेदा' परन्तु अनन्त अर्थ होते हुए भी इन मन्त्रों से व्यवस्थित ज्ञान होता है गड़बड़ नहीं। प्रश्न उठेगा कि जब एक शब्द के अनन्त अर्थ हैं तो फिर व्यवस्थित कैसे होगा। एक अग्नि शब्द का घोड़ा,गधा,कुत्ता, बिल्ली, झींगर, मैंढक, तोता, मैना, मनुष्य, आदि सभी अर्थ हो गए तब तो वेद एक बच्चों का खेल हो गया। तो इसके उत्तर में हमारा कहना है कि ऐसा कभी नहीं। वेद का एक क्षेत्र में एक ही अर्थ है और वह बिल्कुल व्यवस्थित है। किन्तु क्षेत्र भेद से अनन्त अर्थ हैं परन्तु वे सब एक दूसरे के समकक्ष हैं। उदाहरण के लिये एक शब्द मालिक को ले लीजिये। इस शब्द का अर्थ परमात्मा, राजा, पति, नौकर को नौकरी देने वाला स्वामी, यह सब ही हैं किन्तु प्रकरण भेद से अर्थ बदलता जायगा। जब भक्त कहेगा कि मेरे मालिक मुझे पापों से छुड़ा तो इस का अर्थ परमात्मा होगा। जब एक प्रान्त का शासक प्रजा को कहेगा कि मैं तो मालिक के हुक्म का बन्दा हूं उन के हुक्म की इन्तजार कर रहा हूं तो यहां मालिक का अर्थ राजा होगा। जब एक पतिव्रता कहेगी कि मैं अपने मालिक को छोड़ कर दूसरे की नहीं हो सकती तब मालिक का अर्थ स्त्री का पति होगा और जब नौकर कहेगा कि मालिक मुझे बर्तन मांजने को कह गए हैं इस समय मैं पास सकने नहीं जा सकता, तो यहां मालिक का अर्थ उस नौकर का स्वामी ऐसा होगा। इस प्रकार हर प्रकरण में मालिक का भिन्न अर्थ है परन्तु हैं सब एक दूसरे के समकक्ष। यह नहीं हो सकता कि एक प्रकरण में तो मालिक का अर्थ राजा हो और दूसरे में नौकर, इसी प्रकार वैदिक शब्द अग्नि को लीजिये। भौतिक प्रकरण में अग्नि का अर्थ आग है क्योंकि अग्रणी है आगे खेंचकर ले जाने के लिये अपेक्षित दोनों गुण प्रकाश तथा गर्मी उस में उपस्थित हैं इसलिये आग का नाम अग्नि है अब एक कुटुम्ब में अग्नि का अर्थ पुरोहित होगा क्योंकि भौतिक परिवार में अग्नि का जो स्थान है मानव परिवार में उसका समकक्ष पुरोहित है,वही परिवार का अग्रणी है। अब इस समकक्ष वाद के सहारे ही वेद अनन्त विद्याओं का भण्डार है इसीलिये शतपथ ब्राह्मण में कहा है। द्वय वा इदं न तृतीयमस्ति यदेव शुष्कं तदाग्नेयं

यदेवाद्र्ं तत्सौम्यम् । यहां स्पष्ट है कि हर प्रसङ्ग में अग्नि और सोम देवता हैं परन्तु जहां जो शुष्कता उत्पन्न करता है वह अग्नि और आर्द्रता उत्पन्न करने वाला सोम । इस प्रकार शरीर में अग्नि नाम पित्त का होगा कफ का नहीं। इसीलिये सुश्रुत में कहा है—

पुरुषोऽयं मग्निषोमीयः ।

अब इस समकक्षवाद के सिद्धान्त को समझने के पश्चात् 'सन्नते में द्यावा पृथिवी आदि मन्त्रों का अर्थ स्पष्ट समझ में आ जाता है, परमात्मा कहता है।

अग्निश्च पृथिवी च सन्नते ते मे सन्नमतामदो वायुश्चान्तरिक्षं च सन्नते ते मे सन्नमतामद आपश्च वरुणश्च सन्नते ते मे सन्नमता मदः ।
सप्त संसदोऽअष्टमी भूत साधनी सकामा अध्वनस्कुरु सञ्ज्ञान मस्तु मे ऽमुना ॥ यजु० २६।१

यथेमा वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः ।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय । प्रियो देवानांदक्षिणायैदातुरिह भूयासम् अयम्मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ।
यजु० २६ । २

अब यहां सबसे पहले अमुना का अर्थ समझना चाहिये अदस् शब्द सदा अव्यक्त का परामर्श करता है । इसीलिये इह का अर्थ इस लोक में तथा अमुत्र का अर्थ परलोक में किया जाता है । अब प्रश्न उठता है कि क्या परमात्मा के लिये भी कोई अव्यक्त अथवा परोक्ष है ? इस का उत्तर है अवश्य है । जो लोग अविद्या आलस्य प्रमादादि के कारण अथवा अज्ञानवश उससे विमुख रहते हैं [illegible]

निर्देश किया गया है । अब मन्त्रका अर्थ इस प्रकार हुआ ।

हे भक्त । यह अग्नि और पृथिवी मेरे सामने सिर झुकाते हैं और मेरी आज्ञा है कि सदा सिर झुकाते रहें । वह वायु और अन्तरिक्ष सिर झुकाते हैं और झुकाते रहें । वह आप और वरुण सिर झुकाते हैं और झुकाते रहें, वह ब्रह्मांड को अग्नि वायु अन्तरिक्षादित्य द्युलोक आप तथा वरुण सातों मुझे सिर झुकाते हैं, और मेरे ससद हैं । परन्तु यह पृथिवी कुछ दूसरों से भिन्न है । इस अष्टमी पृथिवी में जो मनुष्य बसते हैं वे कर्म करने में स्वतन्त्र होने के कारण आलस्य, प्रमाद, नास्तिकता अज्ञानादि के कारण मुझ से विमुख रहते हैं । हे मेरे भक्त । तू इस पृथिवी के सब रास्तों को अर्थात् सब दिशाओं को (सकामान् कुरु) मेरी कामना के अनुकूल बना । वह कामना यह है कि (अमुना) मुझ से विमुख हुए उस नास्तिकादि वर्ग को भी मेरा (संज्ञानम्) सम्यक् ज्ञान प्राप्त हो वह सम्यक् ज्ञान सब नास्तिकादि को कैसे प्राप्त होगा सो अगले मन्त्र में कहते हैं ।

हे भक्त ? तू ऐसा उद्योग कर कि जिस से (इमाम् कल्याणीं वाणीम्) इस अपनी
जगत् का कल्याण करने वाली वेद वाणी को मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों तक (आवदानि) तेरे द्वारा पहुँचा सकूं क्योंकि परमात्मा निराकार होने के कारण स्वयं बोल नहीं सकता इसलिये भक्तों द्वारा बुलवाता है यही वहां लोट्लकार का स्वारस्य है । अब आगे 'जनेभ्य' की व्याख्या है । हे भक्त तेरे द्वारा यह वाणी सब लोगों तक पहुंचे क्या ब्राह्मण क्या क्षत्रिय, क्या शूद्र, क्या वैश्य, क्या तेरे (स्व) अपने और क्या (अरणा) पराये हे भक्त । [illegible]

ऐसा उद्योग कर जिस से देवों में मेरा प्रेम बढ़े, यज्ञ करने वालों तथा दक्षिणा देने वालों मे मेरा प्रेम बढ़े। परन्तु सब से बढ़कर (अद) वह जो मुझ से विमुख हुआ वर्ग है वह (मा) मेरी ओर (उपनमतु) समीप आवे और झुकता आवे हे भक्त। तेरे उद्योग से (अयम्मे काम समृध्यताम्) मेरी यह कामना पूर्ण हो।

कितना वात्सल्य भरा परमात्मा का उपदेश है। उसे अपने भक्तों की तो चिन्ता है परन्तु उसे उनकी भी उतनी ही चिन्ता है जो उससे विमुख हैं। वह भक्तों की परीक्षा ही इस मे समझता है कि वह प्रभु—विमुखों को वेद की कल्याणी वाणी का उपदेश देकर कितना प्रभु-परायण बना सकते हैं।

अब यहा आपत्ति केवल 'कामः' इस शब्द पर हो सकती है कि क्या भगवान् भी साधारण पुरुषों की तरह भीख माग रहे हैं। किन्तु भेद इतना ही है कि भगवान् के सम्बन्ध में कामना शब्द आज्ञा का पर्य्याय वाची होता है। जब कोई राज राजेश्वर अपनी प्रजा से कहता है कि मेरी यही कामना है कि तुम परस्पर प्रेम से रहो और प्रेम से विद्या पढ़ो तो वह अपनी आज्ञा को प्रेम के शब्दों मे व्यक्त करता है, अपनी असमर्थता नहीं जतलाता। सो यही बात यहा भी समझनी।

अब रही 'भूयासम्' इस आशीर्लिङ् की बात। सो क्या परमात्मा अपने लिये आशीर्वाद माग रहा है?

सो इसका मर्म्म यह है कि भगवान् यहा ऐसी वाणी मे उपदेश कर रहे हैं जो सब में प्रयोग मे आ सके ईश्वर शब्द से समन्वयवाद द्वारा राज्य में राजा, कुटुम्ब में यजमान आदि सब ही लिये जावेंगे जो जिस छोटे से राज्य का ईश्वर है वह सर्वत्र ही अपनी प्रजा के लिये कल्याणी वाणी का प्रयोग करेगा और छोटे बड़े सब के लिये इस कल्याणी वाणी का प्रचार करेगा। हा द्यावापृथिवी आदि का प्रसङ्ग होने से यहा ईश्वर का मुख्यरूप से परमेश्वर तथा कल्याणी वाणी का मुख्य रूप से अर्थ वेदवाणी लिया जायगा। यद्यपि ईश्वर शब्द से एक छोटे से कुटुम्ब का मालिक भी लिया जा सकता है परन्तु उसके सामने अग्नि, वायु, द्यौ, अन्तरिक्ष सिर नहीं झुकाते। इस प्रकार पहिले मन्त्र से मिलाकर पढ़ने से यह बिलकुल स्पष्ट है कि यहा मुख्य रूप से परमात्मा वक्ता है तथा कल्याणी वाणी से निर्देश उसकी वेद वाणी की ओर है और प० दीनानाथ जी शास्त्री का ऋषि दयानन्द के भाष्य पर आक्षेप निर्मूल है यह आशीर्लिङ् आदि की आपत्तिया केवल परमेश्वर सम्बन्धी अर्थों में ही हो सकती हैं अन्यत्र नहीं। राजादि मे तो कोई आपत्ति ही नहीं, सो परमेश्वर परक अर्थ मे यह व्यत्यय माना जायगा अन्यत्र नहीं। प्रश्न होगा कि यहा मुख्य अर्थ कौनसा है सो इसका उत्तर दे चुके हैं कि द्यावापृथिवी सिर झुकाते हैं आदि वाक्यों से मुख्य अर्थ परमेश्वर ही लिया जायगा।

इस प्रकार अपने पक्ष को स्पष्ट कर के हम जरा दीनानाथ शास्त्री जी के लेख की (जो 'सिद्धान्त' पत्र में प्रकाशित हुआ है) समीक्षा करना चाहते हैं।

शास्त्री जी पूछते हैं कि यदि यह मन्त्र स्त्री शूद्रादि को वेदाधिकार देने वाला होता तो वेदान्त सूत्र के अपशूद्राधिकरण में वेद के पूर्ण विद्वान् वेद व्यास, श्री शूद्रस्यानधिकाराधिकरण

में श्रीमान् वेद के अपश्चिम विद्वान् जैमिनि मुनि संस्कार प्रकरण मे वेद के प्रकाण्ड पण्डित सूत्र कार पारस्कर आदि तथा वेद विषय निष्णात, मन्वादिस्मृतिकार एवं रामायण महाभारतादि प्रणेता श्री वाल्मीकि आदि, भाष्यकार स्वामी शङ्कराचार्य आदि स्त्री शूद्रादि को वेदानधिकारी कैसे मानते।

सो हमारा इस विषय में वक्तव्य है कि इन सब में से शङ्कराचार्य जी के अतिरिक्त किसी ने भी शूद्र को वेद का अनधिकारी नहीं माना। वेदान्त सूत्रकार ने शूद्र को ब्रह्मविद्या का अनधिकारी माना है वेद पढ़ने का नहीं यह इसी प्रकार है जैसे कहा जाय कि जो एफ़ एस सी पास नहीं वह मैडिकल कालेज में प्रविष्ट होने का अधिकारी नहीं इस का यह अर्थ कैसे हुआ कि वह एफ़ एस सी पास करने का भी अधिकारी नहीं। ब्रह्म विद्या वेदान्त अर्थात् वेद का अन्त है अत: जिसने वेद ही नहीं पढ़ा वह वेदान्त क्या पढ़ेगा। इसलिये शूद्र पहले वेद पढे फिर वेदान्त पढ़े। इसी प्रकार जो महा मूर्ख निरक्षर भट्टाचार्य है वह यज्ञ म वेद के मन्त्र कैसे उच्चारण करेगा इस लिये शूद्र पहिले वेद पढ़े फिर यज्ञ करे जब तक वह विद्या शून्य शूद्र है तब तक उसका यज्ञ में अधिकार कैसे? यदि वह दम्भ करके लोगों को धोका देगा तो वह दण्डनीय है परन्तु इससे शूद्र का वेद में अनधिकार कैसे सिद्ध हुआ? उलटा इससे तो यह सिद्ध हुआ कि शूद्र का कर्त्तव्य है कि वह वेद पढ़कर प्रथम अपना शूद्रत्व दूर करे तब वह ब्रह्म विद्या का अथवा योगानुष्ठान का अधिकारी बनेगा।

हां शङ्कराचार्य महाराज ने अवश्य लिखा है कि 'अस्य हि शूद्रस्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रपरिपूरण मुच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीर भेदः। अर्थात् यदि शूद्र वेद सुने तो उसके कान में सिक्का अथवा लाख पिघला कर डाल देना वेद का उच्चारण करे तो जीभ काट लेना पुस्तक उठाकर चले तो हाथ काट देना इत्यादि इसके तीन कारण हैं।

(१) वेदान्त सूत्र का आशय न समझना।

(२) वेद विषयक परिश्रम का अभाव।

(३) जगत् का स्वप्न समझना।

(१) वेदान्त सूत्र में कहा है कि शूद्र वेदान्त का अनधिकारी है क्यों 'श्रवणाध्ययन प्रतिषेधात्?' अर्थात् जब उसे वेद सुनाते थे तो वह सुनने से इन्कार करता था पढ़ाते थे तो पढ़ने से इन्कार करता था इस लिये वेद का श्रवण और अध्ययन दोनों का प्रतिषेध करने के कारण वह ब्रह्मविद्या का अधिकारी नहीं। सो स्पष्ट है कि शङ्कराचार्य जी ने वेदान्त सूत्र का अर्थ ही नहीं समझा।

दूसरे वे सदा उपनिषद् पढ़ने में लगे रहे। वेद का उन्होंने स्वाध्याय ही नहीं किया तो 'यथेमा वाच' उनकी दृष्टिमें कहां से आता। तीसरे उनकी दृष्टि में यह सारा संसार ही मिथ्या स्वप्नवत् था सो स्वप्न मे किसी की टांग कटी या नाक, ब्राह्मण मरा या शूद्र इसमें किसी का क्या। सो शङ्कराचार्य जी की बातें तो गोत्रस्खलितवत अमान्य हैं। स्वप्न के बड़ बड़ाए का क्या विश्वास?

शास्त्री जी फ़र्माते हैं कि यदि यथेमा वाचं' का अर्थ यह मानलें कि सब को वेद पढ़ाओ तो वेद पर व्याघात दोष आयगा क्योंकि अन्यत्र वेद में कहा है। 'पावमानी द्विजानाम्' हहो ब्रह्मन्! यह कहां की जबरदस्ती है? पवमान का अर्थ है वह जो पवित्र कर रहा हो। सो जिस कर्म्म से

ब्राह्मण लोग शूद्रों को वेद पढ़ाकर अथवा सुना कर पवित्र करते हैं उन कर्म्मों का नाम पवमान कर्म्म हैं और वेद माता उस कर्म्म के लिये उपयोगी होने के कारण पावमानी कहलाती है कि यह वेद वाणी द्विजों की पावमानी अर्थात् पवमान कर्म्मोपयोगिनी है। इसी के द्वारा वे शूद्रों तक को वेद पढ़ाकर अथवा सुनाकर पवित्र कर लेते हैं इससे शूद्रों का वेदानधिकार सिद्ध हुआ अथवा यह सिद्ध हुआ कि द्विजों का परम कर्त्तव्य है कि शूद्र चण्डाल म्लेच्छादि सब को वेद पढ़ाकर शुद्ध पवित्र करें ? बलिहारी है महा महोपाध्याय जी के वेद पाण्डित्य की। यहां तक तो हुई शूद्र की बात। अब स्त्री का नाम शास्त्री जी ने चुपके से बीच में कैसे शामिल कर लिया यह वही बता सकेंगे। अब रही नरदेव शास्त्री अथवा डाक्टर मङ्गलदेव जी की दुहाई। सो जब तक महर्षि दयानन्द का लेख उपस्थित है तब तक किसी और का नाम आर्यसमाजियों के लिये लेना शास्त्री जी की उपहासास्पद लीला है और कुछ नहीं।

'यथेमां वाचं कल्याणीम्' इस मन्त्र का ईश्वर परक अर्थ मानने से स्वामी जी के स्वमतानुसार अनेक दोष आते हैं ऐसा शास्त्री जी ने बड़े गर्जन तर्जन पूर्वक फ़र्म्माया है। किन्तु उनके सम्पूर्ण दोषों का समाधान इतने से हो जाता है कि परमात्मा भक्तों से कहता है। 'मैं तुम्हारे द्वारा अपनी वेद वाणी को सब तक पहुँचाऊं यह मेरी कामना अर्थात् आदेश है।'

आगे चलकर आपने इन्हीं मन्त्रों से जन्म की वर्ण व्यवस्था सिद्ध करने का उपहसनीय प्रयास किया है। मैं पण्डित जी से पूछता हूं जब आप वेद वाणी को अनादिनिधना मानते हैं तो उभय वादि सम्मतबात में शङ्का उठाना मतानुज्ञा ही होती है। परमात्मा कहते हैं कि यह वेद वाणी ब्राह्मण शूद्र सबके लिये है इसका प्रवचन सब के लिये करो। इस में परमात्मा का सबको बैठकर पढ़ाना तथा उससे पहिले अथवा पीछे ब्राह्मण अथवा शूद्र का जन्म होना कैसी हास्यास्पद बात है ? जो अनादि अनन्त वाणी है उसमें पहिले और पीछे का प्रश्न नहीं। सदा के लिये एक अटल उपदेश है कि ब्राह्मण को उत्कृष्टतर ब्राह्मण बनाने के लिये तथा शूद्र को ब्राह्मणादि उत्तम वर्ण की प्राप्ति के लिये वेदाध्ययन करना चाहिये और परमात्मा के सच्चे भक्तों को उन्हें वेद का प्रवचन करना चाहिये।

हां जो लोग जन्म की वर्णव्यवस्था मानते हैं उनसे हमारे कुछ प्रश्न अवश्य हैं। ब्राह्मण का अर्थ वे लोग करते हैं ब्रह्मणोऽपत्यम् ब्राह्मण। राजन्य का अर्थ करते हैं राज्ञोऽपत्यम् राजन्य। अब उन का कहना है कि प्रथम ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख से तथा क्षत्रिय भुजा से उत्पन्न हुआ तो जब उससे पहिले ब्राह्मण तथा राजा कोई था ही नहीं तो ब्राह्मण तथा राजन्य में अपत्य प्रत्यय कैसे चरितार्थ होगा ? फिर साथ ही यह प्रश्न भी होता है कि प्रथम ब्राह्मण तथा क्षत्रिय तो मुख अथवा भुजा से उत्पन्न होने से श्रेष्ठ हुए परन्तु उसके पश्चात् उनके सन्तान तो मुख अथवा भुजा से हुए नहीं तब वे ब्राह्मण क्षत्रिय कैसे कहलाए ?

बात तो सच यह है कि ब्राह्मण का जन्म अर्थात् प्रादुर्भाव आज भी मुख से होता है। हजार मनुष्य सभा में चुप चाप बैठे हों, कौन ब्राह्मण ? है कौन मूर्ख ? यह पता नहीं लगता परन्तु जब शास्त्र चर्चा चलती है तो ब्राह्मण के वचनों

को सुनकर सब उसका लोहा मान लेते हैं यही ब्राह्मण का मुख से प्रादुर्भाव है।

इसी प्रकार भीरु तथा क्षत्रिय इकट्ठे बैठे हों तो कुछ पता नहीं लगता कि कौन भीरु है कौन क्षत्रिय परन्तु सङ्कट पड़ने पर भुज बल से क्षत्रिय का प्रादुर्भाव हो जाता है।

अब रही अपत्य प्रत्यय की बात। सो शतपथ ब्राह्मण ने लिखा है ब्रह्मैव ब्राह्मणः, क्षत्रंराजन्य। इस से स्पष्ट है कि वेद म यह प्रत्यय स्वार्थ में है। अपत्यार्थ में नहीं। यदि अपत्यार्थ मानें तब यह मानना पड़ेगा कि विराट् पुरुष के मुख में एक ब्राह्मण ब्राह्मणी का जोड़ा बैठा था। वहीं ब्राह्मण ने गर्भाधान किया फिर उस मुखस्थ ब्राह्मणी के गर्भ से प्रथम ब्राह्मण का जन्म हुआ। पण्डित जी! आप शास्त्र प्रमाण तक ही रहिये तर्क में घुसना आप का काम नहीं।

अपने दूसरे लेख में आपने सिद्ध किया है कि यह मन्त्र लौगाक्षि का वचन है। इस से स्पष्ट है कि शास्त्री जी मन्त्रों के ऋषियों का तात्पर्य्य ही नहीं समझे। इस लिये पहिले हम इसी विषय को लेते हैं।

पण्डित जी समझते हैं कि वेद वाणी के समान ऋषि देवतादि भी अनादि हैं। यह उन की भूल है। सुनिये उव्वट क्या कहता है।

गुरुतस्तर्कतश्चैव तथा शातपथ श्रुतेः।
ऋषीन् वक्ष्यामि मंत्राणां देवता श्छन्दसान्यपि।

मैं मन्त्रों के ऋषि देवता तथा छन्द बताऊँगा इन्हें मैं ने तीन प्रकार से जाना है।

(१) कुछ गुरु से सुनकर
(२) कुछ तर्क से
(३) कुछ शतपथ ब्राह्मण से

अब मैं पण्डित जी से पूछता हूं कि यदि ऋषि देवतादि सृष्टि के आदि से मन्त्रों के साथ लगे चले आरहे हैं तो फिर इस में 'तर्कतः' का क्या स्थान है। बात स्पष्ट है। जिस ऋषि ने जिस मन्त्र को "अधीतिबोधाचरणप्रचारणै" चारों प्रकार से चरितार्थ किया, जनता ने कृतज्ञतावश उस मन्त्र पर उसका नाम लिख दिया। इस का अर्थ यह नहीं कि उस ऋषि के जन्म से पहिले वह मन्त्र ही न था। एक ओर तो शास्त्री जी वेद को अपौरुषेय मानते हैं दूसरे लौगाक्षिकृत, इसका नाम है परस्पर विरोध, इस का नाम है नाक कटा के मंगल करना। ऋषिदयानन्द का पक्ष गिर जाय ऐसा करने से वेद की अपौरुषेयता भले चली जाय दूसरे का अमंगल होना चाहिये चाहे अपनी नाक काट कर प्रात काल उस के सामने जाना पड़े।

अध्यात्म सुधा

कैसा गद् गद् होता दिल यह, मेरा तेरी महिमा देख।
प्रति रचना में दीखे मुझ को, लीला मय तेरा ही लेख॥

शीतल सलिला गङ्गा तेरे, गुण गण गाती जाती है।
तुम भी शीतलता को धर लो, यह सन्देश सुनाती है॥

यह नीलाम्बर मेघावृत हो, तेरी महिमा गाता है।
चित्र कार वर। तेरे अद्भुत, कौशल को जतलाता है॥

हिम से आवृत गिरि गण तेरा, प्रणव नाम गुंजाते हैं।
अनुपम महिमा शाली प्रभु को, भजलो यह सिखलाते है॥

कुसुम कुसुम के अन्दर बैठा, तू ही उन्हें हँसाता है।
उन मे सुषमा भर कर अद्भुत तू उनको विकसाता है॥

तरु तारागण सारे मिलकर, निशिदिन तुझ को ध्याते है।
सब सागर सरिता सौदामिनी, तेरी शान जताते है॥

तू मेरी मङ्गलमयि माता, अमृत मुझे पिलाती है।
अपनी गोदी मे बिठला कर, पौष्टिक अन्न खिलाती है॥

जिस को खाकर परम तृप्त हो, निर्भय हुआ विचरता हूं।
टूट पड़ें आपत् के पर्वत, कुछ पर्वाह न करता हू॥

मेरा इस में नहिं कुछ गौरव यह सब तेरी परम दया।
तूने परम अनुग्रह कर के, सोम सुधा का दान दिया॥

यही प्रार्थना तेरे चरणों, से छिन भर न अलग होऊं।
तेरे पावन नामामृत से, अपने सारे मल धोऊं॥

—"ध्रुव"

पाकिस्तान समस्या का हल

(ले०—डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार, एम० ए०, डी० लिट्, अजमेर)

आजकल कोई भी भारत माता का सुपूत ऐसा नहीं हो सकता जिसके हृदय में भारत की स्वतन्त्रता की थोड़ी सी भी लगन हो और फिर भी वह पाकिस्तान की योजना का समर्थन करे। हमारा तो विचार है कि भारत की स्वतन्त्रता से बढ़कर भारत की अखण्डता का प्रश्न है। यदि भारत भारत ही न रहे और खण्ड २ होकर पाकिस्तान, बगे इस्लाम, उस्मानिस्तान और ईसाइस्तान बन जाए तो फिर सम्पूर्ण भारत की स्वतन्त्रता का प्रश्न ही नहीं उठता। फिर स्वतन्त्रता प्राप्त भी की जाय तो किसके लिये? इसलिए हम तो कांग्रेस तथा हिन्दु सभा को राष्ट्रीय संस्थाएँ तभी कहते हैं और कहेंगे जब वे भारत की स्वतन्त्रता से भी बढ़कर नहीं तो कम से कम उसके समान ही भारत की अखण्डता स्थिर रखने में अपनी सारी शक्ति लगा देंगी। उधर मुस्लिम-लीग के भोले भाइयों से भी हमारा निवेदन है और साथ ही भारत की कम्युनिस्ट पार्टी से भी कि वे विदेशियों के हाथ का खिलौना न बनकर भारत की स्वतन्त्रता के लिए अपना तन मन धन लगावें। श्री प० गोविन्द वल्लभ पंत के शब्दों में भारत में ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ मुसलमानों के पुरखों की हड्डियां न गढ़ी हों और ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ हिन्दुओं के पुरखों की अस्थियाँ न पड़ी हों। फिर ऐसी कौनसी जगहें हैं जिनका बटवारा हिन्दू और मुसलमान अलग २ कर सकते हैं? फिर पाकिस्तान के लिए अथवा विभाजन के लिए हिन्दू और मुसलमानों में यह लड़ाई कैसी? डा० इक़बाल के शब्दों में

मज़हब नहीं सिखाता आपसमें बैर करना।
हिंदी हैं हम, वतन है हिंदोस्ताँ हमारा॥

भारत की जिस भूमि मे हमारे पुरखा उत्पन्न हुए, पाले पोसे गये, बडे हुए और जिस मिट्टी में अन्त में वे मिल गये वही हमारी मातृ भूमि, वही पितृ भूमि और वही तीर्थ भूमि है उसकी स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न करना हमारा सब का प्रथम कर्त्तव्य है। उसकी दासता हमारे लिए सब से बड़ी शर्म है इस लिए हम चाहे हिन्दू हों, चाहे मुसलमान हों चाहे ईसाई अथवा पारसी कोई भी क्यों न हों, भारत-माता के पुत्र होने के नाते हमारा यह प्रथम कर्त्तव्य जाता है कि हम उसकी गुलामी की जजीरों को काटें न कि उसकी छाती पर छुरा चला कर उसके खड २ कर डालें। भला ऐसा कौन पुत्र होगा जो अपनी माता की छाती पर छुरा चला कर उसके टुकडे कर डालने पर कटिबद्ध हो। इसलिए हमारे मुस्लिम लीगी भाइयों को भी सोचना चाहिए कि सर अब्दुल्ला-हारुन के शब्दों में भारत उनकी भी पितृ भूमि है। उन्हें भी भारत में ही रहना है। इसलिए भारत की स्वतंत्रता के लिए भी कांग्रेस के साथ कंधे से कंधा मिला कर प्रयत्न करें और संसार के सम्मुख भारत राष्ट्र का नाम ऊँचा करें।

हमारे मुस्लिम लीगी भाइयों को यह स्मरण रखना चाहिए कि वे पाकिस्तान बना कर भी हिन्दुस्तान से पृथक् नहीं हो सकते। उन्हें फिर भी हिन्दुस्तान का ही आश्रय लेना पड़ेगा और

जैसा कि पिछले अध्यायों में बताया जा चुका है, पाकिस्तान आर्थिक दृष्टि से हिन्दुस्तान पर ही अवलम्बित रहेगा। पाकिस्तान हिन्दुओं के लिए जितना हानिकर नहीं होगा उससे अधिक हानिकर वह मुसलमानों के लिए होगा। जब हम जानते हैं कि हिन्दू और मुसलमान आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और सभी दृष्टियों से एक दूसरे में इतने घुले मिले हैं कि वे अलग रहने पर भी पूरी तौर से अलग नहीं हो सकेंगे तो हमें अब्राहम लिंकन के शब्दों में अपने मुस्लिम लीगी भाइयों से कहना पड़ेगा। जब अमेरिका के उत्तरी और दक्षिणी राज्यों में युद्ध चल रहा था और वे एक दूसरे से अलग होना चाहते थे तो लिंकन महोदय ने कहा था "प्राकृतिक तौर पर हम एक दूसरे से पृथक् नहीं हो सकते। हम अपने लोगों को एक दूसरे के राज्य से नहीं हटा सकते और न उनके बीच में कोई दीवार खड़ी कर सकते हैं। एक पति पत्नी परस्पर तलाक दे सकते हैं और एक दूसरे की पहुँच से परे बाहर जा सकते हैं लेकिन हमारे देश के विभिन्न भाग ऐसा नहीं कर सकते। वे तो एक दूसरे के पास हैं और पास ही रहेंगे और उनमें परस्पर का आवागमन चाहे मित्र रूप में हो चाहे शत्रु रूप में, निरन्तर जारी रहेगा। फिर क्या यह सम्भव है कि यह परस्पर का सम्बन्ध और आवागमन अलग होने के बाद अधिक हितकर तथा पहले से अधिक संतोषजनक हो जायगा। क्या मित्रों की अपेक्षा शत्रु बन कर हम अधिक अच्छे पारस्परिक बर्ताव के और संधि के नियम बना सकेंगे? यदि नहीं, तो फिर अलग होने की बात ही विचार में क्यों लाई जाय? ठीक है, इसी प्रकार जब हिन्दू और मुसलमान दोनों को भारत में ही रहना है भारत में ही जीना है और भारत में ही मरना है तो फिर क्यों न हम सब साथ ही साथ जियें और साथ ही साथ मरें? फ़ारसी की एक कहावत के अनुसार "मर्गे अम्बोह जशन् दारद" साथ २ मरने में भी मजा आता है और हर्ष होता है।

यदि इतने पर भी मुस्लिम लीग के अनुयायी अपनी जिद पर ही डटे रहते हैं और पाकिस्तान की योजना को नहीं छोड़ते तो उन्हें समझ लेना चाहिए कि उनके पाकिस्तान में उन्हें कौनसा लड्डू मिलेगा, इसकी चर्चा डा० लतीफ ने ही जो कि पाकिस्तान योजना के प्रवर्त्तकों में से हैं अपने एक पत्र में जो मि० जिन्ना को लिखा गया था, इस प्रकार की है

"I may repeat that the Pakistan scheme in its latest form will neither establish Muslim—States properly so called, nor get rid of Hindu-Muslim, Sikh, problem, nor afford any security to the Muslim minorities in the proposed independent Hindu India, unless a wholesale exchange of population is effected which no one favours"

अर्थात् "इस बात को मैं फिर दोहराता हूं कि सबसे बाद में विकसित हुई पाकिस्तान की योजना न तो ऐसे राज्य स्थापित करेगी जिन्हें हम सभी अर्थों में मुस्लिम राज्य कह सकें और न हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख समस्या को हल कर सकेगी और न प्रस्तावित स्वतन्त्र हिन्दु भारत में अल्प संख्यक मुसलमानों के लिये कोई संरक्षण दे सकेगी। यह तब तक हो सकेगा जब सम्पूर्ण आबादी का

इधर से उधर परिवर्तन किया जावे जिस को कोई भी पसंद नही करता।" "(The Pakistan ISSUE. By-Nawab- Wazir Yar Jung-1943; Page. 103)

इस लिये जैसा कि डा० लतीफ ने ता० ९ नवम्बर १९४५ को मद्रास में भाषण देते हुए कहा था कि वर्तमान अवस्थाओं में पाकिस्तान कभी स्वतन्त्र नहीं रह सकेगा उसे किसी न किसी संघ के साथ रहकर ही अपनी आन्तरिक स्वतंत्रता रखनी पड़ेगी। डा० लतीफ की पाकिस्तान योजना में और उसी प्रकार सर सिकन्दर हयात खाँ, सर फीरोज खाँ नून, एक "पजाबी" लखनऊ के सैय्यद रिजवान उल्ला आदि की योजनाओं में भी किसी न किसी संघ की चर्चा की गई है। तब फिर, जब यह निश्चित है कि हिन्दुस्तान से अलग रहकर पाकिस्तान राजनैतिक दृष्टि से गुलाम और आर्थिक दृष्टि से गरीब रहेगा, वह हिन्दुस्तान से क्यों अलग हो? तब तो सबसे अच्छा यह ही हो कि जिन प्रान्तों में मुसलमानों की आबादी अधिक है उनमें आन्तरिक मामलों में वे स्वतंत्र रहें और अपनी संस्कृति, धर्म, रीति रस्म आदि का स्वतंत्रता-पूर्वक विकास करें, भारत के ऐसे ही स्वतंत्र रूप से शासितप्रांतों या राज्यों का एक भारत-राष्ट्र संघ रहे जिसमें सम्मिलित रहना प्रत्येक राज्य या प्रांत के लिये अनिवार्य हो। केन्द्रीय संघ द्वारा केवल उन विषयों का संचालन हो जो समस्त भारत से सबंध रखते हैं। भारत के प्रसिद्ध पारसी राजनीतिज्ञ और वायसराय की कौंसिल के भू. पू. सदस्य सर आर्देशर दलाल ने 'अमृत बाजार पत्रिका' में एक लेख लिखते हुये पाकिस्तान के स्थानापन्न विधान का वर्णन किया था जिसमें उन्होंने लिखा था कि जो कम से कम विषय संघ शासन के केन्द्रीय शासन के अधिकार में रहने चाहिये, वे यह हो सकते हैं:—

(१) देश की रक्षा (Defenc) (२ विदेशों से सम्बन्ध (Foreign Relations) (३) सिक्कों का प्रचलन (Currency) ४ चुङ्गीकर(Customs) (५) आयकर (Encome-Tax), (६) विदेशों से आवागमन (७), रेलें (८), तारघर और डाक विभाग (९), नहरें और नदियों आदि का व्यापार (१०), कला-कौशल और उद्योग धन्धों का विकास शेष विषय प्रत्येक प्रांत अथवा राज्य में वहां की सरकार के अधीन रहने चाहियें। साथ ही कुछ ऐसे साधारण संरक्षण दिये जायें जो सब प्रान्तों और राज्यों में समान रहें जैसे कि सब नागरिकों का समान अधिकार, विचार वाणी,—लेखन और धर्म की स्वतन्त्रता, सब धर्मों की समानता और उनके साथ निष्पक्ष-व्यवहार अल्प संख्यकों का संरक्षण इत्यादि।

इस प्रकार मुसलमान, जिन प्रान्तों में उनकी अधिक आबादी है, उनमें स्वतन्त्र रूप से उसी प्रकार रहेंगे जैसे कि वे पाकिस्तान में रहने का स्वप्न देख रहे हैं, वहां उनके ऊपर "हिन्दु राज" का प्रभुत्व नहीं रहेगा, जिससे कि मि० जिन्ना बहुत डरते हैं। धार्मिक और आन्तरिक मामलों में मुसलमानों को अपनी मनचाही स्वतन्त्रता रहेगी और दूसरी ओर भारत के भी टुकड़े नहीं होंगे, जिससे पाकिस्तान बनने से जो हानियां समस्त देश को, हिन्दुओं को और स्वयं मुसलमानों को होने वाली हैं वे उनसे बच जायेंगे। पाकिस्तान में जो गरीबी और तबाही और सब

स्व भारत को टुकड़े हो जाने से जो मुसीबत और बला आने वाली हैं वह टल जायगी । दूसरी ओर यदि हिन्दू और मुसलमान एक साथ मिलकर एक राष्ट्र के रूप में प्रयत्न करेंगे तो देश की स्वतन्त्रता और निकट आ जायेगी और जो ब्रिटिश सरकार अभी पाकिस्तान के प्रश्न पर अथवा ऐसे ही अन्य प्रश्नों पर हिन्दु-मुसलमानों को लड़ता हुआ देखकर प्रसन्न होती है उसे यह अवसर नहीं मिलेगा । और यदि ऐसा न हुआ, मुस्लिम लीग अपनी जिद पर अड़ी ही रही तो पाकिस्तान भारत की हमेशा की गुलामी का आधार सिद्ध होगा ।

इसलिये मि० जिन्ना को और मुस्लिम लीग को अपनी जिद पर अडे न रहकर पाकिस्तान के प्रश्न पर विचार विनिमय और समझौता करने का प्रयत्न करना चाहिए न कि यह कहना चाहिए

My demand is for Pakistan and before I can discuss that or any other matter with anybody, that demand must be met. No discussion about that, no arbitration either (Pakistan-By Dr. S Ansari; Page 123).

अर्थात् मेरी माग पाकिस्तान के लिये है और इस से पहले कि मैं उस पर या अन्य किसी विषय पर किसी से विचार विमर्श करूं मेरी वह माग पूरी होनी चाहिये । उस विषय में कोई वाद विवाद नहीं और न कोई पंच फैसला मानने को मैं तैयार हूँ । इस पर २४ जनवरी १९४४ को बंगलौर में भाषण देते हुये भारत के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ स्व० श्री श्रीनिवास शास्त्री ने ठीक ही कहा था कि

"All that I am asking for is that Mr. JINNAH should agree to argue it out with the Hindus, Sikhs and other communities. This question is not beyond agreement. Why should discussion be barred about Pakistan, when even God comes with in the pale of discussion ? This seems to me a very unfortunate position taken up in our politics I mention it now as a *Signal* instance of the evil spirit of Hitler and Mussollini, who would not come to discuss matters, but would settle every thing on the field of battle This in very improper and this is the kind of feeling which we want to end."

अर्थात् "मैं जो कुछ चाहता हूं वह केवल इतना कि मि० जिन्ना हिन्दु सिख और अन्य वर्गों से पाकिस्तान पर वाद-विवाद करने को तैयार हों। यह प्रश्न समझौते से परे नहीं है । जब कि विवाद के क्षेत्र से परे ईश्वर भी नहीं तो पाकिस्तान के संबंध में ही विवाद क्यों रोका जाता है ? भारतीय राजनीति में मुझे यह स्थिति सबसे अधिक दुखदाई प्रतीत होती है । मैं इसको हिटलर और मुसोलिनी की दुर्भावना का एक मुख्य उदाहरण समझता हूँ । जो कभी किसी विषय पर विवाद करने को तैयार नहीं होते थे किन्तु प्रत्येक विषय का फैसला लड़ाई के ही मैदान में करना चाहते थे । यह अत्यन्त अनुचित है और यह ही वह मनोवृत्ति है जिसको कि हम अन्त करना चाहते हैं ।"

क्या ही अच्छा हो कि यदि जैसा कि श्रीनिवास

शास्त्री जी ने कहा है कि मि० जिन्ना भारत के हित को ध्यान में रखते हुये पाकिस्तान की जिद पर न अड़े रह कर हिन्दु और सिक्खों के साथ मिलकर भारत की स्वतंत्रता के लिये प्रयत्न करें। यदि मि० जिन्ना और मुस्लिम लीग ऐसा नहीं करते तो भारत के अन्य समस्त निवासियों को जिन में हिन्दु, सिक्ख, ईसाई, पारसी और राष्ट्रीय मुसलमान भी शामिल हैं, मिलकर पाकिस्तान का विरोध और भारत की—स्वतंत्रता का प्रयत्न अपने प्राण देकर भी करना चाहिये।

भारत अखंड, भारत स्वतंत्र;
हो यही हमारा, मूल मंत्र।
हम करें देशहित, प्राण दान;
गावें सहर्ष, "जयहिन्द' गान॥

कुरानी अल्लाह साकार है

(लेखक—श्री पं० शिवशर्मा जी शास्त्रार्थ महारथी एमल)

(गताङ्क से आगे)

अल्लाह का तख्त पानी पर—

हुवल्लज़ी खलक़स्समावाते वल् .अर्ज़ फ़ी सित्तते अय्यामि व्वकान अर्शहू .अलल् मारा ॥

सू० हूद, रु० १॥

शाह अबदुल कादिर साहब—

"और वही है जिसने बनाये आसमान और ज़मीन छै दिनमें, और था तख्त उसका पानी पर" ॥ सु० ३६६॥

हसन निजामी साहब—

"और वही (क़ादिर मुतलक) है, जिसने आसमानों और जमीन को छै दिनमें पैदा किया। और (उसवक़्त) उसका तख्त (किब्रियाई) पानी पर था"। जि० १, सु० ३०६॥

मौ० नज़ीर अहमद साहब शमशुल् उलमा –

"और वह ऐसा (जबरदस्त, शक्तिशाली) हैं, जिसने आकाश और पृथिवी को (केवल) छः दिन में पैदा कर दिया। और (उससमय) उस (की महानता) का तखत पानीपर था (अर्थात् उस समय पानी के अतिरिक्त किसी प्राणीका नाम व निशान भी न था।) सु० ३०६॥

तफ़सीर मूज़ः—वही है ऐसा जिसने पैदा किये आसमान और जमीन छै रोज में दुनियाँ के दिनों से कि ऐतवार से शुरू किये रोज जुमें तक सब पैदा कर दिये। और उनके पैदा करने से पहले उसका .अर्श था ऊपर पानीके।

.... लिखा है कि अल्लाहताला ने पैदाइश के शुरू में याक़ूत सब्ज़ पैदा किया और नज़र हैबत से उसे देखा तो वह पानी होगया। फिर अल्लाहताला ने हवा को पैदा किया और पानी को उस पर रक्खा; और अर्श को उस पानी पर जगह दी॥ सु० २१२॥

तफ़सीर क़ादरी—"(वहुवल्लज़ी) और वही जिसने कि (खलक़स्समावाते वल अर्ज़) पैदा किये आसमान और ज़मीन (फ़ी सित्तते अय्यामिन्) छै रोज में दुनिया के दिनों में से कि पहला रोज हफ्ते का दिन होता है। और आखिर रोज जुमा (वकान) और था ज़मीन आसमान पैदा करने से क़ब्ल (अर्शुहू अलल माइ) अर्श उसका पानी पर" । सु० ४५५॥

मौ० मुहम्मदअली M A. क़ादियानी—

And He it is Who created the heavens and the earth in six periods—and His throne (extends) on the water P 223.

युदव्विरुल अम्र मिनस्समाए इलल अर्ज़े सुम्म यअरुजो इलैहे फ़ी यौमिन् कान मिक़दारोहू अल्फ़ सनतिम्मिम्मा तउद्दून ॥ सु० सजदः। रु० १॥

शाह अबदुलकादर—

"तदबीर से उतारता है काम आसमान से ज़मीन तक, फिर चढ़ता है इसकी तरफ़ एक दिन में जिसका मयाना हज़ार बरस है तुम्हारी गिनती से" ॥ सु० ७०४ ॥

तफ़सीर मूज़—

"तदबीर करता है काम होने की बाबी ...

करता है साथ उसके और भेजता है फ़रिश्तों को कि तैनात हैं ऊपर उस काम के आसमान से तरफ़ ज़मीन के, पस बुलन्द होता है वह फ़रिश्ता तर्फ़ आसमान के बीच उस दिन के कि है अन्दाज़ उसका हज़ार बरस उसके कि तुम गिनते हो' ॥ सु० ४३४ ॥

मौ० मुहम्मदअली M A.—

He regulates the affair from the heaven to the earth, then shall it ascend to Him in a day the measure of which is a thousand years of what you count P 414

क़द्नरा तक़ल्लुब वजहक फ़िस्समाअ ॥ सू० बक़र, रु० १७ ॥

तर्जुमा—"हम देखते हैं फिर फिर जाना तेरा मुँह आसमान में । सु० ३२ ॥

त० कादरी—(क़द्नरा बेशक हम देखते हैं (तकल्लुबवजहिक) तेरा मुँह कैसा (फ़िस्समाए) तरफ़ आसमान के वही के इन्तजार मे" ॥ जि० १ । सु० ३५ ॥

मौ० मुहम्मदअली M A.

Indeed we see the turning of Thy face to heaven 144 P 26

अम् अमिन्तु मन् फ़िस्समाए ॥ सू० मुल्क । रु० २ । आ० १६ ॥

तर्जुमा—"या निडर हो उससे जो आसमान में है" ? सू० ६६५ ॥ १६ ॥

ख्वाजा हसननिजामी साहब—

"या जो (खुदा) आसमान में है, तुम उससे नहीं डरते" ? सु० ८११ ॥

मौ० नजीर अहम्मद साहब शमशुल उलमा—

"क्या तुम उस (सर्वशक्तिमान्) से जो आसमान में (विराजमान) है (इससे) इतने निडर हो गये (जो इस तरह निस्संकोच होकर कुफ़्र, इन्कार और दुराचार में फँस गये हो" ॥ सु० ८११ ॥

त० मूज—'या बेडर हुए तुम ऐ क़ाफ़िरो ! उस शख्स से जो आसमान पर है' ॥ सु० ५८६ ॥

त० कादिरी—(अम्अन्तुम्) क्या तुम निडर हो गये हो (मन्फ़िस्समाए) उससे कि आसमान पर है । उसका अर्शयानी हकवाला या उसका मुकाम आसमान में है ?

मौ० मुहम्मदअली M A.

Are you secure of Him Who is in the heaven ? 16 P 566.

सुम्मस्तवा इलस्समाए ॥ सू० हामीमसजद । रु० २ ॥

तर्जुमा—फिर चढ़ा आसमान को ॥ सु० ८११ ।

ख्वाजा हसननिजामी साहब—

"फिर आसमान की तरफ़ मुतवज्जः हुआ ॥ जि० २, सु० ६८० ॥

मौ० नजीर अहमद श० उ०—

"पुनः उसने आकाश की ओर ध्यान दिया ।"

त० मूज.—फिर क़स्द किया तरफ़ आसमान के बनाने के । सु० ५०० ॥

मौ० मुहम्मदअली M A.

Again, He directed Him- self to the heaven 11. P 473.

अल्लज़ीन यह्मिलूनल अर्श वमन् हौलहू ॥ सू० मोमिन । रु० १ ॥

तर्जुमा—जो लोग उठा रहे हैं अर्श को और जो उसके गिर्द हैं ॥ सु० ७६५ ॥

हसन निजामी साहब—

जो फरिश्ते अर्श को उठाये हुए हैं और जो अर्श के इर्द गिर्द हैं।

स० नजीर अहमद साहब श० उ०—सु० ६६६॥

"जो (फरिश्ते) अर्श को उठाये हुए हैं और जो (फरिश्ते) अर्श के इर्द-गिर्द हैं"। सु० ६६६॥

स० कादरी—"(अल्लजीन यह मिलूनल अर्श) वह फ़रिश्ते जो उठाये हुए हैं अर्श और हामिलान अर्श बुजुर्ग फरिश्तों में से हैं। (वमन् हौल्हू) और जो फरिश्ते अर्श के इर्द गिर्द हैं। सु० ३५८॥

स० मूज़:—

"वह फरिश्ते जो उठाते हैं अर्श को और वह फरिश्ते जो अर्श के आसपास रहते हैं॥सु० ४६०॥

मौ० मुहम्मद अली M. A Those who uphold the throne and those around Him 7. P. 467

हम इस विषय में अपनी ओर से कुछ नहीं कहना चाहते। उपर्युक्त आयतों से सिद्ध है कि कुरानी खुदा एकदेशी है। इर्द गिर्द अर्श और खुदा के फिरना यह सिद्ध करता है कि वह ससीम महदूद है। लामहदूद-अनन्त के चारों ओर कोई फिर नहीं सकता। जब अर्श ससीम, उत्पन्न किया हुआ और अनित्य पदार्थ है तो खुदा भी अवश्य ही ससीम है—महदूद है॥

अल्लाह और मिश्कात

१—अल्लाह कहता है-मुझे आदम की औलाद तकलीफ़ देती है; जमाना मैं हूं॥ मिश्कात जिल्द। १, हदीस नंबर २०। सु० ११॥

२—अल्लाहने आदम की पीठ पर हाथ फेरा॥ ह० नं० ८६॥

३—फ़रिश्ते इसी तरह कहते रहेंगे जबतक वह उस आसमान तक न पहुँच जायेंगे जिस पर अल्लाह है॥ जि० १, ह० नं० १५१२।

४—अल्लाह फ़रिश्तों से पूछता है-मेरे बन्दे क्या कर रहे हैं? फ़रिश्तो तुम कहां से चले आरहे हो? जि० २। ह० नं० ४८१॥

५—अल्लाह रात दिन के आखिर में हाथ फैलाता है॥ जि० २, ह० न० ५४२॥

"सुभस्तवा अलल् अर्श।" सू० अराफ़। ह० ७। परत-हुसैनी—"अर्श मखलूक़ात में सब से बड़ा है"॥

जन्नत के ऊपर अर्श—

"व अलल् जन्नते वफ़ौक़हू अर्शु रहमान्" ॥ शारिकुल अन् [वार तर्जुमा मशारकुल अनवार। ह० न० ३५६।

६—' 'वह अपना सर उठायेंगे तो देखेंगे कि वह परवरदिगार है जो उन्हें उनके ऊपर से देख रहा है—[सु० ५७॥ झांक रहा है। "यहां तक कि वह (खुदा) उनसे परदे में होजायगा"' [मिश्कात जि०४,ह० नंबर सु० ३१३। ११०५

सहीबुखारी और अर्श—

नोट—खुदा का अर्श पानी पर था। मिश्कात। जिल्द ८, ह० नं० ११३६ सु० ३२३॥

१—फ़िरदौस ऊपर रहमान का अर्श है॥ सहीबुखारी। जिल्द २, पारह ११, हदीसनंबर ४६ सु० १६॥

फ़ीसबीलिल्लाह जहाद करने वाले के बयान में।

२—क़ियामत के दिन ह० मूसा साहब अर्श का पाया पकड़े होंगे॥

३—'तव्वाफ़' फ़रिश्ते वह हैं जो अर्श [जि० २, पा०१३ ह० नं० ५१७॥ को बीच में लिये

तसवीह करते हैं। तफ़सीर कादरी, सु० ३५८ ॥

४—मबूदाऊद में है कि अर्श खुदाके बोझ से ऊंट के पालान की तरह चरांता है। "खुदा-ताला कुरसी पर बैठेगा, वह नई काठी के मानिंद बोलेगी। मिश्कात, जि० ४ ह० नं० १०४२॥

५—शेख अबदुल क़ादर जैलानी अपनी किताब रौनतुल् तालबीन में अल्लाह को कुरसी पर बिठलाता है और अर्शवारे अजमत से चरांता है।

६—साद बिन मआज के मरने से रहमान्-अल्लाह का अर्श हिल गया॥

७—अर्श खुशी के मारे हिल गया। [मिश्कात जि० ४, ह० नं० १६३२।

८—अर्शमखलूक है। [जि० १, ह० नं० १२९॥ मदारिजुन्नबव्वत, जि० २, सु० १०९१ ॥ तर्जुमा उर्दू।]

९—ह० अबूमूसा कहते हैं कि-रसूले खुदा सल्लल्लाह वसल्लम फ़रमाते थे—अल्लाहताला रात को हाथ फैलाता है ताकि दिन का गुनाह करने वाला आदमी उस वक्त तौबा करले (इसीतरह) दिन को हाथ फैलाता है ताकि रात का गुनाह करने वाला उस वक्त तौबा करले मुसलिम ने नक़िल किया है।

१०—ह० जाबिर कहते हैं कि रसूलेखुदा स० फ़रमाते थे=जब अरफे का दिन होता है तो अल्लाह ताला आसमान दुनिया की तरफ़ उतरता है [मिश्कात, जि० २, ह० न० ५८२ सु० १३६ ॥ मिश्कात, जि० २, ह० न० ८०२ सु० २१२ ॥

११— जिस वक्त अल्लाह ताला आसमान में कोई हुक्म जारी करता है। मिश्कात, जि० ४, ह० नं० ८४॥

१२— दोनों हाथ अल्लाह के बन्दे थे। मिश्कात, जि० ४, ह० नं० १४३, सु० ४१ ॥

१३— हर हफ़ते में लोगों के अमल दो मरतबा अल्लाह के रोबरू पेश किये जाते हैं।

१४—रब्बिल आलमीन के हसने से। मिश्कात [जि० ४। ह० न० १०२९। सु० २८८॥ मिश्कात जि० २, ह० न० ४९५, सु० १२४ ॥

हमारी अवनति का मुख्य कारण जाति भेद

(लेखक—आचार्य भद्रसेन जी संचालक जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ, अजमेर)

हम सार्वदेशिक के एक गत अङ्क में वर्तमान जाति भेद की हानियां दर्शा चुके हैं। किन्तु खेद है कि इस जाति भेद की भयंकर महामारी को जाति के नेता दूर करने का कुछ भी विशेष प्रयत्न नहीं कर रहे। यही कारण है कि वर्तमान जाति भेद हमारे लिये अभिशाप सिद्ध हो रहा है—

और तो क्या जिस आर्य समाज का उद्देश्य ही गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था को स्थापित करना और वर्तमान जात पात को दूर करना था वह भी इस सम्बन्ध में यथेष्ट कार्य नहीं कर रहा है। आर्य समाज के अनेक नेता और विद्वान् यह जानते हुये भी कि आर्य समाज की यदि सच्ची उन्नति हो सकती है तो गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था को स्थापित करने और वर्तमान जात पात के मिटाने से ही हो सकती है इसके लिये कुछ भी नहीं कर रहे हैं। और तो क्या जिस आर्य समाज को दूसरों को जात पांत के फंदे से निकालने का उपदेश देना चाहिये था आज वह खुद जात पात के फंदे में हो फस रहा है। आज आर्य समाज का न केवल साधारण सदस्य प्रत्युत कई बड़े बड़े अधिकारी और नेता भी वैदिक वर्ण व्यवस्था को तिलाञ्जलि देकर आर्य समाज की अवनति के मुख्य कारण अपनी पौराणिक बिरादरी के ही दास बन रहे हैं। वे अपने सब शादी व्यवहार इस बात का भी विचार न कर कि आया यह आर्य भी है या नहीं अपनी जन्म बिरादरी में ही करते हैं।

एक आर्य पुरुष प्रायः अपने शहर में रहने वाले अपने पौराणिक बिरादरी के सब परिवारों को तो जानता है। किन्तु मेरे मुहल्ले में कोई आर्य पुरुष रहता है या नहीं इस का उसे कुछ भी पता नहीं चाहे उसके घर के पास ही कोई आर्य पुरुष क्यों न रहता हो। कि बहुना, जहाँ हमें एक आर्य परिवार को ही अपना परिवार समझना चाहिये था वहाँ हम अपनी जन्म की पौराणिक बिरादरी को ही अपना परिवार समझ रहे हैं। यही कारण है कि जो सहानुभूति और प्रेम हमें दूर के भी पौराणिक रिश्तेदार से है उसका दशमांश भी अपने सहधर्मी आर्य पुरुष से नहीं। इसका एक मात्र कारण आर्यों में परस्पर गुण कर्म स्वभावानुसार विवाह सम्बन्ध न होना और अपनी पौराणिक जात पांत में ही फंसे रहना है। इस लिये आर्यत्व की अन्य कसौटियों पर सर्वथा पूरा उतरने वाले कई कट्टर आर्य समाजी भी अपनी जन्म बिरादरी की कुछ परवाह न कर गुण कर्मानुसार विवाह सम्बन्ध करने में अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। इसका कारण जहाँ हमारी आत्मिक निर्बलता है, वहाँ गुण कर्म स्वभाव से विवाह सम्बन्ध करने की इच्छा वाले आर्य पुरुष को आर्य समाज की तरफ से किसी भी प्रकार के प्रोत्साहन का न मिलना भी है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इस लिए वह बिना समाज के और सहानुभूति के सुख शान्ति का जीवन व्यतीत नहीं कर सकता, इस लिए वह एक समाज को तभी छोड़ता है, जब कि दूसरी समाज में उससे अधिक प्रेम और सहानुभूति की आशा हो। किन्तु दुःख से कहना पड़ता है कि

गुण कर्मानुसार विवाह सम्बन्ध करने वाले आर्य पुरुष को समाज से उतना भी सहयोग और सहानुभूति नहीं मिलती है जितनी कि उसे पौराणिक बिरादरी से प्राप्त है।

यही कारण है कि एक आर्य पुरुष यह चाहता हुआ भी कि यह अपनी सन्तान का विवाह गुण कर्मानुसार करे ऐसा करने में हिचकिचाता है किन्तु खेद है कि कई आर्य नेता इस ओर कुछ भी ध्यान नहीं दे रहे हैं। इस ओर सर्वथा उपेक्षा और उदासीनता के कारण ही जहाँ आर्यों की सन्तानें आर्य नहीं बन रहीं वहाँ आर्य समाज और वैदिक धर्म से प्रेम रखने वाले इतर धर्मानुयायी सज्जन भी आर्य समाज में प्रविष्ट होने का साहस नहीं कर रहे हैं। यही कारण है कि समाज न तो अन्दर से ही वृद्धि को प्राप्त हो रहा है, और न बाहर से। आज आर्य समाज की अवस्था उस 'स्वल्पतोय बावड़ी' के समान है कि जिसमें न अन्दर से जल आने का कोई स्रोत है न बाहर से वर्षा आदि के जल आने का कोई साधन। किन्तु दुःख से लिखना पड़ता है कि आर्य समाज अपने अन्दर इस भारी त्रुटि तथा निर्बलता को अनुभव करता हुआ भी इसे दूर करने के लिये अग्रसर होने का साहस नहीं कर रहा। मेरे विचार में यदि आर्य समाज ने इस ओर ध्यान न दिया और आर्यों में गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था को स्थापित करने और आर्यों में ही अपनी जन्म बिरादरी की परवाह न कर गुण कर्मानुसार विवाह आदि सम्बन्ध करने का प्रयत्न न किया तो एक दिन आयेगा जब आर्य समाज की उन्नति सर्वथा रुक जायगी। इस लिये अब भी समय है कि आर्य समाज अपने अंदर से इस भारी त्रुटि को दूर करने का भरसक प्रयत्न करे।

प्रसन्नता की बात है जैसा कि पाठक आर्य पत्रों में पढ़ चुके हैं सार्वदेशिक सभा तथा आर्य समाज के अन्य नेताओं तथा विद्वानों का ध्यान अब कुछ इस ओर गया है। और आर्यों में विवाह आदि सम्बन्ध गुण कर्मानुसार हों और आर्यों में परस्पर सहयोग और सहानुभूति की भावना जागृत होकर भ्रातृभाव उत्पन्न हो इस की पूर्ति के लिये आर्य सार्वदेशिक सभा के आधीन आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् और नेताओं ने

"जाति-भेद निवारक-आर्य-परिवार-संघ" की स्थापना की है। संघ के अध्यक्ष श्रीमान् गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक सभा और उपाध्यक्ष प० धर्मदेव जी विद्या वाचस्पति नियत हुए हैं। अन्य अधिकारियों और प्रबन्ध कारिणी के सदस्यों में भी श्रीमान् प्रो० धर्मेन्द्र नाथ जी शास्त्री एम. ए., श्रीमान् प० सूर्य देव जी एम ए. डी लिट्, श्रीमान् खुशहाल चन्द्र जी, श्रीमान् पं० भीमसेन जी विद्यालङ्कार लाहौर, श्रीमान् प० भगवान् स्वरूप जी अजमेर, श्रीमान् प्रि. महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री एम. ए. लखनऊ, ६० दीनबन्धु जी, प० बशीलाल जी हैदराबाद, पं० वासु देव जी पटना, प्रो. ताराचन्द जी एम. ए कराची आदि महानुभाव हैं। संघ अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिये अपने कार्यालय में सात प्रकार के रजिस्टर रखेगा। एक रजिस्टर में सदस्यों के नाम, एक में सदस्यों के विवाह योग्य लड़कों के, एक में विवाह योग्य लड़कियों के, उनकी योग्यता शिक्षा स्वास्थ्य आयु आदि सहित

होंगे। एक रजिस्टर में विवाह योग्य बधवाओं, एक में विधुरों के नाम भी उनके आवश्यक परिचय सहित रहेंगे। यदि कोई सदस्य अपने लड़की का सम्बन्ध करना चाहेगा तो संघ उनके पास कम से कम ५ वर और कन्याओं के नाम उनकी योग्यतानुरूप भेज देगा जिससे कि वह सदस्य अपने लड़के या लड़की का योग्य वर कन्या के साथ सम्बन्ध कर सके। यही व्यवस्था विधुर और विधवाओं की भी होगी। एक रजिस्टर उन आर्य कुमारों का होगा जिन्हों ने अन्तर्जातीय विवाह करने का व्रत लिया है। इत्यादि इससे पाठकों को ज्ञात होगया होगा कि यह संघ केवल जबानी जमा खर्च न कर क्रियात्मक रूप मे अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिये बनाया गया है। संघ यथा सम्भव एक मासिक या साप्ताहिक पत्र भी निकालेगा और योग्य उपदेष्टा भी रक्खेगा जिस से संघ अपने उद्देश्यों तथा वैदिक धर्म का प्रचार कर सके।

इस लिये आर्य पुरुषों तथा आर्य समाजों से प्रार्थना है कि वे अधिक से अधिक संख्या में संघ के सदस्य स्वयं बनें तथा अन्यों को बनावें। आर्य समाजें तथा आर्य पुरुष संघ के कार्यालय अजमेर से संघ के उद्देश्य तथा नियम सदस्यों के प्रवेश फार्म आदि मंगवालें। आर्य उपदेशकों तथा विद्वानों से भी प्रार्थना है कि जहां वे संघ के उद्देश्यों का प्रचार करें वहां वे संघ के अधिक से अधिक सदस्य बनाने का प्रयत्न करें। मुझे पूर्ण आशा है कि आर्य जनता संघ के कार्य मे पूर्ण सहयोग देगी। अन्त मे आर्य पुरुषों तथा दानी महानुभावों से भी प्रार्थना है कि जहां वे संघ के सदस्य बनें वहाँ संघ को उदार आर्थिक सहायता स्वयं तथा अन्यों से दिलवाने की कृपा करें क्यों कि ऐसे महत्कार्य बिना पर्याप्त धन के नहीं चल सकते।

[हम इस लेख में प्रकाशित विचारों का हार्दिक समर्थन करते हुए इस जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के उपाध्यक्ष के रूप में सब आर्य नर नारियों से जो आर्य समाज की वास्तविक उन्नति और समाज द्वारा प्रवर्तित शुद्धि, संगठन, दलितोद्धारादि आन्दोलनों की यथेष्ट सफलता चाहते हैं अनुरोध करते हैं कि वे इस संघ के सदस्य बन कर जाति भेद विरोधी आन्दोलन में हमें पूर्ण क्रियात्मक सहयोग दें। आर्य कुमार कुमारियों को ऐसे व्रत पत्र भर कर संघ कार्यालय मे भेजने चाहियें जिन में व्रत पति परमात्मा को साक्षी जानकर वे प्रतिज्ञा करें कि अपना विवाह जन्मगत जातपात तोड़कर ही करेंगे। ऐसे सच्चे दृढ़व्रती आर्य कुमार कुमारियों और युवक युवतियों की संख्या जितनी अधिक होगी उतनी ही शीघ्र इस जाति भेद की राक्षसी पद्धति का जो अस्पृश्यता पिशाची की जननी है अन्त हो कर समस्त समाज का वास्तविक कल्याण होगा। संघ ने नियमित रूप से अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है। आर्य जनता को अपना क्रियात्मक सहयोग दे कर इसे प्रबल तथा शक्तिशाली बनाना चाहिये।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति सम्पादक सा. दे.]

पूज्य महात्मा गांधी जी से भेंट

(ले०—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, उपाध्यक्ष जाति भेद निवारक संघ, प्रधान, केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति देहली)

दिनाक १४ । ९ । ४६ सायङ्काल ५ बज कर १० मिनट से ५ बजकर ४५ मिनट तक बाल्मीकि मन्दिर, नई देहली।

प्रणाम करने के पश्चात् मैंने पूज्य महात्मा जी से पूछा कि आपको स्मरण है कि यरवदा जेल में मैंने आपसे भेंट की थी। क्या पहचानते हैं? उन्होंने कहा खूब अच्छी तरह से।

(१) मैंने सब से पूर्व जाति भेद निवारक संघ का जिकर करते हुये (जिसकी नियमावली उनके पास पहले भेजी जा चुकी थी) उसके व्रतपत्र, सदस्यता फार्म आदि का दर्शन किया और उनका, आशीर्वाद मांगा। उन्होंने कहा मेरे आशीर्वाद की पृथक् आवश्यकता ही क्या है? वह तो जैसे कि लिख चुका हूँ, प्रत्येक शुभ आन्दोलन के साथ विद्यमान ही है। मैंने कहा यह तो आपकी निरभिमानिता है आप जैसे महात्माओं का आशीर्वाद लोग चाहते हैं। आपकी इस से पूर्ण सहमति तो है ना? उन्होंने कहा कि मेरी इस से पूर्ण सहमति है। मैं तो अब और भी आगे जाता हूँ और कहता हूं कि जन्म से भंगियों तक के साथ उच्च जातिवालों को विवाह कर लेना चाहिये।

(२) इसके पश्चात् मैंने अपनी 'हमारी राष्ट्र भाषा' पुस्तक का जिकर करते हुये (जिसकी प्रति पहले भिजवा चुका था) केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति के उद्देश्य तथा कार्य से जो डाकखानों मे हिन्दी के साथ अन्याय को दूर करने के लिये किया जा रहा है, महात्मा जी को परिचित कराया जिस पर उन्होंने आश्चर्य प्रकट किया कि हिन्दी के साथ इस प्रकार का अन्यायपूर्ण व्यवहार होता है। उसके बाद मैंने कहा कि आपने अब जिस हिन्दुस्तानी का प्रचार शुरू कर रक्खा है उसमें आपका उद्देश्य शुद्ध और यह होगा कि सरल हिन्दी को अपनाया जाये पर इसका परिणाम हिन्दुस्तानी के नाम पर उर्दू का प्रचार हो रहा है। पं० जवाहरलाल जी जैसे मान्य नेता और श्री हरिभाऊ उपाध्याय जैसे हिन्दी के अच्छे लेखक भी उर्दू शब्दों से भरी हुई भाषा का प्रयोग करने लगे हैं (जिसके उदाहरण मैंने पं० जवाहरलाल जी के ७।९।४६ के ब्रॉडकास्ट भाषण और हरिभाऊ उपाध्याय जी के पं० जवाहरलाल जी की आत्म कथा के हिन्दी अनुवाद से दिये)। मैंने कहा कि आपको यद्यपि उर्दू का अच्छा अभ्यास नहीं तो भी आप भी उर्दू शब्दों के प्रयोग का काफी यत्न करते हैं। हमें तो यह प्रवृत्ति अच्छी प्रतीत नहीं होती। आप जो यह कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति हिन्दी उर्दू भाषाओं और देवनागरी अरबी दोनों लिपियों को सीखे यह भी अव्यवहार्य है। अपनी प्रान्तीय भाषा, राजभाषा अंग्रेजी के अतिरिक्त दोनों भाषाओं को सीखने में काफी कठिनाई सर्वसाधारण को पेश आयेगी। वे कहने लगे इस में हानि भी क्या है? मैंने कहा इस में हानि की सम्भावना यह है कि क्षमा करें, मुसलमान तो आपकी हिन्दी सीखने की बात को मानेंगे नहीं हिन्दू आप पर अधिक श्रद्धा के कारण उर्दू

सीखना शुरू कर देंगे जिसका परिणाम बुरा निकलने की आशा है क्योंकि कुछ समय बाद उर्दू जानने वालों की संख्या अधिक हो जायेगी और इस आधार पर फिर उर्दू के राष्ट्र भाषा होने का दावा किया जायेगा। महात्मा जी ने कहा कि आर्य समाजियों को ऐसे डरना तो नहीं चाहिये। उर्दू हिन्दी का मुकाबला क्या कर सकेगी? लिपियों के विषय में भी यही बात है। क्या तुमने कभी यह देखा है कि देवनागरी लिपि को जानने वालों की संख्या क्या है और उर्दू लिपि को जाननेवालों की कितनी? मैंने उत्तर दिया यह लगभग ७० प्रतिशतक और २० प्रतिशतक है। तब उन्होंने कहा फिर इनका मुकाबला ही क्या है। जिसमें डरने की बात हो। साथ ही देवनागरी लिपि की अपनी वैज्ञानिक शुद्धता और महत्व है जिसके कारण उर्दू रोमन लिपि आदि उसका मुकाबला नहीं कर सकतीं। मैंने कहा कि मैं दक्षिण में बहुत वर्ष रहा हूँ और कर्णाटक आदि भाषाओं का मुझे ज्ञान है इन सब भाषाओं में संस्कृत शब्द बहुत अधिक हैं अतः संस्कृतनिष्ठ हिन्दी ही राष्ट्र भाषा हो सकती है जिसकी कसौटिया मैंने हमारी राष्ट्र भाषा से पढ़ कर सुनाईं। मैंने यह भी कहा कि महात्मा जी आप क्षमा करें हम लोगों का यह विचार है कि आप अनजाने मुसलमानों की चाल में फंस गये हैं जो उर्दू के स्थान पर हिन्दुस्तानी शब्द के प्रयोग की है जैसे कि अ० भा० मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन में जुलाई सन् १९३७ में पास किया गया था जो मैंने उन्हें हमारी राष्ट्र भाषा से पढ़ कर सुनाया जिससे महात्मा जी को आश्चर्य हुआ। मैंने पुन निवेदन किया कि आपको हिन्दुस्तानी शब्दों की जगह सरल हिन्दी शब्द का ही प्रयोग करना चाहिये। महात्मा जी ने बताया कि अब भी बहुत से मुसलमान मुझ से बहुत चिढ़ते हैं और कहते हैं कि गांधी बड़ा दुष्ट है हिन्दुस्तानी का नाम लेकर यह हिन्दी और देव नागरी लिपि का ही प्रचार चाहता है वह हिन्दुस्तानी का नाम लेता है उर्दू का नहीं। उसके भाषण में संस्कृत के ही शब्द अधिक होते हैं। इस सबध में उन्होंने नागपुर की एक सभा का निर्देश किया जहां कइयों ने इस तरह की बातें कहीं थीं। महात्मा जी ने कहा मैं यह चाहता हू कि लोग हिन्दी व उर्दू में पत्र व्यवहारादि करें अंग्रेजी में नहीं। यह अंग्रेजी का मोह तो जाना ही चाहिये। मैंने कहा यह तो अच्छी बात है कि आप अंग्रेजी का मोह लोगों से छुड़वा रहे हैं पर उसके स्थान में हिन्दी का प्रचार पूर्ववत् आप को करना चाहिये। हिन्दुस्तानी नाम भ्रमजनक है और उसके नाम पर उर्दू का ही प्रचार हो रहा है। यह खेद की बात है।

(३) इसके पश्चात् मैंने रामधुन के विषय को लेते हुये कहा कि हम सब आपके इस कार्य के लिये जो इस नास्तिकता के युग में आप प्रार्थना सभादि द्वारा आस्तिकता का प्रचार कर रहे हैं अत्यन्त कृतज्ञ हैं और इसे आप का एक बड़ा उपकार मानते हैं पर जैसे कि मैंने सार्वदेशिक के फरवरी अंक में "महात्मा जी की प्रार्थना सभा में रामधुन" इस शीर्षक की टिप्पणी में लिखा था हम उसमें कुछ ऐसे परिवर्तन चाहते हैं जिससे उसमें सब आस्तिक भाग ले सकें उदाहरणार्थ मैंने कहा कि मैं आपकी प्रार्थना सभा में गत रविवार (ता. ८ सित० को सम्मिलित हुआ था और

उसमें पहले भी कईवार सम्मिलित हो चुका हू किन्तु जहां उपनिषद् गीता श्लोकों के पाठादि में मैं आनन्द से सहर्ष भाग लेता हूं वहां आपकी 'रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम' इस रामधुन में मैं अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल भाग नहीं ले सकता। मैं उस समय गायत्री जपादि करता रहता हूँ। महात्मा जी ने हंसते हुए कहा यह तो अच्छी बात है कि तुम गायत्री जप करते हो मैंने कब सबको बाधित किया है पर मैंने यह अवश्य कहा है कि मेरा तात्पर्य इस भजन में राम से दशरथ पुत्र राम का नहीं किन्तु सर्वव्यापक निराकार परमेश्वर का है। मैंने कहा आप ऐसा कहते जरूर हैं और आपने 'हरिजन' में इस आशय के लेख भी लिखे थे जिनको मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है किन्तु यदि राम को "रमन्ते योगिनोऽस्मिन्" अथवा 'रमते सर्वेषु भूतेषु" इस व्युत्पत्ति के अनुसार ईश्वर के हजारों नामों में से एक नाम भी लिया जाये तो भी रघुपति, राघव, सीताराम ये विशेषण तो निराकार ईश्वर पर घट ही नहीं सकते अतः यहाँ स्पष्टतया दशरथ पुत्र रामचन्द्रजी का ग्रहण है। मैंने यह भी स्पष्ट किया कि हम आर्य लोग श्री रामचन्द्रजी के लिए बड़े आदर का भाव रखते हैं और मैंने स्वयं उनकी प्रशंसा में भजन बनाये हैं पर परमेश्वर के स्थान पर उनका स्मरण हम नहीं कर सकते। क्यों न आप "अशरण शरण शान्ति का धाम, एक सहारा तेरा नाम" इस प्रकारके भजन को जिसको ताल के साथ रामधुन की तरह ही गाया जा सकता है और जिसमें सब आस्तिक बिना किसी सकोच के सम्मिलित हो सकते हैं, अपना लें अथवा यदि राम नाम ही आपको प्रिय है तो क्यों न वर्तमान रामधुन में इस प्रकार का परिवर्तन कर लें कि 'जगपति सब में व्यापक राम, पतित पावन निर्मल राम।' जिस पर इन्होंने कहा कि मैं तो राम से सर्वव्यापक ईश्वर का ही ग्रहण करता हूं दशरथ पुत्र राम का नहीं। शेष रघुपति, राघव, सीतापति ये विशेषण सर्वव्यापक व निराकार राम (ईश्वर) पर कैसे लग सकते हैं इस में कुछ रहस्य है जिसको फिर कभी बताऊंगा क्योंकि प्रार्थना का समय हो रहा है।

मैंने कहा कि अभी तो मैंने सत्यार्थप्रकाश के विषय में भी आपसे बातचीत करनी थी जिसके लिए आपके देहली से जाने से पूर्व एक बार फिर अवश्य मिलना चाहता हूँ जिस पर महात्माजी ने भी यह कहते हुए कि इस प्रकार के संवाद में मुझे भी आनन्द आता है पर अब प्रार्थना का समय होने के कारण फिर कभी २१-२२ सितम्बर के बाद बातचीत करूंगा तुम जो साहित्य चाहते हो वह दे सकते हो। मैंने अपनी सत्यार्थप्रकाश की सार्वभौमता, यूनिवरसलिटी आफ दी सत्यार्थप्रकाश; महर्षि दयानन्द ऐन्ड सत्यार्थप्रकाश तथा श्री० पं० रामचन्द्रजी द्वारा सकलित 'कुरान में अन्य मतावलम्बियों के लिए अति कठोर वाक्यों का सग्रह' सत्यार्थप्रकाश के १४वें समुल्लास में उद्धृत कुरान की आयतें और उनका उल्था, सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास (हितैषीकृत) तथा सार्वदेशिक में प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश के चतुर्दश समुल्लास का तुलनात्मक अनुशीलन शीर्षक लेखों की प्रति और अनेक सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वानों द्वारा की गई इस्लाम की आलोचनाओं का सग्रह इत्यादि भेंट करते हुए पूज्य महात्मा जी को कहा कि आपका भी यह विचार प्रतीत होता है कि सत्यार्थप्रकाश चतुर्दश समुल्लास में इस्लाम की

आलोचना बहुत कठोर है किन्तु तुलनात्मक दृष्टि से अन्य आलोचकों के ग्रन्थों को देखने पर मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूँ कि ऋषि दयानन्द कृत आलोचना न केवल शुद्ध भाव से लिखी और युक्तियुक्त है बल्कि अन्यों की अपेक्षा नरम भी है। इस बात को मैंने अपनी लेखमाला में जो सार्वदेशिक में प्रकाशित हुई दिखाया है जिसको मैं चाहता हूं आप भी अवश्य पढ़ें (उदाहरण के रूप में मैंने उन्हें Encyclopedia of Religions & Ethics Vl VIII. में से मुहम्मडनिज्म विषयक लेख से जो प्रो० मार्गोलियथ डी० लिट का लिखा हुआ है निम्न अंश सुनाये :—

"Mohammed's career as tyrant of Medina is that of a robber chief whose political economy consists in securing and dividing plunder He is himself an unbridled libertine who encourages the same passion in his followers"

इस विषय की शेष बातचीत अगले अवसर के लिए जो उनके देहली से प्रस्थान के पूर्व होगी स्थगित की गई क्योंकि प्रार्थना के लिए अनेक नर नारियाँ महात्मा जी की कुटी के बरामदे में एकत्रित होगए थे। महात्माजी ने सारी बातचीत के समय बड़ा प्रेम और हर्ष प्रकट किया।

आर्य कुमार जगत्

धार्मिक परीक्षायें

सार्वदेशिक के गत अंक में जिन सिद्धान्त शास्त्री आदि परीक्षाओं की पाठविधि सम्पादक महोदय ने कृपा करके प्रकाशित की थी, वे परीक्षायें भारत वर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से प्रति वर्ष जनवरी मास में भारतवर्ष के अनेक केन्द्रों में हुआ करती हैं। इस वर्ष की परीक्षायें भी आगामी जनवरी मास के अन्तिम दो रविवारों को अर्थात् तारीख १९ और २६ जनवरी सन् १९४७ को होंगी। इन धार्मिक-परीक्षाओं की नवीन पाठविधि और नियमावली पृथक् पुस्तिका के रूप में छप गई है और सब केन्द्रों को भेजी जा चुकी हैं। जिन केन्द्रों में न पहुँची हों उनके केन्द्र व्यवस्थापक अथवा जो सज्जन अपने यहां नवीन केन्द्र स्थापित करना चाहते हैं वे नियमावली, पत्र लिख कर, निम्न लिखित पते से मुफ्त मंगा लें। परीक्षाओं के आवेदन पत्र भी छपकर तैयार हैं, वे भी आवश्यकतानुसार मगाये जासकते हैं। आवेदन पत्रों को भरकर वापिस भेजने की अन्तिम तारीख ३० नवम्बर है। अतः उन्हें मगाने और भरकर भेजने में शीघ्रता करनी चाहिए। इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वालों को सिद्धान्त रत्न, सिद्धान्त सरोज, सिद्धान्त भास्कर और सिद्धान्त शास्त्री की उपाधि परिषद् की ओर से दीजाती है।

पता —

डा० सूर्यदेवशर्मा सिद्धान्तशास्त्री,
एम ए, डी लिट्,
परीक्षा मंत्री
भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्
अजमेर।

[आर्य कुमार और कुमारियों तथा अन्य सब आर्य नर नारियों को अधिक से अधिक संख्या में इन धार्मिक परीक्षाओं में सम्मिलित हो कर अपने धार्मिक ज्ञान और स्वाध्याय की वृद्धि करनी चाहिये— धर्मदेव विद्या० वा०
का प्रधान अ० भा० आर्य कुमार परिषद्

राष्ट्रीय सरकार का अभिनन्दन

आर्य कुमार परिषद् के कार्यकर्ता प्रधान श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति ने माननीय श्री पं० जवाहर लाल जी नेहरू उपाध्यक्ष, अन्त कालीन सरकार, नई देहली को निम्न पत्र अभिनन्दन रूप मे भेजा

श्रीयुत मान्य पण्डित जी,

सादर नमस्ते।

मैं अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से आपके नेतृत्व मे राष्ट्रीय सरकार के निर्माण पर आप तथा आपके सुयोग्य सहकारियों को हार्दिक बधाई देता तथा आप सब का अभिनन्दन करता हूं। हम सब की भगवान् से यह प्रार्थना है कि वे आप तथा आपके सहयोगियों को ऐसी शक्ति तथा सद्बुद्धि प्रदान करें जिससे आपके नेतृत्व मे हमारा प्रिय देश शिक्षा शिल्प, व्यवसाय, धन धान्य, सदाचार प्रत्येक दृष्टि से दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करता हुआ अन्य सब राष्ट्रों के लिये आदर्श रूप बन जावे तथा अतिशीघ्र पूर्ण स्वराज्य की स्थापना हो। हम सब यह भी आशा रखते है कि देश द्रोहियों और राष्ट्र की शान्ति व उन्नति मे विघ्नकारक उपद्रव

कारियों के दमन में आपकी सरकार दृढता से काम लेगी।

आपका पुनः हार्दिक अभिनन्दन करता हुआ,

धर्मदेव विद्यावाचस्पति,

का० प्रधान,

अ० भा० आर्य कुमार परिषद्, देहली।

अ. भा. आर्य कुमार परिषद् के कुछ महत्वपूर्ण निश्चयः—

देहज निषेध सप्ताहः—

अ. भा. आर्य कुमार परिषद् की कार्य कारिणी ने पं धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति का. प्रधान के सभापतित्व में १५-६-४६ को दीवान हाल देहली में निश्चय किया कि १३ से २० अक्तूबर तक दहेज निषेध सप्ताह मनाया जाए। २० अक्त० को विशेष समारोह के साथ इस विषयक सभाएं और १३ अक्त० से प्रभात फेरी आदि द्वारा इस विषयक प्रचार किया जाए। इस सप्ताह में अधिक से अधिक दहेज न लेने विषयक प्रतिज्ञा पत्र भरवाये जाएं एवं तत्सम्बन्धी साहित्य का वितरण किया जाए।

इस सप्ताह को सफल बनाने के लिये आर्य कुमार सभाओं को अभी से पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

विशेष आर्य कुमार सम्मेलन—

कार्य कारिणी ने प्रस्ताव स. २ द्वारा यह भी निश्चय किया कि मेरठ में कांग्रेस के अवसर पर (जो २० से २२ नवम्बर सन् १६४६ को होगी) विशेष आर्य कुमार सम्मेलन किया जाए। इस के संयोजक श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी नियुक्त किये जाएं।

राम मोहन सि. शास्त्री

मन्त्री अ. भा. आर्य कुमार परिषद्

मुरादाबाद

पूर्वीय अफ्रीका में ३ योग्य प्रचारकों की आवश्यकता

पूर्वीय अफ्रीका मे प्रचारार्थ ३ योग्य आर्य प्रचारकों की आवश्यकता है जो वैदिक साहित्य के विशेष ज्ञाता पर साथ ही अंग्रेजी का बहुत अच्छा ज्ञान रखने वाले हों केवल पूर्ण सदाचारी और दृढ निरामिष भोजी उपर्युक्त गुण सम्पन्न महानुभाव ही प्रार्थना पत्र भेजें। मासिक दक्षिणा योग्यतानुसार ३०० शिलिङ्ग से ५०० शि. के बीच मे दी जाएगी।

प्रार्थना पत्र और चित्र निम्न पते पर भेजिये

मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका

P. O. Box No. 243,
Nairobi,
Kenya Colony.

जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ

भारत की समस्त आर्य समाजों तथा आर्य पुरुषों से निवेदन

आर्य्यबन्धुवर्ग ! आप यह भली प्रकार जानते हैं कि आर्य्यसमाज की उन्नति के रुक जाने के जहां अन्य कारण हैं वहां एक मुख्य कारण आर्यसमाज का वर्त्तमान जन्मगत जातपात से मुक्त न होना भी है। कितने आश्चर्य तथा दुःख की बात है कि जिस आर्यसमाज का उद्देश्य दूसरों को वर्त्तमान जातपात से छुड़वाकर वैदिक वर्णव्यवस्था का प्रचार करना था वहां उसके भी अधिकांश सभासद् जन्म की जातपात में ही फसे हुए हैं। आज हमारे शादी व्यवहार बहुधा अपनी जन्मगत पौराणिक बिरादरियों में ही होने के कारण न तो हमारी संतान ही आर्य बन रही है, और न ही अन्य धर्मावलम्बी वैदिक धर्म में प्रविष्ट होने का साहस कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में आर्य्य समाज कैसे उन्नत हो सकता है, और कैसे प्राणिमात्र को वैदिक धर्मरूपी अमृत का पान करा सकता है। अतः आर्य्य समाज की शिथिलता के मुख्य कारण वर्त्तमान जन्मगत जातपात को दूर करने, और गुणकर्मानुसार विवाह आदि सम्बन्ध करने के लिये आर्य्य समाज के प्रसिद्ध नेताओं और विद्वानों ने आर्य्य सार्वदेशिक सभा के अन्तर्गत "जातिभेद निवारक आर्य्य परिवार संघ" की स्थापना की है। जिसके निम्न उद्देश्य हैं:—

१. गुणकर्मस्वभावानुसार वैदिक वर्णव्यवस्था की स्थापना के लिये साधन प्रस्तुत करना।

२. जन्मगत जातपात का विचार छोड़कर आर्यों में गुणकर्म स्वभावानुसार विवाह सम्बन्ध कराना और विशेषकर युवक युवतियों से व्रत कराना कि वे जातपात का विचार छोड़कर गुणकर्म स्वभावानुसार ही अपना विवाह करेंगे।

३. सहयोग तथा सहानुभूति द्वारा आर्यों में परस्पर प्रेम तथा भ्रातृभाव उत्पन्न करना।

४. आर्य्य पुरुषों के परिवारों को सच्चा आर्य परिवार बनाना।

इन उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिए संघ का एक मुख्य कार्यालय रहेगा। जो कि लगभग पाँच छः मास से "ऋषि की निर्वाण भूमि अजमेर" में स्थापित है। उस कार्यालय में संघ के सदस्यों, सहायकों, विवाह योग्य लड़कों, कन्याओं, विधवाओं तथा विधुरों के रजिस्टर रहेंगे। जो आर्य्य युवक तथा युवतियां यह व्रत लेंगी कि हम अन्तर्जातीय विवाह ही करेंगी उनके भी रजिस्टर होंगे। संघ अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये स्थान स्थान पर अपनी शाखाएं खोलेगा और ऐसे विद्वान् उपदेष्टा भी रखेगा कि जो स्थान२ पर जाकर संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा संघ के सदस्य बनायेंगे। संघ अपना एक मासिक या साप्ताहिक पत्र भी निकालेगा। जिसमें वैदिक सिद्धान्तों तथा अन्य जीवनोपयोगी लेखों के अतिरिक्त विवाह योग्य कन्याओं युवकों, विधुरों तथा विधवाओं की सूची भी निकला करेगी। संघ वैदिक वर्ण व्यवस्था के समर्थन तथा वर्त्तमान जन्मगत जातपात की अनुपयोगिता सम्बन्धी साहित्य भी प्रकाशित करेगा। इन सब उद्देश्यों की पूर्ति संघ तभी कर

सकता है, जब कि उसके कोश में पर्याप्त धन हो। बिना धन के उपर्युक्त उद्देश्यों का पूर्ण होना असम्भव है। अत भारत तथा अन्य प्रदेशों की समस्त आर्य्यसमाजों और उत्साही तथा दानी आर्य्य पुरुषों से हमारा सानुरोध निवेदन है कि वह सघ को पर्याप्त धन स्वय दें तथा अन्यों से दिलवाकर सघ की उद्देश्य पूर्ति मे हमे पूर्ण सहयोग प्रदान करें। जिससे कि सघ शीघ्र ही अपने उद्देश्यों को पूर्ण करता हुआ आर्य्य समाज तथा वैदिक धर्म की सच्ची सेवा करने मे अग्रसर हो सके। सहायता का सब धन आचार्य भद्रसेन जी सञ्चालक जातिभेद निवारक आर्य्य परिवार सघ अजमेर अथवा मा० ब्रजलाल जी कोषाध्यक्ष जातिभेद निवारक आर्य्य परिवार सघ अजमेर के पास भेजना चाहिये।

निवेदक—

गंगाप्रसाद एम ए, रिटायर्ड चीफ़जज टेहरी, अध्यक्ष

आचार्य भद्रसेन, अजमेर, सचालक

धर्मदेव विद्यावाचस्पति, उपाध्यक्ष, देहली।

साहित्य समीक्षा

(समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की २ प्रतियाँ भेजनी चाहियें)

वैदिक अध्यात्मसुधा—ले० श्री० प्रियरत्नजी आर्ष प्रकाशक—आर्य साहित्य मंडल अजमेर पृष्ठ संख्या ल० ८० मूल्य ||)

श्री पं० प्रियरत्नजी आर्ष (जिन्होंने अब संन्यास लेकर स्वामी ब्रह्ममुनि नाम रक्खा है) आर्य जगत् में 'अथर्व वेदीय चिकित्सा शास्त्र' 'वेदों में इतिहास नहीं', 'यम और पितर', 'विमान शास्त्र' आदि अनुसन्धानपूर्ण मौलिक पुस्तकों के कारण सुप्रसिद्ध हैं। यह सन्यास से पूर्व की उन की रचना है जिसमें वेदों में पाए जाने वाले उत्तम अध्यात्मिक तत्वों का सरल और प्रभावजनक रूप में प्रतिपादन किया गया है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षात्कार, अहिंसा सत्यादि ५ यमों और अष्टांग योग का आधार वेदों को बतलाते हुए अनेक वेद मन्त्रों की व्याख्या की गई है। वैदिक भक्ति उपासना का स्वरूप भी उत्तमता से बताया गया है। सब अध्यात्म विद्या प्रेमियों के लिए यह पुस्तक उपयोगी है। शीघ्रता के कारण छापे की कई अशुद्धियाँ रह गई हैं आशा है उन्हें अगले संस्करण में दूर कर दिया जाएगा।

उपनिषत्प्रकाश—मूल लेखक—श्री स्वामी दर्शनानन्दजी सरस्वती। अनुवादक—श्री मा० अवध बिहारीलालजी चांदापुर; संशोधक, सम्पादक तथा भूमिका लेखक आचार्य विश्वश्रवाजी वेद-मन्दिर बरेली, प्रकाशक श्री श्यामलाल सत्यदेव वैदिक पुस्तकालय बरेली—नवम संस्करण मूल्य ३।) सजिल्द ३॥)

सुप्रसिद्ध तार्किक स्व० स्वामी दर्शनानन्द जी सरस्वती ने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक और माण्डूक्य इन ६ उपनिषदों की उर्दू में विस्तृत व्याख्या सरल शैली में की थी। उसका अनुवाद मा० अवधबिहारीलाल ने किया। इसके ८ संस्करण अब तक निकल चुके हैं जिससे उस ग्रन्थ की लोक प्रियता स्पष्ट है। दुर्भाग्यवश इन संस्करणों में छापे आदि की अनेक भूलें चली आती थीं अब प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् श्री आचार्य विश्वश्रवा जी ने बड़े परिश्रम से इसका संशोधन और सम्पादन किया है। भूमिका विशेष अनुसन्धानपूर्ण है जिसमें उन्होंने इस समय तक मुद्रित या अमुद्रित रूप में उपलभ्यमान २५० उपनिषदों की सूची दी है। इन में से १० ही (प्रक्षिप्त स्थलों को छोड़ कर) प्रामाणिक हैं। इस संस्करण को अधिक उपयोगी, शुद्ध और आकर्षक बनाने का श्री पं० विश्वश्रवा जी ने प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। इस संस्करण से स्वाध्यायशील जनता को विशेष लाभ उठाना चाहिए।

आदर्श कन्या विद्यावती को माता का उपदेश और हिन्दू जाति की कुरीतियों का रोमाञ्चकारी वर्णन तथा सुधार—लेखक—श्री पं० कृपारामजी महता। प्राप्तिस्थान श्री गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क देहली, मूल्य १॥)। इस पुस्तक में जो एक सामाजिक उपन्यास के रूप में लिखी गई है हिंदू समाज में प्रचलित बाधित वैधव्यादि कुरीतियों के परिणाम स्वरूप जो अन्याय, अत्याचार और पापाचार फैल रहे हैं उनका नग्न चित्र खींचा गया है और उनके दूर करने के उपायों पर भी प्रकाश

ढाला गया है, पुस्तक बहुत ही रोचक ढंग से लिखी गई है। तथा भाषा भी सरल और ओजस्विनी है। सर्वसाधारण के लिए जो अश्लील उपन्यास नाटकों को पढ़कर अपना समय नष्ट करते और मानसिक विकारों के वशीभूत होजाते हैं यह सामाजिक उपन्यास विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

ध० दे०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली
अड़तीसवां वार्षिक वृतान्त
१३।२।४५ से १२।२।४६ तक

वियोग

वर्ष का कार्य विवरण देने से पूर्व प्रकट कर देना आवश्यक है कि इस वर्ष श्री स्वामी ईश्वरानन्द जी, श्री विष्णुदास जी बांसल, श्री पं० व्यास देव जी शास्त्री तथा श्री गोपाल नायक (दक्षिण कनारा) के निधन से आर्य जगत् को हानि उठानी पड़ी।

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा में १४ प्रतिनिधि सभायें और नियम धारा ५ के अनुसार सभा मे सीधे प्रतिनिधित्व प्राप्त करने वाली ५ आर्य समाजें सम्मिलित रहीं। वर्ष के अन्त मे यह सभा प्रतिनिधि सभाओ और समाजो के ५४ और १४ प्रतिष्ठित व आजीवन कुल ६८ सदस्यो का समुदाय थी। (देखें परिशिष्ट १)

सभा के अधिकारी

(१) प्रधान—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज।
(२) उपप्रधान—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी (कार्यकर्ता प्रधान)
(३) उपप्रधान-श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
(४) ,, श्री राजा नारायण लाल जी
(५) मन्त्री—श्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए०
(६) कोषाध्यक्ष—श्री ला० नारायण दत्त जी
(७) पुस्तकाध्यक्ष—श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी आर्य। (देखें परिशिष्ट २)

सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन

सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश पर लगे हुये प्रतिबन्ध को हटवाने का कार्य इस वर्ष भी निम्न समिति के अधीन रहा :—

(१) श्री माननीय घनश्याम सिंह जी गुप्त (अध्यक्ष)
(२) श्री प्रो० सुधाकर जी एम० ए०
(३) श्री ला० ब्रजलाल जी बी० ए०
(४) श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज
(५) श्री पं० गंगा प्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज
(६) श्री म० कृष्ण जी बी० ए०
(७) श्री पं० राम दत्त जी शुक्ल
(८) श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री
(९) श्री राजा नारायण लाल जी पित्ती
(१०) श्री ला० नारायण दत्त जी
(११) श्री प्रो० ताराचन्द्र जी एम. ए.
(१२) श्री कुवर चांदकरण जी शारदा
(१३) श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
(१४) श्री पं० ज्ञान चन्द्र जी आर्य सेवक
(१५) श्री चौधरी देरा राज जी (मन्त्री)
(१६) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी
(१७) श्री स्वामी अभेदानन्द जी
(१८) श्री पं० राम चन्द्रजी देहलवी
(१९) श्री प० विनायक राव जी विद्यालङ्कार
(२०) श्री पं० विजय शंकर जी
(२१) श्री पं मिहिर चन्द्र जी धीमान्
(२२) श्री ला० खुशहाल चन्द्र जी

(२३) श्री चौ० मादू सिंह जी वकील रोहतक

इस वर्ष भी समिति ने प्रतिबन्ध को हटवाने के लिये वैध उपायों का ही आश्रय लिया। समिति के अध्यक्ष और अन्य माननीय सदस्य सिन्ध के गवर्नर और सिन्ध मन्त्रीमण्डल के उच्च अधिकारियों से मिले और प्रतिबन्ध को हटवाने का उन्हो ने भर सक यत्न किया। सिन्ध के अधिकारियों के रवैये से निराश होकर, समिति के अध्यक्ष माननीय घनश्याम सिंह जी ने १४। ६। ४५ को समिति की एक आवश्यक बैठक भावी कार्यक्रम पर विचार करने के लिये देहली में बुलाई। परन्तु इस बैठक के बीच में ही सिन्ध के जिम्मेवार क्षेत्रों से ऐसी सूचनायें प्राप्त हुई जिनको दृष्टि में रखते हुये समिति को (यद्यपि वह इस विषय में दिन पर दिन बढ़ती हुई देरी और आर्य जगत् में बढ़ते हुये असन्तोष को देखते हुये तत्काल निर्णय करने के पक्ष में थी) अपना निर्णय अगामी बैठक के लिये स्थगित कर देना पड़ा। इस बीच में समिति के अध्यक्ष महोदय का सिन्ध के अधिकारियों, सिन्ध के अन्य प्रमुख जिम्मेवार व्यक्तियों तथा देश के विशिष्ट सज्जनों के साथ विचार विमर्श और पत्र व्यवहार जारी रहा। जब उन्हें वैध उपायों से प्रतिबन्ध के हटने की जरा भी आशा न रही तो उन्होंने १२।८।४५ को समिति की एक दूसरी आवश्यक बैठक देहली में बुलाई। इस बैठक के ठीक एक दिन पूर्व अर्थात् ११। ८। ४५ को सिन्ध सरकार का एक वक्तव्य अखबारों में प्रकाशित हुआ जिसके द्वारा पहले आर्डर को संशोधित किया गया था। पहला आर्डर और सिन्ध सरकार का संशोधित आर्डर इस प्रकार है:—

HOME DEPARTMENT SPECIAL

Sind Secretariat, Karachi.

26th Oct. 44.

(Original)

ORDER

No 8, D 321—Whereas the Government of Sind consideres it necessary for the purpose of securing the public safety and the maintenance of public order to make the following order —

"Now, therefore, in exercise of the powers conferred by sub rule 41 of the Defence of India Rules, the Government of Sind is pleased to direct that no copies of the book entitled "Satyarth Prakash" written by Swami Dayanand Saraswati shall be printed or published unless Chapter xiv (Chapter 14th) thereof is omitted

By order of the Governor of Sind

Sd S Riddley,

Chief Secretary,

Witness my hand and seal,

this 26th day of Oct 44.

MODIFIED ORDER OF SIND GOVERNMENT

"It is hereby published that the Sind Government prohibited the printing and the publishing of the 14th chapter of the Satyarth Prakash under very exceptional circumstances when it was brought to their notice that certain persons intended to print some thousands of copies of the 14th chapter of the Satyarth

Prakash and distribute them free among the Muslim masses and this contemplated act was likely to lead to the breach of the peace The preservation of law and order and prevention of the breach of peace still remains the sole preoccupation of Government, in this matter and they have no desire to interfere with the religious belief or observances of any community To make this clear they are modifying the order under rule 41 of the D I R. The order as now modified will forbid the printing and publishing in Arabic, Sindhi, Urdu, English, Persian in Sind of the 14th chapter of the Satyarth Prakash and its importation printed in those languages into the province of Sind for distribution and publication."

इस आर्डर से यह स्पष्ट नहीं होता था कि पूरे सत्यार्थप्रकाश से पृथक् केवल मात्र १४ वें समुल्लास के प्रकाशन, मुद्रण और आयात पर ही प्रतिबन्ध रह गया था अथवा निषिद्ध भाषाओं के पूरे १४ वें समुल्लासों सहित सत्यार्थप्रकाश पर, अतः सिन्ध के प्रधान मन्त्री से स्पष्टीकरण की प्रार्थना की गई। प्रधान मन्त्री का तो स्पष्टीकरण प्राप्त न हुआ अवश्य १३-८-४५ को सिन्ध के होम मिनिस्टर की एक प्रेस मुलाकात समाचार पत्रों में छपी जिसमें होम मिनिस्टर ने प्रकट किया कि संशोधित आर्डर के अनुसार १४ वें समुल्लास सहित समूचा सत्यार्थप्रकाश उर्दू, अरबी, सिन्धी अंग्रेजी और फारसी भाषाओं में सिन्ध प्रान्त में न मुद्रित हो सकता है, और न प्रचारित साथ ही यह बाहर से भी मंगाया नहीं जा सकता। इस सरकारी स्पष्टीकरण के पश्चात् समिति ने अपनी १४-८-४५ की बैठक में निम्न प्रस्ताव पास करके श्री घनश्यामसिंह जी को समस्त उपायों को जिन में सत्याग्रह भी शामिल है, काम में लाने का अधिकार दे दिया।

The All India Satyarth ,Prakash Defence Committee of the International Aryan League has reviewed the situation arising out of the ban on the 14th chapter of Satyarth Prakash in the light of Sind Government notification reported by the A P I on the 11th instant as well as of the interpretation placed on it by the Home Minister, Mir Ghulam Ali, in his press statement, dated the 13th instant.

The Committee emphatically declares that Arya Samaj can not submit to any outside interferences in the matter of its sacred books.

The modified order of the Sind Government is no doubt an improvement in the sense that it confines the ban to the five languages specified therein, but in as much as it forbids its importation into Sind, it makes matters worse and if the interpretation put upon it by the Home Minister be correct, which the wording of the modification does not reasonably bear and which appears to have been contradicted

by certain highly placed and responsible persons in authority in Sind, the modified order makes the position still worse.

In view of the two conflicting interpretations, the president sought clarification of the same from the Sind premier which has not been received so far and in its anxiety to avoid giving any legitimate cause of grievance to the Sind Government, the committee refrains from taking any decisive step forthwith, and invests its president Sh Ghanshyam Singh Gupta with full powers to take all such steps in the matter including the starting of Satyagrah, as may be warranted by the situation for the vindication of the religious rights and liberties of Arya Samaj."

इस निश्चय के पश्चात् संशोधित आज्ञा का सही स्पष्टीकरण ज्ञात करने के उद्देश्य से श्री ला. देशबन्धु जी अगस्त के तीसरे सप्ताह में कराची गये और वहां सिन्ध के गवर्नर, प्रधान मन्त्री तथा अन्य उच्च अधिकारियों इत्यादि से मिले। श्री ला० जी ने अपने सिन्ध के दौरे की विस्तृत रिपोर्ट समिति के प्रधान जी को उसी समय देदी थी। इस यात्रा का भी कोई विशेष परिणाम न निकला।

सिन्ध सरकार की संशोधित आज्ञा, होम मेम्बर द्वारा उसके स्पष्टीकरण तथा समिति के अधिकारियों की सिन्ध के अधिकारियों के साथ भेंट के पश्चात यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया था कि आर्य समाज को अपने ग्रन्थ और धार्मिक अधिकारों तथा स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए अग्नि-परीक्षा में से अवश्य निकलना होगा और अब प्रतिबन्ध को हटवाने विषयक प्रायः समस्त वैध उपाय समाप्त हो गये।

इसके पश्चात् देश में धारा सभाओं के निर्वाचन निकट आ जाने और निर्वाचनों का वातावरण सत्याग्रह के लिए अनुकूल न समझा जाने से समिति को निर्वाचनों तक के लिये अनिवार्य होने की अवस्था में सत्याग्रह स्थगित कर देना पड़ा है। इस निर्णायक समिति की ६।१२.४५ की बैठक का निश्चय इस प्रकार है:—

६ सितम्बर १६४६ को मध्याह्न दीवान हाल देहली में श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त के सभापतित्व में अखिल भारतीय सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति का एक विशेष अधिवेशन हुआ जिसमे भिन्न २ प्रान्तो के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। समिति ने सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध के प्रश्न पर विचार किया। श्री ला० देशबन्धु जी गुप्त ने कराची से वापसी पर जो रिपोर्ट भेजी थी वह भी पेश हुई। तत्पश्चात् समिति ने निम्न प्रस्ताव स्वीकार किया:—

प्रधान मन्त्री, कुछ दूसरे मन्त्री तथा अन्य सिन्ध सरकार के जिम्मेदार व्यक्तियों ने सत्यार्थप्रकाश के प्रतिबन्ध को हटाने का वचन दिया था उसे पूरा नहीं किया यह खेद के साथ जाहिर करना पड़ता है और अब उसके आधार पर सत्याग्रह प्रारम्भ न करने का कोई कारण नहीं रह जाता। जहां तक वर्तमान सरकार की मनोवृत्ति का सम्बन्ध है अब सत्याग्रह आवश्यक हो जाता है। सत्याग्रह के लिये जो अधीरता आर्य

भाइयों में है उसका इस समिति को पूरा अनुभव है और समिति उसे सर्वथा स्वाभाविक मानती है। परन्तु सत्याग्रह के लिये जो परिस्थिति तथा वातावरण चाहिये वह चुनावों के कारण इस समय विद्यमान नहीं है। इस सम्बन्ध में यह समिति उन प्रभावशाली व्यक्तियों की सम्मति को जो आर्य समाजी नहीं है और जो विविध संस्थाओं तथा विचारों के हैं आदर की दृष्टि से देखती है। इन अवस्थाओं में कुछ काल के लिये ठहरने में हमारे उद्देश्यों को क्षति नहीं पहुंचेगी बल्कि शक्ति मिलेगी।

एक और बात जो ध्यान में रखने की है वह यह है कि सिन्ध सरकार ने अपनी ११ अगस्त की विज्ञप्ति में घोषित प्रतिबन्ध डी० आर० आर० (भारत रक्षा विधान) के मातहत अभी तक नहीं लगाया है जिसका अर्थ यह है कि सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश को बाहर से भेजने और वितरण करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं।

आर्यसमाज तथा देश के हित को दृष्टि में रखते हुए यह समिति इस निश्चय पर पहुंची है कि चुनावों के काल तक सत्याग्रह प्रारम्भ न किया जाये। यह समिति आर्य जगत् को विश्वास दिलाती है कि इस अवधि के बाद अनिवार्य होने की अवस्था में सत्याग्रह प्रारम्भ कर देगी।

सत्यार्थप्रकाश की मांग की पूर्ति

जनता में गत वर्ष से ही सत्यार्थप्रकाश की माग बढ़ी हुई थी जिसकी पूर्ति कागज इत्यादि की अलभ्यता तथा प्रेसों पर 'नियत परिमाण में छपाई वाले विषयक' लगे हुये सरकार के प्रतिबन्धों के फल स्वरूप वैदिक यन्त्रालय तथा अन्य प्रमुख प्रेसों के द्वारा होनी कठिन हो रही थी। प्रसन्नता है कि इस वर्ष वैदिक यन्त्रालय ने २०००० की संख्या में सत्यार्थप्रकाश छाप कर इस माग की आंशिक पूर्ति करदी।

अंग्रेजी व सिन्धी सत्यार्थप्रकाश

इस सभा ने अंग्रेजी तथा सिन्धी सत्यार्थप्रकाश की छपाई की देहली में व्यवस्था की हुई है। अन्तरंग के निश्चयानुसार श्री डा० चिरञ्जीव भारद्वाज कृत अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश का ही नया संस्करण छपाया जा रहा है।

सत्यार्थप्रकाश विषयक साहित्य

अब तक निम्न साहित्य प्रकाशित हुआ है:—

(१) महर्षि दयानन्द ऐन्ड सत्यार्थप्रकाश Maharshi Dayananda and Satyarth Prakash

(२) इन डिफेंस आफ सत्यार्थप्रकाश In Defence of Satyarth Prakash

(३) वी एन्ड आवर क्रिटिक्स We and Our Critics.।

(४) कुरान में अन्य मतावलम्बियों के लिये कठोर शब्द।

(५) १४ वें समुल्लास में आई हुई कुरान की आयतों का हिन्दी में रूपा।

(६) हम और हमारे समालोचक।

(७) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा।

(८) सत्यार्थप्रकाश की सार्वभौमता।

सं० ७ इन डिफेन्स आफ सत्यार्थप्रकाश का हिन्दी अनुवाद है जो इस वर्ष तैयार होकर प्रकाशित हुआ।

ए केस आफ सत्यार्थप्रकाश इन सिंध

दी केस आफ आर्यसमाज इन हैदराबाद नामक पुस्तक की तरह उपर्युक्त पुस्तक श्री शिवचन्द्र जी

द्वारा तैयार कराई गई है जिसमें इस प्रतिबन्ध के लगने के समय से अब तक का पूर्ण इतिहास अंकित और देश के प्रमुख प्रमुख नेताओं और पत्रों की सम्मतियां उद्धृत करके सिन्ध सरकार की प्रतिबन्ध विषयक आज्ञा का अनौचित्य दर्शाया गया है पुस्तक को अन्तिम रूप दिया जा रहा है।

सिन्ध में प्रचार कार्य

इन दिनों सिन्ध में प्रचार कार्य को दृढ़ और विस्तृत करने की आवश्यकता पर बल दिये जाने की आवश्यकता नहीं है। सिन्ध सभा ने इस दिशा मे यत्न भी किया है। परन्तु आवश्यकता को दृष्टि मे रखते हुये यह यत्न यथेष्ट नहीं कहा जा सकता। प्रान्तीय सभाओं के सहयोग पूर्वक इस कार्य को अधिक विस्तृत करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

सत्यार्थप्रकाश रक्षा निधि

आर्य सम्मेलन देहली के निश्चयानुसार इस निधि के लिये दो लाख रुपये की अपील की गई थी। सभा के कोष मे अब तक के प्राप्त धन का विवरण प्रान्तवार इस प्रकार है:।

नाम प्रान्त	धन लगाया	प्राप्त
१. संयुक्त प्रान्त	५००००)	१३४०१॥।-)॥
२. पंजाब देहली	५००००)	५०६७॥।=)
३. बिहार	१५०००)	६०१८॥=)
४. बंगाल	१००००)	३६१४)
५. राजस्थान	१५०००)	३२५६=)
६. मध्यप्रदेश	१०० ०)	९१०५।)
७ हैदराबाद	१००००)	४८३।)
८. सिन्ध	१५०००)	१५८२२।)
९. मद्रास	५०००	५०८॥)
विदेश		२२५१।)
विविध		४३९७॥।≡)।
१२ बम्बई	२००००)	८५०६॥)
	२०००७०)	६४७६९॥।=)॥।

इस राशि मे सिन्ध प्रान्त मे प्रचार तथा अन्यान्य कार्यों मे १८४०९॥।) व्यय हो चुका है। सभा के कोष मे इस समय ४७३५७)॥। शेष है।

(क्रमशः)

महिला जगत्

महिलाओं से !

(लेखिका—श्रीमती सुशीलादेवी जी आर्य "शील" धर्मपत्नी-श्री कवि शान्तिवीर जी आर्य सम्भल)

[बहिन सुशीलादेवी जी की इस ओजस्विनी रचना को हमने भावों की उत्तमता की दृष्टि से प्रकाशित किया है यद्यपि नारी सब सृष्टि म महान्' जैसे कुछ व्याकरण विरुद्ध प्रयोग इसमें पाये जाते हैं। पाठक पाठिकाएं भी शब्द वा छन्द की अपेक्षा भावों पर अधिक ध्यान दें।

—सम्पादक सा० दे०]

अबला क्यों कहती हो सबला, नारी। सब सृष्टि में महान्।

(१)

सावित्री सी धर्मनिष्ठ वे, बलशाली थी अबलाएं,
जिनका बल पौरुष विलोक, यमराज स्वयं थे घबराये।
सीता सी वे पतिव्रता और, अनुसूया सी महिलाएं—
आज जाति का गौरव है वे, अबला हैं या सबलाएं।
उनकी ही स्मृति को लेकर कुछ करो देश उत्थान॥
अबला क्यों कहती हो सबला, नारी! सब सृष्टि में महान्॥

(२)

वे दुर्गा सी वीर नारियां, पृथ्वी तक थर्राती थीं,
विद्युत सी जब दो तलवारें, हाथों में चमकाती थीं।
झांसी वाली रानी कैसी रण में धूम मचाती थी,
काल रूप धर वैरी दल को, भव के द्वार पठाती थी।
ऐसी ऐसी महिलाएं थीं, रक्खा जिन भारत का मान॥
अबला क्यों कहती हो सबला, नारी! सब सृष्टि में महान्।

(३)

याद नहीं चित्तौड़ दुर्ग की, ललनाओं का अनुपम त्याग,
ज्वलित चिता में खेले जिनने, हंसते हंसते सुन्दर फाग।
स्वतन्त्रता और धर्म निष्ठता के प्रति कैसा था अनुराग,
जीवन की चिन्ता बिसार कर, छेड़ा जीवन रण का राग।
नन्हीं नन्हीं अबलाओं का, याद नहीं जीवन बलिदान॥
अबला क्यों कहती हो सबला, नारी! सब सृष्टि में महान्॥

(४)

आज दशा क्या तनिक निहारो, है क्यों इतना परिवर्तन,
साहस नहीं प्रताप आज नहीं, कर सकती अपना रक्षण।
किन्तु नहीं क्या हो सकता है, अबलाओं से बल-युद्ध न,
विश्व विजय कर सकती है, हम "शील" शान्ति से निर्भय मन।
किन्तु अपेक्षित सर्व प्रथम है, नारी का स्वाभिमान॥
अबला क्यों कहती, हो सबला, नारी! सब सृष्टि में महान्॥

आर्य वीर दल विषयक आवश्यक सूचना

पंजाब प्रान्त के दलनेता श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने अपने प्रांत में घोषणा की है कि आर्य जाति में विजय दशमी का दिन वीर दिवस माना जाता है। अतएव प्रान्त भर के समस्त दल विजय दशमी को वीर दिवस मनायें। मैं उनकी इस घोषणा से पूर्णतया सहमत होते हुए अखिल भारतीय आर्य वीर दल के प्रधान मन्त्री के नाते से घोषणा करता हूं कि समस्त प्रान्तों में प्रान्त के हर नगर में जहां भी वीर दल काम कर रहा है विजयदशमी ५ अक्तू० को वीर दिवस मनाया जाये और जहां वीर दल स्थापित नहीं है इस शुभ अवसर पर भरसक हर स्थान मे वीर दल की स्थापना की जाये और स्थानीय वातावरण और हालात को ध्यान में रखते हुए अपना ऐसा समय विभाग निश्चित कर लिया जाये कि जिससे दल के कार्यक्रम का साधारण जनता को भली भांति ज्ञान हो सके और दल की शक्ति का प्रदर्शन भी हो सके और जिससे नवयुवकों को उसमें सम्मिलित होने की प्रेरणा मिले। इस साधारण प्रोग्राम के अतिरिक्त उस दिवस को वीर दल की सहायता का दिवस माना जाये। उस रोज हर आर्य वीर अपनी शक्ति अनुसार दल का कोष स्थिर करने और खर्च चलाने के लिये भेंट के रूप में आवश्यक दान देवें। जिसकी मात्रा न्यून से न्यून १।) वार्षिक प्रति वीर तो होनी ही चाहिये। किन्तु सामर्थ्यशाली वीर जितना अधिक से अधिक हो सके दल के अर्पण करें। उस दिन दूसरे सहायकों तथा दानियों से भी धन एकत्रित करें उस एकत्रित धन में से आधा तो स्थानीय दलके कोषमें वहां के खर्च के लिये रखा जावे और ये प्रान्त के दल नेता के पास भिजवावें। वह जहां उचित समझें दल सम्बन्धी कार्यों को सुदृढ़ करने के लिये व्यय करे और ये हिस्सा अखिल भारतीय आर्य वीर दल के कोष के लिये सार्वदेशिक सभा में भेज दें।

आशा है इस आदेश के अनुसार सारे प्रान्तिक दल नेता "वीर दिवस" को सफल बनाने के लिये भरसक प्रयत्न करेंगे। और अपने २ प्रान्त का विवरण एक मास के भीतर अखिल भारतीय आर्य वीर दल कार्यालय देहली में भेज देंगे।

नारायणदत्त मन्त्री
अखिल भारतीय आर्य वीर
दल समिति, देहली।

सम्पादकीय

राजा महेन्द्र प्रताप जी अशुद्ध मार्ग पर:—

'सार्वदेशिक' के गत अगस्त मास के अङ्क में हम 'स्वतन्त्रता और प्रेम के पुजारी का हार्दिक स्वागत' इस शीर्षक टिप्पणी द्वारा ३२ वर्षों के प्रवास के पश्चात् भारत में लौटे श्री राजा महेन्द्र प्रताप जी का अभिनन्दन और स्वागत कर चुके हैं पर हमें यह देखकर दु:ख होता है कि श्री राजा जी हिन्दू मुस्लिम एकता को अपने जीवन का लक्ष्य बना कर जिन साधनो को कार्य मे लाने का प्रचार कर रहे हैं वे लाभप्रद होने के स्थान मे अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगे। गत १३ सितम्बर को हमे आर्य समाज दीवान हाल मे श्री राजा जी के भाषण को सुनने का अवसर प्राप्त हुआ जिस के अन्त मे हिन्दू मुस्लिम एकता को अपने जीवन का ध्येय बताते हुए उन्होने कहा कि वे मस्जिदो में मुसल्मान बन्धुओ के साथ मिलकर नमाज पढ़ते हैं, रोजा रखते है और मुसल्मानो के समान ही दाढ़ी मूंछ आदि रखते हैं अतः वे हिन्दू मुस्लिम ऐक्य लाने मे सम्भवतः अन्य सब नेताओ की अपेक्षा अधिक सफल हो सकते हैं। अलीगढ़ के टीकाराम गर्ल्स कालेज में व्याख्यान देते हुए तो राजा जी ने हिन्दू मुस्लिम ऐक्य सम्पादन के जोश में यहा तक कह डाला कि साम्प्रदायिक दंगो को मिटाने के लिये हिन्दू स्त्रियों को मुसलमानों के साथ विवाह की पूर्ण स्वतन्त्रता दे देनी चाहिये जिससे मुसल्मानो के घरों में जाकर वे अपने को सुगृहिणी सिद्ध कर सकें। उन्होंने हिन्दू स्त्रियों को इस विषय मे पहल करने की भी सलाह दी। हम राजा जी के स्वातन्त्र्य प्रेम तथा त्याग की प्रशंसा करते हुए भी यह लिखे बिना नहीं रह सकते कि मुसलमानों की तरह दाढ़ी मूंछ रखने, नमाज पढ़ने और रोजा रखने और हिन्दू स्त्रियो को अविवेक पूर्वक मुसलमानो से विवाह सम्बन्ध करवा कर वे हिन्दू मुस्लिम एकता उत्पन्न कर सकेंगे ऐसा उनका समझना सर्वथा अशुद्ध है। जब तक मुसलमानों के मन मे हिन्दुओ को काफ़िर समझ कर उनके प्रति घृणा भाव विद्यमान है तथा 'जिहाद' की भावना उनके अन्दर कूट २ कर भरी हुई है तब तक श्री राजा जी के नमाज पढ़ने व रोजा रखने आदि से हार्दिक एकता कभी उत्पन्न नहीं हो सकती जिन्होने अपने आचार व्यवहार को वैदिक धर्म में दीक्षित हो कर पवित्र कर लिया है ऐसे शुद्धि शुदा व्यक्तियो के साथ विवेकपूर्वक विवाह की बात कही जाए तो वह बात पृथक् है किन्तु सर्व साधारण मुसलमान युवकों की अनैतिक प्रवृत्तियो को जानते हुए जो गुण्डा शाही के रूप में प्रायः प्रकट होती हैं इस प्रकार का परामर्श देना कितना अविवेक पूर्ण और हानि कारक है! ऐसी असङ्गत और हानिकारक बातें कहने के

स्थान पर यदि श्री राजा जी मतान्ध मुसलमानों की मनोवृत्ति में परिवर्तन कर सकते हैं तो उस के लिये प्रयत्न करें अन्यथा पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के प्रयत्न में ही वे तत्पर रहें तो उनकी कीर्ति स्थिर रह सकती है और देश की सच्ची सेवा हो सकती है। ऐसी असङ्गत बातो को कह कर तो वे अपने यश की कबरें खोद डालेंगे ऐसा हमें भय है।

कोल्हापुर आर्य समाज का प्रशंसनीय शुद्धि कार्यः—

कोल्हापुर महाराष्ट्र में आर्य समाज का एक बहुत बड़ा केन्द्र है। यहा आर्य समाज की स्थापना स्व. श्री शाहू जी छत्रपति महाराज की प्रेरणा से सन् १६१८ में हुई थी। हमे श्री मन्त्री जी आर्य समाज कोल्हापुर स यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि गत २ वर्षों में लगभग ६००० ईसाई और मुसलमानो को इस समाज की ओर से शुद्ध किया जा चुका है और यह कार्य अब भी जारी है। अभी २ सित. को कुमारीरशीदा नामक महिला को यहा के श्रद्धानन्द स्मारक भवन में शुद्ध करके श्रीयुत बृहस्पति देव वेदी के साथ उसका विवाह वैदिक रीति से कराया गया जिन्होंने इस विवाहोत्सव के उपलक्ष्य में आर्य समाज को =५०) दान में दिये। ६ सितम्बर को अनुंझियाता नामक इटालियन महिला को शुद्ध करके उसे सरोजिनी देवी का नाम दिया गया। ऐसे ही अन्य अनेक शुद्धिया हुई हैं। हम कोल्हापुर आर्य समाज का, जिसको उन्नत करने में स्व० प्रिन्सिपल बालकृष्ण जी एम. ए. पी. एच डी का बड़ा भाग था इस शुद्धि कार्य के लिये अभिनन्दन करते हुए आशा करते हैं कि उसे जनता की ओर से पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा। साथ ही हम अन्य समाजों से भी स्व० धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा मुख्यतः प्रवर्तित इस शुद्धि आन्दोलन को उत्साह पूर्वक चलाने का अनुरोध करते हैं किन्तु जैसे कि हम पहले भी कई बार लिख चुके हैं इस की सफलता जातिभेद की हानिकारक प्रथा को तोड़ने पर बहुत अंश तक निर्भर है अतः इसके साथ २ उस विषयक क्रियात्मक आन्दोलन को जोर से चलाना चाहिये। यह सब कार्य प्रेम और अहिंसा पूर्वक होना चाहिये जिस से किसी को व्यर्थ आक्षेप करने का अवसर न मिले। यह सचमुच खेद की बात है कि शुद्धि आन्दोलन की वर्तमान प्रगति सन्तोषप्रद नहीं है।

दहेज की घातक प्रथाः—

जैसे कि 'आर्य कुमार जगत्' में पाठकों ने पढ़ा होगा अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की कार्य कारिणी ने १३ से २० अक्तूबर तक दहेज निषेध सप्ताह मनाने का आर्य कुमार सभाओं को आदेश दिया है। विवाह के अवसर पर दहेज मागने की प्रथा कितनी कुत्सित और हानिकारक है इस विषय में अधिक लिखने की विशेष आवश्यकता नहीं। इसके प्रत्यक्ष कुपरिणाम प्रायः सम्मुख आते रहते हैं और कुमारी स्नेहलता आदि के बलिदानों ने जो इस कुप्रथा की वेदि पर इसका अन्त करने के लिये दिये गये—विचारशील जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित कर दिया है किन्तु खेद है कि अब भी अनेक सुशिक्षित होने का दावा भरने वाले ऐसे नवयुवक विद्यमान हैं जो स्पष्ट वा परोक्ष रूप से दहेज की भेंट, ठरावनी, करार दाद, रस्म, दायजा आदि के रूप में मांग करने में लज्जा का अनुभव नहीं करते।

इस राक्षसी प्रथा के कारण कन्याओं के माता पिता तथा स्वयं कन्याओं का जीवन (विशेषतः जो अधिक भावुक प्रकृति की हों) बड़ा दुःखमय बन जाता है। अतः इस राक्षसी प्रथा के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन की आवश्यकता है। कुमार, कुमारियों तथा युवक, युवतियों को दहेज की किसी भी रूप में मांग न करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिये तथा उनके सम्बन्धियों को भी इस कुप्रथा का अन्त करने में पूर्ण सहयोग देना चाहिये। इस पर भी जो निर्लज्ज दहेज की मांग करें और समझाने बुझाने पर भी न मानें उनका प्रबल सामाजिक बहिष्कार करके उनको सीधे रास्ते पर लाना चाहिये। ऐसे आन्तरिक सुधार के बिना समाज की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकती।

हैदराबाद रियासत में 'महर्षि दयानन्द चरित' की जब्तीः—

श्री कृष्णदत्त जी बी० ए० मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद (दक्षिण) के पत्र से यह जान कर हमें बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के उपमन्त्री प० गंगाराम जी बी. एस्. सी. द्वारा लिखित "ऋषि-चरित्र प्रकाश" नामक महर्षि दयानन्द के उर्दू जीवन चरित्र को हैदराबाद सरकार ने जब्त कर लिया है। यह पहला ही अवसर है कि महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र को किसी भी भाषा में जब्त किया गया है जो अत्यन्त अनुचित तथा निन्दनीय बात है। अब भी अनेक आर्य विद्वानों और प्रचारकों पर प्रतिबन्ध हैदराबाद रियासत में प्रवेश पर लगा हुआ है यद्यपि उनके बहुत शीघ्र हटाने का रियासत के अधिकारियों ने सत्याग्रह की समाप्ति के अवसर पर आश्वासन दिलाया था। इस प्रकार निजाम सरकार की कार्यवाहियां अत्यन्त अनुचित और असन्तोष-वर्धक हैं। आशा है सर मिर्जा इस्माईल जो हैदराबाद राज्य की कार्यकारिणी के प्रधान बनकर हाल ही में वहां गये हैं इन धार्मिक स्वतन्त्रता में बाधक पाबन्दियों को दूर हटा देंगे अन्यथा जो आन्दोलन रियासत के विरुद्ध होगा (जो अब भी हिन्दू महासभा की ओर से सत्याग्रह के रूप में चल रहा है और जिसका हैदराबाद आर्य-प्रतिनिधि सभा की अन्तरङ्ग सभा ने समर्थन किया है।) उसके लिये अधिकारियों की अपनी उत्तरदायिता होगी।

डा० अबुलहक का असंगत भाषणः—

अंजुमन तरक्कीए उर्दू के मन्त्री डा० अबुलहक ने गत १३ सित को अरबी कालेज देहली में जो व्याख्यान 'उर्दू, हिंदी हिन्दुस्तानी' पर दिया उसकी यदि मुस्लिमलीगी पत्र 'Dawn' के १५-९-४६ के अङ्क में दी रिपोर्ट सत्य है तो हम उसे असङ्गत भाषण से कोमल कोई नाम नहीं दे सकते। डा. हक ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि आज कल उर्दू ही हिन्दुस्तान की आम भाषा है। यह दोनो राष्ट्रों-हिन्दुओं और मुसलमानो के सम्मिलित प्रयत्नों का परिश्रम है। उन्होंने अपने भाषण मे यहां तक कहने का दुस्साहस किया कि तथा कथित हिन्दी भाषा जिसे १००० वर्ष पुरानी उर्दू का स्थान दिलाने की मि. गान्धी तथा अन्य लोग कोशिश कर रहे हैं १९ वीं सदी से पहले पैदा भी न हुई थी। यह तो कलकत्ता के फोर्ट विलियम कालेजके संचालकों द्वारा उर्दू की प्रतिद्वन्द्विता के लिये कृत्रिम रूप से तय्यार की गई थी। ·····सिर्फ सन १८५७ के बाद हिन्दुओं ने

ब्रिटिश लोगों के कहने पर अपनी बहुरूप संस्कृतियों और भाषाओं की रक्षा और उन्हें एक बनाने की कोशिश की। दयानन्द तथा अन्यों द्वारा कुछ पुनरुद्धार सम्बन्धी आन्दोलन शुरु किये गये और एक कृत्रिम भाषा हिन्दी घड़ी गई' इत्यादि

उपर्युक्त रिपोर्ट में अनेक बातें इतनी अशुद्ध और असङ्गत हैं कि डा० हक जैसे प्रसिद्ध विद्वान् से उनकी आशा न की जा सकती थी। यह कहना कि भारत की सामान्यभाषा उर्दू है सर्वथा अशुद्ध है। गुजराती, मराठी, बंगाली, उड़िया, पजाबी, कर्णाटक, तिलुगु, मलयालम, तामिल आदि सब भारतीय प्रान्तों की भाषाओ मे संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है अतः सस्कृत निष्ठ हिन्दी ही भारत की राष्ट्र भाषा हो सकती है और है इस बात को बड़ी अच्छी से सिद्ध किया जा सकता है (जैसे कि मैंने 'हमारी राष्ट्र भाषा मे भिन्न भिन्न भाषा भाषियो की सम्मत्यादि देकर तथा भिन्न भिन्न प्रान्तीय भाषाओ का संस्कृत से सम्बन्ध उदाहरण सहित देकर बताया है जिसे केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति देहली से मंगवाकर पाठक पढ़ सकते है) यह कहने मे अत्युक्ति न होगी कि भारत मे ७० प्रतिशतक स अधिक लोग संस्कृत निष्ठ हिन्दी को बोल वा समझ सकते हैं जब कि उर्दू समझने वालो की संख्या ३० प्रतिशतक से कम ही होगी। यह कहना कि हिन्दी उन्नीसवीं सदी मे अंग्रेजो की प्रेरणा से स्वामी दयानन्द जी द्वारा घड़ी गई अपना साहित्य विषयक अज्ञान अथवा घोर साम्प्रदायिक पक्षपात प्रकट करना है। यदि चन्दवरदाई को हिन्दी का प्रथम महा कवि माना जाए तो भी यह मानना पड़ेगा कि १२ वीं सदी में हिन्दी का साहित्य पर्याप्त उन्नत दशा तक पहुच चुका था। हिन्दी साहित्य के निर्माण में मीर खुसरो, सैयद इन्शा अल्लाखान, रसखान, अब्दुलरहीमखान आदि अनेक मुसलमान लेखको तथा कवियों ने भी भाग लिया इस बात को साहित्य के सब प्रेमी जानते हैं इस लिये ऐसी असङ्गत बातो से उर्दू को राष्ट्र भाषा सिद्ध करने का डा० हक आदि का प्रयत्न सर्वथा निन्दनीय है। महात्मा गांधी जी से हमारी तो शिकायत है कि 'हिन्दुस्तानी' के प्रचार द्वारा उन्होने उर्दू की उन्नति मे अनजाने सहायता दी किन्तु डा० हक ने उनको धन्यवाद देने के स्थान में इस भाषण में उनकी आलोचना करते हुए कहा कि "गाधी जी ने हिन्दू उर्दू के संघर्ष को बढ़ा दिया। हिन्दुस्तान में गाधी जी के उदय के बाद हिन्दुओं और मुसलमानों को जोड़ने वाला एक मात्र बन्धन भी छिन-भिन्न हो गया और अब तक सर्वथा अज्ञात हिन्दी उर्दू विषयक वाद विवाद सारे देश में फैल गया और अब भी बढ़ता जा रहा है।"

यदि महात्मागांधी जी के 'हिन्दुस्तानी' प्रचार से मुसलमान भी प्रसन्न नहीं और आर्य हिन्दूलोग भी उसे अनेक दृष्टियों से हानि कारक समझते हैं जैसे कि मैं ने गत १४ सित की भेंट में पूज्य महात्मा जी के सन्मुख स्पष्ट करने का प्रयत्न किया तो क्या पूज्य महात्मा जी के लिये यह अच्छा न होगा कि वे अपने इस व्यर्थ प्रयत्न का परित्याग कर के पूर्ववत् संस्कृत निष्ठ हिन्दी का प्रचार करने में तत्पर हो जाए? हमे तो यह बात सर्वथा उचित प्रतीत होती है और हमें आशा करनी चाहिये कि पूज्य महात्मा जी इस पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेंगे।

आर्य समाज और आर्य कुमार सभाएं

'सार्वदेशिक' के एक गत अङ्क में हमने आर्य कुमार सभाओं के संचालकों को सम्बोधन करते हुए लिखा था कि उन्हें आर्यसमाजो के साथ पूर्ण सहयोग की भावना रखनी चाहिये न कि प्रतिस्पर्धा की। यही बात हम आर्यसमाजों के अधिकारियों से कहना चाहते हैं कि वे भी आर्य कुमार सभाओं के प्रति प्रेम और विश्वास पूर्ण व्यवहार दिखाए। वस्तुतः आर्यसमाजों और आर्य कुमार सभाओं का परस्पर सम्बन्ध पिता पुत्र का है प्रतिद्वन्द्वियों वा विरोधियों का नहीं। यदि आर्यसमाजो के अधिकारी तथा अन्य सदस्य इस विशुद्ध भावना से प्रेरित होकर आर्य कुमार सभाओं को प्रोत्साहित और उन्नत करने का प्रयत्न करें तो आर्यसमाज का अपना भविष्य बड़ा उज्ज्वल हो सकता है। अब प्रायः यह शिकायत सुनने में आती है कि युवक आर्यसमाज में प्रविष्ट नहीं हो रहे। इसके कारणों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करके उन्हें दूर करने का विशेष प्रयत्न करना चाहिये। यदि आर्यकुमार सभाओं के द्वारा कुमारों और नवयुवकों में धार्मिक भावना को भरने का आर्यसमाजो के अधिकारी प्रेम पूर्वक प्रयत्न करते रहें और उन्हें अपने संगठन को दृढ़ बनाने में सहायता दें, स्कूल कालेज के छात्रों में विशुद्ध धार्मिक भावना को उत्पन्न करने का विशेष प्रबन्ध सुयोग्य विद्वानों द्वारा करवाया जाए तो आर्य समाज का भविष्य वस्तुतः अत्यन्त उज्ज्वल हो जाएगा। किन्तु कई बार खेद से सुनने में आता है कि कई आर्यसमाजों के अधिकारी आर्य कुमारों को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझकर उन्हें समाज की दरी इत्यादि सामान तक को उपयोग में लाने की अनुमति नहीं देते तथा अन्य सब प्रकार से उन्हें अनुत्साहित करते हैं। इस मनोवृत्ति में परिवर्तन की आवश्यकता है। आर्य कुमार सभाओं के कई संचालकों का यदि इसमें दोष हो तो उसको भी प्रेम पूर्वक समझा बुझाकर दूर करने का यत्न करना चाहिये न कि अविश्वास द्वारा उस कटुता को बढ़ाने का। हमें विश्वास है कि समस्त आर्यसमाजों के अधिकारी महोदय इस आवश्यक विषय पर ध्यान देंगे और इस प्रकार आर्यसमाज की वास्तविक उन्नति में सहायक होंगे।

ध० दे०

मा० सं० जिनका चन्दा मास सितम्बर सन् १९४९ में समाप्त होता है कृपया ५) मनिआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें।

८७, ८८, ४७६, ८९८, ११३८, १२७६, १३१०, १३११, १५४५, १६२१, १६२३, १६२५, १६४१, १६४४, १६६८, १६७१, १६७४, १६७६, १६७९, १६८१, १६९१, १६९२, १६९३, १६९४, १६९६, १६९७, १६९९, १७०५, १७०६ १७२१, १७२२, १७२३, १७२५, १७२६, १७२७, १७३०, १७३१, १७३ , १७४१ १७४२, १७४४, १७४८, १७५३, १७५४, १७५८, १७६१, ७६२, १७६७, १७७१, १७७२, १७९१, १८०९, १८११, १८४८, २१५६, २१६४, २४०८, २५८३, २ ८७, २५१०, २५२३, २५२६, २५२७, २५२८, ५२९, २५३०, २५३१, २५३२, २५३३, २५३४, २५३६, २५३७, २५३८, २५३९, २५४०, २५४३, २५४४, २५४५, २५४६, २५४७, २५४९, २५५०, २५५१, २५५२, २५५३, २५५४, २५५५, २५५७, २५६०, २५६१, २५६४, २५६५, २५६६, २५६७, २५६८, २५६९, २५७१, २५७३, २५७५, २५७६, ५७७, २५७८, २५७९, २५८०, ५८१, २५८२, २५९३, २५९४, २५९५, २५९७, २६०३, ६०५, २६०६, २६१२, २६१४, २६१६, २६५०,

---

दान सूची सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

अगस्त

स्थापना दिवस

१०) आर्य समाज हस्पताल रोड जम्मू
१००) ,, ,, दारा स्लाम (ईस्ट अफ्रीका)
७) ,, ,, उन्नाव
१०) ,, ,, अलवर स्टेट
८) ,, ,, ज्वालापुर
६) ,, ,, सदर नागपुर

१४४) योग। दान दाताओं को धन्यवाद।
५३७॥≡) गत योग

६८१॥≡) सर्व योग

जिन समाजों का भाग अभी तक अप्राप्त है वे कृपा करके अपना भाग शीघ्र से शीघ्र भिजवा देने और सभा कार्यालय को प्रेरणा का अवसर न देकर उसको पोस्टेज इत्यादि का अपव्यय न होने देवें। सभा ने प्रत्येक समाज से इस दिवस की अपील का भाग लेने का निश्चय किया हुआ है और इसके लिये बराबर स्मरण पत्र जा रहे हैं जिन समाजों में इस दिवस पर किसी कारण-वश धन संग्रह न हो सका हो, वे अब अपने समाज के सदस्यों तथा उन सदस्यों के परिवार के प्रत्येक व्यक्ति से कम से कम।) के हिसाब से संग्रह करके अथवा अपने कोष से भेजने का निश्चय करके भिजवावें।

मन्त्री—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
देहली

विविध दान

२०) आर्य समाज गुना (ग्वालियर)
६) ,, ,, अलवर स्टेट
१०) ,, ,, कलां गिर (पटना स्टेट)
६॥=) ,, ,, ऊधमपुर (जम्मू स्टेट)
७) ,, ,, फीरोजपुर छावनी
१८) ,, ,, मन्दसौर
५) ,, ,, राजगढ़ (अलवर राज्य)
४॥) ,, ,, अकोट (बरार)
११) ,, ,, सुजानगढ़ (बीकानेर राज्य)
३) ,, ,, भेलसा (ग्वालियर राज्य)
१०॥) ,, ,, मिहम (रोहतक)

१००=) योग

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सखाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

Regd. NO. L. 4121

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	,,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।)
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	२)
(७) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(८) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,,	।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण	प०इन्द्रजी)	।=)
(१०) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(११) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	=)
(१२) वेद में असित शब्द	,	-)
(१३) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	-)
(१४) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	१)
(१५) विमान शास्त्र	,,	।=॥
(१६) नया संसार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≈)
(१७) मातृत्व की ओर ,	,, अ०	१।)
(१८) कथा माला	,,	॥।)
(१९) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म	,,	॥=)
(२०) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		२।)
(२१) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२२) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२३) विद्यार्थी जीवन रहस्य		॥)
(२४) उपनिषद् ईश ।≈) केन ॥) कठ ॥, प्रश्न ।=) मुण्डक ।≈) माण्डूक्य ≈), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		)
(२६) नारायण सुधा सजिल्द		१॥)
(२७) शहीदी पत्रिका		।=)
(२८) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(२९) हजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३०) बहिनों की बातें (प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न		१)
(३१) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी		॥।)
(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३३) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी		≡)
(३४) दयानन्द (कविता) प० यशदत्त त्यागी		=)
(३५) सत्यार्थ प्रकाश गान (प० सत्यभूषण जी यो ।)		-)
(३६) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौत)		॥=)
(३७) भारतवर्ष में जाति भेद	,	।)
(३८) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≡)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४०) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-)
(४१) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सङ्ग का कार्य क्रम		)
(४२) आर्यसमाज क्या है? (श्री नारायण स्वामी जी		॥=)
(४३) सरल सन्ध्योपासना		।)
(४४) भारतीय वाङ्मय के अमररत्न		-)
(४५) वेद सुधा (स्व० प० घासाराम जी		।)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥)
(४७) काया कल्प (प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)		।)
(४८) आर्यसमाज के नियमोपनियम		-॥


सार्वदेशिक

विषय-सूची

(ऋषियांक)

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २२ | अक्टूबर १९४६ ई० | कार्तिक २००३ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ८

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् ईशे हि शक्रस्तमूतये हवामहे जेतारमपराजितम्। स नः स्वर्षदति द्विषः क्रतुश्छन्द ऋतं बृहत्॥
सामवेद मं० सं० ६४६

शब्दार्थ—(हि) क्योंकि (शक्रः) सर्व शक्तिमान् परमेश्वर ही (ईशे) सब का स्वामी है इस लिये (ऊतये) अपनी रक्षा के लिये (अपराजितम्) किसी से भी न हारे हुए (जेतारम्) सब पर विजय करने वाले (तम्) उस परमेश्वर को (हवामहे) हम स्मरण करते हैं। (स) वह परमात्मा (न) हमें सब (द्विषः) द्वेष भावनाओं और नीच शत्रुओं से (सु अर्षत) अच्छी प्रकार पार कर दे। उसकी कृपा से हमारे (क्रतु) यज्ञादि शुभ कर्म, (छन्दः) वेद-ज्ञान और (ऋतम्) सत्य (बृहत्) वृद्धि को प्राप्त हों। विनय—हे सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर! हम अपनी रक्षा के लिये सदा आपको सच्चे हृदय से याद करते हैं क्योंकि अपनी अनन्त शक्ति के कारण आप किसी से पराजित होने वाले नहीं हैं। आप हमें सब द्वेष भावनाओं से सदा दूर रक्खें और ऐसी कृपा हम पर करें जिससे हमारे ज्ञान, सत्य और यज्ञादि शुभ कर्मों की सदा उन्नत होती रहे। महर्षि दयानन्द जैसे आपके आदर्श भक्त के चरण चिन्हों पर चल कर हम भी अपने जीवनों को पवित्र और सफल बनाएं।

वेदोपदेश
वीर भावना
अकेला दस हजार के बराबर हूं

(ले० —प्रो० रामनाथ जी वेदालङ्कार, गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी)

(१) अयुतो ऽहमयुतो म आत्माऽयुत मे चक्षुरयुत मे श्रोत्रमयुतो मे प्राणो ऽयुतो मे ऽपानो ऽयुतो मे व्यानो ऽयुतो ऽहं सर्वः ॥

(२) देवस्य त्वा सवितु प्रसवे ऽश्विनोर्बाहुभ्या पूष्णो हस्ताभ्या प्रसूत आरभे ॥

अथर्व० १६ । ५१ । १ २

अर्थ—(१) (अहम्) मैं अकेला (अयुत) दस हजार के बराबर हू, (मे आत्मा) मेरी आत्मा (अयुत) दस हजार के बराबर है, (मे चक्षु) मेरी आंखें (अयुतम्) दस हजार के बराबर हैं (मे श्रोत्र) मेरा कान (अयुतम्) दस हजार के बराबर है (मे प्राण) मेरा प्राण (अयुतः) दस हजार के बराबर है (मे अपान) मेरा अपान (अयुत) दस हजार के बराबर है (मे व्यानः) मेरा व्यान (अयुत) दस हजार के बराबर है (अह सर्व) मैं सारा का सारा (अयुत) दस हजार के बराबर हू।

(२) हे कर्म। (सवितु देवस्य) प्रेरक परमेश्वर की (प्रसवे) प्रेरणा से (प्रसूत) प्रेरित होकर मैं (अश्विनो बाहुभ्याम्) द्यावा पृथिवी के सदृश अपनी भुजाओं से और (पूष्णो हस्ताभ्याम्) पूषा सूर्य के से हाथों से (त्वा) तुझे (आरभे) प्रारम्भ करता हूँ।

जब मनुष्य किसी कर्म को प्रारम्भ करने लगे तब उसके अन्दर कैसी उत्साहयुक्त वीरोचित भावना होनी चाहिये यह इन मन्त्रों में बताया गया है। कई मनुष्यों की यह प्रवृत्ति होती है कि वे छोटा-बड़ा कोई भी कार्य प्रारम्भ करने लगें उनके अन्दर बड़ा ही निरुत्साह रहता है। छोटे २ कामों तक के विषय मे वे सोचने लगते हैं कि अरे, यह काम तो बड़ा कठिन है, मुझसे यह कैसे हो सकेगा, मै तो बड़ा अल्प शक्तिमान् हू, यह तो मेरे वश का नहीं है आदि आदि। असल मे उनके अन्दर ऐसे विचारों के आने का कारण यह नहीं होता कि उनमे उस कार्य को करने की शक्ति नहीं है, किन्तु ऐसे विचारों का एकमात्र कारण यही होता है कि उनके अन्दर मन्त्रोक्त वीर भावना नहीं होती। मन में ऐसी निरुत्साह की भावना रहते हुए कार्य सिद्धि नहीं हुआ करती। ससार मे अनेक वीर लोग अकेले ऐसे २ बडे काम कर जाते हैं कि दूसरे सौ या हजार व्यक्ति भी मिल जायें तो उस काम को न कर सकें। इसका रहस्य क्या होता है? क्या उनमें शरीर की शक्ति सौ या हजार के बराबर होती है? नहीं, शरीर में तो वे सब जैसे ही होते हैं, बहुत हुआ तो अन्यों की अपेक्षा कुछ थोड़ी सी अधिक शारीरिक शक्ति होती होगी, किन्तु उनका मनोबल, उनका उत्साह दस हजार को मात करने वाला होता है।

लोग बड़ी २ खोजें करने निकलते हैं, अपनी जान आपत्ति में डालने को तैयार हो जाते हैं, वह सब किसके बल पर? कोलम्बस वास्को-

डिगामा अपने आपको विपत्ति में डालकर हिन्दुस्तान की खोज करने निकले थे, किसके बल पर ? महर्षि दयानन्द सैकड़ों के बीच में अकेले "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का बीड़ा उठा कर चले थे, किसके बल पर ? वीर नेता जी सुभाष अगणित आपत्तियों का स्वागत करके हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र करने निकले किसके बल पर ? किसके बल पर यह लोग ऐसे-ऐसे बड़े कार्यों का बीड़ा उठाने को तैयार हो गये। क्या वे हम जैसे दो-दो हाथ-पैरों वाले मनुष्य नहीं थे ? मन का उत्साह ही उन्हें ऐसे बड़े कार्यों में प्रेरित कर सका। महात्मा गान्धी, वीर जवाहर जैसे नेता भारत से इतने बड़े ब्रिटिश साम्राज्य को उलट देने के लिये कटिबद्ध हैं, क्या उनके सौ-सौ हाथ हैं ? नहीं, उनका मनोबल इतना है कि वे उससे भी अधिक काम कर सकते हैं जितना काम सौ-सौ और हजार-हजार मिल कर करते हों। दिल में उत्साह की चिनगारी होनी चाहिये, फिर दुनियां के तख्ते पर कोई बड़े से बड़ा काम भी असाध्य नहीं है।

देखिये, उपर्युक्त मन्त्रों में एक वीर मनुष्य कार्य को आरम्भ करते समय कैसी उत्साह की भावना प्रकट कर रहा है। अरे, मैं एक नहीं, दस हजार हूं, दस हजार मिल कर जिस काम को कर सकते हैं उसे मैं अकेला कर लूंगा। मेरे अन्दर दस हजार के बराबर आत्म-बल है मेरी आंखों-कानों की शक्ति दस हजार के बराबर है, मुझ में प्राण-बल दस हजार है, मुझमें अपान-बल और व्यान-बल दस हजार है। क्या क्या गिनाऊं मेरे आंख, नाक, कान, मुख हाथ, पैर, मन, बुद्धि, आत्मा सभी दशसहस्रगुणित शक्ति से आपूरित हैं। मैं क्या नहीं कर सकूंगा ? कौन सा काम मेरे लिये भला असाध्य है ?

मैं इस महान् कार्य को आरम्भ करता हूं। जो सविता देव सब के हृदय में बैठा बड़े-बड़े कार्यों के लिये प्रेरित और उत्साहित किया करता है उस सविता भगवान् से मुझे प्रेरणा स्फूर्ति और उत्साह मिला है। इसलिये मैं इस महान् कार्य को आरम्भ करता हूँ। मत समझो कि मैं अपनी इन छोटी-छोटी भुजाओं से क्या कर सकूंगा। ये छोटी-छोटी भुजायें ही शक्ति में द्यौ और पृथिवी के बराबर हैं। मेरी एक भुजा द्यौ है तो दूसरी भुजा पृथिवी है, हाँ, हाँ, द्यौ और पृथिवी के बराबर मेरी भुजायें हैं। मत कहो कि इन छोटे छोटे बिलस्त भर के हाथों से मैं क्या कर सकूंगा। देखने में बिलस्त भर के होते हुए भी ये सूर्य के हाथों की तरह शक्तिशाली हैं। 'पूषा' सूर्य के कर जैसे चारों ओर फैले हुए विशाल अन्धकार को पल भर में एक तरफ समेट कर रख देते हैं और १०-१२ घन्टे के थोड़े से समय के लिये ही भूमण्डल पर आकर कितने २ कार्य सिद्ध कर जाते हैं, वैसे ही सक्षम और कार्यसाधक मेरे हाथ हैं। ऐसे विशाल हाथों से और ऐसी विशाल भुजाओं से तथा मन में ऐसे विपुल उत्साह को लेकर हे कर्म। मैं आज तुझे आरम्भ करता हूँ।

यह है वेदोक्त वीर-भावना। इस भावना से ओतप्रोत होकर जो कार्य आरम्भ करते हैं वे मार्ग में आने वाली सब विघ्न बाधाओं को चीरते हुए आगे बढ़ते चलते हैं और अवश्य ही कार्य सिद्धि तथा विजय-लक्ष्मी उन्हें प्राप्त होती है।

— —

अध्यात्म-सुधा

ध्यान भजन का आनन्द

(१)

बैठे भजन में देव के जब, तब समय का क्या पता।
आता मजा क्या भजन में है, कौन यह सकता बता ?
स्वाद क्या गुड़ का कहो बस, स्वाद लेकर जान लो।
प्रभु भजन का ध्यान का, आनन्द अनुभव से गहो ॥

(२)

ये तुच्छ दुनिया के मजे, उसके नहीं कुछ सामने।
है कौन जो भगवान के शुभ दिव्य गुण गण को गिने ?
उसमे लगाना मन विमल, आनन्द का यह मार्ग है।
क्लेश का ही मूल यह, लौकिक विषय से राग है॥

(३)

कस्तूरि मृग क्यों भागता यह जानने परिमल कहां।
यह जानता वह है नहीं, भीतर भरा परिमल यहां।
त्यों शान्ति सुख का मूल यह, भीतर हमारे भर रहा।
अज्ञान वश फिर भी जगत्, है भटकता यों फिर रहा॥

(४)

देव की करुणा हुई है, ज्ञान दीपक जल गया।
ज्ञानाग्नि मे अज्ञान तम, अरु शोक सारा जल गया।
आनन्दमय के ध्यान में ही, मग्न हू मै हो रहा।
उसकी कृपा से क्लेश का, अवशेष हू अब खो रहा॥

(५)

ऐसी कृपा निशिदिन करो, तुम को न मैं भूलू कभी।
लौकिक विषय ये तुच्छ तव, आनन्द के आगे सभी।
इन से सदा निर्लिप्त हो कर्तव्य का पालन करू।
आनन्दमय तव ध्यान धर, आनन्द से मन को भरू॥

"ध्रुव"

हमारा साहित्यिक ह्रास

[लेखक—श्री प्रो० महेशप्रसाद जी, हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस]

श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज ने सम्वत् १९२० वि० (स० १८६३ ई०) से प्रचार कार्य आरम्भ किया था और मृत्यु (सन् १८८३ ई०) तक इस कार्य को जारी रक्खा था। भली भाँति जाँच पड़ताल करने से यह नतीजा निकलता है कि इन बीस वर्षों में से पहले १२ वर्ष ऐसे थे जिन में उन्होंने मौखिक कार्य ही अधिक किया था और लिखित कार्य बहुत कम किया था जैसा कि ग्रन्थों के नाम व उनके रचना काल से स्पष्ट हो जाता है—

नाम	सम्वत् वि०
सन्ध्या	१९२०
पाखण्ड खण्डन	१९२३
अद्वैत मत खण्डन	१९२७
वेद विरुद्ध मत खण्डन	१९३१
शिक्षा पत्री ध्वान्ति निवारण	१९३१
सत्यार्थ प्रकाश (प्रथम)	१९३२
आर्याभिविनय	१९३२
संस्कार विधि (प्रथम)	१९३२
वेदान्त ध्वान्ति निवारण	१९३३
ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	१९३३
वेदों का भाष्य (आरम्भ)	१९३४
आर्योद्देश्य रत्न माला	१९३४
भ्रान्ति निवारण	१९३४
पंचमहायज्ञ विधि	१९३४
अष्टाध्यायी भाष्य (आरभ)	१९३४
वेदाङ्ग प्रकाश	१९३६-१९३९
भ्रमोच्छेदन	१९३७
सत्य धर्म विचार	१९३७
गोकरुणानिधि	१९३७
सत्यार्थ प्रकाश (द्वितीय)	१९३९
संस्कार विधि (द्वितीय)	१९३९

श्री स्वामी जी ने जो कुछ लिखा है अथवा उनके द्वारा जो लिखित कार्य हुआ है वह सब मेरे अनुमान से साढ़े नौ व छः इंच आकार वाले १५ हजार पृष्ठों में आवेगा। इनमें लगभग पन्द्रह सौ पृष्ठ ऐसा ठहरता है जो कि प्रथम बारह वर्षों की रचना है और बाकी पृष्ठ केवल पिछले आठ वर्षों का कार्य ठहरता है।

श्री स्वामी जी महाराज अन्तिम दिनों में किसी-किसी स्थान में बहुत ज्यादा ठहरे थे और वहाँ पर उन्होंने ठहर कर विशेष रूप से लिखित कार्य ही किया था— जैसे —

स्थान	आगमन	प्रस्थान
काशी	२० नवम्बर १८७९	५ मई १८८०
बम्बई	३० दिसम्बर १८८१	२४ जून १८८२
उदयपुर	११ अगस्त १८८२	१ मार्च १८८३
शाहपुर	८ मार्च १८८३	२६ मई १८८३
जोधपुर	३१ मई १८८३	१६ अक्टूबर १८८३

२९ सितम्बर को अन्तिम बार उन्हें जोधपुर में विष दिया गया था। उस समय तक उन्होंने वहाँ लिखित कार्य ही अधिक किया था। यदि और जीवित रहते तो लिखित कार्य ही अधिक करते कम से कम समस्त वेदों व वेदाङ्ग आदि शास्त्रों को हिन्दी में तो कर ही डालते।

अब प्रश्न उठता है कि श्री स्वामी जी महाराज

ने क्यों लिखित सामग्री की ओर विशेष रूप से अधिक ध्यान दिया था? मै तो उत्तर में यही कहूँगा कि श्री स्वामी जी महाराज समझते थे —

(१) जो आवाज उन्होंने उठाई है यदि उसे वह लिखित रूप मे न करेंगे तो वह भली भाति कोने-कोने मे न गूजेगी और न स्थायी रहेगी।

(२) कुछ ऐसी सामग्री का लिखित रूप में होना आवश्यक है जिससे उनको उठाई हुई आवाज यथोचित रूप से पुष्ट व लाभदायक हो।

श्री स्वामी जी महाराज ने जो आवाज उठाई थी उस के कारण कुछ लोग उनके अनन्य भक्त हो गये थे किन्तु विरोधी बहुत हो गये थे उनके समय में पुस्तकों के संग्रहालय ऐसे न थे जैसे कि आज सन् १६४६ ई० मे अनेक स्थानों में है फिर भी अनेक ग्रन्थों को प्राप्त करके बहुत कुछ लिखा था। आज बहुत लिखा जा सकता था परन्तु हम ने यथोचित रूप से उसकी ओर ध्यान ही न दिया संस्थाओं को ही सब कुछ अथवा बहुत कुछ समझा। इनके कारण आर्यसमाज की डुगडुगी खूब बजाई गई किन्तु लिखित (साहित्यिक) सामग्री के अभाव रखने में अधिकतर ढोल के पोल का मामला रहा।

आवश्यकता थी कि कम से कम यह हुआ होता.—

(१) वेदों व वेदाङ्ग आदि शास्त्रों का भाष्य केवल हिन्दी ही में नहीं बल्कि अनेक भाषाओं में हुआ होता।

(२) श्री स्वामी जी रचित ग्रन्थ आवश्यक टीका टिप्पणी सहित निकलते।

(३) श्री स्वामी जी महाराज ने २७ फरवरी सन १८८३ ई० को जो स्वीकार पत्र लिखा था उसमें उन्होंने अपना सम्पत्ति को जिन बातों में लगाने को लिखा था उनमें से प्रथम दो बातें यह हैं —

१ वेद और वेदादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने छपने छपाने आदि में।

२ वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत् के त्याग कराने आदि मे।

परन्तु श्री स्वामी जी महाराज के स्वीकार पत्र के अनुसार जो परोपकारिणी सभा अजमेर मे है। उसके विषय मे अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है।

साफ बात है यह कि यदि वह ठीक से काम करती तो आर्य समाज की दशा खराब न होती। परन्तु मैं यह भी देखता हू कि कुछ काम लिखित रूप में अन्य लोगों अथवा सस्थाओं आदि की ओर से हुआ है उसका भी उपयोग आर्यसमाज द्वारा नहीं हुआ और न उसके प्रचार की कोशिश अच्छे ढग पर आय समाज की ओर से हुई है —

१. स्वामी दयानन्द सरस्वती (अंग्रेजी में) श्री शिवनन्दन प्रसाद कुलयार कृत अच्छी पुस्तक है किन्तु बहुत से आय समाजी जानते भी नहीं। आर्य समाज के पुस्तकालयों में होना तो दूर की बात है।

२ आस्तिकवाद (हिन्दी) पर श्री गगाप्रसाद उपाध्याय जी को बारह सौ रुपया हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की ओर से पुरस्कार मिला। परन्तु क्या आय समाज के सभी पुस्तकालयों में

उसे मंगवाया गया है ?

३ श्री दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (हिन्दी) के कर्त्ता व प्रकाशक श्री० म० कृष्णचन्द्र विरमानी जी हैं। सन १६३३ ई० में प्रकाशित हुई है श्री महा० नारायण स्वामी जी ने इसकी प्रशंसा की है। 'सार्वदेशिक' में इसका विज्ञापन निकलता है किन्तु देखना चाहिए कि आर्य समाज के कितने पुस्तकालयों में है।

इस प्रकार की दर्जनों पुस्तकें हैं जिनका होना कम से कम आर्य समाज के पुस्तकालयों में आवश्यक था। किन्तु मेरे विचार में हमारे अनेक पुस्तकालय इनसे शून्य हैं।

दूसरी बात यह है कि कोई छोटा नगर भी सम्भवतः ऐसा नहीं जहां कोई पुस्तकालय जनता के निमित्त न हो।

और उसमें हिन्दी की पुस्तकें न मँगाई जाती हों। ऐसी अवस्था में हमारी ओर से उद्योग होना चाहिए था कि वहां आर्य सामाजिक साहित्य मँगाया जाता किन्तु ऐसा नहीं हुआ है अथवा बहुत कम हुआ है क्योंकि सार्वजनिक पुस्तकालयों में यदि मुझे आर्य सामाजिक ग्रन्थ मिले हैं तो बहुधा सत्यार्थ प्रकाश ही मिला है। अन्य ग्रन्थ एक—दो ही मिले हैं। प्रश्न उठता है कि इस प्रकार की उदासीनता क्यों ? मेरे विचार से बात यह है—कहीं स्कूल व कालिज के झंझट हैं। कहीं अनाथालय का प्रश्न टेढा है। कहीं विधवा आश्रम एक बखेड़ा खड़ा किए हुए है। कहीं औषधालय की उलझन है। कहीं इस बात का प्रश्न है कि आर्य समाज की सम्पत्ति को किराया पर देने या मरम्मत करने आदि का अधिकारी कौन रहे अर्थात् समाज में चौधरियापन किसका रहे—इत्यादि।

[श्री प्रो० महेशप्रसाद जी ने इस लेख द्वारा जिस विषय की ओर आर्य जनता का ध्यान आकर्षित किया है वह अत्यन्त आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। यह सचमुच खेद की बात है कि उत्कृष्ट साहित्य के निर्माण, उस के अध्ययन और प्रचार की ओर आर्य नर नारियों आर्य समाजों तथा अनेक सभा संस्थाओं का पर्याप्त ध्यान नहीं है। यदि प्रत्येक प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा अपने अधीन एक अनुसंधान और साहित्य निर्माण विभाग रखकर उसके कार्य को सुयोग्य विद्वानों की सहायता से चलाने की उचित आर्थिक व्यवस्था करे तो इस विषय की त्रुटि कुछ ही वर्षों में दूर हो सकती है किन्तु दुःख की बात है कि अभी तक इस ओर ध्यान बहुत कम दिया गया है हमें आशा है कि समस्त आर्यप्रतिनिधि सभाएं तथा आर्यसमाजें इस विषय के महत्त्व को समझती हुई उच्चकोटि के साहित्य के निर्माण और प्रचार विषयक व्यवस्था की ओर अब विशेष ध्यान देंगी।

सम्पादक सा० दे०]

हिन्दुओं का लगातार ह्रास और उस पर कुछ विचार

(लेखक—श्री पं० गङ्गाप्रसादजी एम ए रि चीफ जज् अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ)

सन् १९४१ ई० की मनुष्य संख्या की जो रिपोर्ट सरकार ने प्रकाशित की उसमें युद्ध और कागज की महगाई के कारण धर्म Religion और जाति Castes Tribes की सूचिया नहीं छापी गई। केवल एक छोटी सी जिल्द में मनुष्य सख्या को रिपोर्ट छापी गई। सन् १९३१ की मनुष्य संख्या की विस्तृत रिपोर्टों में इन विषयों की सूची व तालिका विस्तार के साथ दी गई थी इसलिये उनके सम्बन्ध में सन् १९३१ की रिपोर्टों ही से काम लिया जाता है।

सन् १९३१ की रिपोर्ट में पृ० ५१४-१५ पर भारत के मुख्य २ धर्मों के अनुयायियों की सख्या का विवरण इस प्रकार दिया गया है—

(१) हिन्दू ब्राह्मण (वा सनातनी)	
Brahmanic	२१,९३००,६४५
आर्य्य	९९०,२३३
ब्राह्म	५३७८
अन्य हिन्दू	१८८९८८८४
हिन्दुओं का योग	२३,९१,९५,१४०
सिक्ख	४३,३५,७७१
जैन	१२,५२,१०५
बौद्ध	१२,७८६,८०६
सब हिन्दुओं का योग	२४६०६९,८२२
(२) पारसी वा जर्दुश्ती	१०९,७५२
(३) मुसलिम	७७६,७७५,४५
(४) ईसाई	६२,९६,७६३
(५) यहूदी	२४,१४१
(६) आदिम जातिया Tribal Religions	लगभग २५००००००
(७) अन्य धर्म वा जिनका कोई धर्म नहीं लिखा गया	५७११८७
सर्व योग	३३८१,१९१५४

सन् १९४१ की मनुष्य सख्या की रिपोर्ट के पृ० ३० पर General Position अर्थात् सब धर्मों का अनुपात साधारणतया इस प्रकार होना लिखा है -

हिन्दू	६६ प्रतिशतक
मुसलिम	२४ ,,
ईसाई	१ ८ वा २ ,,
आदिम जातिया	६ ,,
अन्य धर्म	२ ,,

उसी पृष्ठ पर दलित जातियों Scheduled Castes की संख्या सब हिन्दुओं की संख्या का १/५ भाग और भारत के सब लोगों का १/९ भाग होना बतलाया गया जो लगभग ५ करोड़ होता है और पृष्ठ ५३४ पर ५०२५०३४७ लिखी है। दलित जातियों का नाम १९३१ की मनुष्य संख्या में Exterior Castes रक्खा गया है। उनकी प्रान्तीय सूचिया दी गई हैं जो हर प्रान्त में भिन्न २ हैं। युक्तप्रान्त की सूची में लगभग ७० जातियों के नाम हैं। सारे भारतवर्ष की सूची में जो पृष्ठ ४८२-८३ पर छपी हैं। लगभग २०० जातियों के नाम हैं।

आदिम जातियों का Primitive Tribes का अनुपात सारे भारतवर्ष में ६ प्रतिशतक बतया गया है। इस प्रकार उनकी सख्या लगभग

२॥ करोड़ होती है और १९३१ की रिपोर्ट पृष्ठ ५०२ पर २६७३५३३६ होनी लिखी है, परन्तु ५०७ पृष्ठ पर २४६१३८४८ लिखी है। इन जातियों की सूची रिपोर्ट के ऐपेंडिक्स २ Appendix में दी गई है जो ११ समूहों में लिखी गई है। इनमे कुछ जातिया या समूह ऐसे हैं जो कि दलित जातियों की सूची में भी पाई जाती हैं, जैसे भील, कोली आदि। रिपोर्ट मे यह स्वीकार किया गया है कि आदिम जातिया व दलित जातिया कुछ अ श में एक दूसरे को Overlap करती हैं अर्थात उनके ठीक २ विभाग नहीं हैं।

आदिम जातियों को सन् १९३१ व १९४१ दोनों मनुष्य संख्या की रिपोर्टों में हिन्दुओं की गणना से पृथक् रखा है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि आर्यसमाजों को छोड़कर अन्य हिन्दू उनके सुधार का कुछ यत्न नहीं करते, परन्तु मुसलमान और विशेषकर ईसाई उनको शिक्षा देकर अपने में मिलाने का उद्योग करते रहते हैं और उसमें सफल भी होते हैं जिसका परिणाम यह हुआ कि दलित जातियों की तरह आदिमवासी जातियों में से करोड़ों मनुष्य मुसलमान और लाखों ईसाई हो गये और होते जाते हैं शायद इसलिए सरकार उन जातियों पर हिन्दू मुसलमान और ईसाई तीनों प्रमुख धर्मों का समान अधिकार समझती है और उनको उसके लिए एक सी सुविधाएं देती है। बल्कि ईसाइयों को इस कार्य के लिए अधिक सुविधाए दी जाती हैं। थोड़ा ही समय हुआ मध्य-प्रान्त में सरकारी शिक्षा विभाग ने कुछ आदिम जातियों की शिक्षा का अधिकार पूर्णतया ईसाइयों को सौंप दिया था जिसके कारण देश भर के समाचार पत्रों में बहुत आन्दोलन हुआ था। सन् १९३१ और १९४१ दोनों मनुष्य संख्या की रिपोर्टों में यह स्वीकार किया गया है कि ये आदिम जातियां धीरे २ हिन्दू धर्म की ओर खिंचती जाती हैं इन जातियों के जो लोग ईसाई या इस्लाम मत में मिल जाते हैं वे तो स्पष्ट रूप से मुस्लिम या ईसाइयों में गिन लिये जाते हैं परन्तु शेष की गणना मनुष्य संख्या की रिपोर्ट में Primitive Tribes के नाम से हिन्दुओंसे अलग ही की जाती है जिसका एक राजनैतिक फल यह होता है कि मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दुओं की संख्या का अनुपात कम हो जाता है। वास्तव में इन सब जातियों की गणना हिन्दुओं में ही होनी चाहिए क्योंकि दलित जातियों के समान यह जातिया भी हिन्दुओं ही की बड़ी जाति के अन्तर्गत हैं।

बिहार और आसाम आदि कुछ प्रान्तों में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा या आर्य समाज की ओर से इन जातियों के सुधार के लिए प्रचार का कुछ विशेष प्रबन्ध है। मेरी सम्मति में अच्छा हो यदि सार्वदेशिक सभा दलित और हरिजन जातियों के सुधार की तरह आदिम जातियों (Primitive or aboriginal Tribes के उद्धार के लिए एक विशेष विभाग खोले और उनमें धार्मिक प्रचार और शिक्षा के लिए विशेष प्रचारक रक्खे। कार्य चलने पर धन आवश्यकतानुसार मिल ही जायगा। हिन्दू महासभा को भी इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। दलित और हरिजन जातियों के समान आदिम जातियों की समस्या भी हिन्दू जाति के एक प्रकार से जीवन और मरण का प्रश्न है।

पिछली मनुष्य संख्या की रिपोर्टों के मिलान

करने से पाया जाता है कि ईसाई और मुसलमानों की सख्या बराबर बढती जाती है और वह सख्या वृद्धि केवल साधारण कारणों से नहीं किन्तु अधिकतर मत परिवर्तन के कारण होती है और हिन्दुओं की सख्या प्रत्येक मनुष्य सख्या में पूर्व की सख्या से कम होती जाती है यद्यपि साधारण कारणों से सारे भारत वर्ष में पिछले १० वर्ष (१९३१-४१) में १५ प्रतिशतक और पिछले ४० वर्षों में ३७ प्रतिशतक सख्या में वृद्धि हुई। १९४१ की रिपोर्ट के पृष्ठ १०२ पर पिछली पाच मनुष्य सख्याओं के अङ्क दस सहस्र के अङ्कों में दिये गये हैं जो इन तीनों धर्मों के लिये इस प्रकार हैं।

(प्रान्तों की संख्याएँ) (Provinces)

	हिन्दु	मुस्लिम	ईसाई
१९४१	६५९३००००	२३८१००००	१६३००००
१९३१	६८२४००००	२२१६००००	१७९००००
१९२१	६८४१००००	२१७४००००	१५०००००
१९११	६९३१००००	२१२६००००	१२४००००
१९०१	७०३४००००	२१२२००१०	९९०० ०

रियासतों तथा एजेंसियों की संख्याएँ

(States and Agencies)

१९४१	७०५७१०००	१३९३००००	३१२००००
१९३१	७७७१००००	१३५००००	०७०००००
१९२१	७७४.००००	(३४३००००	.५०००००
१९११	७७७८००००	१३३१००००	२००१ ००
१९०१	७७७९००००	१३७६० ००	१६२००००

कुछ भोले भाले आर्य समाजी यह कहा करते हैं कि आर्य समाज के प्रचार ने हिन्दुओं के ईसाई और मुसलमान मतों में। जाने का द्वार बन्द कर दिया ऐसे लोग ऊपर दिये हुए अङ्कों को देखकर चौंकेंगे। उनसे स्पष्ट है कि पिछले चालीस वर्षों में (अर्थात् सन् १९०१ से १९४१ तक) जिस बीच आर्य समाज का प्रचार भी बराबर जारी रहा है भारतवर्ष में ईसाइयों की सख्या लगभग दूनी होगई और मुसलमानों की लगभग सवाई क्योंकि १९३१ में सारे भारतवर्ष में मुसलमानों की सख्या सात करोड़ छियत्तर लाख सत्तर हजार पाच सौ चालीस ७७६७७५४५ थी और सन् १९४ में ९,०० ५८०९६ होगई। यह ठीक है कि पौराणिक मत के अन्य विश्वासों और ढकोसलों के कारण जो लोग हिन्दुमत को छोड़ते थे उनकी सख्या कम हो गई परन्तु मत परिवर्तन का मुख्य कारण यह नहीं था किन्तु वह सामाजिक अन्याय और अत्याचार था जो हिन्दू जनता की ओर से शूद्रों पर किया जाता था और जो बहुत अंश में अब तक जारी है। (ऊपर जो ५०,५८ ३,७ सख्या दी गई वह केवल दलित जातियों की है जिनमे हरिजन भी शामिल हैं) जिन पर समाज का विशेष अत्याचार होता आया है परन्तु इनसे भी अधिक सख्या के ऐसे शूद्र लोग हैं जिनकी गिनती दलित जातियों Scheduled Class or Depressed Class में नहीं परन्तु उनकी गणना द्विजों में भी नहीं और वे शूद्र माने जाते हैं और समाज मे उनका उचित मान नहीं हो सकता चाहे वे विद्या और धन प्राप्त करके अपने को सम्मान के योग्य भी कर लेवें। इसका कारण जन्मगत Hereditary caste system जातिभेद की कुप्रथा है जिसने हिन्दू जाति को नष्ट भ्रष्ट कर दिया है। जबतक यह अस्वाभाविक और अन्यायपूर्ण प्रथा जड़मूल से नष्ट नहीं होगी हिन्दू जाति का उद्धार होना अस-

म्भव है। इसको दूर करने के अभिप्राय से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अनुमति से और उस की अध्यक्षता में हाल में जाति भेद-निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना की गई है जिसका कार्यालय अजमेर में है और जिसके सचालक श्री प० भद्रसेन आचार्य है। आशा की जाती है कि आर्य और विचारशील हिन्दु लोग भी इसमें सहयोग देकर भारत के उद्धार में सहायक होंगे।

[हम पाठक महोदयों से अनुरोध करते हैं कि वे इस लेख को ध्यान पूर्वक पढ़ें और वर्तमान जातिभेद की प्रथा का अनेक सामाजिक अनर्थों का मूल जान कर उस के विरुद्ध प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन करें। जातिभेद निवारक आर्यपरिवार संघ के नियमित सदस्य बन कर उस को अधिक शक्तिशाली और संगठित बनाना प्रत्येक समाज प्रेमी का कर्तव्य है। अविवाहित आर्य कुमार कुमारियों को अधिक से अधिक संख्या में इस आशय के व्रत पत्र भरकर भेजने चाहियें कि हम अपना विवाह जन्म गत जात तोड़ कर ही करेंगे। ईश्वर हमें इस व्रत के पालन करने की शक्ति प्रदान करें। संघ की सदस्यता का चन्दा ३) वार्षिक और संघ कार्य सचालनार्थ दान संघ कार्यालय में भेजना चाहिये। खेद है कि इस संघ को आर्य जनता का पूर्ण क्रियात्मक सहयोग यथेष्ट मात्रा प्राप्त नहीं हो रहा जिस की बड़ी भारी आवश्यकता है।

धर्मदेव वि० वा० सम्पादक सा० दे०
उपाध्यक्ष जातिभेद निवारक
आर्य परिवार संघ]

शंका समाधान

प्रश्नकर्त्ता—श्रीयुत संचालक जी श्री दयानन्द परिव्राजक मण्डल देहली।

[उत्तर प्रदाता—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी प्रधान सार्वदेशिक धर्मार्य सभा]

पहला प्रश्न

इदं शरणमज्ञानामिदमेवविजानताम्।

इदमन्विच्छतां स्वर्ग्यमिदमानन्त्यमिच्छताम्॥

(मनु अध्या श्लोक ८४)

ऋषि दयानन्द ने संस्कार विधि में, मनु के इस श्लोक को सन्यास प्रकरण मे लिखते हुये उसका अर्थ इस प्रकार किया है:० 'और जो विविदिषा अर्थात् जानने की इच्छा करके गौण सन्यास लेवे वह भी विद्याका अभ्यास सत्पुरुषो का संग योगाभ्यास और ओंकार का जप और उसके अर्थ परमेश्वर का विचार भी किया करे यही अज्ञानियो का शरण अर्थात् गौण सन्यासियों और यही विद्वान् सन्यासियो का और यही सुख की खोज करने हारे और यही अनन्त सुख की इच्छा करने हारे मनुष्यों का आश्रय है। यहां गौण संन्यासी की विधि क्या है किन किन चिन्हों को गौण सन्यासी धारण कर सकता है शिखा और यज्ञोपवीत गौण सन्यासी के लिये धारणीय है या नहीं ? इन बातो पर ऋषि दयानन्द ने कुछ प्रकाश नहीं डाला।

समाधान

मनु के उपर्युक्त श्लोक के शब्दार्थ इस प्रकार हैं "यह वेदाभ्यास (ब्रह्म के) न जानने वालों का और यही जानने वालों का आश्रय है। यह स्वर्ग और मोक्ष की इच्छा करने वाल को भी शरण है।" मनु के इस श्लोक में गौण और मुख्य सन्यास के भेदो का कोई वर्णन नहीं है। चूंकि यह प्रकरण संन्यास का था इस लिये ऋषि दयानन्द ने श्लोक में प्रयुक्त अज्ञानाम् शब्द के अर्थ ब्रह्म के न जानने वाले परन्तु जानने की इच्छा करने वालों के करते हुये उनका नाम गौण संन्यासी रख दिया है। ऋषि के प्रयुक्त इस गौण संन्यास का अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि जो व्यक्ति अपने गृहस्थ आदि के उत्तरदायित्व के कारण विधिपूर्वक सन्यास नहीं ले सकते परन्तु गृहस्थाश्रम क क्रियात्मक कृत्या स सर्वथा पृथक् और ब्रह्म के जानने के इच्छुक हैं तो उन्हें जहां वे हैं वहीं रहते हुये वेद का अभ्यास और सत्सग आदि कृत्य करने चाहिये। ऐसे ही व्यक्तियो को ऋषि दयानन्द ने गौण सन्यासी कहा प्रतीत होता है।

दूसरा प्रश्न

ब्रह्मचारी का केशो से कितना सम्बन्ध है वह जटिल हो वा मुंडो ? इस सम्बन्ध में अनेक प्रकार के श्लोक और मन्त्र मिलते हैं उदाहरण के लिये —

(१) मनु ने २। २१९ में 'मुंडो वा जटिलो वास्यादथवा स्याच्छिखाजट" अर्थात् मुंडित शिखावाला वा जटा युक्त ३ प्रकार में से ब्रह्मचारी कोई प्रकार रक्खे।

(२) यजुर्वेद १७। ४८ मे "विशिखा इव के अर्थ ऋषि दयानन्द ने "विगत शिखा विविध शिखा वा।" अर्थात् बिना चोटी के वा बहुत चोटियां वाले के किये हैं।

(३) ऋग्वेद में आये इस मन्त्र के भाष्य में विशिखाः इसका अर्थ विना शिखा वाला विवा

(४) फिर यजुर्वेद १६ । ५९ में आये 'विशिखासः' के अर्थ ऋषि दयानन्द ने शिखा रहित सन्यासी और 'कपर्दिनः' के अर्थ जटाधारी ब्रह्मचारी किये हैं।

(५) अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में ब्रह्मचारी के लिये मृगचर्म धारण करते हुये दाढी मूछ आदि वाला कहा जाता है।

समाधान

मनु ने जो ब्रह्मचारी के लिये वर्णन किया है कि उसे मुंडित शिखावाला वा जटायुक्त होना चाहिये। वेद के उपर्युक्त चारों प्रमाण इन्हीं तीन सूरतों के अन्दर आते हैं जिनका उल्लेख मनु ने किया है। मनु ने ब्रह्मचारी के ये तीन विकल्प क्यों दिये हैं इस का कारण ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश मे अंकित इस लेख से मिलता है कि यदि उष्ण देश हो तो चोटी तक कटवा दे इत्यादि। अर्थात् शीत ऋतु में बालों के बढाये रखने की उपयोगिता है परन्तु उष्णता प्रधान स्थानों में उन के कटवा देने की उपयोगिता है।

(२) संस्कार विधि के वेदारंभ संस्कार में ब्रह्मचारी को जो क्षौर न कराने का उपदेश है वह केवल फैशन वाले बालों के न रखने से सम्बन्धित है और यह उपदेश पिता का अपने पुत्र के लिये है।

इसलिये सिद्धान्त यही है कि ब्रह्मचारी यथा ऋतु अपनी इच्छानुसार चाहे मुंडित रहे, जटाजूट वा केवल शिखा वाला रहे।

जगत् को आर्यसमाज की क्या आवश्यकता है ?

(लेखक—श्री पं० सुधाकर जी सिद्धान्त विशारद बंगलौर)

(गतांक से आगे)

उच्च-नीच का भाव वर्ण-व्यवस्था में तिल भर भी नहीं है। वेदों का सन्देश हमने पहले ही सुनाया है और एक वैदिक आदेश सुन लीजिये—

"समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चो ऽग्निं सपर्यत ॥"

वेद बतलाता है कि हे मनुष्यो ! तुम्हारे कुओं पर सब का समान अधिकार हो। तुम्हारे अन्न-भोजन पर सबका समान अधिकार हो। मैं एक ही बन्धन में बांध देता हूँ। तुम सब इकट्ठे होकर उपासना किया करो।"

फिर वैदिक धर्म में भेदभाव को कहां जगह ? पर हाय री जाति ! तेरी भी अजब लीला है। ब्राह्मण अब्राह्मण के हाथ का नहीं खा सकता, विवाह सम्बन्ध तो दूर ही रहा और बेचारे हरिजन ! अभागे अस्पृश्य। उनके हाथ का खाना तो दूर, वे आपके तालाब और कुए का पानी तक नहीं छू सकते। फिर "समानी प्रपा" का गीत गाने वाले भी तो हम ही हैं। धर्म और मानवता की कैसी विडम्बना ?

मनुष्य-मनुष्य के बीच के भेदभाव ने संसार मे क्या-क्या विप्लव नहीं मचाया ? हमारे यहां छूत-अछूत का सवाल है तो कहीं हबशी गोरों का सवाल है, और कहीं सिमेटिक-साक्सन् का प्रश्न है। आर्य-समाज तो मनुष्य जाति को एक अखण्ड वस्तु मानता है। वेदों की आज्ञा तो यह है:—

उतदेवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः।
उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः ॥

"हे विद्वानो ! नीचे गिरे हुओं को पुनः ऊपर उठाओ। हे महात्माओ ! हे ज्ञानियो ! पाप के कारण मरे हुओं का सा जीवन व्यतीत करने वालों में नवीन जीवन उत्पन्न करदो।" आर्य समाज के नियमों को ह पढ़ लीजिये। सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना ही एक नियम बन गया है। यह है सच्चा भ्रातृभाव। यह है आर्यसमाज की बहुमुखी सेवाओं का रहस्य।

परन्तु कई विद्वानों के अभिप्राय में आर्य समाज संकुचित भावना बढ़ाने वाली संस्था है। हमने ऊपर जो दो सिद्धान्त रक्खे हैं, उनमें तो तंगदिली का कोई दृष्टान्त नहीं मिलता। स्पष्ट और निश्चित मन्तव्य का नाम ही अगर संकुचित मनोभाव है तो आर्यसमाज वास्तव में संकुचित मनोभाव वाली संस्था है। पर "सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करने के लिए सबको सदा उद्यत रहना चाहिये।" इस नियम के होते हुए आर्यसमाज कैसे संकुचित और अनुदार है, यह हमारी समझ में नहीं आता। अपनी विवेचना और विवेक के अनुसार निश्चित सिद्धान्त पर विश्वास करना और उसको प्रकाशित करना अगर संकुचित मनोभाव है तो संसार भर की सभायें इस पाप की भागी हैं।

आर्यसमाज को कई लोग इसलिए अनुदार समझते हैं कि वह अपने मत को ही सच्चा और

शेष सब मतों को झूठा समझता है और अन्य मतवालों को अपवित्र समझकर उनकी शुद्धि करने को दौड़ता है। उनका कथन है कि यह समन्वय का युग है और वही संस्था इस युग में जीवित रहने योग्य है जो सब मतों का समन्वय कर सकती है। आर्यसमाज समन्वय के महत्त्व को खूब समझता है और जहां समन्वय सम्भव है, वहां समन्वय करता भी है। आर्यसमाज ने षड्दर्शनों का समन्वय किया है, पर अगर असत्य को सत्य का अङ्ग विशेष मान लेना, पाप को पुण्य में अन्तर्भूत कर देना या जीव को ब्रह्म मे घोल कर मिला देना ही समन्वय है तो यह आर्यसमाज की शक्ति के बाहर है। जन्म-मूलक जाति पद्धति का उन्मूलन करके आर्यसमाज ने मानव जाति को एक बनाया, हजारों कल्पित देवी देवताओं को स्थानच्युत करके आर्यसमाज ने एक सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा की उपासना सिद्ध की—यह सत्य का कितना सुन्दर समन्वय है—यह तो देखिये।

और यह कहना कि आर्यसमाज अन्य सब मतों को झूठा समझता है, सर्वथा अशुद्ध है। इस आक्षेप का उत्तर महर्षि दयानन्द ने स्वयं दे दिया है। पादरी जोन्स ने महर्षि से पूछा था कि क्या सारे मत सत्य नहीं हैं? महर्षि ने स्पष्ट रूप से उत्तर दिया था कि यह बात ठीक है कि सब मतों में सत्य है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि सारे ही मत सत्य हैं। आर्यसमाज ठीक इसी प्रकार मानता है। सब मतों में जो सत्य है उसको आर्यसमाज ठीक ही सत्य मानता है और असत्य को असत्य ही। आर्यसमाज इतना उदार है कि उसके लिये न कोई अपना है न कोई पराया। वह जिस प्रकार इस्लाम और ईसाइयत की समीक्षा करेगा, ठीक उसी ढंग से हिन्दू मत की भी समीक्षा करके छोड़ेगा। लेकिन इस उदारता को समझने के लिए गम्भीर चिन्तन की जरूरत है।

शुद्धि की बात भी लीजिये। हम में अनुदारता कहाँ है? शुद्धि के कारण आर्यसमाज को ईसाई और मुसलमान संकुचित या अनुदार नहीं कह सकते, क्योंकि वे खुद इस प्रकार की अनुदारता की स्पर्धा में आर्य समाज से बाजी मार ले जा रहे हैं। यह बात तो सिर्फ हिन्दू ही कहते हैं। अब उन को सोचना चाहिये कि आप जिस को पवित्र धर्म समझते हैं, उसे औरों को भी देने में उदारता है या स्वार्थियों की तरह अपने लिए ही छिपाये रखने मे? अब रह जाते हैं स्वतन्त्र विचारक'। उन का सिद्धान्त ही स्वतन्त्रता का सिद्धान्त माना जाता है। जैसे वे अपनी इच्छानुसार अपने कर्त्तव्यों और मन्तव्यों का निर्णय करते हैं, वैसे अन्यों को भी करने देना चाहिये। तब सिर्फ आर्यसमाजियों ने ही क्या पाप किया है कि उन्हें इस स्वय प्राप्त अधिकार से वञ्चित किया जाय? यदि आर्यसमाजियों की विचार-स्वतन्त्रता उन से यह माँगती है कि दुनियाँ भर के लोगों को अपने साथ मिला लेना तुम्हारा कर्तव्य है, नहीं तो तुम स्वार्थी कहलाओगे, तो उन्हें आर्यों को शुद्धि कार्य का अनुष्ठान क्यों न करना चाहिये? हाँ; यदि अपनी संस्था को विस्तृत करते हुए हम असत्य, अन्याय, प्रलोभन, हिंसा आदि निन्दित साधनों का प्रयोग करेंगे और धन या सत्ता के बल से अपने अवैज्ञानिक विचारों को अनिच्छु प्रजाओं पर लादेंगे तो, आर्यसमाज सचमुच घृणा के योग्य

बन जाता है। पर मेरा विश्वास है कि आर्य-समाज के बडे से बडे शत्रु भी आर्य समाज के सिर ऐसे दोष नहीं मढ़ेंगे। क्योंकि जगत् जानता है कि आर्य समाज मतान्ध उन्मत्तों का सङ्घ नहीं; "स मे श्रद्धा च मेधा च जातवेदा प्रयच्छतु।"– इस प्रकार की वैदिक प्रार्थना करने वाले जिज्ञासुओं का मण्डल है। हम परमात्मा से विनय करते हैं कि भगवन्! हमें श्रद्धा दीजिये और साथ २ मेधा भी दीजिये। हम सत्य में, और ईश्वर में श्रद्धा तो चाहते ही हैं, पर वहीं रुक नहीं जाते। सत्यासत्य निर्णय करने के लिए मेधा अर्थात् धारणावती बुद्धि का भी आश्रय लेते हैं। और आर्य समाज का इतिहास जिन्होंने पढ़ा है, वे जानते हैं कि आर्यों ने अपने पवित्र धर्म के प्रचार के लिये हमेशा अपना ही खून बहाया है, किन्तु किसी पर आज तक तलवार नहीं चलायी है।

अब खण्डन मण्डन के बारे में भी एक शब्द कह दूँ। आर्य समाज के सिद्धान्तों को ठीक माननेवाले सज्जनों में भी कई ऐसे लोग हैं, जो आर्य समाज की खण्डन-प्रणाली से प्रसन्न नहीं है। मैं स्वयं यह नहीं मानता कि खण्डन सत्य प्रचार का सर्वोत्तम मार्ग है। मेरी भी यही धारणा है कि सत्य पर अमल करने से जनता पर जो प्रभाव पड़ेगा, वह अन्य मतीय सिद्धान्तों का खण्डन करने से नहीं पडेगा। क्योंकि, ऋग्वेद स्वयं कह रहा है—

अधा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर॥

"हे सर्वरक्षक सर्वशक्तिमान् परमात्मा! हमारी वाणियाँ पीछे से सुनी जायँ। पहले तो जगत् हमारे आचरण को देखे। हमारे कर्म, हमारे जीवन ऐसे पवित्र हों कि उन्हें देख कर ही दुनियाँ समझ जावे कि हम क्या कहना चाहते हैं। हमारे जीवन उपदेश-प्रधान न हों; कर्म प्रधान हों। हमारे उपदेश तो उपश्रुति ही हों, केवल स्पष्टीकरण के साधन हों।" यह अत्यन्त स्पष्ट आदेश है। इस के सांचे में अपने जीवन को ढाल लेना प्रत्येक आर्य का प्रथम कर्तव्य है।

फिर भी इस का मतलब यह नहीं है कि हम असत्य और अन्याय के सामने भी चुप्पी साधे रहें। अज्ञानियों के सामने अपने हृद्गतों के प्रकाशन में हमें अपनी 'जिह्वा' का उपयोग करना चाहिये। वेद मे अन्यत्र कहा भी है —

आ हि रोहेममममृतं सुखं रथं
अथ जिर्विर्विदथमावदासि ॥

'ऐ विद्वान्! तू इस ज्ञानमय नित्य सुखकारी रथ पर चढ़ और वृद्धावस्था तक सत्य की घोषणा करता हुआ विचरण कर।" वेद बतला रहा है कि जिह्वा का भी अपना स्थान है। स्वय ज्ञानयुक्त हो कर सत्य के प्रचारार्थ वाणी का प्रयोग न करेंगे तो वह धार्मिक प्रथा नहीं होगी। सत्य के स्थान पर असत्य विराजमान हो तो उस को स्थानच्युत करने के लिये असत्य का स्वरूप और उस से उत्पन्न होनेवाली हानियों का स्पष्ट शब्द-चित्र जनता के सामने रखना ही पड़ता है। विपक्षी का अधिकार है कि वह 'इसे खण्डन' कहा करे। असत्य का खण्डन तो होना ही चाहिये। मगर द्वेष भाव से नहीं पियक्कड़ को यह कहना कि तेरा यह शराब पीना अच्छा नहीं, उसकी दृष्टि से खण्डन ही कहलायेगा। पाप को कहना उतना ही न्याययुक्त है, जितना कि सत्य को सत्य कहना। यह ठीक है कि खण्डन हमेशा विनाशात्मक और

अनियंत्रित धर्म प्रचार का विनाश होगा। लेकिन हमें यह हमेशा स्मरण रखना चाहिये कि हम कहने से पहिले करके दिखायें। स्वयं सन्ध्या और हवन न करने वाला उपदेशक लोगों के सामने सन्ध्या और हवन का महत्व कितने ही जोरदार शब्दों में क्यों न समझावे, वह व्यर्थ में ढोल ही पीटता रहेगा। मुझे मद्यपान निषेध में अभिरुचि रखने वाले एक संन्यासी की याद अपने आप हो आती है। वे शाम को पांच बजे अपने बन्द कमरे में बैठ २ अफीम मौज से खा लेते कभी २ दो एक बोतल ताडी की चुस्की लेते। फिर छः बजे अपने चार्ट्स वगैरह लेकर मजदूरों के बीच में चले जाते और मद्यपान की हानियों पर घण्टों तक खींचें मारा देते। परिणाम जो होना था, वह होता। लोग कहते—'हम ने इस बाबा को खुद ताड़ी लाते देखा है।' हम करनी और कथनी में अन्तर रखेंगे तो हमारी यही हालत होनी है।

अब समाप्ति पर आ रहा हूं। मैं ने अन्य सिद्धान्तों में केवल दो ही आप के सामने रखे हैं। आज तक हजारों देवी देवताओं की पूजा हो ही है अभी तक भारत वर्ष और सारा भूमण्डल केवल व्यक्ति पूजा में उलझ रहे हैं। अभी तक मतान्धता नहीं मिटी है ईश्वर विषयक भ्रम दूर नहीं हुए हैं। जातिभेद और वर्णभेद पूर्व की अपेक्षा अधिक ही हुआ है। अस्पृश्यता हमारे बीच में आजतक जिंदा है भले ही उन अभंगों को हरिजन कह पुकार। हिन्दू मुसलमान ब्राह्मण अब्राह्मण कृष्ण श्वेत यह झगड़ा जोरों पर है। स्त्री जाति की पराधीनता, बाल विवाह, वृद्धविवाह, बहु पत्नीत्व, अज्ञान अविद्या कहाँ तक गिनायें, सभी आज वर्तमान हो रहे हैं। मैं समझता हूँ कि एक सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा की परिशुद्ध उपासना और जीवात्माओं की पारस्परिक बन्धु भावना इन दोनों की सहायता से हम दुनिया को बदल सकते हैं। आर्यसमाज इन दो साधनों को हमारे हाथ में रखता है। इसी लिये मैं कहता हूं कि जगत को आर्यसमाज की आवश्यकता है। अज्ञानी लोग भले ही आर्यसमाज को भला बुरा कहें, पर आर्यसमाजियों का तो कोई भी दुश्मन नहीं है। क्योंकि एक आर्य की तो आखिर यही प्रार्थना है—

ओ३म् दृते दृंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

'परमात्मन्! सारे जीवधारी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें। मैं भी सारे जीवों को मित्र दृष्टि से ही देखा करूं।' चलिये, आप की दुश्मनी की आंख ही फूट गई है। आप के कोई शत्रु नहीं हैं? पर साथ ही वेदवाणी के इस आदेश को भी स्मरण रखें—

'मा नः शंसो अररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य।'

परमेश्वर! अज्ञान से हम को शत्रु समझने वाले विपक्षी और हमारे ... ऐसे विपक्षियों का नाश तो हम चाहते नहीं हमारी मांग केवल इतनी ही है कि उन मर्त्यों की धृति अर्थात् विद्वेष की भावना का नाश हो जाय।' इस प्रार्थना के अनुसार चलकर आप को विपक्षियों का दिल जरूर बदलना चाहिये ताकि वे भी आप के मित्र बन जायें। अन्यथा आप की प्रार्थना का कोई महत्व नहीं रहेगा क्योंकि वह ईश्वर से वंचना कर रहा है—

"यदन्तरं तद्बाह्यं यद्बाह्यं तदन्तरम्।"

"जीवात्मन्! याद रक्खो कि तुम्हारे अंदर जो है, वही बाहर रहे; और बाहर जो है, वही अंदर रहे।" मुँह पर तो प्रार्थना के शब्द रहें और अंदर तदनुसार वर्तने की चिन्ता न रहे तो आप आर्य न बन सकेंगे।

अब इस वैदिक प्रार्थना के साथ अपने इस लेख को समाप्त करता हूँ।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समान मस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

"परमात्मा की कृपा से आप लोगों की संस्था समान हो; आप लोगों के हृदय समान हों; आप लोगों के मन समान हों, जिससे आप की उन्नति होवे।"

॥ ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

The Arya Samaja

BY PT GANGA PRASADJI UPADHYAYA M A

The Great Arya Samaja movement was started by Swami Dayananda Saraswati in April, 1875. Thus it is now full 71 years old In this three quarters of a century it has gained a wide popularity There are more than two thousand Arya Samajas in India, besides many more in Burma, Mauritius, Africa, South America and some in the West Indies In India, those who claim to be the adherents of the movement and got themselves registered as such in censuses are as follows :—

Year	Males	Females	Total
1881	Not	Recorded	
1891	22,624	17,328	39,952
1901	52,031	40,388	92,419
1911	137,580	105 865	243,445
1921	259,885	207,693	467,578
1931	547,964	442,-69	990,233

In 1941, separate figures were not recorded, though according to the rough calculation of the Arya Samajists, even modest conjectures exceeded 5 millions Latest press reports announce fifty thousand Arya Samajists in South and North America and neighbouring islands In the United Provinces the number of the Arya Samajas affiliated to the Arya Pratinidhi Sabha (Provincial Representative Assembly) is between 600 and 700 This shows that the Arya Samaja is a living and growing body and the steadiness of its growth is a sure index to its utility and longevity

The seed of the movement was sown in the mind of Mulshankar (Swami Dayananda's original pre-Sanyasa name) as long ago as 18 8 when he was but a young lad of 13. On the Shivaratri day (dedicated to god Shiva) when he was keeping a vigil in his village Temple Tankara (Gujrat), he saw a rat climbing audaciously on the idol of god Shiva and eating whatever sweets were presented to it The young worshipper was set a-thinking. Can this be the real God who could not check even a rat ? He wakes his father, who lay dosing under the weight of midnight slumber and puts the same question to him. What could the father do but to scold the lad for heretic doubt But scolding would not do The seed of the great movement was sown that very night and got its nurture from subsequent events. We leave

small details. The father proposed to cure the over in-quisitiveness of the young lad by marrying him early and the son, foreseeing the trouble, outmanoeuvred his father by leaving away from home and dedicating his whole life to the search of truth. For years he wandered hither and thither without any solace to his hungry soul till he came at Muttra to a blind recluse Swami Virajanda by name, who like himself had been fighting against orthodoxy for years, though not very successfully owing to physical disabilities. Swami Dayananda readily became his disciple and was astonished to learn that idolatory was a sin according to the Vedic teachings and that Hindu pantheon was anti Vedic and therefore sinful. After studying Vedic lore for a few years at the feet of this physically blind *guru* and being exhorted by him to preach pure Vedism Swami Dayananda girt up his loins, held religious discussions with orthodox pundit and finding them hopelessly prejudiced, started the new movement which is the subject in this article.

The Arya Samaja is a religious movement. It aims at re-establishing pure Vedism purging the prevailing Hindu religion of its anti Vedic excrescences making it fit for the whole world, irrespective of casts, colour, nation or race. Religion (Sanskrita Dharma) was for Swami Dayananda a very comprehensive term. It covered all the departments of life, secular and spiritual. As defined by sage Kanada (and quoted by Swami Dayananda) religion is that which is conducive to worldly prosperity and ex-worldly bliss. There is no wide gulf between this world and the world beyond. There is a continuity in life. It is a Sansara Chakra or cosmic circle without beginning and without end. The most developed soul is that which realises this fact and moulds its doings accordingly.

The starting front of Swami Dayananda's philosophy is not God, but the soul. He believed in the eternal, intelligent and all governing Spirit. But he did not believe that God was the only reality and the world and human or animal souls were unreal. What is, is real, what is not, is unreal. Reality admits of no degrees. 'Less real' and 'more real' are meaningless terms. How can the unreal come out of the real? And how can the real come out of the unreal? Just as God is eternal, so are the souls

and so is materia radica or root matter (Sansakirta Prakriti) The matter *is* but is inert The souls *are* and they are conscious and dynamic Their finite nature compels them to need the help of the matter and God God is Infinite Intelligent, Blissful and All governing He creates the world not out of Himself but out of the eternal matter, for the sake of the souls wherein they might work and evolve their potentalities God needs nothing for Himself He is self sufficient Why should He create souls or matter or anything else if He is the only eternal Being and nothing exists but Himself? Nor is the world a deception, a dream, a product of nescience One pure, intelligent and self sufficient God would not stoop so low as to play the juggler and inflict deception upon poor souls He is the provider and the governor of those souls which depend upon Him not for their origin or existence but for their development His governance is absolutely selfless He does nothing for Himself and everything for the souls He is no tyrant but a guider and helper The souls are free to act without any reservation But they should bear in mind that as they sow so they should reap Free to sow, but their reaping is determined by their sowing.

This [illegible] has [illegible] the philosophy of Swami Dayananda, the philosophy of the Vedas, the Vedanta the Upanishads and other vedic Scriptures This sounds most revolutionary different from the accepted beliefs of the Vedanta or Hinduism different from Shankara, different from Ramanuja, different from many teachers modern or medieval But Swami Dayananda has proved with convincing arguments that this was the philosophy of all ancient sages from Brahma down to Jaimini

Swami Dayananda divides religious scriptures into two classes The one of the Primary Authority, the four Vedas (Rig, Yaju Sama and Atharva) which were revealed by God in the beginning of the universe The other, the discourse of the sages like the Brahmans, the Aranyakas and the Upanisads, and the six Darshanas which are of secondary authority, i e, they are an authority only so far as they are consistent with the Vedas The six darshanas, according to Swami Dayananda, are not six schools of philosophy as they are commonly regarded but six books belonging to one and the same Vedic school, supplementary to each other and dealing with the different aspects of the same reality

So many differences in the present Hindu religion, according to Swami Dayananda, may be ascribed to misguided and misguiding comment

any set political views upon its members. But it has political ideals. Swami Dayananda has given his views on politics in the sixth chapter of the *Satyartha Prakash* They are against despotic government Swaraja or self-government is the ideal. In his opinion no good government can be a substitute for self government. He was against mob rule A certain amount of moral and intellectual culture is necessary to make individuals or nations fit to govern themselves It is always the moral that counts. Speaking of political downfull of India he says in the book referred to above that in order to achieve political freedom Indians should improve their knowledge and morals. Ignorance and evils born of ignorance must go if we want to achieve any solid and lasting success

The inner working of the Arya Samaja provides an opportunity for training in the virtue last mentioned. The Arya Samaja is cent per cent a people's organisation Every adult, male or female, of whatever colour, birth or position, provided that he or she satisfies certain constitutional qualifications, has a right to exercise his vote in the management of the society. Its character is most representative. The so many Arya Samajas are not the branches of a root Samaja. They are independent units following certain uniform principles formulated with common consent and changeable with common consent. Every Samaja elects its office bearers for its management, and returns representatives to the provincial bodies called the Arya Pratinidhi Sabhas which in turn send representatives to the Central Assembly called the Sarvadeshika Sabha or the International Aryan League. Thus it is a solid pyramid with a broad base.

Let us conclude this article with a very brief account of the achievements of the Arya Samaja so far made The first and formost is the love for Vedic Culture and Vedic Studies. A band of Arya Samaja workers have been constantly busy with most arduous task of salvaging the Vedic lore from under the d bris of a series of linguistic and religious earthquakes The Vedas were till recently a matter of archeological interest only. The Arya Samaj has discovered in them an element of enduring utility.

The educational social work of the Arya Samaja is too well known. Wherever the Arya Samajic influence predominates, there you will find a network of colleges, high schools, Gurukulas, Girls Path-shalas, Depressed class schools etc.,

etc Widow remarriage, abolition of early marriage, social reconstruction, and, over and above, an eagerness for social reform are the things for which the Arya Samaja may proudly take all credit Many of the activities now carried on by several agencies in India were originally pioneered by the Arya Samajists.

(New Horizons)

स्थितप्रज्ञ महर्षि दयानन्द

(१)

स्थित प्रज्ञ का ऋषिवर तुमने शुभ आदर्श दिखाया था।
धर्म न छोड़ा तुमने इसके लिये जहर तक खाया था॥

(२)

लौकिक इच्छाएं सब तज कर तुम थे आत्माराम बने।
परमेश्वर में स्थित हो तुमने शाश्वत सुख को पाया था॥

(३)

दुःखों में तुम नहि घबराये सुख की चाह न मन में की।
क्रोध राग भय रहित महामुनि, की सुस्थिति को पाया था॥

(४)

नहीं मोह था प्रिय अप्रिय से तुम विचलित नहीं होते थे।
सर्व अवस्था में सम रहना यह तुमने सिखलाया था॥

(५)

राग द्वेष रहित इन्द्रिय से, तुमने अद्भुत कर्म किये।
आत्म संयमी शान्त दान्त बन, तुमने विश्व उठाया था॥

(६)

मन को कर एकाग्र योग, से सत्य शान्ति को पाया था।
स्थिर कर बुद्धि तथा चित निश्चल सारा दुःख भगाया था॥

(७)

जिन आध्यात्मिक विषयों में जन लौकिक नित ही सोते है।
उनमे जागृत रह विषयों का लौकिक काम मिटाया था॥

(८)

सर्व कामना त्याग स्वार्थमय तुम थे निःस्पृह विचर रहे।
निर्भय निरहङ्कार तुम्हीं ने शान्त्यानन्द उठाया था॥

(९)

ब्राह्मी स्थिति यह जिसको पाकर मोहित विज्ञ न होते हैं।
अन्तकाल भी इसमें स्थित हो अमर धाम तुम पाया था॥

(१०)

दीपावलि के शुभ अवसर पर धर्म वेदि पर दे बलिदान।
कर्म योगिवर तुमने जग में शाश्वत पद को पाया था॥ "देव"

साहित्य समीक्षा

[समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी चाहियें।

वैदिक वीर गर्जना—लेखक श्री प० रामनाथ जी वेदालङ्कार वेदोपाध्याय गुरुकुल विश्व विद्यालय कांगड़ी जिला सहारनपुर मूल्य ।।।=)

इस अत्युत्तम पुस्तक में श्री पं० रामनाथ जी वेदालङ्कार ने वीर भावना वर्धक १०२ वेदमन्त्रों का अर्थ सहित शृङ्खलाबद्ध संग्रह किया है जिन्हें वीर भावना, उद्बोधन और वीरता की उमङ्ग में इन तीन भागों मे विभक्त कर दिया गया है। वेदों के उपदेश कितने स्फूर्तिदायक तथा नवजीवन का संचार करनेवाले हैं यह इस पुस्तक के पाठको को भली भाति ज्ञात हो जाएगा। वर्तमान संकटमय काल में जब कि आर्य धर्म, आर्य संस्कृति और भाषा पर चारों ओर से आक्रमण किये जा रहे हैं आर्य कुमारों और कुमारियों, युवकों और युवतियों तथा अन्य सब में इन वैदिक वीर भावनाओं के भरने की अति विशेष आवश्यकता है। आर्य वीर दल के प्रत्येक सदस्य को भी इस पुस्तक की १ प्रति अवश्य रखनी चाहिये। हम भाई रामनाथ जी का इस अत्युत्तम संग्रहात्मक कृति के लिये अभिनन्दन करते हैं और आशा करते हैं कि समस्त आर्य जगत् में उन की इस पुस्तक का यथेष्ट प्रचार होगा। पुस्तक लेखक महोदय के पते और सार्वदेशिक सभा से मिल सकती है।

पाकिस्तान—लेखक-डा० सूर्यदेव जी शर्मा एम. ए. एल. टी, डी. लिट् और श्री ओंकार नाथ श्री दिलकर बी. ए. आनर्स। प्रकाशक-साहित्य निकेतन, अजमेर मूल्य २)

'पाकिस्तान' का नारा जब से मि जिन्ना के सभापतित्व में मुस्लिम लीग ने लगाना शुरु किया है तब से यह एक अत्यावश्यक विषय बन गया है और प्रत्येक राजनीति के विद्यार्थी तथा अन्य राष्ट्रीयता वादो भारतीय के लिये इस विषय से पूर्णतया परिचित होना अत्यावश्यक हो गया है। 'पाकिस्तान' के विरुद्ध व्याख्यान दे देने की बात अलग है उसविषयक पूर्ण योजनाओं को जानते हुए उस की युक्ति युक्त आलोचना पृथक् वस्तु है। 'सार्व देशिक' के पाठक श्री डा सूर्य देव जी एम. ए, डी. लिट् से भली भांति परिचित हैं जिनके पाकिस्तान समस्या विषयक अनेक उत्तम लेख सार्वदेशिक मे प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होने तथा उन के सहयोगी श्री ओंकार नाथ जी ने 'पाकिस्तान योजना का इतिहास, पाकिस्तान की विभिन्न योजनाएं' पाकिस्तान के पक्ष विपक्ष में युक्तियां, दो राष्ट्रों का सिद्धान्त, पाकिस्तान पर राजनीतिज्ञों के विचार, कांग्रेस में पाकिस्तान में विचार इत्यादि १३ अध्यायो में इस विषयक प्रामाणिक ग्रन्थ तय्यार करके समस्त देश प्रेमी भारतीयो का बड़ा उपकार किया है। ऐसे ठोस साहित्य की इस समय बड़ी आवश्यकता है। सुप्रसिद्ध प्रवासी नेता श्री स्वा० भवानी दयाल जी सन्यासी पूर्व प्रधान नेटाल इन्डियन् कांग्रेस ने २२ पृष्ठों की बड़ी महत्वपूर्ण प्रस्तावना लिखी है जिस में पाकिस्तान योजना के इतिहास पर बड़ा उत्तम प्रकाश डाला है। हम इन तीनो महानुभावों के परिश्रम का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए सब राष्ट्र भक्तो ही नहीं किन्तु मुस्लिम लीगियो से भी इस उत्तम ग्रन्थ के निष्पक्षपात अध्ययन का

अनुरोध करते हैं। प्रत्येक सार्वजनिक कार्य कर्ता के पास तो इस की १ प्रति अवश्य होनी ही चाहिये यह लिखने की आवश्यकता नहीं।

ऋषि चरित्र-प्रकाश—लेखक श्री गङ्गाराम जी बी. एस. सी. उपमन्त्री हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा प्रकाशक-धर्म ग्रन्थ प्रकाशक सङ्घ हैदराबाद (दक्षिण) पृष्ठ ७० मूल्य ।।।)

श्री गङ्गाराम जी ने हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा के अधीनस्थ शिक्षा केन्द्रों के विशेष उपयोग के लिये यह ऋषि दयानन्द जी का जीवन चरित्र बड़े परिश्रम से तय्यार किया था जिस में ऋषि के जीवन की मुख्य २ घटनाओं को सरल और प्रभावजनक शैली में वर्णित किया गया है और उनके सब ग्रन्थो के विषय में थोड़ा २ परिचय देते हुए अन्त में 'भावुकों के भाव' इस शीर्षक से नेता श्री सुभाषचन्द्र जी, महात्मा गान्धी जी, कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर, श्री अरविन्द घोष, सर सय्यद अहमदखां, रहीम आदा साफाई, डा. ऐनी बीसेन्ट,दीनबन्धु ऐन्ड्रूज, डा. अरुण्डेल आदि सुप्रसिद्ध महानुभावों की महर्षि दयानन्द के प्रति अर्पित श्रद्धाञ्जलियों का संग्रह किया गया है। हमें यह जान कर बड़ा ही आश्चर्य और खेद हुआ कि ऐसे अत्यन्त उपयोगी और निर्दोष सरल ग्रन्थ को हैदराबाद सरकार ने जब्त कर लिया है। कई बार ध्यान पूर्वक इसके अनेक आवश्यक अंगों को पढ़ने पर भी हमे इस छोटी सी पुस्तक में कोई ऐसी बात नहीं मिली जो परस्पर विद्वेषवर्धक वा राजद्रोहात्मक कही जा सके ऐसी अवस्था में इसे जब्तकरके हैदराबाद सरकार ने अपने कठमुल्लापन का परिचय दिया है ऐसा हमें स्पष्ट प्रतीत होता है।

ध. दे.

दयानन्दाष्टक

(कवयिता-श्री नवमीलाल देवजी वैद्य डालटनगंज (बिहार)

(१)

वेद का महत्त्व सत्य धर्म बतलाया 'देव, देश में चलाया फिर शुद्धि के रिवाज को।
दलित अनाथ और गौओं का उद्धार किया, राखा आर्य धर्म तथा विधवा की लाज को।
देश को जगा के स्वर्ग आप तो सिधार गये, प्रतिनिधि छोड़ा निज आरज समाज को।
बाल ब्रह्मचारी सर्व त्यागी सत्य व्रतधारी, कोटि धन्यवाद दयानन्द ऋषि राज को॥

(२)

ऊँच नीच भेद मिटा समता संचार किया, गले से लगाया 'देव' दलित समाज को।
पोपगढ़ ढाह डारे वञ्चक पाखण्डियों के, यवन ईसाई से हटाया साज बाज को॥
नारियों की हीन दशा अक्षर विहीन लख, सम अधिकार दिया महिला समाज को।
भारतीय सभ्यता औ संस्कृति की राखी शान, कोटि धन्यवाद दयानन्द ऋषि राज को॥

(३)

भूले स्वाभिमान परतन्त्रता के पाले पड़े सुखद स्वराज भूले धारणा स्वछन्द की।
धीरता गंभीरता सुवीरता विवेक भूले साहस तपस्या त्याग भक्ति ऋषि वृन्द की॥
सभ्यता स्वसंस्कृति स्व वेष भाषा भाव भूले भूले राजनीति विद्या परम आनन्द की।
सेवा संगठन सत्य धर्म ब्रह्मचर्य 'देव' वैदिक व्यवस्था मत भूलो दयानन्द की॥

(४)

लूटती थी सदा गैर कौम हिन्दू संतति को देश में मची थी धूम मिथ्या मजहब की।
अगणित नारी नर हरत विधर्मी 'देव' हिन्दुओं की दीन दशा देती दुख तब की॥
ग्राम उप ग्राम सब ठौर दंभ छद्मद्दू से माया फैलने लगी थी पादरी साहब की।
हिन्दू संगठन वेद धर्म के उद्धार हित आते दयानन्द न तो शिखा जाती सब की॥

(५)

देश में अविद्या की घटाएं चहुँ दिशि रही लेता था न सुधि कोई भारत सन्तान की।
ऐसे दुष्काल माहि आये दयानन्द ऋषि सर्वत्र फैलाई ज्योति वेद भगवान की।
मातृ बलि वेदी पर सर्वस्व चढ़ाई भेंट चाह नहीं राखी दारा सुत वित्त मान की।
दलित अनाथ धेनु विधवा का राखा मान महिमा महान् दयानन्द भगवान की॥

(६)

नाना देव वाद जड़ पूजा की मिटाई रीति निश्चय कराई भक्ति प्रभु सुख कन्द की।
वीरता गंभीरता औ क्रान्ती का पढ़ाया पाठ भीरुता भगाई फूट नीति छल छन्द की॥

सत्य का संदेश दिया भारत निवासियों को एकहु न चली नीति धूर्त मति मन्द की।
कोविद सुकवि 'देव' बके गुणगान करि कौन कहे महिमा महान दयानन्द की॥

(७)

शक्ति हीन जाति को किया था मत वादियों ने फूट की विशाल वेलि बढ़ी दुख वृन्द की।
देश में अनेक मत पन्थ उप पन्थ बने, जड़ जमने लगी थीं मतवादी वृन्द की॥
हुई थी हजारों उपजाति एक जाति माहि, छुआछूत भूत ने प्रगति सारी मन्द की।
देखि दयनीय दशा ऋषियों की सन्तति की समुदित हुई 'देव' ज्योति दयानन्द की॥

(८)

पाप ने पसारा था सर्वत्र पाश भारत में, धर्म वर्ण आश्रम की रीति नीति बन्द की।
होता था महान अपमान आर्य जातियों का, कूटनीति फैली थी अनेक फर फन्द की॥
राम कृष्ण शंकर की भूमि परतन्त्र थी और बढ़ने लगी थी 'देव' संख्या जयचन्द की।
परतन्त्र भारत के पाश काटने के हेतु, देश में पधारी दिव्य मूर्ति दयानन्द की॥

आर्य कुमार जगत्

वार्षिक निर्वाचन

आर्य कुमार सभा-अजमेर का वार्षिक निर्वाचन ता० ३० सितम्बर सन् १९४९ को श्रीमान् डा० सूर्यदेव जी शर्मा सिद्धान्त शास्त्री के सभा पतित्व में हुआ। पदाधिकारियों की शुभ नामावली इस प्रकार है:—

संरक्षक	श्रीमान् रायबहादुर पं० मिट्ठनलाल जी भार्गव
"	" कर्मवीर पं० जियालाल जी
संचालक	" डा० सूर्यदेवजी शर्मा M A.,L T, सि० शास्त्री
प्रधान	" मा० छोटेलाल जी B.A C T
उपप्रधान	" प० रामचन्द्र जी उपाध्याय
"	" प० ब्रजनन्दन जी B A.C T
"	" पं० रमेशचन्द्र जी शास्त्री
मन्त्री	" निगमचन्द्र सिद्धान्त शास्त्री
उपमन्त्री	" संतोषचन्द्र जी कोटिया
"	" जयकिशन जी
"	" विजयेन्द्रदत्त जी
कोषाध्यक्ष	" मा० मुन्नालालजी गौड़ B.A C.T
पुस्तकाध्यक्ष	" मा० आशाराम जी गुप्त
दलपति	" मा० श्यामलाल जी
आडीटर	" मा० सत्यदेव जी शर्मा

इस वर्ष कुमार सभा के लगभग ५०० सदस्य हैं।

निगमचन्द्र सिद्धान्त शास्त्री
मन्त्री, आर्य कुमार सभा
—अजमेर

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्--परीक्षाविभाग

नम्र निवेदन

श्रीयुत मान्यबन्धुवर, नमस्ते!

समाचार पत्रों द्वारा कदाचित आपको यह विदित हो ही चुका होगा कि अखिल भारतवर्षीय आर्यकुमार सम्मेलन भरतपुर के अवसर पर भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं का कार्यभार मेरे निर्बल कन्धों पर डाल दिया गया है। यद्यपि अब से ६ वर्ष पूर्व भी मैं ही इन परीक्षाओं का मन्त्री था और चार वर्ष तक मैंने इस कार्य को सम्भाला था। उसका अनुभव मेरे पास है तो भी मैंने आप भाइयों के सहयोग और सहानुभूति के आधार पर ही एक बार फिर परीक्षा-मन्त्री बनना स्वीकार कर लिया है। आशा है प्रभु की कृपा और आपके सहयोग से मैं इस कार्य को सफलता पूर्वक निभा सकूंगा।

गत वर्षों में परीक्षा कार्यालय देहली में रहा और श्री पं० देवव्रत धर्मेन्दुजी ने परीक्षा-मन्त्री का कार्य बड़ी उत्तमता से किया लेकिन अन्त के ६ महीनों मे उनके त्याग-पत्र दे देने के कारण परीक्षा-कार्य मे कुछ गड़बड़ी रही। कुछ केन्द्रों में समय पर परीक्षा-फल नहीं पहुचा और प्रमाण-पत्र तो अब तक नहीं पहुच सके थे। केन्द्रों से अनेक सज्जनों ने और भी अनेक प्रकार की शिकायतों के पत्र मेरे पास लिखे हैं। यद्यपि मेरा इन बातों के लिये उत्तरदायित्व न होते हुये भी मैंने यथाशक्ति शिकायतों का समाधान किया है तो भी इस सब के, लिए मुझे और परीक्षा-समिति को खेद है।

यद्यपि मैं मई मास में ही परीक्षा-मन्त्री निर्वा-

चित हो चुका था, फिर भी डाक हड़ताल तथा अन्य कई कारणों से परीक्षाओं का पिछला सामान (परीक्षा-फल के रजिस्टर आदि) १६ सितम्बर तक मेरे पास देहली से नहीं आ सका, इसलिए प्रमाण-पत्रों के तैयार करने में भी देर हुई। अब परीक्षा कार्यालय की सब व्यवस्था मैंने यहां अजमेर में ठीक करली है और मैं विश्वास दिलाता हूँ कि अब किसी सज्जन को किसी प्रकार की शिकायत का अवसर नहीं होगा। समस्त केन्द्रों में नवीन पाठ विधि भेजी जा चुकी है और आवेदन-पत्रों के स्थान पर एक सूची भेजी जा रही है। परीक्षार्थियों की सूची पूरे शुल्क सहित ३० नवम्बर से पहले मेरे पास आजानी चाहिए। परीक्षाएं १९ और २६ जनवरी सन् १९४७ को होंगी। आशा है आप अधिक से अधिक छात्र इन परीक्षाओं मे बैठाकर धर्म प्रचार के इस महान् यज्ञ में हमारे सहायक बनेंगे।

आपका आर्य बन्धु

सूर्यदेव शर्मा

एम. ए., डी. लिट्, सिद्धान्तशास्त्री

परीक्षा मन्त्री—

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद्

अजमेर.

पंजाब आर्य युवक परिषत् का अष्टम वार्षिकोत्सवः—

यह वार्षिकोत्सव बड़े धूम धाम से दयानन्द विद्यामन्दिर लाहौर में १२, १३ अक्टूबर को मनाया गया। इस अवसर पर निम्न सम्मेलन निम्न महानुभावों के सभापतित्व में हुए।

कवि सम्मेलन—प्रधान—कवि विनोद श्रीयुत ठाकुरदत्त जी 'अमृतधारा'

आर्य युवक सम्मेलन—श्रीयुत खुशहाल चन्द्र जी 'आनन्द' प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा।

आर्य साहित्य सम्मेलन—माननीय श्री चौ० लहरीसिंहजी उन्नति मन्त्री पंजाब सरकार

आर्य राजनैतिक सम्मेलन—श्रीयुत म० कृष्ण जी मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

आर्य वीर सम्मेलन श्री देवीचन्द्र जी एम. ए हुशियारपुर।

इन सम्मेलनों के अतिरिक्त १२ और १३ अक्टू० को २ से ४ बजे तक परिषत् के कार्य कर्त्ताओं की आवश्यक बैठकें श्री देवीदयाल जी के सभापतित्व में हुई जिस में स्थानीय सज्जनों, प्रतिनिधियों और प्रिन्सिपल बाली जी आदि के अतिरिक्त पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति कार्य-कर्त्ता प्रधान अखिल भारतीय आर्य कुमार परिषद् ने भी परिषत् के भविष्य कार्य क्रम के विषय में निर्देश दिये। यह प्रसन्नता की बात है कि पं० धर्मदेव जी की प्रेरणा से न केवल पंजाब युवक परिषत् ने अ० भा० आर्य कुमार परिषत से पूर्ववत नियमित सम्बन्ध रखना और उसके समस्त आदेशों को मानना स्वीकार कर लिया है बल्कि आगामी वर्ष (सन १९४७) अखिल भारतीय आर्य कुमार सम्मेलन के अधिवेशन को लाहौर में करने का भी निश्चय कर लिया है। आर्य भाषा प्रचार, आर्य वीर दल, जातिभेद निवारणादि विषयक जो प्रस्ताव इस सम्मेलन में स्वीकृत हुए उन्हें तथा उत्सव के उल्लेखनीय वृत्तान्त को अगले अङ्क में प्रकाशित किया जाएगा।

मन्त्री पंजाब आर्ययुवक परिषत्

ऋषि दयानन्द जी की जन्मतिथि
तथा
आर्यावर्त्त और विन्ध्याचल-निर्णय

(लेखक—पं० इन्द्रदेवजी आर्योपदेशक चेंगनूर- ट्रावन्कोर)

गत चैत्र मास में जब इधर ट्रावन कोर (केरल) में श्री शिवचन्द्र जी आये थे उस समय मैंने आप से कहा था कि अभी आर्य समाज के ऊपर महर्षि का महान् भार अवशेष है, ऋषि के लिखे ग्रन्थों के स्पष्टी करण के लिये एक बड़ी भारी आवश्यकता है, ऐसे कई संदिग्धस्थल हैं जिन का भाष्य न किया जावे तब तक ठीक समझ में भी नहीं आ सकते हैं। उदाहरणार्थ नीचे लिखे दो एक संदिग्ध स्थलों को दिखाता हूः—

आर्यावर्त्त की सीमा, विन्ध्याचल का निर्णय

तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्त्तं विदुर्बुधाः। मनु०

"हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं उन सबको आर्यावर्त्त ... "कहते हैं।"

ऋषि दयानन्द

इसी को अमर कोश में इस प्रकार कहा है:—

आर्यावर्त्तः पुण्यभूमिः मध्यं विन्ध्यहिमालयोः।

स्वामी जी के कथनानुसार सारे भारतवर्ष का नाम ही आर्यावर्त्त है परन्तु जनश्रुति के अनुसार उत्तर भारत का नाम ही आर्यावर्त्त है दक्षिण भारत का नाम द्रविड़ देश है। इस भूमण्डल में भूरिपक्ष मनुष्यों का ऐसा ही विचार है। इन दोनों में कौनसा ठीक है इस का निर्णय करने के लिये आगम प्रमाण ही प्रबल हैं। अत मनु और अमरसिंह का एक मत होने से हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य का देश ही आर्यावर्त्त है। विन्ध्याचल आज कल नर्मदा नदी के तट पर मध्यभारत में होने से उत्तर भारत का नाम आर्यावर्त ठीकसिद्ध होता है। जब यह विचार ठीक है तो क्या ऋषि दयानन्द का किया हुआ मनु-श्लोक का अर्थ और उनके विचारानुसार समग्र भारत का नाम आर्यावर्त्त अशुद्ध है? परन्तु अशुद्ध नहीं। विन्ध्याचल का होना रामायण के अनुसार दक्षिण समुद्र के पास सूचित करता है तथा लंका का डूब जाना और बंगाल की खाड़ी कभी भूमि भाग था ऐसा सिद्ध होता है एवं पाताल देश लंका के दक्षिण में एक महा द्वीप था जो कि समुद्र में डूब गया है इत्यादि अनेक विषय बाल्मीकि रामायण से सूचित होते हैं जिन के ऊपर फिर विस्तार पूर्वक लिखूंगा। देखिये, रामायण में विन्ध्याचल—

दक्षिणस्योदधेस्तीरे विन्ध्योऽयमिति निश्चितः।

वाल्मी० रामा० किष्कि० ६०। ७

इसी विन्ध्य को अमरसिंह ने अपने कोश में लिखा है न कि आज कल नर्मदा के तट पर मध्य भारत वाला विन्ध्य।

इस भेद के तीन कारण ही हो सकते हैं:—

१ भूमि भाग का समुद्र में डूब जाना और उसके स्थान पर उसी नाम का दूसरा स्थान और कहीं कल्पना कर लेना यथा श्री कृष्ण जी की भी द्वा... में द्वारिका तो समुद्र में डूब गई है ऐसी जन श्रुति है ही तथा लंका देखो।

भागवत में यह प्रमाण है:—

जम्बूद्वीपस्य च राजन् उपद्वीपनष्टौ। तद्यथा— स्वर्णप्रस्थ, चन्द्रशुक्ल, आवर्त्तनो, रमणको, मन्दिर हरण', पाञ्चजन्य', सिंहलो, लङ्केति।

भागवत ५। २६, ३०।

इस श्लोक अनुसार सिंहल नहीं, परन्तु आज कल भारत के दक्षिण रामेश्वर के पास वाले द्वीप को ही कोई २ सिंहल, कुछ मनुष्य लंका नाम से पुकारते हैं। वास्तव मे यह द्वीप मैनाक द्वीप है जहां हनुमान् विमान द्वारा लङ्का जाते समय विश्राम के लिये उतरे थे। पाञ्चजन्य द्वारिका का ही नाम मालूम होता है।

२ ऐतिहासिक प्रसिद्ध तीर्थस्थान यदि दूर हो तो सुदूरनिवासी सुगमता के लिये उसी तीर्थस्थल की स्थापना, और उस नगर का नाम आदि भी पास वाले किसी योग्य भूमि पर स्थापना कर लेते हैं यथा-उत्तर काशी, मथुरा, इत्यादि दक्षिण वालों को दूर होने से दक्षिण वासियों ने दक्षिण काशी, मथुरा आदि की स्थापना की है।

३ विजेता विजित जाति को सदा दास बनाने के लिये उस जाति के साहित्य को गदा कर देते हैं।

हो सकता है प्रथमकारण वशात् दक्षिण का विन्ध्य समुद्र मे डूब जाने से नर्मदा तटीय अस्त-वान् पर्वत को ही विन्ध्य कहने लगे हों। अंग्रेजों की कुचक्र गति ने भी आर्यों को मिटाने में कोई कमी नहीं की है इन्होंने आर्यवर्त्त को दो भागों में बाटने के लिये विन्ध्याचल को ही दक्षिण से उड़ा कर मध्य में बिठाल दिया। शायद इसी को ही अलकार में मनुष्यों ने कहना शुरू किया कि पहाड़ उड़ा करते थे। आर्य साहित्य में (अंग्रेजों-के आने से पहले) मध्य भारत में विन्ध्याचल के होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

कुछ भी हो विन्ध्याचल दक्षिण समुद्र के पास था, ऐसा ही आर्य ग्रन्थों में प्रतिपादित है उसी के अनुसार महर्षि मनु का अर्थ करते हुये आर्यावर्त्त की सीमा दक्षिण समुद्र तक स्थापित की है अर्थात समग्र भारत का नाम आर्यावर्त्त है तथा था, यही मानना उचित है।

उत्तर भारत को ही आर्यावर्त्त मानना आर्यावर्त्त को आर्यों से आधा छीनना तथा आर्यों का बाहर से आकर इस देश में बसना सम्पूर्ण राजनीतिज्ञों की चालें हैं और ये चालें ही हों तब तो कुछ भी नहीं वाल्मीकि जैसे महर्षियों को भी मूर्ख सिद्ध करके आर्य साहित्य को गन्दा करना है क्योंकि विन्ध्याचल मध्य भारत में आ जाने से रामायण की सगति ठीक नहीं लगती है उसी प्रकार इस केरल में स्थित मलय को भी उड़ा कर सह्याद्रि कहते हैं। उत्तर केरल में मैसूरराज्य के पश्चिम में एक चोटी का नाम मलयगिरि रख छोड़ा है। सह्याद्रि बम्बई प्रदेश के पर्वतों का नाम है। केरल के उत्तर मध्य पर्वतों का नाम मलायाचल और दक्षिण पर्वतों का नाम माहेन्द्र है जिसको अंग्रेजों ने 'कार्डममक' नाम रख छोड़ा है, 'कार्डममक' क्या है? यहाँ के निवासी जानते ही नहीं हैं।

ये सब दूषण आर्य संस्कृति के नाशक हैं इन भूगोल सम्बन्धी सब विषयों को फिर किसी लेख में लिखूंगा यहां प्रसंग वशात् स्वामी जी के ग्रन्थों में दो एक सदिग्ध स्थलों को दिखाया है इस प्रकार के अनेक सन्दिग्ध विषय हैं। अस्तु;

इत्यादि चर्चा के पश्चात् मैंने श्री शिवचन्द्रजी

से कहा था कि ऋषि की जन्म तिथि का निर्णय भी किसी ने नहीं किया है परन्तु मुझे गौरव है कि मैं इस कृत्य में सफल हुआ हू जो कि सक्षेप में इस प्रकार है:—

(महर्षि की जन्म तिथि)

"मैं स्वामी दयानन्द सक्षेप से अपना जन्म चरित्र लिखता हूं । सं० १८८१ के वर्ष में मेरा जन्म हुआ था । माता पिता ने बुला के विवाह की तैयारी की तब तक २१ वा वर्ष पूरा हो गया ।

एक मास में विवाह की तैयारी भी हो गई। फिर गुप चुप सं० १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के शाम के समय भाग उठा ।"

'स्वरचित दयानन्द चरित्र'

स्वामी जी का गृहत्याग १९०३ में तथा जन्म १८८१ में स्पष्ट है ही और गृहत्याग में तथा २१ वर्ष आयु पूर्तिकाल में एक मास का अन्तर है यदि जन्म १८८१ के आदि वा मध्य में हो तो १ मास जोड़ने से गृहत्याग १९०३ में बनता नहीं अतः सिद्ध होता है कि जन्म १९०३ आरम्भ होने से पहिले १ मास के अन्दर ही हुआ है जो कि फाल्गुन मास है ।

स्वामी जी का जन्म नाम 'दयाराम" है, उपनाम मूलशकर है । प्राय माता पिता मूल नाम को छोड़ उपनाम ही अधिक बुलाया करते हैं नक्षत्र विचार से नाम दयाराम रखा था परन्तु शैव होने के कारण माता पिता मूलशकर नाम से बुलाने लगे । ऋषि का नाम दयाराम भी था इस विषय में ऋषि की भगिनी प्रेमबाई देवचन्द वणिक, तथा प्राणलाल शुक्ल का एक मत प्रतीत होता है जो कि सत्य है क्योंकि इसी नाम के अनुसार ही अपना नाम 'दयानन्द' रखा । जो कि बहुधा सन्यासी अपने जन्म नाम के साथ ही आनन्द जोड़ लिया करते हैं ।

अत' दयाराम नाम होने से नक्षत्र विचार अनुसार कुम्भ राशि और पूर्वा भाद्रपद का तृतीय चरण है जो कि फाल्गुन मास में एक ही बार है फाल्गुन शुदी प्रतिपदा को ।

अतः ऋषि का जन्म उत्तरायण फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा कुम्भ राशि पूर्वा भाद्रपद के तृतीय चरण में १८८१ वि० में हुआ । लग्न निर्णय फिर करेंगे । तदनुसार १९ फरवरी १८२५ शनिवार जानना चाहिये । अगले लेख में 'श्री दयानन्दाब्द' का निर्णय लिखूगा जिस का उपयोग मै ो वर्ष से कर रहा हूँ ।

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएं

आवश्यक विज्ञप्ति

२ तथा ३ नवम्बर सन् १९४७ को कराची में आर्य महा सम्मेलन होना निश्चित हुआ था। सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध जो मुस्लिम लीग सरकार ने डिफेंस आफ इंडिया रूल्स के अनुसार लगाया हुआ था वह अपनी अवधि समाप्त होने पर खतम हो चुका था। इस समय कराची की ऐसेम्बली टूट जाने के कारण वहां नये सिरे से चुनाव का प्रबन्ध हो रहा है। पूज्य प्रधान महोदय सार्वदेशिक सभा और राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री ने कराची पहुंच कर वहां की वर्तमान अवस्था को जांचा और वहां के सब आर्य हिन्दू कांग्रेसी तथा मुसलमान ऐसेम्बली के निर्वाचन के काम में इतने लगे हुये हैं कि वे इस समय और रफ ध्यान नहीं दे सकते। वहां के सब आर्य जनों तथा हिन्दुओं ने जिस में कांग्रेसी भी शामिल हैं बहु पक्ष से यह निश्चय किया कि इस समय सत्यार्थ प्रकाश पर पहली लगी पाबन्दी खतम हो चुकी है। अतएव चुनाव तक कोई दूसरा ऐसा काम न किया जाये जिससे गवर्नमेंट को पुनः सत्यार्थ प्रकाश पर पाबन्दी लगाने का मौका मिले। इन हालात को सन्मुख रखते हुये यही उचित समझा गया कि २। ३ नवम्बर को होने वाली आर्येन कांग्रेस चुनाव होने की समाप्ति तक स्थगित कर दी जावे।

ऐसोसियेटिड प्रेस ने समाचार पत्रों द्वारा खबर दी कि सत्यार्थप्रकाश के १४ वें समुल्लास पर पुनः पाबन्दी लगाई गई है। परन्तु दूसरे फ्रि प्रेस जर्नल प्रेस के सम्वाददाता ने खबर दी कि सिन्ध सरकार के चीफ सेक्रेटरी ने बयान दिया है कि सत्यार्थप्रकाश पर अभी तक कोई पाबन्दी नहीं लगाई गई।

यह सभा इस विषय में सिन्ध प्रान्त की प्रतिनिधि सभा से पूछ ही रही थी कि हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्वाददाता ने यह खबर भेजी कि सत्यार्थप्रकाश पर क्रिमिनल लौ ऐमेन्डमेंट ऐक्ट की धारा ९९ ए के अनुसार पाबन्दी लगाई गई है।

इस समय तक सार्वदेशिक सभा ने देश में शान्ति के प्रश्न को सन्मुख रखते हुए सरकार के गैरकानूनी आर्डर को चेलेंज करने के लिये कोई कदम नहीं उठाया है। लेकिन अब जब कि मुसलिम लीग की वजारत ने अदूरदर्शिता से काम लेकर सत्यार्थप्रकाश पर पुनः प्रतिबन्ध लगा दिया है। अब किसी अवस्था में भी आर्य जनता इसकी अवहेलना नहीं कर सकती।

अतएव इस समस्त स्थिति पर विचार करने के लिये सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग तथा सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति का एक अधिवेशन ३ नवम्बर को दिल्ली में बुलाया जा रहा है। जो कुछ उसमें निश्चय होगा उस की सूचना समय पर आर्य जनता को देदी जायेगी।

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, देहली।

पूर्वी बंगाल का रोमांचकारी पैशाचिक काण्ड

आर्य जनता से सहायतार्थ अपील

गत १० अक्टूबर से पूर्वी बंगाल के नोआखाली, त्रिपुरा आदि प्रदेशों में मुस्लिम लीगियों

के विषमय सगठित प्रचार के परिणाम स्वरूप मतान्ध मुस्लिम गुण्डों द्वारा लूट-मार अग्निकाण्ड, हिन्दू पुरुष-स्त्रियों और बच्चों की क्रूर हत्या, कई हजार हिन्दुओं को जबर्दस्ती क्रूर हत्या का भय दिखा कर उनका धर्म परिवर्तन कराना, महिलाओं और कन्याओं का बहुत बड़ी सख्या में अपहरण और उनसे बलात् विवाह या व्यभिचार इत्यादि के रोमाञ्चकारी हृदय द्रावक समाचार पढ़कर कौन सा सहृदय व्यक्ति है जिसका दिल न दहल गया हो। स्टेट्समैन जैसे मुस्लिम पक्षपाती पत्र के विशेष संवाददाता की सूचनानुसार भी "पूर्वी बंगाल में मुस्लिम गुण्डों की हिंसात्मक कार्य का लगभग ४०० ग्रामों और डेढ़ लाख व्यक्तियों बाहियों पर प्रभाव पड़ा है। इस गड़बड़ी का मुख्य उद्देश्य जबरन् धर्म परिवर्तन तथा स्त्रियों का विशेषतः लड़कियों का अपहरण है।" नोआखाली जिला के टोबगा नामक ग्राम से एक सवाददाता ने सूचित किया है कि '१० अक्टूबर की रात को हम सबने इस्लाम ग्रहण कर लिया इस क्षेत्र के चतहिल, रामपुर, इमघोलिया आदि ग्रामों के सब व्यक्तियों ने इस्लाम स्वीकार कर लिया है। मुस्लिम गुण्डों की एक भीड़ पहुंची तथा हमें इस्लाम ग्रहण करने का अल्टिमेटम दिया गया अन्यथा हम सब को जीवित जला दिया जाएगा यह धमकी दी गई। उस भीड़ ने यह भी बताया कि हमें एक सप्ताह में इस मुसल्मान बनाने के कार्य को तमाम नोआखाली मे पूरा करना है।" ऐसी ही कार्यवाही सैंकड़ों स्थानों पर की गई।

आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता के मन्त्री महोदय ने १८-१०-४६ के पत्र में इस सम्बन्ध में लिखा है कि अब पूर्वी बंगाल में नोआखाली त्रिपुरा आदि जिलों में गावों के गांव जला दिये गये हैं। जिस ने इस्लामग्रहण किया उनको मुसलमान बना लिया और बाकी की हत्या कर दी गई। हिन्दू त्राहि २ कर रहे हैं। वहां फ़ीसदी केवल १४ हिन्दू और ८६ मुसलमान हैं। मुसलमान संगठित दल २०, २५ हजार का बनाकर मार्च कर रहे हैं। रास्ते में जो २ ग्राम मिलते हैं उनमें हिन्दुओं की हत्याकर उनके घरों को जला दिया जाता है। अब तक यह दल सैंकड़ों ग्रामों, हजारों हिन्दुओं को बर्बाद कर चुका है और अब चान्दपुर की ओर बढ़ता जा रहा है। अभी तक हमारा अनुमान है कि ५०००० हिन्दुओं को मुसलमान बना लिया १५००० के करीब हत्याएं कर दी गईं और सैकड़ों ग्राम तबाह कर दिये।" इस गुण्डाशाही को तुरन्त रोकना बगाल सरकार, वायसराय और अन्त—कालीन राष्ट्रीय सरकार का कर्तव्य था किन्तु यह दुःख की बात है कि उन्होंने अपने इस विषयक कर्तव्य के पालन में उपेक्षा दिखाई है।

ऐसे भयङ्कर काण्ड के समय रक्षा और सहायता का प्रयत्न करना समस्त आर्यों का कर्तव्य है। प्राप्त सूचनानुसार ५० हजार के लगभग व्यक्तियों को जबर्दस्ती मुसल्मान बनाया गया है और बहुत बड़ी सख्या मे स्त्रियों और कन्याओं का अपहरण या उनके साथ बलात् विवाह किया गया है। ऐसे सब नर नारियों को पुनः वैदिक धर्म में प्रविष्ट करना और उनकी रक्षा का प्रबन्ध करना अत्यावश्यक है और इस कार्य को आर्य समाज ही विशेष रूप से कर सकता है।

साथ ही जो व्यक्ति इस संकट के कारण उस क्षेत्र से बाहर निकल आए हैं और जिनकी

सम्पत्तियां नष्ट हो चुकी हैं उन्हें सहायता पहुँचानी चाहिए। उपर्युक्त कार्यों की पूर्ति के लिये अत्यधिक धन और जन की सहायता की तुरन्त आवश्यकता है। अतः सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा साधारणतः हिन्दुओं से और विशेषतः आर्यों से अपील करती है कि वे इस पुण्य कार्य के संचालनार्थ अपनी उदार आर्थिक सहायता कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली के पते पर अविलम्ब भेज दें। जो आर्य वीर कम से कम एक मासकी सेवा इस रक्षा कार्यार्थ देना चाहते हैं उनकी सूची शीघ्रातिशीघ्र सभा कार्यालय में पहुँच जानी चाहिए। यह कार्य आवश्यक है अतः इसमें जरा भी विलम्ब न होना चाहिये। सार्वदेशिक सभा ने आर्य वीर दल के स० प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी के नेतृत्व में आर्य वीरों का एक दल पूर्वी बंगाल में रक्षा और सहायता कार्यार्थ भेज दिया है।

नारायणदत्त
मन्त्री—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
देहली।

पूज्य महात्मा गान्धी जी से भेंट

राम और ओ३म्, सत्यार्थ प्रकाश महत्वादि विषयक

(लेखक—पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा तथा सम्पादक "सार्वदेशिक" देहली)

भेंट की तिथि १६-१०-४६ समय रात ८-१५ से ८-५० भङ्गी बस्ती, नई देहली।

गत १४-१०-४६ को पूज्य महात्मा गान्धी जी से भंगी बस्ती, नई देहली में लगभग ४५ मि० भेंट का सौभाग्य जब मुझे प्राप्त हुआ था जिस का वृत्तांत पाठक 'सार्वदेशिक' के सितबर अङ्क में पढ़ चुके हैं तो कुछ विषयों में बात चीत समयाभाव से अपूर्ण रह गई थी और मेरे निवेदन पर पूज्य महात्मा जी ने अनुमति पुन' मिलने के लिये दे दी थी। इस विषय में पत्र द्वारा स्मरण कराने पर पूज्य महात्मा जी ने बहिन सुशीला देवी जी द्वारा सूचित किया कि आप १६ 'अक्तूबर की रात को ८ बजे मिल सकते हैं। उस से पूर्व कोई आवश्यक बात बतलानी हो तो श्री प्यारे लाल जी से मिलें।' श्री प्यारे लाल जी को 'सार्वदेशिक' के सम्पादक के रूप में प्राप्त एक पत्र की प्रति जिस में मुस्लिमलीग के प्रमुख सदस्यों में वितरित गुप्त विज्ञप्ति के आधार पर लीग की गुप्त योजना का विस्तार से वर्णन था मैं ने १० अक्तूबर को भेजते हुए लिखा कि 'इसे पूज्य महात्मा जी को अवश्य दिखाने की कृपा करें जिस से इसकी यथार्थता का निश्चय करके वे यथोचित निर्णय करें। मैं इस पत्र को भी पूज्य महात्मा जी के ध्यान में लाना अपना कर्तव्य समझता हूं।' उस पत्र पर नीचे हबीबुर्रहमान का नाम अङ्कित था। ऊपर कलकत्ता मिलिटरी हास्पिटल १६-९-४६ ता० अङ्कित थी। इस पत्र की प्रतिलिपि मैंने माननीय श्री प० जवाहर लाल जी नेहरू, सरदार बल्लभ भाई पटेल और डा० राजेन्द्र प्रसाद जी को भी एक पत्र के साथ भिजवाई। १६ अक्० की रात को ७॥ बजे के लगभग मैं भङ्गी बस्ती में पहुँचा। पूज्य महात्मा जी के किसी अन्य सज्जन से भेंट में व्यस्त होने के कारण ८-१५पर मेरी उन से भेंट प्रारम्भ हो सकी। पू० महात्मा जी को मैं ने चरण स्पर्श करके प्रणाम किया और उन्होंने विश्व विमोहिनी मधुर मुस्कराहट से मेरा स्वागत किया। महात्मा जी ने इन दिनों अधिकतर मौन का अवलम्बन किया हुआ है अतः बहुत खुलकर गतवार की तरह बात चीत न हो सकी तथापि महात्मा जी प्रायः प्रत्येक आवश्यक विचार को लिखते गये जिसे एक आश्रमस्थ गुजराती देवी पढ़ कर सुनाती रहीं इस लिये संवाद पर्याप्त उपयुक्त बन गया। स्वभावत' पूर्व निर्देशानुसार मुझे ही अधिकतर अपने विचारों को प्रकट करने का अवसर मिला। इस संवाद के सभी मुख्यांशों को भेंट से लौटते ही मैं ने स्मृत्यर्थ अङ्कित कर लिया जो निम्न हैं।

मैं ने महात्मा जी को गत १४ सित० की भेंट का स्मरण कराते हुए कहा कि आप ने उस दिन मेरे यह प्रश्न करने पर कि यदि 'रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीता राम' इस रामधुन में राम से आपका तात्पर्य दशरथ पुत्र राम से नहीं अपितु सर्वव्यापी राम(ईश्वर) से है तो रघुपति, राघव,

सीताराम आदि विशेषण उस में कैसे घट सकते हैं कहा था कि इस के रहस्य को मैं फिर बताऊंगा अब उसे बताने की कृपा करें। इस बीच में मैंने आप का हरिजनसेवक के २२ सित० सन् १९४६ के अङ्क में प्रकाशित और उसी ता० के अंग्रेजी 'हरिजन' में अनूदित 'दशरथ नन्दन राम' शीर्षक का लेख पढ़ा है जिस में आप ने लिखा है—

"बड़ी बात तो यह है कि दशरथ नन्दन अविनाशी कैसे हो सकते हैं ? यह सवाल खुद तुलसीदास जी ने उठाया था और उन्होंने इसका जवाब भी दिया था। ऐसे सवालों का जवाब बुद्धि से नहीं दिया जा सकता—बुद्धि को भी नहीं। यह दिल की बात है। दिल की बात दिल ही जाने। शुरू में मैंने राम को सीता पति के रूप में पाया। लेकिन जैसे जैसे मेरा ज्ञान और अनुभव बढ़ता गया वैसे वैसे मेरा राम अविनाशी और सर्वव्यापी बना है और है। उसका मतलब यह कि वह सीता-पति बना रहा और साथ ही सीता-पति के माने भी बढ़ गये। संसार ऐसे ही चलता है। जिस का राम दशरथ राजा का कुमार ही रहा, उसका राम सर्वव्यापी नहीं हो सकता, लेकिन सर्वव्यापी राम का बाप दशरथ भी सर्व-व्यापी बन जाता है। कहा जा सकता है कि यह सब मनमानी है—'जैसी जिस की भावना, वैसा उस को होय'। दूसरा कोई चारा मुझे नजर नहीं आता".... "जब हम समझजाते हैं तो हम कुछ नहीं रह जाते ईश्वर ही सब कुछ बन जाता है— वह दशरथ नन्दन, सीता पति, भारत व लक्ष्मण का भाई है भी और नहीं भी।" इत्यादि

लेख के ऊपर उद्धृत वाक्य पढ़ के मैंने कहा कि महात्मा जी ! ऊपर का उत्तर तो सर्वथा सन्तोष जनक नहीं है। साकार दशरथ पुत्र, सीता पति राम सर्वव्यापी कैसे हो सकता है ? साकार सीमित वस्तु वा व्यक्ति सर्वव्यापक बन ही नहीं सकते।

इस पर महात्मा जी ने कागज पर लिखा कि तब छोड़ दो। जो बात तुम्हें ठीक नहीं प्रतीत होती उसे छोड़ दो।

मैं ने कहा यह तो ठीक ही है पर आप के भी तो केवल इतना कह देने से काम नहीं चल सकता कि 'ऐसे सवालों का जवाब बुद्धि से नहीं दिया जा सकता। यह दिल की बात है।' बात युक्तियुक्त तो होनी ही चाहिये जैसे कि मनु जी ने अपनी स्मृति में कहा है कि आर्षं धर्मोपदेशं च, वेद शास्त्राविरोधिना। यस्तर्केणानुसन्धत्ते, स धर्मं वेद नेतरः ॥ अर्थात् जो वेद शास्त्र के अविरोधी तर्क से ऋषिकृत धर्मोपदेश का अनुसन्धान व मनन करता है वही धर्म को जानता है अन्य नहीं। आप के लेख की बहुत सी बातें युक्तियुक्त नहीं हैं।

इस पर महात्मा जी ने लिखा कि मेरी बात युक्तियुक्त है।

मैं ने निवेदन किया कि साकार राम जिसके विषय में आप कहते हैं कि वह सीता पति, दशरथ नन्दन और लक्ष्मण व भरत का भाई भी है सर्व व्यापक कैसे हो सकता है और सर्व-व्यापक का पिता हो ही कैसे सकता है ? महात्मा जी ने उत्तर में कागज पर लिखा कि 'जैसे मनुष्य का पिता मनुष्य होता है" वैसे सर्वव्यापी का पिता सर्वव्यापी होता है। मैं ने कहा महात्मा जी यह बात ठीक नहीं। मनुष्य साकार और सीमित है अतः उसका पिता साकार और सीमित हुआ ठीक ही है पर निराकार सर्वव्यापक का पिता हो ही कैसे सकता है ? जैसे कि उपनिषदों में भी कहा है कि 'न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते।"

मैं ने यह भी कहा कि यदि आप अवतार वाद को मानते हुए श्री राम को ईश्वर का अवतार मानते हों तो भी ठीक नहीं क्योंकि ईश्वर का लक्षण ही योग दर्शन दि में 'क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्ट पुरुष विशेष ईश्वरः ।" यह माना गया है अर्थात् क्लेश, अशुभ कर्म, कर्म फल तथा वासनादि से रहित परम आत्मा ही ईश्वर कहलाता है । ये लक्षण श्री राम मे भी नहीं घट सकते यद्यपि हम मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में उनका मान करते हैं । उन्हों ने स्वय कहा है कि "पूर्वं मया नूनमभीप्सितानि पापानि कर्माण्यसकृत्कृतानि । तत्रायमद्यापतितो विपाको दुःखेन दुःखं यदहं विशामि ॥'

(बाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड ६३।४)

अर्थात् मैंने निश्चय से पूर्व जन्म में कई बार अनेक पाप कर्म किये थे । उनका फल मुझे दुःखों के रूप में भोगना पड़ रहा है ।

इस पर महात्मा जी ने लिखा कि मैं भी आर्य समाजी हूं । मेरी बुद्धि कुण्ठित नहीं हुई ।

मैं ने कहा यह प्रसन्नता की बात है । हम आप को उच्च कोटि का आर्य (श्रेष्ठ सज्जन) मानते हैं ।

राम और ओ३म्

इस के पश्चात् मैंने कहा—महात्मा जी ! आप भी तो वेद, उपनिषद्, गीता, योग दर्शनादि को मानते हैं । इन सब में परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम ओ३म् बताते हुए उस के जप का विधान है उदाहरणार्थ यजुर्वेद में कहा है ओ३म् क्रतो स्मर । हे कर्म शील जीव तू 'ओ३म्' का स्मरण कर । कठोपनिषत् में कहा है.—

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति, तपांसि सर्वाणि च यद् वदन्ति । यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति, तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ॥

अर्थात् सब वेद जिस का प्रतिपादन करते हैं, जिस की प्राप्ति के लिये सब तप तथा ब्रह्मचर्यादि व्रतों का अनुष्ठान किया जाता है वह 'ओ३म्' ही है ।

भगवद् गीता में भी

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, व्याहरन् मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

इत्यादि श्लोकों में 'ओ३म्' द्वारा ही भगवान् के स्मरण का विधान है योगदर्शन में भी

'तस्य वाचकः प्रणवः तज्जपस्तदर्थ भावनम् ॥ इत्यादि सूत्रों में प्रणव अर्थात् ओंकार को ईश्वर का सर्वोत्तम निज नाम बताते हुए उस के जप और उसके अर्थ के चिन्तन को चित्त की एकाग्रता का प्रधान साधन बताया गया है ।

ऐसी अवस्था में क्यों न आप भी 'राम' के स्थान में (जिस का वेद, उपनिषद्, गीता, योगदर्शनादि में कहीं प्रतिपादन नहीं) परमेश्वर के सर्वशास्त्रसम्मत सर्वोत्तम सार्वभौम नाम 'ओ३म्' को अपना लेते ? इस विषय में सब आर्य हिन्दू तथा अन्य समस्त आस्तिक बिना भेद भाव के सम्मिलित हो सकते हैं ।

इस पर महात्मा जी ने लिखा कि तुलसी दास जी ने कहा है कि राम और ओ३म् एक ही हैं । मैं ने कहा केवल तुलसी दास जी के कहने से कोई तुलसी दास जी के अनुसार विवाह के समय श्रीराम की आयु १५ और सीता जी की ६ वर्ष की थी, दशरथ जी की ३६५ रानियां थीं, हनुमान् आदि बन्दर थे । बानुर ये बातें सत्य नहीं। तुलसी दास आप्त भक्त कवि थे और कुछ नहीं।

वास्तविक बात यह है कि राम को यदि ईश्वर के हजारों नामों में से एक मान भी लिया जाए तो उस से रमते सर्वेषु भूतेषु' इस व्युत्पत्ति के अनुसार ईश्वर की सर्व व्यापकता का ही भाव आता है ईश्वर की सर्वशक्तिमत्ता, सर्वज्ञता, आनन्दमयता, रक्षकता, दयालुता आदि गुणों का स्मरण उस से नहीं हो सकता जब कि 'ओ३म्' से अ उ म् तथा अव् धातु द्वारा जिस के रक्षण, गति, कान्ति, प्रीति, अवगम (ज्ञान • प्रवेश, दान आदि १९ अर्थ हैं परमेश्वर के सब गुणों का स्मरण किया जा सकता है (यहा मैं ने ओ३म् की कुछ विस्तृत व्याख्या महात्मा जी के सामने रक्खी) अत ओ३म् के साथ राम की तुलना नहीं की जा सकती।

इसपर महात्मा जी ने लिखा—पर राम में जो रस है वह ओ३म् में नहीं।

मैं ने निवेदन किया महात्मा जी। रस तो उस के रहस्य और महत्त्व को समझने पर निर्भर है। यदि आप ओ३म्' के उपयुक्त निर्दिष्ट प्रकार विस्तृत अर्थ और रहस्य को समझने का यत्न करें तो उस में आप को अवश्य विशेष रस का अनुभव होगा।

सत्यार्थ प्रकाश महत्त्व

इस के पश्चात् मैं ने सत्यार्थ प्रकाश की पुन: चर्चा करते हुए (जिस विषय में कुछ बात चीत १४ सित को हुई थी) निवेदन किया कि पहली बात जो इस विषय में विचारणीय है यह है कि इस में वर्णित आलोचनादि का उद्देश्य पवित्र है या नहीं ? आप भी इस से सहमत होंगे कि वह उद्देश्य अत्यन्त पवित्र है कि लोग सत्य को समझें, ग्रहण करें और परस्पर प्रेम की उन में वृद्धि हो। महात्मा जी ने सिर हिला कर इससे सहमत त प्रकट की। मैं ने कहा कि दूसरी विचारणीय बात उस आलोचना की यथार्थता की है। यद्यपि किसी २ विषय मे किसी विचारक को सन्देह हो सकता है किन्तु निष्पक्षपात दृष्टि से गम्भीर विचार सर्वथा युक्तियुक्त और वेद द सत्य शास्त्रानुकूल सिद्ध होते हैं। प्रसङ्ग वश मैं ने नाणावटी जी नामक एक गुजराती सज्जन के १८-९-३८ के एक पत्र के कुछ अशों को पढ़ कर सुनाया जिस मे उन्हों ने लिखा था कि 'बापू जी की आज्ञा से मैं सत्यार्थ प्रकाश देख गया हू। मुझे कहना पड़ता है कि स्वामी दयानन्द जितने महान् थे उन का यह ग्रन्थ उतना महान् नहीं है बल्कि इसे धर्म ग्रन्थ का नाम दे कर जगत् समक्ष रखने में हमे जरूर संकोच होता है। धर्मग्रन्थ को चाहिये ऐसा उस में गाम्भीर्य नहीं है। भाषा ग्रन्थ को चाहिये उतनी सरकारी नहीं है। प्रमाण भूत विषय निरूपण नहीं है इत्यादि। उन्होंने जो कुछ उदाहरण इस विचित्र सम्मति के समर्थनार्थ दिए हैं उन की आलोचना करते हुए मैंने कहा यह स्पष्ट है कि श्री नाणावटी जी ने सत्यार्थप्रकाश का ध्यान पूर्वक अध्ययन नहीं किया। अन्यथा जिस सत्यार्थ प्रकाश ने बड़े २ विद्वानों और विचारकों को विशेषरूप से प्रभावित किया (जिस के समर्थनार्थ अपनी 'Maharshi Dayananda and Satyarth Prakash' नामक समहात्मक पुस्तक उन को गत भेंट के समय १४ सित. को भेंट की थी और इस बार हैदराबाद के श्री नरेन्द्र जी द्वारा लिखित 'महर्षि दयानन्द और १४ वां समुल्लास' की १ प्रति भेंट की) उस के विषय में यह कहना कि उस में गाम्भीर्य नहीं है इत्यादि कितना अशुद्ध है। मैंने कहा मुझे आश्चर्य है कि ऐसे ऊंचे

बात को आप ने कैसे प्रामाणिक मान लिया और लिख दिया (सन् १८-१०-३८ पत्र में) कि 'नाणावटी जी ने जो प्रमाण दिये हैं उसका मैं स्वीकार करता हूं। उन पर मेरा विश्वास है।" इत्यादि

महात्मा जी को नाणावटी जी और उन के पत्र का अब स्मरण नहीं रहा क्योंकि इस को ८ वष व्यतीत हो चुके हैं यह पत्र व्यवहार एक मित्र द्वारा मेरे हाथ लग गया था। महात्मा जी ने लिखा कौन नाणावटी? मैं नहीं जानता। मैं ने वह लेख पढ़ा नहीं है। कुछ गुजराती वियों के स्मरण कराने पर जिन में से एक ने कहा कि नाणावटी जी तो कोई स कुरान के पण्डित नहीं हैं महात्मा जी ने काग़ज पर लिखा संभव है वही नाणावटी हैं उन का पता कारावाड़ी वर्धा"

मैं ने निवेदन किया कि मैं उनसे भी पत्र-व्यवहार का यत्न करूगा पर आप ऐसे सज्जनों की बातों को प्रामाणिक न मान लिया कर स्वयं ध्यान से पढ़ने का यत्न करें। मैं ने ताज कम्पनी लाहौर द्वारा सन् १९४४ मे प्रकाशित कुरान का उर्दू अनुवाद महात्मा जी को भेंट करते हुए निवेदन किया कि इसे आप अवश्य ध्यान पूर्वक पढें ताकि कुरान की असली शिक्षा को आप समझ सकें। इस कुरान के अनुवाद पर जमायते उलूमा के प्रधान मुफ्ती मुहम्मद किफायतुल्लाह का प्रमाण पत्र है कि मैं ने ताज कम्पनी लिमिटेड लाहौर की खताहिग पर इस कुरान मजीद का मतन हरफ २ पूरे गौरे अमान नजर से पढ़ा और जहां तक इन्सानी सकी का ताल्लुक है मैं पूरे वसूक से कह सकता हूँ कि इस मसहफ मुबारक के मतन में कोई गलती नहीं रही। तर्जुमा की दुरुस्ती भी मैंने अपनी निगरानी में कराई है।"

मैं ने कहा कि इस के पढ़ने से आप यह भी जान सकेंगे कि स्वामी दयानन्द जी की आलोचना कितने यथार्थ आधार पर थी क्योंकि इस में प्राय सब स्थानों पर वही अब शाह रफ़ी दीन साहेब के तर्जुमे के आधार पर किये गये हैं जिन्हें सत्यार्थप्रकाश में दिया गया है। अब सत्यार्थप्रकाश की आलोचना से लाभ उठाकर विचार शील मुसलमानों, ईसाइयों, जनियों, पौराणिकों तथा अन्य मतावलम्बियों ने अपने २ मन्तव्यों को नई युक्ति सङ्गत व्याख्या का प्रयत्न शुरू किया है जिस की हम आर्यों को प्रसन्नता है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी का उद्देश्य ऐसा सुधार ही था। उदाहरणार्थ सर सय्यद अहमद खां ने जो महर्षि के घनिष्ठ सम्पर्क में आए थे मुसलमानो बहिश्त (स्वर्ग) की बिल्कुल वसी ही आलोचना की जसी महर्षि दयानन्द जी ने की थी। ईसाइयों ने Genesis (उत्पत्ति पुस्तक) में आये Six days (६ दिनों) का अर्थ Six Periods (छ प्रकार या काल) इत्यादि किया ऐसे अन्यों ने किया वा अब भी कर रहे हैं पर इस के आधार पर यह कहना जैसे कि आप ने कभी लिखा था कि स्वामी दयानन्द जी ने हिन्दू मत, जैन मत, ईसाइयत और इस्लाम को misrepresent किया या ठीक रूप में नहीं रक्खा सर्वथा अशुद्ध है। यह सत्यार्थप्रकाश का महत्त्व है कि उस ने अन्य मतों के बडे २ विद्वानों और विचारकों को अपने मन्तव्यों मे सुधार और उन की युक्ति सङ्गत नवीन व्याख्या के लिये प्रेरित कर दिया है। वर्तमान सुधार का श्रेय वस्तुत सत्यार्थप्रकाश को है और इस का उपकार

मानने के स्थान पर उस पर अयथार्थता का आरोप लगाना अनुचित है।

अन्त में मैं ने हिंसा अहिंसा के प्रश्न की चर्चा करते हुए कहा कि महात्मा जी, आर्यद्वारा प्रतिपादित अहिंसा के आदर्श का पूर्ण पालन करना वैदिक धर्मानुसार ब्राह्मणों और सन्यासियों का ही धर्म है सर्वसाधारण और विशेषतः क्षत्रियों का नहीं। अभी इस विषयक बात चीत आगे बढ़ने न पाई थी कि पूज्य महात्मा जी ने सकेत किया कि अब सोने का समय हो रहा है। (९ बजने वाले थे) इस चर्चा को अब समाप्त किया जाय। मैं ने महात्मा जी को धन्यवाद पूर्वक प्रणाम करके यह चर्चा किसी अन्य अवसर के लिये स्थगित की। आशा है फिर कभी इस विषयक विचार विनिमय हो सकेगा।

सम्पादकीय

आदर्श सुधारक महर्षि दयानन्द का दिव्य सन्देश:—

वैदिक धर्मोद्धारक शिरोमणि आदर्श सुधारक महर्षि दयानन्द की गणना निस्सन्देह विश्व की उन विभूतियों में है जो अन्धकार में भटकते हुए व्याकुल प्राणियों को सत्य ज्योति की ओर ले जाते और उन्हें शान्ति का सन्देश देते हैं। धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय शिक्षा सुधार, प्रत्येक दृष्टि से हम उन्हें एक आदर्श सुधारक और क्रान्तिकारी नेता के रूप में पाते हैं। जिस महानुभाव ने जिस दृष्टि से महर्षि के अद्भुत कार्य और सन्देश पर विचार किया है उसे उस २ क्षेत्र में वे आदर्श रूप प्रतीत हुए हैं। वेदादि सत्य शास्त्रों के प्रेमी उन्हें धुरन्धर और इस युग में अनुपम वेद शास्त्र वेत्ता के रूप में, समाज सुधार प्रेमी उन्हें आदर्श सुधारक के रूप में, राष्ट्रीयता वादी उन्हें अद्भुत स्वतन्त्रता प्रिय आदर्श क्रान्तिकारी देशभक्त के रूप में देखते हैं। वस्तुतः वे सर्वतोमुखी क्रान्ति के कर्णधार थे। जगद्विख्यात नेता श्री सुभाष चन्द्र जी ने महर्षि दयानन्द और उन द्वारा प्रवर्तित आर्य समाज के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि निम्न आशय के शब्दों में अर्पित की थी:—

स्वामी दयानन्द सरस्वती उन शक्तिशाली महापुरुषों में से एक हैं जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया है और जो उसके नैतिक पुनरुद्धार तथा धार्मिक पुनरुद्धार के उत्तरदाता हैं। हिन्दू भारत की संस्थाओं के सुधार, पुनर्जीवन तथा पुनरुद्धार में उन के आर्यसमाज का निस्सन्देह और स्पष्ट तथा सबसे अधिक हाथ है। इसी लिये मैं स्वामी दयानन्द को एक आदर्श धार्मिक और सामाजिक सुधारक और कर्म योगी मानता हूँ। स्वामी दयानन्द का उद्देश्य हिन्दू समाज और धर्म का सुधार करना और उसे पुनः शक्ति युक्त बनाना तथा इस प्रकार उसका पुनर्निर्माण करना था जो भारत की प्राचीन सभ्यता और परम्परा के अनुकूल हो। हम देखते हैं कि उत्तर भारत में प्रमुख आर्यसमाजी अत्यधिक प्रभावशाली राष्ट्रीय नेता भी हैं यह महर्षि दयानन्द की शिक्षा का परिणाम है। दृढ़ता, सगठित कार्यक्षमता, गम्भीरता और सामुदायिक भावना में आर्य समाज किसी से भी कम नहीं है। स्वामी दयानन्द द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज उनके सर्वथा अनुरूप बने और यह सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से उस भारत के उद्धार का साधन बने जिसे हम प्यार करते हैं यह मेरी हार्दिक कामना है।

समस्त स्वतन्त्रता प्रिय भारतीयों और विदेशियों के श्रद्धास्पद और आदरणीय मान्य नेता की द्वारा अर्पित यह श्रद्धाञ्जलि।

महत्वपूर्ण है इस लिये हम ने उसे उद्धृत करना उचित समझा है। महर्षि दयानन्द का पुण्य स्मरण वस्तुतः हम सब में नवीन जीवन और शक्ति का संचार कर सकता है, वह हमारी अपवित्रताओं और निर्बलताओं को दूर भगा सकता है। महर्षि का दिव्यसन्देश उन के अपने ही स्फूर्तिदायक शब्दों में रखना हो तो सत्यार्थ प्रकाश के निम्न शब्दों से अधिक उपयुक्त शब्द बड़ी कठिनता से मिलेंगे 'मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे इतना ही नहीं किन्तु अपने सब सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों उन की रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उस का नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे। इस काम में चाहे उस को कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही चले जाएं परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।'

महर्षि दयानन्द का यह दिव्य सन्देश धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक सब क्षेत्रों में समस्त रूप से चरितार्थ होता है। यदि कार्यकर्ताओं के अन्दर अन्याय, असत्य और अत्याचार का विरोध करने का साहस हो तो संसार की कोई शक्ति उन्हें दबा नहीं सकती। पर दुःख की बात यही है कि जातिभेद अस्पृश्यतादि कुप्रथाओं की हानियों को समझते हुए भी अनेक व्यक्ति उन के क्रियात्मक विरोध का साहस नहीं रखते, राजनैतिक पराधीनता को दूर करने का साहस न रखते हुए लोग दासता की शृङ्खलाओं में बंधे रहते हैं और अन्यायकारी अधर्मी धनियों, सेठ साहूकारों और राजा महाराजाओं की खुशामद में लगे रहते हैं। महर्षि दयानन्द का यह सिंह गर्जन सब में नवजीवन, शक्ति और साहस का संचार कर सकता है यदि इस के तत्व का भली भांति मनन किया जाए हम चाहते हैं कि महर्षि दयानन्द के समस्त भक्त आत्मनिरीक्षण करते हुए अपने जीवनों को पवित्र, सत्यमय, साहस-सम्पन्न और आदर्शरूप बनाने का अधिक से अधिक प्रयत्न करें जिस से वे धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक सुधार करने में अधिक समर्थ हो सकें। अन्यायकारी धनियों और अन्याययुक्त कुप्रथाओं के आगे सिर झुकाना बहुत सी बुराइयों का मूल कारण है।

आर्य संस्थाओं में धर्म प्रचार:—

यह खेद की बात है कि महर्षि दयानन्द के दिव्य सन्देश का श्रवण करते हुए उनके भक्त आर्यों ने सत्यसनातन वैदिक धर्म के प्रचारार्थ जिन शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की उन में से बहुत सी विद्यालयों और कन्या पाठशालाओं में धर्म शिक्षा का यथोचित प्रबन्ध नहीं है। अनेक स्थानों में सरकारी सहायता लेने के विचार से ऐसे अध्यापकों और अध्यापिकाओं को नियुक्त कर दिया जाता है जिन की वैदिक धर्म में कोई आस्था नहीं होती और जिन के जीवन वैदिक आदर्शों के सर्वथा प्रतिकूल होते हैं। ऐसी अवस्था में नाम मात्र की धर्म शिक्षा का प्रबन्ध होते हुए भी उस का बालक बालिकाओं और कुमार कुमारियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। इवि-

हारादि विषयक जो पाठ्य ग्रन्थ सरकारी परीक्षाओं के लिये नियत हैं उन में प्राचीन आर्यों के धर्म और आचार व्यवहार विषयक अनेक अशुद्ध बातें यथा बहुदेवतोपासना, मांसमद्यसेवन पशुबलि आदि वर्णित है। इन आर्य विद्यालयों के संचालकों को भी सरकारी सहायता लेने के प्रलोभन से उन्हीं अशुद्ध ग्रन्थों को पाठ्य पुस्तक के रूप में पढ़ाना पड़ता है। शिक्षा का माध्यम भी अन्य विद्यालयों की तरह प्रायः उर्दू अंग्रेजी आदि को रखना पड़ता है। यह अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। इन आर्य विद्यालयों के संचालकों को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि (१) धर्म शिक्षा आर्य भाषा और वेदादि सत्य शास्त्रों की शिक्षा का इन संस्थाओं में विशेष प्रबन्ध हो (२) आर्य भाषा (हिन्दी) और संस्कृत का अध्ययन सब आर्य हिन्दू छात्रों छात्राओं के लिये अनिवार्य हो और आर्य भाषा को ही शिक्षा का माध्यम रक्खा जाए और अध्यापक अध्यापिकाएं केवल वह नियुक्त की जाएं जिन का जीवन पूर्ण सदाचार मय हो और जिनकी वैदिक धर्म और संस्कृति में पूर्ण आस्था हो तथा पाठ्य ग्रन्थ वैदिक सिद्धान्तानुकूल हों। यदि महर्षि दयानन्द के पवित्र नाम और आर्य शब्द का प्रयोग कर के भी किसी संस्था में इन उपर्युक्त बातों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता (जैसा कि अनेक संस्थाओं के विषय में कई बार सुनने में आता है) तो वे आर्य संस्थाएं कहलाने के योग्य नहीं और वे जनता को धोका देती तथा आर्य जनता के दान का दुरुपयोग करती हैं। हमारा सब आर्य विद्यालयों और कन्या पाठशालाओं के संचालकों से अनुरोध है कि वे उपर्युक्त आवश्यक विषय पर ध्यान देकर इस विषयक त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न करें अन्यथा यह महर्षि दयानन्द और आर्य जनता के प्रति विश्वासघात होगा।

महर्षि की अमर कृति पर पुनःप्रतिबन्ध

सिन्ध सरकार ने महर्षि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश के १४ वें समुल्लास पर भारतीय दण्ड विधान सन् १८९८ (Code of Criminal Procedure की धारा ९९ (अ) की आड़ लेकर १० अक्तूबर को पुनः प्रतिबन्ध लगा दिया है। इस आज्ञा में यह कहा गया है कि सिन्धी भाषा में प्रो० ताराचन्द्र जी एम ए० द्वारा प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश के १४ वें समुल्लास में ऐसी बातें लिखी गई हैं जिन से सम्राट् की प्रजा के विभिन्न सम्प्रदायों में घृणा और शत्रुता फैलती है इस लिये भारतीय दण्ड विधान सन् १८९८ की धारा ९९ (अ) के अनुसार सिन्धी सत्यार्थप्रकाश, उस के अनुवाद, पुनः प्रकाशन १४ वें समुल्लास से उद्धरण वाले पत्रादि सरकार द्वारा निम्न कारणों से जप्त किये जाते हैं। इस में लेखक ने (क) मुसलमानों के धार्मिक विश्वासों की हंसी उड़ाई है (ख) कुरान की शिक्षाओं को अशुद्ध रूप में वर्णित किया है और उन का उपहास किया है (ग) कुरानकी प्रामाणिकता और महत्त्व पर आक्रमण किया है (घ) पैगम्बर मुहम्मद साहेब की प्रामाणिकता पर आक्रमण किया और उसे तुच्छ बताया है तथा (३) साधारणतः ऐसी बातें लिखी हैं जिन से मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं पर ठेस पहुंच सकती है और पहुंचती है।"

ऊपर हम ने १८ अक्तू० को प्रकाशित (किन्तु १० अक्तू० से कार्य में परिणत) सिन्ध सरकार

की नादिरशाही का शाब्दिक अनुवाद दे दिया है जिस से पाठक उस के स्वरूप को समझ सकें। हमें यह लिखने में संकोच नहीं कि जिस आधार पर मुस्लिमलीगी सिंध सरकार ने चुनावों के मध्य में भारतरक्षा कानून के अन्तर्गत अस्थायी आदेश की अवधि ३० सित को समाप्त होने पर इस नये आदेश को जारी किया है वह सर्वथा अशुद्ध है। इस समुल्लास में इस्लाम और मुहम्मद साहेब की अनेक तर्क विरुद्ध तथा संसार के लिये हानि कारक बातों की युक्ति युक्त आलोचना की गई है जिस का उद्देश्य महर्षि दयानन्द जी ने स्वयम् चतुर्दश समुल्लास की अनुभूमिका में निम्न शब्दों में प्रकट किया है, 'यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य के निर्णय के लिये सब मतों के विषयों का थोड़ा २ ज्ञान होवे इस से मनुष्यों को परस्पर विचार करने का समय मिले और एक दूसरे के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठ मूठ बुराई वा भलाई लगाने का प्रयोजन है किन्तु जोर भलाई है वही भलाई और जो बुराई है वही बुराई सब को विदित होवे न कोई किसी पर झूठ चला सके और न सत्य को रोक सके और सत्या-सत्य विषय प्रकाशित किये पर भी जिस की इच्छा हो वह न माने वा माने किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता और यही सज्जनों की रीति है कि अपने वा पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जान कर गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग करें और हठियों का हठ दुराग्रह न्यून करें करावें क्योंकि पक्षपात से क्या २ अनर्थ जगत् में न हुए और न होते हैं। ... यह लेख हठ, दुराग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वादविवाद और विरोध घटाने के लिये किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ क्योंकि एक दूसरे की हानि से पृथक् रह परस्पर को लाभ पहुंचाना हमारा मुख्य कर्म है।" इत्यादि

इतना पवित्र उद्देश्य होते हुए भी इस समुल्लास को (और इस लिये सारे सत्यार्थप्रकाश को क्योंकि यह सारे ग्रन्थ का ही एक भाग है सर्वथा स्वतन्त्र व पृथक् प्रकाशित अध्याय नहीं) एक कल्पित और अयथार्थ आधार पर जब्त करना न केवल आर्यों बल्कि विचारशील, धार्मिक स्वतन्त्रता के प्रेमी समस्त अन्य मतावलम्बियों की दृष्टि से भी अत्यन्त निन्दनीय कार्य है। स्व० मौलाना मुहम्मदअली, मौ० अबुल कलाम आजाद, मौ० इब्नखलील (देव बन्दी), ख्वाजा हसन निजामी, डा० सैफुद्दीन किचलु प्रधान पंजाब कांग्रेस कमेटी, मौ० मुहम्मद आमीन नाजिम जमीयत उल उलमा आगरा, प्रो० अब्दुलमजीद लाहौर, मौ० अब्दुलबारी पटना, मौ० सैय्यद हबीब सम्पादक 'सियासत' इत्यादि अनेक विचार शील मुसलमानों ने सत्यार्थप्रकाश के किसी भी भाग की जब्ती का प्रबल विरोध किया (जैसे कि सार्वदेशिक के अनेक अङ्कों में उन के लेखों के उद्धरण देकर हम दिखा चुके हैं) स्वयं सर गुलामहुसैन प्रधान मंत्री सिन्ध सरकार ने उस प्रतिबन्ध के जल्दी उठाने का आश्वासन माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त आदि को दिया पर अब असत्य आधार पर स्थिरतया सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाने का जो निन्दनीय यत्न किया गया है उस का स्पष्ट अर्थ है कि मुसलमानों के अन्दर सत्यार्थप्रकाश की युक्तियों का उत्तर देने की शक्ति नहीं रही और इस लिये

पहले तलवार के बल पर जैसे वे विपक्षियों का मुंह बन्द करते रहे हैं वैसे अब कानून के जोर पर करना चाहते हैं।

सत्यार्थप्रकाश चतुर्दश समुल्लास को छपे ६२ वर्ष हो चुके हैं किन्तु इसके कारण कभी साम्प्रदायिक दंगे वा उपद्रव नहीं ए यह एक तथ्य है जिस से इन्कार नहीं किया जा सकता। इसके स्थान में सर सय्यद अहमद खान तथा दूसरे विचार शील मुसलमानों ने जिनमें कुरान के "वैदिक भाष्यकार" मौलाना मुहम्मदअली एम ए प्रधान अहमदिया अंजुमने इस्लाम लाहौर आदि सम्मिलित हैं महर्षि दयानन्द द्वारा शुद्ध भाव से की आलोचना से लाभ उठाकर इस्लाम और कुरान की नई युक्ति युक्त व्याख्या का प्रयत्न किया है पर साथ ही स्पष्ट है (जैसे कि मैं ने महात्मा गान्धी जी को ताज कम्पनी द्वारा १९४४ में प्रकाशित प्रामाणिक माना जाने वाला उर्दू अनुवाद भेंट करते हुए कहा) कि मुसलमानों की अत्यधिक संख्या कुरान के जिस अर्थ को मानती रही है उसकी ही प्रायः शाह रफीउद्दीन के अनुवाद के आधार पर महर्षि ने आलोचना की थी जिस के विषय में यह आरोप सर्वथा असत्य है कि उन्होंने कुरान शिक्षादि को अशुद्ध रूप में रक्खा। सच्ची बात को शुद्ध भाव से प्रकट करना गाली नहीं कहलाता। वस्तुतः अन्य पाश्चात्यादि विद्वानों की अपेक्षा महर्षि कृत आलोचना बहुत नर्म भी है जैसे कि मैं ने 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित अपनी लेख माला में सप्रमाण दिखाया था।

यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि आर्यों के लिये यह प्रतिबन्ध सर्वथा असह्य है। जिस धारा का प्रयोग इस अनुचित प्रतिबन्ध के लिये किया गया है उसके (ग) भाग में ऐसे प्रतिबन्ध के प्रतिवाद का वैधानिक उपाय किसी भी व्यक्ति का जो जब्त पुस्तक वा समाचार पत्र में रुचि रखता हो जब्ती के सरकारी आदेश प्रकाशित होने के २ मास के अन्दर २ हाईकोर्ट को ऐसे आदेश को इस आधार पर रद्द करने का प्रार्थना पत्र देना बताया गया है कि आदेश में दिये कारण यथार्थ नहीं थे। हाईकोर्ट की विशेष उपसमिति जिस में ३ जज होंगे उस प्रार्थना पत्र को सुनेगी और उसका निर्णय करेगी। यदि उसकी बहुसंख्या इस निश्चय पर पहुंचेगी कि पुस्तक की जब्ती के सरकारी कारण जिन का धारा ९ (क) में वर्णन है यथार्थ नहीं तो वह सरकारी जब्ती की आज्ञा को रद्द कर देगी। सत्यार्थप्रकाश रक्षा समिति इस वैधानिक तथा आवश्यकतानुसार अन्य उचित उपायों का अवलम्बन करेगी। आर्य जनता को पूर्ण सहयोग और अपने प्राण प्रिय धर्मग्रन्थ की रक्षार्थ सब प्रकार के त्याग और बलिदान के लिये उद्यत हो जाना चाहिये।

पूर्वी बंगाल का पैशाचिक काण्ड लीगी गुण्डा शाही का नगानाचः—

गत १० अक्टूबर से पूर्वी बंगाल के नोआखाली, तिपरा, चाँदपुर आदि जिलों में मुस्लिम गुण्डा द्वारा लूट मार, अग्नि काण्ड, महिलाओं के अपहरण, उनके साथ बलात्कार और जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन आदि के जो अमानुषिक अत्याचार किये जा रहे हैं उन का रोमाञ्चकारी और हृदय द्रावक वर्णन पाठकों ने समाचार पत्रों में अवश्य पढ़ा होगा। स्टेट्समैन जैसे मुस्लिम पक्षपाती पत्र के विशेष संवाददाता

के अनुसार पूर्वी बंगाल में मुस्लिम गुण्डों की हिंसात्मक कार्यवाहियों का लगभग ४०० ग्रामों और १॥ लाख व्यक्तियों पर प्रभाव पड़ा है। इस गड़बड़ी का मुख्य उद्देश्य जबरदस्ती धर्म परिवर्तन तथा स्त्रियों विशेषतया लड़कियों का अपहरण है।

भारत सेवासङ्घ के स्वामी ध्यम्बानन्द जी ने जो आँखों देखा वृत्तान्त इस लूट मार, अग्नि काण्ड और हिन्दू पुरुषों स्त्रियों और बच्चों की क्रूर हत्या का समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया है उस में बेगम गञ्ज के एक भूतपूर्व असेम्बली सदस्य मुस्लिम को इन गुण्डों का नेता बताया है जिसने १० अक्टूबर को लगभग १५००० मुसलमानों की भीड़ को हिन्दुओं के विरुद्ध इतना भड़काया कि उसने सभा समाप्त होते ही हिन्दुओं के बाजारों को लूटना, आग लगाना, हिन्दू पुरुषों स्त्रियों और बच्चों की हत्या, जबर्दस्ती मुसलमान बनाना, स्त्रियों का अपहरण और कन्याओं से बलात् विवाहादि पैशाचिक कार्य शुरू कर दिये। ५० हजार के लगभग हिन्दुओं को इस प्रकार जबर्दस्ती क्रूर हत्या का भय दिखाकर मुसलमान बनाया गया। यह रोमाञ्चकारी काण्ड अब भी जारी है जो बंगाल के मुस्लिम लीगी मन्त्री मण्डल और गवर्नर की नितान्त अयोग्यता का प्रबल प्रमाण है। हिन्दू महासभा के अधिकारियों तथा अन्य उत्तरदायी व्यक्तियों द्वारा ध्यान आकर्षित किये जाने पर भी बंगाल सरकार ने इस नृशंस काण्ड को रुकवाने का पर्याप्त प्रबन्ध नहीं किया। अभी तक ये मुस्लिम मतान्ध गुण्डे स्वतन्त्रता पूर्वक गांव गांव में पहुंच कर इन पैशाचिक कार्यों को करने में व्यस्त हैं। पर उन्हें कैद नहीं किया गया। मौलाना अबुल कलाम आजाद ने यद्यपि अवश्य कहा है कि इस्लाम बल प्रयोग द्वारा धर्म परिवर्तन के पूर्णतः विरुद्ध है तथापि मुस्लिम इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रारम्भ से ही अनेक मुस्लिम नेता अविश्वासियों (काफिरों) के विरुद्ध जहाद (धर्म युद्ध) को अपना कर्तव्य समझते रहे हैं। कुरान के प्रायः सभी पुराने प्रामाणिक भाष्य करने वाले भाष्यकार इस्लाम की इसी शिक्षा का प्रतिपादन करते रहे हैं। "काफिरों को पकड़ लो और जहां पाओ मार डालो। मुसलमानों को मुसलमान का मारना योग्य नहीं जो कोई मुसलमान को जान कर मार डाले वह हमेशा दोजख (नरक) में रहेगा उस पर अल्लाह का क्रोध और लानत है। (कुरान म० १ सू० ६ आ० ८०-६२ जैसी आयतों की आलोचना में महर्षि दयानन्द जी ने इसीलिये लिखा था कि "अब देखिये महा पक्षपात की बात है कि जो मुसलमान न हो उसको जहां पाओ मार डालो और मुसलमान को न मारना। भूल से मुसलमान को मारने में प्रायश्चित्त और अन्य को मारने से बहिश्त (स्वर्ग) मिलेगा ऐसे उपदेश को कूप में डालना चाहिये। इत्यादि।

पूर्वी बंगाल के इस पैशाचिक हत्या काण्ड के लिए उत्तरदायिता मुस्लिम लीग द्वारा प्रचारित हिन्दुओं के प्रति द्वेष की भावना की है। भारत-मन्त्री वा वायसराय को बंगाल के अयोग्य मन्त्री मण्डल और गवर्नर को तत्काल पदच्युत कर देना चाहिये और पीड़ित हिन्दू जनता की रक्षा का तुरन्त प्रबन्ध करना चाहिये। आर्य हिन्दू जनता तथा कांग्रेस सबको मिलकर इस पैशाचिकता का अन्त करना चाहिये। उदार धन जन सहायता पहुंचाकर पीड़ित महिलाओं, कन्याओं तथा अन्य सब हिन्दु-

ओं की रक्षा करनी चाहिये जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन का कोई अर्थ नहीं है। अतः बिना संकोच के ऐसे व्यक्तियों को आर्य हिन्दू समाज में उचित प्रेम पूर्ण आश्रय देना चाहिये और आर्य वीर दल संगठन तथा जाति भेद अस्पृश्यता निवार आदि के प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन द्वारा ऐसी शक्ति उत्पन्न करनी चाहिये कि भविष्य में ऐसी दुर्घटनाएं असम्भव हो जाएं। समस्त आर्य हिन्दुओं का प्रबल संगठन ही मुस्लिम गुण्डा शाही का एक मात्र प्रतीकार है। "आततायिनमायान्त हन्यादेवाविचारयन्" इस धर्म शास्त्र के आदेशानुसार आततायियों की हत्या करने में जरा भी पाप नहीं है। इस मे हिंसा का प्रश्न उठाना सर्वथा अनुचित है। सार्वदेशिक सभाने श्री ओम्प्रकाश जी स० प्रधान सेना पति आर्य वीर दल को दल बल सहित रक्षाकार्यार्थ पूर्वी बंगाल भेज कर कार्य प्रारम्भ करवा दिया है।

एक गुप्त योजना का भण्डा फोड़—

हमारे पास सम्पादक 'सार्वदेशिक' के रूप में हबीबुर्रहमान नामक एक भूतपूर्व मुस्लिम लीगी मुसलमान ने कलकत्ता मिलिटरी हस्पताल मे एक पत्र भिजवाया है जिस में १६ अगस्त सन १६४६ को मुस्लिम लीगियों द्वारा किये गये छुरों द्वारा प्रहार का वर्णन करते हुए मुस्लिम लीग द्वारा स्वीकृत एक गुप्त विज्ञप्ति का निर्देश किया गया है जो उक्त सज्जन को ४ मास के निरन्तर प्रयत्न के पश्चात् प्राप्त हुई। इस में उस गुप्त योजना का वर्णन है जिसको मुस्लिम लीगी गुप्त रूप में क्रियान्वित करना चाहते थे। उस के मुख्यांशों को उस पत्र में से हम यहाँ उद्धृत किये बिना नहीं रह सकते ताकि पाठकों को उपर्युक्त पशाविक काण्डों का प्रेरक कारण समझने में सुगमता हो।

(१) सब मुसलमान पाकिस्तान की प्राप्ति के लिये मरने तक को तय्यार रहें।

(२) पाकिस्तान बन जाने पर सारे हिन्दुस्तान को जीता जाए।

(३) सब हिन्दुस्तानियों को मुसलमान बनाया जाए।

(४) जबतक पाकिस्तान और हिन्दुस्तान में अपने राज्य की स्थापना नहीं होजाती तबतक निम्न साधनों को काम में लाया जाए।

(क) हिन्दुओं के सब कारखानों और दुकानों को जलाया जाए, नष्ट किया जाए और लूटा जाए तथा लूट मुस्लिम लीग कार्यालय को दी जाए।

(ख) कानून के विरुद्ध चलकर भी सब मुसलमान अपने पास शस्त्र रक्खें।

(ग) अगर राष्ट्रीयतावादी मुसलमान मुस्लिम लीग में न मिल जाए तो उनकी लीग की गुप्तचर विभाग द्वारा हत्या कराई जाए।

(घ) धीरे २ हिन्दुओं को मार डाला जाए और उनकी संख्या को कम किया जाए।

(ङ) सब मन्दिरों को नष्ट कर दिया जाए।

(च) भारत के सब ग्रामों और जिलों में मुस्लिम लीग के गुप्तचर रक्खें जाए।

(छ) किसी गुप्त साधन द्वारा सब कांग्रेस नेताओं की कुछ महीनों के अन्दर हत्या की जाए।

(ज) कांग्रेस समर्थक पत्रों के कार्यालयों को मुस्लिम गुप्तचर विभाग द्वारा नष्ट किया जाए।

(झ) दिसम्बर १६४६ तक कराची, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, गोआ, विजागपट्टम को नष्ट भ्रष्ट कर दिया जाए।

(ञ) मुसलमानों को स्थल सेना, जलसेना

सरकारी नौकरी या कारखाने आदि में हिन्दुओं के अधीन काम न करने दिया जाए।

(ट) मुसलमानों को कांग्रेस सरकार का नाश करके हिन्दुस्तान पर मुसलिम लीग के आक्रमण की तय्यारी करनी चाहिये।

(ठ) मुसलिम लीग द्वारा भारत के आक्रमण के लिये आर्थिक सहायता निजाम, कम्युनिस्ट, कुछ यूरोपियन, खोजे, भोपाल के नवाब, कुछ ऐंग्लो इण्डियन्स, कुछ पारसियों और कुछ ईसाइयों द्वारा दी जा रही है। पंजाब, सिन्ध और बंगाल मुसलिम लीग द्वारा भारत पर आक्रमणार्थ अस्त्र शस्त्र तय्यार करने के केन्द्र बनेगे।

(ड) सब अस्त्र शस्त्रों को बम्बई, कलकत्ता, देहली, मद्रास, बंगलौर, लाहौर और कराची के मुसलिम लीग दफ्तरों द्वारा बटवाया जाए।

(ढ) सब मुसलमानों को कुछ न कुछ शस्त्र कम से कम एक जेबी चाकू हर समय हिन्दुओं का नाश करने और उन्हें हिन्दुस्तान से निकालने के लिए अपने पास रखना चाहिए।

(ण) हिन्दुओं के विरुद्ध युद्ध के लिए सब यातायात के साधनों (बस लारी आदि) का उपयोग और संगठन करना चाहिए।

(त) हिन्दू सभ्यता का नाश करना चाहिए।

(थ) हिन्दू स्त्रियों और कन्याओं का अपहरण करना चाहिए उनके साथ बलात्कार किया जाए और उन्हें मुसलमान बनाया जाए। १८ अक्तूबर १९४६ को यह कार्य विशेष रूप में किया जाए।

(द) सब लीगियों का सदा हिन्दुओं के प्रति क्रूर होना चाहिये और सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य प्रत्येक दृष्टि से उनका बहिष्कार करना चाहिये।

(ध) मुसलमानों को हिन्दू व्यापारियों से कोई चीज नहीं खरीदनी चाहिये। हिन्दुओं द्वारा सचालित फिल्मों का बहिष्कार करना चाहिये। सब मुस्लिम लीगियों को १५ सितम्बर १९४६ से इन आदेशों को कार्य में परिणत करना चाहिये।

अनेक व्यक्ति इस पत्र पर ध्यान देने से इन्कार कर देते यदि कलकत्ता और पूर्वी बंगाल के पैशाचिक काण्डों से ऐसी किसी गुप्त सगठित योजना का अस्तित्व प्रमाणित न होता। मुस्लिम लीगियों ने कांग्रेस के साथ समझौता न करते हुए जिस निन्दनीय रूप में अन्तःकालीन सरकार मे प्रवेश किया है और जिस प्रकार के भाषण मि० लियाकत अली खान आदि ने हाल मे दिये है उनसे उक्त पत्र में वर्णित लीग की गुप्तयोजना का समर्थन होता है और अन्त कालीन सरकार के कार्य का सुचारू रूप से चलना असम्भवप्राय प्रतीत होता है। हम स्वय चाहते हैं कि उक्त पत्र में वर्णित गुप्त योजना असत्य प्रमाणित हो किन्तु स्पष्ट दीखने वाली सचाई के आगे आंखें मूद लेने से काम नहीं चल सकता। लार्ड वेवल का मुस्लिम लीगियों को कांग्रेस के साथ समझौते के बिना भी सरकार में सम्मिलित होने के लिये निमन्त्रण देना स्वयम् अत्यन्त आक्षेप योग्य था और इसके अन्दर अंग्रेज कूटनीतिज्ञों की एक भयङ्कर चाल राजनीति के पण्डितों को दृष्टिगोचर होती है। कुछ भी हो, हिन्दुओं को इन 'गुप्त योजनाओं' से सचेत होकर आत्मरक्षार्थ अपने को पूर्णतया संगठित करना चाहिए। सभीत होने वा कायरता दिखाने से काम नहीं चल सकता। हम हार्दिक एकता के पक्षपाती हैं

जो वस्तुतः संगठन और शक्ति के बल पर तथा मुसलमानों की मदान्धता पूर्ण मनोवृत्ति को प्रेम-पूर्वक बदलने पर निर्भर करती है। हम भगवान् से मदान्ध मुसलमानों को सद्‌बुद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं।

शुभ समाचार—

हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य उपप्रधान श्री कुंअर चांद किरण शारदा जी के नेतृत्व में आर्यों का जो शिष्ट मण्डल सर मिर्जा इस्माईल प्रधान निजाम शासन समिति से हैदराबाद में मिला था उसे उन्होंने प्रायः सब अनुचित प्रतिबन्धों को हटाने का आश्वासन दिया है। हम आशा करते हैं कि सर मिर्जा इस्माईल इन अनुचित और अन्याय पूर्ण प्रतिबन्धों को हटाकर आर्य हिन्दू जनता के घोर असन्तोष को दूर कर देंगे।

शान्ति सम्मेलन का उपहास जनक अभिनय—

पेरिस में शान्ति सम्मेलन का उपहास जनक अभिनय पिछले दिनों समाप्त हुआ है। इस में भिन्न २ राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने जो परस्पर ईर्ष्या द्वेष की भावना का परिचय दिया और जो भयङ्कर अशान्ति के चिन्ह समय २ पर दृष्टि गोचर हुए उन से किसी का भी आशा रखना कि इस के द्वारा संसार में शान्ति की स्थापना होगी सर्वथा अशुद्ध प्रतीत होता है। जब तक वेद के पवित्र सन्देशानुसार लोगों में सङ्कल्प मन और हृदय की एकता नहीं होती तथा इस के लिये सब प्रयत्नशील नहीं होते (जैसे कि—"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति" आदि मन्त्रों में बताया गया है) तब तक शान्ति सम्मेलन के इन उपहासजनक अभिनयों से विश्व-शान्ति की स्थापना सर्वथा असम्भव है। देश-देशान्तरों मे वेदों के शान्ति जनक दिव्य सन्देश को पहुंचाने और ईर्ष्या द्वेष की भावना को हृदयों से दूर करने की बड़ी भारी आवश्यकता है अन्यथा निकट भविष्य में ही तीसरा घोर तम विश्व युद्ध अनिवार्य है। ध० दे०

दान सूची सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

सितम्बर अक्टोबर ४९

स्थापना दिवस

२२) द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब लाहौर
११) आर्य समाज अगोई (मुजफ्फरनगर)
१०) " " कुरवा पुर (मध्य प्रदेश)
२५) " " रामकुटी शर्मा पुर रोड देहरादून
५) " " बौलड़ी (मेरठ)
४१
६८१||=) गतयोग
७७४ ≈)

दान दाताओं को धन्यवाद । जिन समाजों का अंश अभी तक अप्राप्त है। वे सभा को स्मरण कराने का अवसर दिये बिना स्वतः अपना भाग शीघ्र से शीघ्र भेज देवें।

मन्त्री

विविध दान

२।') आर्य समाज फर्रुखाबाद (अलीगढ़)
२) " " अजीतमल (इटावा)
१४) " " देवास
२) श्री गुरुदत्त जी गौतम प्रो० स० विरला लाइन्स सब्जी मण्डी देहली।
१५) श्री कन्हैयालाल जी पवाँर प्रो० स० कोटा
२५०) आर्य कुमार सभा बड़ौदा (स० प्र० निधि)
२||) श्री भरत जी गंजाम (मद्रास)
५) श्री रामप्रसाद विलासी प्रसाद बोरेका कारंजा (अकोला)
११') श्री मन्त्री जी आ० स० अगोई (मुजफ्फरनगर)
५) श्री गुलाब जी मुर्जिजापुर (सी० पी०)
१०) आ० स० आबू रोड,
४१६||=) दान दाताओं को धन्यवाद ।

आर्य. पत्र ग्रा. सं० जिनका चन्दा मास अक्टूबर ४९ में समाप्त हो गया है।

९४, १८३, २८४, ४९४, ५०१, ६३९, ८५०, ११०८, ११११, ११२७, ११३०, ११३४, ११३५, १४१२, १४१४, १४१५, १४२०, १४२२, १४२४ १४२६, १४२९, १४३१, १४[illegible]२, १४३४, १४३७, १४४०, १४४१, १४४७, १४५४, १४५५, १६[illegible]१, १७६८, १७७५, १७७६, १७८१, १७८२, १७९५, १८००, १८०७, २१७७, २१८१, २१८४, २१८५, २१८६, २२०३, २२०४, २७३९, कृपया शीघ्र भेजें।

पूर्वीय अफ्रीका में २ योग्य प्रचारकों की आवश्यकता

पूर्वीय अफ्रीका में प्रचारार्थ २ योग्य आर्य प्रचारकों की आवश्यकता है जो वैदिक साहित्य के विशेष ज्ञाता पर साथ ही अंग्रेजी का बहुत अच्छा ज्ञान रखने वाले हों केवल पूर्ण ब्रह्मचारी और दृढ़ निरामिष भोजी उपर्युक्त गुण सम्पन्न महानुभाव ही प्रार्थना पत्र भेजें। मासिक दक्षिणा योग्यतानुसार ३०० शिलिंग से ५०० शि. के बीच में दी जायगी।

प्रार्थना पत्र और चित्र निम्न पते पर भेजिये

मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका
P O Box No. 243,
Nairobi,
Kenya Colony.

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	,,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	२)
(७) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(८) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,,	।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण	प० इन्द्रजी)	।=
(१०) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(११) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	≈)
(१२) वेद में असित शब्द	,,	–)
(१३) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	–)
(१४) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां	,,	१।
(१५) विमान शास्त्र	,,	।=॥
(१६) नया संसार श्री पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≈)
(१७) मानव की ओर	,, ,, अ०	१।)
(१८) कथा माला	,,	॥)
(१९) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म	,,	॥=)
(२०) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		२।)
(२१) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२२) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२३) विद्यार्थी जीवन रहस्य		॥)
(२४) उपनिषद् ईश ≈) केन ।) कठ ॥), प्रश्न ।≈) मुण्डक ≈) माण्डूक्य ≈), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		–)
(२६) नारायण सुधा सजिल्द		१॥)
(२७) शहीदी पट्टिका		।=)
(२८) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(२९) हमारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३०) बहिनों की बात (प० सिद्धगोपाल जी काव्यतीर्थ)		१)
(३१) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विश्वशङ्कर मूलशङ्कर जी)		॥)
(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३३) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी		≈
(३४) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास		≈
(३५) सत्यार्थ प्रकाश गान (प० सत्यभूषण जी)		–)
(३६) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम)		॥–)
(३७) भारतवर्ष में जाति भेद		।)
(३८) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≈)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		–)
(४०) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		–)
(४१) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सङ्ग का कार्यक्रम		–)
(४२) आर्यसमाज क्या है ? (श्री नारायण स्वामी जी)		।=)
(४३) सरल सन्ध्योपासना		)
(४४) भारतीय वाङ्मय के अमररत्न		–)
(४५) वेद सुधा (स्व० प० घासीराम जी)		।
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥)
(४७) काया कल्प (प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)		१।)
(४८) आर्यसमाज के नियम उपनियम		–॥
(४९) वैदिक वीर गर्जना (श्री रामनाथ वेदालङ्कार)		॥=)



१९४६ ई० | [illegible] | वार्षिक मूल्य
२००३ | | विदेश १० शि०

विषय-सूची

खेद प्रकाश

हमे अत्यन्त खेद है कि नवम्बर मास में देहली मे साम्प्रदायिक वातावरण की क्षुब्धता तथा कर्फ्यू आज्ञा के प्रतिबन्धादि के कारण नवम्बर का अंक प्रकाशित करने में पर्याप्त विलम्ब हो गया है जिसके लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

—व्यवस्थापक सार्वदेशिक

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष २२ | नवम्बर १९४६ ई० | अग्रहन २००३ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ९

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् इमा म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव । उत प्रवर्धया मतिम्

॥ ऋ० ८।६।३२ ॥

अर्थः—हे (इन्द्र) परमेश्वर ! (इमाम्) इस (मे) मेरी (सुष्टुतिम्) उत्तम स्तुति को (जुषस्व) प्रेम पूर्वक सेवन करो । (माम्) मुझे (सु) अच्छी तरह (प्र अव) प्रसन्नता से रक्षित करो । (उत) और मेरी (मतिम्) बुद्धि को (प्रवर्धय) उत्तमता से बढ़ाओ ।

विनय—हे सर्वैश्वर्य सम्पन्न प्रभो ! हम सब आपके भक्त सच्चे हृदय से आपकी स्तुति करते हैं । आप पिता माता के समान हमारे साथ प्रेम करने वाले हैं अतः रक्षा के लिये हम आपसे प्रार्थना करते हैं । आप उत्तम बुद्धि और शक्ति दे कर हमारी रक्षा करें । हमारी बुद्धि सर्वथा शुद्ध और पवित्र हो जिस से बुरे मार्ग में प्रवृत्त होकर हम कभी दुःख न उठाएं ॥

वेदोपदेश वीर प्रशस्ति

(ले०—पं० रामनाथ जी वेदालङ्कार, गुरुकुल कांगड़ी)

सुप्रवाचनं तव वीर वीर्यं
यदेकेन क्रतुना विन्दसे वसु ।
आतूष्ठिरस्य प्र वयः सहस्वतो
या चकर्थ सेन्द्र विश्वास्युकथ्यः ॥ १ ॥
ऋ० २-१३-११ ।

(१) (सुप्रवाचनं) बहुत बखानने योग्य है (वीर) हे वीर। (तव वीर्यम्) तेरी यह वीरता (यत्) कि (एकेन क्रतुना) अपने अद्वितीय कर्म से तू (वसु) ऐश्वर्य को (विन्दसे) प्राप्त कर लेता है, और (आतूष्ठिरस्य) सदा स्थिर (सहस्वत) बहुत बली भी (राक्षस की) (वय) आयु को (प्रवन्दसे) तू अपने वश में रखता है, (या विश्वा चकथ) ऐसे सब बड़े २ कामों को जो करता है (स) वह तू (इन्द्र) हे वीर (उकथ्य असि प्रशंसनीय है।

बखान करने योग्य है, ऐ वीर। तेरी वीरता, तू अपने अद्वितीय कर्म से बड़े-से बड़े ऐश्वर्य को अधिगत कर सकता है। अडिग से अडिग और बली से बली राक्षस की आयु को तू अपने पंजे में कर लेता है। ऐसे बड़े बड़े सब कार्यों के करने में जो समर्थ है ऐसा हे वीर। तू सचमुच प्रशंसनीय है, प्रशंसनीय है।

न क्षोणीभ्यां परिभ्वे त इन्द्रियं
न समुद्रैः पर्वतैरिन्द्र ते रथः ।
न ते वज्रमन्वश्नोति कश्चन
यदाशुभिः पतसि योजना पुरु ॥ २ ॥
ऋग० २ ६ ३

२— हे वीर। (ते इन्द्रियम्) तेरा बल (क्षोणीभ्याम्) द्यावा पृथिवी से (परिभ्वे न) पराभूत नहीं होता (न) न ही (ते रथः) तेरा रथ (समुद्रैः) समुद्रों से, और (पर्वतैः) पहाड़ों से, (ते वज्रम्) तेरे वज्र की (कश्चन) कोई भी (न अन्वश्नोति) टक्कर नहीं ले सकता, (यत्) जब (आशुभिः) वेगवान रथादियों के द्वारा, तू (पुरु योजना) बहुत बहुत कोसों तक (पतसि) दौड़ता आता है।

जब तू राक्षसों पर विजय पाने निकलता है और बिना थके कोसों की दूरी तय करता चलता है तब तेरी शूरवीरता दर्शनीय होती है। धरती और आसमान दोनों मिलकर भी तेरे बल को पराभूत नहीं कर सकते, तेरे रथ को समुद्र और पहाड़ भी नहीं रोक सकते, तेरे वज्र की भला कौन टक्कर ले सकता है।

न पर्वता न नद्यो वरन्त वो
यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत् ।
उत द्यावापृथिवी याथना परि
शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥ ३ ॥
ऋग० ५-५५-७

३ (मरुत) हे वीरो। (न पर्वताः) न पहाड़ (न नद्य) नहीं नदियां (वः) तुम्हें (वरन्त) रोक सकती हैं, (यत्र अचिध्वम्) जहां पहुँचने का तुम संकल्प करो (तत्) वहां (गच्छथ इत् उ) निश्चय ही पहुँच जाते हो। (उत) और (द्यावापृथिवी) सारे आकाश और पृथ्वी की (परि-याथन) तुम परिक्रमा कर सकते हो। (शुभं यातम्) शुभ विजय-यात्रा पर चलने वाले तुम्हारे (अनु) अनुकूल (रथाः अवृत्सत) तुम्हारे रथ चलते हैं।

ऐ वीरो। पहाड़ तुम्हें नहीं रोक सकते, नदियां

तुम्हें नहीं रोक सकतीं। जहां चाहो वहां तुम चले जा सकते हो। बिना किसी रोक-टोक के धरती-आस्मान की परिक्रमा कर सकते हो। तुम्हारे रथ तुम्हारे इशारे पर चलते हैं।

आभूषेण्यं वो मरुतो महित्वनं
दिदृक्षेण्यं सूर्यस्येव चक्षणम्।
उतो अस्मां अमृतत्वे दधातन
शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥ ४ ॥
ऋग्० ५ ५५ ४

४ (मरुतः) हे वीरो। (वः महित्वनम्) तुम्हारी महिमा (आभूषेण्यम्) आभूषण-रूप है, (सूर्यस्य इव चक्षणम्) सूर्य की तरह का तुम्हारा रूप (दिदृक्षेण्यम्) दर्शनीय है। (उतो) और तुम (अस्मान्) हमें (अमृतत्वे दधातन) अमर कर दो। (शुभं याताम्) शुभ विजय-यात्रा पर चलने वाले तुम्हारे (अनु) अनुकूल (रथाः अवृत्सत) तुम्हारे रथ चलते हैं।

ऐ वीरो। तुम्हारी महिमा तुम्हारा आभूषण है तुम्हारा सूर्यवत् तेजस्वी रूप दर्शनीय है। अपनी वीरता से तुम हम अमर कर दो। जब तुम रथारूढ़ होकर विजय-यात्रा पर निकलते हो तब तुम्हारे रथ तुम्हारे इशारे पर चलते हैं।

को वो महान्ति महतामुदश्नवत्
कस्काव्या मरुतः को ह पौंस्या।
यूयं ह भूमिं किरणं न रेजथ
प्र यद् भरध्वे सुविताय दावने ॥५॥
ऋग्० ५०५६०४

५ (क) कौन (वः महताम्) तुम महानों के (महान्ति) महान् कार्यों का (उदश्नवत्) पार पा सकता है? (कः) कौन (काव्या) तुम्हारे कवि-कर्मों का, तुम्हारी दूरदृष्टियों का? (मरुतः) वीरो। (कः ह) और कौन (पौंस्या) तुम्हारे पौरुषों का? (यूयं ह) तुम तो (भूमिम्) भूमि को (किरणं न) किरण की तरह (रेजथ) चलायमान कर सकते हो, (यत्) जोकि तुमने (सुविताय) सुख के लिये लोक-कल्याण के लिये (दावने भरध्वे) अपने आप को दान में दिया हुआ है।

कौन तुम महानों के महान् कार्यों का पार पा सकता है? कौन तुम्हारी दूरदर्शिता का और कौन तुम्हारे पौरुष का पार पा सकता है? तुम ऐसे वीर हो कि सारी धरती को एक किरण की भांति चलायमान कर सकते हो ऐसे तुम लोक-कल्याण के लिये अपने को न्योछावर किये हुए हो।

पर्वतश्चिन्महि वृद्धो बिभाय
दिवश्चित् सानु रेजत स्वने वः।
यत् क्रीडथ मरुत ऋष्टिमन्त
आप इव सध्र्यञ्चो धवध्वे ॥६॥
ऋग् ५.६०.३

६ (महि वृद्धः) इतना अधिक बड़ा (पर्वतः चित्) पहाड़ तक (बिभाय) भयभीत हो उठता है, (दिवः चित् सानु) आकाश की चोटी तक (वः स्वने) तुम्हारे सिंहनाद होने पर (रेजते) कांप उठती है, (यत्) जब, तुम (मरुत) हे वीरो। (ऋष्टिमन्तः) हथियारों से सज्जित होकर (क्रीडथ) रणक्रीडा करते हो तब (सध्र्यञ्चः) साथ मिलकर गति करने वाले तुम (धवध्वे) ऐसा दौड़ते हो (इव) जैसे (आप) नदियाँ।

तुम्हारी सिंह गर्जना को सुनकर बड़े बड़े पहाड़ तक भयभीत हो उठते हैं, आकाश की चोटियाँ तक हिल पड़ती हैं। जब तुम हथियारों से सुसज्जित हो साथ मिलकर रण-क्रीड़ा करने लगते हो तब ऐसे वेग से दौड़ते हो जैसे वेगवती नदियाँ।

सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां,
समुद्रस्येव महिमा गभीरः।
वातस्येव प्रजवो नान्येन
स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे व ॥७॥
ऋग ५०३३०८

७ (एषाम्) इन [तुम वीरों] की (ज्योतिः) ज्योति (सूर्यस्य वक्षथः इव) सूर्य के मण्डल की तरह है, (समुद्रस्य इव) समुद्र की तरह गभीरः) गम्भीर (महिमा) तुम्हारी महिमा है, (वातस्य इव) वायु की तरह (प्रजवः) प्रकृष्ट वेग है। (वसिष्ठा) हे सदा बसने वाले—कभी न उजड़ने वाले वीरो। (वः स्तोमः) तुम्हारी यह तारीफ (अन्येन) किसी दूसरे से (अन्वेतवे न) प्राप्त करने योग्य नहीं है।

सूर्य मण्डल की तरह, ऐ वीरो। तुम्हारी ज्योति है, समुद्र की तरह गंभीर तुम्हारी महिमा है, वायु की तरह तुम्हारा वेग है। ऐ वीरो। तुम्हारी इस तारीफ को और भला कौन पा सकता है?

युष्मोतो विप्रो मरुत शतस्वी,
युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री।
युष्मोतः सम्राडुत हन्ति वृत्रं
प्र तद् वो अस्तु धूतयो देष्णम् ॥८॥
ऋग् ७।५८।४

८. (मरुतः) हे वीरो। (युष्मोतः) तुमसे रक्षित (विप्रः) ब्राह्मण (शतस्वी) सैंकड़ों का मालिक हो जाता है, (युष्मोतः) तुमसे रक्षित (अर्वा) आक्रमणकारी (सहुरिः) सहनशील योद्धा (सहस्री) सहस्रों का मालिक हो जाता है। (उत) और (युष्मोतः) तुमसे रक्षित (सम्राट्) राजा (वृत्रं) शत्रु को (हन्ति) मार गिराता है। (धूतयः) हे शत्रु-प्रकम्पक वीरो। (वः) तुम्हारा (तद्) वह (देष्णम्) लाभदायी रूप (अस्तु) हमारे लिये भी होवे।

जिसकी रक्षा में तुम तत्पर हो जाते हो वह ब्राह्मण सैंकड़ों का मालिक हो जाता है, जिसकी रक्षा में तुम तत्पर हो जाते हो वह योद्धा सहस्रों का मालिक हो जाता है, जिसके तुम रक्षक होते हो वह राजा शत्रु को मार गिराने में समर्थ हो जाता है। ऐ शत्रु-प्रकम्पक वीरो। तुम्हारा वह लाभदायी रूप हमारे लिये भी प्रकट हो।

अध्यात्मसुधा

सच्ची आत्मिक उन्नति के साधन

एक महात्मा के उपदेशामृत

(१) स्वार्थी और पेटूपना न होना चाहिये, अर्थात् सर्वदा यही ख्याल रखना कि अच्छे २ भोजन मिलजावे। जैसे कि मथुरा जी के चौबों की हालत है और भोजन के असली उद्देश्य को न समझ कर भोजन भूख से भी अधिक खालेना। उन्नति के इच्छुक को इस आदत को छोड़ना जरूरी है कई समय खाने की आदत भी छोड़नी चाहिये॥

(२) व्यर्थ की गप्प को बन्द कियाजावे, दूसरों की घरेलू और गुप्त बातों के विषय में बात चीत करना, केवल समय को व्यतीत करने की वजह से बात चीत करना और बिना किसी प्रयोजन के व्यर्थ बातें करने का नाम गप्प है ऐसी फजूल बातें बिना नियम के आदमी से ही हुआ करती हैं धर्मात्मा और सदाचारी मनुष्य अपनी वाणी को अपने वश में रक्खेगा, इधर उधर की व्यर्थ बातें नहीं करेगा।

(३) शरीर रूपी चरखा है जिस में मनरूपी जुलाहा, विचार रूपी सूत से चरित्र रूपी वस्त्र बनाकर उस में लिपट जाता है जैसे रेशम का कीड़ा। इस शरीर रूपी जीव को इस मन पर पूर्ण अधिकार दिया हुआ है अब इस के अधिकार में है कि चाहे जैसा चरित्र बनाले। सद्‌विचार का (परिणाम) आनन्द व परम सुख है न कि धन दौलत, और कुविचार का परिणाम परम दुःख है न कि धन अभाव।

(४) संसार में उस समय तक कोई उन्नति या सफलता नहीं हो सकती, जब तक कि कुछ हानि न उठाई जावे, और स्वार्थों की आहुति न दी जावे, जितना अधिक मनुष्य अपनी विषय वासनाओं का त्याग करेगा और अपने मन को अपने उद्देश्य की पूर्ति के उपाय में लगायेगा, तथा अपने ऊपर विश्वास करना सीखेगा, उतना ऊँचा वह अपने विचारों को बनायेगा उतना ही अधिक वह वीर, साहसी, सच्चा और ईमानदार हो जावेगा, उतनी ही अधिक उस को सफलता होगी। जो मनुष्य कुछ करना ही नहीं चाहता उसे स्वार्थ की आहुति देने और इन्द्रियों के दमन करने की भी जरूरत नहीं है परन्तु जो मनुष्य कुछ करना चाहता है उस के लिये इन बातों की अत्यन्त जरूरत है।

(५) जितना मनुष्य काम करना चाहता है उतनी ही आहुति उसे देनी होगी, बिना आहुति दिये कोई काम नहीं हो सकता, चाहे वह कितना ही छोटा और कितना ही बड़ा हो।

(६) भलाई और नेकी के बराबर कोई रक्षा नहीं है। भलाई से मेरा मतलब केवल यह नहीं है कि केवल सद् विचार के नियमों का पालन किया जावे बल्कि यह मतलब है कि हमारे विचार शुद्ध और पवित्र हों, हमारा प्रेम निस्स्वार्थ हो और हम में व्यर्थ का थोथा अभिमान न हो।

(७) सदा सद् विचारों में जीवन व्यतीत करना मानो अपने चारों ओर शक्ति और प्रेम की वायु बहाना है यह जरूरी है कि तुम भी पहले अकेले रहने का उद्योग करके शक्ति के मार्ग में

प्रवेश करो। रीति रिवाजों की परवा मत करो, लकीरके फ़कीर न बने रहो, दूसरे क्या कहते हैं इस की कोई चिन्ता न करो तुम केवल लोगो के बीच में अकेले और सीधे खड़ा होना सीखो, यह तुम्हारा उद्देश्य होना चाहिये। इस पर तुम अटल जमे रहो, अपनी राय पर विश्वास करो, अपनी अन्तरात्मा के आदेशानुसार प्रवृत्ति करो, जो ज्ञान और प्रकाश तुम्हारे अन्दर है उस से प्रकाशित होओ ऐसे मनुष्य भी हैं जो तुम से यह कहेंगे कि तुम मूर्ख हो, तुम्हारे विचार मिथ्या हैं तुम्हारी बुद्धि में भ्रम है, तुम में विवेक नहीं है, तुम लोगों के कहने की कोई परवा न करो।

(८) कम से कम इतना तो जरूरी है कि तुम्हारी अन्तरात्मा तुम्हारी है उसी का अनुकरण करना मनुष्य होने . कारण तुम्हारा कर्त्तव्य है दूसरे मनुष्य की अन्तरात्मा के अनुकूल प्रवृत्ति करता दास बनना है।

(९) तुम्हें अनेक बार परास्त होना पड़ेगा, तुम्हें कष्टों को सहन करना पड़ेगा, परन्तु तुम अपने सिद्धान्त पर अटल हुयें आगे बढ़े चलो, और इस बात का विश्वास रक्खो कि पूर्ण और निश्चित विजय आगे ही चलकर हैं। किसी एक सच्चे सिद्धांत पर दृढ़ता से जम जाओ फिर चाहे कुछ भी हो, परन्तु उस से विचलित न होओ। जब तुम में इतना बल आजावेगा, तब फिर तुम्हें स्वार्थ और वासना की लहरें न बहा सकैंगी। जहां काम क्रोध आदि की प्रचण्ड ज्वालायें उठती हैं और कुत्सित इच्छाओं और वासनाओं की अग्नि दहकती है वहांपर ज्ञान और शान्ति की मन्द सुगन्धित और शीतल पवन कैसे बह सकती है। मनुष्य को स्मरण रहे कि जीवन का काल बहुत थोड़ा है इस को व्यर्थ दूसरों के दोष ढूंढने में नहीं खोना चाहिये, दुनिया के पाप, दुःख और शोक दूसरों के दोष ढूंढने और उन से झगड़ा करने से दूर नहीं होसकते। क्या कोई मनुष्य अपने शरीर के दासत्व को दूर किये बिना, अपने मन को सत्य के साचे में ढाल सकता है कदापि नहीं।

(१०) वह मनुष्य जो इस मार्ग को बहुत कठिन बतलाता है और कहता है कि मैं बिना मेहनत के सत्य चाहता हूँ बिना उद्योग के मोक्ष चाहता हूँ, कदापि स्वार्थ के दुःखों और प्रपंचों से बाहर नहीं निकल सकेगा, उसका मन कभी शान्त और सुरक्षित न होगा।

(११) ओ। सत्य के प्रेमियो। अपने मन को पूरे तौर से तय्यार करलो, सावधान दृढ़चित्त और विचार शील बनो। तुम्हारी मुक्ति तुम्हारे समीप है केवल तुम्हारी तय्यारी की जरूरत है यदि तुम्हें दस बार या सौ बार या हजार बार भी असफलता हो, तो भी अपने मार्ग से कभी भी विचलित न होओ। एक बार भी यदि सत्य मार्ग पर लग जाओगे और उसपर जमे रहोगे तो अवश्य सफलता होगी। पहिले मेहनत करनी पड़ती है पीछे आराम मिलता है।

(१२) वासना का क्षेत्र सबसे नीचा है इस में पड़े हुये जीवों को अनेक कष्टों को भोगना पड़ता है, अपनी इन्द्रियों को अपने वश में करलो। बस उन्नति का मार्ग मिलजावेगा। वासना शान्ति की घातक और आनन्द की नाशक है वासनाओं की बढ़ती वहीं पर होती है जहां ब्रह्मज्ञान का अभाव है जहां ब्रह्मज्ञान है वहां इनका प्रवेश नहीं हो सकता। जिस प्रकार अग्नि बड़ी २ इमारतों को एकदम जलाकर खाक कर देती है इसी प्रकार

वासना की अग्नि मनुष्य को भस्म कर देती है इच्छायें एक प्रकार की चलती हुई तलवारें हैं।

(१३) हर वक्त मनुष्य अपने विचारों का उत्तर दाता है। मनुष्य को लुभाने वाली चीजें अपवित्र विचार और इन्द्रियों के भोग विलास की इच्छाए हैं। यदि मनुष्य के हृदय में काम की इच्छा नहीं है तो लालच का कुछ असर नहीं हो सकता। जब मनुष्य इस बात को स्पष्ट रूप से देख लेता है कि बुराई मेरे अन्दर है बाहर नहीं, तब वह उन्नति कर सकेगा, उसका लालच घट जावेगा, और वह बहुत शीघ्र अपने क्षोभ कषायों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर सकेगा। जीवन की पूर्णता आनन्द मय है दुःखमय नहीं।

(१४) बुराई पर संतोष कर लेना अपनी पराजय को स्वीकार कर लेना है इस से सूचित होता है कि जो युद्ध अपनी वासनाओं के साथ किया गया था उसे छोड़ दिया और बुराई को ग्रहण कर लिया है।

(१५) जो मनुष्य अपनी भूलों और त्रुटियों को प्रकट होते नहीं देखसकता, किन्तु उन्हें छिपाना चाहता है वह सत्यमार्ग का अनुगामी नहीं होसकता। जो मनुष्य अपनी नीच प्रकृति का निर्भय होकर सामना नहीं कर सकता, वह त्याग के ऊँचे शिखर पर नहीं चढ़ सकता।

(१६) स्वार्थ और अभिमान हमारे शत्रु हैं यदि इन्हें नष्ट करदिया जावे तो बुराई भी नष्ट होजाती है।

(१७) जिस प्रकार वर्षों से सुरक्षित रक्खे हुये बहुमूल्य भूषणों को कुठाली में डालते समय कुछ दुःख-सा होता है, परन्तु जब फिर से उनके नये सुन्दर भूषण बना दिये जाते हैं तो चित्त को प्रसन्नता होती है। इसी प्रकार आत्मिक उन्नति के इच्छुक को पहले तो अपनी पुरानी आदतों को त्यागते हुए कुछ दुःख होता है, परन्तु जब बाद में उसे ज्ञात होता है कि इन स्थानों में नवीन, पवित्र और आनन्दवर्धक शक्तियां उत्पन्न हो गई और आत्माने उन्नति की तो उसे बड़ा आनन्द आता है त्याग की पहली अवस्था कुछ दुःखदायिनी होती है परन्तु वह बहुत थोडे समय तक रहती है कारण कि दुःख का शीघ्र ही पवित्र आत्मिक सुख में परिवर्तन हो जाता है। जितनी शक्ति और बुद्धिमानी से उद्योग किया जाता है उतनी ही स्थिति दुःख की कम होती है। ज्ञानी मनुष्य को इस बात का विश्वास हो जाता है कि मेरे दुःख का कारण मेरे अतरग में मौजूद है वह पाप की खोटी धातु को त्याग को अग्नि में जलाकर उसमें से सत्य के शुद्ध और पवित्र स्वर्ण को निकाल लेता है ज्ञानी और अज्ञानी मे केवल इतना ही भेद रहता है कि अज्ञानी ईंट का जवाब पत्थर से देता है परन्तु ज्ञानी बुराई के बदले भलाई करता है जब तक मनुष्य कषायों और वासनाओं में लिप्त रहते है दु खों के भार से दबे रहते हैं और उन चिन्ताओं के कारण दुःखी रहते हैं तब सब से अधिक चिन्ता उन्हें अपने तुच्छ शरीर की रहती है, उन्हे रात-दिन इसी का ध्यान रहता है कि किसी प्रकार शरीर स्वस्थ और नीरोग रहे और अनन्त काल तक सुखी रहे, सासारिक विषय-वासनाओं से उनका विछोह न हो। इसके विपरीत उत्कृष्ट जीवन में इन सब बातों का अभाव हो जाता है स्वार्थ जाता रहता है अपने निजी सुखों के स्थान में सम्पूर्ण संसार के सुखों का खयाल आने लगता है अपने शरीर सम्बन्धी

दुःख और चिन्तायें कम हो जाती हैं और सारा जगत् अपना ही अपना दिखाई देने लगता है। जिसने अपने को सर्वथा धर्म मार्ग पर लगा दिया है उसने स्वाधीनता को प्राप्त कर लिया है, वह अज्ञान, अन्धकार और विनाश को पार कर गया है और प्रकाश तथा निस्यता में प्रविष्ट हो गया है।

उत्कृष्ट मनुष्य वह है जिसने कषायों और वासनाओं को वशीभूत कर लिया है, बुराई का नाश कर दिया है और भलाई में तन्मय हो गया है। वह उस मनुष्य के समान है जिस के पहले नेत्र न थे परन्तु अब नेत्र हो गये हैं और जो अब पदार्थों को असली रूप में देखने लगा है।

(क्रमशः)

[ये जीवनोपयोगी अत्युत्तम अनुभव सिद्ध उपदेश उन वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी उच्च कोटि के महात्मा द्वारा संकलित हैं, जिन की कुछ कृतियां भजन रूप में 'सार्वदेशिक' के कई अङ्कों में हम प्रकाशित कर चुके हैं। हमें निश्चय है कि इन में से एक २ सूत्र को अध्यात्म प्रेमी पाठक एक रत्न के समान समझेंगे और उन से लाभ उठाएंगे।

—सम्पादक]

हिन्दी भाषा की प्राचीनता

हिन्दी और मुसलमान कवि

(ले०—श्री पं० शिवप्रिय शर्मा आचार्य, शब्दशास्त्री, उपा० गुरुकुल झज्जर, रोहतक)

देहली अरेबिक कालेज हाल में कुछ दिन हुए अंजुमन तरक्कीये उर्दू के मन्त्री श्री डाक्टर अब्दुल हक साहब का "उर्दू, हिन्दी, हिन्दुस्तानी" विषय पर एक व्याख्यान हुआ जिसका विवरण स्थानीय मुस्लिम लीगी पत्र "डान" ने निकाला है।

डाक्टर हक ने अपने भाषण में उर्दू एक सहस्र वर्ष पुरानी भाषा है और हिन्दी उन्नीसवीं शताब्दी से पहिले न थी ऐसा कहा है।

हमे डाक्टर साहब की बातको पढ़कर आश्चर्य होता है वह आश्चर्य भी इसलिये कि डाक्टर साहब उर्दू भाषा के माने हुए विद्वान् है साथ ही अन्य भाषाओ के साहित्य, इतिहास आदि से भी अपरिचित नहीं है। ऐसे सुयोग्य विद्वान् से यह आशा थी कि वह अपने कथन का समर्थन पक्षपात से दूर रहकर प्रबल और अकाट्य युक्तियों के आधार पर करेगा, कपोल कल्पित, मनघड़न्त गप्पो से नहीं। परन्तु डाक्टर साहब साध्य को ही सिद्ध मान बैठे हैं। भाषण को आदि से अन्त तक पढ़ जाइये एक भी युक्ति ऐसी नहीं जिसके आधार पर उर्दू को एक सहस्र वर्ष पुराना कहा जा सके आज के प्रकाशमय समय मे डाक्टर साहब के "ब्रह्मवाक्य जनार्दन" वाले सिद्धान्त को कौन मानने लगा है। इस लिये निस्संकोच कहा जा सकता है कि डाक्टर साहब इन अटकल पच्चू बातों से अपने मनोरथ में कभी सफल न होंगे।

शाहजहाँ के कुछ सैनिक अरबी और फारसी बोलते थे फारसी और अरबी के शब्दो का समिश्रण भारत की प्रचलित भाषा हिन्दी भाषा के साथ ही हुआ और एक नवीन भाषा की रूपरेखा सामने आई। जो कालान्तर मे उर्दू कहलाई, जैसे कि उर्दू का अर्थ भी–फौजी बाजार है आगे डाक्टर साहब ने भी अपने व्याख्यान में स्वीकार किया है कि अरबी और फारसी के शब्दों के साथ मिश्रण होने से उर्दू का जन्म हुआ। क्या कृपा कर डाक्टर साहब यह बतला सकेंगे कि वह कौनसी भाषा थी कि जिसके साथ फारसी और अरबी के शब्दों का समावेश हुआ मानना पड़ेगा वह हिन्दी ही थी। यह एक ऐसी मोटी बात है जिस की इतिहास के प्राईमरी श्रेणी के विद्यार्थी से भी आशा नहीं की जा सकती कि वह ऐसी भूल करेगा। शाहजहा के उपरान्त उर्दू को मुसलमान लोगो ने ऊपर उठाने का प्रयत्न किया बीजापुर और गोलकुण्डा के शासको की ओर से सैनिकों को फारसी लिपि मे उर्दू भाषा सिखाकर दी गई जिस से उर्दू के प्रचार मे पर्याप्त सहायता मिली।

परन्तु हिन्दी का स्थान उर्दू ने ले लिया हो यह बात नहीं। शाहजहा के उपरान्त भी कतिपय मुगल राजाओ की राज्य भाषा भी हिन्दी [हिन्दुस्तानी] ही रही है। जैसा कि सन् १७१७ में श्री हैमिल्टन ने लिखा है कि मैं हिन्दी [हिन्दुस्तानी] में बोल रहा हूँ जो मुगलो के राज्य की प्रचलित भाषा है।

हाँ पक्षपाती औरङ्गजेब ने अपने दरबार की

भाषा अवश्य फ़ारसी करदी होगी। क्योंकि सन् १६७३ ई० मे फ्रायर लिखता है कि दरबार की भाषा फ़ारसी है और जनता की हिन्दुस्तानी। इस से इतना अवश्य मालूम होता है कि उर्दू शाहजहाँ के शासन काल मे जन्म लेकर भी शैशवावस्था मे ही पड़ी रही इसीलिये औरङ्गजेब ने फारसी को ही दरबार की भाषा बनाया नहीं तो औरङ्गजेब जैसा पक्षपाती उर्दू को कब छोड़ने वाला था परन्तु इस का अभिप्राय यह नहीं है कि हिन्दी [हिन्दुस्तानी] का कुछ ह्रास हुआ हो। हिन्दी का प्रचार अच्छी अवस्था मे रहा। सन् १६६७ ई० मे वालेन्टान हिन्दी भाषा की चर्चा करते हुए लिखता है कि एबीसीनया का राजदूत हिन्दी हिन्दुस्तानी मे बात चीत करता था और टिक्युआ के गवर्नर का मन्त्री उसका अभिप्राय समझता था।

सन १८३३ मे आम लिखता है कि पाण्डेचरी के दो कौन्सिलर, जो मर गये उन मे से एक अच्छी तरह से हिन्दी (हिन्दुस्तानी) और फारसी जानता है क्योकि सुलतानो के दरबार मे यही दो भाषायें व्यवहार मे आती हैं।

शाहजहाँ के परान्त ही हिन्दी बोली जाती हो यह भी बात नहीं है। शाहजहां से पहिले सैंकड़ो वर्षों से हिन्दी बोली जाती थी यहां तक कि बादशाह अकबर भी हिन्दी (हिन्दुस्तानी) बोलता था।

सन १५८१ ई० मे पादरी एक्वा वीवा ने अपने पत्र में लिखा है कि जब मैं अपने द्विभाषिये डोमिङ्गो पिरीज के द्वारा जो हिन्दुस्तानी स्त्री से विवाह करा रहा था तो मै फ़ारसी बोलता था और बादशाह अकबर जो वहां विद्यमान था फ़ारसी वाक्यों का अनुवाद हिन्दी (हिन्दुस्तानी) में करता जाता था इससे स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा का प्रचार बहुत पर्याप्त था।

अभी बिहार सरकार को मुगलकालीन कुछ फरमान और सनदें मिली हैं जिनमें एक सनद बहुत पुरानी है इसके द्वारा महाराजाधिराज राजा मानसिंह ने किसी को जागीर दी है वह सनद हिन्दी में है इससे भी पता चलता है कि अकबर के समय में हिन्दी बोली जाती थी।

इसी सोलहवीं शताब्दी मे स्व० मलिक मुहम्मद जायसी ने हिन्दी की कितनी सुन्दर शब्दावली मे कविता की है—

सर वर तीर पदमिनी आई,
खोपा छोरी केस मुकुलाई।
ससि-मुख अंग मलयागिरि बासा,
नागिन झांप लीन्हु चहु पासा।

इससे भी पहले चौदहवीं सदी मे मीर खुसरो ने 'काजल' के ऊपर कितना सुन्दर हिन्दी मे लिखा है—

आदि कटे से सबको पाले,
मध्य कटे से सबको घाले।
अन्त कटे से सबको मीठा,
सो खुसरो मैं आखो डीठा।

इतना ही नहीं यदि हिन्दी का सर्वप्रथम श्रेष्ठ कवि स्व० चन्दबरदाई को भी माना जावे तो स्वीकार करना पड़ेगा कि तेरहवीं शताब्दीमे हिन्दी बहुत ही उन्नतावस्था मे थी। इसलिये डाक्टर इक साहब का यह कहना कि "हिन्दी उन्नीसवीं शताब्दी से पहले न थी' कहांतक इक (सचाई) की बात है पाठकवृन्द ! अच्छी तरह से समझलें।

हां यह तो किसी अंश मे ठीक भी हो सकता

है कि हिन्दी एक सहस्र वर्ष पुरानी भाषा है और उर्दू शाहजहां के शासनकाल से पहले न थी। डाक्टर हक होते हुए पक्षपात को छोड़कर बोलते तो क्या ही अच्छा होता ?

वर्तमान हिन्दी भाषा अंग्रेजों की प्रेरणा से उर्दू की प्रतिद्वन्द्विता के लिये किसी कारखाने में मशीनों से घड़ी गई यह बात नहीं है जिसने हिन्दी भाषा के इतिहास की प्राइमरी को भी उठाकर देखा है वह भली प्रकार जानता है कि हिन्दी भाषा का सुदृढ़ स्तम्भ तो संसार की सर्व-प्रथम भाषा वैदिक संस्कृत है। जो कि अमेरिका के सुप्रसिद्ध विद्वान् विलडुरेन्ट Will Durant के शब्दों में Sanskrit the mother of Europe's Languages, she was the mother of our philosophy योरुपीय भाषाओं की जननी तथा हमारे फिलौसोफी (दर्शनशास्त्र) की माता थी वही संस्कृत भाषा प्राकृत के रूप में परिवर्तित होकर कालान्तर में वर्तमान हिन्दी के रूप में सामने आई जो एक सहस्र वर्ष से सर्व-साधारण की भाषा बनी हुई है। भारत के सत्तर पचहत्तर प्रतिशत निवासी इसको बोलते हैं।

आगे उर्दू भाषा को हिन्दू और मुसलमानों के सम्मिलित प्रयत्नों का परिणाम बतलाते हुए डाक्टर हक साहब पुनः हक (सचाई) की बात भूल गये हैं। मुसलमान लोग शाह अकबर, अब्दुल रहीम खानखाना, रसखान, मुबारक, ताज, शेखरङ्गरेजिन, वाहिद, रसलीन, नूरमुहम्मद आदि एक नहीं, दो चार नहीं, दस पांच नहीं, सैंकड़ों कवियों ने हिन्दी को अपनाया सहस्रों ही ऐसे भी कवि होंगे जिनकी रचना सर्वसाधारण के सामने आई ही नहीं।

यह बात भी नहीं कि इन कवियों ने हिन्दी लिपि में अरब और फारस तथा तुर्किस्तान के ही गीत गाये हों अपितु मुस्लिम होते हुए भारत को अपना समझा भारतीय आत्मा और भारतीय आचार विचार को अपनाया जहां आर्य कवियों ने भगवान् राम, भगवान् कृष्ण, प्रातर्वन्दनीया सीता, वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी सरीखे आर्य जाति में जीवन संचार करने वाली हुतात्माओं की प्रशंसा कर अपने जीवन को अमर किया वहां रसखान रहीम आदि कवियों ने भगवान राम भगवान कृष्ण के गुण-गान कर भारत के साथ आत्मीयता को प्रकट किया है श्रीमती ताज ने तो यहां तक लिख दिया है कि—

नन्दजू का प्यारा, जिन कंस को पछारा।
वह वृन्दावन वारा, कृष्ण साहेब हमारा है॥

इस लिये निस्संकोच कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य रूपी रथ का यदि एक चक्र हिंदू है तो दूसरा मुसलमान। हिन्दी देवी की यदि एक भुजा हिन्दू है तो दूसरी मुसलमान।

कितना प्रेम होगा परस्पर इन हिन्दू मुसलमानों में वह प्रकट नहीं किया जा सकता। श्रीमती ताज ने एक मनोहर छन्द के अन्त में जो कि हिन्दी भाषा में है कितने सुन्दर शब्दों में आन्तरिक स्नेह को दर्शाया है।

नन्द के कुमार कुर्बान, तेरी सूरत पें,
हो तो मुगलानी, हिन्दुवानी ह्वै रहूँगी मैं,

इसीलिये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने एक स्थानपर लिखा है कि "इन मुसलमान हरिजन पं कोटिक हिन्दू वारिये" मलिक मुहम्मद जायसी ने सोलहवी शताब्दीमें कि—

तुर्की अरबी हिन्दी भाषा जेति आहि।
जा में मारग प्रेम को सबै सराहैं ताहि॥

क्या डाक्टर साहब बतलायेंगे जबकि जहांगीर शाहजहां से पहिले हिन्दी न थी तो जायसी ने कहां से प्रयोग कर दिया? हां यह तो सचाई हो सकती है। शाहजहां के उपरान्त हिन्दी की प्रतिद्वन्द्विता के लिये उर्दू को मुसलमानों ने उभारा। क्योंकि उर्दू की लिपि फारसी है और फारसी और अरबी के शब्दों का मिश्रण उर्दू में है।

मुसलमान कवियों ने ही हिन्दी को अपनाया हो यह बात नहीं हिजरी सम्वत्सर ५८२ से ९६४ हिजरी तक ऐबक, खिलजी, तुगलक, सय्यद तथा लोदी वंश के मुसलमान शासकों के सिक्के पर देवनागरी अक्षरों में हिन्दी का स्पष्ट प्रयोग मिलता है।

वे लोग मियाँ या मौलाना के साथ ही साथ श्रीहमीर, हमीर, आवावरी कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे। और नामों से पहिले श्री का प्रयोग करते थे यथा श्री सुलतां गयासुद्दीन, सुलतान श्री समदीन, श्री हमीर, श्री मुहम्मद साम, आदि में।

महमूद गौरी ने सन् १०२७ ई० में लाहौर से एक चान्दी का सिक्का चलाया था जिसके एक पृष्ठ पर नागरी लिपि में हिजरियन सवंत ४१८ लिखा हुआ है।

जब कि डाक्टर साहब एक सहस्र वर्ष पुरानी उर्दू को बतलाते हैं उस समय डाक्टर साहब की आदरणीय भाषा उर्दू भाषा शयन कर रही थी? अथवा घास खाने चली गयी थी।

यह कहना सरासर अशुद्ध है कि स्वामी दयानन्द तथा अन्यों ने पुनरुद्धार सम्बन्धी कार्य आरम्भ किये तब एक कृत्रिम भाषा हिन्दी चली आई।

हाँ इसमें सन्देह नहीं कि महर्षि दयानन्द जी महाराज ने स्वयम् गुजराती होते हुए भी हिन्दी को समस्त देशके लिए उपयुक्त समझा हिन्दी को अपनाया और इसी को अपने प्रचार का साधन बनाया जिस से हिन्दी का प्रचार बहुत हुआ और हिन्दी सरल लोकोपयोगी भाषा बन गई और राष्ट्र भाषा कहलाने के योग्य हो गई।

हिन्दुस्तानी

आगे चलकर डाक्टर साहब ने हिन्दुस्तानी को भी अर घसीटा है और उर्दू हिन्दी संघर्ष का कारण हिन्दुस्तानी के जन्मदाता महात्मा गान्धी को बताया है।

हमारे कतिपय राष्ट्रीय नेता यह समझ बैठे हैं कि राष्ट्रभाषा की समस्या हिन्दुस्तानी से हल हो जायेगी डाक्टर साहब के इस भाषण से उनके कान खुल जाने चाहियें।

थोड़ा सोचिये तो सही जो लोग समूचे राष्ट्र की सत्ता को स्वीकार नहीं करते पाकिस्तान पाकिस्तान की दुहाई दे रहे हैं खाते पीते, सोते, जागते, अहर्निश, सर्वत्र, कपोल कल्पित पाकिस्तान के ही स्वप्न देख रहे हैं उनकी पक्षपातपूर्ण पाकिस्तानमयी इस दूषित मनोवृत्ति में 'हिन्दुस्तानी' का समझौता सर्वथा लगड़ा समझौता कहा जा सकता है। इस से वे कभी सन्तुष्ट न होंगे। मि० जिन्ना के पाकिस्तान की तरह उर्दू २ चिल्लाते रहेंगे। अज्ञानी दुर्बुद्धि को भी समझा बुझाकर कालान्तर में किसी प्रकार ठीक किया जा सकता है परन्तु जो जान बूझकर ही न

जानना चाहे तो उसे किसी प्र कार भी ज्ञान नहीं कराया जा सकता।

हिन्दी का अंग भंग आप चाहें तो कर सकते हैं रूप भी बदल सकते हैं परन्तु राष्ट्रभाषा की समस्या इस हिन्दुस्तानी से हल हो जायगी यह कदापि नहीं हो सकता।

अतः अब तो एकमात्र सरल उपाय यही है कि हिन्दी को और भी सरल लोकोपयोगी बनाया जाये। इस प्रयत्न करने पर भी कोई अन्य भाषा हिन्दी के समक्ष ठहर न सकेगी और हिन्दी ही सचमुच राष्ट्रभाषा बन जायगी जैसे कि उसका वास्तविक अधिकार है।

[जिन दिनों डा० हक का यह उपर्युक्त व्याख्यान डान' आदि पत्रों में छपा था उन दिनों 'सार्वदेशिक' की एक सम्पादकीय टिप्पणी में उसकी कड़ी आलोचना की थी तथापि इस लेख में पाठक महोदय अन्य कई नई बातें पायेंगे अतः इसे प्रकाशित किया जा रहा है।

सम्पादक सा० दे०]

जय हिन्दी (आर्यभाषा)

(ले०—पं० सत्यदेव जी वेदालङ्कार, मन्त्री आर्यसमाज लुधियाना)

भारत की वर्तमान अवस्था ऐसी परिस्थितियों मे से गुजर रही है जिसे असाधारण ही कहा जा सकता है। प्रत्येक दिशा मे राष्ट्रीय विचार धारायें भिन्न भिन्न रूप मे प्रकट होकर भारतीय विचार समुद्र को क्षुब्ध करती हैं। अनिश्चित अवस्थाओं में ठीक रास्ते पर तथा ठीक उद्देश्य की तरफ अग्रसर होने के लिए समुचित नेतृत्व अपना विशेष स्थान रखता है। यदि ठीक नेतृत्व न हो तो इष्ट आन्दोलन कई बार अत्यन्त क्लेश-प्रद हो जाता है।

भारत की राष्ट्रीयता के लिए एक शक्तिशाली राष्ट्रभाषा जिसमे बहुमुखी विकाश का क्षेत्र स्पष्ट हो अनिवार्य है यह सर्वसम्मत है। ऐसी अवस्था में दो विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं की विशेषता को लिए हिन्दी और उर्दू सम्मुख आती हैं। हिन्दी भाषा भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा से सम्बन्ध रखती है। सब प्रान्तीय भाषाओं का पर्याप्त समन्वय इस मे स्पष्ट दिखाई देता है। इस भाषा की वर्णमाला तथा लिपि भी भारतीय ब्राह्मी तथा देवनागरी रूप मे है। यह रूप प्रायः भारत की सम्पूर्ण प्रान्तीय भाषाओं का भी है। भारत के 'मध्यदेश" की यह मुख्य भाषा है। भारतीय परम्पराओ तथा संस्कृति और धर्मों से इस भाषा का "सन्त महात्माओं" द्वारा विशेष सम्पर्क है। दूसरी तरफ उर्दू और हिन्दी भी आपस में पचास से साठ प्रतिशत तक मिलती हैं। क्रियायें तो दोनों की एक ही हैं जो वाक्य विन्यास में प्रधान होती हैं। ये सब क्रिया-पद विशेषतः हिन्दी भाषा के हैं। यदि उर्दू में परशियन और अरबी के शब्द व तरकीबें प्रयुक्त न हों तो लिपि और वर्णमाला को छोड़कर दोनो करीबन एक ही भाषा बन जाती है। उर्दू की लिपि तथा वर्णमाला भारत भूमि मे पूर्णतः विदेशी है यह तो स्पष्ट ही है। उर्दू भाषा हिन्दुओ ने बहुसंख्या में पढ़ी है। परन्तु मुसलमानों ने कभी बहुसंख्या में हिन्दी को नहीं पढ़ा इसीसे दोनो भाषाओ के गुणदोष साधारणतः मुस्लिम प्रजा को मालूम नहीं। टर्की में—राष्ट्रीयता के दिनो मे से यदि अरबी लिपि को हटाकर रोमन लिपि की जा सकती है और मुस्लिम प्रजाओं मे इससे न तो रोष ही हुआ और न कहीं विरोध प्रकट किया गया ऐसी अवस्था मे भविष्य में यदि विदेशी उर्दू लिपि का बहिष्कार किया जाय और तदर्थ प्रचार किया जाय—टर्की का उदाहरण देकर—तो भारतीय प्रजा अधिक आकर्षित होगी। यह कांग्रेसी नीति भयावह है तथा दूरदर्शिता पूर्ण नहीं जिसमें कहा जाता है कि प्रत्येक लिपि का संरक्षण किया जायगा। आज दुर्भाग्य से वास्तविक राष्ट्रीयता को छोड़कर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की शकल में प्रत्येक वस्तु देखी जा रही है। इसी से हिन्दी और उर्दू अलग अलग क्षेत्रो की राष्ट्रीयता को भाषा सम्बन्धी प्रतिनिधि बन गयी हैं। रेडियो की भाषा, डाकखाने, सरकारी विभाग आदि आदि सब स्थानों पर वे दोनो भाषायें अपने प्रभुत्व या समानता के लिए झगड़ रही हैं। स्पष्ट रूप में हिन्दू और मुसलमान अपनी अपनी सांस्कृतिक

महत्ता के लिए झगड़ रहे हैं या लड़ रहे हैं। दूसरे शब्दों में आर्य संस्कृति और सैमेटिक संस्कृति आपस में भूत काल की तरह पुनः लड़ने के लिए मोर्चा बन्दी कर रही हैं।

परन्तु प्रश्न यह है कि भारत भूमि पर अवश्यम्भावी सांस्कृतिक संघर्ष की इस भूमिका में क्या हिन्दी भाषा का संघर्ष प्रथम उर्दू से होना चाहिए या अङ्गरेजी से हिन्दी भाषा के पोषक अङ्गरेजी भाषा से किनारा काटते हैं और उर्दू पर अधिक बिगड़ते हैं परन्तु चाहिए यह कि उर्दू की उपेक्षा करदी जानी चाहिए और उपेक्षा कर देने मात्र से उर्दू का प्रभुत्व हट जायगा। भारतीय भाषा क्षेत्र में प्रभुत्व राष्ट्र में अङ्गरेजों की तरह अङ्गरेजी को प्राप्त है। यदि हिन्दी अङ्गरेजी भाषा से लड़ पड़े और उसके स्थान को संभालने के लिए झगड़े तो स्वयमेव भारत में उसी का प्रभुत्व हो जायगा। जिस तरह से हिन्दु महासभा और मुस्लिम लीग राजनैतिक क्षेत्रों में आये और इनसे भिन्न रूप में कांग्रेस खड़ी हुई। कांग्रेस की मुख्यता आगयी क्योंकि यह सरकारी शक्ति (प्रभुत्व की शक्ति) से लड़ती रही। ठीक इसी तरह से यदि हिन्दी भाषा उर्दू की अवहेलना करे और अंगरेजी से मोर्चा ले तो इसकी मुख्यता स्वतः सिद्ध है। कांग्रेसी व्यक्तियों के रूप में हिन्दी और मुस्लिम लीग रूप में उर्दू यदि राजनैतिक भाषा-संग्राम में उतरे और अङ्गरेजी भाषा की हकूमत से मोर्चा ले तभी भारतीय भाषा सम्बन्धी सांस्कृतिक युद्ध को ठीक नेतृत्व प्राप्त हो सकता है। हिन्दी भाषा के पोषकों की वर्तमान नीति—उर्दू विरोधिनी—हिन्दु महासभाई रूप में समझी जा सकती है। यही कारण है कि इस क्षेत्र में विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो रही।

अङ्गरेजी भाषा से मोर्चा लेने के लिए आवश्यक है कि एक महान् भाषा तथा संस्कृति सम्बन्धी युद्ध का आरम्भ हो। स्कूलों तथा कालिजों के नामकरण भारतीय भाषा में हों, व्यापारी दुकानों होटलों, शहरों की सड़को आदि आदि के नाम भारतीय भाषाओं से सम्बन्धित हों। बैंकों में चैक, ड्राफ्ट आदि भी हिन्दी हस्ताक्षरों से पूर्ण हों। यदि अंगरेजी भाषा की कहीं विशेष आवश्यकता हो तो उसे सब स्थान में राष्ट्रीय भाषा के नीचे स्थान दिया जाना चाहिए। चित्रपटों पर कार्यकर्ताओं की नामावली में अंगरेजी की प्रधानता न दिखा कर गौणरूप दिखाना चाहिए। डाक तथा तार विभाग में यथाशक्ति हिन्दी को अपना मोर्चा लेना चाहिए। जनता के स्कूलों और कालिजों में छात्रों से प्रण लेने चाहिए कि भविष्य में वे कभी अपने भारतीय पत्र व्यवहार में, विशेषतः पते लिखने में, अंगरेजी भाषा का प्रयोग न करेंगे। डाक तथा तार विभाग में यथा शक्ति हिन्दी का अपना मोर्चा लेना चाहिए। अंगरेजी में पुस्तकें लिखने वाले भारतीय लेखकों को बाधित किया जाय कि वे भारतीय भाषाओं में ही पुस्तकें लिखें। अंगरेजी तथा उर्दू पत्रकारों को प्रेरणा की जाय कि अपने पत्रों में प्रचारार्थ एक या दो कागज हिन्दी भाषा द्वारा समाचार देने के लिए दो। यदि ये ऐसा न करें तो ऐसे समाचार पत्रों का जनता द्वारा बहिष्कार कराया जाय। स्कूलों और कालिजों में छात्रों द्वारा माग पदा की जाय कि विदेशी भाषा के प्रभुत्व को प्रत्येक स्थान से हटा दिया जाय। भारतीय भाषाओं के पढ़ाने वालों को अंगरेजी पढ़ाने वाले अध्यापकों

क बर बर वेतन मिले इत्यादि इत्यादि रूप में इस महान भाषा संग्राम की रूपरेखा को समझा जा सकता है।

अंग्रेज तो भारत छोड़ जायें परन्तु अंग्रेजी अपने रक्खे बन्ध देती रहे यह कहां तक संगत है जय हिन्द के नारे के साथ जय हिन्दी का नारा भी आवश्यक बन जाय दोनों नारों का आभिप्रेत अर्थ के उपयुक्त होता हिन्द और हिन्दी दोनों के जयकारों से त भारत भूमण्डल क्रान्ति युग का आह्वान करेगा

प्रान्तीय भाषाओं की उन्नति भी आवश्यक है तन सम्पूर्ण रूप एक होकर विदेशी सत्ता रूप में मोर्चा लेता हुआ आगे बढ़ रहा है उसी तरह राष्ट्रभाषा के लिए भी प्रान्तीयता से ऊपर उठकर अखण्ड रूप में खड़े होने से ही काम चल सकेगा। महात्मा गान्धी जी ने हिन्दुस्तानी भाषा तो ऐसा भारतीय भाषा मिश्रण पैदा किए हुए है ताकि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान को अलग न मानकर पुन दोनों में साधनों द्वारा एकता पैदा करना। घुलमिल कर एक हो जाना एक वस्तुतत्व का नवीन रूप में पैदा होना है परन्तु अलग व्यक्ति व रखकर मिले होना भिन्न ही स्वरूप होता है—रसायनिक मिश्रण तथा मिश्रण की तरह। अखण्ड रूप में राष्ट्रभाषा के समन्वयात्मक रूप को समझते हुए म ए (हिन्दुस्तानी रूप में की तरफ ध्यान न देते हुए और प्रान्तीयता से ऊपर उठते हुए, विजातीय द्रव्य से दूषित भारतीय भाषा शरीर को हिन्दी राष्ट्रभाषा द्वारा संशोधित किया जाना ही ध्येय होना चाहिए भाषा क्षेत्र में भी Quit India महत्वपूर्ण हो सकता है।

इस तरह मोर्चाबन्दी द्वारा क स्वत ह अंग्रेजी को उखाड़ फेंकना ही अपना हिन्दी आजा ... है इसक बाद ज क द्र म सम्मिलित प्रान्तीय स्वतन्त्रता को विकसित होने का पूर्ण अवसर स्वत प्राप्त ... के प्रान्तों में प्रान्तीय भाषाएं जा स्वयं बद्धमूल है अपने व्यक्तित्व का विशेष परिचय देंगी। उर्दू प्रधान पंजाब में पंजाबी, बंगाल में बंगाली सीमाप्रान्त में पश्तो और सिन्ध में सिन्धी जोर मारेंगी। ... में उर्दू अपने वाला पाकिस्तान की ... भाप ही रह सकेगी हिन्दी को उर्दू से लड़ना नहीं पड़ेगा परन्तु प्रान्तीय भाषायें ही उर्दू से लड़ पड़ेंगी प्रान्तीय भाषाओं से पूर्णतया मेल खाने वाली हिन्दी भाषा से युद्ध ... हो सकता। इस लिए हिन्दी उर्दू का युद्ध बिलकुल असंगत एवं अदूरदर्शिता पूर्ण है। हिन्दी की शक्ति अंग्रेजी भाषा के प्रभुत्व को हटाने पर केन्द्रित होनी चाहिए हिन्दी सम्मेलनों को उर्दू की उपेक्षा और अंग्रेजी पर आक्रमण की नीति को स्वीकार करना चाहिए। इसी में वास्तविक तथ्य तथा दूरदर्शिता छुपी है शारीरिक दासता के बन्धनों के टूटने के दिन समीप है, तो मानसिक या बौद्धिक एवं सांस्कृतिक दासता को भी उखाड़ फेंकने में हिचकिचाहट न होनी चाहिए। राष्ट्र की शारीरिक दासता के हटते ही बाकी रोगों का धीरे धीरे इलाज अवश्यम्भावी है परन्तु फिर भी यथाक्रम यथोचित रूप से प्रत्येक दिशा को देखना और समझना भी आवश्यक है। हिन्दी भाषा को ... जय हिन्द के नारे के साथ आगे बढ़ना चाहिए। समय आ चुका है जब इस विषय में अवहेलना न की जानी चाहिए।

जय आर्यभाषा

[योग्य लेखक महोदय ने इस लेख में जो विचार प्रकट किये हैं उन पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये। किन्तु वस्तुस्थिति की उपेक्षा नहीं की जा सकती। हिन्दुस्तानी के नाम पर जो उर्दू का प्रचार हो रहा है वह उपेक्षणीय नहीं है। केवल उर्दू की उपेक्षा करने से काम नहीं चल सकता। राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के अधिकारों की रक्षा के लिये प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन करना ही होगा।

—सम्पादक सा० दे०]

नई समाज व्यवस्था

(ले०—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक)

(५)

घोर आर्थिक असमानता के कारणों और उनके निवारण के उपायों पर विचार करते हुये पिछले पृष्ठों में हमने यह दिखाने की चेष्टा की थी कि हमारा वर्तमान सामाजिक संगठन पूंजीवाद पर केन्द्रित है। इसी प्रसंग में हमने पूंजीवाद की तात्विक त्रुटियां और उसकी असफलता पर भी संक्षेप में प्रकाश डाला था।

वास्तव में पूंजीवाद क्या वस्तु है इस पर सम्यक् विचार की आवश्यकता है।

पूंजी क्या है?

पूंजी मनुष्य के धन का वह भाग है जिससे वह कुछ रुपया कमाने की आशा रखता है केवल रुपया पूंजी नहीं होती मशीन, औजार आदि वस्तुयें भी जिनकी सहायता से धन उत्पन्न किया जाता है पूंजी में ही परिगणित की जाती हैं। पूंजी की आवश्यकता और उसके महत्त्व से कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। मानवीय सभ्यता के विकास की प्रारम्भिक सीढ़ी पर ही मनुष्य ने पूंजी की महत्ता का पता लगा लिया था। जीविकोपार्जन के लिये मनुष्य को पग पग पर पूंजी की आवश्यकता होती है। मनुष्य का घर, गृहस्थी की वस्तुयें इत्यादि सब पूंजी में सम्मिलित समझी जाती हैं। इस दृष्टि से प्रत्येक पूंजीपति होता है।

पूंजीवाद?

पूंजीवाद का वास्तविक लक्षण यह है कि इसमें पूंजीपतियों और मजदूरों के दो विभिन्न वर्ग बन गये हैं। मध्यकाल में यह बात न थी। औद्योगिक क्रान्ति के समय से ही जो इंगलैंड में १७५० से १८५० तक रही इस प्रणाली का सूत्रपात हुआ। उससे पहले कृषकों के पास अपनी भूमि थी और कारीगरों के पास अपने औजार। कालान्तर में किसान से उसकी भूमि और कारीगर से उसके औजार छीन लिये गये फलतः उन्हें पूंजीपतियों के पास जाकर नौकरी करने के लिए विवश होना पड़ा।

इस क्रान्ति के समय बहुत से नये२ आविष्कार हुये और उत्पादन के अनेक भागों में पर्याप्त उन्नति हुई। बड़े २ कारखाने खोले गये जिन में अनेक प्रकार की मशीनें काम में लाई जाने लगीं। इन कारखानों में माल बहुत बड़े परिणाम में और काफी सस्ता बनने लगा। बेचारे कारीगर इनके मुकाबले में खड़े न रह सके। उनके व्यापार और जीविकापर पानी फिरगया। अन्त में अपने निजी व्यापार को छोड़कर वे कारखानों में जाकर नौकरी मजदूरी करने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज दो विभागों में बटगया और यहीं से पूंजीवाद की नींव पड़ी।

इस प्रणाली का जन्म इंगलैंड में सामन्त प्रथा के भंग हो जाने पर हुआ। १९ वीं शताब्दी में यह अपनी युवावस्था में पहुँचा। भाप की शक्ति के प्रयोग ने एक नया युग उपस्थित कर दिया। नई मशीनों और भाप ने उत्पादन के विधानों में क्रान्ति मचाई। छोटे परिमाण में वस्तुओं के उत्पादन के युग का अन्त हुआ और अधिक

परिमाण में वस्तुयें उत्पन्न की जाने लगीं। उदाहरणार्थ जुलाहे कपड़ों के कारखानों की प्रतियोगिता में असफल हुये। उनके करघे बेकार हो गये। इस प्रकार वे मनुष्य जो पहले स्वतन्त्र थे और स्वयं ही अपने उद्योगों का सचालन करते थे अब मजदूर बन गये। अब वे पूंजीपतियों के औजारों से, उन्हीं के कारखानो में साधारण वेतन पर काम करने लगे।

इसमें सन्देह नहीं कि उत्पत्ति की वृद्धि करने वाले उपायों और मशीनों के आविष्कार का श्रेय पूंजीवाद को ही है और इसलिये यह प्रशंसा का पात्र है। कार्ल मार्क्स ने इस दिशा में पूंजीवाद की अपूर्व सफलता को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है। उनका कथन है कि पूंजीपतियों ने केवल १०० वर्ष से कम ही समय में संसार में विशाल और उत्पादन शक्तियों का इतने बड़े परिमाण में पैदा किया है कि जिसे देखकर दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है। इतनी अधिक उत्पादन शक्तियों को तो पहले की सब पीढ़ियों ने मिलकर भी पैदा नहीं किया। प्रकृति की शक्तियों का मनुष्य के वश में हाना रसायन शास्त्र की शिक्षाओं का उद्योग धंधे और कृषि में प्रयोग करना, भाप से जहाज चलाना रेलवे, टेलीग्राफ, उपनिवेशों को कृषि के लिये उपयुक्त बनाना, नदियों से नहरें निकालना भला पहले की कौन सी पीढ़ी को इस बात का अनुमान था कि सामाजिक श्रमी की गोद में ऐसी २ उत्पादक शक्तियां सो रही है। ऐश्वर्य और प्रशंसा के इस ऊंचे भवन पर बैठा हुआ पूंजीवाद क्यों असफल और अपमानित हुआ इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है :—

(१) पूंजीवाद मजदूरों का निर्मम शोषण करता है।

(२) पूंजीवाद की उत्पादन प्रणाली का संगठन दोषयुक्त और उसका शासन व्यक्तिगत स्वार्थों पर अवलम्बित है।

(३) पूंजीवाद के अन्तर्गत जिन वस्तुओं का निर्माण किया जाता है वे सामाजिक हित की दृष्टि से बुरी होती हैं। समाजोपयोगी वस्तुयें इसलिये नहीं बनाई जाती क्योंकि व्यापारिक दृष्टि से उनका बनाया जाना लाभप्रद नहीं है। प्रायः पूंजीवाद में वस्तुओं के निर्माण में व्यक्तिगत लाभ की भावना काम करती है समाज हित की नहीं। इसीलिये वस्तुओं के निर्माण में पूंजीवाद लाञ्छित होता रहा है।

(४) पूंजीवाद को सहज ही राजनैतिक सत्ता प्राप्त हो जाती है। राज्य का कर्तव्य और उत्तरदायित्व होता है कि वह समाज का हित करने वाली वस्तुयें जनता तक पहुंचने दे परन्तु राज्य सत्ता पर आरूढ़ पूंजीवादी अपने लाभ के विरुद्ध ऐसा क्यों कर करने दे सकते हैं। राज्य बल के द्वारा प्रजा को इच्छा वा अनिच्छा पूर्वक उन वस्तुओं को अपनाना पड़ता है।

(५) देश की उत्पादन शक्ति का बहुत बड़ा भाग ऐसे कार्यों में लगा दिया जाता है जो पूंजीपतियों के अपने व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से लाभप्रद होते है। लाखों करोड़ों रुपये ऐसे कार्यों में व्यय कर दिये जाते हैं। असंख्य मजदूर अन्य उपयोगी व्यापारों से हटा हटा कर इन कार्यों में लगा दिये जाते हैं और देश की मानसिक और शारीरिक शक्तियां इन चुने हुये व्यवसायों में लगायी जाती हैं। लाभ के लोभ में वस्तुओं की

मांग का ध्यान रक्खे बिना असीमित माल पैदा कर दिया जाता है। परिणाम यह होता है कि अनेक फर्मे असफल होकर बन्द हो जाते हैं और दिवालिये ठहराये जाते हैं। आर्थिक संकट उत्पन्न होता है और लाखों करोड़ों रुपयों की हानि होती है। आर्थिक मशीन रुक जाती है और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का सुखस्वप्न वास्तविकता के आवरण से ढक जाता है। वर्तमान उत्पादन क्रिया की असंगठित और कुत्सित प्रणाली समाज के आर्थिक ढांचे को निकृष्ट कर रही है।

(६) पूंजीवाद में स्पर्धा का राज्य होता है। इसके फलस्वरूप मांग से बहुत अधिक माल पैदा कर दिया जाता है। जब माल नहीं बिकता तो वस्तुओं के मूल्य में बहुत घटती बढ़ती होती है। जीवन की आवश्यक वस्तुओं के साथ जुआ खेला जाता है। उत्पत्ति के अमर्यादित होने से गरीबों और मजदूरों को अनेक कठिनाइयां पेश आती हैं। यहां यह बता देना आवश्यक है कि किसी वस्तु की पूर्ति और मांग बराबर होनी चाहिये। यदि पूर्ति मांग से अधिक हुई तो वस्तुओं का मूल्य गिर जायगा माल बिकेगा नहीं और आर्थिक संकट का सामना करना होगा। यदि पूर्ति मांग से कम हुई तो चीजों का मूल्य बहुत बढ़ जायगा।

(७) उत्पादकों में स्पर्धा होने से वे एक दूसरे का गला काटने और नीचा दिखाने को सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। इसका एक बड़ा कुफल यह होता है कि माल बेचने का व्यय अधिक होजाता है और इससे वस्तुओं का मूल्य बहुत बढ़ जाता है। झूठी विज्ञापनबाजी और उसके दुष्परिणामों से प्रायः सब ही विज्ञ हैं। यह विज्ञापन बाजी स्पर्धा का ही एक अंग है जिसके कारण खराब माल धड़ाधड़ बिकता है और अच्छा माल रखा रह जाता है। पूंजीवाद में बड़े २ फर्मे आपस में मिल जाती हैं और वस्तुओं का भाव नियत करके व्यापारिक स्पर्धा से पहुंचने वाले लाभ से जनता वंचित करदी जाती है।

(८) पूंजीवाद में सदाचरण का दर्जा इतना नीचा होजाता है कि उत्पादकों को औचित्य और अनौचित्य का विचार त्याग कर माल में धोखा और मिलावट करना व्यापारिक सफलता के लिये नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है। यदि सौभाग्य से शुद्ध और अच्छी वस्तु मिल भी गई तो उसमें कलात्मक सुन्दरता नहीं होती। मशीनों द्वारा समस्त वस्तुएं एक ही कोटि की बनाई जाती हैं और वे अधिक सुन्दर नहीं होतीं। उदाहरण के लिये जितना अच्छा कपड़ा हाथों से जुलाहे बुन सकते हैं कारखानों में मशीनों से उतना अच्छा कपड़ा नहीं बन सकता।

(९) सर्व प्रथम संसार में वस्तुओं के अदलने बदलने की प्रथा थी। उनको बदल कर मनुष्य दूसरों से आवश्यक वस्तुयें ले लेते थे। इसे बार्टर (Barter) बदला कहते हैं। इस प्रथा की कठिनाइयों को दूर करने के अभिप्राय से मुद्रा चलाई गई। उस युग को मुद्रा युग कहते हैं। इस मुद्रा-युग में जब साझेदारी होती थी और उद्योग धंधों के स्वामी जनसाधारण होते थे तब औद्योगिक विषयों में निर्णय व विचार करना ऐसे मनुष्यों के हाथ में होता था जिनका हित समाज के हित से प्रायः मिला होता था। परन्तु वर्तमान युग उधार युग है। इसमें यह बात नहीं। आजकल पूंजी बहुत से मनुष्यों से भाग (शेयर) बेचकर या उधार लेकर एकत्र की जाती है और उससे काम

चलाया जाता है। अतः उद्योग धंधों पर अधिकार रखने वाले और औद्योगिक नीति का निर्णय करने वाले मनुष्य और होते हैं तथा पूंजी और कारखाने के स्वामी और। परिणाम यह होता है कि कारखानों का प्रबन्ध करने वालों का हित कारखाने के स्वामियों के हित से एक अंश दूर और समाज के हित से दो अंश दूर होगया है।

(१०) पूंजीवाद बहुत से बेकार व्यवसायों को प्रोत्साहन देता है। बेकार व्यवसायों से तात्पर्य यह है कि ऐसे व्यवसायी पुरुष वस्तुओं का न उत्पादन करते हैं और न उत्पादन क्रिया में सहायता ही करते हैं। ऐसे बेकार व्यवसायियों में हमारे अनेक वकील और दलाल हैं। दस दस अभियोगों में से ६ अभियोग जायदाद के झगड़ों से सम्बन्ध रखते हैं या ऐसी बातों से सम्बन्ध रखते हैं जो पूंजीवाद के ही परिणाम या आवश्यक लक्षण हैं। इन बेकार व्यवसायों के कारण माल की कीमत सर्वसाधारण जनता को बहुत ज्यादा देनी पड़ती है। अमेरिका में प्रेजिडेण्ट स्व० रूजवेल्ट ने एक बार इन बेकार व्यवसायोंकी बड़ी कड़ी आलोचना की थी। उन्होंने कहा था कि जो मनुष्य कानून बनाने वाली संस्थाओं और म्युनिसिपैलिटियों को घूस देकर व भागाधिकारियों और सर्वसाधारण जनता को लूटकर कोष एकत्र करता है वह सदाचार के पलड़े में उतना ही ओछा है जितना कि वहघृणित व्यक्ति जो जुआघर और *मदिरालय के रुधिर से मिश्रित रुपयों को खा खा* कर पुष्ट और धनी होता है।"

(११) पूंजीवाद अत्यधिक अमीरों, अत्यधिक गरीबों और मध्यम वर्ग में समाज को बांट देता है और व्यापारिक स्पर्धा और बाजारों की प्राप्ति व रक्षा के लिये इसी के कारण निरन्तर युद्ध होते रहते हैं।

पूंजीवाद अनैतिक है।

इस प्रकार के आर्थिक संगठन पर बना हुआ समाज नैतिकता से कितना गिर सकता है इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। स्वार्थ हेय और परार्थ उच्च समझा जाता है। पूंजीवाद में सबसे बड़ी प्रेरक शक्ति व्यक्तियों का अपना स्वार्थ और लाभ होता है समाज या जाति का हित या लाभ नहीं होता। इस भावना के परिणाम बड़े घातक होते हैं।

आप सहमत होंगे कि वर्तमान प्रणाली ने अनैतिकता को बहुत अधिक प्रश्रय दिया है और व्यक्तिगत लाभ की भावना में जहर भरा हुआ है। इस प्रणाली में किन विशेषताओं का बदला मिलता है इसका वर्णन हम पिछले अध्याय में कर आये हैं। कोई व्यक्ति अपने धन को युद्ध के हथियारों इत्यादि के निर्माण में लगाकर लाभ कमा सकता है। कोई अपनी सम्पत्ति को लगाकर उन अस्त्रों के निर्माण में सहायक हो सकता है जिनसे एक बलशाली राष्ट्र दुर्बल राष्ट्र के बच्चों का निर्मम हनन करता अथवा उन्हें युद्ध के शाश्वत भय से भयभीत रखता है। एक शब्द में यह प्रणाली उन व्यक्तियों को ऊंचा उठाती है जो मानवता की अपेक्षा आंकड़ों में किसी विचार या कार्य का मूल्य आंका करते हैं।

यह प्रणाली व्यापक बेकारी, निर्धनता और दरिद्रता के लिये जिम्मेवार है क्योंकि कोई सौभाग्यशाली पुरुष ही इस खेल में जीतता है विपरीत इसके हजारों हारते देखे गये हैं। जो प्रणाली काम करने में समर्थ, और इच्छुक

व्यक्तियों के लिये काम देने में असमर्थ हों उसको आप किस नाम से पुकार सकते हैं ? हम तो इसे नारकीय प्रणाली ही कहेंगे। क्या आप इससे सहमत नहीं हैं ? यह प्रणाली जब तब बेकारी की समस्या से स्वयं उद्विग्न रहती है। यह तो केवल मात्र युद्ध काल में ही सबको काम में लगा पाती है और युद्ध इस प्रणाली का एक निश्चित परिणाम होता है।

दूसरों से अपने को ऊंचा सभ्य और पृथक समझने की प्रवृत्ति भी इसी प्रणाली की कुत्सित देन है। नैतिक दृष्टि से यह पतित प्रवृत्ति है। क्योंकि यह अवास्तविक है। फैसिज्म की भयकर दुष्टता का मूलकारण यही भावना रही है। मनुष्य का एक वर्ग दूसरों की अपेक्षा उच्च और स्वाभाविक दिव्य गुण वाला है यह कल्पना करना बड़ा पतनकारी है।

स्व० महारानी विक्टोरिया के समय में ब्रिटेन में यह प्रवृत्ति बहुत बलवती रही है। जब कभी किसी अपरिचित व्यक्ति के विषय में कोई स्त्री कुछ पूछती थी तो वह पहला प्रश्न यह करती थी कि 'क्या वह जेन्टिलमैन है ?" उसकी केवल मात्र इसी बात से दिलचस्पी रहती थी। इस प्रश्न से उस स्त्री का अभिप्राय यह नहीं होता था कि वह सुसंस्कृत वा सब प्रकार से योग्य व्यक्ति है ? उसका अभिप्राय यह होता था कि वह उच्च वंश का है वा नहीं। वह कुलीन वर्ग के विद्यालय में पढ़ा है वा नहीं ? उसके पिता के पास बहुत से नौकर चाकर हैं वा नहीं। यह अजीब बीमारी अब भी इंग्लैंड में रेगुलर सेना के अफसरों की पत्नियों में पाई जाती है।

विक्टोरिया के काल में स्त्रियों का मुख्योद्देश्य सामाजिक स्थिति प्राप्त करलेना रहता था। उन दिनों स्त्रियां अपनी साधारण पैतृक स्थिति को छिपाने के लिये छल और झूठ से काम लेने में कतई नहीं झिझकती थीं। एक बार एक दम्पति इसलिये भूखों मर गये थे कि उन्हें अपनी पुत्री को विक्टोरिया के दरबार में प्रस्तुत करने के आयोजन में धन व्यय करना पड़ा था। स्वयं उनकी पुत्री को दरबारी शिष्टाचार में से गुजरने से घृणा थी। माता पिता को यह विज्ञापित करने के लिये कि उनकी पुत्री को इतना बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ है इष्ट मित्रों और पड़ोसियों को दावत देने में शक्ति से कहीं अधिक धन व्यय करना पड़ा था। जिस पोशाकमें वह लड़की दरबार में उपस्थित की गई थी उसके बड़े २ फोटो लेकर विज्ञापन करने में लाखों रुपये व्यय हुए थे।

यह पागलपन, मनुष्यों को अपने से हेय वा नीची सामाजिक स्थिति का समझना यह दासता यह छल, कपट, यह मूर्खता और बनावट श्रेणी की भावना से ही उत्पन्न होते हैं। यह भावना अभी तक समूल नष्ट नहीं हुई है। यद्यपि इस भावना की उत्तेजना में कमी हो गई है।

पूंजीवाद में धर्म की दुर्गति

पूंजीवादी सभ्यता का एक और अनैतिक पहलू है। इसकी करनी और कथनी में घोर असमानता है। इस त्रुटि को छिपाने के लिए इसने ईसाइयत की पृष्ठभूमि को अपनाया है। सिद्धान्त रूप में यह ईसाइयत के सिद्धान्तों को स्वीकार करने का बहाना बनाता है। परन्तु इसकी स्वाभाविक रीति नीति और क्रिया कलाप उन सिद्धान्तों का ज्वलन्त खंडन है।

महात्मा ईसा की ईसाइयत मानवजाति के

भ्रातृत्व पर बल देती है इस आधार पर कि प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक स्थिति, जाति, देश जन्म रंग आदि की दृष्टि से समान है और परमात्मा का पुत्र है। पूंजीवाद ने समाज को श्रेणियों और राष्ट्रों में विभाजित करके सार्वभौम भ्रातृत्व को व्यवहार में लाने का यत्न करने से मनुष्य समाज को रोक दिया है इसीलिए मनुष्य समाज में घोर अशान्ति, कलह और विद्वेष छाया हुआ है।

नये नये फैशन के वस्त्राभूषणों से अलंकृत स्त्री पुरुषों को गिरजाघर मे यह गाते हुये देखना कितना उपाहास्यास्पद है :—

"उसने बड़े २ बलशालियों को धराशायी कर दिया है। उसने दुर्बलों और सीधे साधे व्यक्तियों को सम्मान प्रदान किया है। उसने भूखों को अच्छी अच्छी वस्तुओं से माला माल किया और अमीरों को खाली हाथ जाने दिया है।" जिस बाइबिल का वे स्मरण करते हैं वह स्वार्थी धनवानों के खंडन से परिपूर्ण है। ईसा ने कहा कि धनी लोगों के लिये स्वर्ग में प्रवेश करना नितान्त असम्भव होगा। इसके विपरीत बहुत से पूंजीवादी ईसा से यह मांग अवश्य करते कि स्वर्ग का द्वार केवल मात्र जैन्टिलमैन और लेडीज के लिये रिजर्व रहना चाहिये।

क्या हम यह सोच सकते हैं कि पक्का साहिब इग्लिश मैन या ऐंग्लोइंडियन कर्नल की स्त्री ईसामसीह को डिनर के लिये आमन्त्रित कर सकते हैं निश्चय ही नही। ईसा इनकी परिभाषा में जेन्टिलमैन न थे। वह मामूली व्यक्ति थे। मछियारे और निर्धन व्यक्ति उनके मित्र थे और उन्हीं के साथ वे रहते थे। जगल में उनकी कोई कोठी न थी। वे इनके लिये सर्वथा अपरिचित व्यक्ति थे। परन्तु जिस परम्परा पर पूंजीवादी सभ्यता की नींव का दावा किया जा रहा है वह ईसा को अपना मास्टर मानती है। ओह! कैसी विडम्बना।

पूंजीवादी सभ्यता विनाश के पथ पर

जिस सभ्यता के सिद्धान्तों और व्यवहार में इतना घोर विरोध देख पड़े उसे नष्ट भ्रष्ट ही समझना चाहिये अथवा उसे नष्ट होते देर नहीं लगती। इस विभिन्नता से मनोवैज्ञानिक बीमारी उत्पन्न हो जाती है जो अन्त में घातक सिद्ध होती है। जब समाज एक बात का दावा करता है और व्यवहार में उससे इन्कार करने लगजाता है तब दोबातें अवश्य होती हैं या तो समाज में स्वयं क्रान्ति होकर वह अपने अमल को अपने सिद्धान्तों के अनुकूल करता है या वह अपने सिद्धान्तों को तिलाञ्जलि देकर उन्हें व्यवहार के लेविल पर ले आता है। इसीलिये अपने उग्ररूप में पूंजीवाद ने नाजीइज्म का रूप लिया और उसने खुले तौर पर ईसाइयत का खंडन किया। अब यह सभ्यता और अधिक काल तक अपने को छिपा नहीं सकती।

इस समस्त विवेचन से स्पष्ट है कि जिस प्रकार के संसार का हम निर्माण करना चाहते हैं उसकी आधार-शिला ऐसी अर्थ व्यवस्था पर रखी जानी चाहिए जो विश्व के लिए अभिशाप न होकर एक देन सिद्ध हो, जिसमें व्यक्तियों को अपनी हर प्रकार की उन्नति करने का अवसर प्राप्त हो, जिसके द्वारा व्यक्ति और समाज का सर्वतोमुखी सम-विकास होता रहे, जिसमें मनुष्य की योग्यता, उपयोगिता और सम्मान का मापदण्ड उसकी व्यक्तिगत एवं सामाजिक विशेषताएं हों न कि धन-वैभव और ठाठ बाट। इस प्रकार की अर्थ प्रणाली के विकास के लिए आवश्यकता है कि समाज के भवन की नींव नैतिकता पर खड़ी हो।

आर्य समाज के एक चमकते रत्न

स्व० राजा ज्वालाप्रसाद और उनका समाज से सम्बन्ध

(ले०—श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम. ए. रिटायर्ड चीफ जज अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ)

(१) राजा ज्वालाप्रसाद जी जिनका १६ सित० सन १९४४ में हृदय की गति रुकने से अकस्मात देहावसान हुआ पहले व्यक्ति थे जिन्होंने संयुक्त प्रान्त की सरकार के पब्लिक वर्क्स विभाग मे सबसे पहले चीफ इञ्जिनियर के उच्च पद को प्राप्त किया। इस पद पर पहुंचने से पहले कुछ वर्ष के लिए उनकी सेवाओं को काशी हिन्दू यूनिवर्सिटी ने अपने भवन निर्माण के लिए माग लिया था और यूनिवर्सिटी के विशाल भवन सदा के लिए उनकी भवन निर्माण कला की परम कुशलता के स्मारक रहेंगे। भारतवर्ष के किसी अन्य स्थान में और शायद अन्य देशों में भी किसी अन्य विश्वविद्यालय के ऐसे विशाल और विस्तृत भवन नहीं मिलेंगे।

(२) राजा ज्वालाप्रसाद जी आर्यसमाज के एक अमूल्य रत्न थे यद्यपि उनके अन्तिम जीवनकाल में आर्यसमाज के साथ घनिष्ठ सम्पर्क न रहने के कारण वर्तमान समय के बहुत से आर्यसमाजी उनसे अधिक परिचित नहीं थे।

(३) श्री ज्वालाप्रसाद जी इलाहाबाद आर्यसमाज के सभासद् बने, जबकि वे इलाहाबाद कालिज की बी० ए० श्रेणी में शिक्षा पाते थे। उक्त कालिज से बी० ए० डिग्री प्राप्त करके वे थामसन इञ्जीनियरिंग कालिज Thomson Engineering College रुड़की में गये। वहां बड़ी योग्यता के साथ इञ्जीनियरी परीक्षा पास की और संयुक्तप्रान्त के P. W. विभाग में असिस्टैन्ट इञ्जीनीयर नियुक्त हुए। सन् १९०२ में दिल्ली में लार्ड कर्जन का प्रसिद्ध दरबार हुआ। श्री ज्वालाप्रसाद जी उस दरबार के पण्डाल आदि बनाने के कार्य पर नियुक्त हुए। मुख्य इञ्जीनियर श्री गंगाराम थे जो पीछे सर गगाराम हुए शायद यहीं श्री० ज्वालाप्रसाद जी का उनसे पहला परिचय हुआ, जो उनके जीवनकाल तक रहा और बढ़ता गया। इसके पश्चात् श्री ज्वालाप्रसाद लैन्सडौन जिला गढ़वाल मे एक नहर बनाने के कार्य पर नियुक्त हुए। मै उस समय लैन्सडोन में S. D. O (हाकिम इलाक़ा) था और वहीं मेरा श्री० ज्वालाप्रसाद जी से पहली बार परिचय हुआ। मै सन् १८९८ ई० में Competitive Examination मे प्रथम स्थान पाकर डिप्टी कलैक्टर नियुक्त हुआ था। उससे पूर्व कई वर्ष तक मैं आर्यसमाज मेरठ का जो उस समय युक्तप्रान्त की प्रमुख आर्यसमाज मानी जाती थी प्रधान रह चुका था। इसलिए मेरा श्री ज्वालाप्रसाद जी स जो आर्यसमाज के बड़े भक्त और दृढ़ उत्साही आर्य थे गाढ़ा परिचय होगया जो समय पाकर बढ़ता गया और उनके जीवनकाल तक बना रहा।

(४) सन् १९१७ ई० के लगभग श्री० सर गगाराम जी ने जो उस समय पटियाला दरबार में चीफ इञ्जीनियर थे श्री ज्वालाप्रसाद को भी वहा पब्लिक वर्क्स विभाग मे बुलवा लिया। वहा दरबार की ओर स आर्यसमाज का प्रधान होने

के कारण उनपर तथा पटियाला आर्यसमाज के सभी सभासदों पर राजद्रोह का अभियोग चलाया गया। इस अभियोग का श्री ज्वालाप्रसाद जी से ऐसा गहरा सम्बन्ध था कि उसका वृत्तान्त कुछ विस्तार के साथ देना आवश्यक है। उसकी सम्पूर्ण और विस्तृत कथा 'The Arya Samaj and its Detractors' नामक एक बड़ी पुस्तक में छपी है जिसका पूर्वार्द्ध प्रो रामदेवजी ने और उत्तरार्द्ध महात्मा मुन्शीराम जी ने लिखा था।

(५) इस समय पंजाब के लैफ्टिनेन्ट गवर्नर सर लुई डेन Sir Lois Dane थे जो आर्य-समाज के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने अपनी रिपोर्टों में लिखा था कि पंजाब में जहां कहीं भी आर्यसमाज है वह राजद्रोह का केन्द्र है। सन् १९०७ में उन्होंने पंजाब आर्य समाजों के प्रमुख नेता श्री ला० लाजपतराय को गिरफ्तार किया और वे बर्मा भिजवाये गये। पंजाब में और बहुत से आर्यसमाजी पकड़े गये व सरकारी नौक-रियों से पृथक् किये गये। सर लुई डेन की इच्छा आर्यसमाज को पंजाब में कुचलने की थी परन्तु अन्य धर्मों में हस्तक्षेप न करने की जो ब्रिटिश नीति पूर्व से चली आई है और जिसकी घोषणा महाराना विक्टोरिया Queen Victoria के भारत के शासन को अंगीकार करने के समय विशेष रूप से भी की गई थी Sir Lois Dane को पंजाब में ऐसा करने का अवसर नहीं मिल सका। शायद तब कहीं देशी रियासत में इसका परीक्षण करने की बात सोची गई। इस समय पटियाला राज्य में श्री महाराजा भूपेन्द्रसिंह बहादुर नाबालिग थे और राज्य का शासन एक स्टेट कौंसिल State Council के अधिकार में था। उसके प्रैसिडेन्ट श्री सरदार गुरुमुखसिंह जी थे श्री० वारबर्टन जो अमृतसर में Superintendent Police रह चुके थे और ऐसे दमन-कार्यों में दक्ष समझे जाते थे पटियाला में पुलिस के प्रधान अफसर Inspector General of Police नियुक्त होकर भेजे गये। श्री० वारबर्टन ने सन् १९०७ ई० में ही पटियाला आर्यसमाज के विरुद्ध तहकीकात शुरू करदी और पटियाला के सब आर्य समाजियों पर अभियोग चलाना चाहा परन्तु सरदार गुरुमुखसिंह जी ने उसकी स्वीकृति नहीं दी और श्री० वारबर्टन को भी पटियाला से अलग कराने का यत्न किया और जब उनको इसमें सफलता न हुई तो उन्होंने स्वयं अपने पद से इस्तीफा दे दिया।

श्री वारबर्टन ने आर्य समाज पटियाला के विरुद्ध जिसके प्रधान श्री ज्वालाप्रसाद जी थे अपनी कार्यवाही जारी रखी। अक्तूबर १९०९ में श्री० महाराजा भूपेन्द्रसिंह बहादुर को बालिग हो जाने पर शासन के अधिकार मिले। इसके पश्चात् तुरन्त ही आर्य समाज पटियाला के सब सभासदों पर अभियोग चलाने की स्वीकृति श्री महाराजा साहिब से प्राप्त करली गई। ११।१०।१९०९ को पुलिस ने ११५ मनुष्यों को जिनमें पहला नाम श्री ज्वालाप्रसाद जी का ही था गिरफ्तार किया। श्री ज्वालाप्रसाद जी तुरन्त ही जमानत पर रिहा होगये परन्तु और किसी की जमानत नहीं ली गई और बाकी सब अभि-युक्त हवालात में ही रहे।

(६) १२-१०-१९०९ को श्री महाराजा साहब ने इस अभियोग का निर्णय करने के लिए एक विशेष अदालत नियत की जिसमें ३ जज रखे

गये (अर्थात् ला० रामप्रसाद होम मेम्बर, मौलवी कबाले मतीन और सरदार भगवान् सिंह जी) जिनको चीफ कोर्ट के अधिकार दिये गये और अपनी कार्यवाही की रिपोर्ट प्रतिदिन महाराजा साहिब को भेजने की आज्ञा दी गई। परन्तु २५-१०-१९०९ तक कुछ कार्यवाही नहीं हुई। इसके बाद भी लगभग दो मास तक पुलिस ने कोई कार्यवाही न करके २५-१२-१९०९ को श्री ग्रे Grey द्वारा जो पंजाब के एक प्रसिद्ध बरिस्टर थे इस अभियोग को चलाने के लिए दरबार की ओर से रखे गये थे-अभियोग पत्र Complaint दाखिल किया और ७६ व्यक्ति अभियुक्त रखे गये जिसमे पहला नाम श्री० ज्वालाप्रसाद जी का ही था।

१५।१२।१९०९ से १८।१२।१९०९ तक मिस्टर ग्रे Grey ने अदालत के मुकदमे के हालात सुनाये जिसमे आर्य समाज की ऐसी तीव्र आलोचना की गई थी जिससे आर्य जगत् म ही नहीं किन्तु भारतवर्ष भर में सनसनी फैल गई। थोड़े समय मे ही पटियाला दरबार को यह प्रतीत होने लगा कि इस अभियोग मे सफलता नहीं हो सकती।

तब मिस्टर गैस्ट Guest द्वारा जो बहुत से अंग्रेजी तथा एंग्लो इण्डियन पत्रों के प्रतिनिधि थे इस बात का यत्न किया गया कि अभियुक्त एक प्रार्थना पत्र अदालत को देवें कि मुकदमा हटा लिया जावे। इसका वर्णन श्री० ज्वाला प्रसाद जी ने अपने एक लम्बे पत्र मे इस प्रकार किया है। जो The Arya Samaj & its Detractors पुस्तक के पृष्ठ २५१ तथा आगे के पृष्ठोंपर छपा है।"१४ जनवरी१९१ को या उसके लगभग मि०गैस्ट ने पटियाला डाकबंगले मे मुझसे कहा कि हम लोग अदालत को एक अर्जी देवें कि मुकदमा वापिस कर लिया जावे और उनको बहुत आशा है कि मुकदमा हटा लिया जायगा। मैंने कहा कि जब तक मैं उस अर्जी का ड्राफ्टया मसविदा न देखलूं जिसको वे भिजवाना चाहते हैं तब तक मैं कुछ नहीं कह सकता। इसके बाद उन्होने मेरे पास एक पत्र भेजा "प्यारे ज्वालाप्रसाद मुझ से जितना जल्दी हो सके मिलो।" यह पत्र मेरे पास १५ जनवरी के सुबह पहुंचा परन्तु मैं तुरन्त ही उनके पास नही जा सका। अपने वकील महात्मा मुन्शी राम जी की सलाह लेकर लगभग दो बजे बाद दोपहर मि० ग्रेस्ट से मिलने को गया परन्तु वे डाक बंगले मे नहीं मिले। मैंने लौट कर म० मुन्शीराम जी को इसकी सूचना दी। १६।१।१९१० को मि० गैस्ट का नीचे लिखा पत्र मेरे पास आया और उसके साथ वह मसविदा भी आया जिसकी उन्होंने प्रतिज्ञा की थी।'

मि० गैस्ट ने जो मसविदा श्री० ज्वाला प्रसाद जी के पास भेजा वह लम्बा है उसको अथवा मि० गैस्ट के पूरे पत्र को यहां लिखने की आवश्यकता नहीं, आगे चलकर श्री० ज्वालाप्रसाद जी लिखते हैं। (श्री ज्वालाप्रसाद जी का पत्र भी कुछ सङ्क्षिप्त रूपसे दिया जाता है) 'मैंने मि०गैस्ट का यह पत्र और मसविदा म० मुन्शीराम जी को दिखलाया और उनके सुझाने पर मैंने फिर डाक बंगले मे जाकर आर मि० गैस्ट से मिलकर मसविदे की शर्तों के सम्बन्ध म बहस की क्योंकि वे शर्तें पूरे तौर से मुझ मजूर नहीं थी। मि० गैस्ट ने मेरे विचारों से सहमत होकर उसी दिन सारे अभियुक्तो के हस्ताक्षरो के साथ दूसरी अर्जी देने

की सलाह दी। मेरे समझाने पर मि० गैस्ट मेरे साथ म० मुन्शीराम जी के पास गये क्योंकि मैंने यह कहदिया था कि जबतक म० मुन्शीरामजी को यह विश्वास न हो जावे कि अर्जी जरूर मंजूर हो जावेगी तबतक कोई अभियुक्त उस पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे। मि० गैस्ट ने मेरे साथ चलकर मा० मुन्शी राम जी को इसी प्रकार विश्वास दिलाया और उसने यहां तक कहा कि जबतक यह मुकद्दमा समाप्त न हो लेगा तब तक श्री वायसराय महोदय महाराजा साहिब की गद्दी नशीनी के लिए पटियाला नहीं आवेंगे, और यह भी कहा कि हर कोई जानता है कि हम सब अभियुक्त निरपराध हैं और यह अर्जी सिर्फ इस कठिनाई को दूर करने के लिए ही दी जा रही है और इस अर्जी देने पर बाकी अभियुक्त भी जमानत पर छूट जावेंगे। मि० गैस्ट ने मुझ को महाराजा साहिब के प्राइवेट सैक्रेटरी के पास भी ले जाना स्वीकार किया और प्राइवेट सैक्रेटरी को एक चिट्ठी लिखी कि अर्जी दी जा रही है।"

"१८ जनवरी १९१० को अर्जी दी गई और श्री० महाराजा साहिब के पास भेज दी गई लेकिन सांयकाल तक अभियुक्तो की जमानत मंजूर नहीं हुई जैसा कि मि० गैस्ट ने प्रतिज्ञा की थी इसलिए मैं उनके पास गया। उन्होने जवाब में कहा कि दरबार के वकील मि० ग्रे Grey बीच में कूद पड़े और महाराजा साहेब को यह सलाह दी कि वे जब तक श्री लाट साहब (Governor) से जो बहावलपुर मे थे सलाह न कर लेवे तबतक कुछ न करें। मुकद्दमा २६ जनवरी १९१० के लिए मुल्तवी हो गया। श्री० महाराजा साहिब जनवरी के अन्त मे पटियाला लौटे। अफवाहों द्वारा मालूम हुआ कि श्रीमान् लैफ० गवर्नर ने सब अभियुक्तों को एक साथ छोड़ने की सलाह न देकर यह सलाह दी कि महाराजा साहब Political Agent की सहायता से मुकद्दमे के सबूत को देखें और उन अभियुक्तों को छोड़ देवें जिनके विरुद्ध सबूत न मिले और बाकी के विरुद्ध मुकद्दमा जारी रहे।"

इसके बाद मुकद्दमे की तारीखें तबदील होती रहीं। १० फरवरी १९१० को महाराजा साहिब ने इजलास खास के भवन में कचहरी की, मि० ग्रे Grey और वारबर्टन से बातचीत की। अभियुक्त नहीं बुलाये गये। १२ फर्वरी १९१० को महाराजा साहिब ने फिर कचहरी की और अभियुक्तों के सम्बन्धियों को प्रतीक्षा करते हुए देखकर कहा कि मुकद्दमें का कल फैसला होगा।

१३ फरवरी १९१० को मालूम हुआ कि महाराजा साहिब और Political Agent मि० ग्रे और वारबर्टन की सहायता से पत्रों की जांच कर रहे हैं। यह खबर पाकर श्री० ज्वाला प्रसाद एक अर्जी लेकर पो० एजन्ट Political Agent के पास गये और यह निवेदन किया कि पत्रों की जाच के समय जबकि दरबार की तरफ से पंजाब के दो बड़े योग्य कानूनदाँ उपस्थित हैं तो सफाई के वकील को भी आज्ञा मिलनी चाहिए। यह निवेदन स्वीकार नहीं हुआ। १७ फरवरी १९१० को महाराजा साहिब ने अभियुक्तों को बुलाकर यह आज्ञा दी कि अभियुक्तों की अर्जी में कुछ संशोधन किया जाय। उसको श्री० ज्वाला प्रसाद और म० मुन्शीराम जी ने स्वीकार कर लिया। श्री० मिस्त्री प्राईवेट सेक्रेटरी महाराज साहिब अर्जी को महाराजा साहिब के पास ले गए। १९ फरवरी १९१० को अदालत में सरदार भगवान

सिंह ने श्री० महाराजा साहिब की ओर से उनकी अन्तिम आज्ञा पढ़ कर सुनाई जिसका आशय यह था कि—श्री० महाराजा साहिब ने अभियुक्तों के प्रार्थना पत्र पर और पुलिस शहादत पर अच्छी तरह विचार किया। "यह अभिप्राय कदापि न था कि भारतवर्ष में आर्य समाज का प्रत्येक सभासद् और वह समाज भी राजद्रोही हैं*।" अभियुक्तों ने अपनी अर्जी में यह विश्वास दिलाया है कि पटियाला राज्य और भारत सरकार की ओर उनकी भक्ति की भावना ही है और यदि उन्होंने बिना जाने कोई असावधानी Indiscretion की हो तो वे क्षमा की प्रार्थना करते हैं श्री० महाराजा साहिब इस क्षमा प्रार्थना को स्वीकार करते हैं और अभियोग को वापिस लेने की आज्ञा देते हैं परन्तु वे यह नहीं चाहते कि "कोई मनुष्य कि जिस पर पटियाला राज्य या ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध राजद्रोह के सन्देह की गन्धमात्र भी रही हो वह उनके राज्य में या उनकी चाकरी में रहे।" इसलिए आज्ञा दी जाती है कि वे सब अभियुक्त जो दरबार की नौकरी में वे तुरन्त अपने पदों से पृथक् किये जायें और एक सप्ताह के भीतर राज्य से बाहिर चले जावें और बिना विशेष आज्ञा राज्य के भीतर न आवें' इस आज्ञा से बड़ी सनसनी फैली क्योंकि श्री० ज्वाला प्रसाद तथा अन्य अभियुक्तों को यह विश्वास दिलाया गया था कि उनके अर्जी देने पर मुकदमा वापिस ले लिया जावेगा और कोई अभियुक्त किसी प्रकार दण्डित नहीं किये जावेंगे।

* It was never meant to infer that every member of the Arya Samaj in India and that Society was Seditious."

परन्तु अभियुक्तों में बहुत बड़ी संख्या राजकर्मचारियों की थी और अपनी नौकरियों से पृथक् किया जाना और राज्य से निकाला जाना उनके लिए बड़ा कठोर दण्ड था। परन्तु कुछ समय पीछे इस आज्ञा में परिवर्तन होगया।

श्री० ज्वाला प्रसाद जी की सेवाएं पटियाला दरबार ने संयुक्त प्रान्त की सरकार से मांगी हुई थीं इसलिए वे सयुक्त प्रान्त को वापिस भेजे गये। क्योंकि पटियाला दरबार ने अभियोग वापिस लेते हुए भी उन अभियुक्तों को जो पटियाला राज्य के कर्मचारी थे नौकरी से पृथक् करने की आज्ञा दी थी इसलिए युक्त प्रान्त सरकार ने उनसे जवाब Explanation मांगा कि वे अपने पद से पृथक् क्यों न किये जायें। इसका जो जवाब श्री० ज्वाला प्रसाद जी ने भेजा वह बड़ा महत्व-पूर्ण था। मैंने उसे देखा नहीं। यदि उसका मसविदा या नकल मिल जावे तो वह उनकी जीवनी के लिए बहुत उपयोगी होगी। मुझको स्वयं ज्वाला प्रसाद जी से ज्ञात हुआ कि वह जवाब Explanation लिखकर उन्होंने श्री० सर सुन्दर लाल जी को दिखलाया था जो उस समय युक्त प्रान्त में सब से बड़े वकील और कानून विशारद माने जाते थे और जो उस समय के लेफ० गवर्नर के भी बड़े विश्वास पात्र थे। मुझको श्री ज्वाला प्रसाद जी ने बताया कि सर सुन्दर लाल ने उनके मसविदे में कुछ परिवर्तन करने की इस कारण सलाह दी कि वे भाग अति उग्र या कड़े थे और यह आशंका थी कि उनको पढ़कर संयुक्त प्रान्त की सरकार अप्रसन्न हो जायेगी। श्री ज्वाला प्रसाद जी ने अपने जवाब में उन परिवर्तनों को करना स्वीकार नहीं किया

और सर सुन्दर लाल जी से स्पष्ट कह दिया कि उन्होने जो कुछ लिखा है वह बिल्कुल सत्य है और वे सचाई से किसी प्रकार टलना स्वीकार नहीं कर सकते, चाहे सरकार उनसे अप्रसन्न हो जाये और उनको सरकारी नौकरी छोड़नी पड़े। सर सुन्दर लाल श्री० ज्वाला प्रसाद जी की निर्भीकता और सत्य परायणता पर मुग्ध होगये और जब वे काशी हिन्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना होने पर उसके प्रथम वाइस चासलर नियुक्त हुए तो उन्होने यूनिवर्सिटी के भवन निर्माण के लिए श्री० ज्वाला प्रसाद जी को ही जो उस समय युक्त प्रान्त की सरकार के P W D विभाग मे थे बुलवाया।

मालूम हुआ है कि श्री ज्वालाप्रसाद जी के पूर्वोक्त जवाब Explanation को श्री० लैफ० गवर्नर संयुक्तप्रान्त ने उचित आज्ञा के लिए भारत सरकार को भेजते समय उक्त जवाब से अपनी अप्रसन्नता प्रकट की थी परन्तु भारत सरकार ने उस जवाब पर विचार करके श्री ज्वालाप्रसाद जी की सच्चाई और निर्भीकता की प्रशंसा की। जिसका परिणाम यह हुआ कि श्री ज्वालाप्रसाद जी युक्त प्रान्त में अपने पद पर जो (एग्जीक्यूटिव इञ्जीनियर Executive Engineer का था) पुन. प्रतिष्ठित होगये और थोड़े समय पीछे सुप० इञ्जीनियर Superinten dent Engineer और अन्त मे Irrigation नहर विभाग के चीफ इञ्जीनियर नियत हुए। अन्त मे भारत सरकार की ओर स उनको राजा की पदवी भी प्रदान की गई।

सन् १९१४ मै जब मै आगरे मे डिप्टी-कलक्टर था श्री ज्वालाप्रसाद जी वहा एग्जीक्यूटिव इञ्जीनियर Executive Engineer थे कुछ समय वहा उनको और मुझको एक ही भवन में निवास करने का अवसर भी मिला। उन्हीं दिनों काशी हिन्दु यूनीवर्सिटीने उनसे पूछा था कि क्या वे यूनीवर्सिटी के भवन निर्माण के लिए अपनी सेवाएं देना स्वीकार करेंगे। मैंने श्री ज्वालाप्रसाद जी के पूछने पर यह सलाह दी थी कि उनको यह कार्य अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि देश के हित की दृष्टि से काम बड़े महत्व का है। उन्होने उसको स्वीकार कर लिया और कई वर्ष तक काशी यूनीवर्सिटी मे काम करते रहे।

जब श्री ज्वालाप्रसाद जी का निवास आगरे मे था तो उन्होने आगरा आर्यसमाज की भी बहुत सेवा की। दयानन्द अनाथालय के भवन के लिए कुछ भूमि की आवश्यकता थी। श्री ज्वाला-प्रसाद जी ने, मैंने तथा कर्नल द्वारिका प्रसाद गोयल आई एम एस ने (जो अब लैफ० जनरल रिटायर्ड हैं) सर जेम्स मैस्टन लैफ० गवर्नर महोदय से मिलकर अनाथालय के लिए भूमि दिलाने का यत्न किया और उसमे सफलता हुई।

काशी मे रहते हुए श्री ज्वालाप्रसाद जी कई वर्ष तक काशी आर्य विद्यासभा के प्रधान रहे और उक्त पद के अधिकार से दयानन्द ऐंग्लो-वैदिक कालिज, आर्य कन्या पाठशाला, नित्यानंद वैदिक पाठशाला और बहुतसी रात्रि पाठशालाओं तथा हरिजन पाठशालाओं का जो उक्त आर्य विद्या सभा के आधीन थीं संचालन करते रहे।

युक्त प्रान्त के चीफ इञ्जीनियर नहर विभाग के कार्य से अवकाश पाकर श्री ज्वालाप्रसाद कई वर्ष तक काशी हिन्दू यूनिवर्सिटी के प्रो० वाइस

चांसलर के पद पर बड़ी योग्यता से काम करते रहे। उसके पश्चात् श्री० ज्वालाप्रसाद जी ने मेरे साथ विचार करके यह निश्चय किया कि वे अपने शेष जीवन को जन्मगत जातिभेद Hereditary Caste System के दूर करने में लगावेंगे क्योंकि उनका तथा मेरा यह दृढ़मत था कि जब तक यह कुप्रथा दूर न होवे तब तक हिन्दुओं का उद्धार होना सम्भव नहीं और आर्य समाज की उन्नति में भी रुकावट का मुख्य कारण यही है। इसलिए राजा ज्वालाप्रसाद जी की प्रेरणा से मैंने फरवरी सन् १९४४ के देहली आर्य महासम्मेलन में यह प्रस्ताव रखवाया था कि जन्मगत जातिभेद के विरुद्ध संगठित रूप से कार्य करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एक योजना तैयार करे। सार्वदेशिक सभा ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करके उक्त योजना बनाने के लिए एक उपसमिति नियत की जिसका संयोजक मैं था और राजा ज्वालाप्रसाद जी जिसके एक सदस्य थे। परन्तु दुर्भाग्य से थोड़े समय पीछे ही अर्थात् १६ सितम्बर १९४४ को राजा ज्वालाप्रसाद जी का अकस्मात् देहावसान होगया। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की पूर्वोक्त उप-समिति ने एक योजना तैयार की जिसको सभा ने स्वीकार कर लिया और उसके अनुसार दिसम्बर १९४५ में जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ नाम की एक संस्था स्थापित होगई जिसका कार्यालय अजमेर में है और जिसके संचालक श्री.पं० भद्रसेनजी आचार्य और अध्यक्ष मैं तथा उपाध्यक्ष पं०धर्मदेव जी विद्या-वाचस्पति हैं।

इस संघ ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया है परन्तु वह उस बड़े लाभ से जो उसको राजा ज्वालाप्रसाद के अपूर्व उत्साह, उद्योग और प्रभाव से प्राप्त होता वंचित रहा। ईश्वर इस संघ के कार्य को सफल करे जिससे राजा ज्वाला-प्रसादजी की आत्मा को भी शांति मिले क्योंकि यह उनके जीवन का अन्तिम ध्येय था।

राजा ज्वालाप्रसाद जी का हृदय बड़ा उदार था और जो कोई उनके पास किसी प्रकार की सहायता वा सलाह के लिये जाता था वे भरसक उसकी सहायता करते और उसको उत्तम और विचारपूर्ण सलाह देते थे। वे बड़े परिश्रमी और उद्योगी थे। वे सदा हसमुख और प्रसन्नचित्त रहते थे। मेरा चालीस वर्ष तक उनके साथ घनिष्ठ सम्पर्क रहा परन्तु मुझको याद नहीं कि मैंने कभी उनको उद्विग्न मन, खिन्न वा क्रुद्ध दशा में देखा हो। इसी कारण से उनका स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा था। पटियाला अभियोग के अवसर पर उनके साहस, निर्भीकता, सत्यपरा-यणता और कार्यकुशलता का विशेष रूप से परिचय मिला। उनके उदार हृदय के कारण उनको बहुत से लोग सहायता वा सलाह प्राप्त करने के लिए घेर रहते थे। वे किसी को निराश नहीं करते थे, इसलिए उनको बहुत परिश्रम करना पड़ता था। वे अनथक और अत्यन्त परिश्रमी थे। यही उनके अकस्मात देहावसान का भी एक कारण हुआ जो अकस्मात् हृदय की गति बन्द हो जाने से हुई। राजा ज्वाला प्रसाद जी सत्य के परम भक्त थे और असत्य का कोई व्यवहार नहीं होने देते थे। वास्तव में वे एक आदर्श आर्य थे। यदि वे सरकारी नौकरी में न पड़ जाते तो मेरा विचार है कि वे अपने आदर्श चरित्र, सदाचार और उच्च विचारों के कारण स्वामी श्रद्धानन्द जी व महामना मालवीय जी जैसे सुधारक होकर एक बड़े नेता हो सकते थे।

महात्मा गांधी जी को एक आवश्यक पत्र

वैदिक धर्म में अहिंसा का स्थान

(ले०—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति)

ता० २५-१०-४६

श्री पूज्यपाद महात्मा जी !

सादर प्रणामाञ्जलि

गत १६ अक्तूबर की रात को जब मुझे आप से भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त हुवा था तो मैंने अन्त में हिंसा अहिंसा के विषय को छेड़ा था। किन्तु आपका निद्रा-समय समीप होने के कारण वह बात आगे न चल सकी थी मैंने उस समय इतना ही कहा था कि आप जिस अहिंसा का उपदेश करते हैं उसका पूर्णतया पालन ब्राह्मण और संन्यासी ही कर सकते हैं और उन्हीं का इसके पूर्ण आदर्श का पालन करना कर्त्तव्य है। अन्य सर्व साधारण विशेषतः क्षत्रियों का नहीं।

"क्रुध्यन्तं न प्रति क्रुध्येत् आक्रुष्टः कुशलंवदेत्" अर्थात् क्रोध करने वाले पर भी वह क्रोध न करे गाली देने वाले को भी वह आशीर्वाद दे, यह ब्राह्मण संन्यासियों के धर्म में मनुस्मृति में बताया गया है।

"तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानाम्"

अर्थात् ब्राह्मण मनुष्य द्वारा की गई हिंसा को शान्ति पूर्वक सहन कर लेते हैं यह ब्राह्मणों के विषय में वेद में कहा गया है। क्षत्रियों के लिये तो वेद में स्पष्ट कहा है कि

"उत्तुह रक्षः सहमूलमिन्द्र
वृश्चा मध्यं प्रत्यग्रं शृणीहि।
आकीवतः सललूकंचकर्थ
ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिमस्य ॥"
ऋ० ३-३०-१७

अर्थात् हे क्षत्रियों! तुम समाज घातक राक्षसों का समूल नाश करदो। जो ज्ञान के द्वेषी हैं उनपर तपाने वाले अस्त्र का प्रयोग करके नाश करदो।

वेद की शिक्षा "दृते दृंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे (यजु० ३६।१८) इत्यादि मंत्रों द्वारा सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखने की है।

'अनमित्रं नः पश्चादनमित्रं न उत्तरात्।
इन्द्रानमित्रं नोऽधरादनमित्रं पुरस्कृधि ॥

इत्यादि मे भगवान् से यही प्रार्थना है कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण सब दिशाओं में हमारा शत्रु कोई न हो।

"सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु" सब दिशाओं के प्राणी हमारे मित्र हों। इस प्रकार मित्र दृष्टि का उपदेश करते हुवे भी वेद क्षत्रियों के लिये दुष्टों के नाश का उपदेश देते हैं परन्तु साथ ही वे बताते हैं कि यह दुष्टों का नाश भी द्वेषपूर्वक न होना चाहिये। जिस प्रकार न्यायाधीश चोरों, घातकों तथा अन्य अपराधियों को २, ४, ६, १० या इससे भी अधिक वर्षों की जेल का दण्ड वैयक्तिक द्वेष के कारण नहीं बल्कि समाज के कल्याण के लिये देता है ऐसे ही क्षत्रियों को भी बिना द्वेष के केवल समाजहित से प्रेरित होकर यह दुष्ट दमन का कार्य करना चाहिए यह वेदों की शिक्षा है। यहां तक कि युद्ध के बाद विजेता

के युद्ध के विजित को सम्बोधन करते हुवे वेद में यह कहलाया गया है कि

'इममुच्छ्रेयो अवसानमागां शिवे मे द्यावा-पृथिवी अभूताम्।

असपत्नाः प्रदिशो मे भवन्तु न वै त्वा द्विष्मो अभयं नो अस्तु ॥"

अर्थात् इसी में मेरा कल्याण है कि द्वेष भाव का सर्वथा अन्त हो। आकाश और पृथिवी मेरे लिए शत्रु रहित हों। हे विजित पुरुष। तेरे साथ भी हम द्वेष नहीं करते। हमें सब ओर से निर्भयता प्राप्त हो। यह युद्धादि करते हुवे वैदिक भावना है। यह वस्तुतः कितना उच्च और व्यवहार्य आदर्श है। यदि दुष्टों को दण्ड न दिया जाए तो सब जगह उन्हीं का बोलबाला होजाये और उससे वस्तुतः हिंसा की ही वृद्धि हो। आततायियों के विषय में शास्त्रो मे स्पष्ट कहा है कि "आततायिनमायान्तं हन्यादेवा विचारयन्।" अर्थात् आततायी आरहा हो तो बिना संकोच के उसे मार डालना चाहिए। ऐसी हिंसा को शास्त्र पाप नहीं बतलाते। इस समय शास्त्रोक्त क्षात्र धर्म के प्रचार की जिसका भगवद् गीता के भी

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥
निराशी निर्ममो भूत्वा युद्ध्यस्व विगतज्वरः।

इत्यादि श्लोकों द्वारा विशेषरूप से प्रतिपादन है—बड़ी भारी आवश्यकता है। गुण्डों का मुकाबिला विशुद्ध अहिंसात्मक उपायों से करना सर्वसाधारण के लिये असम्भव है। आप जैसे महात्मा अपनी अद्भुत आत्मिक शक्ति और तप के सामर्थ्य से ऐसा कर सकें तथा उन्हें सीधे रास्ते पर ला सकें तो और बात है किन्तु जब मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और योगिराज श्रीकृष्ण जैसे महापुरुषों को भी दुष्ट दमनार्थ शस्त्र प्रयोग आवश्यक होगया तो अन्यो की तो बात ही क्या है। ब्राह्मणों के लिये जहा

"न पापे प्रतिपापः स्यात्, साधुरेव सदा भवेत ॥
अक्रोधेन जयेत्क्रोधम्, असाधुं साधुना जयेत्।
जयेत् कदर्यं दानेन, जयेत्सत्येन चानृतम् ॥

अर्थात् "पापी के प्रति भी वह पाप न करे किन्तु सदा साधु बना रहे। अक्रोध के द्वारा क्रोध को जीते, दुष्ट को भी अपने साधुत्व से जीते। कदर्य को दान से और असत्य को सत्य से जीते।" इस प्रकार के उपदेश हैं वहां क्षत्रियों के लिये स्पष्ट लिखा है कि—

यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यः,
तस्मिंस्तथा वर्तितव्यं स धर्मः।
मायाचारः साधुना प्रत्युपेयः,
मायाचारो मायया बाधितव्यः ॥

अर्थात् "जो जिसके साथ जैसा व्यवहार करता है उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये। साधुओं के साथ साधुता से पेश आना चाहिये छली कपटियों का बुद्धि प्रयोग से नाश करना चाहिये।" यह ही व्यावहारिक नीति है जिसका इस समय विशेष रूप से उपदेश देने की आवश्यकता है जबकि चारों ओर भयंकर गुण्डापन लीग द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है जिसके भयंकर उदाहरण लूट मार, अग्निकाण्ड, सहस्रों हिन्दु स्त्रियों और कन्याओं का अपहरण और व्यभिचार, बलात् धर्म परिवर्तन और विवाहादि के रूप में पूर्वी बंगाल में सामने आये हैं। अब आपने अपने कई लेखों में यह स्पष्ट कर दिया है कि कायरता की अपेक्षा आप हिंसात्मक प्रतिरोध को

अच्छा समझते हैं पर फिर भी समय २ पर अहमदाबाद के दंगे आदि के समय आपके स्व० श्रद्धेय श्री गणेशशंकर जी की तरह आत्म-बलिदान के उपदेश भ्रम उत्पन्न करते हैं। उनसे गुण्डों के मुकाबिले मे काम चलना सम्भव नहीं प्रतीत होता। नीति के रूप में अहिंसात्मक साधनो क प्रयोग द्वारा स्वराज्य प्राप्ति की बात तो पृथक् है किन्तु मुस्लिम लीग द्वारा आयोजित गुन्डेपन का प्रतिकार संगठित क्षात्र बल से ही किया जा सकता है।

आशा है आप इन बातों पर गम्भीरता से विचार करेंगे और हिन्दु-मुस्लिम एकता के प्रयत्न मे (जिसमें आप स्वयं जानते हैं कि आपके नेतृत्व में कांग्रेस के प्रारम्भ से मुसल्मानों के आगे झुकते रहने पर भी सफलता नहीं हुई) हिन्दु-हितों की हत्या के पाप के भागी न बनेंगे।

कृपया इस विषयक अपने विचारों से यथा-सम्भव शीघ्र सूचित करने का कष्ट करें। मैं आपसे मिलकर ही इन विषयों में बातचीत करना चाहता था किन्तु उसमे पर्याप्त विलम्ब की संभावना के कारण यह पत्र लिखा है। पत्र लम्बा होगया है इसका खेद है।

चौदहवें समुल्लास पर टीका

(ले०—श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू विश्व विद्यालय, काशी)

(१)

अल्-इन्सानो हरीसुन् अलामा मोनेआ—इस अरबी कहावत का अर्थ है कि मनुष्य पर जिस बात के लिये प्रतिबन्ध लगाया जाये उसके लिये वह लालच किया करता है। ठीक यही बात हमारे बहुत से भाइयों की है। जब से सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश के चौदहवें समुल्लास के सम्बन्ध में आन्दोलन खड़ा हुआ है तब से इस समुल्लास की ओर विशेष रूप से बहुतों का ध्यान आकर्षित हुआ है। कोई कहता है कि इसको पृथक छपाना चाहिये। कोई कहता है कि इसे रट लेना चाहिये—इत्यादि।

पूरे सत्यार्थ प्रकाश पर टिप्पणियों की, भाष्य की आवश्यकता को मैंने बहुत पहले आवश्यक समझा था किन्तु यह काम मेरे बस का न था कि मैं अकेले करता। हां चौदहवें समुल्लास पर लिख सकता था किन्तु कुछ कारणों से मूल सामग्री को देखना आवश्यक था। इस विषय के लिये सन् १९४३ ई० में ३० मई से ९ जून तक अजमेर में रहा। अजमेर से काशी पहुंचने भी न पाया था कि सिन्ध के विरोध का समाचार मिला। फिर तो चौदहवें समुल्लास की चर्चा जितनी फैली वह स्पष्ट ही है ऐसी अवस्था में उचित प्रतीत हुआ कि चौदहवें समुल्लास की बातों के विषय में लोगों के सम्मुख कुछ ऐसी सामग्री रखी जाय जिससे इसके समझने समझाने व इसके विषय में कुछ विशेष जानकारी लोगों को प्राप्त हो। इस कारण क्रमानुसार कुछ लिखा जा रहा है।

समीक्षा पद १ में है—आरम्भ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करनेवाला दयालु। यह अर्थ है—बिस्मिल्ला हिर्रहमा निर्रहीम—का। इस अरबी वाक्य में कोई शब्द ऐसा नहीं जिसका अर्थ 'आरम्भ' हो किन्तु श्री स्वामी जी से पूर्व के अनुवादकों के कुरान में इसका अर्थ है —

(१) शुरू करता हूं मैं साथ नाम अल्लाह बख्शिश करने वाले मेहरबान के (मौ० शाह रफ़ीउद्दीन मृत्यु सन् १८१८ ई०)

(२) शुरू अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है (मौ० शाह अब्दुल क़ादिर मृत्यु सन् १८२८ ई०)

इसी प्रकार अन्य कई स्थलों में उक्त वाक्य का अर्थ ऊपर के ही अर्थों से मिलता जुलता पाया जाता है और उनमें आरम्भ का बोधक शुरू शब्द है किन्तु श्री स्वामी जी के पश्चात् उक्त वाक्य के अनुवाद कहीं पुराने ढंग का है और कहीं नये ढंग का —

१ शुरू करता हूँ अल्लाह के नाम से जो बड़े मेहरबान निहायत रहम वाले हैं (मौलाना अशरफ़ अली थानवी मृत्यु १९४३ ई०)

२ (शुरू) अल्लाह के नाम से (जो) निहायत रहमवाला मेहरबान (है) (सन् १८६८ ई० में मौलाना नज़ीर अहमद साहब के अनुवाद के अनुसार)

३ खुदा के नाम से (शुरू करता हूँ) जो बड़ा मेहरबान रहम वाला है (सय्यद फ़रमान अली के अनुसार अनुवादित सन् १९०८ ई

४ शुरू करता हूँ साथ नाम बख्शिश करने वाले मेहरबान के (तफ़सीर मजहरी प्रकाशित सन् १९१२ ई०)

५. अल्लाह का नाम लेकर (आरम्भ करता हूँ) जो बड़ा कृपालु (और) बड़ा दयालु है (हिन्दी कुरान ख्वाजा हसन निज़ामी द्वारा प्रकाशित सन् १९२८ ई०)

६. अल्लाह के नाम स (जो) निहायत रहम वाला मेहरबान है (तफसीर सूर. फातिहः प्रकाशित सन् १९२५ ई०)

७ शुरू साथ नाम अल्लाह के बख्शिश करने वाला मेहरबान (कुरान आसान तफसीर प्रकाशित सन १९२७)

८. अल्लाह के इन्तहा रहमवाले बार बार रहम करने वाले के नाम से (मौलाना मुहम्मद अली (अहमदी) द्वारा अनुवाद प्रकाशित सन् १९२१ ई०)

९. अल्लाह के नाम से जो अर रहमान और अर रहीम है (राष्ट्रीय नेता मौलाना अबुलकलाम आजाद के कु। - ग़ज्र के अनुसार)

एक स्थान से कुरान की प्रथम सूरत को २३ भाषाओं में एक साथ छपाया गया है इसमे कुछ भाषाओं के शब्द इस प्रकार है —

१ च शुरू स्वम पनाम । खुदाय चि लुय मेहरबान आरर छू। ६न कोन की दा (पश्तो)

२. शुरू अल्लाह दे नाम नाल झंडा बड़ा बख्शिशवाला मेहरबान है (पंजाबी)

३. (शरू करूं छूं) साथे नाम अल्लाहना कृपालु (अने) दयालु (गुजराती)

४ दयालू व कृपालू परमेश्वराच्या (अल्लाह) नावांनी आरम्भ करतो (मराठी)

बात यह है कि बिस्मिल्ला में ब अक्षर से पूर्व अरबी के वैयाकरण किसी क्रिया या क्रिया बोधक शब्द का होना स्पष्ट रूप में या गुप्त रूपमें आवश्यक मानते हैं। इस कारण बिस्मिल्ला से पूर्व 'ईब्तदओ' या 'अशरओ' (आरम्भ करता हूँ मैं) को गुप्त मानते हैं और फारसी वाले बिस्मिल्ला से पूर्व 'आग़ाज मीकुनम' या 'इब्तदा मीकुनम' को आवश्यक मानते हैं किन्तु मौलवी अब्दुल्ला चकड़ालवी द्वारा जो अनुवाद कुरान का सन् १९०७ ई० मे हुआ है उस मे बिस्मिल्ला का अर्थ इन शब्दों मे किया हुआ मिलता है:—

"साथ बरकत नाम अल्लाह ही के जो निहायत ही बख्शिश करने वाला जुमलः मखलूकात पर बहुत ही मेहरबान फरमाबर्दार बन्दों पर है, पढ़।"

मौलवी साहब के विचार से बिस्मिल्ला हिर रहमानिर रहीम' के पश्चात् इक़रा शब्द (विधि का) समझना चाहिये क्योंकि सब से पहिले हजरत जब्रील साहब ने हजरत मुहम्मद साहब से कहा था—

इक़रा बेइस्मरब्बेकल् लज़ी—इत्यादि। मौलवी साहब का मत है कि कुरान के सिवा अन्य स्थलों में बिस्मिल्ला से पूर्व अशओ या इबतदओ या अन्य किसी क्रिया को आवश्यकतानुसार गुप्त समझना ठीक है किन्तु कुरान मे बिस्मिल्ला के पश्चात इक़रा (पढ़) शब्द ही गुप्त मानना ठीक है।

(क्रमशः)

सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश पर रोक

(महात्मा गांधी जी)

ख्याल यह था कि सिन्ध में 'सत्यार्थप्रकाश' पर लगाई गई रोककी मियाद खतम हो चुकी है, अब फिर कभी उस पर नई रोक नहीं लगाई जायगी। लेकिन यह उम्मीद धोखा साबित हुई। उस पर फिर यह नई रोक लगा दी गई है

"सिन्ध की सरकार को ऐसा लगता है कि सिन्धी जबान में छपी 'सत्यार्थप्रकाश' नाम की किताब के १४ वें अध्याय में ऐसी बात है, जो सम्राट् के प्रजाजनों के अलग अलग फरकों और वर्गों में वैर और नफरत पैदा करने वाली है।

'इसलिये अब सन्, १८९८ के क्रीमीनल प्रोसिजर कोड की दफा ९९ए से हासिल किये गये अधिकार के मुताबिक सिन्ध सरकार यह ऐलान करती है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखी हुई और प्रतिनिधि सभा, सिन्ध, कराची की तरफ से प्रोफेसर ताराचन्द डी० गाजरा, ऐम० ए द्वारा छापी गई सिन्धी 'सत्यार्थप्रकाश' की हर कापी, जहाँ कहीं भी वह मिले, और उसकी नकलों वाले दूसरे तमाम दस्तावेज, नये संस्करण या तरजुमे, या उस किताब के १४ वें अध्याय के उद्धरणों को सम्राट के लिये इस बिना पर जब्त कर लिया जाय कि ऊपर के अध्याय में लेख०

(अ) मुसलमानों के कुछ धार्मिक विश्वासों का मजाक उड़ाता है,

(आ) कुरान के उपदेश को गलत तरीके से लोगों के सामने रखकर उसकी बुराई करता है।

(इ) पैगम्बर महम्मद की सत्ता पर हमला करके उसकी बुराई करता है, और

(ई) आम तौर पर उस अध्याय में ऐसी बातें पाई जाती हैं जो मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचाने के लिए लिखी गई हैं और चोट पहुँचाती हैं।'

नई रोक का दायरा पुरानी से भी बड़ा है। पहली रोक ने तो १४ वें अध्याय की किताब को छापना या प्रकाशित करना ही गुनाह माना था। लेकिन नई रोक ने सारी किताब को रखना भी गुनाह माना है। मैं मानता हूँ कि यह रोक लगाना निरी नासमझी है और इससे सारी दुनिया के आर्यसमाजियों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचेगी। चालीस लाख आर्यसमाजियों की निगाह में 'सत्यार्थप्रकाश' की वही इज्जत है, जो मुसलमानों की निगाह में कुरान की या ईसाईयों की निगाह में बाइबल की है। मौजूदा जमाने के किसी [illegible] या अवसर पर लगाई गई रोक को समझा जा सकता है हालाँकि आजके जमाने में [illegible] प्रथम [illegible] ऐसा होने पर भी अपना हुकूम [illegible] नहीं करना चाहती। लेकिन मजहबी किताब पर रोक लगाना तो दुष्टतापूर्ण मालूम होता है। इसलिये मैं सिन्ध सरकार से जोर देकर कहूँगा कि वह इस रोकको हटा ले। 'सत्यार्थप्रकाश' का सिन्धी तरजुमा नया प्रकाशन नहीं है। जिस किताब के इतने संस्करण निकल चुके हों, और दुनिया की बहुतसी जबानों में जिसका तरजुमा हो चुका हो, क्या उस किताब के बारे में यह कहना ठीक होगा कि उसमें ऐसी बात लिखी है जो सम्राट् के प्रजाजनों के अलग अलग फिरकों में वैर या नफरत की भावना पैदा करेगी?" सहिष्णुता के गुण को

भ्रांत कभी नहीं होती, खासकर मजहबी बातों में मजहबी ख्यालों के फर्क तो कयामत तक चलते ही रहेंगे। इसलिये सहिष्णुता के जरिये ही अलग-अलग मजहबों को मानने वाले लोग भले पड़ोसी और दोस्त बन कर रह सकते हैं। टीका करने वालों की अच्छी या बुरी टीका से मजहब का कुछ नहीं बिगड़ता, उसमें बिगाड़ पैदा होता है, उसके माननेवालों की ढिलाई और लापरवाही से।

नई दिल्ली, २६-१०-४६
(अंग्रेजी से)

मोहनदास करमचंद गांधी

("हरिजन सेवक" से)

जबरदस्ती की शादियां और धर्म-परिवर्तन

गांधी जी से बार-बार यह सवाल पूछा जा रहा है कि पूर्वी बंगाल में जिन लड़कियों को जबरदस्ती उठा ले गये हैं, या जिनका धर्म-परिवर्तन कर दिया गया है, उनका क्या ? गांधी जी के मन में भी यह सवाल उठ ही रहा था। इसके जवाब में पिछले इतवार को शामको प्रार्थना सभा में उन्होंने कहा—"जबरदस्ती किसी का दीन या धर्म बदला नहीं जा सकता मैं तो बरसों से मुसलमानों के साथ बैठने वाला ठहरा। मुसलमानों ने मुझे मुसलमान बनने को कहा, खिस्ती लोगों ने खिस्ती बनने को कहा, मगर एक बात सबने कही—'धर्म तो दिल की बात है। उसमें जबरदस्ती नहीं हो सकती।' किसी ने जबरदस्ती कलमा पढ़ा दिया, तो क्या हम मुसलमान बन गये ! और कलमे में है क्या !—"खुदा एक है। उसके सिवा किसी की हस्ती नहीं'। मैं तो सब जगह घूमा हूं सब धर्म यही कहते हैं कि खुदा एक है। निरंजन और निराकार है, उसे छोड़कर हम जायंगे कहाँ ! आगे चलकर उसी कलमे में कहा गया है—मुहम्मद हमारा रसूल है'। खुदा के कई पैगम्बर हुए हैं। उनमें मुहम्मद साहब भी एक थे। मुझे यह मानने में कोई उज्र नहीं। तो मैं कह सकता हूँ, हम सब मुसलमान हैं। मगर जबरदस्ती कोई मुझसे कहलाना चाहे—'बोलो खुदा एक है। मुहम्मद उसका रसूल है'। तो मैं खामोश रहूँगा। भले मुझे कोई मार भी डाले, मगर मैं कलमा नहीं पढूंगा। अगर गरीब और अनपढ़ लोग मारे डरके कलमा पढ़ लें, तो क्या वे मुसलमान बन गये ! मुसलमान वह है, जो खुदा की खल्कत (सृष्टि) की खिदमत करता है। इस तरह बकने से धर्म नहीं बदलता। जिनका इस तरह जबरदस्ती धर्म बदला गया है। उन्हें किसी तरह की शुद्धि की जरूरत नहीं, किसी तरह के प्रायश्चित्त की जरूरत नहीं। उन्होंने खुद कोई पाप नहीं किया। इसी तरह जिन लड़कियों को जबरदस्ती उठा ले गये हैं, उन्हें वापस लेना चाहिये। जबरदस्ती किसी की शादी नहीं की जा सकती। मुझे उम्मीद है कि सब सच्चे मुसलमान पूरबी बंगाल की वारदातों के खिलाफ अपनी आवाज उठावेंगे।"

SINDH BANS SATYARTH PRAKASH

(*By M K Gandhi*)

One had thought that the ban on **Satyarth Prakash** had lapsed, never to be renewed But the hope was a dupe Here is the renewed ban

"Whereas it appears to the Government of Sindh that Chapter

XIV of the book in Sindhi entitled "Satyarth Parkash" contains matter which promotes feelings of enmity or hatred between different classes of His Majesty's subjects—

"Now, therefore, in exercise of the powers conferred by Section 99A of the Code of Criminal Procedure, 1898, the Government of Sindh hereby declares to be forfeited to His Majesty every copy wherever found of the book in Sindhi entitled "Satyarth Prakash" written by Swami Dayananda Saraswati and published by Professor Tarachand D Gajra, M A. on behalf of the Pratinidhi Sabha, Sindh, Karachi, and all other documents containing copies, reprints or translations of, or extracts from Chapter XIV of the said book on the grounds that in the said chapter the author,

(a) ridicules some of the religious beliefs of the Muslims,

(b) misrepresents and reviles the teachings of the Quran,

(c) attacks and belittles the authority of the Prophet Mohammed, and

(d) generally contains matter calculated to hurt and which hurts, the religious susceptibilities of Muslims"

It is wider in application than before. The lapsed ban made it criminal to print or publish the book containing Chapter XIV. The renewed ban makes the possession of such a copy a crime I cannot help feeling that the ban is senseless and is calculated to wound the susceptibilities of the Arya Samajists all the world over Satyart Prakash enjoys the same status for 40 lakhs of Arya Samajists as the Quran for the Muslims and the Bible for the Christians It is possible to understand a ban on contemporaneous controversial literature, though at this time of the day popular Governments are reluctant even then to use their power But it seems to be mischievous to ban a scriptural book I would, therefore, urge the Sindh Government to withdraw the ban in question The Sindhi translation of Satyarth Prakash is not a new publication. Is it to be contended that a book that has passed through so many editions and has been translated in most of the languages of the world has been now found to contain matter "which promotes feelings of enmity or hatred between different classes of His Majesty's subjects"? The virtue of toleration is never strained, especially in matters of religion Differences of religious opinion will persist to the end of time, toleration is the only thing that will enable persons belonging to different religions to live as good neighbours and friends Religion never suffers by reason of the criticism fair or foul of critics, it always suffers from the laxity or indifference of its followers.

New Delhi, 26-10-46.

(Harijan 3-11-46)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सूचनाएं

संग्राम समिति

(सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति)

की ११-१०-१६४६ की बैठक का निश्चय

सत्यार्थ प्रकाश सग्राम समिति की यह बैठक क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की धारा ६६ (ए) के अधीन सिंध की मुस्लिम लीग गवर्नमेंट द्वारा सत्यार्थ प्रकाश पर लगाए अनुचित प्रतिबन्ध का घोर विरोध करती है। यह आशा की गई थी कि विवेक से कार्य लिया जायगा और डिफेन्स इण्डिया रूल की समाप्ति पर लगाया हुआ प्रतिबन्ध उठा लिया जायगा। परन्तु सिंध सरकार द्वारा प्रचारित कठोर आज्ञा से न केवल इस प्रकार की सब आशाएं धूल में मिल गई हैं प्रत्युत इससे स्थिति और भी खराब होगई है क्योंकि नई आज्ञा के अनुसार सिंधी सत्यार्थ-प्रकाश का अपने पास रखना भी अपराध घोषित किया गया है। पहला प्रतिबन्ध डिफेन्स आफ इण्डिया रूल का दुरुपयोग था तो वर्तमान आज्ञा से न केवल धार्मिक स्वतन्त्रता के मूलभूत अधिकार का अपहरण किया गया है, वरन् इससे धार्मिक विषयों में हस्तक्षेप न करने की अबतक की सुनिश्चित सरकारी नीति का भी उल्लंघन होता है।

इस समिति की सम्मति में यह आज्ञा एक साम्प्रदायिक मन्त्री मंडल के एक धार्मिक अल्पसंख्यक वर्ग के ऊपर धार्मिक अत्याचार का उज्ज्वल उदाहरण है। आज्ञा में उल्लिखित निन्दात्मक बातों का भी यह समिति खन्डन करती और घोषणा करती है कि सत्यार्थप्रकाश के १४वें समुल्लास में ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो विभिन्न वर्गों में वैर-विरोध और घृणा के भावों को उत्तेजित करती हो अथवा जिसका उद्देश्य उत्तेजना फैलाना हो। ना ही इसमें ऐसी सामग्री है जो किसी के धर्म वा धार्मिक विश्वासों को अपमानित करके जान बूझकर द्वेष भाव से धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुचाने के अभिप्राय से लिखी गई हो। इस प्रकार यह आज्ञा ६६ (ए) की धारा के अभिप्राय के नितान्त विरुद्ध है। विपरीत इसके १४वें समुल्लास के कारण ही विविध मुस्लिम सस्थाओं और विद्वानों द्वारा कुरान की बुद्धि सगत व्याख्याएं प्रकाश मे आई हैं जिसके लिए सर्व साधारण मुसलमानों को सत्यार्थप्रकाश के यशस्वी लेखक का आभारी होना चाहिए था।

यह समिति आर्यों के अनुकरणीय धैर्य और संयम का आदर करती है जिन्होने अपने नेताओं की इच्छाओं का सम्मान करते हुए अब तक सीधी कर्यवाहियों का आश्रय नहीं लिया। यह समिति अनुभव करती है कि आर्यों को और अधिक संयम का परामर्श देना युक्ति युक्त न होगा। महात्मा गांधी जी ने भी अभी अभी इस प्रतिबन्ध को मूर्खता पूर्ण और शरारत से भरा हुआ बतला कर सिंध सरकार को प्रेरणा की है कि वह इसे वापस ले लेवे।

इस समिति की सम्मति में अब स्थिति ऐसी होगई है कि उपर्युक्त आज्ञा के शीघ्र से शीघ्र निराकरण और उसके द्वारा धार्मिक स्वतंत्रता को

रक्षा के लिए कोई प्रभाव शाली कार्यवाही करनी ही होगी। अतः यह समिति व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन का प्रारम्भ करने का निश्चय करती है; और देश भर के आर्य समाजियों से सत्याग्रहियों की शीघ्र से शीघ्र सूचियां भेजने का निर्देश देती है। इस समिति की ओर से सर्वाधिकारी के रूप में कार्य करने और समुचित प्रबन्ध करने का श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज को अधिकार देती है।

निम्न महानुभावों ने व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए अपने नाम पेश किए—

(१) श्री राजगुरु धुरेन्द्र जी शास्त्री
(२) „ स्वामी अभेदानन्द जी
(३) „ म० खुशहालचन्द जी
(४) „ कुंवर चान्दकरण जी शारदा
(५) „ स्वामी ब्रह्मानन्द जी
(६) „ लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित

आवश्यक सूचना

समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा आर्य समाजों के मन्त्री महोदयों से निम्न निवेदन है कि वे निम्नांकित सूचनायें सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली कार्यालय में शीघ्र से शीघ्र भिजवाने का कष्ट करें। इनकी तुरन्त आवश्यकता है :—

(१) अपने प्रान्त के कौन कौन आर्य महानुभाव किस किस पद पर कांग्रेस या कांग्रेस सम्बन्धी विभागों में कार्य कर रहे हैं ?

(२) आपके प्रान्त में कौन कौन आर्य समाजिक महानुभाव कांग्रेस सरकारों में किस-किस पद पर हैं ?

(३) म्यूनिसिपल और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में कौन कौन आर्य समाजी भाई कहां कहां काम कर रहे हैं ?

(४) दलितोद्धार के सम्बन्ध में आर्य समाज की ओर से कहां कहां क्या क्या कार्य हो रहा है ? और निकट भविष्य में क्या क्या होने की योजना है ?

गंगाप्रसाद उपाध्याय मन्त्री—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

हाँ, एक बार

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा जी साहित्यालंकार एम. ए. एल-टी डी-लिट्, अजमेर)

हाँ एक बार, बस एक बार ॥ टेक ॥
मैं देख सकूँ इस जीवन में स्वातन्त्र्य भवन का द्वार ॥ १ ॥

इन आंखो से भारत मा के बन्धन को मै कटता देखूँ ।
यह राज्य विदेशी भारत से बस एक बार हटता देखूँ ॥
अन्यायो, अत्याचारों को मैं एक बार घटता देखूँ ।
साम्राज्यवाद के पर्दे को बस एक बार फटता देखूँ ॥
दासत्व रहे जा सिन्धु पार ॥ २ ॥

दिल्ली के लाल किले पर भी अपना ही झन्डा फहराये ।
सर्वोच्च हिमालय शिखरों से "जयहिन्द" घोषही घहराये ॥
सागर की तुग तरगो पर उत्तुंग तिरगा लहराये ।
नभ मंडल में इस पुण्य भूमि का गान देव मंडल गाये ॥
हो स्वर्ग तुल्य भारत हमार ॥ ३ ॥

भारत के सिंह सपूतो को स्वातन्त्र्य युद्ध करता देखूँ ।
इन विश्व विजय के दूतों को माता के हित मरता देखूँ ॥
जो देश दासता में जकड़े उनके संकट हरता देखूँ ।
साम्राज्यवाद की सेना की कातरता, कायरता देखूँ ॥
हो पराधीनता पर प्रहार ॥ ४ ॥

इन वन्य विदेशी लोगों ने हमको क्यों दास बनाया है ?
चालीस कोटि मानव को क्यों जग का उपहास बनाया है ?
कर रक्त धान्य धन का शोषण हमको यमग्रास बनाया है ।
अन्यायों, अत्याचारों का अपना इतिहास बनाया है ॥
क्यो हट न सके यह अनाचार ? ॥ ५ ॥

सब हिन्द वासियों को फिर से सुखपूर्वक मैं रहता देखूँ ।
भारत भू में फिर दूध दही घृत के नद ही बहता देखूँ ॥
पूंजी पतियों के पापों को गड़बड़ गढ़ को दहता देखूँ ।
मजदूर किसानों को अनगिन अत्याचार न सहता देखूँ ॥
यों सहें किसी का कोप भार ? ॥ ६ ॥

गुरु बने विश्व का फिर भारत, सबको प्रिय पाठ पढ़ाता हो।
बन शांति दूत सारे जग को सुखकर सन्देश सुनाता हो॥
बन "सूर्य" ज्ञान का शुभ प्रकाश सारे जग में फैलाता हो।
भारत का गौरव ज्ञान मान सब भूमंडल को भाता हो॥
हो मानव का नवयुग प्रसार॥ ७॥

बस एक बार सबके मन में स्वातन्त्र्य भावना जाग उठे।
कायरता और निराशा की भयभीत भावना भाग उठे॥
कर प्रण महान्, दे रक्त दान, प्रत्येक मनुज सब त्याग उठे।
आजादी पर मर मिटने का सबमें ऊँचा अनुराग उठे॥
"जय हिन्द" उठे सब जग पुकार॥ ८॥

मान्य नेता जी !

(ले०—श्री 'विकल' जी मा मन्दिर घरौरा)

मेरे नेता मेरे सुभाष ।
दासत्वबन्ध भारत मा के, ढीला करने वाले सपूत ।
स्वातन्त्र्य समर के अधिनायक हे ! अमर क्रान्ति के अग्रदूत ॥
ओ भारत के उज्ज्वल प्रकाश ।
मेरे नेता मेरे सुभाष ॥

तुम भीष्म पितामह उग्र रूप, तुम कुरुक्षेत्र के क्रुद्ध श्याम ।
तुम रिपु मदन हो महाबली, बलराम राम तुम परशुराम ॥
करने को दुष्टों का विनाश ।
मेरे नेता मेरे सुभाष ॥

तुम हिन्द महासागर गभीर, तुम अटल हिमालय सम विशाल ।
पशुबल भयभीति के आगे कब, झुक सका तुम्हारा भव्य भाल ॥
ओ देश प्रेम की अमिट प्यास ।
मेरे नेता मेरे सुभाष ॥

तुम महा तपस्वी कर्मवीर, जप तप श्रद्धा साहस अपार ।
स्वागत की सुख वेला, हम रहे विकल अपलक निहार ॥
चालीस कोटि की एक आश ।
मेरे नेता मेरे सुभाष ॥

'विकल'

आर्य वीर दल

(ले०—श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी नेता पंजाब आर्य वीर दल)

आर्य समाज में वर्ण आश्रम की व्यवस्था है यह तो ठीक है आर्य समाज वर्ण को जन्म से नहीं मानता, गुण कर्म स्वभाव से मानता है। जैसा कि ऋषि दयानन्द ने लिखा है "वर्ण आश्रम गुण कर्मों की योग्यता से मानता हूं"। (सत्यार्थ प्रकाश स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश २६) तथा—"जो गुण और कर्मों के योग से ग्रहण किया जाता है वह वर्ण शब्दार्थ से लिया जाता है।" (आर्यो देश्य रत्न माला अंक ४३) आर्य्य समाज ४ वर्ण मानता है, अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र। इन वर्णों में वैश्य तो इस समय सभी बनना चाहते हैं, कि उस में व्यापार आदि सब धन्धे आते हैं। वैश्यों ने तो यह धन्धा करना ही है आपत् काल मान कर ब्राह्मण भी इस काम में लगे हुए हैं। शूद्र के बनाने के लिए बहुत यत्न की आवश्यकता नहीं जिसकी अपनी बुद्धि किसी काम को करने की नहीं वह दूसरे का सहारा लेकर जैसा उसको कहा जाय वैसा वह करता रहे। ब्राह्मण बनाने के लिए आर्य समाज ने गुरुकुल, उपदेशक विद्यालय आदि खोले हुए हैं। और सब को शिक्षा के लिए स्कूल और कालेज भी खोल रखे हैं। किन्तु क्षत्रिय बनाने के लिए कोई नियमित कार्य्य नहीं हुआ था।

किसी समय राज्य व्यवस्था ने खास जातियें को क्षत्रिय मान कर फौज में उनकी ही भरती की, किन्तु पिछली लड़ाई में यह बन्धन ढीला हो गया और प्रत्येक जाति में से योग्य व्यक्ति देख कर फौज में भरती किए गए, ये सब क्षत्रिय वृत्ति वाले थे, जिनकी ऐसी प्रवृत्ति नहीं थी वे उस समय भी भरती नहीं हुए, १९२७ ई० में आर्य समाज ने दिल्ली में आर्य कांग्रेस के समय महात्मा हंस राज जी की प्रधानता में आर्य वीर दल की स्थापना की और उस समय सब आर्य प्रति निधि सभाओं को लिखा गया कि वे अपने २ सूबों में आर्य वीरों की सूची तय्यार करके सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में भेजें, उसके अनुसार सब आर्य प्रतिनिधि सभाओं ने आर्य वीरों की सूची भेजी उस समय केवल सूची तय्यार करने का उद्देश्य था।

उसके पश्चात् यह अनुभव किया गया कि आर्य वीर दल के वीरों को कुछ शिक्षा भी देनी चाहिए जब तक शिक्षा न दी जाए तब तक यह सगठन ढीला रहेगा और वीरों का मिलकर कार्य करने का स्वभाव न होगा और अधिकारियों की आज्ञा मानने का अभ्यास न होगा और उन के शरीर दृढ़ और आत्मा बलवान् न होंगे, इस अवस्था में उन के अन्दर क्षात्र धर्म का सचार होना सम्भव नहीं, ऐसी बातों को ध्यान में रख कर सार्वदेशिक सभा ने आर्य वीर दल को इस रूप में संगठित करने का निश्चय किया और सेनापति फिर रक्खा गया, और प्रान्तीय सभाओं को लिखा गया कि वे अपने २ प्रान्तों में आर्य वीर दल सगठित करें।

वह कार्य अब तक होता रहा और अब ऐसा समय आगया जिसमें आर्य समाज के अधिकारियो ने अनुभव किया कि हमारी गति मन्द है, इसे

तेज करना चाहिये। यदि हमने अपनी गति को तेज न किया तो जमाना हमें पीछे छोड़ जावेगा, इस बात को ध्यान में रखकर आर्य समाज के अधिकारियो ने वीर दल को पुनः संगठित करने का निश्चय किया, और सार्वदेशिक सभाने प्रत्येक प्रान्त को आदेश दिया, जितना शीघ्र हो सके वह आर्य वीर दल को संगठित करके इस कार्य को पूरा करें।

आर्य वीर दल आर्य समाज का क्षत्रिय वर्ण है इसमे आर्य समाज सिद्धान्तानुसार जन्म आदि का ध्यान न करके क्षात्र वृत्ति वालो को भरती किया जाता है। और उनको शिविरों में शिक्षा दी जाती है। उसके पश्चात् वे अपने २ स्थानो में जाकर आर्य वीर दल का संगठन करते हैं। और शाखाए लगाते हैं। व्यायाम आदि करते है समूह रूप से कार्य करने की शिक्षा प्राप्त करते है। दूसरे के दुःखों का अनुभव करके उनके दूर करने का यत्न करते हैं। आर्य समाज की सेवा करते है अबलाओं की रक्षा अनाथो का पालन, दुःखियों की सहायता निर्बलो का उत्साह दीनों पर दया दुःखियों के दर्द को औषध बनना इनका कार्य है। क्योंकि क्षत्रिय शब्द का अर्थ ही दुःखियो के दुःख को दूर करना है उसी उद्देश्य को सामने रखकर इसका संगठन किया गया है। यह बात स्पष्ट है कि जब तक क्षात्रय न हो उस समय तक तीनों वर्णों की रक्षा नहीं होती। जिस प्रकार गृहस्थ के बिना तीनो आश्रमो का पालन नहीं होता उसको ध्यान मे रखकर आर्य युवको को क्षात्र धर्म की शिक्षा देने के लिये आर्य वीर दल का संगठन किया गया किसी को यह भ्रम न रहे कि आर्य वीर दल केवल आर्य समाजियो के ही कार्य करेगा, आर्य समाज के नियमो मे ऋषि दयानन्द जी ने लिखा है "संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है" इस नियमानुसार यह वीर दल प्रत्येक की सहायता करेगा। इसकी सेवा में जात पात की रुकावट न होगी, मजहब सम्प्रदाय का पक्षपात न होगा। प्राणिमात्र को परमात्मा का अमृत पुत्र मान कर उनकी सहायता करना इसका कर्त्तव्य होगा। ईश्वर करे कि हम इस ध्येय मे सफल हों।

स्वतन्त्रानन्द
नेता पंजाब आर्य्य वीर दल

आर्य कुमार जगत्

आर्य कुमारों और युवकों से

प्रिय आर्य कुमार और युवक बन्धुओ!

पूर्वी बंगाल के नोआखाली और त्रिपुरा जिलों में तथा अन्यत्र हिन्दू नर-नारियों और कुमारियों पर जो अमानुषिक अत्याचार किये गये है, जिस प्रकार हजारों स्त्रियों और पुरुषों को मुसल्मान बनने के लिये बाधित किया गया है तथा बलात्कार से कई स्त्रियों का विवाह कर दिया गया है उसका रोमांचकारी वृत्तान्त आपने समाचार-पत्रों द्वारा अवश्य पढ़ा होगा। इस अमानुषिक अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठा देने मात्र से कोई लाभ नहीं हो सकता, आवश्यकता इस बात की है कि आर्य कुमार और युवक ऐसे संकटकाल मे क्रियात्मक कार्य करने को आगे बढ़ें। आर्य कुमार सभाओं तथा आर्य युवक समाजों वा परिषदों द्वारा जो धनसंग्रह पूर्वी-बंगाल की पीड़ित हिन्दू जनता की सहायतार्थ किया जा सकता है उसे करके श्री रघुनाथप्रसाद जी कोषाध्यक्ष आर्य कुमार परिषद्, बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार, देहली के पते पर भिजवादे और स्वयंसेवक के रूप मे अधिक से अधिक संख्या मे जाने के लिये अपने को तय्यार रख कर सूची विवरण सहित मेरे पास बलिदान भवन देहली के पते पर तुरन्त भेजदें जिससे आवश्यकतानुसार उन्हें भेजने मे विलम्ब न हो। वहां जिन देवियों और कन्याओं को बलात् मुसल्मान बना लिया गया है अथवा शादी करदी गई है उनकी रक्षा का कार्य सबसे अधिक कठिन किन्तु आवश्यक है। इस कार्य को करने के लिये अत्यन्त उत्साही साहसी पूर्णब्रह्मचारी दृढ़ आर्य युवकों की आवश्यकता है। जो अविवाहित आर्य कुमार और युवक ऐसी अपहृत कन्याओं व देवियों के साथ विवाह करने को तय्यार हों (जो स्वयम् एक बड़ा पुण्य का कार्य होगा) वे भी अपने नाम विवरण सहित मेरे पास भेजदें ताकि यथासम्भव शीघ्र इस विषयक प्रबन्ध का यत्न किया जाए। इस सारे कार्य के विषय मे विलम्ब नहीं करना चाहिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति का० प्रधान
अ० भा० आर्यकुमार परिषत,
बलिदान भवन, देहली।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली की अपील

बंगाल पीड़ितों की सहायता

विज्ञप्ति नं०

इससे पूर्व जनता को यह सूचित किया जा चुका है कि इस सभा की ओर से श्री ओमप्रकाश जी त्यागी स० प्रधान सेनापति आर्य वीर दल स्वयं सेवकों के जत्थे के साथ पूर्वी बंगाल के पीड़ितों की सहायतार्थ बंगाल पहुँच चुके हैं।

सार्वदेशिक सभा की ३-११-४६ की अन्तरंग सभा में यह विषय प्रस्तुत हुआ था। सभा की ओर से श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री कुंवर चांदकरण जी शारदा तथा स्वामी अभेदानन्द जी आज रात स्थिति के निरीक्षण के लिये बंगाल के लिये रवाना हो रहे हैं।

कलकत्ता में केन्द्रीय आर्य रिलीफ सोसाइटी सहायता कार्य कर रही है। वहां से प्राप्त समाचारों के अनुसार पं० वीरेन्द्र जी कलकत्ता पहुँच गये हैं। प्रादेशिक सभा से प० ऋषिराम जी एवं महता सावलमल जी भी पहुंचे हैं। कल एक बैच चौमुहानी (नौआखाली) सेवा कार्य के लिये जायेगा। इस बैच में श्री वीरेन्द्र जी तथा अजमेर से आये दो सज्जन होंगे। बैच का नेतृत्व श्री पं० सदाशिव जी उपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब करेंगे यह बैच लगभग ८०००) का सामान कपड़ा, दवाई तथा दूध ले जा रहा है। खाद्य-पदार्थ वहीं से प्राप्त किये जायेंगे। नौआखाली के कुछ ग्रामों में प्राय: ७५ हजार हिन्दू एक प्रकार से मुसलमान गुण्डों की कैद में हैं। रास्ते इत्यादि काट दिये गये हैं। बाहर भी हजारों हिन्दुओं की सहायता करनी है। जो भाई बहिनें कैद में हैं उनतक पहुँचने की योजना बनाई जा रही है। मुसलमानों के चंगुल से निकले हुये भाई बहिनों को परिवारों व बिरादरी में बाहु फैलाकर स्वागत करने के लिये बंगाल के हिन्दू तैयार हैं। अनुमान है आर्य समाज को इस काम में कम से कम ५ लाख रुपया व्यय करना होगा। शीतकाल आजाने से ओढ़ने बिछाने के वस्त्रों की विशेष आवश्यकता होगी। तत्काल १ लाख रुपये की आवश्यकता है।

आर्य समाजों तथा सर्व साधारण हिन्दू जनता ने बंगाल के पीड़ितों की कष्ट कहानी को उसी रूप में अनुभव किया प्रतीत होता है जिसमें वह अनुभव होनी चाहिये थी। सभा की अपील पर समाजों ने धन-संग्रह का कार्य जोर शोर से आरम्भ कर दिया है। यह कार्य अविरल गति से जारी रहना चाहिये। निश्चय ही आर्य समाज अपनी विशुद्ध परम्पराओं के अनुरूप ही इस सेवा कार्य में जुटेगा। ५-११-४६

(२)

श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री, श्री स्वामी अभेदानन्द जी तथा श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा सार्वदेशिक सभा की ओर से स्थिति के निरीक्षण एवं सहायता व रक्षा कार्य विषयक आवश्यकताओं के जानने के लिये बंगाल पहुँच गये हैं। सहायता तथा रक्षाकार्य आरम्भ हो चुका है। श्री डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी प्रधान हिन्दू महासभा का केन्द्रीय आर्य रिलीफ सोसाइटी को पूर्ण सहयोग प्राप्त है। आर्य समाजों

तथा जनता के सभा कार्यालय में हर प्रकार की सहायता व आश्वासन विषयक पत्र व सन्देश निरन्तर आ रहे हैं। रिलीफ सोसाइटी की ओर से कल २० स्वयंसेवकों की मांग प्राप्त हुई है जिन्हें तत्काल भेजने की व्यवस्था की जा रही है।

सभा में रिलीफ कार्य के लिये भी धन जन के पर्याप्त सन्देश प्राप्त हो रहे हैं। नौआखाली की बीभत्स घटनाओं ने सुदूर विदेश के हिन्दू भाइयों की आत्मा को कम्पायमान कर दिया है। मलाया में सेना में काम करने वाले हिन्दू भाई नौआखाली की घटनाओं से विचलित होगये हैं। बलात् मुस्लिम बनाये गये हिन्दू नरनारियों की रक्षा तथा उन्हें हिन्दू दायरे में वापस लाये जाने की चिन्ता उन्हें व्यथित कर रही है। इस काम के सम्यक् सम्पादन के लिये वे केवल मात्र आर्य समाज की ओर देखते हैं।

इस सम्पूर्ण कार्य में लाखों रुपये व्यय का मोटा अनुमान है। समाजों तथा जनता को बात की बात में यह राशि पूरी कर देनी चाहिये। जहा धन संग्रह का कार्य अभी आरम्भ न हुआ हो वहा तत्काल प्रारम्भ हो जाना चाहिये। जहा धन-संग्रह का कार्य हो रहा हो वहा इस काम को खूब बढ़ाना चाहिये। ज्यों २ धन-संग्रह होता जाये यहा भिजवाते रहना चाहिये। स्वय सेवकों की सूचिया अपने यहा तैयार रखनी चाहिये। स्वय सेवक विश्वस्त सदाचारी, उत्साही और प्रबन्ध कार्य में पटु होने चाहियें। यथा आवश्यकता उन्हें बगाल भेजा जायगा।

(३)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा, श्री स्वामी अभेदानन्द जी तथा श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्रजी शास्त्री स्वयं सेवकों के दैत्र के साथ कलकत्ता से चलकर ८-११-४६ को चांदपुर पहुँच गये हैं। कलकत्ता में इन महानुभावों ने सहायता तथा रक्षा कार्य के कार्यक्रम के विषय में श्री डा० श्यामाप्रसाद जी मुकर्जी से भी बात चीत करली है। उन्होंने इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस मि० टेलर से एक पत्र चांदपुर के पुलिस अफसर के नाम भी ले लिया है। मि० टेलर आर्य समाज तथा उसके कार्य से बहुत प्रभावित हैं। चांदपुर में इस समय ३० हजार शरणार्थी आये हुए हैं। कपड़ा खाने पीने की वस्तुओं व जले हुए मकानों के पुनर्निर्माण के लिये बहुत धन की आवश्यकता है। चावल २५) मन मिल रहा है। ये महानुभाव मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी के कार्यकर्ताओं से मिलकर चौमुहानी जाय गे। परोपकारिणी सभा के प्रतिनिधि श्री भगवान स्वरूप जी भी इनके साथ हैं। इन्होंने अनेक परिवारों के स्त्री बच्चों से मिलकर बातें कीं। उनके बयान बड़े कारुणिक हैं। जो परिवार बलपूर्वक मुसलमान कर लिए गए हैं उनमें से भी बहुत से लोग भागकर उपर्युक्त शरणार्थी कैम्प में आ गए हैं। इस सम्बन्ध में विस्तृत रिपोर्ट प्राप्त होगी। आर्य प्रादेशिक सभा के प्रधान श्री म० खुशहालचन्द जी भी ४१ स्वय सेवकों के दैत्र के साथ बगाल पहुच गए हैं। और शीघ्र ही नौआखाली के लिए रवाना होने वाले हैं। इस समय सबसे महत्वपूर्ण कार्य पुलिस व फौज के सहयोग से बलात् मुसलमान बनाई और विवाहित देवियों को मुसलमानों के घरों से निकालने का है।

इस समय तक अर्थात् १४ की दोपहर तक

सभा में सहायता तथा रक्षा कार्य के लिये लगभग १००००) प्राप्त हुआ है। जो सज्जन अन्न वस्त्रादि सहायता रूप में भेजना चाहें वे भेज सकते हैं। हमें तत्काल सहायता कार्य के लिए ५ लाख रुपया एकत्र करना है। आर्य समाज, आर्य नर नारी तथा अन्य हिन्दू हितों के रक्षक व प्रेमी इस सम्बन्ध में अपने कर्तव्य का जिस गति से पालन कर रहे हैं वह उत्साह वर्धक है अभीतक जहां धन एकत्र करने का काम आरम्भ न हुआ हो वहा तत्काल प्रारम्भ हो जाना चाहिये तथा जहा धन संग्रह का कार्य हो रहा है वहा यह कार्य वेग के साथ बढना चाहिये। सगृहीत धन किसी दशा में भी आवश्यक रूप से रोकना न चाहिये वरन् सीधा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष के पास भेज देना चाहिये।

वीर अर्जुन की इस कार्य के लिये की गई अपील पर जो धन वीर अर्जुन के कार्यालय में प्राप्त हो रहा है उसमें से बंगाल की पीड़ित स्त्रियों व बच्चों के रक्षण व सहायता में व्यय करनेके लिये पहली किश्तके रूप में सभाको १०००) मिला है तथा आगे भी जो धन संग्रह होगा वह सभा को मिलता रहेगा यह वीर अर्जुन के अध्यक्ष महोदय ने हमें लिखा है।

(४)

जैसा कि पूर्व विज्ञप्ति में उल्लेख किया गया है, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मान्य प्रतिनिधि श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा श्री राज गुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री, तथा श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज रायपुर पहुंच गये हैं और वहां उन्होंने स्थिति का निरीक्षण तथा अत्याचार पीड़ित देवियों के बयान लिखने का कार्य आरम्भ कर दिया है। उन देवियों ने उन गुण्डों और आतताईयों के नाम भी बतलाये हैं जिन्होंने उन पर बलात्कार आदि के जघन्य अत्याचार किये थे। उन महानुभावों के साथ १६ आर्य वीरों का एक जत्था भी श्री डा० माधवराम सोफ्ट के नेतृत्व में गया है।

इस समय दो प्रकार के सहायता तथा रक्षा कार्य किये जा रहे हैं। एक तो पीड़ितों में अन्न वस्त्र, औषधि और दूध इत्यादि का वितरण किया जा रहा है और दूसरा बलात् धर्म परिवर्तन किये भाई बहनों के उद्धार के उपाय किये जा रहे हैं। ११ नवम्बर को सेना के संरक्षण में यह पार्टी लक्ष्मीपुर पहुँच गई है और १२ तारीख को रायपुर के लिए रवाना हो गये हैं। रायपुर में अब तक कोई सहायता कार्य नहीं हुआ था। इस जगह सब से ज्यादा विनाश हुआ था। इस ग्राम में आसपास के ग्रामों से भागे हुये लगभग ५००० शरणार्थी आये हुये हैं।

केन्द्रीय आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता को सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में हजारों रुपयों की तत्काल मांग आई है जिसकी पूर्ति के यत्न किये जा रहे हैं। सभा के कोष में ज्यों २ धन आ रहा है त्यों त्यों कलकत्ता भेजा जा रहा है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा में २१।११।४६ तक निम्न प्रकार धन राशि बंगाल सहायता कार्य के लिए प्राप्त हुई है :—

बंगाल रिलीफ के लिये प्राप्त धन राशि

५००) आर्य समाज हल्द्वानी
५००) आर्य समाज हल्द्वानी (दूसरी किस्त)
५००) आर्य समाज मल्हार गंज, इन्दौर।
२००) आर्य समाज प्रतापगढ (अवध)
४०५) आर्य समाज रामपुर स्टेट
१५१=)॥ आर्य समाज महोवा झांसी
१५०) आर्य समाज जौनपुर
१०) श्री प० धर्म देव जी विद्यावाचस्पति
५००) हिन्दू जनता माडिल बस्ती, देहली
२२५) मन्त्री आर्य समाज गगोह (सहारनपुर)
१२१) श्री पी० यावर सिंह जी बिलना
१०) श्री रामफल त्यागी निवाडी (मेरठ)
१३०) श्री राम स्वरूप जी बौद्धिक नायक आर्य वीर दल, करोलबाग, देहली
२) श्री ब्रह्मदेव शर्मा देहली।
२३०) आर्य समाज बल्लभगढ
२०) स्त्री आर्य समाज बल्लभगढ़
१०००) आर्य समाज करोलबाग देहली।
१००) आर्य समाज विक्टगंज मरदान (पेशावर)
५००) आर्य समाज डेरागाजीखां
१५१) आर्य समाज प्रतापगढ (दूसरी किस्त)
१५०) जयपुर स्टेट रेल्वे के दफ्तर के कर्मचारियों द्वारा
३५०) आर्य समाज कोटा राज्य
२००) आर्य समाज उदयपुर
१००) आर्य समाज सोहनगंज (देहली)
२५०) आर्य समाज पहासू (बुलन्दशहर)
१५) श्री बी० एन० मल्होत्रा देहली शाहदरा
१०) श्री शिवराम जी आर्य कलसिया स्टेट
१०) श्री राजा राम दुबे मन्त्री आर० डी० स्टाफ फतेहगढ़
५) जगचन्द्र भाई धनजी भाई आर्य चौसेरा अहमदाबाद
५) श्री करण राज खोसला लाहौर
५) श्री रामेश्वर जी शास्त्री दिल्ली
१०००) अध्यक्ष वीर अर्जुन दिल्ली
१५०) श्री गंगा राम जी नगर नायक आर्य वीर दल नई मंडी नारनौल
२५) श्री पन्ना लाल जी वकील इटावा
२१) श्री लाला नारायण दास राधारमन इटावा
२) ब्र० भारत भूषण जी, दिल्ली
१३३) आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जलन्धर
५५०) आर्य समाज बलरामपुर
१५००) आर्य समाज ब्यावर
२००) स्त्री आर्य समाज हरदोई
४००) आर्य समाज बीकानेर
२०१) आर्य समाज बडनगर (मालवा)
१५०) आर्य समाज पूर्णिया (बिहार)
४००) आर्य समाज पीपाड़ (मारवाड़)
४०१) बंगाल सहायता समिति दुगड्डा (गढवाल)
२००) आर्य समाज अमरावती
१००) आर्य समाज अलमोड़ा
१००) आर्य समाज बयाना (भरतपुर)
१००) आर्य समाज बयाना (भरतपुर) दूसरी किस्त
१००) आर्य समाज ब्यावरा सी० आई०
३२५) आर्य समाज विशनगर (काठियावाड़)
१००) आर्य समाज हरदोई
२००) आर्य समाज जौनपुर
२६७) आर्य समाज पुवायाँ (शाहजहाँपुर)

१७०) आर्य समाज बावली (मेरठ)
१००) श्री कैलाशचन्द्रजी अग्रवाल कदौली (बाराबंकी)
७) आर्य समाज रामनगर (गुजरावाला)
१००) आर्य समाज गुलबर्गा
१००) आर्य समाज रादौर (करनाल)
५१) श्री जमुनादास जी आर्य धामपुर (बिजनौर)
५१) आर्य समाज उन (अलीगढ़)
३०) श्रीमती विद्यावती जी प्रयाग
२०) आर्य समाज विघूचक
११६ आर्य समाज म्यानी (पजाब)
५६) आर्य समाज सब्जी मडी आर्यपुरा देहली
१५०) आर्य समाज सेंडरा (बी० बी०, राजपूताना
१००) शाखानायक आर्यवीर अम्बहटा (सहारनपुर)
१००) श्री घासी राम चमन लाल कराची
१००) आर्य समाज हल्दौर (बिजनौर)
१००) श्री लाला पन्नालाल वकील देहरादून
५०) आर्य समाज दहगवा (बदायू)
५०) आर्य समाज गनकैरिज फैक्टरी कार्टर्स जबलपुर
३०) आर्य समाज बादली (रोहतक)
२५) आर्य समाज रानीमडी प्रयाग
१०) श्री मक्खन लाल शर्मा स्टेशन मास्टर पटा (इटावा)
५) श्री रत्न सिंह जी भारद्वाज दिल्ली केन्ट
५) श्री प्रकाशचन्द्रजी अग्रवाल सिरसा (इलाहाबाद)
५) आर्य समाज नर्विपुर हुगली
५) आ० ऐस भारद्वाज दिल्ली कैंट
१००) श्री स्वामी चेतन देव जी देवास वाले
२५ । ।र्य समाज बहराइच
२ र्य समाज खुर्जा (बुलन्दशहर)
३००) आर्य समाज थाना भवन (मुजफ्फरनगर)
१०१) सेठ ईश्वर दास एण्ड सन्ज उज्जैन
११) श्री सेठ नाथमल डूंगर सिंह उज्जैन
१०) श्री दुर्गा दास मिस्त्री उज्जैन
१०) श्री शिवचरण दास उज्जैन
७५) आर्य समाज मोरसराय देहली
१०१) आर्य समाज बहरोड (राजपूताना)
५०) आर्य समाज अलमोड़ा
५०) आर्य समाज अलमोड़ा (दूसरी किस्त)
७५) आर्य हिन्दू पचायत सीतापुर (मुजफ्फरगढ़
६५) आर्य समाज डोईवाला, देहरादून
६४) आर्य हिन्दू जनता झोझी (गुड़गाँवा)
४०) आर्य समाज धटियाली राज सावर अजमेर
४००) आर्य समाज नागौर (मारवाड़)
५००) आर्य समाज गोविन्दगढ़ (जालन्धर) सिटी
१५७) आर्य समाज महू छावनी
५) पेन श्री निवासन दिल्ली
५) श्री भगवान दास जी गुप्त, दिल्ली,
२) श्री गोवर्धन लाल जी दिल्ली
२) श्री राम जी रामनगर दिल्ली
५) श्री कुजलाल जी रामनगर दिल्ली
१०००) आर्य समाज दरियागंज, देहली
१००) आर्य समाज कालका
८००) आर्य समाज लश्कर
१००) आर्य समाज बहराइच
१५०) आर्य समाज प्रतापगढ़ यू० पी०
२५०) आर्य समाज सरायसिद्ध (मुलतान)
१०००) अध्यक्ष बंगाल सहायता फंड कारंजा (बरार)
१०१) श्री कृष्ण दास जी वैजल इटावा
५१) श्री सेठ बाबू राम जी गुप्त वकील इटावा
७०) आर्य समाज खुदागंज शाहजहापुर

३०) आर्य समाज राजगढ (अलवर)
५०) आर्य समाज छोटी सादड़ी (मेवाड़)
५०) तेज नारायण सिंह जी मन्त्री आर्य समाज
५०) आर्य समाज दहगवाँ (बदायू)
५०) आर्य समाज गौरा कलां
४५) स्वामी आत्मानन्द जी सतुआ (सारन)
३०) श्री बा० गंगा प्रसाद जी पोस्ट मास्टर महाराजपुर (झांसी)
२५) आर्य समाज सकरेचा पुनपुन, (पटना)
२५) आर्य समाज विजयगढ (अलीगढ)
२५) आर्य समाज शाहबाद (हरदोई)
४०) आर्य समाज लाहौर कैंट
१०) आर्य समाज राजगढ (अलवर)
२०) आर्य समाज खागा (फतेहपुर)
२०) आर्य समाज घूघू चिलती (पीलीभीत)
२०) आर्य समाज राजगढ़ (अलवर)
२०) आर्य समाज राजगढ (अलवर)
१०) आर्य समाज अलीगंज (एटा)
१०) आर्य समाज भटपुरा पो० असमौली मुरादाबाद
५) श्रीमती दुर्गा देवी जी आर्य, अमरावती
१०॥=) श्री बेचे लाल जी दीक्षित धार्मिक कमेटी पौनी बीसलपुर पीली भीत
१००) आर्य समाज सोहनगंज, देहली।

२१७३०)॥ सर्वयोग

३०-११-४६ तक सभा के कोष में ४२७५६।-) प्राप्त हुआ है। और ६ प्रेस विज्ञप्तियां जारी हुई हैं। दान सूची में कई राशियां ऐसी हैं जिनका दान दाताओं के नाम सहित पृथक विवरण प्रकाशित होना शेष है। जो राशियां सीधे कलकत्ता भेजी गई हैं उनका विवरण भी यथा समय सार्वदेशिक में प्रकाशित किया जायगा।

मन्त्री—सार्वदेशिक सभा, देहली।

जाति भेद की हानियां

प्रिय महोदय ! आप यह भली प्रकार जानते हैं कि देश तथा जाति की अवनति के जहां अन्य अनेक कारण हैं वहां एक मुख्य कारण

"वर्तमान जाति भेद"

भी है। जहां किसी समय हमारी एक विशाल आर्य जाति थी वहां हमारे देश में सैकडों नहीं हजारों जातियां तथा उपजातियां बन गई हैं यही कारण है कि जहां हम किसी समय एक ही माला में पिरोये मणियों के समान एक ही जाति के संगठित तथा सुदृढ़ अंग थे [illegible] हम वर्तमान जातियों तथा उपजातियों में बंट कर जाति के संगठन तथा एकता को सर्वथा खो बैठे हैं।

१ वर्तमान जाति भेद के कारण जाति में संगठन और एकता के अभाव हो जाने से ही हमें विदेशियों तथा विधर्मियों के अत्याचारों को सहन करना पड रहा है जिसका वर्तमान बंगाल काण्ड प्रत्यक्ष उदाहरण है।

२ वर्तमान जाति भेद के कारण परस्पर गुण कर्मस्वभावानुसार तथा योग्य आयु में विवाह आदि सम्बन्ध न होने के कारण जाति की शारीरिक मानसिक तथा सामाजिक उन्नति का सर्वथा ह्रास हो चुका है।

३ इन जातपातों के कारण आर्य (हिन्दू) जाति की पाचन शक्ति इतनी कमजोर हो गई है कि उसमें अपने बिछुड़े भाईयों को भी अपने अन्दर पचाने की शक्ति नहीं रह [illegible] जिस जाति की पाचन शक्ति ही कमजोर हो वह कैसे बलवती बन सकती है इसका आप स्वयम् विचार कर सकते हैं।

४ इन जन्मगत जातियों और उपजातियों ने आदर्श वैदिक वर्ण व्यवस्था के नाश कर दिया है और जन्म से अपने को बड़ा और दूसरों को छोटा मान लेने के कारण देश में ज्ञान विज्ञान [illegible] शास्त्र तथा कला कौशल आदि का सर्वथा नाश व ह्रास हो गया है और इन सद्गुणों के नाश के कारण ही देश परतन्त्रता की बेड़ियों में सदियों से जकड़ा [illegible]

५ इन जन्म गत जातियों और उपजातियों के कारण ही हम विशाल आर्य जाति से प्रेम करना छोड कर केवल अपने संकुचित दायरे की बिरादरियों से ही प्रेम करने लगे हैं [illegible] ही कारण है कि हम एक आर्य जाति रूपी माता के पुत्र होते हुए भी हम में परस्पर प्रेम सहानुभूति [illegible] का सर्वथा अभाव हो गया है।

जन्म गत जाति बन्धन के [illegible] ही समान गुण कर्म तथा योग्यता [illegible] और परस्पर विवाह सम्बन्ध [illegible] कारण जहां हमारे परिवार [illegible] वहां के [illegible] बन रहे हैं वहां [illegible] मशील [illegible] उच्चविचारों [illegible] नहीं बन रहे जिन के ऊपर देश और जाति की उन्नति [illegible]

[illegible]

भेद को दूर करना [illegible] कर्तव्य है।

वर्तमान जन्मगत जाति भेद को दूर करने

और परस्पर गुण कर्म स्वभावानुसार विवाह आदि सम्बन्ध करने तथा प्रेम और सहानुभूति द्वारा परस्पर भ्रातृ भाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से ही "सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा" की स्वीकृतिसे भारतके प्रसिद्ध विद्वानों तथा नेताओंने

"जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ"

की स्थापना की है। आपसे प्रार्थना है कि आप इस सघ के सहायक तथा सदस्य बनें तथा वर्तमान जाति भेद के नाश, और एक अखण्ड आर्य जाति के निर्माण मे हमें पूर्ण सहयोग देकर अपने कर्तव्य को पूर्ण करें।

निवेदक

गंगाप्रसाद रि० चीफ जज टेहरी—अध्यक्ष

धर्मदेव विद्या वाचस्पति देहली—उपाध्यक्ष

आचार्य्य भद्रसेन अजमेर—संचालक

धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री एम ए. मेरठ—उपसंचालक

आ स. संघ के नियम तथा उद्देश्य और सहायक तथा सदस्यता के प्रवेश फार्म संघ के कार्यालय अजमेर से मँगालें।

हृदय का स्थान निर्णय

(ले०—श्री महात्मा नारायण स्वामी जी प्रधान सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, देहली)

आप्टे के कोश मे हृदय शब्द के अर्थ इस प्रकार मिलते हैं:—

(१) a cave, cavern, hiding place, a pit hole in the ground, the heart

(२) Heart शब्द के अर्थ:—हृदय, बुक्का, Heart अग्रमास, बुक्काग्रमासम्, चित्त, मन, अन्त करण, आत्मन, mind, अतरात्मन्, स्वांत, उरस् वक्षम्, वक्ष स्थल मर्मन, स्नेह:, प्रणय:, राग:, भाव, उदर, गर्भ, अभ्यतर, अन्तर।

(३) पश्चिमी शरीर विज्ञान मे Heart रक्तशोधक पिंड का नाम है परन्तु सस्कृत साहित्य मे गुहा या हृदय उस कहते हैं जो आत्मा का निवास स्थान है (ऋत पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्द्धे, छायातपौ ब्रह्मविदो वदन्ति पञ्चाग्नयो ये च त्रिणाचिकेता ॥(कठ०३।१)

(४) इस सस्कृत वाली गुहा मे आत्मा और परमात्मा का छाया और आतप (प्रकाश) की तरह होना वर्णित है।

(५) पश्चिमी मनो विज्ञान में mind का स्थान जिसे कोई आत्मा कहते हैं कोई मन, ब्रेन-मस्तिष्क वर्णित है। आप्टे के अनुसार mind मन, चित्त, बुद्धि, मति, धी, प्रज्ञा, बोध, हृदय, अन्त:करण, इच्छा, मनोरथ, वासना, भाव, उद्देश्य सकल्प आदि को कहते है। इस मनोविज्ञान में mind का एक वस्तु सकल्प अन्त करण आदि के लिये वर्णित है, आत्मा या soul इसकी सीमा से बाहर है। mind के अर्थ हृदय भी लिखे हैं इसलिये कई विद्वान हृदय का स्थान मस्तिष्क कहने लगे हैं और इसीलिये हृदय के स्थाननिर्णय का प्रश्न उपस्थित होगया है।

[६] अथर्ववेद का एक मंत्र इस प्रकार है:—

मूर्धानमस्य संसीव्याथर्वा हृदयं च यत्।
मस्तिष्कात् ऊर्ध्वं प्रैरयत् पवमानोऽधि शीर्ष्णः ॥
(अथर्व १०।२।२६)

इस मत्र का अर्थ इस प्रकार है:—(पवमान:, अथर्वा) वह शुद्ध और निश्चल ईश्वर, (अस्य) इस मनुष्य की (मूर्धानम्, च, यत्, हृदयम्) मूर्धा-शिर और जो हृदय है (उन्हें) (ससीव्य) सीकर (भेजे जिससे) वह (मस्तिष्कात्, ऊर्ध्वः) मस्तिष्क से ऊपर और (शीर्ष्ण. अधि) शिर के नीचे (हृदय मे) होकर (प्रैरयत्) बाहर-जगत में आवे। मस्तिष्क के मध्य में साधारण तार्किक बुद्धि का स्थान है। इस मत्र में आये मस्तिष्क या मूर्धा शब्द स अभिप्राय उसी तार्किक बुद्धि से है। हृदय से रक्तशोधक हृदय अभिप्रेत नहीं अपितु वह हृदय इष्ट है जिसे गुहा कहा जाता है और जिसे इस मत्र में शिर के नीचे कहा गया है। हृदय का काम श्रद्धा प्रेम और विश्वास है। अस्तु इस मंत्र से स्पष्ट है कि मूर्धा और हृदय दो पृथक् पृथक् वस्तु हैं और दोनों में इतना मेल होना चाहिये मानों वे एक दूसरे के साथ सिले हुये हैं। ऊपर Heart शब्द के अर्थों में मूर्धा अर्थ नहीं दिया गया है परन्तु वक्ष और वक्ष:स्थल दिये गये हैं जिससे हृदय के शिर के नीचे होने की बात, जो मंत्र में वर्णित है, पुष्ट होती है।

(७) श्री अरविन्द घोष ने अपने एक अंगरेजी

ग्रंथ में इस प्रकार लिखा है:-शक्ति (इच्छा शक्ति) मस्तिष्क के ठीक ऊपर सहस्रदल में रहती है। शक्ति से नीचे परन्तु मस्तिष्क से ऊपर ही मेधावी बुद्धि का स्थान है। मेधा की बुद्धिके नीचे मस्तिष्क के मध्य में साधारण (तार्किक)बुद्धि का स्थान है। मस्तिष्क का निचला भाग,मन से संबंधित संदेश तंतुओं का स्थान है वक्ष मे हृदय स ठीक ऊपर मन रहता है। हृदय और नाभि के बीच मे चित्त का स्थान है। इस (चित्त) के नीचे सूक्ष्म (Psychic) प्राण रहते है। स्थूल (Physical) प्राण, नाडीगुच्छक (Nervous system) और अन्य ऐसे ही स्थूल शरीर के अवयवों से सबंधित हैं। यहां हृदय की वक्ष मे मन के नीचे होना वर्णित है।

(८) अथर्ववेद के केन सूक्त का ३१वा मंत्र इस प्रकार से है:—

अष्टचक्रा नवद्वारा देवाना पूरयोध्या।

तस्या हिरण्ययः कोश. स्वर्गो ज्योतिषावृत.॥

अर्थात् आठ चक्र और नौ द्वार वाली अयोध्या देवों की पुरी है। उसम प्रकाश वाला कोष है आनन्द रूप प्रकाश से युक्त।

इस मन्त्र में आये ८ चक्र इस प्रकार है.—

(१) मूलाधार चक्र रीढ की हड्डी के नीचे गुदा के पास—इसमे उत्तेजना प्राप्त होने स वीर्य स्थिर होता और मनुष्य ऊर्ध्वरेता बन जाता है।

(२) स्वाधिष्ठान चक्र। मूलाधार से ४ अगुल ऊपर—इसमें उत्तेजना होने से प्रेम और अहिसा के भाव जागृत होते हैं।

(३) मणिपूरक चक्र। ठीक नाभि स्थान मे है। इसमें उत्तेजना पहुचने से शरीर संयमित रहता है।

(४) सूर्य चक्र—नाभि मे कुछ ऊपर हृदय की धुकधुकी के ठीक पीछे मेरुदंड के दोनो ओर इसका स्थान है। इसका अधिकार भीतरी सभी अवयवो पर है। प्राण का खजाना यही रहता है। इस पर चोट लगने मे मनुष्य तत्काल मर जाता है। प्राण के लिये मस्तिष्क को भी इसी का आश्रय लेना पडता है। यह पेट का मस्तिष्क ही समझा जाता है।

(५) अनाहत चक्र—हृदय स्थान मे है। हृदय के समस्त व्यापार इस से नियमित होते है। हृदय मे बल, प्रेम और भक्ति इसमें हुई उत्तजना के फल होते है।

(६) विशुद्ध चक्र—कंठ मे है इस पर संयम करने मे बाह्य जगत की विस्मृति और आतरिक कार्य का प्रारम्भ होता है।

(७) आज्ञा चक्र—दोनो भुजाओ के मध्य मे है। इसमे उत्तजना होने स शरीर पर प्रभुत्व तथा नाड़ी और नसों मे स्वाधीनता आती है।

(८) सहस्रार चक्र—तालु के ऊपर मस्तिष्क मे है और समस्त शक्तियों का केन्द्र है।

इन चक्रो के विवरण मे हृदय का कठ के नीचे होना साफ जाहिर है।

(९) नाडीगुच्छक(Ganglia) शरीरस्थ मेरुदड के दाहने बायें तथा सिर, गले, छाती आदि अनेक स्थानों पर होते है। ये गुच्छक परस्पर ततुओ (Filaments) द्वारा नथे रहते हैं और मस्तिष्क तथा मेरु विभाग से ज्ञान और शक्ति तंतुओ (motor & sensory nerves(द्वारा

संबधित रहते हैं। इन्हीं गुच्छकों से अगणित तंतु निकल कर शरीर के अवयवों और रुधिर की नालियों इत्यादि में जाल की तरह फैले रहते हैं। कई स्थानों पर ये तंतु एकत्रित होजाते हैं। उन्हीं को नाड़ी ग्रन्थि या चक्र (Plrxis) कहते हैं

(१०) मस्तिष्क तीन हैं एक मुख्य मस्तिष्क (Cerebrum) जिस के द्वारा समस्त इच्छित कार्य होते हैं। इसे हम मन की गोलक कहते हैं। दूसरा लघु मस्तिष्क(सेरी बेलम)Cereballum शरीर की समस्त अनिच्छित गति इसी के अधीन हैं इस को हम चित्त की गोलक कहते हैं। तीसरा मस्तिष्क सुषुम्णा नाड़ी का ऊपरी भाग है और उसे Medulla oblongata कहते हैं। शरीर के समस्त अनिच्छित कार्य इसी के द्वारा हुआ करते हैं। इन मस्तिष्क के विभागों में समस्त अनिच्छित गति और समस्त अनिच्छित कार्य मुख्यमस्तिष्केतर मस्तिष्कों के अधीन हैं जिनमें से एक तो साक्षात् सुषुम्णा नाड़ी का ऊपरी भाग ही है। इसी सुषुम्णा के अधीन समस्त चक्र हैं जिनमें से सूर्य चक्र को पेट का मस्तिष्क कहा ही जाता है। इस लिये मूर्धा की अपेक्षा, पक्ष आदि मूर्धा के नीचे के भागों की, जीवन की दृष्टि से, कम उपयोगिता नहीं है।

—नारायणस्वामी

सम्पादकीय

महामना मालवीयजी का स्वर्गवास—

भारत भूषण महामना पं० मदन मोहन जी मालवीय का १२ नवम्बर को मध्यान्होत्तर ४ बजे काशी विश्वविद्यालयान्तर्गत अपने निवासस्थान में लगभग ८५ वर्ष की आयु में देहावसान होगया इस समाचार से किस भारतीय को दु:ख न हुआ होगा। स्व० मालवीय जी भारत माता के उन सुपुत्रों में से थे जिन्होंने उसके गौरव तथा स्वतन्त्रता की रक्षार्थ निर्भयता पूर्वक निरन्तर प्रयत्न किया था। धारा सभा के सदस्य के रूप में सरकारी दमननीति का वे सदा निर्भीकता से घोर विरोध करते रहे। पीड़ित हिन्दू जनता की सेवार्थ उन्होंने अपना तन मन धन समर्पित करने में कभी संकोच नहीं किया। उन के स्वर्गवास का समाचार सुनते ही मुझे उन दो श्लोकों का स्मरण हो उठा जिनके द्वारा मैंने गुरुकुल काङ्गड़ी के ब्रह्मचारियों की ओर से सन् १९१८ में उनके प्रथम आकस्मिक शुभागमन के अवसर पर उनका स्वागत किया था। स्व० मालवीय जी के समस्त शुभगुणों का इन में समावेश हो जाता है। अतः उनका उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। वे श्लोक निम्न लिखित हैं :—

वदनं प्रसाद सदनं, सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः।
करणं परोपकरणं, येषा केषां न ते वन्द्याः॥

मनसि वचसि काये, पुण्यपीयूषपूर्णा।
त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभि प्रीणयन्त॥
पर गुण परमाणून, पर्वतीकृत्य नित्यं।
निजहृदि विकसन्तः, सन्ति सन्तः कियन्तः॥१

अर्थात जिनका मुख प्रसन्नता का घर है, जिनका हृदय दयायुक्त है, जिनकी वाणी अमृत बरसाने वाली है, जिनका कार्य दूसरों का उपकार करना है वे किन के लिये वन्दनीय नहीं है? ऐसे सज्जन लोग इस संसार मे कितने हैं जिनके मन वाणी और शरीर पुण्य रूप अमृत से परिपूर्ण हैं, जो अपने निरन्तर उपकारो से तीनों लोको को तृप्त करते रहते हैं और जो दूसरा के गुण रूप परमाणुओं को भी पर्वत के समान मान कर अपने हृदय में आनन्दित होते हैं?

आज इन्हीं सुप्रसिद्ध श्लोको द्वारा हम स्व० मालवीय जी के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं। काशी हिन्दू विश्व विद्यालय में आर्य भाषा (हिन्दी) उच्च शिक्षा का माध्यम अभी तक नहीं बन सकी, समाज सुधार के विषयों में स्व० मालवीय जी इतने प्रगति शील न थे जितनी उन जैसे सुशिक्षित विचार शील महानुभाव से आशा की जानी चाहिये थी तथापि शिक्षाप्रसार अस्पृश्यता निवारण, हिन्दू संगठन आदि विषयों में उन्होंने जो प्रयत्न किया था उसकी हम प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। आर्य जाति के हितों

का उन्हें जितना दिन रात ध्यान रहता था उसकी शोचनीय अवस्था को देखकर उनके हृदय में जो व्याकुलता और वेदना होती थी उसका अत्यन्त उज्ज्वल प्रमाण उनके उस अन्तिम वक्तव्य मे मिलता था जो पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं पर किये गये रोमाञ्चकारी अमानुषिक अत्याचारों के सम्बन्ध में उन्होंने देहावसान से कुछ दिन पूर्व समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया था और यह कहा जाता है कि इन दुर्घटनाओं के चिन्तन ने भी उनकी शारीरिक अवस्था पर बुरा प्रभाव डाला। श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाज़िल अध्यक्ष अरबी फारसी विभाग हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस की सुपुत्री चि० कल्याणी देवी के धर्म विज्ञान महा विद्यालय की मध्यमा श्रेणी में प्रवेश की अनुमति न मिलने पर हमें भी 'सार्वदेशिक" मे लेख माला द्वारा प्रबल प्रतिवाद करना पड़ा था किन्तु स्व० मालवीय जी की उदारहृदयता और बुद्धिमत्ता थी कि उनकी अध्यक्षता मे हिन्दू विश्व विद्यालय की उपसमिति ने स्त्रियों के वेदाध्ययन और वैदिक कर्म काण्ड में अधिकार को स्वीकार करते हुए चि० कल्याणी देवी को मध्यमा कक्षा में सम्मिलित करने की अनुमति देकर विश्व विद्यालय के गौरव की रक्षा कर दी। स्व० मालवीय जी की राष्ट्रीय सेवाओं के प्रति भी हम पुनः श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए उनके सम्बन्धियों से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं और भगवान् से दिवगत पवित्रात्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करते हैं।

देश की विषम परिस्थिति—

आजकल साम्प्रदायिक वातावरण के क्षुब्ध होने के कारण हमारे देश की परिस्थिति कितनी विषम बनी हुई है यह विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं। अन्तःकालीन सरकार के उपाध्यक्ष माननीय प० जवाहर लाल जी ने केन्द्रीय धारा सभा में जो वक्तव्य इस परिस्थिति के सम्बन्ध मे १४ नव० को दिया है वह अत्यन्त गम्भीर और यथार्थ है। कलकत्ता के नृशंस हत्याकाण्ड और पूर्वी बंगाल के हिन्दू जनता पर किये गये अमानुषिक बर्बरता पूर्ण अत्याचारों ने जो निस्सन्देह मुस्लिम लीगी नेताओं के हिन्दुओं के प्रति द्वेषवश हिंसात्मक आन्दोलन के सीधे परिणाम स्वरूप थे हिन्दू जनता को इतना विक्षुब्ध कर दिया कि बिहार मे उसकी भीषण प्रति क्रिया हुई किन्तु इस से इन्कार नहीं किया जा सकता कि बिहार मे बलात् धर्म परिवर्तन मुस्लिम कन्याओं और स्त्रियों के अपहरण, बलात्कार वा बाधित विवाह का एक भी उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया गया जब कि नोआखाली और तिपुरा आदि मे सहस्रों ऐसे उदाहरण हैं। महात्मा गान्धी जी के सम्भावित आमरणान्त अनशन के समाचार तथा माननीय प० जवाहर लाल जी आदि के तूफानी दौरों से बिहार मे स्थिति सुधर गई है किन्तु पं० नेहरू जी ने ठीक ही कहा है कि जब तक अपहृत हिन्दू कन्याओं और स्त्रियों को जिन्हें मृत्यु का भय दिखाकर जबर्दस्ती मुसलमान बनने और शादी करने को बाधित किया गया वापिस नहीं कर लिया जाता तब तक बंगाल की स्थिति में वास्तविक सुधार नहीं हो सकता। श्रीमती मुरियल लिस्टर ने इस आवश्यक विषय की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए बताया कि इन बलात् अपहृता, मतान्तरिता और विवाहिता हिन्दू देवियों को यहां तक डर दिया

जा रहा है कि यदि उन्होंने गोश्त न खाया और इस्लाम में अपना विश्वास न प्रकट किया तो उन्हें परिवार के समस्त अवशिष्ट सदस्यों सहित समाप्त कर दिया जाएगा। ऐसी अवस्था मे यह कार्य नितान्त कठिन होते हुए भी अत्यावश्यक है और आशा करनी चाहिये कि पूज्य महात्मा गान्धी जी जो बिहार मे उत्पन्न स्थिति को सुधारने के लिये अपने प्राणों तक की बाजी लगाने को उद्यत हो गए थे अपने समस्त अद्भुत प्रभाव को काम में लाकर इस कार्य को सम्पन्न करा देंगे। आर्य वीर दल के कार्य कर्ताओं तथा अन्य आर्य युवकों को भी इस कठिन किन्तु अत्यावश्यक रक्षा कार्य की ओर अपने ध्यान को बहुत अंश तक केन्द्रित करना पड़ेगा। इस अत्यावश्यक न्याय सङ्गत कार्य मे प्रत्येक मानवता प्रेमी को अवश्य नैतिक और आर्थिक सहयोग देना चाहिये हमारा यह विश्वास है कि सरकार यदि दृढ़ता और साहस से काम ले तो इस विषम परिस्थिति को शीघ्र ही सुधारा जा सकता है। जो धर्मान्ध मुस्लिम लीगी तथा अन्य नेता कुरान शरीफ को आयतें उद्धृत करके हिन्दुओं के विरुद्ध जहाद वा धर्मयुद्ध की घोषणा प्रकट वा गुप्त रूप में करते फिर रहे है उन्हें तुरन्त पकड़कर जेलो मे डाल देना चाहिये चाहे वे कितने भी प्रतिष्ठित समझे जाते हों।

इस दृढ़ता और साहस पूर्ण कार्यवाही के बिना वर्तमान विषम परिस्थिति को सुधारना अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है। धार्मिक नेताओं का भी कर्तव्य है कि प्रेम मय सन्देश को सुना कर इस विद्वेष भावना को लोगों के हृदयों से निकालने का वे सदा प्रयत्न करते रहें। अमानुषिक बर्बरतापूर्ण अत्याचार निरपराध व्यक्तियों पर विशेषत स्त्रियों और बच्चों पर करना तो नितान्त निन्दनीय है।

मार्ग भ्रष्ट छात्रों का दुराग्रह :—

गत अक्तूबर मास में लखनऊ यूनिवर्सिटी के कई छात्रों ने सिनेमा मे ५० प्रति शतक रियायत की माग की पूर्ति के करवाने के लिये जो दुराग्रह पूर्ण प्रदर्शन किये हम उनका प्रतिवाद करना अपना कर्तव्य समझते है। ५० प्रति शतक के स्थान मे ४० प्रतिशतक रियायत की स्वीकृति देकर अधिकारियो ने अपना पीछा तो छुड़ा लिया किन्तु हमारा विश्वास है कि इस प्रकार का सिनेमा प्रेम सूचक दुराग्रह एक हीन मनोवृत्ति का परिचायक है जिसको प्रोत्साहित करना सर्वथा अनुचित है। वस्तुत. इन वर्तमान सिनेमाओं से स्कूल कालेजो के छात्र छात्राओं का जो नैतिक पतन हो रहा है, जिस प्रकार कामुकता की ओर भोग विलास की प्रवृत्ति की उन से वृद्धि हो रही है वह नितान्त शोचनीय है। कुमार कुमारियों और नवयुवक नवयुवतियों के सच्चे हितैषियों का कर्तव्य है कि सिनेमाओं के इस अभिशाप के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन करें जिससे भावि सन्तति के नैतिक जीवन की रक्षा हो सके।

देव नागरी लिपि में परिवर्तन की अनधिकार चेष्टा:—

जिस प्रकार 'हिन्दुस्तानी' के नाम से हमारी वास्तविक राष्ट्र भाषा (संस्कृत निष्ठ हिन्दी) को बिगाड़ने का प्रयत्न कांग्रेस समर्थक कुछ क्षेत्रों मे हो रहा है जिसका प्रतिवाद हम इन स्तम्भो मे कई बार कर चुके हैं और जिसकी ओर महात्मा

गान्धी जी का ध्यान अपने पत्रों तथा भेंटो द्वारा आकर्षित करना हम ने आवश्यक समझा था उसी प्रकार हमें यह देखकर दुःख होता है कि श्री काका कालेलकर आदि कुछ सज्जन देवनागरी लिपि में अनावश्यक परिवर्तनों की अनधिकार चेष्टा कर रहे हैं और इस विषय में 'सर्वोदय' आदि पत्रों का अनुसरण महात्मा गान्धी जी के पत्र 'हरिजन सेवक' में भी गत २३ मासों से किया जा रहा है। 'ईश्वर' को इस नवीन परिवर्तन के आविष्कारक 'अीश्वर' लिखते हैं 'एक' को अेक, 'उस' को अुस, 'इस' को अिस, 'कोई' को कोअी, 'उठाना' को अुठाना इत्यादि। यह समझ मे नहीं आता कि ऐसे परिवर्तन से जो चिरकाल से देव नागरी लिपि के अभ्यस्त सज्जनों के लिये भी पढ़ने में अनावश्यक कठिनाई को उत्पन्न करने के अतिरिक्त सर्वथा व्याकरण विरुद्ध और अत- एव अशुद्ध है इन लोगों ने क्या लाभ समझा है, क्या दो चार अक्षरों की संख्या को इस प्रकार कम कर देने से कोई विशेष लाभ हो जाएगा जिस से कम से कम कई सहस्रो वर्षों से आती हुई व्याकरणानुमोदित परम्परा को इस प्रकार तोड़ना उचित समझा जाए? हमारा श्री काका कालेलकरजी जैसे महानुभावो से अनुरोध है कि वे देवनागरी लिपि मे अनावश्यक और अनेक अंशों में हानिकारक परिवर्तन की अनधिकार चेष्टा का परित्याग करके संस्कृत निष्ठ हिन्दी के अधिकारों की रक्षा तथा उसके सर्वत्र प्रचार के पवित्र कार्य में पूर्ण सहयोग प्रदान करें। पूज्य महात्मा गान्धी जी से भी हम पुनः निवेदन करते हैं कि वे 'हिन्दुस्तानी प्रचार' और 'लिपि सुधार' के नाम पर किये जा रहे ऐसे अवाञ्छनीय परिवर्तनों को प्रोत्साहित करना बन्द कर दें।

बंगाल की पण्डित मण्डली की प्रशंसनीय घोषणा:—

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि देश और समाज की वर्तमान विषम परिस्थिति ने पण्डित मण्डली में नवीन जागृति उत्पन्न कर दी है। महामहोपाध्याय प० विधुशेखर शास्त्री, महाम- होपाध्याय पं० चण्डी दास न्याय काव्यतीर्थ प्रधान ब्राह्मण महासभा तथा अन्य सुप्रसिद्ध पण्डितों ने एक घोषणा की है जो अमृत बाजार पत्रिका (इलाहाबाद) के १२ नव० के अङ्क में प्रकाशित हुई है। इस घोषणा में उन्होंने कहा है कि (१) हिन्दू जाति की भिन्न २ जातियों के सामाजिक अधिकारो में कोई भेद भाव न रहेगा।

(२) प्रत्येक हिन्दू को बिना किसी प्रकार के जाति भेद के प्रत्येक मन्दिर और अन्य पूजा स्थान में प्रवेश का अधिकार रहेगा।

(३) नाई, धोबी तथा अन्य समाज सेवकों के बिना किसी प्रकार के भेद भाव के सब हिन्दुओं की सेवा करनेमें कोई बाधा न होगी।

(४) समस्त ब्राह्मण बिना किसी प्रकार के भेद भाव के सब हिन्दुओं की पूजा और धार्मिक संस्कारों में पौरोहित्य कर सकते हैं और ऐसा करने से उनका किसी प्रकार का सामाजिक पतन न माना जाएगा।

यह घोषणा यद्यपि हमारी दृष्टि से पूर्णतया सन्तोष जनक नहीं है तथापि एक उदार भावना का परिचय अवश्य देती है जो अभिनन्दनीय है। हम चाहते हैं कि यह उदार भावना और भी विस्तृत हो जिससे जाति भेद के मूल पर ही

कुठाराघात होकर समाज सर्वतो सुखी उन्नति करने में समर्थ हो सके।

शुद्धि के कार्य में सब से बड़ी बाधक जाति भेदः—

अभी कल ही देहली समीपस्थ एक ग्राम में हमे शुद्धि कार्यार्थ जाने का अवसर प्राप्त हुआ। उस ग्राम के बडे २ हिन्दू चौधरियो के अतिरिक्त मुसलमान परिवारो के प्राय सब मुखिया उपस्थित थे। उन्होने स्पष्ट शब्दो में यह कहा कि हमारे पूर्वज हिन्दू थे। हमारे रीति रिवाज अब भी अधिकतर हिन्दुओ के जैस ही हैं अत हम पुनः शुद्धि सस्कार पूवक हिन्दू बनने को तय्यार हैं। यदि हिन्दू भाइयो की तरह हमे अपने अन्दर मिलाने को उद्यत हो। यदि वे इसके लिये उद्यत न हों तो हमे अपने दीन से गिराने का यत्न न करें। इस पर काफी खलबली सी मच गई और वह शान्त न हुई जबतक कि हिन्दू जाट चौधरियो ने हम लोगों के समझाने बुझाने के बाद भ्रातृ वत् प्रेममय व्यवहार करने और किसी प्रकार छुआछूत न रखने का आश्वासन मुसलमान भाइयो को दिया जिसके पश्चात् बड़े प्रेम से उन्होने शुद्धि सस्कार करवा कर आर्य धर्म की दीक्षा ली। अन्य भी स्थानो मे बहुत बड़ी सख्या में मुसलमान तथा ईसाई आर्य धर्म में दीक्षित होने को तय्यार हैं यदि उनके साथ समानता का व्यवहार किया जाए। इस सम्पादकीय टिप्पणी को लिखते २ हमे एक पत्र टूंडला जिला आगरा के आर्य वीर दल के नगर बौद्धिक नायक श्री० वीरेन्द्र कुमार जी का प्राप्त हुआ है जिस मे वे लिखते हैं —

"निवेदन है कि यहा पास ही मे एक नव मुस्लिम परिवार जिस में ६ सदस्य हैं शुद्ध होने को तय्यार हैं अगर उन की दो कन्याओ का विवाह सस्कार किसी योग्य आर्य कुल मे हो जाए। दोनो कन्याओं की उमर १६ १४ वर्ष की है। कन्याए गृह कार्य मे पूर्ण दक्ष सुन्दर, सुशील तथा कुलीन है। अत आप स सादर प्रार्थना है कि आप दो योग्य बारोजगार तथा उच्च कुलो के वरो का चाहे वे किसी जाति के हो सिर्फ आर्य हो पूरे विवरण अति शीघ्र भेजने का कष्ट करें क्योंकि देर करने से मेहनत असफल होने की आशङ्का है। वर अविवाहित हों। आशा है आप सन्तोष जनक तथा अति शीघ्र उत्तर देंगे।"

ऐसे ही पत्र अन्य अनेक सज्जनो से प्राप्त होते रहते हैं। इस में सफलता आर्यों के जाति बन्धन तोडने के साहस तथा उदारता पर निर्भर है। यदि आर्य सचमुच शुद्धि और दलितोद्धार के आन्दोलनो को अत्यन्त उपयोगी समझते हुए उनकी प्रगति को बढाना चाहते हैं तो उन्हें जाति भेदकी घातक प्रथा का समूल नाश कर देना चाहिये अन्यथा इन से लाभ के स्थान में हानि ही अधिक होगी जैसे कि कल कुछ मुसलमानों को हमने कहते सुना था कि कहीं ऐसा न हो कि धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का।" इस समय शुद्धि और दलितोद्धार के पक्ष म युक्तियो की नहीं, क्रियात्मक कार्य की आवश्यकता है।

ध० दे०

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित।

Regd N0 L. 2121

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सा० सभा)	१)
(२) विदेशों में आर्यसमाज	„	॥)
(३) दयानन्द [illegible]		१।)
(४) आर्य सिद्धान्त [illegible]	„	१॥)
(५) [illegible]	„	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	„ अ०	३)
(७) आर्य डायरेक्टरी	„ अ०	१।)
(८) आर्य वीर [illegible] की [illegible]	„	।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण) पं० इन्द्रजी)		=)
(१०) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	„	२)
(११) वैदिक सूर्य विज्ञान	„	–)
(१२) वेद में आसन [illegible]	„	–।
(१३) ऋग्वेद में देवृकामा	„	–)
(१४) [illegible]	„	१)
(१५) [illegible] शास्त्र	„	।=)॥
(१६) [illegible] श्री पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक		=)
(१७) [illegible] का [illegible]	„ अ०	१।)
(१८) कथा माला	„	।)
(१९) आर्य [illegible] गृहस्थ धर्म	„	॥=)
(२०) [illegible] श्री नारायण स्वामी जी		३।)
(२१) श्री नारायण स्वामी [illegible] ग्रन्थ		५)
(२२) योग रहस्य [illegible] नारायण स्वामी जी		१)
(२३) विद्यार्थी [illegible] रहस्य		॥)
(२४) उपनिषद् ईश =) केन ।) कठ ॥) प्रश्न) [illegible] =) माण्डूक्य [illegible] ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		–)
(२६) नारायण-सुधा सजिल्द		१॥)
(२७) [illegible] पट्टिका		–)
(२८) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(२९) [illegible] ला० ज्ञानचन्द्र जी आर्य		॥)
(३०) [illegible] (पं० [illegible] दुर्गापाल [illegible])		१)
(३१) दयानन्द [illegible] (पं० विजयशङ्कर [illegible] जी)		॥।)
(३२) भूमिका प्रकाश [illegible]		।)
(३३) वेद और [illegible]		
(३४) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास [illegible]		
(३५) सत्यार्थ प्रकाश गान (पं० [illegible])		–)
(३६) हमारे घर (श्री [illegible] लाल जी [illegible])		
(३७) भारतवर्ष में जाति भेद		।)
(३८) हमारी राष्ट्र भाषा (पं० धर्मदेव जी)		=)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		–)
(४०) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		–)
(४१) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग [illegible]		)
(४२) [illegible] (श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक)		–
(४३) सरल सन्ध्योपासना		।)
(४४) [illegible] वाङ्मय [illegible]		–
(४५) वैदिक [illegible]		१॥)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥।)
(४७) [illegible] (पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)		१।)
(४८) आर्यसमाज के नियमोपनियम		–॥
(४९) वैदिक [illegible] (श्री [illegible] विद्यालङ्कार)		॥–)
(५०) धर्मार्य सभा का [illegible] हवन के निमित्त		–)

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

सार्वदेशिक



स्वामी श्रद्धानन्द जी

श्रद्धानन्दांक

दिसम्बर १९४६ ई०
पौष २००३ सं०

सम्पादक—
श्री पं० धर्मदेव सिद्धान्तालङ्कार
विद्यावाचस्पति साहित्यभूषण

वार्षिक मूल्य
विदेश १० शि०
१ प्रति का

विषय-सूची

भूल सुधार

पृ० ४९९ पृ० १५ मे "वही" के स्थान पर 'वह" पढे ।

पृ० ५०४ स्तम्भ २ पंक्ति २० म "कौन" के स्थान पर 'को न' पढे ।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २१ | दिसम्बर १९४६ ई० | पौष २००५ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क १०

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव। महत् ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥

अर्थः—हे परमेश्वर! हम (उग्रस्य तव सख्ये) तुझ अति बलशाली की मित्रता मे रहते हुए (मा भेम) कभी न डरें और (मा श्रमिष्म) कभी न थकें। (वृष्णः) सुखों की वर्षा करने वाले (ते) तेरे (महत्) बड़े भारी (अभिचक्ष्यम्) अत्यन्त दर्शनीय कार्य को तथा (यदुम) प्रयत्न शील और (तुर्वशम) धर्म अर्थ काम मोक्ष इस चतुर्विध पुरुषार्थ के अभिलाषी मानव वर्ग को (पश्येम) सदा देखते रहें।

विनय—हे सर्वशक्तिमन् जगदीश्वर! सारी शक्ति के भण्डार आपको अपना मित्र समझकर हम कभी भयभीत न हों और आपकी कृपा से उत्तम दिव्य शक्ति को प्राप्त करके श्रेष्ठ कार्यों के करने मे हम कभी न थकें। आप सब सुखों की वर्षा करने वाले हैं। आपकी कृपा से हम सब अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज जैसे पुरुषार्थी महात्माओं के दर्शन करते हुए उन जैसे बनने का ही सदा प्रयत्न करते रहें।

वेदोपदेश

(लेखक—अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज)

श्रमेण त सा सृष्टा ब्रह्मणा वित्त ऋते श्रिता।
सत्येनावृता श्रिया प्रावृता यशसा परीवृता॥

उपदेश

मूर्ख आलसी और दुराचारी मनुष्य सदैव बुरी अवस्था मे देखने मे आया है। न तो धन उसके पास है न उसका आत्मा प्रसन्न है और न कोई दूसरा उसको देखकर प्रसन्न हो सकता है। उसका जीवन दु खमय तथा भोग विलास मे डूबा हुवा मालूम होता है। यह कष्ट और निर्धनता किन्हीं उन कर्मों के करने का परिणाम है जो उसने परमात्मा की आज्ञा के भग करने म किए हैं सत्य है वास्तव म ऐसा ही है। मनुष्य क दिल और दिमाग—आख नाक कान, हाथ पॉव व शरीर क सब अग इसलिये दिये गय है कि वह इस शरीर के यन्त्र को नेकनीयती स चलावे और दिनभर सूर्य क प्रकाश मे काम करे। जिस मनुष्य का शरीर यन्त्र काम नहीं करता या वह चलाना नहीं जानता या चलाने मे दुराचारी तथा बुरे स्वभाव वाला है कोई मनुष्य उसक पास नहीं आता और न उसका विश्वास करता है। वह दरदर ठोकर खाता फिरता है। ऐसे मनुष्य की आयु अगर खराब न हो तो क्या हो और अगर वह जलील ख्वार न हो तो क्या हो? परमात्मा ने इस अपवित्र जीवन स बचने के लिये अपनी अमूल्य दया स कहा है 'अन्तर की दृढ़ता, हिम्मत पुरुषार्थ, नेकनीयती व सदाचार ही तमाम सम्पत्तियो तथा ऐश्वर्यो का कारण है।' मनुष्य की शानशौकत, मानप्रतिष्ठा, केवल पुरुषार्थ, तप और ज्ञानप्राप्ति पर निर्भर है। जो मनुष्य सत्यवादी व सदाचारी है, और तन मन स काम में लगा रहे दुनिया की सम्पत्ति तथा मान उसी का है। संसार मे जिस मनुष्य ने अपने दिल तथा दिमाग से काम लिया तथा अपनी उन्नति मे सदा परायण रहा और ज्ञानप्राप्ति से सुभूषित हुआ वह यदि निर्धन था तो धनवान् होगया। यदि विद्याशून्य था तो विद्वान् बन गया। यदि कोई मान प्रतिष्ठा न थी तो मान पद को प्राप्त कर लिया अरस्तू एक निर्धन पिता का पुत्र था किन्तु उसकी विद्वत्ता की प्रसिद्धि ने सिकन्दर जैसे सम्राटो को अपना भक्त बना लिया। सुकरात यद्यपि गरीब था परन्तु उसकी विद्वत्ता और मानप्रतिष्ठा की प्रसिद्धि ससार भर मे फैली हुई थी। स्वामी शङ्कराचार्य व स्वामी दयानन्द जी महाराज एक अप्रसिद्ध व्यक्ति थे। न्यूटन तथा लूथर आदि तमाम महान् विज्ञानियो के जीवन की यही अवस्था है कि उनकी आयु मे तप, परिश्रम मौजूद था। सचाई और विद्या स उन्हें विशेष प्रेम था। इसलिये संसार का ऐश्वर्य उनके पैर चूमते थे। परमात्मा का यह सच्चा उपदेश है "हे मनुष्यो! तुम अगर विद्या पढ़ोगे और परिश्रम करोगे, सत्यवादी और सदाचारी होगे और विश्वव्यापी नियम की ओर ध्यान दोगे कि जिस प्रकार यह हमारा चलाया हुआ कारखाना दिन रात काम कर रहा है उसी प्रकार तुम भी करोगे तो तुम्हें भी धन का घाटा नहीं है। मानप्रतिष्ठा का घाटा नहीं। तुम्हारा जीवन बड़ा सुखमय होगा। यदि ऐसा न करोगे तो दुःख व क्लेश से संतप्त होगे।"

कौन मनुष्य है कि जो उस परमात्मा की आज्ञा का उल्लंघन करे और कष्ट व दुःख में न पड़े और गिरावट में न पड़े और बुरा व निकम्मा न बन जावे। यह शरीर व आत्मा निकम्मा न रहना चाहिये। गन्दा व अपवित्र न होना चाहिये। सत्य और सदाचार को कभी हाथ से न जाने देना चाहिये क्योंकि आनन्द इसी में है। उस परमात्मा की इच्छा इसी में है। यही सत्य मार्ग का उपदेश है। यही स्वर्गधाम है। हे मनुष्यो! आओ!! और उस परमात्मा के इस उपदेश पर कटिबद्ध हो जाओ।

अध्यात्म सुधा

(लेखक—अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज)

यो देवानामधिपो यस्मिल्लोका अधिश्रिताः। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

उपदेश

सूर्य अपने चक्र पर घूमता हुवा और अपने ग्रहों को अपने चारों ओर घुमाता हुवा स्वतन्त्र प्रतीत होता है। पृथ्वी की दिन रात की दुहरी गति को देख मनुष्य आश्चर्य में पड़ जाता है। आंधी की तेजी के लपेट में आकर सहस्रों वृक्षों को जड़ से उखेड़ते और सैकड़ों मकानों को नींव से हिल जाते हुवे देखकर कौन प्राणी है जो उसके आगे सिर झुकाने से रुक सके। ज्वाला के प्रज्वलित चिगारों को पेच-दरपेच अपने घुमाव के अन्दर दूर तक की वस्तुओं को लेते हुवे देखकर कौन उसकी महत्ता को अस्वीकार कर सकता है?

विद्याहीन, मूढ मनुष्य, इन्हीं कारणों से जड़ पूजा के जाल में फंस जाते हैं। जब यह सब शक्तियें, जड़ और बाह्य होने के कारण आत्मा से कुछ भी सम्बन्ध पैदा नहीं कर सकतीं तो विवश उनके प्रतिनिधि स्थिर करने की चिन्ता में मूर्खता डूब जाती है और उस गिरने का परिणाम मूर्ति-पूजा है।

परन्तु जड़ पूजा और मूर्तिपूजा दोनों मनुष्य के मन को शान्त नहीं कर सकतीं। हवा और पानी, आग और भूमि किससे मूर्ख मनुष्य कामनायें नहीं करते? अपितु स्पष्ट मिलता है कि जब इन में से एक भी अपनी शक्ति पर स्थिर नहीं है और एक की भी दृढता से अपने आप पर आश्रित नहीं तो इसके अतिरिक्त इन जड़ वस्तुओं की उपासना की जगह उनके समीप होने का यत्न स्वय जड़ बन जाने के क्या हो सकता है? क्या मनुष्य के लिये यह उचित नहीं कि उस महा शक्ति की खोज करे जो इन सब का आधार है। जिसके भय से सूर्य प्रकाश देता है, जिसकी प्रेरणा से वायु चलती, जल शीतलता प्रदान करता और पृथ्वी नाना प्रकार के फल-फूल उत्पन्न करती है। उस परम ब्रह्म परमात्मा को ढूंढना और जो सब का स्वामी है उसी को अपना स्वामी समझ कर उसकी शरण में आना यही मनुष्य का धर्म है।

जिसका वारम्बार ऋषियों और देवताओं ने उपदेश दिया है परन्तु मनुष्य की भी एक विचित्र रचना है। एक ओर तो मूर्ति पूजा तथा जड़ देवताओं की पूजा तक के गढ़े में गिर जाता है। परन्तु जब इन सब पदार्थों की निर्बलता इसे अनुभव होती है और जब उसे निश्चय हो जाता है कि इन सब जड़ पदार्थों को गति देने वाला और इन से भिन्न भिन्न कार्य कराने वाला एक ही चेतन परम पुरुष है तो फिर निर्बल पुरुष जिसने अभ्यास से अपनी बुद्धि को तीक्ष्ण नहीं किया है जड़ की पूजा को छोड़कर चेतन पूजा भी छोड़ बैठता है। जिस मनको एक महान् आत्मा की मार्ग प्रदर्शन की आवश्यकता थी उसे अपने आप ही मार्ग प्रदर्शन बनने के योग्य समझ कर खुली छुट्टी दे देता है। इस अन्धाधुन्धी का जो परिणाम होता है वह आज कल मनुष्यों के शिक्षित समाज के अन्दर प्रत्यक्ष देखने में आता है। परन्तु क्या पशुओं के अन्दर चेतनता नहीं

है ? क्या गाय और बैल घोड़ा और हाथी क्या सबके सब चतुष्पद निर्जीव है ? फिर इनको अपने भोजन के पैदा करने अपनी रक्षा करने की प्रेरणा किधर से होती है ? और यह मनुष्य ही क्या है ? क्या बिना शिक्षा के मनुष्य किञ्चिन्मात्र भी शिक्षा प्राप्त कर सकता है ? जहां विद्या का प्रकाश नहीं पहुंचता क्या उन स्थानो मे सदियो से मनुष्य पशुओ से भी नीचे गिरे हुए नहीं हैं ? फिर वह ज्ञान जो मनुष्य को पशुओं की अवस्था से निकाल कर मनुष्य बनाता है कहां से आया ? और यदि किसी चेतन से ही किसी ज्ञान का स्रोत निकल सकता है। तो ऐसे महान् ज्ञान का स्रोत क्या कोई महान् चेतन न होगा ? प्रिय पाठक गण ! संसार की एक एक बाह्य घटना उस महा प्रभु की महान् शक्ति तथा उसके अनन्त ज्ञान की सूचना दे रही है किन्तु क्या कभी भी तुमने बाहर से अपने मनको रोक कर अन्दर की घटनाओ को प्रत्यक्ष करने का यत्न किया है। यदि कदाचित् भी प्रयत्न नहीं किया तो अब से अभ्यास आरम्भ करदो, क्योंकि परम ज्योति का बाह्य प्रकाश जहां प्रकृति के परदे के अन्दर पूर्णतया नहीं हो सकता और जहां ऐसी अवस्था मे मनुष्य धोखा खा सकता है वहां मनुष्य की आत्मा के अन्दर परमात्मा ज्योति अपना पूर्ण प्रकाश करती है जब कि जीवात्मा के अन्तर्मुख होने से प्राकृतिक प्रत्येक प्रकार के परदे कट जाते है। इस लिए उसी स्थान पर परमात्मा ज्योति के स्पष्ट दर्शन होते है। प्रिय बन्धु गण ! प्रकाशमय प्रभु, तुम्हारे अन्दर प्रकाश दे रहे हैं। अन्धकार का उसके सामने चिन्ह भी शेष नहीं रह सकता परन्तु तुम हो कि प्रकाशमय की गोद मे बैठे हुवे टकटकी, अन्धेरे की तरफ लगा रहे हो। आह ! कैसा भयानक दृश्य है ! 'लड़का बगल मे ढंढोरा नगर मे,। धनजेब मे खोज नीचे ऊपर। प्रकाश हमारे अन्दर उपस्थित है और हम बाहर अन्धेरे गढ़ों मे ठोकरें खाते फिरें। हे दयामय ! कभी कभी तो हम आपके मनोहर मगल स्वरूप का चमत्कार देखते है परन्तु अज्ञानवश फिर उसी अन्धकार मे डूब जाते है। दया करो, कृपा करो, हमे अपनी भक्ति के योग्य बनाओ। अपने प्रेम की डोर मे बांध कर हमे ऐसे गभीर विश्वास का वर दो कि हम कभी आपको न भूलते हुवे आपके शान्तिदायक प्रकाश का आनन्द उठाते रहे और अन्त मे आपके परम पवित्र धाम के अधिकारी बने।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुण्यस्मृति में

(लेखक श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए. मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली)

श्रद्धयाग्नि समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः ।
श्रद्धया कृतयज्ञेन श्रद्धानन्दो भवेन्नर ॥

यों तो आर्य समाज किसी समय भी श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को भुला नहीं सकता परन्तु १६४६ ई० का दिसम्बर मास विशेष रूप से स्वामी जी की याद दिलाता है। पूर्वी बंगाल की विपत्ति, नोआखाली का हत्याकाण्ड आदि कई अन्याय हैं जो रह रहकर स्वामी जी की याद दिलाती हैं। स्वामी जी महाराज का जीवन इस समय हमको कितना सहारा देता इसका अनुमान लगाना कठिन है। परन्तु महापुरुषों की स्मृति का एक मात्र उपयोग यह है कि हम अपने जीवन को उस स्मृति से प्रभावित करें।

Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime,
And departing, leave behind us,
Foot prints on the sands of time,
Foot prints—that perhaps another,
Sailing o'r life's solemn main,
A forlorn and ship wrecked brother,
Seeing, shall take, heart again.
(Lorg fellow)

संस्कृतानुवाद —

१ न स्मारयन्ति किमु जीवनानि शुभानि सर्वाणि महाजनानाम् ।
स्वजीवन साधयितु समर्था वयं तथा स्मरत यथा त आसन् ॥

२ अस्मासु मृत्योरथ मुखं गतेषु त्यजेम चिन्हानि पदाङ्कितानि ।
आगन्तुकाना सुसहायतार्थं रेणौ तटे कालमहोदधेश्च ॥

३ इमानि चिन्हानि विलोक्य येन गभीरससार समुद्र यात्री ।
दुर्भाग्य वीच्याहत भग्नपोत समुत्सहेतैक हताशबन्धुः ॥

भावार्थ यह है कि महापुरुषों के जीवन हमें इस बात का स्मरण कराते हैं कि हम भी अपने जीवनों को उन्नत कर सकते हैं और इस ससार से प्रयाण करते हुए ऐसे चिन्ह कालरूपी समुद्र की रेत पर छोड़ कर जा सकते हैं जिनको देखकर निराश व्यक्तियों के अन्दर भी आशा का सचार हो जाए।

आर्य जाति इस समय सकट में है। इसका जहाज टूटा पड़ा है। चारों ओर से समुद्र में तूफान उठ रहा है। ऐसे समय स्वामी श्रद्धानन्द की पुण्यस्मृति से ही हम अपनी उन्नति के पथ पर चलने में सहायता ले सकते हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने आर्यसमाज के लिए क्या किया ? यह प्रश्न नहीं। प्रश्न तो यह है कि उन्होंने क्या नहीं किया। सगठन, साहित्य और सस्था तीनों विभागों में उनकी बुद्धि और उनके परिश्रम के चमत्कार दिखाई पड़ते हैं। परन्तु इस समय हम एक ही बात की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करेंगे।

मैं इस समय बलिदान भवन में बैठा हुआ हूँ और बलिदान की बात ही सोच रहा हूँ। सार्वदेशिक सभा के जन्म में पूज्य स्वामी जी का विशेष हाथ था और इसकी उन्नति में वे सदा यत्न करते रहे। यहीं इनका प्राणान्त हुआ। अतः सार्वदेशिक सभा पर उनकी अन्तिम छाप है

जब सार्वदेशिक सभा खोली गई थी उस समय आर्य समाजों को और विशेष कर शक्तिशाली आर्य समाजों को इसकी कुछ अधिक परवाह नहीं थी। हर एक समाज समझता था था कि काम तो चल ही रहा है। परन्तु दूरदर्शी लोग जानते थे कि जिस समाज में संगठन नहीं वह चाहे कितना प्रबल क्यों न हो तूफान के झोंकों को सहन नहीं कर सकता। समाज का ज्यों २ काम बढ़ा उसकी कठिनाइयां भी बढ़ीं और आवश्यकता प्रतीत हुई कि समस्त आर्य-समाज जगत को मिलकर काम करना चाहिये। हमारी सब शक्तियां केन्द्रीभूत होनी चाहियें। हैदराबाद (दक्षिण) के सत्याग्रह ने दोपहर के सूर्य के समान स्पष्ट कर दिया कि केन्द्रीय शक्ति में कितना प्रभाव है। उस समय यदि सार्वदेशिक सभा न होती तो हमको कभी सफलता प्राप्त न हो सकती। सिन्ध और सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन के सम्बन्ध में भी यही बात ठीक जचती है। इसलिये आवश्यकता है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुण्यस्मृति को ऐसे प्रकार से मनावें कि समस्त आर्यजगत् की सामूहिक शक्ति एक स्थान पर केन्द्रित हो सके।

सार्वदेशिक सभा के क्षेत्र बहुत विस्तृत हैं। इसको उस भूमण्डल पर कार्य करना है जिसकी परिधि २५००० मील और जिसका व्यास ८००० मील से ऊपर है! आर्यसमाज के क्षेत्र में न केवल सूर्यास्त नहीं होता अपितु सदा मध्यान्ह रहता है। इतनी विशाल संस्था की शक्ति और सम्पन्नता कितनी विशाल होनी चाहिये।

इसमें सन्देह नहीं कि सार्वदेशिक सभा की लोकप्रियता बढ़ रही है। अभी हमने नोआखाली के लिये अपील की है और प्रायः सभी आर्य-समाज और आर्य भाई अपनी शक्ति के अनुसार धन भेज रहे हैं। उन्हीं के सहारे सभा ने पूर्वी बंगाल में अपने सहायता के क्षेत्र खोले हैं और आर्य जनता को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि उनके काम को लोग प्रशंसा की दृष्टि से देख रहे हैं।

परन्तु हम को केवल विपत्ति के समय ही ही काम नहीं करना। हमारा अधिक उपयोग भी काम तो शान्ति के समय होना चाहिये। बाह्य आक्रमणों से बचाने के अतिरिक्त हमारा मुख्य काम यह है कि हमारी आन्तरिक शक्ति बढ़े। और हमारे काम में नैरन्तर्य हो। मैं देखता हूँ कि इस में बहुत बड़ी कमी है। सभा के साधन बहुत ही संकुचित हैं। मैं यहां दो एक बातें लिखता हूँ:—

(१) आज कल बिना एक अखबार के अपनी आवाज़ जनता तक नहीं पहुंचाई जा सकती। कांग्रेस की ओर देखो। इस के कितने पत्र हैं जो कांग्रेस की नीति को प्रति दिन प्रातः काल संसार भर में फैला देते हैं। क्या आर्य समाज का कोई एक भी पैसा पत्र है! यह ठीक है कि पत्र निकालने में पैसा लगता है। परन्तु पत्र बिना काम कितना अधूरा रहता है। हमको दूसरों के मुखों से बोलना पड़ता है और वे नहीं चाहते कि वे हमारी आज्ञा पर अपना मुंह खोला करें। उनको क्या गरज पड़ी। हम गूंगे हैं। हमारा गूंगापन दूर होना चाहिये।

सार्वदेशिक सभा के पास एक बढ़िया प्रेस और एक श्रेष्ठ अखबार होना चाहिये। केवल भारतवर्ष में ही ५० लाख आर्य और २००० से

अधिक आर्य समाजें हैं। यदि ५० लाख के चौथाई के अर्थात् १२ लाख आर्य चार २ आनें इस काम को देवें तो प्रेस और पत्र दोनों चल सकते है।

(२) सभा के पास एक अच्छा प्रकाशन विभाग होना चाहिये। जिसम सब प्रसिद्ध भाषाओं का साहित्य होना चाहिये इसको व्यापारिक ढंग पर चलाया जाय जिससे प्रचार में कठिनाई न हो। एक लाख की पूजी से यह काम आरम्भ किया जा सकता है। परन्तु इस के लिये एक एस अनुभवी सज्जन की आवश्यकता होगी जिस को व्यापार और साहित्य दोनों स प्रेम हो। आर्य समाज मे साहित्यकारों का अभाव नहीं है। अभाव है उन साधनो का जिनसे साहित्य मे वृद्धि हो सकती है।

(३) तीसरी चीज है संगठन। आर्यसमाजियो को पाश्चात्य लड़ाई झगड़ो को देखकर यह विश्वास हो गया है कि लड़ाई झगड़े उन्नति के चिन्ह और उन्नति के साधन हैं। अतः हम में से जो शक्ति शाली हैं वह संगठन को ढीला करने में अपनी शान समझते हैं। इस से जन धन और शक्ति तीनों का ह्रास होता है। परन्तु कठिनाई यह है कि यह तीसरी बात किससे कही जाय। जो मानने को तैय्यार हैं वे लड़ते नहीं और जो लड़ते हैं उनको हमारी बात सुनने का अवसर या अवकाश नहीं फिर भी कुछ तो करना ही होगा।

यह तो मानना ही होगा कि स्वामी श्रद्धानन्द जी अब आकर हमारी विपत्तियो को दूर नहीं कर सकते अब वे हमारे मध्य में नहीं हैं। अब तो हमको केवल उनकी स्मृति से ही शिक्षा ग्रहण करनी है। स्मृति मनाने का यह अर्थ तो है नहीं कि हम हाय हाय करें और ताजियो की तरह अपनी छाती पीटें। हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि जो काम श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को बहुत प्रिय था उसको बढ़ाने का यत्न करें।

विदेशों में आर्यसमाज

(लेखक—श्री स्वामी भवानीदयाल जी सन्यासी आदर्शनगर अजमेर)

नवीन भारत के निर्माता ऋषि दयानन्द ने अपने विचारों और कार्यों के उत्तराधिकारी आर्य-समाज को यह भार सौंपा था कि उसके द्वारा स्वदेश और विदेशों में वैदिक धर्म एव आर्य-संस्कृति का तब तक अनवरत प्रचार होता ही रहे जब तक कि "कृण्वन्तो विश्व मार्यम्" की प्रतिज्ञा पूर्ण न हो जाय। ऋषि के इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुछ विशिष्ट व्यक्तियों ने जिस लगन और उत्साह से विदेशों में बसे हुए प्रवासी भारतीयों में प्रचार-कार्य किया है वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। प्रवासी भाइयों की यह शिकायत रही है कि भारत के आर्यों की जिम्मेवार, संगठित और व्यवस्थित समाजों की ओर से विदेश में प्रचार की उपेक्षा हा की गई है, जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ ऐसे अवाछनीय प्रचारक भी विदेशों में चक्कर लगाते रहते हैं और प्रवासी भाइयो की धर्म निष्ठा एव देशभक्ति से अनुचित लाभ उठाया करते हैं, जिनका भारत के सार्वजनिक जीवन में कोई मूल्य है और न महत्व। ऐसे प्रचारक और भजनीक भी समुद्र लाँघ कर उप-निवेशों में पहुचते ही अपनी गणना महापुरुषों की श्रेणी में कराने लगते हैं और इधर उधर से लिखी हुई सार्टिफिकेटों एव अखबारों में छपी हुई रिपोर्टों को दिखाकर प्रवासी भाइयों को यह विश्वास दिलाने की चेष्टा करते हैं कि वे कोई सामान्य व्यक्ति नहीं, बल्कि भारत के महान् विद्वानों और वक्ताओं में एक हैं। भोले भाले प्रवासी भाई, जिन्हें भारत के विद्वानों और त्यागी नेताओं के दर्शन और सत्सग का या तो अवसर ही नहीं मिला और यदि मिला भी तो बहुत कम, उनके दावे को आंख मूद कर स्वीकार कर लेते हैं और सोचने लगते हैं कि सौभाग्यवश आर्यजगत् का यह उज्ज्वल रत्न उनके मध्य में आ गया है, इसलिए मुक्तहस्त से उनको दान-दक्षिणा देने और पूजा-अर्चा करने में संलग्न हो जाते हैं। अन्य सम्प्रदाय के मनुष्यों पर यह छाप पड़ती है कि जब यही महात्मा आर्य समाज के अनमोल रत्न हैं, अद्वितीय विद्वान् और वक्ता हैं तो ऐसे समाज में वास्तविक विद्वानों का प्रवेश ही अपमानजनक है। इसलिये वे समाज से दूर रहना ही उचित समझते हैं। प्रसंगवश यदि कोई उन प्रचारक महोदय की विद्वत्ता और महत्ता में कुछ सन्देह कर बैठा तो फिर उसकी कुशल नहीं उसको दबाने और गिराने के लिये कोई बात उठा नहीं रखी जाती है।

हमारी सार्वदेशिक सभा और आर्य-प्रतिनिधि सभाएं जब कभी विदेश प्रचार की चर्चा चलाती भी हैं तो उनका मतलब होता है कि यूरोप और अमेरिका के श्वेतागों में वैदिक धर्म फैलाना। हमारे देश के प्रचारक और भजनीक भी जनता को विश्वास दिलाया करते हैं कि :—

"आवेंगे लत अरब से, उसमें लिखा यह होगा।
गुरुकुल के ब्रह्मचारी, हल-चल मचा रहे हैं॥"

और

"एक दिन आवाज ऐसी भारत में सुन पड़ेगी।
यूरोप में आर्यों का झंडा फहरा रहा है॥"

क्या खूब ! मचाइये विश्व में हलचल और फहराइये यूरोप में पताका ! आपकी इस उमंग और तरंग पर बधाई है, लेकिन तब तक तो आप अपने लाखों प्रवासी भाइयों से हाथ धो बैठेंगे। बिरानों को आप अपना बनाने जायगे, पर यहां तो अपने ही बिराने बन बैठेंगे। जब तक आप उधर से हलचल मचा कर और पताका फहरा कर लौटेंगे तब तक तो आपके प्रवासी भाइयों के भाग्य का बेड़ा मझधार में डूब चुकेगा। तब आप अपनी भूल पर पछतायगे लेकिन 'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं, गया दौर-दौरा दिखाता नहीं।' इस लिये पहले अपने घर में चिराग जलाना चाहिये, उसके बाद गिरजे और मसजिद में रोशनी करना उचित होगा। जिस समय सार्वदेशिक सभा ने अमेरिका में प्रचार की आयोजना की थी उस समय मैंने अखबारों में लिखा था, कि "जब तक भारत के करोड़ों प्राणियों के हृदयमंदिर में वेद भगवान् की स्थापना न हो जाय, जब तक भारत के ईसाई और मुसलमान तक अपने देश के पुरातन साहित्य के नाते वेद को अपना न बनालें—उसे अपने पूर्वजों की थाती न मानने लग जावें और जब तक हिन्दुस्तान में एक भी प्राणी 'अछूत' के नाम से पुकारा न जाता रहे तबतक आर्यसमाज को मदान्ध यूरोपियनों और अर्थलोलुप अमेरिकनों में वैदिक धर्म का प्रकाश फैलाने का प्रयत्न करना वैसा ही है, जैसे घर को तिमिराच्छन्न छोड़ कर वन में दीपक जलाना ! जब हम विदेश प्रचार की बात सोचें तो सबसे पहले हमें पचास लाख प्रवासी भाइयों की बात सोचनी चाहिये, जो संसार के भिन्न भिन्न भागों में जा बसे हैं। उनकी उपेक्षा करना मानों जानबूझ कर राष्ट्रीय आत्मघात करना है। विदेशों हमारी और उपनिवेशों में आर्य समाज की बड़ी आवश्यकता है। यद्यपि आर्य समाज की ओर से विदेशों में प्रचार का व्यवस्थित काम नहीं हुआ है तो भी कुछ उत्साही प्रचारकों ने समुद्र पार के देशों में पहुंच कर आर्य जाति की जो सेवा की है, उसकी प्रशंसा सभी करते हैं। अनेक उपनिवेशों में जन्म प्रवासी हिन्दुओं को विधर्मी होने से बचाने का सारा श्रेय आर्य समाज को ही है।

आज हम स्वर्गीय स्वामी विवेकानन्दजी की प्रशंसा करते नहीं अघाते। उनकी विद्वत्ता तो हमारे लिये अभिमान की वस्तु है ही, पर हम उनको इसलिये अधिक महत्व देते हैं कि उन्होंने कुछ अमेरिकन श्वेतांगों को वेदान्त मत की दीक्षा दी थी और अमेरिका के कुछ नगरों में हिन्दू मठों की स्थापना की थी। पर यह नहीं भूलना चाहिये कि जिस समय स्वामी विवेकानन्दजी अमेरिका के न्यूयार्क, चिकागो, वाशिंगटन आदि नगरों में श्वेतांगों को वेदान्तमत का ढंढेरा सुना रहे थे, ठीक उसी समय उसी अमेरिका के दक्षिण भाग में डमरारा, ट्रनीडाड, जमैका, ग्रनेडा आदि उपनिवेशों से हजारों प्रवासी हिन्दू स्वधर्म को त्याग कर धड़ाधड़ ईसाई हो रहे थे। आज उन उपनिवेशों में कोई बिरला ही शिक्षित युवक हिन्दू मिलेगा, अन्यथा सब के सब ईसाई होगये हैं। उन अभागे हिन्दुओं की ओर स्वामी विवेकानन्द जी की दृष्टि नहीं फिरी, जो दक्षिणी अमेरिका के उपनिवेशों में गिरमिट लिखकर गोरों की गुलामी करने के लिये गये थे। सदियों की गुलामी के कारण हमारी मनोवृत्ति ऐसी दूषित

होगई है कि स्वामी विवेकानन्द के दो-चार श्वेतांग शिष्यों को देखकर हम फूले अंग नहीं समाते हैं, पर न स्वामी विवेकानन्द ने और न उनके शिष्यों ने आज तक उनकी खोज खबर ली।

वेस्ट इन्डीज के द्वीपों में भारतीय स्थायी रूप से बस गए हैं, पर आर्यसमाज के संदेश से वंचित होने के कारण अधिकांश हिन्दू ईसाई हो गए हैं। प्रनेडा के कई सहस्र हिन्दुस्तानियों में केवल दो-चार परिवार हिन्दू रह गये हैं, पर एक-दो पीढ़ी में इनकी भी इतिश्री हो जायगी। सेन्ट लुशिया में कोई भारतीय अब हिन्दू नहीं रहा। जमैका में हिन्दुत्वका लोप होचुका है। ट्रिनीडाड और डमरारा के प्रायः सभी शिक्षित भारतीय ईसाई हो गये हैं। इधर समस्त संसार को आर्य बनाने का स्वप्न देखने वाले लोग कुम्भकर्णी निद्रा की गोद में मोद करते रहे और इधर वेस्ट इन्डीज की आर्य सन्तान ईसाई हो गई।

मुझे ईसाइयों से कोई द्वेष नहीं है। महात्मा मसीह के लिए मेरे हृदय में श्रद्धा है। स्वर्गीय साधु एण्ड्रूज, राजा सर महाराजसिंह, रेवरेन्ड सेमन, रेवरेन्ड दुर्गाप्रसाद मिश्र, श्री वर्ड्स प्रभृति महाभागों की मित्रता पर मुझे गौरव और गर्व है, पर आम ईसाइयों की यह मनोवृत्ति मुझे बहुत खटकती है कि वे धर्म के साथ ही भारत की संस्कृति, साहित्य और आदर्शों को भी तिलांजलि दे बैठते हैं और खासकर प्रवासी ईसाइयों में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से पाई जाती है। उनको तो 'हिन्दुस्तानी' नाम भी पसन्द नहीं है। वे टोम, डिक, हेरी, जान आदि कहलाने में गौरव समझते हैं। कुछ मुसलमान तो ऐसे हैं, जो न तो भारत को अपनी मातृभूमि मानते हैं और न यहां की भाषा, इतिहास और सभ्यता से कोई वास्ता रखना चाहते हैं। मैं उन सम्प्रदायों को भारत के लिये सबसे बड़ा अभिशाप समझता हूँ, जो उनको अपने देश की ममता से विरक्त कर अरब और यरूशलीम की भक्ति करना सिखाते हैं। वास्तव में धर्म परिवर्तन से केवल विचार में परिवर्तन होता है, पूजा और प्रार्थना की विधि में परिवर्तन होता है, पर इससे किसी का रक्त-मांस नहीं बदल जाता, माता-पिता और वंश नहीं बदलते, देश और इतिहास में फर्क नहीं पड़ता, भाषा और साहित्य से नाता नहीं टूटता। असल में धर्म बदलने से राष्ट्र नहीं बदलता, पर हिन्दुस्तानियों में उल्टी-गंगा बहती है। धर्म बदलते ही वे और सब कुछ बदल डालने का निष्फल प्रयास करते हैं।

बृहत्तर-भारत में आर्य समाज के प्रचार की नितान्त आवश्यकता है। यही एक ऐसा समाज है, जो प्रवासी भारतीयों के हृदय में मातृभूमि के प्रति अनुराग उत्पन्न कर सकता है, उनको भारत के पुरातन धर्म और संस्कृति का सदेश सुना सकता है। और विदेशों के वातावरण में विचरते हुए भी उनकी भारतीयता की रक्षा कर सकता है विदेशों में आर्य समाज के लिये बड़ा अच्छा क्षेत्र तैयार है, किन्तु खेद की बात यही है कि कुछ विशेष व्यक्तियों को छोड़ कर स्पष्ट रूप से आर्यसमाज ने इस आवश्यक प्रश्न की ओर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया है।

जहां जहां आर्य समाज का प्रचार हो सका है, वहां के प्रवासी भारतीयों में हिन्दुत्व की रक्षा हो गई। ट्रिनीडाड, डमरारा, जमैका, प्रनेडा और सुरीनाम की तरफ कोई आर्य-प्रचारक

नहीं पहुंच सका, फल यह हुआ कि वहां के शिक्षित युवक ईसाई हो गये।

सम्पूर्ण संसार को आर्य बनाने का हम दावा तो करते हैं, पर केवल वाणी मात्र से, इस दिशा में क्रियात्मक प्रवृत्ति का सर्वथा अभाव ही है। समस्त भूमंडल की बात तो पीछे होगी, पहले हमें अपने प्रवासी भाइयों की ही रक्षा करने की आवश्यकता है।

यह कौन नहीं चाहता कि हमारा भारत फिर एक बार ससार भर का सांस्कृतिक गुरु बने। इसके लिये तो ऋषि दयानन्द ने देश-देशान्तरों मे वैदिक धर्म-प्रचार का आदेश दिया था। क्योंकि वेद की वाणी अनादि है और प्रकृति की सारी प्रवृत्ति की जननी है। यह हमारी आत्म-प्रवंचना नहीं, आत्म-विश्वास का द्योतक है।

जिस आर्य समाज ने संसार मे वैदिक धर्म प्रचार का भार उठाया था, वह आज अनेक स्थानों पर अखाड़ा बन रहा है। ऋषि ने हमे शिक्षा दी थी कि सत्य के ग्रहण और असत्य के त्यागने के लिये सदा उद्यत रहना चाहिये, पर हमारा जीवन सत्य से बहिर्मुख हो रहा है।

वास्तव मे यह दलबंदी ऐसा कोढ़ है जो आर्य समाज के अंग को दूषित एवं गलित बना रहा है। राजनीतिक दलबदी का मर्म हम समझ सकते हैं, पर आर्य समाज जैसी विशुद्ध धार्मिक संस्था में दलबंदी दृष्टिगोचर होती है, वह बड़ी ही त्रासदायक है। मैंने अपने जीवन का सर्वोत्तम भाग आर्यसमाज की सेवा मे ही बिताया पर इधर समाज में दलबन्दी का दृश्य देख कर मैं उससे विरक्त बन बैठा हूँ। आशा है कि हमारे बड़े बड़े आर्य नेता इसपर गंभीरता पूर्वक विचार करेंगे और इस महारोग के उपचार का कोई निदान ढूंढ निकालेंगे।

हमारे पास आपस मे झगड़ने के लिए समय कहां है? समुद्र की लहरों को चीरती हुई विदेशों से आवाज आ रही है और आर्य प्रचारकों को पुकार रही है। विदेशो मे एक नवीन भारतीय समाज की सृष्टि हो गई है, यह समाज बड़ा उदार है, उसमें जात-पात का न प्रपंच है, न छुआछूत का बखेड़ा है, न ऊंच नीच का भेद है, न विधवा विवाह वर्जित है न पर्दा है और न है रूढ़ियों का साम्राज्य। आर्यसमाज को इससे अधिक उर्वर-क्षेत्र और कहां मिल सकता है? थोड़े ही परिश्रम से वह समाज आदर्श आर्य समाज बनाया जा सकता है।

सार्वदेशिक सभा और आर्य प्रतिनिधि सभाओं के प्रचारको को हमेशा ही परदेशों में पर्यटन करते रहना चाहिये। ये प्रचारक ऐसे हों, जो प्रवासी भारतीयों के भाग्य को अन्धकारमयी रजनी मे दीपस्तम्भ का काम दे सकें। आशा है कि मेरी यह विनीत प्रार्थना उन महाभागों के कानो तक अवश्य पहुचेगी जो महान् भारत और वृहत्तर भारत का सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं और अपने पचास लाख प्रवासी भाइयों को वैदिक-धर्म और आर्य संस्कृति से वंचित रहने देना राष्ट्रीय आत्मघात समझते हैं।

(जो आर्य महाभाग विदेश-प्रचार में किसी प्रकार की सहायता देना आवश्यक और उचित समझते हो, जो अपने प्रवासी भाइयों को वैदिक धर्म के झण्डे के नीचे देखना हमारे आर्यत्व की कसौटी समझते हो उनको मुझ से "प्रवासी-भवन, आदर्शनगर, अजमेर" के पते से पत्र-व्यवहार करना चाहिये।)

(अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सन् १९०८ में स्थापना करते हुए जो उद्देश्य बनाए थे, उनमें से द्वितीय उद्देश्य'आर्यावर्त तथा अन्य देश देशान्तरों में वैदिक धर्म के प्रचार का प्रबन्ध करना भी था प्रतिष्ठित सभा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यथा सम्भव प्रयत्न करती रही है तथापि सुयोग्य लेखक महोदय के अनुभव सिद्ध विचारों से और अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न किया जाएगा। आशा है आर्य जनता का पूर्ण नैतिक और आर्थिक सहयोग इस पवित्र कार्य के लिये प्राप्त होगा तथा सुयोग्य विद्वान् प्रचारक अपनी सेवाएं इस अत्यावश्यक कार्य के लिये समर्पित करेंगे। ऐसे विद्वान् प्रचारकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन प्रस्तुत करना जो निश्चिन्तता पूर्वक प्रचार दृष्टि से नितान्त आवश्यक है प्र० सभा आर्य जनता के सहयोग से ही कर सकती है इस में सन्देह नहीं। सम्पादक सा० दे०)

आचार्य वर के सुखद संस्मरण

(लेखक—श्री पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा देहली)

मैंने प्रथमवार फर्वरी सन् १९०२ में जब मैं लगभग ९ वर्ष का बालक था गुरुकुल मुलतान की स्थापना के अवसर पर श्री महात्मा मुन्शीरामजी के शुभदर्शन किये थे। उनकी वह विशाल भव्य मूर्ति मेरे हृदयपटल पर तभी ऐसी अंकित हो गई कि वह आज छत्तीस वर्ष और उनके अमर बलिदान को लगभग २० वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी वैसी ही ताजी बनी हुई है। मैं इसे अपने पूर्व जन्म के अनेक पुण्य कर्मों का परिणाम और अपना परम सौभाग्य समझता हूँ कि मुझे ऐसे जगद्वन्द्य महात्मा के करकमलों से यज्ञोपवीत ग्रहण करने का दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ था। गुरुकुल मुलतान के वार्षिकोत्सवों पर श्री पूज्यपाद महात्माजी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त होता ही रहता था जिन्हें मैं अपने पूज्य पिताजी के रूप में मानता था।

सन् १९१५ मे जब अपने अध्यापकों तथा सहपाठियों के साथ हम लोग सरस्वती यात्रा पर क्वेटा गये तो वहा की आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव मे भी सम्मिलित हुए। श्री पूज्य महात्मा मुन्शीराम जी का उत्सव मे ईश्वर भक्ति विषयक अत्यन्त प्रभावशाली जो उपदेश हुआ उसके

"जब दात न थे तब दूध दियो,
जब दात दिये तब अन्न न देई हैं ?
जल मे थल में पशु पछिन की,
सबकी सुध लेत सो तोर न लई हैं ?
काहे को सोच करे मन मूरख,
सोच करे कुछ हाथ न पई हैं ?
जान को देत अजान को देत,
जहान को देत सो तोइ न देई हैं।

इत्यादि प्रेम से गाये पद आज भी मेरे कानों में गूंज रहे हैं। उनके विशुद्ध अन्तस्तल से निकले हुए ईश्वर-भक्ति और विश्वास विषयक उद्गार श्रोताओं के हृदयो पर। कितना अद्भुत प्रभाव उत्पन्न करते थे इस बात को अनेक बार अनुभव करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त होता था।

फरवरी सन् १९१७ मे जब गुरुकुल कांगड़ी की अधिकारी परीक्षा मे सम्मिलित होने हम लोग गुरुकुल मुलतान से गुरुकुल कागड़ी गये तो प्रायः प्रतिदिन पूज्य महात्मा जी के दर्शन होते थे। उनकी मुझ पर कितनी कृपा दृष्टि थी इसको मै कभी भूल नहीं सकता। अप्रैल १९१७ में गुरुकुल कागड़ी के वार्षिकोत्सव पर अधिकारी परीक्षा में संस्कृत और अंग्रेजी में प्रथम रहने पर पदकादि अपने पवित्र कर-कमलों से मुझे देते हुए पूज्य आचार्य जी ने जो शब्द कहे थे वे मुझे अब भी पूरे तौर पर याद हैं। उन्होंने उस समय हजारों की उपस्थिति में कहा था कि मुझे निश्चय है इस ब्रह्मचारी के द्वारा आर्यसमाज की बड़ी सेवा होगी इत्यादि। जो आर्यसमाज की तुच्छ सेवा अपनी शक्ति के अनुसार मैं कर सका हूँ यह सब उन आचार्य वर की कृपा दृष्टि का ही परिणाम है इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं।

अधिकारी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर हम लोग जब महाविद्यालय में प्रविष्ट हुए तो १ मास तक प्रतिदिन अपने बंगले पर बुला कर पूज्य आचार्य

जी ने 'ब्रह्मचर्य' के विषय में विस्तृत उपदेश देकर हम सबको अनुगृहीत किया जो हमारे जीवनों में मार्गदर्शक का कार्य करते रहे हैं। सचमुच उन जैसे सच्चे आचार्य जो माता, पिता और गुरु तीनों का स्थान ले सके, मिलना संसार में अत्यन्त कठिन है।

मैंने महाविद्यालय में आर्य सिद्धान्त व धर्म के तुलनात्मक अनुशीलन का विषय ऐच्छिक रूप में लिया था। महाविद्यालय के प्रथम और चतुर्थ वर्ष में पूज्य श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी पर्याप्त समय तक हमारे उपाध्याय भी रहे।

जब अप्रैल सन् १९१७ में उन्होंने गुरुकुल वाटिका मायापुर में संन्यास आश्रम में विधिपूर्वक प्रवेश किया तो मैं गुरुकुल कांगड़ी के विद्यार्थी के रूप में वहां उपस्थित था। उनके श्रीमुख से निकले ये शब्द आज भी मेरे कानों में गूंज रहे हैं कि श्रद्धा कल्याणमयी माता के रूप में मेरी सदा रक्षा करती रही है और इसी से मुझे आनन्द प्राप्त होता है इसलिये मैं श्रद्धानन्द इस नाम को ग्रहण करता हूँ। उन्होंने तीनों एषणाओं के परित्याग का व्रत लेते हुए उस समय कहा था कि पुत्रैषणा और वित्तैषणा का परित्याग किये हुए तो मुझे पर्याप्त समय हो चुका है पर आज से लोकैषणा का भी सर्वथा परित्याग करता हूँ। इस प्रकार तीनों एषणाओं का परित्याग कर महात्मा मुन्शीराम जी आदर्श सन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द जी के रूप में जगत् के सन्मुख आये और अन्त में २३ दिसम्बर १९२६ को धर्मवेदि पर अद्भुत बलिदान करके अमर होगये।

२३ मार्च सन् १९२१ में मैं गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी से सिद्धान्तालंकार (प्रतिष्ठित) की उपाधि प्राप्त करके स्नातक हुआ। स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज उन दिनों आचार्य थे यद्यपि बीमारी के कारण वे उस वर्ष उत्सव की कार्यवाही में विशेष भाग न ले सके। पंजाब केसरी ला० लाजपतराय जी, पं० मोतीलाल जी नेहरू, जगद्गुरु शंकराचार्य जी एम ए. (शारदा पीठाध्यक्ष), श्री आसफ अली, श्री शौकत अली आदि देश के मान्य नेता श्री पूज्य स्वामी जी के निमन्त्रण पर उस वर्ष गुरुकुल के उत्सव पर आये थे और इस आदर्श राष्ट्रीय शिक्षणालय(गुरुकुल) के विषय में बड़े उत्तम भाव लेकर गये थे। आचार्य के रूप में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ब्रह्मचारियों में समाज और देश की सेवा का भाव निरन्तर भरते रहते थे।

मुझे भली भांति स्मरण है कि मैं जब १२वीं श्रेणी में पढ़ता था तो गुरुकुलीय साहित्य परिषत् का स० मन्त्री था और महात्मा मुन्शीरामजी आचार्य रूप में उसके प्रधान थे। उन्होंने ए० दिन परिषत् के अधिवेशन के पश्चात् दक्षिण-भारत की अत्यन्त शोचनीय अवस्था का वर्णन करते हुए कहा कि मेरी प्रबल इच्छा है कि कई योग्य स्नातकों को उधर प्रचारार्थ भेजूं ताकि इस शोचनीय दशा का सुधार किया जा सके। मैंने उसी दिन अपने मन में निश्चय कर लिया था कि मैं अपने को इस पवित्र-कार्यार्थ तय्यार करूंगा और इसी दृष्टि से मैं महाविद्यालय के सम्पूर्ण जीवन में तय्यारी करता रहा। सन् १९२१ के मार्च मास में स्नातक परीक्षा के पश्चात् जब पूज्यपाद आचार्य स्वामी श्रद्धानन्द जी ने हम नवस्नातकों को भविष्य जीवन के विषय में बात चीत करने के लिये बुलाया तो मैंने उनसे निवे-

दन किया कि आपके आज से लगभग ३॥ वर्ष पहले दिये निर्देश (जिसे मैंने आदेश के रूप में लिया था) के अनुसार मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं अपने जीवन के अनेक वर्ष दक्षिण प्रचारार्थ अर्पित करूंगा जिसे सुनकर वे बड़े ही प्रसन्न हुए और उन्होंने मुझे हार्दिक आशीर्वाद दिया। उन्हीं दिनों मान्य श्री पं० इन्द्र जी विद्या-वाचस्पति ने जो तब गुरुकुल कांगड़ी के स० मुख्याधिष्ठाता होने के अतिरिक्त आर्य सिद्धान्त के महोपाध्याय थे मुझे गुरुकुल विश्वविद्यालय में आर्यसिद्धान्त के उपाध्याय के रूपमें कार्य करने की प्रेरणाकी थी किन्तु पूज्य आचार्य वर की भरी हुई प्रचार भावना इतनी प्रबल थी कि मैंने गुरुकुल में उस समय कार्य करने की अपेक्षा दक्षिण भारत मे कार्य करना ही अधिक उचित समझा तथा मई सन् १९२१ से जनवरी १९४२ तक (लगभग १। वर्ष मुलतान गुरुकुल में आचार्य रूप में कार्य के अतिरिक्त) उधर ही वैदिक धर्म प्रचार, दलितो-द्धार शुद्धि इत्यादि का कार्य करता रहा जिसमे स्फूर्ति पूज्यपाद आचार्य जी से प्राप्त होती रही। मैं चाहता हूँ कि गुरुकुलो तथा आर्य संस्थाओं के अन्य संचालकों में भी वह सच्ची प्रचार भावना रहे जो श्रद्धेय स्वामी जी महाराज में पाई जाती थी ताकि उनके सम्पर्क में आने वाले विद्यार्थी भी उसको ग्रहण कर सकें। वे आदर्श आचार्य थे जिन्होंने स्वयं ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करते हुए सदाचार का प्रेम कूट २ कर विद्यार्थियो मे भर दिया था और जिन्हें ब्रह्मचारी सचमुच अपने पिता ही नहीं प्रेममयी माता के रूप में भी अनुभव करते थे। मै यह बात अपने वैयक्तिक अनुभव के आधार पर लिख रहा हूँ। गुरुकुल कांगड़ी में निवास करते हुए मुझे एक बार बताया गया था कि एक वार्षिकोत्सव पर किसी ७, ८ वर्ष के ब्रह्मचारी के माता पिता मिलने के लिये न आ सके थे और इसलिये वह उदास होकर रो रहा था। उसकी श्रेणी के अधिष्ठाता उसे आचार्य वर महात्मा मुन्शीराम जी, के पास ले गये। उन्होंने उसके प्रति ऐसा प्रेम प्रदर्शित किया कि उसकी सारी उदासी दूर हो गई और वह प्रसन्न होकर हंसने लगा। गुरुकुलो और अन्य आर्य संस्थाओ के संचालकों को अपने अन्दर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के इस आदर्श प्रेम को धारण करना चाहिये।

सन् १९१८ में जब गढ़वाल में अकाल पड़ा तो स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अकाल पीड़ितों की सहायता का विशाल आयोजन किया और अपने मानसिक पुत्रो (जिन मे हम सब गुरुकुल के विद्यार्थी सम्मिलित थे) को इस यज्ञ मे अपनी २ आहुति देने के लिये निमन्त्रित किया। इस आदेश के अनुसार हम उस समय महा-विद्यालय विभाग के प्रायः सब ब्रह्मचारी सेवा कार्यार्थ वहा पहुच गये और श्रद्धेय स्वामी जी की अधीनता में कार्य करते रहे। मुझे क्योंकि पूज्य आचार्य जी के साथ पौड़ी, रुद्र प्रयाग, उत्तर काशी, केदारनाथ आदि अनेक स्थानों में जाने और कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था अतः मैं जानता हूँ कि उनका हृदय कितना सहानुभूति पूर्ण और संवेदनशील था, किस प्रकार पीड़ितों की अवस्था को देखकर उनकी आँखों में आंसू आ जाते थे तथा उनके दु:ख निवारणार्थ वे आतुर रहते थे। कई बार वे १८, २० मील तक हमारे साथ चलते थे। और अपने आराम की

तनिक भी चिन्ता न करते थे। उन्हीं दिनों की बात है कि गढ़वाल के एक स्थानीय पत्र में किसी आर्य समाजी सज्जन ने वहा की सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध एक लेख लिखा जिस से गढ़वाली जनता में खलबली मच गई और कुछ अविवेकी गढ़वालियो ने आर्य समाज के सर्वमान्य नेता के रूप में स्वामी श्रद्धानन्द जी पर ही आक्रमण करने का निश्चय किया और इस उद्देश्य से पौड़ी (गढ़ वाल की राजधानी में) एक सभा बुलवाई। इस की सूचना अपने कुछ भक्तो द्वारा पाते ही (जिन्होंने उनसे निवेदन किया कि वे पौड़ी न जाएं ताकि दुष्ट उन पर किसी प्रकार का आक्रमण उस उत्तेजित अवस्था में न कर बैठें) वीर केसरी स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज न केवल रुद्र प्रयाग से पौड़ी पहुचे बल्कि उस सभा में भी जा पहुचे जहा उनके विरुद्ध बड़ी भयङ्कर उत्तेजना फैलाई जा रही थी। वीर नरसिंह के उस सभा मे पहुंचते ही सारा वायु मण्डल परिवर्तित हो गया और स्वामी श्रद्धानन्द जी के निन्दा सूचक प्रस्ताव के स्थान में चारों ओर से उनकी सेवाओं के लिये अभिनन्दन किया जाने लगा। यह था निर्भयता का आदर्श जो ईश्वर के सच्चे भक्त उन वीर संन्यासी ने प्रत्येक विरोध के समय दिखाया था और जिस के कारण सब विरोधिनी शक्तियों पर विजय प्राप्त करने में वे सफल हुए थे। इसी निर्भयता का परिचय उन्होंने रौलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह तथा अन्य सब अवसरो पर दिया था जिन घटनाओं का सुप्रसिद्ध होने के कारण यहां उल्लेख अनावश्यक है।

सन् १९२४ में जब श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने समस्त भारत का दौरा किया तो बम्बई, पूना और दक्षिण भारत के अनेक स्थानों की यात्रा में मै उनके साथ था। दलितों की अवस्था को देखकर उनका हृदय द्रवित हो उठता था और उनकी आखों से आंसू तक आ जाते थे। उनकी अवस्था सुधारने और अस्पृश्यता कलङ्क का समूल नाश करने की वे प्रत्येक भारतीय से मार्मिक अपील करते थे। इस सम्बन्ध में उन्होंने एक पुस्तिका अंग्रेजी में भी उन दिनों प्रकाशित कराई थी जिसका नाम Blot out the ourse 'of Untouchability An appeal to every son and daughter of once great Aryan Race अर्थात् अस्पृश्यता के कलङ्क का समूल नाश करो कभी महत्त्वशालिनी आर्य जाति के प्रत्येक पुत्र और पुत्री से अपील—यह था। इस पुस्तकको प्रतियाँ वे सब जगह बटवाते जाते थे। ११-५-२५ को मेरे द्वारा जो सन्देश उन्होने दक्षिण भारत की आर्य जनता के नाम मगलौर आर्य समाज के उत्सव के अवसर पर भिजवाया था (जिसे इसी अङ्क में 'अमर धर्म वीर का अमर सन्देश। इस शीर्षक से पृथक् छपवाया जा रहा है) उस मे भी जाति भेद और अस्पृश्यता के निवारण पर विशेष बल दिया गया था।

वेद में लिखा है कि "ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः" अर्थात् सत्य का शब्द इतना तेजस्वी होता है कि वह बधिर के कानों तक भी पहुंच जाता है अर्थात् जो अभिमानादि वश सुनकर भी बात को अनसुनी सी कर देते हैं उन्हें भी वह प्रभावित कर डालता है। मैंने श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी के सम्पर्क में आने पर कई बार इस बात की सत्यता का

स्पष्ट अनुभव किया। इनमें से एक प्रत्यक्ष दृष्ट घटना का उल्लेख ही यहां पर्याप्त समझता हूँ! सन् १९२६ का बहुत सम्भवतः अप्रैल मास था। मैं उन दिनों मुलतान गुरुकुल मे आचार्य था। सन् १९०९ मे गुरुकुल मुलतान के लिये भूमि देनें वाले चौ० रामकृष्ण ने कुसङ्गति मे पड़ कर पीछे से गुरुकुल के अधिकारियों को इतना तंग कर दिया था कि उन्हें उस भूमि और मकानो को छोड़ कर दूसरी जगह गुरुकुल को ले जाने को बाधित होना पड़ा था। सन् १९२६ मे चौ० रामकृष्ण से उन मकानों का दाम प्राप्त करने के लिये, गुरुकुल मुलतान के सचालको ने मुकदमा किया था और गुरुकुल का स्थापना के समय जो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी थे जिनमें श्रद्धेय स्वा० श्रद्धानन्द जी प्रमुख थे उन्हें साक्षी के लिये निमन्त्रित किया गया था। स्वामी जी महाराज का बड़ा विशाल यहा तक कि मुलतान के इतिहास में अभूत पूर्व-जलूस निकाला गया। हमें पीछे से ज्ञात हुआ कि चौ० रामकृष्ण भी स्टेशन से कुछ दूरी पर किसी जगह खड़े खड़े उस विशाल जलूस को देख और श्रद्धेय स्वामी जी के प्रभाव को देख कर दंग हो रहा था। उस न सब जगह यह बात फैला रक्खी थी कि संसार में कोई शक्ति नहीं जो मुझे इस अभियोग में पराजित कर सके। यहा की छोटी मोटी अदालतों की तो बात ही क्या है मैं हाई कोर्ट में भी हारने पर प्रिवी कौन्सिल तक मुकदमा लड़ूंगा। मेरा कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता।

अदालत में मुकदमा प्रारम्भ हुआ। सब से पहली साक्षी श्रद्धेय स्वामी जी महाराज की थी। मैं उस समय अदालत में उपस्थित था। श्री पूज्य स्वामी जी महाराज ने अपने सरल स्वभाव से मुलतान गुरुकुल के लिये चौ० रामकृष्ण द्वारा भूमि मिलने और उस पर मकान बनवाने आदि का सारा विवरण सुनाया। हम लोगो के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब हमने देखा कि स्वामी जी की साक्षी समाप्त होते ही चौ० रामकृष्ण ने १० हजार रु० नकद वहीं दे दिये और शेष राशि के लिए स्टैम्पड पेपर लिख दिया तथा कुछ ही समय में उसे चुका दिया। यह था 'ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द' इस वेद वाक्य तथा 'सत्यमेव जयते नानृतम्' इस उपनिषद् वाक्य की सत्यता का प्रत्यक्ष उदाहरण जो उपस्थित सज्जनों ने बड़े आश्चर्य के साथ देखा। श्रद्धेय आचार्य स्वामी श्रद्धानन्द जी के आदेशानुसार मैंने पुनः दक्षिण भारत में प्रचारार्थ मुलतान गुरुकुल की आचार्यता से दिसम्बर १९२६ के प्रारम्भ में त्याग पत्र दे दिया था पर अभी मैं मुलतान से प्रस्थान न कर पाया था कि २४ दिसम्बर सन् १९२६ को देहली में अपने मान्यवर आचार्य जी के बलिदान का समाचार सुना जो बिजली की तरह सारे शहर में फैल गया। उस दिन सायं काल ३०—४० हजार की उपस्थिति में मैंने दिवंगत अमर धर्मवीर के सम्बन्ध में प्रार्थना कराई और अश्रु पूर्ण नेत्रों के साथ अवरुद्ध कण्ठ से भाषण दिया।

आज लगभग ३० वर्षों के पश्चात् भी अपने श्रद्धेय आचार्य वर का पुण्यस्मरण मैं बार बार करता और उनसे नवीन स्फूर्ति पाता हूँ। उनकी परमेश्वर और वेद विषयक अचल श्रद्धा, निर्भयता, अदम्य उत्साह त्याग और तपस्या, दीन दलितो के प्रति क्रियात्मक सहानुभूति, धीरता और गम्भीरता, जीवनकी दिव्य पवित्रता इत्यादि, दिव्य गुणों के प्रति मैं सहसा नत मस्तक हो जाता हूँ और भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि इन गुणों को धारण करने की शक्ति प्रदान कर मुझे तथा अन्य सब स्नातकों को अपने आचार्य शिरोमणि का अनुरूप शिष्य बनाए। साथ ही वह समस्त आर्यों को अपने उन सर्वमान्य नेता का योग्य अनुयायी बनने की शक्ति दे।

❋ आज यदि होते श्रद्धानन्द ❋

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार, एम ए. एल. टी., डी लिट् अजमेर)

आज यदि होते श्रद्धानन्द।
भारत भर में फिर से भरता नव उत्साह अमन्द ॥ १ ॥
प्रिय सत्यार्थ-प्रकाश हमारा पाता घर घर मान।
घर घर उसकी पूजा होती, नगर नगर सम्मान।
लगाता उसपर को प्रतिबन्ध ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ २ ॥
यदि कोई मति-मारा उस पर करता अनुचित वार।
सत्याग्रह संग्राम छेड़कर करते वज्र प्रहार।
करा देते उसको स्वच्छन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ३ ॥
आर्य जाति के सम्मुख होता क्यों संकट विकराल ?
तोड़ नहीं सकते थे पल में मुस्लिम लीगी चाल !
कराते लीगी वाका बन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ४ ॥
राजनीति में आर्यसमाजी रहते प्रमुख प्रधान।
हम अन्यों का मुख न ताकते, बनते स्वयं महान्।
काटते अपने सारे फन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ५ ॥
हिन्दू महासभा का होता रूप आज कुछ और।
शुद्धि संगठन द्वारा बढ़ता उसका बल सब ठौर।
हमारा पथ होता निर्द्वन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ६ ॥
भारत के स्वातन्त्र्य युद्ध में लेते उत्कट भाग।
भारत भू में कभी न लगती पाकिस्तानी आग।
हमारी गति क्यों होती मन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ७ ॥
प्रभो ! देश में फिर से जन्मे श्रद्धानन्द महान्।
आर्य जाति का और राष्ट्र का करदें जो कल्यान।
रहे भारत अखंड सानन्द ॥ आज यदि होते श्रद्धानन्द ॥ ८ ॥

—"सूर्य"

श्रद्धानन्द का महान् नेतृत्व

(लेखक—स्वा० चिदानन्द जी मन्त्री भारतीय शुद्धि सभा देहली)

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के दिवंगत हो जाने पर, आर्य-समाज ने अति स्वल्प काल मे अपना जो प्रभाव स्थापित किया, उसकी तुलना, इससे पहिले की सुधार संस्थाए नहीं कर सकतीं। न केवल समाज सुधार मे ही, अपितु धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्र मे भी उसने सबसे आगे बढकर कार्य किया है। यही कारण है कि आर्य समाज के विरोधी भी यथा समय उसकी मुक्त कठ से बड़ाई करते सुने जाते हैं। आर्य-समाज को यह गौरव कैसे प्राप्त हुआ? यदि इस तत्व को जानना चाहते हैं— तो वह है महर्षि के सच्चे आर्य भक्तो की महर्षि के प्रति आत्मीयता, श्रद्धा भक्ति और आर्यत्व से अभेद प्रेम।

महर्षि के परम पद को प्राप्त हो जाने के पश्चात् आर्य समाज की वेदी पर ऐसे व्यक्ति आये जिन का सम्पर्क महर्षि के साथ उनके जीवन तक ही नहीं रहा अपितु उनके परलोकवास करने पर भी वे सदा उनके सम्पर्क में रहे और उनके पवित्र आदेश और आदर्शों का क्रियात्मक पालन भी करते रहे। उन भक्तो मे से एक थे—स्वामी श्रद्धानन्द (तत्कालीन महात्मा मुन्शीराम) जी। आपने आरम्भिक आयु काल मे महर्षि के साथ साक्षात् निकट-सम्पर्क स्थापित किया, जिससे आप पर महर्षि का ऐसा प्रभाव पड़ा कि मुन्शीराम जी कुछ से कुछ बन गये। यद्यपि महर्षि की इह शरीरलीला समाप्त होगई किन्तु श्रद्धानन्द ने उनके सम्पर्क मे कुछ भी ढील नहीं आने दी और जो आदेश उनको महर्षि से मिला था, उसको उन्होंने महर्षि के परलोकवास कर जाने के पश्चात् पहिले से भी अधिक अपनाया। यही कारण है कि सब प्रथम वे 'आर्य' बने और ऐसे बने कि जब भी आर्य समाज के सामने कोई विकट स्थिति उत्पन्न हुई तो सबसे पहिले और प्रमुख रूप मे उन्होने उसमे आगे बढ़कर भाग लिया और जब तक उसमे पूरी पूरी सफलता प्राप्त न करली पीछे पैर नहीं हटाया।

अग्नि परीक्षा

सन् १९०७ ई० मे, जब भारत गवर्नमेंट ने पंजाब केशरी लाला लाजपत राय को लाहौर में उनके अपने मकान से गिरफ्तार करके, मांडले के किले मे लेजाकर बन्द कर दिया, तो आर्य-सामाजिक जगत मे इसका बहुत बड़ा आतङ्क छा गया और इतस्तत ऐसा सोचा जाने लगा कि कहीं आर्य-समाजी सदस्य होने के नाते हमको भी गिरफ्तार न कर लिया जावे। ऐसी परिस्थिति मे अनेक नामधारी आर्य-समाजी सदस्यों ने अपने नाम आर्य समाज की सदस्य-सूची मे से कटवा लिये बहुतो ने अपने घरो मे सत्यार्थ प्रकाश को निकाल कर फेंक दिया या कहीं पर छिपा दिया, प्राय सदस्यो ने आर्य-समाज के साप्ताहिक सत्सगो मे जाना बद कर दिया। इतना ही नहीं—किन्तु जिस 'दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालिज' लाहौर और उसकी प्रबन्ध कारिणी सभा के लाला लाजपतराय जी प्रमुख सदस्य और कार्यकर्ता समझे जाते थे उस कमेटी ने भी लाला जी का नाम अपनी सदस्य सूची मे से काट दिया।

किन्तु इस आतङ्कित वातावरण मे, आगे बढ़कर जिसने नेतृत्व का परिचय दिया वे थे स्वामी श्रद्धानन्द जी। वे निर्भयता के साथ आर्य जगत के सामने आये और उन्होंने लाला जी के समर्थन में प्रभावोत्पादक भाषण दिये, लेख लिखे। ऐसा करके स्वामी जी ने न केवल लाला जी को ही महत्व दिया अपितु आर्य-समाजियो में नव जीवन का सञ्चार किया और राजनैतिक क्षेत्र मे आर्य समाज के मान की रक्षा की और उस पर छाये हुए आतक को दूर करके आर्य समाज को इस अग्नि परीक्षा में उत्तीर्ण किया।

आर्य समाज का नेतृत्व

जिस समय प्रतिष्ठित आर्य समाजियों के विरुद्ध सर्व विदित पटियाला केस चल रहा था उस समय आर्य समाजियोंपर एक गहरी उदासी-सी छाई हुई थी। कई आर्य-समाजी भाई इधर-उधर झांकते देखे जा रहे थे। आर्य समाज के इस उदासी काल मे, सबसे अगली पंक्ति मे स्वा० श्रद्धानन्दजी ही दिखाई दिये, जिनके परिश्रम और अपार धैर्य ने इस केस मे विजय प्राप्त की यह था स्वामी जी का कठिन काल का नेतृत्व जिसने आर्य समाज जगत पर छाई हुई उदासी को अपने कानूनी चातुर्य स तिरोहित किया। इस सफलता से आर्य समाज की गौरवगरिमा खूब बढ़ी और आर्य समाज पंजाब मे द्रुतगति से बढ़ने लगा।

जिस समय हिन्दू राज्य धौलपुर में मुसल्मान दीवान ने, आर्य समाज से चिढ़कर, आर्य-समाज के हवन कुंड को अपवित्र किया और उसको तुड़वा दिया, तो आर्य समाज मे एक हलचल मच गई। उस समय एक वैदिक संन्यासी की तरह स्वामी श्रद्धानन्द ने सर्वमेध यज्ञ करके (सर्वस्व को त्याग कर) "कार्यं साधयिष्यामि वा शरीरं पातयिष्यामि वा" का व्रत धारण किया। जहा पहिले था 'वही हवन कुंड बनेगा या वहीं पर मेरा शरीर पूरा होगा' ऐसा व्रत करके स्वामी श्रद्धानन्द जी दिल्ली से चलकर धौलपुर पहुच गये और समाज रक्षार्थ स्थानान्तरो से आये हुए आर्य-समाजियों के देखते २ स्वामी जी अटल व्रत मे आसीन हो गये, खाना-पीना सब छोड़ दिया। फिर क्या था सारे देश मे इस घोर व्रत की लहरें बिजली की तरह फैल गई। रेजिडेण्ट और वायसराय के दरबारो मे हल चल मची और डगमगाने लगा धौलपुर नरेश का राज-सिंहासन। स्वामी जी का आमरण व्रत सफल हुआ और धौलपुर के मुस्लिम दीवान को अपने कृत्यपर क्षमा मांगनी पड़ी—और फिर बनाया गया राजकोष से वहीं पर हवन कुण्ड और पक्का आर्यसमाज भवन। स्वामी जी के इस व्रत सफलता से यह कहावत पूर्ण चरितार्थ हो गई कि आर्य-समाजी व्रत के पक्के होते हैं।

राजनीति के विकट संघर्ष में

प्रसिद्ध १९१४ ई० के योरुपीय महायुद्ध के पश्चात् जब ब्रिटिश सरकार ने, भारतीयो की युद्ध सेवा के उपलक्ष मे, लोक प्रसिद्ध रौलट ऐक्ट का पुरस्कार भारत को प्रदान किया तो सारे देश मे उसके विरुद्ध बेचैनी के बादल छा गये। इस बेचैनी और विरोध को शान्त करने के लिए, गवर्न्मेंट ने अपने शस्त्रों का दिल खोल कर, बिना किसी संकोच के प्रयोग किया। पंजाब के जलियान वाला बाग़ मे तो उसके गोरे सिपाहियो ने दिल खोलकर खून की होली खेली और उस

होली में बेशुमार बाल वृद्ध स्त्री पुरुषों को मशीन गनों से भून डाला गया। जिस समय पंजाब के अमृतसर आदि में मैशीन गनों से निरपराध नर-नारियों को मारा जा रहा था, ठीक उसी समय दिल्ली म घंटा घर के पास उस ऐक्ट के विरुद्ध रोष प्रकट करने के लिए जमा होकर जन समूह स्वामी श्रद्धानन्द जी का शान्ति पूर्वक उपदेश सुन रहे थे तो उसी समय, एक गोरे अफसर की कमान में शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित फौज के सिपाहियों ने वहां पहुंच कर, स्वामी जी को लक्ष्य करके अपनी बन्दूक की गोली तान दी। बन्दूक का निशाना लगाना था कि स्वामी जी ने उसके सामने अपनी छाती को खोल दिया और सिपाही को गोली चलाने का संकेत किया, गोली अवरुद्ध होगई और निशाना रुक गया। स्वामी जी उस गोली से बच गये और इस प्रकार राज-नीति के विकट संघर्ष में आर्यवीरत्व का साक्षात परिचय देकर, वीरवरों में आर्य समाज के गौरव को चार चांद लगाये।

पतित पुनरावर्तन

जिस समय भारत राष्ट्र स्वतन्त्रता के संग्राम में जूझ रहा था उसने अपने सर्वस्व को दाव पर लगाया हुआ था, ठीक उसी समय, स्वतन्त्रता के शत्रु, तबलीगी मुसलमानों ने युक्त प्रान्त के मथुरा आगरा आदि जिलों में अपना तबलीगी झण्डा आरोप कर तबलीग का काम आरम्भ कर दिया, सैंकड़ों मुल्ला मौलवी ग्रामों में पहुंच गये, और शताब्दियों से शान्त, रामकृष्ण की पूजा करने वाले नव मुस्लिमों को, जो वास्तव में मुसलमान नहीं थे—कट्टर मुसलमान बनाने का काम चालू कर दिया हिन्दुओं की निर्बलता और उनकी भूल से लाभ उठाकर हिन्दुओं के देवी-देवताओं को पेट भर भर गाली दी जाने लगी और यह निकट ही था कि उन नाम मात्र के मुसलमान राजपूतों को हिन्दुओं से सर्वथा को अलग कर दिया जाय कि गुरु का बाग, आन्दोलन में सिक्खों का सहयोग देने के कारण, जेल के सींखचों में बन्द स्वामी श्रद्धानन्द ने दूर दृष्टि से इसको देखा और विचारा कि यदि शीघ्र ही तबलीगियों के इस घातक आन्दोलन को न रोका गया तो हिन्दुओं का निकट भविष्य बड़े संकट में पड़ जावेगा। इसलिए ज्योंही स्वामी जी जेल से बाहर आये-स्थिति का अच्छी तरह से स्वाध्याय किया, और प्रमुख नेताओं से विचार विमर्श करके १३ फर्वरी १६२३ ई० को—

शुद्धि सभा की स्थापना

आगरा में की और वहीं पर उसका प्रधान कार्यालय बनाया गया। हिन्दू समाज से बिछुड़े हुए भाइयों को पुनः हिन्दू समाज में शामिल करने का कार्य आरम्भ हुआ और उसमें सफलता भी मिलने लगी। शुद्धि आन्दोलन से सबसे अधिक जो लाभ हुआ वह है मनोवृत्ति का परिवर्तन। जो लोग शुद्धि का विरोध करते थे वे भी आज इस विचार के बन गये हैं कि मुसलमान आदि किसी भी मजहब का आदमी हिन्दू बनाया जासकता है। शुद्धि की धारा वेग के साथ बह रही थी। इसी बीच में कुछ तबलीगी मुसलमानों से प्रेरित अब्दुलरशीद नामक एक मुसलमान ने डबल नमोनिया रोग से ग्रस्त स्वामीजी पर २३ दिसम्बर १६२६ ई० को शाम के चार बजे पिस्तौल की गोलियों से कायरता पूर्ण आक्रमण किया। उन

(शेष पष्ठ ४८३ पर)

चतुर्दश समुल्लास की टीका

(लेखक—प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस)

(२)

समीक्ष्यपद १ से सम्बन्ध रखने वाले शब्द—आरम्भ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करने वाला दयालु—के विषय में लिखा जा चुका है। इसी समीक्ष्य पद में—मंजिल, सिपारा और सूरत—शब्द ऐसे हैं जिनके विषय में पाठकों को कुछ जान लेना चाहिये:—

मंजिल शब्द का अर्थ है—उतरने का स्थान, पड़ाव, यात्री के विश्राम का स्थान, हवेली। यह शब्द अरबी भाषा का है। जो लोग समस्त कुरान का पाठ सात दिनों में पूरा करना चाहें उनको प्रत्येक दिन जिस स्थल तक पढ़ना चाहिये उस स्थल तक को एक मंजिल कहा जाता है। इस कारण सारा कुरान सात मंजिलों में विभक्त है। अरबी व्याकरण के अनुसार मंजिल का बहुत वचन मनाजिल है।

सिपारा शब्द फारसी का है। वास्तव में सी और पारा से बना है। सीपारा के बदले सिपारा ही प्रायः प्रयोग में आता है। सी का अर्थ है तीस और पारा का अर्थ है टुकड़ा। कुरान में तीस भाग हैं। ऐसी अवस्था में होना तो यह चाहिये था कि पूरे कुरान का नाम सीपारा या सिपारा होता किन्तु केवल एक ही अंश को सिपारा कहे जाने की प्रथा चल पड़ी है।

वास्तव में अरबी का शब्द जुज़ (अर्थात भाग या अंश) है जिसके लिये भारत में सिपारा या पारा प्रयोग किया जाता है। मैंने कुरान की ऐसी अनेक प्रतियां देखी हैं जिनका प्रकाशन मिश्र या टर्की से हुआ है। सभों में जुज़ शब्द ही मिला है। टर्की या मिश्र की भाषा फ़ारसी नहीं। ऐसी अवस्था में यदि वहां के प्रकाशित कुरानों में फ़ारसी का पारा शब्द न मिले तो कोई आश्चर्य नहीं, परन्तु आश्चर्य यह है कि ईरान की छपी हुई कुरान की प्रतियों में भी अरबी शब्द जुज़ ही मिलता है फारसी का शब्द पारा नहीं मिलता।

साफ बात यह है कि भारत में इसलाम ईरान (फ़ारस) होकर आया। भारत में फ़ारसी का ज़ोर रहा, इस कारण अनेक अरबी शब्दों के बदले में अनेक फ़ारसी शब्दों को स्थान मिल गया है। उदाहरण के रूप में जानना चाहिये कि ईदुल-अजहा के बदले में ईद कुरबां बना और फारसी का ज़ोर कम होने के पश्चात् हिन्दी या उर्दू का ज़ोर बढ़ा तो अरबी के बदले में हिन्दी या उर्दू शब्द प्रयोग में बढ़ा जैसे आशूर के बदले में मुहर्रम की दसवीं और बारावफ़ात में बारा शब्द फ़ारसी या अरबी का नहीं। निस्सन्देह इसको हिन्दी या उर्दू का कहना चाहिये। अस्तु जुज़ के स्थान पर पारा

(४८२ पृष्ठ का शेष)

गोलियों के लगते ही, महा कर्मठ दूरदर्शी और अनुभवी नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी शुद्धि की बलि वेदी पर आहुत हुए। नश्वर शरीर छोड़ने से पहिले स्वामी जी ने आर्य जाति के नाम अपने सन्देश में कहा, कि—

"मैं इस शरीर को छोड़कर, नया शरीर धारण कर शुद्धि के द्वारा देश व जाति की सेवा करूंगा।"

स्वामी जी अब संसार में नहीं है,'किन्तु उनके महान् नेतृत्व के अभाव को अनुभव कर आर्य-जगत् तत्समान नेतृत्व की खोज में इतस्ततः देख भाल कर रहा है।

या सिपारा शब्द भारत में प्रयोग किया जाता है इस कारण मैं लेख मे पारा ही शब्द प्रयोग करूंगा। हां, यह भी स्पष्ट रहे कि जो लोग चाहते हैं कि पूरे कुरान का पाठ एक मास अर्थात ३० दिन मे समाप्त करें उनके लिये प्रत्येक पारा से स्पष्ट रहता है कि उनको प्रत्येक दिन कितना पढना चाहिये। फ़ारसी व्याकरण के अनुसार पारा का बहुवचन पाराहाय है और अरबी व्याकरण क अनुसार जुज़ का बहुवचन अजज़ा होता है

सूरत शब्द अरबी भाषा का है। इसका बहु बचन सोवर होता है। इसका अथ है—श्रेष्ठता, किन्तु मुसलमानों की दृष्टि मे कुरान का ऐसा अश सूरत समझा जाता है जो हज़रत मुहम्मद साहब की आज्ञानुसार निश्चित हुआ है।

कुरान में कुल ११४ सूरतें हैं। किसी किसी सूरत के दो या अनेक नाम हैं जैसे सूरत मुहम्मद का नाम सूरत क़ताल है और सूरत इस्राअ का नाम सूरत बनी इस्राईल भी है और सुभान भी।

११४ सूरतो मे से कवल ११३ के पूर्व बिस्मिल्ला हिरहमानिर्रहीम है, सूरत बरात अर्थात् तौबा क पूव नही है। कोई कोई सूरत बहुत बड़ी है जैस सूरत बकर और कोई कोई बहुत छोटी जैस सूरत इख़लास और सूरत फील।

जिस सूरत मे जिस विशेष बात या घटना का उल्लेख है उसी के विचार स उसका नाम है जैसे सूरत निसा (स्त्रिया) का नाम इस कारण है कि उसमें स्त्रियो स सम्बन्ध रखने वाली बातें हैं। दूसरी सूरत मे गाय वाली घटना का उल्लेख है। इस कारण इसका नाम सूरत बक़र है। इस प्रकार के सब नाम हज़रत मुहम्मद साहब के काल में ही रखे गये थे।

पारा के विचार से सारा कुरान तीस भागों में है और सूरतें कुल ११४ हैं। ऐसी अवस्था में अनुमान यह होता है कि एक पारा मे ३ या ४ सूरतें होगी किन्तु कोई-कोई सूरत ऐसी है जो पारा से बड़ी है जैस दूसरी सूरत बक़र मे ढाई पारें हैं और कोई कोई पारा भी ऐसा है जो कई सूरतों के मिलने पर भी बड़ा ठहरता है जैसे पारा ३० मे ३७ सूरतें हैं और उन्तीसवें में ११ हैं

किसी पारा का नाम किसी विवरण या घटना के कारण नहीं रखा गया है बल्कि जो शब्द आरभ में आता है उसी स उसका नाम पड़ गया है। किसी किसी पारा का भी गणेश किसी सूरत में प्रारम्भिक शब्दो के साथ है जैसे तीसवे पारा के प्रारम्भिक शब्द वहीं है जो सूरत नबा के हैं अन्यथा दोनो के प्रारम्भिक शब्दो में अनेक स्थलों मे भिन्नता है।

कोई सूरत किसी पारा से चाहे कितनी ही छोटी हो किन्तु उसका पद पारा स श्रेष्ठ माना जाता है क्योकि किसी स्थान मे मैंने यह लिखा हुआ नहीं देखा कि अमुक पारा के पढ़ने से यह लाभ होता है। अनेक सूरतो (छोटी या बड़ी) के पाठ करने का फल अनेक लोगो ने कुछ न कुछ अवश्य लिखा है। उदाहरणाथ जानना चाहिये कि एक छोटी सी सूरत इख़लास के हज़ार बार पाठ करने का फल एक लेखक ने लिखा है कि बन्दी बन्धन से मुक्त होजाता है। हां, सूरत की श्रेष्ठता इस बात से भी स्पष्ट होती है कि कुरान के वाक्यो (आयतो) की गणना सूरत के विचार से होती है न कि पारा के विचार से अर्थात् यह अमुक सूरत का अमुक संख्या वाला वाक्य न कि अमुक वाक्य अमुक पारा का।(क्रमश):

स्वर्गीय अमरशहीद श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज के संस्मरण में

(लेखक—श्री स्वामी अभेदानन्दजी पटना-बिहार)

आज ६-१२-४६ को सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय 'बलिदान भवन' देहली में बैठे २ आर्य जगत के सुप्रसिद्ध विद्वान श्री० पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० वर्तमान मन्त्री सार्वदेशिक सभा से, आर्य समाज के सम्बन्ध में भिन्न २ पहलुओ से विचार करने मे निमग्न था। यकायक हरदोई समाज के मन्त्री कुछ अन्य आर्य्य सदस्यो के साथ कमरे में प्रविष्ट हुये। नमस्ते, प्रणाम के पश्चात् उन लोगो ने कहा, कि हम लोग उस स्थान को देखना चाहते है, जहाँ पर श्री० स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का बलिदान हुआ था।

उपाध्याय जी और मैने उन नवागन्तुक आर्य बन्धुओ के साथ आगे बढ़ कर उस कमरे को खुलवाया। उपाध्याय जी ने, २० वर्ष पूर्व घटित घटना का विवरण—"स्वामी जी का पलंग कहा था, हत्यारा अब्दुर्रशीद किधर से आया, कहा बैठकर पानी पिया, स्वामी जी का सेवक धर्मसिंह कहां था, स्नातक धर्मपाल जी ने हत्यारे को कैसे अधिकृत किया आदि २ बातें सुनाई। मैने उन लोगों का ध्यान कमरे की दीवाल पर चित्रित चित्र की ओर आकृष्ट किया, जहा पर विशालकाय शोणितपूर्ण वक्षस्थल वाले अमर शहीद स्वामीजी का शव अपनी गोद मे लिये, देहली के प्रमुख आर्य्य अपनी निधि लुटाकर मूक बैठे हैं।

जहा चित्र के साथ टाइमपीस मे ३॥ बजने और २३ दिसम्बर सन् २६ की तिथि का अङ्कन आर्य्य-जाति के शिरमौर कल्याणमार्ग के पथिक का प्रयाण काल बतला रहा है।

सब लोग कमरे से बाहर आये। अपने २ स्थान पर चले गये। मेरे हृदय में उद्विग्नता और बेचैनी सी प्रतीत होने लगी। स्वामी जी महाराज का स्मरण बार २ होने लगा। अपनी उस बेचैनी और उद्विग्नता को शान्त करने तथा अमर शहीद की २० वीं निर्वाण तिथि मनाने के अवसर पर आर्य्य-जगत के समत्त कुछ अपना संस्मरण रख कर, भावी कार्य-क्रम के लिये नूतन उत्साह और प्रेरणा प्राप्त करने के निश्चय से निम्न पंक्तिया लिख रहा हूँ। विद्वद्वर्य श्री० पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति सम्पादक सार्वदेशिक ने कहा कि स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज से तो आपका साक्षात् सम्बन्ध रहा, कुछ स्वामी जी के संस्मरण में लिखिये। मुझे सारी घटनाये स्मरण हो उठीं जबकि स्वामी जी उक्त पं० धर्मदेव जी के और पं० भीमसेनजी के साथ कलकत्ते के दौरे में थे। ये लोग उस समय स्नातक नहीं हुये थे।

इस समय आर्य्य समाजो एवं आर्य्यसमाजी पत्रो मे आर्य्यसमाज के विद्वानों के भाषण और वक्तृत्व आर्य्य यूनिवर्सिटी बनाने के सम्बन्ध में सुनने और पढ़ने को मिल रहे हैं। परन्तु मुझे यह आर्य्य जनता को स्मरण दिलाते हुये हर्ष होता है, कि, स्वर्गीय स्वामी जी महाराज से, गोरखपुर, छपरा और कलकत्ते में मुझे स्वय आर्य्य यूनिवर्सिटी के सम्बन्ध में वार्तालाप करने

का अवसर मिला था, उस समय स्वामीजी ने कहा था कि, आगे चलकर आर्य्यसमाज को एक आर्य्य यूनिवर्सिटी पृथक बनाने मे सफलता मिल सकती है, परन्तु इस समय यदि आर्य्यसमाज, सारे गुरुकुलो की एक पाठविधि और एक परीक्षा क्रम बनाकर संगठित हो सके, तो भी बहुत बड़ी सफलता समझनी चाहिये।

२—कॉग्रेस के द्वारा असहयोग आन्दोलन छिड़ने पर जब सरकारी स्कूलो और कालिजों का बहिष्कार आरम्भ हुआ और स्थान २ पर राष्ट्रीय पाठशालाय और विद्यापीठ खुलने लगे, तो स्वामी जी ने, स्वर्गीय विपिन चन्द्रपाल और श्यामसुन्दर चक्रवर्ती से कलकत्ते मे कहा, कि 'आर्य्यसमाज ने तो १९ वर्षो से गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को चालू करके, सरकार से असहयोग किया है। शिक्षा अपने हाथ ही मे होनी चाहिये। इसे पूरा पूरा सफल बनाने के लिये अपनी National University भी होनी चाहिये।

३—स्वामी जी के व्यक्तित्व के प्रभाव का उल्लेख अनेक स्थलो मे किया गया है, परन्तु मुझे एक घटना सन् २० ई० की स्मरण हो रही है। जब कांग्रेस का विशेष अधिवेशन स्वर्गीय लाला लाजपतराय जी की अध्यक्षता मे कलकत्ते में चल रहा था, पण्डाल मे एक हलचल सी मच गई। सीटी बजी, स्वयंसेवक पण्डाल से बाहर जाने लगे। पता चला कि पंजाबी और बंगाली स्वयंसेवकों और विद्यार्थियो मे बाहर किसी प्रश्न को लेकर मारपीट हो रही है। आर्य्य प्रतिनिधि सभा बङ्गाल-बिहार के मन्त्री श्री डा० मानाराम को भी सख्त चोट आ गई है। स्वर्गीय महामना पं० मालवीय जी तथा महात्मा गाधी जी ने स्वामी जी को बाहर जाकर भीड़ शान्त करने का आग्रह किया। स्वामी जी के बाहर पहुचते ही लोगों ने चुप्पी साधी और ज्योंही स्वामी जी ने अपनी विशाल भुजा उठाई, लोग शान्त हो गये। आर्य्य समाज मन्दिर कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता मे सर्व श्री लाला दुलीचन्द्र, लाला लाजपतराय, डाक्टर नाग, श्यामसुन्दर चक्रवर्ती, विपिन चन्द्रपाल और स्वामी जी के मध्य विचार विमर्श हुआ और सारा झगड़ा शान्त कर दिया गया।

४—स्वामी जी के सारे भारतवर्ष में दौरे का कार्यक्रम बना। शुद्धि आन्दोलन जोरों पर था। मलकानोंकी शुद्धि धड़ल्ले से होरही थी, स्वामीजी महाराज का आगमन "बस्ती" मे हुआ। जब स्वामी जी के स्वागत की तय्यारियां हो रही थीं लोगो मे हलचल थी, जगह २ पर यह चर्चा थी, कि स्वामी जी के लेकचर से हिन्दू-मुस्लिम दंगा हो जावेगा। एक दिन पूर्व युक्त प्रदेश के गवर्नर महोदय बस्ती आचुके थे। हाकिम हुक्काम बड़े जागरूक और प्रबन्ध मे लगे थे। मैं उस समय "बस्ती जिला कांग्रेस कमेटी" का प्रधान था। कुछ कांग्रेस कार्य्यकर्ताओं और स्वयंसेवकों ने मेरे पास आकर जानना चाहा, कि, क्या कांग्रेसी लोग स्वामी जी के स्वागत, जलूस और सभा में जा सकते हैं ? मैंने कहा, "मैं स्वयं चल रहा हूँ। सबको चलना चाहिये। ऐसे बड़े महात्मा, देश और धर्म के सेवक हमारे नगर में आवें, और हम लोग उनके दर्शन को न चलें, हमारा यह कैसा नैतिक पतन होगा।" स्टेशन पर दस हजार मनुष्यों की भीड़ थी। हिन्दू और मुसलमान सभी लोग कौतूहलपूर्ण भावना से स्वामीजी की गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

स्वामी जी गाड़ी से उतरे

अपूर्व समारोह के साथ स्वागत हुआ, जलूस निकला। बा० दौलतराम ऐडवोकेट की पुरानी बस्ती वाली कोठी में स्वामी जी को ठहराया गया। शहर में यही बात चल रहीं थी, कि मुसलमानों को हिन्दू बनाने वाले बड़े स्वामी आये हैं।

दूसरे दिन टाउन स्कूल के मैदान में सार्वजनिक सभा हुई। स्वामी जी का भाषण शुद्धि, हिन्दू-संगठन, अछूतोद्धार विषयों पर मिलाजुला हुआ। स्वामी जी ने कहा अपने डिफेन्स (रक्षा) की तय्यारी में हमें नहीं चूकना चाहिये। कमजोरी दूर करके मर्द मैदाँ बन कर काम करना चाहिये। केवल एक ईश्वर का खौफ करो। स्वामी जी ने व्याख्यान में कुछ ऐसी चिट्ठियों का उदाहरण भी दिया, जिसमें उन्हें मुसलमानों की ओर से धमकी दी गई थी। व्याख्यान समाप्त करते हुए अन्त में कहा, "मुझे क्या धमकी देते हो, मैं सर पर कफन बाँध कर ही बाहर निकला हूँ।" व्याख्यान का वर्णन शहर में सभी जगह होने लगा। सुशिक्षित मुसलमान नागरिकों ने कहा, कि, स्वामी जी निर्भीक बे खौफ और पौलिटिक्स समझने और रखने वाले व्यक्ति हैं, इनके भाषणों से कभी दंगा हो ही नहीं सकता।"

स्वामी जी महाराज से मैंने पूछा, कि क्या आर्य्य समाज के काम करने के लिये हमको काँग्रेस से अलग हो जाना चाहिये? स्वामी जी ने मेरी पीठ पर हाथ रख कर कहा, "अरे भाई नहीं, आर्य्यसमाज सारी उन्नति की जड़ है। देश के पूर्ण स्वाधीन होने और अपनी सरकार बन जाने के पश्चात् भी आर्य्यसमाज की आवश्यकता इस देश और विदेशों को, व्यक्ति और समाज की उन्नति के लिये होगी। आर्य्यसमाज का आन्दोलन कोई सामयिक (Seasonal Movement) नहीं है। यह तो धार्मिक और सारी मानवता के कल्याण के लिये है।

५—एक बार मैं अपने कुछ मित्रो के साथ श्री वारीन्द्र कुमार घोष (श्री० अरविन्द बाबू पाण्डिचेरी के छोटे भ्राता) से मिलने गया। वार्तालाप के सिलसिले में मैंने पूछा, कि क्या आप स्पेशल कांग्रेस में गये थे? उन्होंने कहा, हाँ, मैंने पुनः पूछा, कि असहयोग आन्दोलन वाले प्रस्ताव की सफलता के सम्बन्ध में आपका क्या विचार है? उन्होने कहा, "प्रस्ताव तो अनेक होते आते हैं, परन्तु इस बार महात्मा गाँधी जी और स्वामी श्रद्धानन्द जी का नेतृत्व देश को बहुत आगे बढ़ायेगा, ऐसी मेरी धारणा है।"—

६—स्वामी जी महाराज देश की उन तीन विभूतियों में एक थे, जिन्हें, आचार-विचार कथनोपकथन, राज-काज, स्वराज और स्वाधीनता की बात या कार्य्य करते हुये, धर्म की सीमा की रक्षा का सर्वदा और सर्वथा भाव बना रहता था, उन तीन विभूतियों से मेरा अभिप्राय, अमर शहीद स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज, विश्ववन्द्य महात्मा गाधी जी महाराज और पूज्य महामना प० मदन मोहन मालवीय से है। अपने २ भिन्न २ दृष्टिकोण रखते हुये भी तीनों एक थे। अभिन्न थे। इस वर्ष मालवीयजी के स्वर्गारोहण के पश्चात् अब महात्मा गाधी जी ही राजनैतिक क्षेत्र में हिन्दुधर्म को मानवधर्म को पर्याय समझकर उसकी उपयोगिता समझने और मानने वाले व्यक्ति हैं।

उपर्युक्त पंक्तियों को लिखकर मै आर्यजगत को एक बार पुनः उस संगठन और अनुशासन प्रिय, निर्भीक और मनस्वी सन्यासी की याद दिलाकर, यथाशक्ति उसके त्याग और तप के गुणों को अपने जीवन मे लाने और महर्षि दयानन्दजी महाराज के सच्चे स्मारक "आर्य-समाज" को वर्तमान संकीर्णता और कटुता से ऊंचा उठाने की हार्दिक अपील करता हूँ। अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का स्मारक तो सबसे बढ़कर गुरुकुल है। गुरुकुल प्रणाली को उपयोगी बनाना और सारे गुरुकुलो को एक संगठन मे लाना, आयसमाज के सामने अपनी भावी उन्नति करने का सुन्दर प्रश्न है।

अपने वानप्रस्थ और सन्यासी, साधु महात्मा महानुभावो से अमरशहीद की याद मे अपने २ प्रचार और कार्यक्षेत्र को बढ़ाने और बनाने की भी हार्दिक प्रार्थना है।

स्वामी श्रद्धानन्द एक महान् पुरुष थे

(लेखक—श्री ला० लछ्मूरामजी, आनन्दाश्रम, लुधियाना)

अमरशहीद स्वा० श्रद्धानन्द जी के जीवन की एक विशेषता रही है। एक सच्चे शूरवीर सन्यासी की तरह जहां भी आवश्यकता हुई तुरन्त ही पहुंच कर अपनी छाती और सिर की बाजी लगाई। हमें यह कहने की आवश्यकता नहीं कि स्वा० श्रद्धानन्द जी आर्य सामाजिक क्षेत्र में सबसे पहिले अगुआ थे जिन्होंने जात-पात के भूत को पछाड़ते हुवे एक आदर्श स्थापित करके आर्यसमाज का मुख उज्ज्वल किया और जब देखा कि वर्तमान शिक्षा धर्म के मार्ग में एक रुकावट है तो स्वा० श्रद्धानन्द जी ने ही संस्कृत की पवित्र वाणी को स्थिर रखने के लिये गुरुकुल कागड़ी की स्थापना की। जब भी आवश्यकता हुई तो वे झट वैदिक धर्म के प्रचार कार्य में लग गये। जब अपने देश में अपने अधिकारों के लिये आन्दोलन आरम्भ हुआ तो उसमें भी आप सबसे अगली पंक्ति में डट रहे थे। जब मालावार की घटना के बाद आर्य हिन्दुओं को यह आवश्यकता हुई कि शुद्धि के बिना काम न चलेगा तो स्वा० श्रद्धानन्द ही थे जिन्होंने शुद्धि का झण्डा हाथ में लेकर इस कार्य को सफल किया और शुद्धि का झण्डा ऊंचा रखने में ही अमरशहीद होगये। हिन्दू सगठन करने में आप शहीद होने तक तत्पर रहे। पिछले दिनों जब उनको अनुभव हुआ कि जबतक जंजीरों ने भारतवासियों को जकड़ रखा है और वे स्वतन्त्र होकर उन्नति नहीं कर सकते तो आपने जात-पात तोड़क मण्डल को अपना कर उसको कार्य क्षेत्र में आगे लाकर खड़ा किया। यह सब कुछ जो स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज कर पाए सब महर्षि दयानन्द के मिशन की सफलता का सबसे बड़ा सबूत है। स्वामी जी का सारा जीवन ही ऋषि दयानन्द पर विश्वास रखने की बड़ी भारी साक्षी है। स्वा० श्रद्धानन्द जी का बलिदान हम सबके लिये शहीदी जीवन के आदर्श का काम देगा और ऋषि दयानन्द के मिशन के अनुयायियों के लिये ज्योति स्तम्भ का काम देगा।

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के पहले नियम में लिखा है—"सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।"

स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज ने सत्यविद्या की प्राप्ति के लिये अनथक कोशिशों से गुरुकुल विश्व-विद्यालय कागड़ी के नाम से एक शानदार युनिवर्सिटी कायम की। इस एक पहिली ही मिसाल से कई और जगह गुरुकुल खुल गये और सफल होरहे हैं।

आर्यसमाज के छठे नियम में वर्णन है "संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है।" स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज ने इस नियम की पूर्ति के लिये जीवन भर कार्यक्षेत्र मे जो कुछ भी किया है वह किसी से छिपा नहीं है।

आर्यसमाज के ८वें नियम में लिखा है कि "अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।"

अमरशहीद स्वा० श्रद्धानन्दजी ने इस नियम

के पालन के लिये ही गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय को उच्चशिखर पर बलपूर्वक पहुचाने का यत्न किया जहा ऋषि दयानन्द जी की शिक्षा का झण्डा ऊंचा होरहा है।

स्वामी जी सन्यास लेने के पश्चात कुछ जमकर गुरुकुल मे नहीं बैठे परन्तु भ्रमण करते समय भी गुरुकुल की उन्नति को ओझल नहीं होने दिया।

स्वामीजी गुरुकुल कागड़ी और आर्यसमाज के कार्य के अतिरिक्त सकुचित क्षेत्र से बहुत आगे निकल गये थे। उन्होंने दूर २ प्रान्तों का दौरा करके ऋषि दयानन्द के मिशन का प्रचार भली भान्ति करके आर्यसमाज के नाम को चार चाद लगा दिये।

स्वा० श्रद्धानन्द जी एक महान् पुरुष थे। हमारा कर्त्तव्य है कि अमरशहीद स्वामी जी महाराज के चरण चिह्नो पर क्रियात्मक रूप में चलकर ही उनकी पवित्र स्मृति मनावें और अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ावें इसी में हमारा कल्याण है।

दिव्य जीवन का दिव्य संदेश

(लेखक—स्वा० मेधानन्द जी सरस्वती)

"अग्निनाग्निः समिध्यते" ऋ० १।१२।६

"श्रद्धयाग्नि समिध्यते" ऋ० १०।१५१।१

जब हम सामान्य रूप से आर्य (हिन्दू) जाति और विशेष रूप से आर्य समाज की वर्तमान अवस्था पर गम्भीर विचार करते हैं तो हमें दिव्य जीवन धारी स्वर्गीय श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का विशेष रूप में स्मरण हो जाता है। ऋग्वेद के उपरि लिखित वाक्यों में वर्णित जिस महती सत्यता को अपने जीवन में अर्थात मुन्शीराम जी से महात्मा मुन्शीराम और तत्पश्चात् स्वा० श्रद्धानन्द जी बनकर परिणत किया था उसकी आज सामान्यरूप से मनुष्य जाति विशेषरूप से आर्य (हिन्दू) जाति और अति विशेष रूप से आर्य समाज को अत्यन्त आवश्यकता है । आओ आज इस बात का थोड़ा सा स्पष्टीकरण करें। जब ऋषि दयानन्द सरस्वती के साथ ला० मुन्शीराम जी का संपर्क हुआ तब न तो उनके विचार अच्छे थे और न ही आचार। ऋषि के जीवन से उनके विचार और आचार में ऐसा अद्भुत परिवर्तन हुआ कि उन्होंने संसार में महान् कार्य का सूत्रपात और सम्पादन किया।

गुरुकुल और महात्मा मुन्शीराम जी

शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल और महात्मा मुन्शीराम जी चिरस्थायी और चिर स्मरणीय हो गए हैं। जब विदेशी शिक्षा भारतीय नवयुवकों को विदेशी सांचे में ढाल कर दास मनोवृत्ति को उत्पन्न कर रही थी उस समय स्वदेशी भाषा, आचार, आहार और व्यवहार युक्त गुरुकुल की स्थापना जिन महान् आदर्शों और उद्देश्यों को लक्ष्य में रखकर की गई थी उनकी पूर्ति में अनेक कारणों से चाहे कितनी ही कठिनाई और देरी क्यों न हो तथापि यह तो मानना ही पड़ेगा कि शिक्षा संसार में जो महती क्रान्ति हुई है उसका बहुत कुछ श्रेय उस दिवंगत आत्मा आर्य (हिन्दू) जाति के उस महान् नेता महात्मा मुन्शीराम जी को है।

सच्चे नेता का दिव्य संदेश

जब कभी मुझे श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज के जीवन पर कुछ बोलने का अवसर मिलता है तो मैं प्रायः कहा करता हूँ कि जिस वस्तु ने मुन्शीराम जी को महात्मा मुन्शीराम और महात्मा मुन्शीराम जी को स्वा० श्रद्धानन्द बना दिया वह "श्रद्धा" ही तो है। क्या उस श्रद्धा का बल आज कुण्ठित हो गया है ? नहीं २ किन्तु उसे हृदय में अनुभव तो करना चाहिये इत्यादि। आर्य मित्र के यशस्वी सम्पादक श्री पं० हरिशङ्कर जी शर्मा ने अपने एक सम्पादकीय लेख में लिखा था। जिसका शीर्षक "नेता चाहिए, नेता !" यह था—"जब तक अमर शहीद स्वर्गीय श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज अपने बुद्धि कौशल द्वारा त्याग और तप के प्रभाव से आर्य समाज के विशाल बोहित का संचालन करते रहे तब तक समाज में नेता का अभाव किसी को नहीं खटका । समाज को विश्वास था कि उसका एक सूत्रधार है नेता है, पथप्रदर्शक है, जो समय पड़ने पर अपना सर्वस्व निछावर करता हुआ आर्य समाज की रक्षा में निर्भय भावना से अपना विशाल वक्षः स्थल अड़ा

देगा। सचमुच स्वामी जी ने ऐसा ही किया। वह समाज के जहाज को भयङ्कर से भयङ्कर आपत्तियो की चट्टान से बचाकर सुरक्षित रूप से निकाल ले जाने मे समर्थ हुए। स्वामी श्रद्धानन्द किसी के बनाने से नेता नहीं बने। नेता बनाये नहीं जाते स्वत अपनी निर्भय भावना और तप त्याग के प्रभाव से इस पद तक पहुचते है। जिन नामधारी नेताओ मे त्याग-तप का लेश और निर्भयता का सम्पर्क भी नहीं है वे अपने आपको बडे से बडा महारथी क्यों न समझलें, कोई शिष्टाचारवश उन्हें प्रसन्न करने के लिये भले ही 'नीडराधिराज' क्यों न कहदे परन्तु ससार उन्हें नेता स्वीकार नहीं कर सकता। स्वा० श्रद्धानन्द को ससार आर्य समाज का एक मात्र नेता समझता था। साहित्यिक क्षेत्र हो या राजनैतिक, सरकार हो या दरबार, अमीर का महल हो या गरीब की झोपड़ी, सब मे स्वामी श्रद्धानन्द जी आर्य समाज के सबसे बडे नेता समझे जाते थे। इत्यादि २

ऐसे नररत्न ने शिक्षा, शुद्धि, दलितोद्धार, हिन्दू सगठन और स्वराज्य क्षेत्र में जो महान् कार्य किया उसका यही दिव्य सन्देश है कि हम भी श्रद्धावान्, मेधावी, धीर, वीर और उदार बनकर न केवल अपने किन्तु अपने परिवार, समाज और राष्ट्रोद्धार के लिये आज महान् त्याग और तप के लिये समुद्यत हो जावें। हमारे विशाल देश की विषम परिस्थिति आज हम से विशेष तप और त्यागपूर्वक महान् कार्य करने कराने की माग कर रही है जिसे हम खुली आखो से देखें और सुनें और तदनुकूल आचरण करें और करावें।

श्रद्धेय श्रद्धानन्द

(लेखक—पंडित बालमुकुन्द जी मिश्र)

एक दिन उनका दो शब्दों का 'मुन्शीराम' नाम था। जिसमें एक हिन्दी और दूसरा अहिन्दी शब्द था। 'मुन्शी' का अर्थ है—लेखक और 'राम' का अर्थ पौराणिक-अपौराणिकता से सरक कर है—रम रहे संसार में राम (प्रभु)। दोनों अलग-अलग शब्दों की संगति मै तो नमक-मिर्च के साथ यूं ही लगाना पसंद करूंगा—अच्छे (मुंशी) लेखक ने ईमान्दारी के साथ आजीवन, उन्होंने विश्व में रम रहे प्रभु राम की सेवा के साथ-साथ, कर्त्तव्यनिष्ठता के साथ उनकी काया उनके समर्पण करदी। इसलिये वे हमारे आदर के पात्र हैं।

दूसरे किसी दिन उन्होंने अपना नाम रखा श्रद्धानन्द। इसका भी संधिविच्छेद करलें तो मजा रहे, जिसका आकार बनता है श्रद्धा=आनन्द। अब अपनी उधेड़बुन को पूरा करलें श्रद्धा के मानवीय मूर्त-पुंज ने श्रद्धा साहस, दुनिया के अंतिम छोर यानी सत-चित् से भी दो कदम आगे तीसरे कदम पर जहाँ आत्मा का पूर्ण रूप आनद (सच्चिदानन्द) है, उसकी देहली पर अपने को समर्पित कर दिया था। और अपने अंतिम श्वासों तक मस्ती के साथ झूमते हुए जग के *असहाय जीवों की सर्वस्व-रूपेण सेवा करते रहे,* इसलिये वे हमारी चर्चा के एक प्रशस्त विषय हैं।

जिसकी हम आज याद कर रहे हैं। वस्तुतः वह कुछ था तभी तो हम अपनी स्मृति में उसे कुछ स्थान दे सके हैं। वह कौन था? कैसा था? इस बात को जानने के लिए हम दूर क्यों भटकें, उसकी साधन और लगन के प्रतिफल की ओर ही हम अपनी नजर क्यों ना निहारलें!

गुरुकुल कांगड़ी उसकी आकांक्षा का एक साकार प्रकार है। जहा उसके बनाये ढांचे के नीचे ज्ञान-दान-प्रदान किया जाता है। उस साहसी पुरुष की सच्ची धारणा ने गुरुकुल-कांगड़ी जैसे स्मरण को, प्रेरणाओं के बल-बूते पर रच दिया। पर नींव की ईंट श्रद्धानन्द जैसी भारी-भरकम हस्ती नमूने के तौर पर कोई ही निर्माण कर सकी गई होगी। उनकी आशा आंशिक रूप मे पूर्ण हुई, पर उनके कई स्वप्न स्वप्न ही बनकर रह गये!

उस तपस्वी पुरुष के शेष चिन्हों में से एक गुरुकुल-कांगड़ी से थोड़ी दूर पर अनवरत रूप से प्रवाहित पतित-पावनी गंगा की पवित्र-धारा आज भी वैसे ही वही चली जा रही है, जैसी उनके सामने। और गुरुकुल मे इठलाती रहने वाली ज्ञानपरम्परा की विद्युत् धारा भी वैसी ही आज तक है जैसी उनके सामने पर जैसे गंगा ने अपना मार्ग अपनी वा मानव की बलात् इच्छानुरूप बदल लिया वैसे ही वहा के विचार वायु-मण्डल मे भी कुछ २ परिवर्तन हो चुका है, जितना युग आगे निकल चुका है।

केवल गुरुकुल-कांगड़ी के निर्माण तक ही उनकी सेवायें सीमित नहीं रहीं प्रत्युत उन्होंने अपनी सेवाएं भारतीय राष्ट्रीय महासभा के अर्पण की थीं इसलिये वे 'राष्ट्र सेवक' थे। हिन्दू-महा-सभा के एक दिन वे प्रमुख सचालक थे। इसलिये वे 'हिन्दुत्व-सरक्षक' थे। वे एक हिन्दी

ने 'सद्धर्म-प्रचारक' और 'श्रद्धा' पत्र को निकालते थे, इसलिये वे 'कुशल पत्रकार थे। उन्होंने मजहब-ए-इस्लाम की आलोचना की थी और उनकी वैदिक साहित्य मे रुचि और प्रगति थी इसलिये वे 'साम्प्रदायिक आलोचक और साहित्यिक' थे। युग के प्रदीप दयानन्द के संदेश को उन्होंने जीवन में विशुद्ध रूप से ग्रहण किया था, इसलिये वे ऋषि दयानन्द के प्रतिनिधि और आर्य-समाज के प्रमुख 'नेता' थे।

और वे क्या-क्या थे। यह बात उनके भक्त-जनो और आर्य-समाज के अतीत इतिहास पृष्ठों से अच्छी भांति जानी-पहिचानी जा सकती है। पर वे महान् थे, असाधारण थे, उनका व्यक्तित्व श्रेष्ठ था, उच्च था और अन्ततोगत्वा उनके द्वारा निर्मित सुन्दर कारनामों का ही प्रताप है जो उनकी विरुदावली आजतक अक्षुण्ण है।

यह प्रश्न कभी समाप्त होने वाला नहीं कि वे और क्या थे? ऐतिहासिक महा-पुरुष के शब्दों में अन्त में उनके प्रति उद्गार समर्पित हैं—

"मालूम नहीं, स्वा० श्रद्धानन्द जी का अंतिम संदेश क्या था? परन्तु निस्सन्देह परमात्मा से यही प्रार्थना की होगी कि परमात्मा कातिल को क्षमा करदे।"

महात्मा गांधी

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएं

बंगाल में रक्षा तथा सहायता कार्य

विज्ञप्ति नं० ५

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मान्य प्रतिनिधि श्री राजगुरु प० धुरेन्द्र जी शास्त्री, श्री स्वामी अभेदानन्द जी तथा श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा तथा २० स्वय सेवको के दल ने फौज की सहायता से १२।११।४६ स लेकर २०।११।४६ तक रायपुर और रामगज थानो के उन ग्रामो मे दौरा किया जो मुस्लिम गुंडों के घेरे में थे। इस दल ने चांदपुर, चौमुहानी, नौआखाली, दन्तपाड़ अमिशापाड़ा, सुमातोली, लक्ष्मीपुर आदि २ ग्रामो की स्थिति का निरीक्षण किया।

चौमुहानी और रामपुर मे आर्य समाज के सहायता केन्द्र खोल दिये गये हैं। अनुमान है और भी बहुत से केन्द्र खोलने होगे। चौमुहानी स्थित सेना गुंडों की गिरफतारी के काम मे व्यस्त है। १२।११।४६ को उसने आस पास के ग्रामों से ५० गुंडों को गिरफ्तार किया है। अभी सब गुंडे नहीं पकड़े गये हैं। शरणार्थी बहुत आतंकित है। ग्रामों को वापस लौटना नहीं चाहते क्योंकि पुलिस ने उपद्रवों के दिनों में उनका रक्षा न करके अपने प्रति उन लोगो का विश्वास गंवा दिया है। सरकार से सुरक्षा की पूरी पूरी गारन्टी लेने और उसकी समुचित व्यवस्था हो जाने के बाद ही अपने ग्रामों को लौटेंगे। इस दल ने चौमुहानी में महात्मा गान्धी तथा ठक्कर बापा से भी भेंट की थी।

चौमुहानी केन्द्र के संचालक श्री प० सदाशिव जी और रायपुर केन्द्र के संचालक श्री डा० माधव राव सौफ्ट है। इन केन्द्रो से शरणार्थियो और पीड़ितो मे अन्न, वस्त्र, दूध और औषधिया वितरण की जा रही है। हजारो व्यक्ति वे घरबार के दयनीय अवस्था मे फिर रहे है जो उपद्रव के समय केवल मात्र शरीर पर पहने हुये कपड़ो के सिवा अपने साथ घर की कोई वस्तु न ल जा सके थे। पीड़ित क्षेत्र क प्राय सब ग्राम खाली हो गये हैं। कवल २४ आदमी अपनी कष्ट कहानी सुनाने क लिए अवशिष्ट रह गये है। इस भगदड़ मे गर्भवती देवियो क कष्टो और मुसीबतो का सहज ही अनुमान किया जा सकता है। शरणार्थी केन्द्रो मे उनके प्रसव हुये है और इनकी देखभाल आदि की उचित व्यवस्था की जा रही है।

जिन हजारो हिन्दुओ को आततायियो ने बलात् मुसलमान बनाया था उन्हें हिन्दू धर्म पुन वापस लाने का यत्न जारी है। प्रसन्नता की बात है कि उन्हें हिन्दू धर्म मे वापस लाने मे कठिनाई नहीं पड़ रही। गायत्री मन्त्र के उच्चारण और कंठी धारण करने मात्र से हिन्दू अपने धर्म मे वापस आ रहे हैं। सब से बड़ी प्रसन्नता की बात यह है कि अब बंगाल के हिन्दुओ मे वह पुरानी निकृष्ट भावना नहीं रही है जब पुरुष देवियों को विधर्मियो के छूने मात्र स त्याग दिया करते थे। इस उपद्रव के समय जिन देवियो को मुसलमानो ने बलात् पतित किया था, लगभग उन सबको उनके पतियो वा अभिभावको ने सहर्ष अंगीकार कर लिया है। भगाई हुई तथा बलात मुसलमानो के साथ विवाहित देवियो के उद्धार की समस्या अभी भी जटिल बनी हुई है।

आर्य नेता अपने बगाल के पीडित क्षेत्रो का दौरा करके वापस आगये है। सहायता तथा रक्षा कार्य के लिये तत्काल लाखो रुपयो की आवश्यकता है। जिस गति से आर्य समाजें और जनता बंगाल पीडितो की रक्षा तथा सहायता कार्य के विषय मे अपने कर्तव्य का पालन कर रही है वह उत्साहवर्द्धक है। उनके उत्साह को देखते हुये आशा है बात की बात में लाखो रुपया एकत्र हो जायेगा। इस समय तक सभा के कोष में १५८२८॥=)॥ प्राप्त हुआ है। ज्यो ज्यो धन आ रहा है कलकत्ता भेजा जा रहा है।

आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता की सूचना है कि अभी वहा स्वयं सेवको के भेजने की आवश्यकता नहीं है। कलकत्ता में राशन आदि की विशेष कठिनाइया हैं। आवश्यकतानुसार स्वयं सेवक भेजे जायेंगे।

बगाल पीड़ितों की सहायता
[(विज्ञप्ति न ६)

पूर्वी बगाल मे अब तक आर्य समाज रायपुर और चौमुहानी दो केन्द्रो से सहायता तथा रक्षा का कार्य हो रहा था अब आपचार स्थान पर तीसरा केन्द्र और खोल दिया गया है। सहायता कार्य जोरो से चल रहा है।

२२।११।४६ को कलकत्ता से आर्य वीरो का तीसरा जत्था पूर्वी बगाल के क्षतिग्रस्त क्षेत्रो मे भेजा गया है। २०७ कम्बल, बच्चों के ८०० फ्राक १०० कमीजें आदि वस्त्र भेजे गये हैं। बंगाल सरकार ने हमारी रिलीफ सोसाइटी को वितरण करने के लिये १००० मन अन्न, आटा, चावल, दाल या मटर जौ दिया है। क्रिश्चियन ऐसोसियेशन सोसाइटी ने २०००० विट मिन टेबलट (गोलियाँ)तथा १ पेटी दूध हमारे द्वारा वितरण के लिये दिया है।

इसके अतिरिक्त, इस समय तक अर्थात् २३।११।४६ तक लगभग ८०००) का वस्त्र ३०००) के ५०० कम्बल, २० टीन सूखा दूध, १० मन दाल ३५० मन आटा, ३५० मन चावल, २० मन नमक ५ बोरी दालें, १ बोरी चीनी, २० हजार विटामिन टेबलेट (गोलिया) पुराने कपड़े, चूड़ियां, और सिन्दूर कलकत्ता रिलीफ सोसाइटी की ओर से केन्द्रो में भेजा गया है। आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के अधिकारी वस्त्रों तथा धन के साथ कलकत्ता जा रहे हैं।

रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता ने लिखा है कि कार्य भली भाँति हो रहा है। काम बहुत महान् है। धन की अत्यन्त आवश्यकता है।

इस समय तक सभा से २००००) बीस हजार रुपया कलकत्ता भेजा जा चुका है। ज्यों २ धन आ रहा है भेजा जा रहा है। आर्य समाजें और आर्य जनता को अपनी प्रगतियों को और भी बढ़ाना होगा जिससे शीघ्र ही लाखों रुपये इस कार्य के लिये हमारे निपटाय पर हो जायें और हम निश्चिन्तता पूवक रिलीफ व रक्षा का काम कर सकें।

कलकत्ता में राशन की बड़ी कठिनाई है। अतएव स्वय सेवको को बिना इस सभा या आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी १९ कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता से पूर्व स्वीकृति प्राप्त किये नहीं आना चाहिये।

बंगाल पीड़ितों की सहायता
विज्ञप्ति न. ७

रायपुरा पुलिस स्टेशन के अन्तर्गत यूनियन न १ में आर्यसमाज का तीसरा रिलीफ(सहायता)

केन्द्र गाइबर में खोल दिया गया है। यहाँ लगभग ११००० पीड़ित व्यक्तियों की रक्षा व सहायता की उत्तरदायिता ली गई है। अबतक कोई रिलीफ सोसाइटी इस क्षेत्र तक नहीं पहुँची थी। सरकारी सहायता सन्तोषजनक नहीं है। ये लोग बड़े कष्ट में हैं। लोगों का भूखों मरना और अन्य प्रकार के कष्टों से दुखी होना देखा नहीं जाता। २०-११-४६ को आर्यसमाज के कार्यकर्ता और स्वयं सेवक सेना के संरक्षण मे वहाँ पहुँचे और लोगों में अन्न, कम्बल, साड़ियाँ, धोतियाँ और अन्य वस्त्र वितीर्ण किये गये। वहाँ के हिन्दुओं को मुस्लिम गुण्डो ने पहले मौत का भय दिखाकर मुसलमान बनाया और बाद में हजारों की संख्या में उन गुण्डो ने आक्रमण करके उन्हीं मुसलमान बने हुये हिन्दुओं को लूटा उनके घरों को आग लगाकर जलाया, नष्ट भ्रष्ट किया और उन निर्दोष पुरुषों से घरों के शून्य होजाने पर उनकी स्त्रियों के जेवर लूटे, उनमें से कुछ के साथ पाशविकता और लज्जा को लजाने वाले जघन्य पापाचार किये।

उन गुण्डो ने पुत्रों, पुत्रियों, पत्नियों तथा अन्य सम्बन्धियों के सामने घर के बड़े लोगों का कत्लेआम किया। जब घर के कुछ लोगों ने गुण्डो से कहा कि हम मुसलमान बन चुके हैं फिर हम पर अत्याचार क्यों किये जाते हैं तब उन राक्षसो ने उन लोगों को कत्ल करके उन्हें मुसलमान बनने का पारितोषिक दिया। जेवर, नकदी आदि के अतिरिक्त गुण्डे लोग घर के भोजन बनाने के बर्तन आदि सब उठाकर लेगये। अन्य केन्द्रों के हजारों व्यक्तियों सहित इन ११००० शरणार्थियो (रायपुर के केन्द्र के) के रक्षण आदि का दायित्व भारत के प्रत्येक आर्य व हिन्दू पर है।

रिलीफ केन्द्रो से निरन्तर धन कम्बल, धोतियों, साड़ियों तथा अन्य वस्त्रो की (भले ही वे नये हों व पुराने, किन्तु फटे हुये न हों) मांग आ रही है। जो कार्य करना है उसका आठवां भाग भी पूरा नहीं हुआ है। निश्चय ही सरकारी सहायता के अतिरिक्त आर्यसमाज को भी १५-१६ लाख रुपया व्यय करना होगा।

इस समय तक ४० हजार हिन्दू जो बलात मुसलमान बनाये गये थे आर्यसमाज के प्रयत्न के फल स्वरूप पुन: हिन्दू धर्म मे वापस आगये हैं।

आर्यसमाज के सहायता केन्द्रो को सेना, पुलिस और सर्वसाधारण जनता का सहयोग मिल रहा है और बंगाल की सर्व साधारण जनता आर्य समाज के आदर्शों और कार्य से बहुत प्रभावित हुई है।

इस सभा की ओर से अबतक ३० हजार रुपये आर्यसमाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता को भेजा जा चुका है। ज्यो ज्यो धन आ रहा है भेजा जा रहा है। प्रत्येक हिन्दू आर्य को इन पीड़ितो की रक्षा व सहायता के लिये ही नहीं वरन् हिन्दू समाज पर आई हुई तथा आने वाली विपत्ति के निराकरण के लिये अपना आर्थिक भाग उदारता पूर्वक इस कार्य में देना चाहिए।

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम. ए.
मन्त्री सा० आ०प्र० सभा देहली।

अंग्रेज अफसरों की सभा में वैदिक धर्म पर व्याख्यान

एक मद्रासी मित्र द्वारा जो युद्धोत्तर पुनर्निर्माण (रिसेटिलमेंट डाइरेक्ट्रेट) मे मेजर हैं

यह सूचना पाकर कि कुछ अंग्रेज अफसर हिन्दू धर्म पर आकिन् लेक हाल ऐलाइड् केन्टीन्स क्वीन्सवे नई देहली में १३ दिसम्बर की रात को आपका भाषण सुनना चाहते हैं जिसमें वैदिक धर्म, पौराणिक हिन्दू मत और आर्य समाज विषयक चर्चा हो। पं० धर्म देव जी विद्यावाचस्पति का० प्रधान अखिल भारतीय आर्य कुमार परिषत् सम्पादक "सार्वदेशिक" उक्त स्थान में पहुंचे। और उन्होंने अंग्रेजी अफसरों के सामने मि० ऐलन् की अध्यक्षता में अंग्रेजी में वैदिक धर्म, मध्यकालीन हिन्दू मत और आर्य समाज पर व्याख्यान दिया जिस में वैदिक धर्म के मुख्य मुख्य तत्वों (१) एकेश्वरपूजा (२) मनुष्य मात्र की भ्रातृता (३) गुण कर्म पर आश्रित वर्णाश्रम व्यवस्था (४) आत्मा की अमरता (५) कर्म नियम और पुनर्जन्म (६) स्त्रियों की उच्च स्थिति (७) प्राणियों पर दया (८) यज्ञ भावना इत्यादि पर तुलनात्मक दृष्टि से प्रकाश डाला और अनेकेश्वरवाद मूर्तिपूजा, जन्मसिद्ध जाति भेद, अस्पृश्यता, बाल विवाह प्रथा, पर्दा, स्त्रियों की हीन स्थिति आदि पौराणिक प्रथाओं की वैदिक धर्म से विरुद्धता को प्रति पादित करते हुये बताया कि आर्य समाज इन हानिकारक तथा तर्क विरुद्ध प्रथाओं को दूर करके सार्वभौम, तर्क संगत तथा वैज्ञानिक वैदिक धर्म के विशुद्ध रूप में पुनरुद्धारार्थ प्रयत्न करता है। शिक्षा तथा समाज सुधार के क्षेत्र में आर्य समाज द्वारा की गई सेवाओं का भी संक्षेप से दिग्दर्शन कराया गया। लगभग १। घंटे तक पं० धर्म देव जी ने भाषण दिया जिसके पश्चात् उपस्थित अफसरों ने शिक्षा, तिलक, आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति, साधारण हिन्दुओं की आर्यों के प्रति भावना, वैदिक धर्म और बौद्ध मत का सम्बन्ध, वैदिक धर्म और ईसाई मत इन विषयों पर प्रश्न किये जिनका व्याख्याता महोदय ने सन्तोषजनक उत्तर दिया। भाषण के और शंका समाधान के अन्त में श्रोताओं ने अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट करते हुये इस प्रकार के भाषण समय समय पर पुनः करवाने की इच्छा प्रकट की जिसे प० धर्म देव जी ने सहर्ष स्वीकार किया। आशा है शीघ्र ही कुछ अन्य व्याख्यान धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक विषयों पर होंगे।

❀ गुरुवर के प्रति ❀

फिर अपना सन्देश सुनादो ॥ ध्रुव

सिंहनाद से भारत को फिर,
गुरुवर आन गुंजा दो ॥

आर्य जाति है अबतक सोई,
इसने निज मर्यादा खोई।
बात न इसकी सुनता कोई,
इसको सबल बना दो ॥

जात पात का भूत भयानक,
अस्पृश्यता रोग हित नाशक।
बने जाति के ये संहारक,
इनको आन भगा दो ॥

हृदय तुम्हारा ब्रह्ममन्दिर,
भक्ति भरी थी इसके अन्दर।
आर्य जाति में वही ही सुन्दर,
भक्ति भाव फिर यते ! भरादो ॥

सच्चा प्रेम दिखाई देवे,
नाम देव का सब जग लेवे।
वैदिक धर्म विश्व सब सेवे,
ऐसी उत्तम ज्योति जगा दो ॥

ऐक्य संगठन सब में होवे,
प्रेम धर्म का कोइ न खोवे।
पाप ताप का मल जग धोवे,
ऐसा अद्भुत शङ्ख बजा दो ॥

वर्णाश्रम धर्मों का पालन,
स्वामी के वचनों का धारण।
द्वेष भाव का पूर्ण निवारण,
यह सन्देश सुनादो ॥

धर्म देश अनुराग भरा हो,
सेवा मय शुभ त्याग भरा हो।
भारत का उद्यान हरा हो,
ऐसी वेद ध्वजा फहरा दो ॥

धर्मदेव विद्यावाचस्पति 'ध्रुव'

सम्पादकीय

अमर धर्मवीर का अमर सन्देशः—

इस अङ्क में पाठक महोदय अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी के सम्बन्ध में अनेक उत्तम लेख और कविताएं पाएंगे। वेदोपदेश तथा अध्यात्मसुधा इन स्तम्भों में इस वार स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के 'सद्धर्म प्रचारक' में प्रकाशित अपने लेख अविकल रूप से दे दिये गये हैं ताकि पाठक उनके अपने उपदेशों से अधिक लाभ उठा सकें। श्रद्धेय स्वामी जी का दिव्य अमर सन्देश भी हम पाठकों के समक्ष उनके ११-५-२५ को अपने नाम लिखे पत्र के स्फूर्तिदायक शब्दों में रखना ही उचित समझते हैं जो स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं। यह सन्देश दक्षिण भारत के आर्यों के लिये विशेष रूप से भेजा गया था अतः अंग्रेजी में था जिसका यथार्थ अनुवाद निम्न प्रकार है:—

"इस बात को कृपा कर न भूल जाओ कि वैदिक धर्म का सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय के साथ नहीं है, नाहीं यह मत या मजहब है, यह सनातन (नित्य) धर्म है जिसके बिना जगत् की सामाजिक स्थिति असम्भव है।

तुम्हें वह चाबी दी गई थी जो प्राचीन काल में असंख्य आध्यात्मिक कोषों को खोलती थी और अब भी तुम्हारा ही यह अधिकार हो सकता है कि पीड़ित जगत् को तुम शान्ति प्रदान करो।

किन्तु सबसे पहिले तुम्हें अपनी अपवित्रताओं को दूर करना होगा। आज एक गम्भीर प्रतिज्ञा करो कि

(१) तुम पञ्च महायज्ञों के अनुष्ठान में न चूकोगे।

(२) तुम अस्वाभाविक जातिभेद की जजीरों को तोड़ डालोगे और वर्णाश्रम व्यवस्था को अपने जीवन में क्रियात्मक रूप दोगे

(३) तुम अपने देश से अस्पृश्यता के अभिशाप का समूलोन्मूलन कर दोगे (अछूतपन को जड़ से उखाड़ कर फैंक दोगे और आर्य समाज रूपी सार्वभौम धर्म मन्दिर को तुम मत, सम्प्रदाय, जाति आदि के भेद के बिना मनुष्य मात्र के लिये खुला रक्खोगे।"

स्वामी श्रद्धानन्द जी के गुणगान में जितना समय लगाया जाता है हमें खेद है कि उनके इस अमर सन्देश को क्रियात्मक रूप देने की ओर उतना ध्यान नहीं दिया जाता अन्यथा आर्य समाज का काया कल्प हो जाता। आर्य समाज के अनेक सदस्यों और सहायकों के अपने जीवनों में पर्याप्त निर्बलता और अपवित्रता पाई जाती है इस से इन्कार नहीं किया जा सकता। ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या-स्वाध्याय) देवयज्ञ (हवन) पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ और अतिथियज्ञ का नियम पूर्वक श्रद्धापूर्वक अनुष्ठान करने वाले आर्य विशेषतः आर्य परिवार कितने विरले हैं? पोप

लीला के स्थान पर लोपलीला ही अधिकतर दृष्टि गोचर होती है जो आर्यों के जीवना को नीरस बना रही है। जन्मसिद्ध जातिभेद और उसकी पुत्री अस्पृश्यता की राक्षसी ने अब भी अनेक आर्यों को अपने चगुल मे फसा रखा है जिससे दलितोद्धार, शुद्धि और सगठन विषयक आन्दोलनों के प्रबल होने में बड़ी बाधा पड़ रही है। वर्णाश्रम व्यवस्था को क्रियात्मक रूप देने वाले आर्यों की संख्या अधिक नहीं है विशेषतः वान स्थाश्रम की मर्यादा का पालन करने वालो की संख्या तो अङ्गुलियों पर गिनी जा सकती है जिसके कारण गुरुकुलादि सस्थाओं के लिये सुयोग्य अनुभवी कार्यकर्ता मिलने में कठिनाई होती है।

हमारा सब आर्य बन्धुओ से जो अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति आदर का भाव रखते हैं यह निवेदन है कि वे श्रद्धेय स्वामी जी के उपर्युक्त दिव्य सन्देश को क्रियात्मक रूप देने का अधिक से अधिक प्रयत्न करें क्योंकि आर्यसमाज की यथार्थ उन्नति इनको आचरण मे लाने पर ही निर्भर है आर्य नेताओं को भी अपने अन्दर श्रद्धेय स्वामी जी के दिव्य गुणो को लाने का निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिये। किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि

अनुगन्तु सतां वर्त्म, कृत्स्नं यदि न शक्यते।
स्वल्पमप्यनुगन्तव्यं, मार्गस्थो नावसीदति॥

अर्थात् महापुरुषो के मार्ग पर यदि हम सम्पूर्णतया नहीं चल सकते तो भी जहा तक सम्भव हो चलना ही चाहिये। जो उत्तम मार्ग पर चलता है वह दुःख नहीं पाता।

दलित वर्ग के कई भ्रान्त नेता लीगियों के जाल में:—

मुस्लिम लीग ने अपने निश्चित अंश में से श्री जोगेन्द्र नाथ मण्डल नामक एक दलित वर्ग के सज्जन को अन्तःकालीन सरकार में लेकर उन्हें तथा दलित वर्ग के कुछ अन्य तथा कथित नेताओं को अपने जाल में फंसा दिया है। ऐसे भ्रान्त तथा कथित 'नेता' मुस्लिम लीग को अपनी आश्रय दात्री संस्था मानकर इस प्रकार का असङ्गत परामर्श अपने अनुयायियो को देने मे भी संकोच नहीं कर रहे कि सब दलित वर्ग के नर नारियों को आर्य हिन्दू धर्म से सम्बन्ध विच्छेद करके मुस्लिम मत और सस्कृति को अपना लेना चाहिये। यह हर्ष की बात है कि अन्तः कालीन सरकार के श्रमसचिव माननीय जगजीवनराम जी, भक्त अमीर चन्द्र जी प्रधान मन्त्री अ० भा० हरिजन लीग तथा अन्य दलित वर्ग के कई नेताओ ने एस परामर्श को सर्वथा असङ्गत और हानिकारक बताते हुए इन तथा कथित भ्रान्त नेताओ से सावधान होने की दलित वर्ग के लोगों को चेतावनी दी है। आर्य समाज तथा उसकी अधीनस्थ संस्थाए प्रारम्भ से ही दलितोद्धार के पवित्र कार्य में अपनी शक्ति और धन का उपयोग करती रही है। सुप्रसिद्ध विचारक स्व० रोमा रोला ने महर्षि दयानन्द को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए ठीक ही लिखा था कि

Dayananda would not tolerate the abominable injustice of the existence of untouchables and no body has been a more ardent Champion of their outraged rights.

They were admitted to the Arya Samaj on a basis of equlity, for the Aryas are not a Caste."

(Life of Rama Krishna P 162)

अर्थात् दयानन्द ने अस्पृश्यता के निन्दनीय अन्याय को कभी सहन नहीं किया और उनसे बढ़कर दलितो के अपहृत अधिकारो का प्रबल समर्थक कोई भी नहीं हुआ। वे (अस्पृश्य माने जाने वाले व्यक्ति) समानता के आधार पर आर्य समाज में प्रविष्ट किये गये क्योंकि आर्य कोई जाति नहीं।

इस प्रशंसोक्ति के अन्दर सत्य का अधिकतर अंश होने पर भी आर्य समाजो और संस्थाओं को दलितोद्धार विषयक आन्दोलन की प्रगति को अधिक तीव्र करने की आवश्यकता है जो जन्म सिद्ध जाति भेद की घातक प्रथा पर कुठाराघात करते हुए ही सम्भव है। हमारा सब आर्यों से अनुरोध है कि वे अस्पृश्यता के कलङ्क का समूल नाश करके समस्त जनता के सम्मुख एक अनुकरणीय आदर्श स्थापित करें ताकि किसी को भी लीग के साथ गठबन्धन का विचार तक न उत्पन्न हो।

आर्य कविरत्न का उचित सन्मानः—

समस्त आर्य जगत को यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई है कि सुप्रसिद्ध आर्य कवि स्व० पण्डित नाथूराम जी 'शङ्कर' शर्मा के सुपुत्र, 'आर्यमित्र'के यशस्वी सम्पादक श्री प०हरिशङ्करजी शर्मा को उनकी अत्युत्तम कृति 'घास पात' पर २०००) का देव पुरस्कार इस वर्ष प्राप्त हुआ है। सार्वदेशिक सभा की ओर से मान्य पण्डित जी का अभिनन्दन किया ही जा चुका है हम 'सार्वदेशिक' परिवार की ओर से कविरत्न श्री पं० हरिशङ्कर जी का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं और आशा रखते हैं कि भविष्य में भी उन्हें ऐसा ही सन्मान प्राप्त होता रहेगा जिसके वे सर्वथा अधिकारी हैं।

विधान परिषत् और उसका कार्य कलापः—

विधान परिषत के सर्व सम्मति से निर्वाचित सुयोग्य स्थायी अध्यक्ष डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने अपने ११ दिसम्बर के भाषण में यह घोषणा की कि 'विधान परिषत् अपना शासन स्वयं करने तथा अपने सम्बन्ध में सब निश्चय स्वयं करने वाली स्वतन्त्र सभा है जिसकी कार्यवाही में न तो कोई बाहरी शक्ति हस्तक्षेप कर सकती है और न इसके निश्चयो को रद्द, परिवर्तित व संशोधित कर सकती है। वास्तव में जो पाबन्दियां और सीमाएं इस परिषत् पर जन्म काल से लगाई गई हैं उनसे मुक्त हो जाना या उन्हें तोड़ डालना भी इस परिषत् के अधिकार मे है और मुझे आशा है कि आप देवियां और भद्र पुरुष जो यहां एक स्वतन्त्र स्वाधीन भारत का विधान बनाने के लिये इकट्ठे हुए हैं इन सीमाओं और पाबन्दियों से छुटकारा पा लेंगे और संसार के सामने एक ऐसा आदर्श विधान पेश करने मे समर्थ होंगे जो इस देश के रहने वाले विभिन्न वर्गो, सम्प्रदायों और धर्मों के लोगो को सन्तुष्ट कर सके और प्रत्येक को कार्य, विचार, विश्वास तथा पूजा की स्वतन्त्रता प्रदान करे, जो प्रत्येक को उच्च तम स्थिति तक पहुंचने के अवसर दे, जो प्रत्येक व्यक्ति को सब दृष्टियो से स्वतन्त्रता की गारन्टी दे। इत्यादि

प्रत्येक स्वतन्त्रता प्रिय व्यक्ति इस घोषणा का स्वागत करेगा और विधान परिषत के कार्य में

पूर्ण सफलता की कामना करेगा इस में सन्देह नहीं यद्यपि ब्रिटिश शासक अपनी कूटनीति को काम में लाते हुए मुस्लिम लीग को प्रत्येक प्रकार का अनुचित प्रोत्साहन देकर इस परिषत् को असफल बनाने पर तुले हुए प्रतीत होते हैं। १५ मार्च सन् १६४६ में यद्यपि इङ्गलैन्ड के प्रधान मन्त्री मि०ऐटली ने यह स्पष्ट घोषणा की थी कि बहुमत की प्रगति को रोकने का अधिकार किसी अल्पमत को न रहेगा पर ६ दिसम्बर और १६ दिसम्बर के वक्तव्यों में मि० ऐटली तथा भारत-मन्त्री मि० पैथिक लारेन्स ने यह कहा है कि अनिच्छुक भागों पर इस विधान को लागू न किया जाएगा। ६ दिसम्बर के वक्तव्य में स्वयं विवादास्पद वर्गीकरणादि विषयों का सङ्घ न्यायालय (फेडरल कोर्ट) द्वारा निश्चय कराने का कांग्रेस नेताओं को निर्देश देकर अब १६ दिस० के लार्डसभा में दिये भाषण में भारत मन्त्री ने कहा है कि १६ मई की घोषणा का जो भावार्थ ब्रिटिश सरकार ने बतलाया है उस पर वह दृढ़ है और यदि सङ्घ न्यायालय से उस सम्बन्ध में अपील की गई तो भी वह (ब्रिटिश सरकार) किसी तरह उस से इधर उधर नहीं होगी। मैं यह बिल्कुल स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि ब्रिटिश सरकार यह नहीं मानती कि यह प्रश्न ऐसा है जिसे सङ्घ न्यायालय के सुपुर्द करना वाञ्छनीय हो।" इस प्रकार के वक्तव्यों से यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार मि० जिन्ना को अपनी ढाल बना कर विधान परिषत् के कार्य में रोड़े अटकाने का यत्न कर रही है जिसका क्रियात्मक प्रतिवाद कांग्रेस नेताओं को करना होगा। अन्तः कालीन सरकार के उपाध्यक्ष प० जवाहर लाल जी नेहरू ने १५ दिसम्बर को बनारस में इस सम्बन्ध में जो स्पष्ट घोषणा की है कि विधान परिषत् द्वारा निश्चित स्वतन्त्र भारत का विधान अन्तिम होगा चाहे ब्रिटेन इसे स्वीकार करे या न करे। हम किसी प्रकार के बाह्यहस्तक्षेप को अब सहन न करेंगे। वह अत्यन्त अभिनन्दनीय है और हमारा विश्वास है कि ऐसी दृढ़ता दिखाने से ही वर्तमान परिस्थिति में काम चल सकता है ब्रिटिश सरकार और उसके पिट्ठू मुस्लिम लीग के नेताओं के आगे गिड़गिड़ाने से नहीं।

किन्तु हम इस सम्पादकीय टिप्पणी द्वारा जिस विषय की ओर भारतीय नेताओं और विधान परिषत् के समस्त सदस्यों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं वह यह है कि स्वतन्त्र भारत का यह विधान मूल रूप से राष्ट्र भाषा हिन्दी में बनना चाहिये और विधान परिषत् का कार्य भी प्रधानतया राष्ट्र भाषा में ही होना चाहिये। उसका प्रामाणिक अंग्रेजी अनुवाद साथ साथ करने में कोई हानि नहीं किन्तु प्रधानता राष्ट्र भाषा को न देना दास मनोवृत्ति का सूचक होगा। कोई कारण नहीं कि स्वतन्त्र भारत के विधान का निर्माण करने वाली परिषत् के सब सदस्य क्यों न राष्ट्र भाषा में अपना कार्य कलाप करें। हमें पूर्ण आशा है कि मान्य देश नेता इस आवश्यक विषय की ओर अवश्य ध्यान देंगे।

दक्षिण अफ्रीका और भारतः—

यह प्रसन्नता की बात है कि भारतीय शिष्ट-मण्डल की नेत्री माननीया पण्डिता विजय लक्ष्मीजी दक्षिण अफ्रीका की भारतीय विरोधिनी नीति के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्रीय सङ्घ में विजय प्राप्त करके लौटी हैं। उन्होंने जिस योग्यता से अपना

न्यायसङ्गत पक्ष संयुक्त राष्ट्रीय सङ्घ के समक्ष रक्खा और जेनेरल स्मट्स की धूर्तता पूर्ण चालों को विफल कर दिया उसके लिये हम उनका आर्य जगत् की ओर से हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। ब्रिटेन तथा अमेरिका ने जिस प्रकार अनुदारता का परिचय दिया वह अत्यन्त निन्दनीय है। दक्षिण अफ्रीका की सरकार यदि अब भी वर्ण (रंग) विद्वेष मूलक अपनी नीतिका परित्याग करके भारतीयों को समानता के अधिकार दे तभी उसका वास्तविक गौरव बढ़ सकता है। अन्यथा समस्त न्यायप्रिय जनता की दृष्टि में वह अपने को और भी गिरा देगी। ध० दे०

जाति-भेद-निवारक आर्य-परिवार-संघ की रिपोर्ट

यह संघ वर्तमान जाति भेद को दूर करने, आर्य जाति मे परस्पर गुण कर्म स्वभावानुसार विवाह सम्बन्ध करने तथा सहयोग तथा सहानुभूति द्वारा आर्यों में परस्पर भ्रातृभाव उत्पन्न करने के लिए आर्य सार्वदेशिक सभा के संरक्षण में लगभग दस मास से स्थापित है। इस दस मास के स्वल्प काल मे ही संघ के पास अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अति न्यून साधन होते हुए भी संघ ने प्रशंसनीय कार्य किया है।

अब तक संघ के १५० के करीब सदस्य तथा ६ सहायक बन चुके हैं। इस समय संघ के सदस्यों के ३५ लड़के तथा २१ कन्याएं और ५ विधुर विवाह योग्य हैं। संघ इनके सम्बन्ध का भरसक प्रयत्न कर रहा है किन्तु सदस्यों की संख्या पर्याप्त न होने के कारण इस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं कर सका। पुनरपि संघ द्वारा जो सम्बन्ध निश्चित हुए हैं वह एक के अतिरिक्त केवल अन्तर्जातीय ही नहीं प्रत्युत अन्तः प्रान्तीय भी हैं। उन में से एक विवाह संस्कार अभी १९ नवम्बर को ही फिरोजाबाद जि० आगरा मे हुआ है। कन्या के पिता श्रीमान डा० प्यारेलाल जी फिरोजाबाद के कार्यकर्ता तथा जन्म से गहलोत राजपूत हैं। तथा वर सी० पी० के उत्साही युवक जन्म से श्रीवास्तव कायस्थ हैं। इस अन्तर्जातीय विवाह का युवकों पर इतना प्रभाव पड़ा कि विवाह संस्कार के समाप्त होते ही उसी समय पाँच युवक संघ के सदस्य बन गये। और एक युवक ने जो कि आगरा कालिज का विद्यार्थी है, यहां तक कहा कि हालांकि मेरा सम्बन्ध (वाग्दान मेरी बिरादरी में हो चुका है किन्तु मै इस सम्बन्ध को तोड़ कर भी अन्तर्जातीय विवाह करूंगा। दूसरा विवाह ६ दिसम्बर को सोजत (मारवाड़) में हुआ है। कन्या के पिता श्रीमान म० पन्नालाल जी नेत्र वैद्य जोधपुर स्टेट निवासी हैं तथा जन्म से भटनागर कायस्थ हैं और वर महोदय श्रीमान् पं० मेधातिथि जी जन्म से मेडक्षत्रिय तथा पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा के उपदेशक हैं। कन्या के पिता ने विवाह के अवसर पर लगातार तीन दिन तक पं० सुरेन्द्र शर्मा जी वेदतीर्थ, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, पं० रामसहाय जी आदि सुप्रसिद्ध २ विद्वानों को बुला कर संघ तथा वैदिक धर्म का प्रचार कराया है जिनका बड़ा उत्तम प्रभाव पड़ा। इस अवसर पर वधू पक्ष से ८७) और वर पक्ष से ३१) जाति-भेद निवारक संघ को दान रूप में प्राप्त हुए। अन्य आर्य संस्थाओं को भी पर्याप्त दान दिया गया। तीसरे सम्बन्ध में वर अरोड़ क्षत्रिय तथा कन्या के पिता जन्म से ब्राह्मण हैं। इसी प्रकार और भी कई सम्बन्धों के होने की शीघ्र सम्भावना है।

यदि संघ को एक योग्य उपदेशक मिल जाए और उसके द्वारा संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा सदस्यों की संख्या अधिक हो जाए तो इस प्रकार के अन्तर्जातीय विवाह पर्याप्त संख्या में होने प्रारम्भ हो जाएं। जिन विवाहों के द्वारा जहां संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा सदस्यों की वृद्धि हो वहां संघ को सहायता द्वारा आर्थिक सहयोग भी मिल जाए जिसके अभाव के कारण

संघ के कई महत्त्वपूर्ण कार्य रुके पड़े हैं । पहिले विवाह संस्कार में कन्या के पिता तथा वर महोदय ने संघ को २१-२१ रु० की सहायता प्रदान की है। अतः मैं दानी महानुभावों से प्रार्थना करूंगा कि वे संघ को पर्याप्त सहायता प्रदान करने की कृपा करें, जिससे कि संघ एक योग्य विद्वान् उपदेष्टा को रख कर संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा संघ के अधिक से अधिक सदस्य बनाने में अग्रसर हो सके।

प्रसन्नता की बात है कि एक कुरेशी खानदान की देवी जो कि बड़ी दबंग तथा सच्ची वीरा हैं वैदिक धर्म को स्वीकार कर संघ की सदस्या बनी हैं। संघ के पास जि० आगरा के एक स्थान से सूचना आई है कि एक नव मुसलिम परिवार जिसमें ९ सदस्य हैं शुद्ध होने को तय्यार है बशर्ते कि उसकी दो विवाह योग्य कन्याओं के विवाह का संघ प्रबन्ध कर दे। संघ की ओर से उन्हें लिख दिया गया है कि आप उस परिवार को शीघ्र ही शुद्ध कर लें। सङ्घ उस परिवार की दोनों कन्याओं का सम्बन्ध अपने सदस्यों के योग्य लड़कों के साथ अवश्य कर देगी। आप यह पढ़ कर प्रसन्न होंगे कि सङ्घ के एक सदस्य महोदय ने जो कि जन्म से ब्राह्मण हैं, मेरी प्रार्थना पर न केवल एक लड़के के साथ प्रत्युत अपने दोनों लड़कों के साथ दोनों कन्याओं का सम्बन्ध करना स्वीकार कर लिया है। अतः यदि आर्य जनता ने सङ्घ को अपना पूर्ण सहयोग दिया तो वह सङ्घ शुद्धि की समस्या को भी जिसके कारण कि अन्य धर्मावलम्बी वैदिक धर्म में प्रविष्ट नहीं हो रहे भली प्रकार से हल कर देगी।

सङ्घ ने श्रीमान् शरतचन्द्र जी बोस, बंगाल प्रान्तीय हिन्दू महासभा, आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल तथा मंत्री आर्य समाज कलकत्ता को पत्र दिए हैं कि यवनों द्वारा बलात् धर्म भ्रष्ट यदि किन्हीं विवाह योग्य कन्याओं को उनके माता पिता वापस लेनेको तय्यार न हों तो सङ्घ उन कन्याओं के विवाह का प्रबन्ध अपने सङ्घ के सदस्यों के साथ सहर्ष करने को तय्यार है। उत्तर में बंगाल प्रान्तीय हिन्दू महासभा का पत्र भी आ गया है जिसमे सभा के मंत्री महोदय ने लिखा है कि 'आपका पत्र मिला एतदर्थ धन्यवाद। आपकी सूचना को हमने अपने रजिस्टर में अंकित कर लिया है।'

सङ्घ द्वारा सङ्घके अध्यक्ष श्रीमान् प० गंगा प्रसाद जी रि० चीफ जज, श्रीमान् प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति उपाध्यक्ष तथा मैंने वर्तमान जात पात आदि के सम्बन्ध में आर्य पत्रों में कई लेख भी लिखे हैं तथा इस सम्बन्ध की सूचनाएं भी निकाली हैं। मुझे इस बात का बहुत खेद है कि एक "सार्वदेशिक" पत्र को छोड़ कर शेष आर्य पत्र संघ के प्रचार में अपना पूर्ण सहयोग नहीं दे रहे। मैं आर्य तथा सुधारक पत्रों के सम्पादकों, अधिकारियों से सानुरोध प्रार्थना करूंगा कि वे संघ के उद्देश्यों के प्रचार में हमें पूर्ण सहयोग दें। संघ सम्बन्धी लेख तथा सूचनाओं को अपने पत्रों में शीघ्र छाप देने की कृपा किया करें।

अन्त में हम हिन्दू जनता और विशेष कर आर्य जनता से आग्रह पूर्वक प्रार्थना करेंगे कि वह संघ को तन मन धन से अपना पूर्ण सहयोग देकर तथा संघ के सदस्य तथा सहायक स्वयं बन तथा अन्यों को बनाकर देश, जाति तथा समाज

(शेष पृष्ठ ५०८ पर)

आर्य कुमार जगत्

धार्मिक-परीक्षायें

विशेष सूचना

भारत वर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से भारत के विभिन्न केन्द्रों में जो सिद्धान्त शास्त्री, रत्न, सरोज आदि की धार्मिक परीक्षायें हुआ करती हैं वे इस वर्ष जनवरी के अन्तिम सप्ताह में न होकर फरवरी की २ और ६ तारीख को रविवार के दिन होंगी। क्योंकि देश में साम्प्रदायिक स्थिति ठीक न होने से कई केन्द्रों से आवेदन पत्र भरकर आने में कठिनता हुई है इसलिये आवेदन पत्रों के भरकर यहां आने की अन्तिम तारीख २० दिसम्बर करदी गई है और इसीलिये परीक्षाओं की तारीख फरवरी के प्रथम सप्ताह में रखी गई है। जिनके आवेदन पत्र अभी तक नहीं आ सके हैं वह उन्हें भरकर तुरन्त निम्न पते पर भेज दें।

डा० सूर्यदेव शर्मा एम. ए. डी लिट्
परीक्षा मन्त्री, भारतीय आर्य कुमार परिषद्
अजमेर।

श्री श्रद्धानन्द बलिदान सप्ताह और आर्य-कुमारों का कर्तव्यः—

अमर धर्मवीर स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज का बलिदान सप्ताह दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में समारोह पूर्वक मनाते हुए सब आर्य कुमार कुमारियों को श्रद्धेय स्वामी जी के आदेशानुसार ब्रह्मचर्यपालन और जातिभेद निवारण के लिये विशेष संकल्प करना चाहिये। वर्तमान अश्लीलता प्रधान सिनेमा आदि ब्रह्मचर्य विरोधिनी प्रवृत्तियों के वर्धक हैं अतः उनका पूर्ण बहिष्कार करते हुए ब्रह्मचर्य के नियमों का यथासम्भव अधिकतम पालन करना चाहिये और कम से कम क्रम से २५ तथा १६ वर्ष की आयु के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का विचार हो तो वह जाति बन्धन तोड़ कर केवल गुण कर्म स्वभाव का ध्यान रखकर ही करना चाहिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
का० प्रधान अ० भारतीय आर्य कुमार परिषद
देहली

(५०७ पृष्ठ का शेष)

की अवनति के मुख्य कारण वर्तमान जात पात को नष्ट करने में हमारा हाथ बटाकर यश के भागी बनें।

संघ ने सदस्य बनने तथा धन द्वारा संघ को सहायता देने की अपीलें भी छपाई हैं। जो सज्जन अपना सहयोग संघ के सदस्य बनने तथा आर्थिक सहायता कराने में देना चाहें वे संघ के कार्यालय अजमेर से छपी हुई अपीलें, सदस्यता तथा सहायकों के छपे प्रवेश फार्म तथा संघ के नियम तथा उद्देश्य मंगवालें। सदस्यता का वार्षिक शुल्क केवल ३) है।

आचार्य भद्रसेन
संचालक जातिभेद निवारक आर्यपरिवार संघ,
अजमेर

बंगाल पीड़ितों की सहायतार्थ दान-सूची
सार्वदेशिक सभा देहली
(गतांक से आगे)

२१७३०)॥ गत योग
४००) आर्य समाज तेली वाड़ा देहली।
५००) आर्य समाज सदर बाजार, देहली।
५००) आर्यसमाज सदर बाजार देहली, दूसरी कि०
१०००) वीर अर्जुन देहली।
१५०॥) आ० समाज मियावाली
५०) स्त्री आर्य समाज मियाँवाली
२५००) आर्य समाज दीवान हाल देहली।
१५०) आर्य समाज हनुमान रोड नई देहली।
३६८॥) आर्य समाज सूरत
१७०।) आर्य समाज मुरार ग्वालियर
१४०) आर्य समाज किला गूजर सिंह (पंजाब)
१००) आर्य समाज हसुआ (फतहपुर)
५०) हैडमास्टर मिडिल स्कूल माजरा (रोहतक)
३१=) आर्य समाज जहानाबाद (पीलीभीत)
२०) आर्य समाज जुमलार्जुनपुर डा० केसरगंज (बहराइच
१०) आर्य समाज जुमला जुनपुर डा० केसरगंज (बहराइच)
५०) आर्य समाज कुटसा पो० बनाव (सारन)१
१००) आर्य समाज सिवी (बलूचिस्तान)
२००) आर्य समाज जेवर (बुलन्दशहर)
३६) आर्य समाज उन्नाव
१०) आर्य समाज जुमलार्जुनपुर
२००) आर्य समाज मायग मफ़राग (सुलतानपुर)
२००) आर्य सामाज शाहपुरा
१००) आर्य समाज शाहपुरा दूसरी किस्त
१०२) आर्य समाज राघोगढ़ द्वारा श्री बाबू भवानी सहायजी वकील प्रदत्त।
१०१) आर्य समाज बकेवर (इटावा)
१००) श्री बंशीधर तिवारी वकील घुड मोमिनाबाद (निजाम स्टेट)
१००) आर्य समाज चौगामा (मुजफ्फरनगर)
८०) आर्य समाज नन्दराय (राजपूताना)
५१) आर्य समाज धासडा डा० रिवाड़ी(गुड़गांव)
३६) आर्य समाज काला बाग (मियावाली)
२०) आर्य समाज राजगढ़ (अलवर)
७८॥) आर्य समाज गंगागढ़ (डा० पहासू) (बुलन्दशहर)
६४) आर्य समाज निकुड (सहारनपुर)
२१) आर्य समाज गुरगावा डा० सेंथल (खेरली)
१५) आर्य समाज बिलकनाभा डा० रोला (आरा)
१०) श्री बद्रीनाथ रिटायर्ड ओवरसीअर स्यालकोट
१०) श्री नन्नू राम मलिक, कराची
१४३॥) आर्य समाज पहाड़ गंज देहली
१५००) सम्पादक'सन्देश'अहमदाबाद द्वारा संग्रहीत
५००) आर्य समाज कामोकी (गुजरावाला)
३५०) आर्य समाज औरया (इटावा)
१००० आर्य समाज सदर बाजार नागपुर
७६३) आर्य समाज मवाना कलां (मेरठ)
१५०) आर्य समाज जौनपुर
२५०) आर्य स० सरदारपुरा जोधपुर राजपूताना
८००) आर्य० विरानगर (गुजरात)

३००) आर्य समाज भरतपुर
३५७) आर्य समाज सिराढाग (हैदराबाद राज्य)
१७८) श्री पुरुषोत्तमनाथ भाई मु० मुरादोई आनद
१२०) आर्य समाज कोटा राजपूताना
१०१) आर्य समाज बादशाह नगर लखनऊ
१००) आ० स० सावेर इन्दौर
१००) आर्य समाज बयाना (भरतपुर)
१००) आर्य समाज ज्वालापुर
१००) आर्य समाज छोटी सादड़ी (मारवाड़)
५०) आर्य समाज ठाकुर द्वारा (मुरादाबाद)
५०) आर्य समाज निथार पो० मुसावर (भरतपुर)
५०) आर्य समाज कचौरा (अलीगढ़)
३१) श्री मनोहर लाल जी वकील बीकानेर
३०) आर्य समाज महीदपुर (होल्कर स्टेट)
२५) आर्य समाज सामेसर (मारवाड़)
२०) आर्य समाज बावली (रोहतक)
२०) श्री० बा० छगननाथ सिंह पोस्ट मास्टर पट्टी (फतहपुर)
२०) श्री देवी प्रसाद लक्ष्मी चन्द्र गंगापुर सिटी (जयपुर)
१८) ब्राह्मण मंडली शिव मन्दिर योमिनी पो० कोआथ (आरा)
१०) आर्य समाज पुरवा (उन्नाव)
१०) आर्य समाज चौक कानपुर
५) आर्य समाज महोबा [झांसी)
२) श्री नन्दकिशोरजी शर्मा दूधली (मुज०नगर)
५) श्री अर्जुनदास जी नैनीताल
३१३) श्री मन्त्री जी आर्य समाज जखराना, पो० बहरोड़ (अलवर) द्वारा श्री एम० आर० सत्यदेव सहायक अध्यापक मिडिल स्कूल परतापुर (अलवर राज्य)
७०) डी० ए० वी० स्कूल मैनपुरी के अध्यापकों व छात्रों द्वारा
६६ ॥≈) श्री पी० एन० मिश्र कोपरेटिव यूनियन लिमिटेड बेतालपुर डिसपेंसरी पो० देवरिया (गोरखपुर)
५१) श्री आलिम सिंह जी ग्राम पिवारी पो० मारहरा (जिला एटा)
५०) आर्य समाज विजोआ पोस्ट अचीआना जीन्द स्टेट
२४) श्री जगदेव प्रसाद युवक सघ धावे गामा पो० ताजपुर (दरभंगा)
२१) श्री घासीराम चमनलाल जी कराची
२१) श्री रायबहादुर रामेश्वर दयाल ठेकेदार जलेसर (एटा)
२००) श्री मन्त्री जी, आर्य समाज ग्वालियर
६५) श्री मन्त्री आर्य समाज सेठोरा डा० पट्टी सादात (फतेहपुर)
५१) श्री मन्त्री आर्य समाज देवबन्द सहारनपुर
४६=) श्री प० शिवदर्शनलाल जी मौजा सरौली (डा० पट्टी सादात) (फतेहपुर)
३०) श्री प्रधान जी आर्य समाज गजाधर पुर (पो० बानपुर) (बस्ती)
२८) इटैली के मजदूरों का—
२५) श्री रामलाल जी यादव मौजा कुठिया, डा० पट्टी सादात (फतेहपुर) पंचायती चन्दा।
२१) आर्य समाज लेमाडी (शाहाबाद आरा)
२०) स्वामी मयस्करानन्द सरस्वती प्रधान आर्य समाज जहानाबाद (पीलीभीत)
२५४) स्टाफ जसवन्त स्ट्रोबोर्ड मिल्स लाहौर
५००) शेयर ब्रोकर्स ऐसोसियेशन इन्दौर
१९४) श्री मन्त्री जी, आर्य समाज सोनीपत रोह०

१०००) श्री अध्यक्ष वीर अर्जुन देहली
३११) मन्त्री आर्य समाज विसनगर (बम्बई प्रान्त)
२४२॥।=) प्रधान आर्य समाज सराय सिद्धू
(मुलतान) द्वारा निम्न प्रकार
९०) आर्य समाज सरायसिद्धू मुलतान
१५॥) पंचायत कोट दुनीचन्द
२५॥) पंचायत रामपुर
६७।-)॥ विलावलपुर पचायत
८॥) जोधपु के अध्यापक
५) एस० डी० ओ० साहिब सिधनी हैडवर्क
१) श्री रामभजदत्त जी जोधपुर

२४२॥।=)॥
१५१) मन्त्री पूर्वीय बंगाल आर्य सहायता समिति रावलपिन्डी
१०००) मन्त्री पूर्वीय बगाल आर्य सहायता समिति रावलपिन्डी
१४१) हिन्दू जनता मौहल्ला वस्ती देहली ।
१०१ आर्य स्त्री समाज सोहनगज (देहली)
२००) श्री दाताराम जी मन्त्री आर्य समाज थाना भवन (मुजफरनगर)
१०२) मन्त्री आर्य समाज मह छावनी
१३०=) श्रीजगन्नाथ जी प्लीडर खाने वाल जोधपुर (मुलतान) ग्राम वालों का चन्दा
२५५) यू० रामप्पा थिमप्पा जनरल मर्चेन्ट (सडीपी) दक्षिण कर्नाटक
५५) आर्य समाज सडीला (हरदोई)
४०) आर्य समाज विषहर पोस्ट पट्टी सादात (फतहपुर यू० पी०)
२१॥) हिन्दी फाइनल स्कूल न० १ स्नेहलता गंज इन्दौर सिटी के अध्यापकों और छात्रों की ओर से।
५१) श्री हीरालाल दलपति आर्य वीर दल बीकानेर
३१) श्री देव नन्दन चाधरी मन्त्री श्री रामपुर ग्राम रक्षा दल ग्राम श्री रामपुर पोस्ट नानी (दरभंगा)
१०) श्री देवदत्त गुप्त ग्राम नाजूरपुर राजेपक्ट पो० ढिलोला (मुरादाबाद)
११) श्री मन्त्री आर्य समाज बाकरपुर डा० पट्टी सादात (फतहपुर)
१६॥) श्री ज्ञानीराम शम्भूराज सियावला पोस्ट फज्झर जींद स्टेट
४७) आर्य समाज कदोली (बाराबंकी)
७५) आर्य समाज गरौठ (हालकर स्टेट)
१०) प० बद्री प्रसाद जो मु० अमदाबाद (बगाव) डा० पट्टी (फतहपुर)
१०८ श्री बद्लूराम जगदेव प्रसाद जी जमींदार मौजा लालदासपुर डा० पटी सादात फतहपुर
७०) प्रैसीडेण्ट स्टुडेण्ट कांग्रेस आर्इ बी० कोथ (शाहाबाद आरा)
२००) सार्वदेशिक दयानन्द सन्यासी वानप्रस्थ मण्डल द्वारा निम्न प्रकार
५) श्री पूज्य म नारायणस्वामीजी महाराज
६६) श्री कविराज हरनामदास जी बी ए
१०) श्री रायबहादुर प० गंगाप्रसादजी रिटायर्ड चीफ जज
१०) श्री म० सुन्दरदास जी
१०) श्री म० लालचन्द जी
१०) म० गौरीशंकर जी
११) म० रामसहायजी
१०) श्री० आत्मानन्दजी सन्यासी
११) गुप्तदान
५) सूबेदार लहाराजसिंह जी
५] डा जगन्नाथ जी
१) म० प्रेमाराम जी

१) माता भागवन्ती जी
१) म० रणजीतसिंह जी
१) एक सन्यासी द्वारा गुप्तदान
१) श्री प्रेमसिंह जी
१) म० रामपाल जी
५) श्री ला० नन्दलालजी
२) भक्त सुन्दरदास जी का प्रपौत्र
१) श्री ज्योतिप्रसादजी

२००)

१८५) श्री बी०बी० खन्ना मन्त्री आर्यसमाज लोधी रोड, देहली।
२५०) श्री राजाराम अनन्तप्रसाद जी ठठेरी बाजार प्रयाग से सग्रहीत
३०१) मन्त्री आर्यसमाज प्रयाग नया कटरा।
१०००) आर्यसमाज लड़काना (सिन्ध)
३००) श्री धुवनाथ जी चौवे चन्दवक जौनपुर।
१०००) अध्यक्ष वीर अर्जुन देहली।
७) श्री भगवानचन्द्रजी मन्त्री आर्यसमाज टांडा अफजल डा० सुरजनगर (मुरादाबाद)
६॥) श्री कृष्णानन्द गुप्त सम्पादक लोकवर्त(टीग)
४० मैनेजर वैदिक विद्यालय थरडी मुहब्बत(दादू)

सिन्ध

१००) मन्त्री आर्यसमाज जामपुर (डेरागाजीखां)
३००) आर्यसमाज वरबीघा (मुंगेर)
११५) आर्यसमाज होली तालुका (हैदराबाद रा०)
५०) आर्यसमाज ठाकुरद्वारा (मुरादाबाद)
१०) सेठ रामदुलारे जी पो० खागा (फतेहपुर)
१०३॥ﺽ) आर्यसमाज सहसवान (बदायूं)
७७) फर्म मेसर्स मुन्नालाल जवाहरलाल अब्दुल्लापुर के कर्मचारियों द्वारा

५५७७३॥ﺽ॥

(क्रमशः)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

दान सूची मास अक्तूबर, नवम्बर तथा १० दिसम्बर १९४६ तक की

स्थापना दिवस

८) मन्त्री जी आ० स० मन्सूरी यू.पी

७७४॥≡) गत शेष

७८२॥≡)

विविध दान

५) श्री गंगाचरणजी आर्य डाजौपुर नया मैनपुरी

१३॥) श्री मन्त्रीजी आ० स० नवाशहर (जलन्धर) सत्याग्रह बलिदान दिवस के उप०

५) स्त्री आ० स० अलीगढ़ (स० प्र० निधि)

७॥=) मन्त्री जी आर्य समाज सुलतानपुर लोधी (कपूर थला स्टेट) (बलिदान १ दिवस)

४॥।) आ० स० जौनपुर (सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस)

१) श्री जुरिया जी सुनारी बुजुडा (गजाम)

३) श्री बान्डरीजी द्वारा श्री बलराम वेदप्रचार

५१) श्री प्रो० विद्याभूषण आनन्द जी M Sc ६ लक्ष्मण गली कृष्णनगर, लाहौर। (सत्यार्थ निधि)

९०॥=)

कार्यालय सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

आर्य पर्वों की सूची—वर्ष १९४७ ई०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली आर्य समाजों की सूचना के लिये प्रतिवर्ष स्वीकृत आर्य पर्वों की सूची प्रकाशित किया करती है। इस वर्ष की सूची निम्न प्रकार है :—

क्रम सं०	नाम पर्व	देशी तिथि	दिनांक
१.	मकर सक्रान्ति	माघ बदी ८	१४ १ ४७
२.	बसन्त पंचमी	माघ सुदी ५	२७ १ ४७
३.	सीताष्टमी	फाल्गुण बदी ८	१३ २ ४७
४.	दयानन्द जन्म दिवस	,, ,, १४	१९ २ ४७
५.	लेखराम वीर तृतीया	,, सुदी ३	२४ २ ४७
६	बसन्त नवसस्येष्टि होली	,, ,, १५	६ ३ ४७
७	नव सम्वत्सरोत्सव	चैत्र सुदी १	२३ ३ ४७
८.	आर्य समाज स्थापना दिवस		
९.	रामनवमी	चैत्र सुदी ९	३१ ३ ४७
१०.	हरितृतीया [तीज]	श्रावण सुदी ३	१९ ८ ४७
११.	श्रावणी उपाकर्म	,, ,, १५	३१ ८ ४७
१२	सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस		
१३.	कृष्णाष्टमी	भाद्रपद बदी ८	८ ९ ४७
१४.	विजय दशमी	आश्विन सुदी १०	२४ १० ४७
१५.	ऋषि दयानन्द निर्वाण दिवस दीपावली	कार्तिक बदी अमावस्या	१२ ११ ४७
१६	श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	९ ९ २००४	

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम. ए.
मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली मे मुद्रित